मलयाळम

अध्यात्म रामायण

उत्तर रामायण



भुवनवाणी ट्रस्ट
लखनऊ-२

मलयाळम

अध्यात्म रामायणम्

उत्तर रामायणम्

रचनाकार

तुञ्चत्तु ॲेळुत्तच्छन्

सानुवाद लिप्यन्तरणकार

डॉ० एन० पी० कुट्टन पिल्लै

एम० ओ० एल०, पीएच्० डी०

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियां रोड, लखनऊ-२२६००३

प्रथम संस्करण—
१९७८ ई०

मूल्य— ४०·०० रुपया

मुद्रक —
वाणी प्रेस
भुवन वाणी ट्रस्ट
'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ–२२६००३

मलयाळम साहित्य के जनक 'आचार्य ऍळुत्तच्छन्' की

पुण्यस्मृति में

लिपि और भाषा के माध्यम से

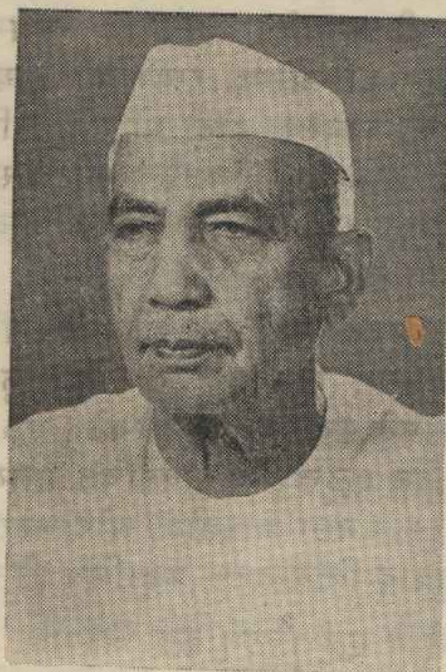
राष्ट्रीय एकीकरण हेतु

प्रस्तुत यह ग्रन्थरत्न

माल्यार्पण

मलयाळम अध्यात्मरामायण

उत्तररामायण नागरी लिपि



हिन्दी अनुवाद सहित

दृढ़ संकल्प और सुदृढ़ प्रशासन के मूर्तिमान् रूप

गृहमंत्री, भारत सरकार

माननीय चौधरी चरणसिंह जी

को

सादर माल्यार्पित ।

मुख्यन्यासी सभापति, भुवनवाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

प्रकाशकीय

आचार्य तुञ्चत्तु एळुत्तच्छन् कृत मलयाळम 'अध्यात्म रामायण' और 'उत्तर रामायण' का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण प्रकाशित होकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। सानुवाद लिप्यन्तरणकार श्री डा० एन० पी० कुट्टन पिल्लै का निवेदन, डॉ० एन चन्द्रशेखरन् नायर, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी कालेज, तिरुवनन्तपुरम् (केरल) की भूमिका, और श्री एन० वी० कृष्ण वारियर का अभिमत, ग्रन्थ पर पर्याप्त एवं साधिकार प्रकाश डालते हैं। मुझे लिखने को यथेष्ट शेष नहीं। अलबत्ता, प्रस्तुत ग्रन्थ के अवतरण की पृष्ठभूमि पर कुछ चर्चा समुचित प्रतीत होती है।

सन् १९७५ ई० की बात है। पवनार आश्रम वर्धा में श्री विनोबा जी के सान्निध्य और स्व० डॉ० श्रीमन्नारायण की अध्यक्षता में 'नागरी लिपि परिषद' के रजिस्ट्रेशन की व्यवस्था होनी थी। उस निमित्त सात बुनियादी सदस्यों में मेरा भी एक नाम था। वर्धा से लौटते समय दो दिन बाद ही विश्व हिन्दी सम्मेलन, नागपुर में मेरी उपस्थिति आवश्यक है, ऐसा नागपुर टाइम्स से समाचार प्राप्त हुआ।

उसी अवसर पर, भुवन वाणी ट्रस्ट की विद्वत्-परिषद के वरिष्ठ सदस्य आन्ध्रनिवासी डॉ० भीमसेन निर्मल के साथ डॉ० कुट्टन पिल्लै मेरे निवास-स्थल पर पधारे। उस समय परम विद्वान् श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर द्वारा लिप्यन्तरित और अनूदित एळुत्तच्छन् विरचित मलयाळम महाभारत ट्रस्ट से प्रकाशित हो रहा था। समस्त भारतीय, और भारत में व्यवहृत भाषाओं के और भी अनेक सानुवाद लिप्यन्तरण प्रकाशित हो चुके अथवा हो रहे थे।

डॉ० कुट्टन पिल्लै ने एळुत्तच्छन् कृत 'अध्यात्म रामायण' का सानुवाद लिप्यन्तरण ट्रस्ट हेतु अर्पण करने का प्रस्ताव रखा। 'महाभारत' समाप्ति की ओर था। ट्रस्ट की नीति है कि यथा-संभव किसी भाषा के ग्रन्थ के प्रकाशित होते ही, उस भाषा के अन्य सद्ग्रन्थ का शुभारम्भ कर देना। इसी संकल्प की शक्ति से इतने कम समय और सीमित साधनों में उल्लेखनीय भाषा-सेतुबन्धन का कार्य बन पड़ा है। भाषा-सिन्धु पर सेतु पर सेतु निर्मित होते जा रहे हैं। राम-नाम-अङ्कित शिलाओं का बाहुल्य होने से ही कदाचित् भाषा-सिन्धु इन सेतुओं को धारण करता आ रहा है। सुतरां सदैव की भाँति बिना आगा-पीछा सोचे 'अध्यात्म रामायण' के प्रकाशन का प्रस्ताव हमने अंगीकार कर लिया। डॉ० एन० पी० कुट्टन पिल्लै, एम० ओ० एल०, पीएच्० डी०, विद्वान्, पारंगत, विद्याभास्कर, शिक्षा-कला-प्रवीण, और दक्षिणाञ्चलीय साहित्य समिति हैदराबाद के मंत्रिपद से विभूषित हैं। उन्होंने ग्रन्थ का लिप्यन्तरण और अति प्राञ्जल भाषा में अनुवाद, बहुत थोड़े समय में पूर्ण करके भेज दिया। प्रूफ़-संशोधन आदि में भी वे उतने ही तत्पर और तुर्त-फ़ुर्त रहे। यह श्रेय उनके योगदान ही को है कि

उपर्युक्त दोनों सद्ग्रन्थ एक ही जिल्द में प्रकाशित होकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत हैं। महाभारत के बाद मलयाळम का यह दूसरा युगल-प्रकाशन है।

महाभारत के सानुवाद लिप्यन्तरणकार आचार्यप्रवर डॉ० को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर जी ने अपनी विशद भूमिका में एळुत्तच्छन् एवं उनके द्वारा रचित काव्यों और छन्दों पर एक शोधपूर्ण अद्भुत निबन्ध दिया है। उसके आधार पर मूल रचनाकार का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

महाकवि तुञ्चत् एळुत्तच्छन् आधुनिक मलयाळम भाषा और काव्य के पिता समझे जाते हैं। सांस्कृतिक, साहित्यिक और आध्यात्मिक दृष्टि से उन्होंने मलयाळम-जगत में एक नवोत्थान आरम्भ किया। किलिप्पाट्टु (पक्षी-गान) द्वारा वेदान्त के तत्वों के प्रचार में, बाद के कवियों ने इस शैली के जनक एळुत्तच्छन् का ही अनुकरण किया है। इस ललित शैली में प्रायः शुक-कन्या भक्तों को नाना पुराण-कथाओं का रसामृत पान कराती है।

महाकवि एळुत्तच्छन् का जन्म पुराने मलबार जिले के पोन्नानि तालुका के तृक्कण्टियूर अंश में तृक्कण्टियूर मन्दिर के पास 'तुञ्चन् परम्पु' ग्राम में सन् १४७५ और सन् १५७५ के बीच हुआ। नाना मतों में यह अधिक पुष्ट है कि वे नायर जाति के थे। बड़े भाई रामन् के नाम पर वे रामानुजन भी कहे जाते रहे। उनका वास्तविक नाम अज्ञात है। एळुत्तच्छन् का अर्थ है 'घराने का आचार्य'। अथवा 'भाषा के पिता'— मुग्ध जनता ने यह नामकरण उनके बाद करके अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। प्राचीन भारतीय विद्वानों, ऋषियों के सदृश, उन्होंने अपनी रचनाओं में नामवरी का उल्लेख नहीं किया। संस्कृत में काव्य, नाटक, वेदान्त, और अध्यात्म का अध्ययन और अगाध परिशीलन किया। युवावस्था में यथेष्ट पर्यटन के उपरान्त जन्मस्थली में ही एक पाठशाला स्थापित कर वहीं अध्यापन कार्य करते रहे। चिटूर में स्थापित गुरुमठ में उनकी खड़ाऊँ और योगदण्ड अब भी सुरक्षित हैं।

महाकवि एळुत्तच्छन् ने १२ ग्रन्थों की रचना की है। उनमें से महाभारत, अध्यात्म रामायण और उत्तर रामायण के 'हिन्दी अनुवाद' सहित नागरी लिप्यन्तरण ट्रस्ट से प्रकाशित हो चुके हैं।

अमर भारती सलिला की पावन 'मलयाळम' धारा।
पहन नागरी-पट उसने अब भारत-भ्रमण विचारा॥

रहा प्रकाशन। विद्वानों का मत है, "वह सत्कार्य नहीं जिस के मार्ग में कण्टक न हों; और वह सत्कार्य नहीं जिसकी अवश्यम्भावी सिद्धि न हो।" प्रायः सभी भाषाओं के अनेक सदाशय विद्वानों का निस्पृह सहयोग प्राप्त होने का हमें सौभाग्य है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' न केवल भारत में व्यवहृत वरन् विदेशी समृद्ध भाषाओं के सानुवाद लिप्यन्तरण की ओर भी अग्रसर है।

ट्रस्ट का मूल उद्देश्य है कि विश्व के समस्त वाङ्मय को सारे विश्व के मञ्च पर प्रस्तुत करने की प्रक्रिया से विश्वभाषा-सेतुकरण और विश्व-बन्धुत्व की उपलब्धि की ओर मानव को अग्रसर करना। इसमें नागरी लिपि और राष्ट्रभाषा हिन्दी को विशेष रूप से हमने अपना साधन अपनाया है। भगवान् की अनुकम्पा से इस पुष्कल कार्य में उत्तरोत्तर सफलता प्राप्त हो रही है। हमारा संकल्प, सिद्धि में साकार होता जा रहा है।

अरबी, फ़ारसी, संस्कृत, उर्दू, असमिया, बँगला, ओड़िया, राजस्थानी, सिन्धी, मराठी, गुजराती, तमिळ, तेलुगु, मलयाळम, कन्नड, गुरमुखी, कश्मीरी, राजस्थानी, नेपाली आदि में अनेक सानुवाद नागरी लिप्यन्तरण प्रकाशित हो चुके अथवा यन्त्रस्थ हैं। हिन्दी का मुकुट ग्रन्थ 'रामचरित मानस' भी ओड़िया, संस्कृत आदि में प्रस्तुत हो रहा है।

हिब्रू, ग्रीक और अंग्रेजी का लिप्यन्तरण आरम्भ हो चुका है। जर्मन, फ़्रेञ्च, चीनी, जापानी आदि की परियोजना पर दृष्टि है। नागरी लिपि और हिन्दी भाषा में समुचित पैठ रखनेवाले सदाशय विद्वानों का इस ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए उनसे इस पावन वाणीयज्ञ में अपनी पुण्याहुति प्रदान करने की प्रार्थना है; वे आमंत्रित हैं।

प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी॥

मलयाळम भाषा में भी कई विशिष्ट ध्वनियाँ हैं, जो नागरी वर्णमाला में उपलब्ध नहीं हैं। नागरी लिपि में उनको सिरजा गया है। मलयाळम-देवनागरी वर्णमाला चार्ट एवं विशिष्ट उच्चारणों का विवरण, अगले पृष्ठ पर अवलोकनीय है। उसके अध्ययन से मलयाळम के नागरी लिप्यन्तरण को शुद्ध पढ़ने-समझने में सहायता प्राप्त होगी।

उदार श्रीमानों तथा उत्तर-प्रदेश शासन से आंशिक सहायता के आधार पर बड़ा सहारा मिलता रहा है। सौभाग्य से केन्द्रीय शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय का भी अनुग्रह प्राप्त हुआ। वर्तमान राज्यशिक्षामंत्री श्रीमती रेणुकादेवी बरकटकी ने भी ट्रस्ट का विश्व-भाषा-सेतुकरण-कार्य का अवलोकन किया। उनकी एवं शिक्षा-निदेशक श्री के० के० सेठी महोदय की ट्रस्ट पर सतत अनुकम्पा है। फलस्वरूप मलयाळम के ये दो पुनीत ग्रन्थ 'अध्यात्म रामायण' और 'उत्तर रामायण' एक जिल्द में सम्पूर्ण होकर राष्ट्र के सम्मुख अर्पित हैं। अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार और भूमिका एवं अभिमत के प्रस्तुतकर्ता विद्वानों के प्रति भी हम अनन्यतः आभारी हैं।

—नन्दकुमार अवस्थी
प्रतिष्ठाता, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

महाशिवरात्रि
७ मार्च, १९७८

ज्ञातव्य—मलयाळम भाषा के ५ विशिष्ट 'वर्ण'—ळ, ऴ, ट़ ऱ, ऩ, का उच्चारण इस प्रकार है:—'ळ' मूर्धन्य, जिह्वा को उलट कर जिह्वाग्र से 'ष' के स्थान पर तालु स्पर्श कर 'ल' का उच्चारण करने पर प्रकट होता है। 'ऴ' मूर्धन्य, जिह्वा उलटकर जिह्वाग्र से 'ष' के स्थान पर तालु स्पर्शकर 'र' का उच्चारण करने पर 'ऴ' के समान ध्वनि उत्पन्न करता है। 'ऱ' यह मूर्धन्य वर्ण हिन्दी 'र' की अपेक्षा जिह्वा को कुछ अधिक उलटकर जिह्वाग्र से अधिक स्फुरण करते हुए, अन्यथा 'ऱ' के बजाय 'ऴ' जैसा सुनाई देगा। 'ट़' हिन्दी 'ट' के समीप है। जीभ को वर्त्स्य पर एक क्षण चिपकाकर तुरन्त हटा लेना चाहिए 'That' के अंतिम 'टी' के उच्चारण के सदृश। 'ऩ' का उच्चारण जिह्वाग्र को दोनों दन्तावलियों के बीच में मुँह के भीतर ही रखकर; इस दन्त्य वर्ण से मिलता-जुलता देवनागरी का 'न', 'ऩ' की अपेक्षा जीभ को ज़रा ऊपर रखकर स्पर्श किया जाता है।

मलयालम-देवनागरी वर्णमाला

അ अ	ആ आ	ഇ इ	ഈ ई	ഉ उ
क	का	कि	की	कु
ഊ ऊ	ഋ ऋ	ൠ ॠ	ഌ ऌ	ൡ ॡ
कू	कृ	कॄ		
എ ऎ	ഏ ए	ഐ ऐ	ഒ ऒ	ഓ ओ
कॆ	के	कै	कॊ	को
ഔ औ	അം अं	അഃ अः		
कौ	कं	कः		
ക क	ഖ ख	ഗ ग	ഘ घ	ങ ङ
ച च	ഛ छ	ജ ज	ഝ झ	ഞ ञ
ട ट	ഠ ठ	ഡ ड	ഢ ढ	ണ ण
ത त	ഥ थ	ദ द	ധ ध	ന न ऩ
പ प	ഫ फ	ബ ब	ഭ भ	മ म
യ य	ര र	ല ल	വ व	ശ श
ഷ ष	സ स	ഹ ह	ള ळ	ക്ഷ क्ष
ഴ ऴ,ऴ	റ ऱ,ऱ	ററ ट़		

मलयाळम में ए और ओ की मात्राएँ ह्रस्व और दीर्घ दो प्रकार की होती हैं। इनमें ह्रस्व के लिए ॆ और ॊ देवनागरी में क्रमशः प्रयुक्त हैं। ह्रस्व ऎकार और ऒकार के लिए ॆ ॊ—ये चिह्न आचार्य विनोबा भावे, अ० भा० विक्रम परिषद, अ० भा० काशिराजन्यास और भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ द्वारा प्रयोग में लाये जा रहे हैं। ये लेखन-मुद्रण में सरल और सुन्दर हैं। उदाहरण—जॆहिं और 'जेठ' एवं 'घॊड़दौड़' और 'घोड़ा'। देवनागरी लिपि में मलयाळम के उकारांत शब्दों के ऊपर किन्हीं अवसरों पर चन्द्र ˘ भी लगा देते हैं। उच्चारण उकार नहीं वरन् असम्पूर्ण ह्रस्व 'अकार' जैसा होता है। जैसे 'वलियतुॅ' के 'त' को विस्तार से न पढ़ें। मलयाळम शब्द का अन्तिम सस्वर अकाराक्षर हिन्दी की भाँति हलन्त नहीं बोला जायगा। यथा 'राम' को Rama पढ़ें, न कि हिन्दी के अनुकरण पर 'राम्'।

—नन्दकुमारअवस्थी

अभिमत

हिन्दी का अपना रामकथा-साहित्य बहुत ही समृद्ध है और लोकप्रियता में तुलसीदास जी के रामचरित-मानस की समानता भारत की दूसरी भाषाओं में किसी पुस्तक को शायद ही मिली हो। तथापि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है और भारत की विभिन्न भाषाओं में जितनी महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं उन सब का परिचय हिन्दी के माध्यम से सुलभ होना चाहिए, इस दृष्टि से दूसरी भाषाओं के राम-कथा-साहित्य का हिन्दी में अनुवाद होना उचित एवं आवश्यक है। राम-कथा साहित्य के, चाहे वह जिस किसी भाषा में हो, मूल में वाल्मीकि का आदिकाव्य ही है, लेकिन परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं की विभिन्नता के कारण प्रत्येक प्रान्त के राम-कथा-साहित्य में कथा और प्रतिपादन की अपनी निजी सविशेषता आई है, और राम-कथा-साहित्य के ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए इन विभिन्नताओं का ज्ञान अनुपेक्षणीय है। प्रान्तीय भाषाओं की रामायणों का हिन्दी अनुवाद इस कारण से भी विशेष महत्त्व रखता है।

यद्यपि गीतिकाव्य, चम्पूकाव्य, गीति नाट्य (कथाकलि और तुल्लक), महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक आदि के रूप में राम-कथा केरल में बहुत ही लोकप्रिय रही है और इसकी परम्परा चौदहवीं सदी ई० से आज तक बराबर चलती आई है, तथापि अध्यात्म रामायण के एळुत्तच्छन् द्वारा किये गये अनुवाद का जितना व्यापक प्रचार यहाँ हुआ उतना प्रचार और किसी रचना को प्राप्त नहीं हुआ। सोलहवीं सदी ई० में किया गया यह अनुवाद तब से अब तक केरल की सर्वोत्तम धर्म-संहिता ही नहीं, बल्कि यहाँ का सर्वादृत काव्यग्रन्थ भी रहा और आज भी प्रतिवर्ष कम से कम एकबार इस ग्रन्थ का पाठ प्रायः सारे हिन्दू-घरों में होता ही रहता है। आधुनिक मलयाळम की काव्य-भाषा की शुरूआत भी इसी रामायण से मानी जाती है।

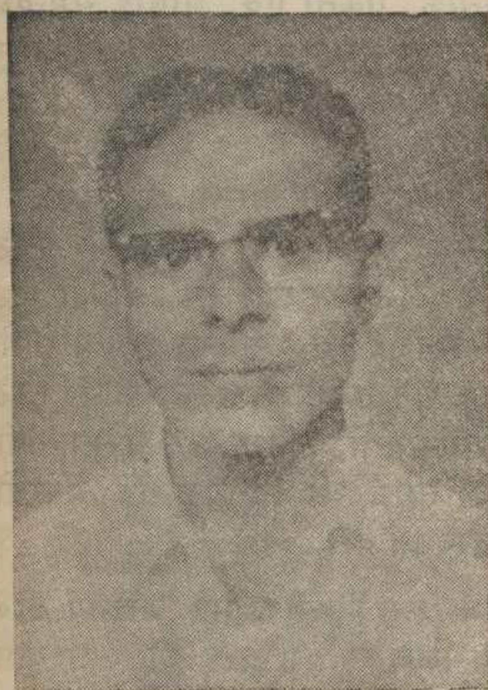
देवनागरी हमारी राष्ट्रलिपि है, और भारत की सभी भाषाओं की उत्कृष्टतम रचनाओं का इस लिपि में मुद्रण होना वांछनीय है। मलयाळम की इस सर्वोत्तम एवं सर्वादृत सुरचना का नागरी लिपि में मुद्रण और हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत करके डॉ० एन० पी० कुट्टन पिल्लै महाशय ने न केवल मलयाळम और हिन्दी की अद्वितीय सेवा की है, बल्कि भारत की रागात्मक एकता की नींव सुदृढ़ करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। मैं हृदय से डॉ० पिल्लै का अभिनन्दन करता हूँ। मेरी आशा है कि केरलेतर प्रान्तों के हिन्दी जाननेवाले सहृदय इस प्रकाशन का पूरा लाभ उठायेंगे, और हिन्दी के राम-कथा-साहित्य को यह एक अनुपम देन साबित होगा।

एन० वी० कृष्ण वारियर
एम० ए०, एम लिट्
(भूतपूर्व निदेशक, भाषा संस्थान; भूतपूर्व सम्पादक 'युग प्रभात')

तिरुवनन्तपुरम्,
१ दिसम्बर, १९७७

अनुवादक का वक्तव्य

तुंचत्तु रामानुजन् एळुत्तच्छन् कृत अध्यात्म रामायण मलयाळम साहित्य में एक युगांतरकारी रचना है और केरलीय जनता में इसका वही स्थान है, जो कि उत्तरभारतीय जनता में तुलसीकृत रामचरित-मानस का है।



इस पावन ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण प्रस्तुत करते हुए मैं असीम आनन्द एवं आत्मतोष का अनुभव कर रहा हूँ।

मेरे मन में इस पुनीत ग्रन्थ का अनुवाद करने की साध थी, किन्तु साधनाभाव के कारण मेरी साध कार्य-रूप में परिणत नहीं हो पा रही थी। तभी दैवयोग से सन् १९७५ के जनवरी मास में नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन द्वारा 'भुवन वाणी ट्रस्ट' लखनऊ, के मुख्यन्यासी सभापति और भारत की भावात्मक एकता के प्रतीक एवं मौन साधक श्री नन्दकुमार अवस्थी जी के सम्मानित किये जाने के सुअवसर पर उनसे मेरा साक्षात्कार हुआ था और उनके अथक परिश्रम से ट्रस्ट द्वारा संपन्न होनेवाले भाषायी सेतुकरण के कार्यों से किंचित् अवगत होने का सुअवसर प्राप्त किया था। उन दिनों ट्रस्ट एळुत्तच्छन् कृत मलयाळम महाभारत के सानुवाद लिप्यन्तरण के प्रकाशन में लगा हुआ था और उक्त कार्य निकट भविष्य में सम्पूर्ण होने को था। अतः मैंने श्रद्धेय अवस्थी जी के सामने मलयाळम अध्यात्म रामायण का लिप्यन्तरण एवं अनुवाद प्रस्तुत करने की अपनी अभिलाषा प्रकट की तो उन मनस्वी ने मुझे इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया और उनके इस प्रोत्साहन के फलस्वरूप मैंने अध्यात्म रामायण के सानुवाद लिप्यन्तरण का कार्य चार-पाँच महीनों में पूरा कर दिया। मलयाळम अध्यात्म रामायण राम के राज्याभिषेक के साथ समाप्त होती है। अतः श्री अवस्थी जी का आग्रह था कि एळुत्तच्छन् कृत उत्तर रामायण, जो एक पृथक् ग्रन्थ के रूप में विरचित थी, का भी अनुवाद प्रस्तुत करूँ, ताकि संपूर्ण रामायण अपने समग्र रूप में एक ही जिल्द में विद्वज्जनों के हाथ आए। मेरे लिए यह एक और सुयोग था, जो मैंने सहर्ष स्वीकार

किया। श्री नन्दकुमार अवस्थी जी तथा उनके सुपुत्र श्री विनयकुमार अवस्थी जी के उत्साह एवं निष्ठा के फलस्वरूप इस अल्प समय के भीतर 'उत्तर रामायण' सहित यह बृहत्ग्रन्थ 'अध्यात्म रामायण' देवनागरी लिपि में मूल एवं हिन्दी अनुवाद के साथ रामायण-प्रेमी श्रद्धालु महानुभावों के कर-कमलों में आ रहा है।

भुवन वाणी ट्रस्ट भारत की भावात्मक एकता एवं भाषाई समन्वय के क्षेत्र में स्तुत्य कार्य कर रहा है और इसका परम श्रेय श्री नन्दकुमार अवस्थी जी तथा श्री विनयकुमार अवस्थी जी के कर्मठ व्यक्तित्व को प्राप्त होता है। सत्य तो यह है कि इस प्रकार के कार्य की देश में बुनियाद ही श्रीअवस्थी जी ने डाली है; और अब तो विशाल कार्य प्रस्तुत कर चुके हैं। इस बीच श्री अवस्थी जी के उदार एवं आत्मीय आतिथ्य में ट्रस्ट द्वारा संपन्न होनेवाले विस्तृत कार्यों को निकट से देखने का भी मुझे सुअवसर मिला। सीमित साधनों के बावजूद भी, समस्त भाषाओं के सद्साहित्य के सानुवाद लिप्यन्तरण के प्रकाशन एवं प्रचार का कार्य ट्रस्ट ने अपने जिम्मे ले लिया, यह देख मैं विस्मित हूँ, और मेरे परमहितैषी एवं निष्ठावान् श्री नन्दकुमार अवस्थी जी तथा श्री विनयकुमार अवस्थी जी के तपःपूत व्यक्तित्व के सामने मैं श्रद्धावनत हूँ।

मलयाळम तथा हिन्दी के शीर्षस्थ लेखक और मेरे आचार्य डा० चन्द्रशेखरन् नायर ने एक विस्तृत भूमिका लिखकर इस ग्रन्थ की उपादेयता बढ़ाने का सौमनस्य दिखाया। वैसे ही मलयाळम तथा हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान् तथा मलयाळम के यशस्वी कवि श्री एन० वी० कृष्ण वारियर, एम० ए०; एम० लिट्० (भाषा संस्थान के भूतपूर्व निदेशक एवं पाक्षिक 'युगप्रभात' के भूतपूर्व सम्पादक) ने मेरे अनुवाद का अधिकांश भाग पढ़कर अपनी अमूल्य सम्मति लिख भेजने की अनुकम्पा दर्शायी है, अतः इन दोनों सहृदयों के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता यहाँ व्यक्त करना आवश्यक समझता हूँ। मैं अपने गुरुवर श्रद्धेय डा० श्रीराम शर्मा तथा आत्मीय डा० भीमसेन निर्मल और श्री पी० आर० भास्करन नायर एम० ए० का भी आभारी हूँ जो मेरी साहित्य-साधना के क्षणों में सदा प्रेरणास्रोत बनते आ रहे हैं।

रामायणानुरागी सहृदयों को मलयाळम अध्यात्म रामायण तथा उत्तर रामायण का सारस्य समझने में अगर यह अनुवाद किसी सीमा तक सहायक सिद्ध हुआ तो मैं अपने इस विनीत प्रयास को सार्थक मानूँगा।

वसंतपञ्चमी
१२-२-१९७८

—डा० एन० पी० कुट्टन् पिल्लै

भूमिका

हिन्दी में रामचरितमानस का जो महान स्थान है वही मलयाळम में एळुत्तच्छन् की रचना अध्यात्मरामायण का है। मानस का पठन-पारायण समग्र हिन्दीभाषी क्षेत्रों में होता है। इस प्रकार अध्यात्मरामायण का यथायोग्य पारायण केरल भर में होता है; क्योंकि, यही इस केरल प्रदेश का सर्वाधिक आदरणीय धार्मिक ग्रंथ अथवा लोक-साहित्य है। 'रामकथा साहित्य में भरत' संज्ञक एक लेख में फ़ादर कामिल बुल्के का अभिमत है कि 'हिन्दी पाठकों के लिए रामकथा-साहित्य की असंख्य रचनाओं में से दो ही सर्वाधिक महत्व रखती हैं—'वाल्मीकि रामायण तथा रामचरितमानस'। फ़ादर बुल्के ने 'अध्यात्म रामायण' को उक्त दोनों रचनाओं की कोटि में स्थान नहीं दिया है। उन्होंने अपने लेख में भरत की महत्ता को उजागर कर दिया है। वाल्मीकि एवं तुलसी ने भरत को क्रमश: अकलंक भ्रातृ-वत्सल तथा आदर्श रामभक्त के रूप में प्रस्तुत किया है। उसी प्रकार अध्यात्म रामायण भी एक ऐसी रचना है, जिसमें भरत का चरित्र अनन्य भ्रातृ-प्रेम एवं सच्चे सेवक के रूप में चित्रित हुआ है। अध्यात्म रामायण ने राम को विष्णु के पूर्णावतार रूप में माना है और राम के तीनों भाइयों को भी उनके अंशावतार रूप में—जैसे, लक्ष्मण को शेषनाग के, भरत को पांचजन्य शंख के, और शत्रुघ्न को सुदर्शनचक्र के रूप में।



भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत में रामायण-कथा का उत्स सर्वाधिक प्रेरक सिद्ध हुआ है और असंख्य सहस्राब्दियों से उसका परिवेश दिगन्तव्यापी हो चुका है। आदि-कवि वाल्मीकि ने सर्वप्रथम एक उत्तम काव्य-संरचना तैयार की, ऐसा माना जाता है। अध्यात्म रामायण का आख्यान तो ब्रह्मांड पुराण में उत्तरखंड के अन्तर्गत है। अध्यात्म तत्व की सुरुचिपूर्ण विवेचना की अधिकता से इसे अध्यात्म-रामायण का अभिनाम प्राप्त है। वाल्मीकि और तुलसी का भी मूलभूत लक्ष्य 'महच्चरित के द्वारा धर्मोपदेश' करना था। मानस की भक्ति, धर्म के पर्याय रूप में प्रकट हुई। पर वाल्मीकि रामायण में यथार्थ को अधिक प्रश्रय दिये जाने के कारण रामचरित्र में अन्तर स्थापित हुआ। वाल्मीकि से लेकर रामचरितमानस के काल तक भारतीय संस्कृति और साहित्यिक चेतना में अनेक प्रकार की उद्‌भावनाएँ आ लगी हैं। रामकथा के अनेक स्वरूप प्रत्यक्ष हो गये। अनेक देशीय संस्कृतियों का प्रेरणास्रोत बनकर रामकथा का स्थाइत्व हो चुका। तुलसी के उन्हीं रामचन्द्र ने अपने एक राज्य की स्थापना भी की, जिसे राम-राज्य का अभिनाम प्राप्त हुआ। राम-राज्य की स्थापना कराते हुए मानसकार स्वयं कृतकार्य हो गये होंगे। कथा के मूल सूत्र एवं घटनाओं तथा वर्णनों के लिए मानसकार ने, वालमीकि के अलावा, अध्यात्म-रामायण से ही सर्वाधिक अवलंब लिया है।

वाल्मीकि रामायण एवं अध्यात्म रामायण के वर्णनों तथा अभिव्यंजना-शैली से भिन्न रूप जो प्रादेशिक रामकथाओं में सर्वत्र मिलता है वह स्थानीय संस्कृति-विशेष का द्योतक है। मूल के वस्तु-परक वर्णनों के स्थान पर प्रादेशिक रामकथाओं में काल्पनिकता का महत्व अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। एऴुत्तच्छन् के रामायण-अनुवाद के पूर्व मलयाळम में रामचरित, कण्णश रामायण, भाषा रामायण चम्पु आदि जो रामकथाएँ रची गयी हैं उनमें भी काव्यात्मक कल्पना की प्रचुरता है। इनमें तमिळ के कम्ब-रामायण के आशयों एवं वर्णनों का अवलम्ब लिया हुआ है। उपर्युक्त रामायणों का मूल तो वाल्मीकि रामायण है। यदा-कदा मूल से आगे बढ़कर इनके रचनाकारों ने ऐसे चित्रण किये हैं, जो स्वाभाविकता, मधुरता एवं संस्कृति की दृष्टि से सुरुचिपूर्ण हैं।

अध्यात्म रामायण मूल को जहाँ साहित्यिक महत्व का प्रश्रय नहीं प्राप्त हुआ, वहाँ एऴुत्तच्छन् का अनुवाद अत्यन्त सुन्दर साहित्यिक रचना है। वाल्मीकि रामायण में मूल्य-बोध की ओर जो विशेष ध्यान दिया गया है वह भारतीय संस्कृति के आयाम को दृष्टि में रखकर है। आदिकाव्य होकर भी काव्य-भगिमा एवं गरिमा में वह सर्वोत्कृष्ट रचना है। उसमें चित्रित सत्योक्तियाँ काल एवं देश की सीमा के परे की हैं। जीवन को परमोच्च स्थिति में पहुँचा देने का भारतीय संकल्प उसमें यत्र-तत्र-सर्वत्र फैला पड़ा हुआ है। यथा—

"भरत कौसल्या माता से कहते हैं कि राम को वन भेज देने में मेरा कोई हाथ नहीं है। यदि इसमें मैं अपराधी हूँ, तो मुझे गाय के मारने का पाप मिले, अथवा परस्त्री को बुरी आँखों से देखने का पाप लगे। दो व्यक्तियों को आपस में लड़ते हुए देखकर बीच-बचाव न करके खड़े रहनेवाले को जो पाप लगे वह मुझे लगे।" कहने की आवश्यकता नहीं, कि पाप की यह कल्पना ऐसे एक सुसभ्य समाज के लिए इंगित की जा सकती है, जो अपनी सर्वोत्कृष्ट संस्कृति के कारण गौरवान्वित हो। भारतीय संस्कृति का मूल इतनी गहराई तक गया हुआ है कि हज़ारों वर्ष पहले भी मानवता की चरम उत्कर्ष-कामना उसकी पवित्र नीति रही थी। आज भी भूनिवासियों के बीच भारत ही एक ऐसा देश है, जो शक्तिशाली राष्ट्रों की संघर्षात्मक नीति में समझौता ला सकता है। संघर्ष के स्थान पर सौमनस्य एवं भ्रातृत्व की मनःस्थित पैदा कर सकता है।

नैतिक विचारों एवं जीवन-मूल्यों की स्थापना में अध्यात्म-रामायण ने महत्वपूर्ण काम किया है। एऴुत्तच्छन् ने उस परिवेश को व्यापक कर देने में कोई कसर नहीं उठा रखी। एऴुत्तच्छन् स्वयं भक्त कवि थे, साथ ही काव्य-सौन्दर्य का संस्पर्श उन्हें प्राप्त था। सूक्ष्म मनोविकारों की अभिव्यक्ति में वे बेजोड़ थे। सन्दर्भ की मर्यादा एवं गुरुता का बड़ी गम्भीरता के साथ उन्होंने निर्वहण किया है। मूल में जहाँ-जहाँ काव्य-भंगिमा के लिए अवसर पाया वहाँ-वहाँ उन्होंने काव्यात्मक अनुभूतियों और उक्तियों से रचना को सुमधुर बनाया है। किन्तु कहीं-कहीं मूल ग्रंथ के कतिपय श्लोकों को उन्होंने पूर्णतः छोड़ भी दिया है। उदाहरण के लिए अध्यात्म रामायण मूल बालकाण्ड के ६।३,४ में गंगा-तट पर मल्लाह की उक्ति को ले सकते हैं।

रामचरण की पवित्र धूलि से नौका भी स्त्री बनेगी, इसलिए पादप्रक्षालन करने की अभ्यर्थना मल्लाह ने जो की है वह आस्वादकों की दृष्टि में मधुर सन्दर्भ माना जाता है। तुलसीदास जी ने भी वही उल्लेख अयोध्याकाण्ड में, निषाद के सन्दर्भ में किया है।यथा—

चरण कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई।
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥

तरनिउ मुनिघरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई।
एहि प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानउँ कछु अउर कबारू॥
[रा.च.मा. अयो. का.]

लेकिन एळुत्तच्छन् ने अध्यात्म मूलकी इस परिहासोक्ति को प्रकट नहीं किया। इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण में भी राम शीघ्र गंगा पारकर जाने में उतावले होते हैं, क्योंकि तब उनका 'जनपदवाले वन में वास उचित नहीं मालूम पड़ा था। वनस्थ आश्रम में वास योग्य लगा था।' इसलिए, राम लक्ष्मण को आज्ञा देते हैं "नरव्याघ्र लक्ष्मण ! इस घड़ी नौका को पकड़कर पहले धीरे से मनस्विनी सीता को उस पर सवार कराओ और फिर आप सवार होओ"।

आरोहत्वं नरव्याघ्र स्थितां नावमिमां शनैः
सीतां चारोपयान्वक्षं परिगृह्य मनस्विनीम्॥ बा० रामायण

श्रृंगारवर्णन के अपेक्षित सन्दर्भों का भी निर्वहण एळुत्तच्छन् ने बड़ी खूबी से किया है। अहल्या-प्रकरण का मूल में वर्णन यों है—"देवराज इन्द्र अहल्या के रूप-लावण्य पर मुग्ध होकर नित्यप्रति उसके साथ रमण करने का अवसर देखने लगे" (अ०बा० ५।२१)

एळुत्तच्छन् की रूपवती अहल्या को देखिए—

"विश्वमोहिनी अहल्या के रूप-सौन्दर्य को देखकर दुश्च्यवन (इन्द्र) भी कुसुमायुध के वश में पड़ गये। नव दाडिम तुल्य अधरों, गेंद के सदृश्य उरोजों, सुन्दर एवं मधुर जघनों का आस्वादन करने का कौन सा उपाय है, यह सोचते हुए शतमख (इन्द्र) कमलबाण से विंधकर और उसकी पीड़ा के वशीभूत होकर सुन्दरी के रूप का सतत ध्यान करते हुए कामान्ध होकर समय बिताने लगे।"

हाँ, अध्यात्म रामायण मूल अपने वर्णन एवं प्रतिपादन में अध्यात्म सम्बन्धी इतिहास कथा है। लेकिन, एळुत्तच्छन् का अनुवाद आध्यात्मिक चेतना से युक्त एक सुन्दर एवं मनोज्ञ काव्य है। स्वयं सिद्धकवि होने के कारण शुष्क सन्दर्भों को सरस एवं आकर्षक बनाने का कर्तृत्व अनुवाद के धर्मों को मानते हुए उन्होंने अपना लिया है।

संस्कृत शब्दों का जहाँ अधिक महत्व प्रकट होता है, वहाँ एळुत्तच्छन् यथासाध्य उन शब्दों से काम बना लेते हैं। मूलपाठः—

अगणित गुणमप्रमेयमाद्यम् सकल जगस्थिति संयममादिहेतुम्।
उपरमपरं परात्मभूतं सततमहं प्रणतोऽस्मि रामचन्द्रम्।[अ.रा.अर. ८।४४,]

अनुवाद [जटायु स्तुति]—

अगण्य गुणमाद्यमव्ययमप्रमेयमखिल जगत्सृष्टि स्थिति संहारमूलम्
परमं परापर परमानन्दं परात्मानं वरदमहं प्रणतोस्मि सन्ततं रामम्।

जैसे महाकवि एवं साहित्य के मूर्धन्य इतिहासकार उल्लूर परमेश्वर अय्यर का कथन है कि "एळुत्तच्छन् ने मूल रचना के ऐसे अंशों को, जो गुण-पुष्कल हैं, कभी नहीं छोडा है। और शुष्क अंशों को छोड़ भी दिया है। अपेक्षा पड़ने पर वाल्मीकि रामायण, रघुवंश, भोजचम्पु, भाषारामायण, कण्णश रामायण आदि पूर्व-काव्यों से आश्रय स्वीकार कर लिया है। कभी-कभी अपने कल्पना-सिन्धु से यथेष्ट रत्नों को जोड़ दिया है। भक्ति-द्योतन में कहीं व्याघात नहीं पड़ने दिया है। वीर, करुण, श्रृंगार आदि रसों

पर पूरा ध्यान रखा है। फलतः एळुत्तच्छन् का अध्यात्म-रामायण एक स्वतंत्र मौलिक रचना ही है।"

प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद प्रसिद्ध मलयाळम-भाषी हिन्दी लेखक डॉ० एन० पी० कुट्टन पिल्लै जी का किया हुआ है। एळुत्तच्छन् के अध्यात्म रामायण का हिन्दी अनुवाद एक ऐतिहासिक अपेक्षा का परिणाम है। उत्तर और दक्खिन के बीच साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सेतु-बंधन का कार्य अब ठोस गति से चल रहा है। लेकिन अभी तक इस प्रकार का महत्वपूर्ण रचना-निर्माण का प्रयत्न मलयाळम-भाषी हिन्दी लेखकों द्वारा बिरले ही हुआ है। अध्यात्म रामायण जैसी रचनाओं का अनुवाद करना किसी भी प्राज्ञ लेखक के लिए सुगम कार्य नहीं है। इसके लिए सतत साधना, निष्ठा एवं प्रतिभा की अपेक्षा है। डॉ० कुट्टन पिल्लै अध्यवसायी, कर्मठ एवं प्रतिभा-धनी लेखक हैं। महत्कार्यों के निर्वहण में वे विशेष तत्पर हैं। हिन्दी में आलोचना साहित्य की दिशा को डॉ० पिल्लै जी का योगदान अत्यंत प्रशंसनीय है। उनकी प्रकाशित रचनाओं की अमूल्य सम्पदा पर हम केरल के लेखकों को गर्वानुभूति है।

प्रस्तुत अनुवाद में लेखक ने एळुत्तच्छन् की उदात्त कल्पना एवं भावों की सुरक्षा की है। अध्यात्म-परक भावों की अभिव्यक्ति के लिए उचित एवं गंभीर भाषा एवं शैली की जरूरत है। इस ग्रंथ के लेखक की हिन्दी-शैली एवं भाषा सशक्त तथा अयत्न-ललित है। डॉ० कुट्टन पिल्लै की प्रतिपादन शैली गंभीर भावों को भी सुज्ञेय बना देती है। मूल रचना काव्य में है और अनुवाद गद्य में किया गया है। मुझे लगता है कि इस अनुवाद का गद्य, काव्य के बहुत निकट रहता है और वह बहुत ही रोचक हो गया है। एळुत्तच्छन् के अध्यात्म रामायण के साठ प्रतिशत शब्द संस्कृत के हैं। इसलिए, अनुवाद के साथ मूल का देवनागरी लिप्यंतरण जो दिया गया है वह भी काव्य के मूल भावों और उसके मर्मों को पकड़ लेने में सहायक है। आज समूचे भारतीय भाषा-वाङ्मय को आपस में जानने-मानने का समय उपस्थित हो गया है। भारतीय भाषाओं की शब्द-संपत्ति अधिकांशतः संस्कृत की है। इसलिए भारतीय भाषाओं के लिए एक सामान्य लिपि के रूप में देवनागरी को अपनाना कई दृष्टियों से हितकर होगा। सम्पूर्ण भारतवर्ष में भावात्मक एकता का इतना सशक्त माध्यम अपनाने का डॉ० कुट्टन पिल्लै जी का यह प्रयत्न अतीव उदात्त तथा सफल निकला है।

डॉ पिल्लै से मुझे विदित हुआ है कि लखनऊ के श्री नन्दकुमार अवस्थी और उनके द्वारा स्थापित भुवन वाणी ट्रस्ट ने नागरी लिपि में सानुवाद लिप्यन्तरण का समीचीन कार्य बहुत पहले से ले रखा है; और उनके द्वारा भारत में व्यवहृत सभी भाषाओं के विशाल ग्रन्थों का सानुवाद लिप्यन्तरण बड़े पैमाने पर हो चुका है। सांस्कृतिक समन्वय और भाषाई सेतुकरण की दृष्टि से यह कार्य देश में अनूठा है। इस प्रकार के कठिन प्रयत्न का महान् कार्य करके श्री अवस्थी तथा भुवन वाणी ट्रस्ट अवश्यमेव अभिनन्दन एवं साधुवाद के पात्र बने हैं। डॉ० पिल्लै के कथन से मालूम हुआ कि भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ, अेळुत्तच्छन् कृत मलयालम महाभारत का सानुवाद नागरी लिप्यन्तरण पहले ही प्रकाशित कर चुका है। मेरी शुभकामना है कि अध्यात्म रामायण और उत्तर रामायण का यह गद्यानुवाद हिन्दी जगत में ही नहीं, अपितु भारतीय भाषाओं के विशाल क्षेत्र में भी समादृत एवं प्रशंसित हो जायगा।

डॉ० एन० चन्द्रशेखरन् नायर
प्रोफ़ेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
महात्मा गान्धी कालेज,

तिरुवनन्तपुरम्—केरल
२०-२-१९७७

विषयानुक्रमणिका

उत्तर रामायण

कवि तुञ्चत्तुं एळुत्तच्छन्टे

अध्यात्म रामायणम्

किळिप्पाट्टु[1]

बालकाण्डम्

हरिः श्री गणपतये नमः

अविघ्नमस्तु

श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीरामचन्द्र ! जय श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीरामभद्र ! जय । श्रीराम ! राम ! राम ! सीताभिराम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! लोकाभिराम ! जय । श्रीराम ! राम ! राम ! रावणान्तक राम ! श्रीराम ! मम हृदिरमतां राम ! राम । श्रीराघवात्माराम ! श्रीराम !

हिन्दी अनुवाद

कवि तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् कृत श्री अध्यात्मरामायण

॥ श्री हरिः गणपतये नमः ॥

शुकी-गीत[1]

श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीरामचन्द्र ! जय हो । राम ! राम ! श्रीरामभद्र ! (आपकी) जय हो । श्रीराम ! राम ! राम ! सीताभिराम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! राम ! लोकाभिराम ! (आपकी) जय । श्रीराम ! राम ! राम ! रावणान्तक राम ! हे श्रीराम ! मेरे हृदय में रमण करनेवाले राम ! राम ! श्रीराघवात्मा राम ! श्रीराम ! रमापति ! श्रीराम ! हे रमणीय मूर्त्ति !

१ 'पक्षिगीत' मलयाळम साहित्य का एक विशिष्ट काव्य-प्रकार है । इसमें कथा सुनाने वाली अथवा गानेवाली मादा पक्षी प्रायः एक शुकी (तोती) होती है । इस प्रकार के काव्य का उद्भव कवि एळुत्तच्छन् से पहले ही हुआ होगा । उसके बाद भी अनेक पक्षिगीत (किळिप्पाट्टु की रचनाएँ) रचे गये व आज भी रचे जा रहे हैं ।

रमापते ! श्रीराम ! रमणीय विग्रह ! नमोस्तुते । नारायणायनमो नारायणायनमो नारायणायनमो नारायणायनमः । श्रीराम नामं पाटि वन्न पैङ्किळिप्पेण्णे ! श्रीरामचरितं नी चोल्लीटुमटियातें । शारिक प्पैतल् तानुं वन्दिच्चु वन्द्यन्मारे श्रीरामस्मृतियोटे परञ्ञु तुटङ्ङिनाळ्:— कारणनाय गणनायकन् ब्रह्मात्मकन् कारुण्यमूर्त्ति शिवशक्ति संभवन् देवन् वारणमुखन् मम प्रारब्ध विघ्नङ्ङळे वारणंचेय्तीटुवानावोळं वन्दिक्कुन्नेन् । वाणीटुकनारतमेन्नुटे नावुतन्मेल् वाणिमातावे ! वर्णविग्रहे! देवात्मिके ! १० नाणमेन्नियेमुदा नाविन्मेल् नटनञ्चेय्केणाङ्कानने यथा कानने दिगंबरन् । वारिजोत्भवमुखवारिजावासे ! बाले ! वारिधि तन्निलुत्तिरमाल कळेन्नपोले । भारती पदावलि तोन्नणं काले काले पाराते सलक्षणं मेन्मेल् मंगलशीले ! वृष्णिवंशत्तिल्वन्नु कृष्णनाय्पिरन्नोरु विष्णुविश्वात्मा विशेषिच्चनुग्रहिक्कणं । विष्णुजोत्भवसुतनन्दनपुत्रन्व्यासन् विष्णुतान्तन्नेवन्नुपिरन्न तपोधनन् । विष्णुतन्मायागुण चरित्रमेल्लां कण्ट कृष्णनां पुराणकर्त्ताविने वणङ्ङुन्नेन् । नान्मरतेराय रामायणं चमय्कयाल् नान्मुख-

---

(आपको) नमस्कार है । रामायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमः । (कवि शुकी से कहता है) श्रीराम का नाम स्मरण करती शुकी ! तू निस्संकोच भाव से श्रीरामचरित सुना दे । (कवि का आग्रह देखकर) शुकी ने सम्मान्य जन की वंदना की और श्रीराम जी का मन में ध्यान करते हुए कहने लगी:—(कवि कहता है) अपने प्रारब्ध एवं विघ्नों का नाश करनेवाले उन गणपति जी की मैं भूरि-भूरि वंदना करता हूँ, जो कारण-स्वरूप, गणों के अधिपति, ब्रह्मस्वरूप, करुणासागर, शिव तथा शक्ति के पुत्र और हाथी का सा मुखवाले हैं । हे सुन्दर स्वरूपिणी ! देवी ! वाणी-माता ! तुम निरंतर मेरी जिह्वा पर अधिवास करो । १० वारिजोद्भव (ब्रह्मा) के मुख-वारिज पर निवास करनेवाली (सरस्वती) चंद्रवदनी हे बालिके ! तुम निस्संकोच मेरी जिह्वा पर ऐसे नाचो जैसे कानन में दिगंबर (शिव) या वारिधि में तरंग मालिकाएँ नर्तन कर उठती हैं । हे मंगलशीले ! भारती की सलक्षण पदावली समय-समय पर उत्तरोतर निर्विघ्न मुझे सूझती रहे । विश्वात्म स्वरूप जिन भगवान विष्णु ने वृष्णि वंश में भगवान कृष्ण के रूप में अवतार लिया था, मैं उनका विशेष अनुग्रह चाहता हूँ । पुराणकर्ता कृष्ण के नाम से प्रसिद्ध उन तपोधन व्यास को मैं प्रणाम करता हूँ, जो विष्णुजोद्भव (ब्रह्मा) की पुत्री

नुळ्ळल् बहुमानत्तें वळर्त्तोरुवाल्मीकि कवि श्रेष्ठनाकिय महामुनि तान् ममवरं तरिकेंप्पोळ्ळु वन्दिक्कुन्नेन् । रामनामत्तेस्सदाकालवुं जपिच्चीटुं कामनाशननुमावल्लभन् महेश्वरन् महादेवन् परमेश्वरन् सर्वेश्वरन् मामकेमनसि वाणीटुवान् वन्दिक्कुन्नेन् । २० वारिजोत्भवनादियाकिय देवन्मारुं नारद प्रमुखन्माराकिय मुनिकळुं वारिजशराराति प्राणनाथयुं मम वारिजमकळाय देवियुं तुणय्कणं । कारणभूतन्मारां ब्राह्मणरुटे चरणारुणांबुजलीन पांसुसंचयं मम चेतोदर्पणत्तिन्टे मालिन्यमेल्लां तीर्त्तु शोधनचेय्तीटुवानावोळं वन्दिक्कुन्नेन् । आधारं नानाजगन्मयनां भगवानु वेदमेन्नल्लो गुरुनाथन् तानरुळ् चेय्तु वेदतन्नाधारभूतन्मारिक्काणायोरु भूदेवप्रवरन्मार्; तद्वरशापादिकळ् । धातृ शंकर विष्णु प्रवरन्माकुं मतं; वेदज्ञोत्तमन्मार् माहात्म्यङ्ङळावक्कुं चोल्लां ? पाद सेवकनाय भक्तनांदासन् ब्रह्मपादजनज्ञानिनामाद्यनायुळ्ळोरु ञान् वेद सम्मितमाय् मुम्पुळ्ळ श्रीरामायणं बोधहीनन्मार्क्-क्कियांवण्णं चोल्लीटुन्नेन् । वेदवेदांग वेदान्तादि विद्यकळेल्लां

के पुत्र के पुत्र (पौत्र) हैं, जो स्वयं विष्णु के अवतार स्वरूप हैं तथा जिन्होंने विष्णु के मायात्मक गुणों से प्रेरित चरित को स्वयं देखा है, मैं उन कवि श्रेष्ठ एवं महामुनि वाल्मीकि को वरदानार्थ प्रणाम करता हूँ, जो चारों वेदों के समान (महत्वपूर्ण) रामायण की रचना करके चतुरानन (ब्रह्मा) के आदरपात्र बने हैं। राम नाम का सदा ही अनुस्मरण करनेवाले उमापति (शिव) जो कामदेव के शत्रु, महादेव, महेश्वर, परमेश्वर एवं सर्वेश्वर हैं, सदा मेरे मन में विराजमान हों, इसके लिए मैं उनको प्रणाम करता हूँ। २० वारिजोद्भव (ब्रह्मा) जैसे देव, नारद सरीखे मुनिवर, कामदेव के शत्रु की प्रिया (पार्वती) तथा वारिजतनया (लक्ष्मी) मुझे अनुगृहीत करें। मैं उन कारणभूत ब्राह्मणों को प्रणाम करता हूँ जिनके चरणांबुज का स्वेद जल मेरे मन रूपी दर्पण में लगा हुआ कलमष दूर कर उसे स्वच्छ बना सकता है। गुरुप्रवर ने समझाया था कि जगन्मय भगवान (संबंधी तत्वज्ञान) के लिए आधार वेद हैं और उन वेदों के लिए आधार ये भूदेव प्रवर (ब्राह्मण श्रेष्ठ) हैं; जिनके अभिशाप एवं वरदान ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर तक को मान्य हैं। ऐसे उत्तम वेदज्ञों की महत्ता का गुणगान कौन कर पायेगा ! (वेदज्ञों का) चरणसेवक, भक्तों का दास तथा ब्रह्मपाद की सेवा करते रहनेवाले अज्ञानियों में अग्रगण्य मैं वेदोपम प्राचीन (काल से चली आती हुई) रामायण का बुद्धिहीन जनों के बोधार्थ

चेतसि तॆळिञ्ञुणर्न्नीवोळं तुणक्कणं । ३०   सुरसंहतिपति तदनु स्वाहापति वरदन् पितृपति निर्यति जलपति तरसा सदागति सदयं निधिपति करुणानिधि पशुपति नक्षत्रपति सुरवाहिनीपति तनयन् गणपति सुरवाहिनीपति प्रमथ भूतपति श्रुतिवाक्यात्मा दिनपति खेटानांपति जगति चराचर जातिकळायुळ्ळोरु अगतियायोरटियन्ननुग्रहिक्केणमकमे ञाननिशं वन्दिक्कुन्नेन् । अग्रजन् ममसतां विदुषामग्रेसरन् मद्गुरुनाथननेकान्तेवासिकळोटुं उळ्कुरुन्निङ्कल् वाळ्क रामनामाचार्यनुं मुख्यन्माराय गुरुभूतन्मार् मट्टुळ्ळोरुं । श्रीरामायणं पुराविरिञ्च विरचितं नूरु कोटि ग्रन्थमुण्टिल्लतु भूमितन्निल् रामनामत्तॆज्जपिच्चोरु काट्टाळन् मुन्नं मामुनि प्रवरनाय्वन्नतु कण्टु धाता भूमियिलुळ्ळ जन्तुक्कळ्क्कु मोक्षार्त्थमिनि श्री महारामायणं चमय्क्केन्नरुळ् चेय्तु ४० वीणापाणियुमुपदेशिच्चु रामायणं वाणियुं वाल्मीकितन् नाविन्मेल् वाणीटिनाळ् । वाणीटुकव्वण्णमॆन्नाविन्मेलेवं चोल्-वान् नाणमाकुन्नु तानुमतिन्नॆन्तावतिप्पोळ् । वेदशास्त्रङ्ङळ्-क्कधिकारियल्लॆन्नतोर्त्तु चेतसि सर्वं क्षमिच्चीटुविन् कृपयाले ।

गान करता हूं । वेद, वेदांग, वेदान्त आदि सभी विद्याएँ मन में जागृत हो मेरा अनुग्रह करें । ३० — सुरसंहति पति (देव समूह का स्वामी इन्द्र) फिर स्वाहापति (अग्नि), वरदाता पितृपति (यमराज), निरृति (अष्ट-दिग्पालकों में एक), शक्ति स्वरूप सदागति (वायुदेव), दयालु निधिपति (कुबेर), करुणामूर्ति पशुपति (शिव), नक्षत्रपति (चन्द्र), सुरवाहिनीपति (शिव) के सुपुत्र गणपति, देवगंगा के नाथ भूतपति, श्रुतिवाक्य स्वरूप दिनपति (सूर्य), खेडापति, संसार के चराचर सबकी अनुकंपा पाने के लिए मैं (सबका) दास मन ही मन प्रार्थना करता हूं। विद्वान् सज्जनों में अग्रेसर मेरे ज्येष्ठ भ्राता, अपने असंख्य अनुचरों सहित मेरे गुरुवर रामनाचार्य और दूसरे प्रमुख गुरुगण मेरे मानस में सदा वास करें। पुरातन काल में ब्रह्मा द्वारा सौ करोड़ पंक्तियों में विरचित रामायण आज भूमि पर अप्राप्य है। पूर्वकाल में राम नाम का जाप करते चण्डाल को मुनि श्रेष्ठ के रूप में परिवर्तित होते हुए देखकर ब्रह्मा जी ने भूतल के प्राणिवर्ग के मोक्षार्थ श्रीमहारामायण की रचना करने का वाल्मीकि को आदेश दिया । ४० वीणापाणि (सरस्वती) ने (वाल्मीकि को) रामायण का उपदेश किया और वाणी वाल्मीकि की जिह्वा पर जा विराजित हुई। किन्तु अपने को वेदशास्त्र का अनधिकारी समझकर वैसे ही अपनी जिह्वा पर भी विराजमान

अध्यात्म प्रदीपकमत्यन्तं रहस्यमितध्यात्मरामायणं मृत्युशासन प्रोक्तं अध्ययनं चेय्तीटुं मर्त्य जन्मिकळ्क्कॆल्लां मुक्ति सिद्धिक्कुम- संदिग्ध मिज्जन्मं कॊण्टे, भक्तिकॆकॊण्टु केट्टुकोळ्ळुविन् चॊल्लीटुवनॆत्रयुं चुरुक्कि ञान् राममाहात्म्यमॆल्लां। बुद्धिमत्तु- क्कळायोरिक्कथ केळ्कुन्नाकिल् बद्धराकिलुमुटन् मुक्तराय्वन्नु कूटुं। धात्रि भारत्तॆत्तीर्प्पान् ब्रह्मादि देवगणं प्रार्थिच्चु भक्तिपूर्वं स्तोत्रं चेय्ततुमूलं दुग्धाब्धिमद्ध्ये भोगिसत्तमनायीटुन्न मेत्तमेल् योगनिद्र चेय्तीटुं नारायणन् धात्रीमण्डलं तन्निल् मार्त्ताण्ड- कुलत्तिङ्कल् धात्रीन्द्रवीरन् दशरथनु तनयनाय्। ५० रात्रिचारि- कळाय रावणादिकळ् तम्मॆ मार्त्ताण्डात्मजपुरं प्रापिप्पिच्चोरु शेषं। आद्यमां ब्रह्मत्वं प्रापिच्च वेदान्त वाक्य वेद्यनां सीतापति श्रीपादं वन्दिक्कुन्नेन्। कैलासाचले सूर्यकोटि शोभिते विमलालये रत्नपीठे संविष्टं ध्याननिष्ठं फाललोचनं मुनिसिद्ध देवादि सेव्यं नील लोहितं निज भर्त्तारं विश्वेश्वरं वन्दिच्चु वामोत्संगे वाळुन्न भगवति सुन्दरि हैमवति चोदिच्चु भक्तियोटे:– ५५

होने के लिए (वाणी से) आग्रह करते हुए संकोच का अनुभव कर रहा हूँ। पर क्या करूँ! आप मेरी धृष्टता क्षमा करें। मृत्युशासन (ब्रह्मा) से प्रोक्त अत्यन्त रहस्यमय यह अध्यात्म रामायण अध्यात्म का प्रदीप है और जो समस्त मर्त्य इसका अध्ययन करेंगे वे निस्संदेह इसी जन्म में मुक्ति प्राप्त करेंगे। (यह समझकर) मैं अत्यन्त संक्षेप में राम माहात्म्य बता रहा हूँ, सब लोग भक्ति से इसका श्रवण करें। जो बुद्धिमान लोग यह कथा सुनेंगे, वे (माया से) आबद्ध होने पर भी मुक्त हो जाएँगे। ब्रह्मा आदि देवगणों ने धरित्री को भार मुक्त करने की (विष्णु से) प्रार्थना की तो क्षीरसागर में अनंत शय्या पर सानंद योगनिद्रा में तल्लीन नारायण पृथ्वी मंडल में मार्तण्ड कुल में महीपति (राजा) दशरथ के पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुए। ५० —और निशाचर रावण आदि को मार्तण्डात्मजपुर (यमपुरी) में पहुँचा दिया। मैं (उन) वेदान्त वाक्यों से वेद्य आदि ब्रह्म सीतापति के श्रीचरणों पर प्रणाम करता हूँ। कैलास पर्वत पर करोड़ों सूर्यों से सुशोभित विमल आलय में रत्नपीठ पर ध्यानस्थ हो बैठे तथा सिद्धों, देवों से सेव्य अपने प्रिय भाललोचन एवं नीललोहित विश्वेश्वर की वंदना करते हुए वाम उत्संग (गोद) पर स्थित सुन्दरी भगवती हैमवती (हिमालय की पुत्री पार्वती) ने भक्तिपूर्वक पूछा:—५५

उमा महेश्वर संवादम्

सर्वात्मावाय नाथ ! परमेश्वर ! पोऱ्‌ि ! सर्वलोकवास ! सर्वेश्वर ! महेश्वर ! शर्व ! शंकर ! शरणागतजनप्रिय ! सर्वदेवेश ! जगन्नायक ! कारुण्याब्धे ! अत्यन्तं रहस्यमां वस्तुवेन्निरिक्किलुमेत्रयु महानुभावन्मारायुळ्ळ जनं भक्ति विश्वास शुश्रूषादिकळ् काणुंतोरुं भक्तन्मार्कुपदेशं चेय्तीटुमेन्नु केळ्प्पू । आकयाल् ञानुण्टीन्नु निन्तिरुवटितन्नोटाकांक्षा परवशचेतसा चोदिक्कुन्नु; कारुण्य मेन्नेक्कुरिच्चुण्टेङ्किलेनिक्किप्पोळ् श्रीराम देवतत्त्वमुपदेशिच्चीटणं । तत्त्वभेदङ्ङळ् विज्ञान ज्ञान वैराग्यादि भक्तिलक्षणं सांख्य योग भेदादिकळुं क्षेत्रोपवासफलं योगादि कर्मफलं तीर्थस्नानादिफलं दान धर्मादिफलं वर्णधर्म्मङ्ङळ् पुनराश्रम धर्म्मङ्ङळुमेन्निवयेल्लामेन्नोटोन्नोळियातवण्णं निन्तिरु-वटियरुळ् चेय्तु केट्टतुमूलं सन्तोषमकतारिलेट्वुमुण्टाय्वन्नु । १० वंध मोक्षङ्ङळुटे कारणं केळ्कमूलमन्धत्वं तीर्न्नु कूटि चेतसिजगत्पते ! श्रीराम देवन् तन्टे माहात्म्यं केळ्प्पानुळ्ळल्पारमाग्रहमुण्टु ञानतिन् पात्रमेङ्किल् कारुण्यांबुधे ! कनिञ्ञरुळिच्चेय्तीटणमारुं

उमा-महेश्वर संवाद

सर्वात्म स्वरूप हे नाथ ! हे परमेश्वर ! हे प्रभु ! हे सर्वलोकवासी सर्वेश्वर ! हे महेश्वर ! हे शर्व ! हे शंकर ! आप शरणागत वत्सल, सर्वदेवों के ईश्वर, जगत के स्वामी एवं करुणासागर हैं। मैंने सुन रखा है कि चाहे कितनी ही रहस्यपूर्ण वस्तु क्यों न हो, महानुभाव लोग अपने जन की भक्ति, विश्वास एवं सेवा से प्रेरित हो उसका उपदेश देते हैं। अत: अपने मन की अभिलाषा एवं विकलता लेकर मैं आपसे एक बात पूछना चाहती हूँ। अगर आपके मन में मेरे प्रति थोड़ी भी सद्भावना हो तो आप मुझे श्रीराम के तात्विक स्वरूप का उपदेश दीजिए। तत्व का स्वरूप, ज्ञान-विज्ञान, वैराग्य आदि भक्ति के विविध लक्षण, सांख्य योग और उसके भेद, मंदिर-वास से लाभ, वर्ण-धर्म और आश्रमधर्म--इन सबका आपने बिना कुछ छूटे ही सविस्तार उपदेश दिया। इन सबके श्रवण से मेरे मन में सुख एवं सन्तोष संजात हुआ। १० —हे जगन्नाथ (सांसारिक) बंधन और मुक्ति के कारणों से अवगत होने पर मेरे मन का अंधकार मिट गया। हे करुणानिधि ! (मेरे मन में) राम के माहात्म्य के बारे में सुनने की बड़ी इच्छा है और अगर मैं उस ज्ञान का श्रवण करने योग्य पात्र हूँ तो कृपया उसे समझाइये। आपको छोड़ कौन ऐसा

निन्तिरुवटियोळिञ्ञल्लतु चॊल्लुवान् । ईश्वरि कात्यायनि पार्वति भगवति शाश्वतनाय परमेश्वरनोटीवण्णं चोद्यं चॆय्ततु केट्टु तॆळिञ्ञु देवन् जगदाद्यनीश्वरन् मन्दहासं पूण्टरुळ्चॆय्तु:— धन्ये ! वल्लभे ! गिरिकन्ये ! पार्वती ! भद्रे ! निन्नोळमार्क्कुमिल्ल भगवद्भक्ति नाथे ! श्रीरामदेवतत्त्वं केळ्क्कणमॆन्नु मनतारिलाकांक्षयुण्टाय्वन्नतु महाभाग्यं । मुन्नमॆन्नोटितारुं चोद्यं चॆय्तील ञानुं निन्नाण केळ्प्पिच्चतिल्लारेयुं जीवनाथे ! अत्यन्तं रहस्यमायुळ्ळोरु परमात्म तत्त्वार्त्थमरिकयिलाग्रहमुण्टायतुं भक्त्यतिशयं पुरुषोत्तमन् तङ्कलेटं नित्यवुं चित्तकाम्पिल् वर्द्धिक्कतन्नॆमूलं । २० श्रीराम पादांबुजं वन्दिच्चु संक्षेपिच्चु सारमायुळ्ळतत्त्वं चॊल्लुवान् केट्टालुं नी । श्रीरामन् परमात्मा परमानंदमूर्त्ति पुरुळन् प्रकृतितन् कारणनेकन् परन् पुरुषोत्तमन् देवनन्तनादिनाथन् गुरु कारुण्यमूर्त्ति परमन् परब्रह्मं जगदुत्भव स्थिति प्रळय कर्त्तावाय भगवान् विरिञ्चनारायण शिवात्मकन् अद्वयनाद्यनजनव्ययनात्मा रामन् तत्त्वात्मा सच्चिन्मयन् सकळात्मकनीशन् मानुळनॆन्नु कल्पिच्चीटुवोरज्ञानिकळ् मानसं माया-

---

है जो यह समझाने योग्य है ! ईश्वर स्वरूपिणी कात्यायनी भगवती पार्वती के द्वारा शाश्वत परमेश्वर से इस प्रकार आग्रह किये जाने पर संसार के आद्य स्वरूप भगवान परमेश्वर ने मंदहास के साथ सहर्ष बताया—"हे प्रिये ! हे गिरिकन्ये ! हे पार्वती ! भद्रे ! तुम धन्य हो । तुम्हारी जैसी भगवत्-भक्ति दूसरे किसी में नहीं है । यह परम सौभाग्य की बात है कि तुम्हारे मन में रामदेव के तत्वज्ञान की बातें सुनने की अभिलाषा पैदा हुई । हे प्राणप्रिये ! तुम्हारी सौगन्ध है, कि इसके पूर्व न किसी ने मुझसे ऐसा प्रश्न किया, न मैंने किसी को यह समझाया । पुरुषोत्तम के प्रति नित्य तुम्हारे मन में भक्ति बढ़ते रहने से अत्यन्त गूढ़ एवं रहस्यमय परमात्मतत्व को जानने की तुम्हारी यह उत्सुकता बढ़ी है । २० (अत:) श्रीरामचन्द्र के चरण-कमलों की वंदना करते हुए मैं अत्यन्त सारतत्व तुम्हें संक्षेप में समझा दूंगा । तुम ध्यान से (मेरी बात) सुन लो । श्रीराम जी परमात्मा एवं परमानंदमूर्ति हैं । (वे) प्रकृति के लिए कारणभूत परमपुरुष हैं । वे पुरुषोत्तम, अनन्त, आदिनाथ, अत्यन्त करुणा सागर, परमब्रह्म (सब कुछ) हैं । जगत के उद्भव, स्थिति एवं संहार हेतु ब्रह्मा विष्णु एवं शिवस्वरूप हैं । राम अद्वैत पुरुष हैं, अनादि, अव्यय, अजन्मा हैं; तत्वस्वरूप, सच्चिन्मय, सर्वभूतों की आत्मा बनकर रहनेवाले ईश्वर

तमस्संवृतमाकमूलं सीताराघवमरुत्सूनु संवादं मोक्षसाधनं चौल्लुवन् नाथे केट्टालुं तॆळिञ्ञु नी। ऎँङ्किलो मुन्नं जगन्नायकन् रामदेवन् पङ्कजलोचनन् परमानन्दमूर्ति देवकण्टकनाय पंक्ति कंठने कॊन्नु देवियुमनुजनुं वानरप्पटयुमाय् सत्वरमयोद्ध्य-पुक्कभिषेकवुं चॆय्तु सत्तामात्रात्मासकलेशनव्ययन् नाथन्; ३०
मित्र पुत्रादिकळां मित्रवर्गत्तालुमत्युत्तमन्मारां सहोदरवीरन्मारालुं कीकसात्मजसुतनां विभीषणनालुं लोकेशात्मजनाय वसिष्ठादिकळालुं सेव्यनाय् सूर्यकोटि तुल्य तेजसा जगच्छ्राव्यमां चरितवुं केट्टु-केट्टानंदिच्चु निर्म्मल मणिलसल् काञ्चन सिंहासने तन्माया-देवियाय जानकियोटुं कूटि, सानन्दमिरुन्नरुळीटुन्नेरं परमानन्द मूर्त्ति तिरुमुम्पिलाम्मारु भक्त्या वन्दिच्चु निल्कुन्नोरु भक्तनां जगत्प्राणनन्दनन् तन्नॆ तृक्कण्पार्त्तु करुणामूर्त्ति मन्दहासवुं पूण्टु सीतयोटरुळ् चॆय्तु सुन्दररूपे! हनुमानॆ नी कण्टायल्ली निन्निलुमॆन्निलुमुण्टॆल्लानेरवुमिवन् तन्नुळ्ळिलभेदमायुळ्ळोरु भक्ति नाथे! धन्ये! सन्ततं परमात्मज्ञानत्तॆयॊऴिच्चॊन्निलुमॊरु नेरमाशयुमिल्लयल्लो। निर्म्मलनात्मज्ञानत्तिन्निवन् पात्रमत्रे

हैं। राम को वे ही अज्ञानी जिनका मन माया निर्मित अंधकार से आवृत है, मनुष्य रूप में कल्पित करते हैं। हे प्रिये! मुक्ति के लिए साधन स्वरूप सीता-राघव की कथा मैं समझाता हूँ, तुम सानन्द सुनो। पूर्वकाल में जगत के नाथ, कमल जैसे नेत्रवाले एवं आनन्दस्वरूप राम ने देवों के लिए कंटक बने दशकंठ (रावण) का वध किया तथा केवल स्वरूप, सर्वेश्वर एवं अव्यय स्वरूप प्रभु भगवान ने तुरन्त ही देवी, अनुज तथा वानर सेना सहित अयोध्या में पहुँच राजतिलक स्वीकार किया। ३०
सूर्यवंशी आत्मीय जनों, अत्युत्तम अपने भ्राताओं, राक्षसवंशजात विभीषण, लोकेशात्मज वसिष्ठ आदि से परिसेवित हो निर्मल मणियों से लसित रत्नसिंहासन पर करोड़ों सूर्यसम दीप्तिवाले राम अपनी माया स्वरूपिणी सीता के साथ विराजमान हो संसार के लिए श्रवणीय अपने ही चरित सुन सुनकर हर्षित हो रहे थे; तभी परमानन्द स्वरूप राम ने अपने सम्मुख भक्तिपूर्वक वन्दना करते खड़े वायुनन्दन की ओर नेत्र फेरे और मंदमुस्कान के साथ सीता से कहा—"सुन्दर स्वरूपिणी! तुम हनुमान की ओर ज़रा देखो। इनके मन में तुम्हारे प्रति तथा मेरे प्रति अभेद भक्ति है। धन्ये! इनके मन में परमात्मज्ञान को छोड़ और किसी वस्तु की इच्छा नहीं है। ये अनासक्त नित्य ब्रह्मचारियों में अग्रेसर हैं और अपनी निर्मलता के कारण

निर्म्ममन् नित्य ब्रह्मचारिकळ् मुम्पनल्लो, ४० कल्मषमिवनेतु-
मिल्लेऩ्ऩु धरिच्चालुं तन्मनोरथत्ते ऩी नल्कणं मटियाते । ऩम्मुटे-
तत्त्वमिवन्नऱियिक्कणमिप्पोळ् चिन्मये जगन्मये सन्मये मायामये !
ब्रह्मोपदेशत्तिनु दुर्लभं पात्रमिवन् ब्रह्मज्ञानार्त्थिकळिलुत्तमोत्तमनेंटो!
श्रीरामदेवनेवमरुळिचेय्त नेरं मारुति तन्ने विळिच्चरुळिच्चेय्तु देवि–
वीरन्मार्चूटुं मुकुटत्तिन् नायकक्कल्ले ! श्रीरामपाद भक्त प्रवर !
केट्टालुं ऩी । सच्चिदानन्दमेकमद्वयं परब्रह्मं निश्चलं सर्वोपाधि
निर्म्मुक्तं सत्तामात्रं । निश्चयिच्चरिञ्ञु कूटातोरुवस्तुवेन्नु
निश्चयिच्चालुमुळ्ळल् श्रीरामदेवने ऩी, निर्म्मलं निरञ्जनं निर्ग्गुणं
निर्विकारं सन्मयं शान्तं परमात्मानं सदानन्दं जन्म नाशादि
कळिल्लातोरुवस्तु परब्रह्ममी श्रीरामनेऩ्ऩऱिञ्ञु कौण्टालुं ऩी ।
सर्वकारणं सर्वव्यापिनं सर्वात्मानं सर्वज्ञं सर्वेश्वरं सर्वसाक्षिणं
नित्यं ५० सर्वदा सर्वाधारं सर्वदेवतामयं निर्विकारात्मा
रामदेवनेऩ्ऩऱिञ्ञालुं । ऍन्नुटे तत्त्वमिनिच्चोल्लीटामुळ्ळवण्णं ऩिऩ्ऩोटु
ञान् तान् मूल प्रकृतियायतेंटो ! ऍन्नुटे पतियाय परमात्मावुतऩ्टे
सन्निधिमात्रं कौण्टु ञानिव सृष्टिय्कुऩ्ऩु, तत्सान्निद्ध्यं कौण्टेऩ्ऩाल्

आत्मज्ञान पाने योग्य पात्र हैं । ४० —तुम इन्हें कल्मषहीन समझ लो और इनकी मनोभिलाषा को पूर्ण कर दो । हे चिन्मय स्वरूपिणी, जगन्मयी सन्मयी और मायामयी ! इन्हें हमारे तत्व का ज्ञान अभी करा देना चाहिए । ये ब्रह्मोपदेश के लिए दुर्लभ पात्र हैं और ब्रह्मज्ञानार्थियों में सर्वोत्तम व्यक्ति हैं ।" इस प्रकार श्रीरामचन्द्र जी के कहते ही देवी ने मारुति को अपने पास बुलाकर कहा—"वीरों के सिरमौर ! श्रीराम के चरणों के प्रति अनन्य भक्त ! तुम सुनो । श्रीरामचन्द्र जी के संबंध में तुम यह निश्चय पूर्वक विचार कर लो कि वे ऐसे तत्व हैं जिनकी निश्चित जानकारी कोई पा नहीं सकता । वे सच्चिदानंद स्वरूप, एक और अद्वय, परब्रह्म, निश्चल, सर्वोपाधिरहित केवल सत्ता हैं । वे निर्मल, निरंजन, निर्गुण, निर्विकार, सन्मय, शान्त, सदानंद परमात्मा हैं । तुम श्रीरामचन्द्र जी को जन्म-मृत्यु रहित परब्रह्म समझ लो । वे सर्वकारण, सर्वव्यापी, सर्वात्मा, सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, सर्वसाक्षी, नित्य । ५० —सर्वदा सर्वाधार, सर्व देवतामय, निर्विकारात्मा हैं । इस बात को तुम जान लो । अब मैं तुमसे अपने स्वरूप का वर्णन कर दूँगी । मैं ही मूल प्रकृति हूँ, इससे अवगत हो जाओ । मैं अपने पति परमात्मा के सान्निध्य से सृष्टि करती हूँ । किन्तु मूर्ख लोग उनके सान्निध्य पर मुझसे स्रष्ट सबको उन्हीं का

सृष्टमायवयेल्लां तत्स्वरूपत्तिङ्कलाक्कीटुन्नु मूढजनं; तत्स्वरूपत्ति-
नुण्टो जननादिकळेन्नु तत्स्वरूपत्ते अऱिञ्ञवनेयऱियावू । भूमियिल्
दिनकरवंशत्तिलयोद्ध्ययिल् रामनाय् सर्वेश्वरन्तान् वन्नु पिरन्नतुं
आमिष भोजिकळे वधिप्पानाय्कोण्टु विश्वामित्रनोटुंकूटियेळुन्नळ्ळिय
कालं क्रुद्धयायटुत्तोरु दुष्टयां ताटकये पद्धतिमद्ध्ये कोन्नु सत्वरं
सिद्धाश्रमं बद्धमोदेन पुक्कु याग रक्षयुं चेय्तु सिद्ध संकल्पनाय
कौशिकमुनियोटुं मैथिल राज्यत्तिनाय्कोण्टु पोकुन्न नेरं गौतम
पत्नियायोरहल्या शापं तीर्त्तु । ६० पाद पङ्कजं तोळुतवळेयनु-
ग्रहिच्चादरपूर्वं मिथिलापुरमकं पुक्कु मुप्पुर वैरियुटे चापवुं-
मुरिच्चुटन् मल्पाणिग्रहणवुं चेय्तु पोरुन्न नेरं मुल्पुक्कु तटुत्तोरु
भार्गवरामन् तन्टे दर्प्पवुमटक्किवन्पोटयोद्ध्ययुं पुक्कु द्वादश
संवत्सरमिरुन्नु सुखत्तोटे तातनुमभिषेकत्तिन्नारंभिच्चानतु—
मातावु कैकेयियुं मुटक्कियतुमूलं भ्रातावाय सुमित्रात्मजनोटुं कूटे
चित्रकूटं प्रापिच्चु वसिच्च कालं तातन् वृत्रारिपुरं पुक्कवृत्तान्तं
केट्टशेषं चित्तशोकत्तोटुदक क्रियादिकळ् चेय्तु भक्तनां भरतनेययच्चु
राज्यत्तिनाय् । दण्डकारण्यं पुक्ककालत्तु विराधने खण्डिच्चु

स्वरूप मान बैठते हैं। वे जन्मादि रहित हैं, इसे वे ही समझ
सकते हैं जिन्होंने उनके स्वरूप का सही ज्ञान प्राप्त कर लिया है।
इस पृथ्वी पर अयोध्यापुरी में सूर्यवंश में राम के रूप में सर्वेश्वर ने ही
जन्म लिया। आमिष भोजियों का वध करने के लिए विश्वामित्र के साथ
पधारते समय रास्ते पर क्रुद्ध हो आयी नीच ताडका को मार डाला।
फिर सिद्धाश्रम में पहुँचकर सहर्ष याग रक्षा की। संकल्प सिद्ध कौशिक
मुनि के साथ मिथिला देश को जाते समय गौतम-पत्नी अहल्या को शाप
से विमुक्त कर दिया। ६० —अपने चरण-सरोजों पर नमित अहल्या को
अनुगृहीत करके सादर मिथिलापुरी में पहुँचे और त्रिपुरारी के चाप को
खंडित कर मेरा पाणिग्रहण करके लौटते समय मार्ग में बाधा उपस्थित
करने आये भार्गवराम का दर्प चूर-चूर कर लिया और बड़े आनंद के साथ
अयोध्या में वापस आये। द्वादश वर्ष सुखपूर्वक बीत गये। पिता जी
ने उनके राज्याभिषेक का आरंभ किया, जिसे माता कैकेई ने भंग किया।
तदुपरान्त भ्राता सुमित्रात्मज के साथ चित्रकूट में जा ठहरते समय पिताजी
के वृत्रारिपुर (स्वर्ग) पहुँचने का समाचार सुना। शोकातुर हो
पिताजी के लिए उदक क्रियाएँ अर्पित कीं और भक्त भरत को राज्य
(अयोध्या) की ओर वापस भेज दिया। दण्डकारण्य में रहते हुए विराध

कुंभोत्भवनामगस्त्यनेक्कण्टु पण्डितन्मारां मुनिमारोटु सत्यं चेय्तु दण्डमेन्निये रक्षोवंशत्तेयोटुक्कुवान् पुक्कितु पञ्चवटि तत्र वाणीटुं कालं पुष्करशर परवशयाय् वन्नाळल्लो। ७० रक्षोनायकनुटे सोदरि शूर्प्पणख लक्ष्मणनवळुटे नासिकाच्छेदं चेय्तु; उन्नतनाय खरन् कोपिच्चु युद्धत्तिनाय् वन्नितु पतिनालु सहस्रं पटयोटुं, कोन्नितु मून्ने मुक्काल् नाळिक कोण्टुतन्ने पिन्ने शूर्प्पणख पोय् रावणनोटु चोन्नाळ्— मायया पोन्मानाय् वन्नोरु मारीचन् तन्ने सायकं प्रयोगिच्चु सद्गति कोटुत्तप्पोळ् माया सीतये क्कोण्टु रावणन् पोयशेषं माया मानुषन् जटायुस्सिनु मोक्षं नल्कि। राक्षस वेषं पूण्ट कबन्धन् तन्ने क्कोन्नु मोक्षवुं कोटुत्तु पोय् शबरितन्नेक्कण्टु मोक्षदनवळुटे पूजयुं कैक्कोण्टथ मोक्षदानवुं चेय्तु पुक्कितु पम्पातीरं। तत्र कण्टितु निन्नेप्पिन्ने निन्नोटु कूटि मित्र नंदननाय सुग्रीवन् तन्नेक्कण्टु मित्रमायिरिप्पूतेन्नन्योन्यं सख्यं चेय्तु वृत्रारि पुत्रनाय बालिये वधं चेय्तु। सीतान्वेषणं चेय्तु दक्षिण जलधियिल् सेतुबंधनं लंकामर्द्दनं पिन्ने श्शेषं ८० पुत्रमित्रामात्य भृत्यादि कळोटुं कूटि युद्ध सन्नद्धनाय शत्रुवां

को खण्डित किया, कुम्भोद्भव अगस्त्य से मिले और पंडित प्रवर मुनिश्रेष्ठों से तुरन्त ही राक्षसवंश का नाश करने की प्रतिज्ञा की। (फिर) पंचवटी में पहुँचे और वहाँ के वासकाल में काम पीडित हो आयी। ७० —राक्षस प्रवर की सहोदरी शूर्पणखा का लक्ष्मण ने नासिका छेदन किया। क्रुद्ध हो बलशाली खर चौदह सहस्र सैनिकों को लेकर युद्ध के लिए आया। (राम ने) उन्हें पौने चार घड़ियों के भीतर मार डाला। फिर शूर्पणखा ने जाकर रावण से (सारा हाल) कहा। जब मायावश कनकमृग का रूप धारणकर आये मारीच को सायक का प्रयोग करके सद्गति (स्वर्ग) दी, तब माया सीता को लेकर रावण के जाने पर माया मनुष्य (राम) ने जटायु को मोक्ष दिया। राक्षस वेश में आये कबंध को मारकर मुक्ति दान करके आगे बढ़ शबरी से मिले। मुक्ति प्रदाता (राम) ने उसका आतिथ्य स्वीकार किया और उसे मुक्ति दिलाने के उपरांत पम्पातट पर पहुँचे। वहाँ पर तुम्हारी भेंट हुई और तुम्हारे साथ मित्रसुत सुग्रीव से मिले। परस्पर मित्रता की प्रतिज्ञा करके वृत्रारिपुत्र बालि का वध किया। सीतान्वेषण, दक्षिण जलनिधि में सेतुबंधन और फिर लंका पर चढ़ाई हुई। ८० पुत्र, मित्र, अमात्य, भृत्य आदि को लेकर युद्ध के लिए तैयार हुए शत्रु दशमुख का शस्त्र से वध किया, त्रिलोक की रक्षा की और

दशास्यनें शस्त्रेण वधं चेय्तु रक्षिच्चु लोकत्रयं भक्तनां विभीषणन्नभिषेकवुं चेय्तु । पावकन् तङ्कल् मऽञ्ञिरुन्नोरेन्ने पिन्नें पावनयेन्तु लोकसम्मत माक्किक्कोण्टु पावकनोटु वाङ्ङिप्पुष्पकं करयेऱि देवकळोटुमनुवादं कोण्टयोद्धयां— राज्यत्तिन्नभिषेकं चेय्तु देवादिकळाल् पूज्यनायिरुन्नरुळीटिनान् जगन्नाथन् । याज्यनां नारायणन् भक्तियुळ्ळवऽक्कु सायुज्यमां मोक्षत्तें नल्कीटिनान् निरञ्जनन् । एवमादिकळाय कर्म्मङ्ङळ् तन्टे माया देवियामेन्नेक्कोण्टु चेय्यिप्पिक्कुन्नु नूनं । रामनां जगद्गुरु निर्गुणन् जगदभिरामनव्ययनेकनानन्दात्मकनात्मा । रामनद्वयन् परन् निष्कळन् विद्वल् भृंगारामनच्युतन् विष्णु भगवान् नारायणन् । गमिक्केन्नतुं पुनरिरिक्केन्नतुं किञ्चिल् भ्रमिक्केन्नतुं तथा दुःखिक्केन्नतुमिल्ल । ९० निर्विकारात्मा तेजोमयनाय् निऽञ्ञोरु निर्वृतनोरुवस्तु चेय्कयिल्लोरुनाळुं निर्म्मलन् परिणाम हीननानन्दमूर्त्ति चिन्मयन् मायामयन्तन्नुटे मायादेवि । कर्म्मङ्ङळ् चेय्युन्नतु तानेन्नु तोन्निक्कुन्नु तन्मायागुणङ्ङळेत्ताननुसरिक्कयाल् अञ्जना तनयनोटिङ्ङनें सीतादेवि कञ्जलोचन तत्त्वमुपदेशिच्च शेषं अञ्जसा रामदेवन् मन्दहासवुं चेय्तु मञ्जुळवाचा

विभीषण का राजतिलक संपन्न कर दिया। पावक में छिपी बैठी मेरी पवित्रता के लिए संसार को साक्षी बनाकर मुझे पावक से वापस लिया, देवताओं की अनुमति लेकर पुष्पक विमान में चढ़कर अयोध्या में आ राज्याभिषेक को स्वीकार किया और देवताओं से सेवित हो विराजमान हुए। याज्य नारायण ने, जो निरंजन हैं, भक्तों को सायुज्य मुक्ति प्रदान की है। वे निश्चय ही ये सारे कर्म अपनी माया शक्ति स्वरूपिणी मुझसे करवाते हैं। जगद्गुरु राम निर्गुण, जगदाभिराम, अव्यय, एक, आनन्दस्वरूप, आत्मा हैं। राम अद्वय, परम, निष्कल, विद्वत् भृंगों के लिए आनन्दस्वरूप, अच्युत, विष्णु, भगवान नारायण हैं। वे न कहीं जाते हैं, न कहीं बैठते हैं, न किंचित् भ्रमित होते हैं, न कभी दुखी होते हैं। ९० वे निर्विकार, तेजोमय, पूर्ण और निवृत्त हैं, जो कभी कोई कर्म नहीं करते। वे निर्मल, परिणाम रहित, आनंदमूर्ति, चिन्मय, एवं मायामय हैं; कार्य करनेवाली उनकी मायादेवी है। मायात्मक गुणों का अनुसरण करने से ऐसा अनुभव होने लगता है कि वे ही प्रवृत्तिशील हैं।" कंजलोचना सीतादेवी के द्वारा अंजनातनय को इस प्रकार तत्वोपदेश करते सुनकर सहसा मंदहास के साथ उनको रामदेव ने मंजुल वाणी में बताया—"तुम यह समझ लो

पुनरवनोटरुळ् चेय्तु– परमात्मावाकुन्न बिंबत्तिन् प्रतिबिंबं परिचिल् काणुन्नतु जीवात्मावल्लेंटो ! तेजोरूपिणियाकुमेन्नुटे मायतङ्कल् व्याजमेन्निये निळलिक्कुन्नु कपिवर ! ओरोरो जलाशये केवलं महाकाशं नेरे नी काण्मीलयो ? कण्टालुमतुपोले । साक्षालुळ्ळोरु परब्रह्ममां परमात्मा साक्षियायुळ्ळ बिंबं निश्चलमतु सखे ! तत्त्वमस्यादि महावाक्यार्थं कोण्टुमम तत्वत्तेयरिञ्ञीटा-माचार्य कारुण्यत्ताल् । १०० मत्भक्तनायुळ्ळवनिप्पदमरियुम्पोळ् मत्भावं प्रापिच्चीटुमिल्ल संशयमेतुं । मत्भक्ति विमुखन्मार् शास्त्रगर्तङ्ङळ् तोरुं सत्भावंकोण्टु चाटिवीणु मोहिच्चीटुन्नु । भक्तिहीनन्मार्क्कुं नूरायिरं जन्मंकोण्टुं सिद्धिक्कयिल्ल तत्वज्ञानवुं कैवल्यवुं । परमात्मावां मम हृदयं रहस्यमितोरुन्नाळुं मत्भक्ति हीनन्माराय् मेवीटुं नरन्मारोटु परञ्ञरियिक्करुतेंटो ! परम-मुपदेशमिल्लितिन्मीतेयोन्नु । श्री महादेवन् महादेवियोटरुळ् चेय्तु राम माहात्म्यमिदं पवित्रं गुह्यतमं । साक्षाल् श्रीरामप्रोक्तं वायु-पुत्रनाय्कोण्टु मोक्षदं पापहरं हृद्यमानन्दोदयं । सर्ववेदान्त

कि परमात्मा रूपी बिम्ब का प्रतिबिंब ही यह दिखाई देनेवाली जीवात्मा है। हे कपिवर ! तेजोमय मेरी माया में निर्व्याज वह प्रतिबिंबित होती है। जैसे एक ही आकाश को तुम प्रत्येक जलाशय में (प्रतिबिंबित) देखते हो, वैसे ही (एक ही परमात्मा को प्रत्येक जीवात्मा में प्रतिबिंबित) देखना चाहिए। हे सखा ! साक्षात् परब्रह्म स्वरूप परमात्मा निश्चल बिंब है, जो मात्र साक्षी है। आचार्य का प्रसाद पाकर तत्वमस्यादि महावाक्यार्थ से मेरे तत्व को समझा जा सकता है। १०० —मेरे वास्तविक भक्त इस पद को समझकर मेरे भाव को प्राप्त कर सकेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। मेरी भक्ति से विमुख लोग शास्त्रों के गर्त में सद्भाव की खोज में भटकते हुए मोहित हो जाते हैं। (लेकिन) भक्तिहीन लोग करोड़ों जन्म लेने पर भी तत्वज्ञान तथा कैवल्य को प्राप्त नहीं कर सकेंगे। परमात्मा स्वरूप मेरा हृदय अत्यन्त रहस्यमय है और मेरे प्रति भक्तिरहित जनों से यह रहस्य कभी बोलना नहीं चाहिए। इससे बढ़कर कोई महान उपदेश (तुम्हें) देने को नहीं है।'' श्री महादेव द्वारा महादेवी से कहा गया यह राम-माहात्म्य पवित्र और रहस्यमय है। वास्तव में श्रीराम जी के द्वारा वायुपुत्र को बताया गया यह (राम माहात्म्य) मोक्षप्रद, पापहारक एवं हृदय को आनंदप्रद है। (महादेव जी पार्वती से कह रहे हैं) प्रिये ! भगवान के द्वारा दिव्य हनुमान को उपदेश रूप में

सारसंग्रहं रामतत्त्वं दिव्यनां हनुमानोट्टुपदेशिच्चतेंल्लां भक्ति पूण्टनारतं पठिच्चीटुन्न पुमान् मुक्तनाय्वरुमौरु संशयमिल्ल नाथे ! ब्रह्महत्यादि दुरितङ्ङळुं बहुविधं जन्मङ्ङळ् तोरुमार्ज्जिच्चुळ्ळ- वयेंन्नाकिलुं ११० ओक्कवे नशिच्चुपोमेन्नरुळ् चेय्तु रामन् मर्क्कट प्रवरनोटेन्नतु सत्यमल्लो । जातिनिन्दितन् परस्त्री धनहारि पापि मातृघातकन् पितृघातकन् ब्रह्महन्ता योगिवृन्दा- पकारि सुवर्णस्तेयिदुष्टन् लोकनिन्दितनेंटमेंङ्किलुमवन् भक्त्या राम नामत्तेंज्जपिच्चीट्टुकिल् देवकळालामोदपूर्वं पूज्यनाय्वरुमन्नयल्ल योगीन्द्रन्मारालुप्पोलुमलभ्यमाय विष्णु लोकत्तें प्रापिच्चीटुमिल्ल संशयमेतुं । इङ्ङनें महादेवनरुळ् चेय्ततुकेट्टु तिङ्ङीटुं भक्ति पूर्वमरुळ् चेय्तितु देवि— मंगलात्मावे ! मम भर्त्तावे ! जगत्पते! गंगाकामुक ! परमेश्वर ! दयानिधे ! पन्नगविभूषण ! ञाननुगृहीतयाय् धन्यया् कृतार्त्थयाय् स्वस्थयाय् वन्नेनल्लो । छिन्नमाय्वन्नु मम संदेहमेल्लामिप्पोळ् सन्नमायितु मोहमौक्कें निन्ननुग्रहाल् निर्म्मलं रामतत्त्वामृतमां रसायनं त्वन्मुखोद्- गळितमावोळं पानं चेय्तालुं १२० ऐन्नुळ्ळिल् तृप्ति वरि- कॆन्नुळ्ळतिल्लयल्लो निर्णयमतुमूलमौन्नुण्टु चौल्लुन्नु ञान् ।

प्रदत्त यह रामतत्व समस्त वेदान्तों का सारतत्व है और जो मनुष्य भक्ति- पूर्वक निरंतर इसका अध्ययन करता रहता है, वह मुक्त हो जाएगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। कई जन्म-जन्मान्तरों में अर्जित ब्रह्महत्यादि पाप तथा बहुविध यातनाएँ। ११० —सब कुछ समाप्त हो जाएँगे, यह जो बात श्री रामजी ने वानरप्रवर से कही, सत्य ही है। चाहे कोई कुत्सित जाति का हो, परस्त्रीगामी, धन का अपहारी, पापी, मातृघातक या पितृ- घातक हो या ब्राह्मणहन्ता, योगियों के प्रति अपकारी, सुवर्णस्तेयी, दुष्ट और लोक निन्दित ही क्यों न हो, (वह) राम नाम के जाप से देवताओं से सहर्ष पूज्य बनेगा; यही नहीं, निस्संशय, वह योगीन्द्रों के लिए भी अप्राप्त विष्णुलोक को प्राप्त कर सकेगा। इस प्रकार महादेव जी को कहते सुनकर भक्ति से आप्लावित देवी ने बताया—मंगलात्मा ! मेरे नाथ ! जगत्पति ! गंगा कामुक! परमेश्वर! दयानिधि! पन्नग विभूषण! मैं अनुगृहीत, धन्य, कृतार्थ हुई हूँ और (मेरा मन) स्वस्थ हो गया है। आपकी कृपा से अब मेरे सारे संदेह दूर हुए और मेरे सारे मोह भी मिट गये। मैंने आपके मुख से निसृत रामतत्व रूपी निर्मल एवं अमृतोपम रसायन का भरपूर पान कर लिया है। १२० फिर भी उससे मेरे मन में तृप्ति नहीं हुई, इसलिए मैं

संक्षेपिच्चरुळ् चेय्ततेतुमे मतियल्ल किक्षणन्मार्क्कु विद्ययुण्टा-कयिल्लयल्लो। किङ्कणन्मारायुळ्ळोर्क्कर्त्थवुमुण्टाय्वरा किमृणन्मार्क्कु नित्य सौख्यवुमुण्टाय्वरा किंदेवन्मार्कु गतियुं पुनरतुपोलें। उत्तममाय रामचरितं मनोहरं विस्तरिच्चरुळि चेय्तीटणं मटियातें। ईश्वरन् देवन् परमेश्वरन् महेश्वरन् ईश्वरियुटें चोद्यमिङ्ङनें केट्टनेरं मंदहासवुं चेय्तु चंद्रशेखरन् परन् सुन्दरगात्रि ! केट्टु-कोळ्केन्तरुळ् चेय्तु। वेधावु शतकोटि ग्रन्थविस्तरं पुरा वेद सम्मितमरुळ् चेय्तितु रामायणं। वाल्मीकि पुनरिरुपत्तु नालायिरमाय् नान्मुखन् नियोगत्ताल् मानुष मुक्त्यर्त्थमाय् चमच्चानतिलितु चुरुक्कि रामदेवन् नमुक्कुमुपदेशिच्चीटिनानेवं पुरा। १३० अध्यात्म रामायणमेन्नु पेरितिन्निदमध्ययनं चेय्युन्नोर्क्कध्यात्मज्ञानमुण्टां। पुत्र सन्तति धन समृद्धि दीर्घायुस्सुं मित्रसम्पत्ति कीर्त्ति रोगशांतियुमुण्टां। भक्तियुं वर्द्धिच्चीटुं मुक्तियुं सिद्धिच्चीटुमेत्रयुं रहस्यमितेङ्किलो केट्टालुं नी। १३३

आपसे एक बात कहना चाहती हूँ कि कोई भी संक्षेप में बतायी हुई बात पर्याप्त नहीं होती; जैसे कि प्रत्येक क्षण की उपेक्षा करनेवाले को विद्या नहीं आती, धन के प्रति लापरवाह व्यक्ति को धन हस्तगत नहीं होता और ऋण चुकाने में तत्परता न रखनेवाले को नित्य सौख्य नहीं मिलता और देवों के प्रति उपेक्षा भाव रखनेवाले को सद्गति नहीं मिलती। (अतः) उत्तम तथा मनोहर रामचरित को सहर्ष सविस्तार समझाइएगा। भगवती के इस आग्रह को देखकर चंद्रशेखर ने, जो ईश्वर, देव, परमेश्वर, एवं महेश्वर हैं, मंदहास पूर्वक कहा—"सुन्दरगात्री ! तुम सुनो। पहले ब्रह्मा ने वेदतुल्य रामायण को विस्तारपूर्वक शतकोटि पंक्तियों में सुनाया था, जिसे वाल्मीकि ने चतुरानन के आज्ञानुसार मानव की मुक्ति हेतु चौबीस हज़ार पंक्तियों में रच डाला। श्रीरामचन्द्रजी ने पूर्व में और भी संक्षेप में उसका मुझे उपदेश दिया था। १३० इस ग्रंथ का नाम अध्यात्म रामायण इसलिए पड़ा कि इसका अध्ययन करनेवाले को अध्यात्म ज्ञान प्राप्त होता है, पुत्र प्राप्ति, धन वृद्धि, दीर्घायु, मित्रलाभ, यश, रोगशांति सब संभव होती है। भक्ति बढ़ेगी और मुक्ति भी प्राप्त होगी। यह अत्यन्त रहस्यमय कथा है, तो भी तुम इसे सुनो।" १३३

शिवन् पार्वतिय्कु कथयें विस्तरिच्चु परञ्ञु कोटुक्कुन्नतु

पंक्तिकंधरमुख राक्षस वीरन्मारालू सन्ततं भारेण सन्तप्तयां भूमि देवि गोरूपं पूण्टु देव तापस गणत्तोटुं सारसासनलोकं प्रापिच्चु करञ्ञेट्ं वेदनयेंल्लां विधाताविनोटड्रियिच्चाळ्, वेधावुं मुहूर्त्तमात्रं विचारिच्च शेषं वेदनायकनाय देवनोटिवचेंन्नु वेदनं चेंय्कयेंन्ये मट्टोरु वळियिल्ल। सारसोत्भवनेवं चिन्तिच्चु देवन्मारोटारूढ खेदं तम्मेंक्कूट्टि क्कोंण्टङ्ङु पोयि क्षीरसागरतीरं प्रापिच्चु देवमुनिमारोटु कूटि स्तुतिच्चीटिनान् भक्तियोटें। भावनयोटुं कूटिप्पूरुष सूक्तं कोंण्टु देवनेंस्सेविच्चीटिनान् वळिपोलें। अन्नेर-मोरु पतिनायिरमादित्यन्मारोंन्निच्चु किळक्कुदिच्चुयरुन्नतु पोलें पद्मसंभवन् तनिक्कन्पोटु काणाय्वन्नु पत्मलोचननाय पत्मनाभनें मोदालू। मुक्तन्मारायुळ्ळोरु सिद्धयोगिकळालुं दुर्दर्शमाय भगवद्रूपं मनोहरं। १० चन्द्रिका मंदस्मित सुन्दराननपूर्ण चन्द्रमण्डलमरविन्द लोचनं देवं। इन्द्रनीलाभं परमिन्दिरा मनोहर मन्दिर वक्षःस्थलं वन्द्यमानंदोदयं। वत्सलाञ्छनवत्सं पादपङ्कज भक्त वत्सलं समस्त लोकोत्सवं सत्सेवितं मेरु सन्निभ

शिव जी द्वारा पार्वती जी को सविस्तार कथा सुनाना

दशमुख आदि राक्षस वीरों के भार से निरन्तर संतप्त भूमिदेवी ने गोरूप में देवों तापसों के साथ सारसासन लोक (ब्रह्मलोक) में पहुँचकर रोते हुए अपना सारा दुःख विधाता को कह सुनाया। थोड़ी देर तक विचार करके उन्होंने (ब्रह्मा ने) निश्चय किया कि वेदनायक देव को इस दुःख का हाल सुनाने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। इस प्रकार निश्चय करके सारसोद्भव (ब्रह्मा) खिन्न हुए देवों को लेकर क्षीरसागर तीर पर पहुँच गये और देवों मुनियों के साथ भक्तिपूर्वक उनकी (विष्णु की) स्तुति की और बड़ी तत्परता से पुरुष सूक्त के आधार पर भगवान की निष्ठापूर्वक सेवा की। तब पद्मसंभव को मुग्ध पद्मलोचन पद्मनाभ ऐसे दिखाई दिये मानो पूर्वदिशा में दस हजार आदित्य एक साथ उदित हो रहे हैं। जीवनमुक्त सिद्धयोगियों के लिए भी दुर्लभ भगवान का रूप अत्यन्त मनोहर था। १० उनका सुन्दर आनन पूर्णचन्द्र सदृश दीप्त था, मंदस्मिति चंद्रिका सम थी और लोचन अरविन्द तुल्य थे। इन्दिरा रमण की इन्द्रनीलाभा थी, इन्दिरा का वासस्थान—सुन्दर वक्षःस्थल भक्तों के लिए आनंददायक था। श्रीवत्स नामक लांछन शोभित था,

किरीटोज्वल् कुण्डल मुक्ताहार केयूरांगद कटक कटिसूत्र वलयांगुलीयकाद्यखिल विभूषणाकलित कळेबरं कमला मनोहरं। करुणाकरं कण्टु परमानंदपूण्टु सरसीरुह भवन्मधुर स्फुटाक्षरं सरस पदङ्ङळाल् स्तुतिच्चु तुटङ्ङिनान् परमानंदमूर्त्ते! भगवन्! जय जय। मोक्ष कामिकळाय सिद्धयोगीन्द्रन्माकुँ साक्षाल् काण्मतिनरुतातोरु पादांबुजं। नित्यवुं नमोस्तुते सकल जगत्पते! नित्य निर्म्मलमूर्त्ते! नित्यवुं नमोस्तुते। सत्यज्ञाना-नन्तानन्दामृताद्वयमेकं नित्यवुं नमोस्तुते करुणाजलनिधे! २० विश्वत्ते सृष्टिच्चु रक्षिच्चु संहरिच्चीटुं विश्वनायक! पोट्री! नित्यवुं नमोस्तुते। स्वाद्धयाय तपोदान यज्ञादि कर्म्मङ्ङळाल् साद्धयमल्लोरुवनुं कैवल्य मोरुन्नाळुं मुक्तियें साधिय्केंणमेङ्किलो भवत्पाद भक्ति कोण्टोळिञ्ञु मटोन्ति-नालावतल्ल न्निन्तिरुवटियुटे श्रीपादाम्बुज द्वन्द्वमन्तिके काणाय्वन्नितेनिक्कु भाग्यवशाल्। सत्वचित्तन्माराय तापस श्रेष्ठन्माराल् नित्यवुं भक्त्या बुद्ध्या धरिक्कप्पेट्टोरुन्निन् पाद पङ्कजङ्ङळिल् भक्ति संभविक्केणं चेतसि सदाकालं भक्तवत्सला

भक्तवत्सल भगवान के पाद-पंकज भक्तों से सेवित तथा समस्त लोक को आनन्द प्रदायक थे। कमला मनोहर भगवान का मेरु सदृश किरीट, कुण्डल, मुक्ताहार, केयूरांगद, कंकण, कटिसूत्र, वलयांगुलीय आदि आभूषणों से सुसज्जित कलित कलेवर था। करुणाकर प्रभु को देखकर आनंद से कमलभव (ब्रह्मा) मधुर स्फुटाक्षरों से युक्त सरस पदों से उनकी स्तुति करने लगे—"परमानंदमूर्त्ति, भगवान की जय हो! हे भगवान, आपके पादांबुज मोक्षकामी सिद्धयोगियों के लिए भी अदृश्य हैं। सारे जगत के नाथ! आपको नित्य नमस्कार है। सदा निर्मल स्वरूप! नित्य आपको नमस्कार है। हे करुणानिधि! आप सत्य, ज्ञान, आनंद, अमृत स्वरूप हैं, अद्वय एवं एक हैं। मैं सदा आपको प्रणाम करता हूँ। २० विश्व की सृष्टि, स्थिति एवं संहारकारक हे विश्वनायक प्रभु! आपको मेरा नमस्कार है। स्वाध्याय, तप, यज्ञ आदि कर्मों से कोई कभी कैवल्य नहीं पा सकता। मुक्ति पाने के लिए आपके चरणों में भक्ति छोड़कर दूसरा कोई उपाय नहीं है। दोनों श्रीचरण-सरोजों को सौभाग्यवश मैं प्रत्यक्ष देख सका। हे भक्तवत्सल प्रभु! सात्विक चित्तवाले तापस श्रेष्ठ आपके जिन पाद पंकजों का सदा भक्तिपूर्वक अनुस्मरण करते हैं, उनके प्रति मेरे मन में सदा भक्ति जाग्रत रहे। संसार के दुखों से परितप्त एवं खिन्न मनवाले

पोट्टी ! संसारामय परितप्त मानसन्मारां पुंसांत्वत्भक्ति-
यॊऴिञ्ञिल्ल भेषजमेतुं । मरणमोर्त्तुममनसि परितापं करुणा-
मृतनिधे ! पेरिकॆवळरुन्नु । मरणकाले तव तरुणारुण सम
चरण सरसिज स्मरण मुण्टावानाय् तरिक वरं नाथा !
करुणाकर ! पोट्टी ! शरणंदेव ! रमारमण ! धरापते ! ३०
परमानन्दमूर्त्ते ! भगवन् जय जय परम ! परमात्मन् ! परब्रह्माख्य!
जय! पर ! चिन्मय ! परापर ! पत्माक्ष ! जय वरद !
नारायण ! वैकुण्ठ ! जय जय ! चतुराननमिति स्तुति
चॆय्तोरुनेरं मधुरतरमिति विशदस्मितपूर्वं अरुळि चॆय्तु
नाथनॆन्तिप्पोळॆल्लावरु मॊरुमिच्चॆन्नॆ क्काण्मानिविटेय्कुळ्ळटोटॆ
वरुवान् मूलमतु चॊल्लुकॆन्नतु केट्टु सरसीरुह भवनीवण्णमुणर्त्तिच्चु--
न्निन्तिरुवटि तिरुवुळ्ळत्तिलेऽऽातकण्टॆन्तॊरु वस्तु लोकत्तिङ्ङ्लुळ्ळतु
पोट्टी ! ऎङ्किलुमुणर्त्तिय्कां मून्नुलोकत्तिङ्ङ्लुं संकटं मुळ्ळत्तिरि-
क्कुन्नितिक्कालं नाथ ! पौलस्त्य तनयनां रावणन् तन्नालिप्पोळ्
त्र्यैलोक्यं नशिच्चितुमिक्कतुं जगत्पते ! मद्दत्तवरबलदर्पित-
नायिट्टति निर्दयं मुटिक्कुन्नु विश्वत्तॆयॆल्लामय्यो लोकपालन्मारॆयुं

मनुष्यों के लिए आपकी भक्ति के अतिरिक्त कोई अन्य भेषज नहीं है। हे करुणाकर ! मृत्यु की याद करके मेरे मन में परिताप बढ़ता ही रहता है। हे नाथ ! आप मुझे यह वर दें कि मृत्यु के समय आपके तरुण अरुण सम चरण-सरोजों का मैं अनुस्मरण कर पाऊँ। हे करुणानिधि ! आप प्रभु हैं, अशरण शरण हैं, रमारमण और धरापति हैं। ३० हे परमानंदमूर्त्ति ! भगवन् ! आप की जय हो। आप परमात्मा, परब्रह्म हैं, आपकी जय हो। आप चिन्मय, परात्पर, पद्माक्ष हैं, आपकी जय हो ! हे वरद ! हे नारायण ! हे बैकुण्ठवासी ! आपकी जय हो, आपकी जय हो !" चतुरानन के द्वारा इस प्रकार स्तुति की जाने पर नाथ ने मधुरतर किन्तु विशद स्मिति के साथ प्रश्न किया कि यहाँ सबके साथ मुझसे मिलने आने का क्या कारण है ? (भगवान का) प्रश्न सुनकर पद्मसंभव ने इस प्रकार बताया—हे प्रभु ! इस संसार में कौन सी वस्तु ऐसी है जिसे आप न समझते हों ? फिर भी मैं आपको बताऊँगा। तीनों लोकों में इस समय भारी संकट आ पड़ा है। हे जगन्नाथ ! पौलस्त्य तनय रावण से अब त्रिलोक लगभग समाप्त सा है। हाय ! क्या बताऊँ, वर-बल से दर्पित वह सारे संसार को नष्ट कर रहा है। लोकपालों को मार-भगारक

तच्चाट्टिक्कळञ्ञवनेकशासनमाक्किच्चमच्चु लोकमेल्लां । ४०
पाकशासननेयुं समरेकेट्टिक्कोण्टु नाकशासनवुं चेय्तीटिनान् दशाननन्
यागादि कर्म्मङ्ङळुं मुटक्कियत्रयल्ल योगीन्द्रन्मारां मुनिमारेयुं
भक्षिक्कुन्नु धर्म्मपत्निकळेयुं पिटिच्चु कोण्टुपोयान् धर्म्मवुं
मऋञ्ञितु मुटिञ्ञु मर्यादयुं मर्त्त्यनालोळिञ्ञवनिल्ल मट्टारालुमे
मृत्युवेन्नतु मुन्ने कल्पितं जगत्पते ! न्निन्तिरुवटि तन्ने मर्त्त्य-
नाय्पिऋन्निनि पंक्तिकंधरन् तन्ने कोल्लणं दयानिधे ! सन्ततं
नमस्कारमतिनुमधुरिपो ! चेन्तळिरटियिण चिन्तिक्काय्वरेणमे ।
पत्म संभवनित्यमुणर्त्तिच्चतु नेरं पत्मलोचनन् चिरिच्चरुळि
चेय्तानेवं— चित्तशुद्धियोटेन्नेस्सेविच्चु चिरकालं पुत्रलाभार्थं
पुरा कश्यपप्रजापति, दत्तमायितु वरं सुप्रसन्नेनमया तद्वपस्सत्यं
कर्त्तुमुद्योगमद्यैवमे कश्यपन् दशरथ नाम्ना राजन्येन्द्रनाय्
काश्यपीतले तिष्ठत्यधुना विधातावे ! ५० तस्य वल्लभया-
कुमदिति कौसल्ययुं तस्यामात्मजनायि वन्नु ञानुं जनिच्चीटुं
मत्सहोदरन्माराय् मून्नुपेरुण्टाय्वरुं चित्स्वरूपिणि मम शक्तियाँ

उसने समस्त संसार में अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया है । ४०
दशानन ने युद्ध में पाकशासन (इन्द्र) को कैदी कर लिया और नाक लोक
(स्वर्गलोक) को भी अपने शासन में कर लिया । यागादि कर्मों में
विघ्न डालकर उसने कितने ही योगीन्द्र मुनियों को अपना भक्षण नहीं
बनाया ! वह अनेक धर्मपत्नियों को बलपूर्वक छीन ले गया; धर्म अस्त
हो गया और मर्यादाएँ भंग हुईं । हे जगन्नाथ ! यह पहले ही कल्पित
है कि मर्त्य को छोड़ और किसी के हाथों उसकी मृत्यु नहीं होगी । हे
दयानिधि ! आप ही मर्त्य रूप में संसार में जन्म लेकर पंक्तिकंधर की
हत्या कीजिए । हे मधुरिपु ! उसके लिए मैं सदा आपको प्रणाम करता
हूँ । आपके पादपल्लवों का अनुस्मरण करने का अवसर मिले । जब
पद्मसंभव ने ऐसा कह सुनाया तब पद्मलोचन ने सहास कह समझाया—
"प्राचीनकाल में कश्यप प्रजापति ने पुत्रलाभार्थ अन्त:शुद्धि के साथ मेरी
सेवा की । आपकी सौगंध, मुझसे उन्हें यह वर दिया गया है कि उसके
लिए प्रयत्न किया जाएगा । हे विधाता ! अधुना काश्यपी तल पर
(भूतल पर) कश्यप दशरथ नामक राजाधिराज के रूप में अवतीर्ण हैं ।५०
उनकी पत्नी अदिति कौसल्या के नाम से पृथ्वी पर वर्तमान है और मैं
उनके पुत्र के रूप में जन्म लूँगा । मेरे तीन भाई होंगे और मेरी चित्
स्वरूपिणी शक्ति विश्वेश्वरी योगमाया पृथ्वी में अयोनिजा बनकर जनकालय

विश्वेश्वरि योगमाया देवियुं जनकालये वन्नु कीकस्सात्मजकुल-नाशकारिणियायि मेदिनि तन्निलयोनिजयायुण्टाय्वरुमादितेयन्मार् कपि वीररायिप्पिरक्कणं मेदिनी देविक्कति भारं कोण्टुण्टायोरु वेदनतीर्प्पानिन्नालेन्नरुळ् चेय्तुनाथन् । वेदनायकनेयुमयच्चु मरञ्ञप्पोळ् वेधावुं नमस्करिच्चीटिनान् भक्तियोटे । आदितेय-न्मारेल्लामाधितीर्न्नुनेरं आदिनायकन् मरञ्ञीटिनोराश नोक्कि खेदवुमकन्नुळ्ळिल् प्रीतिपूण्टुटनुटन् मेदिनि तन्निल् वीणु नमस्कारवुं चेय्तार् । मेदिनी देवियेयुमाश्वसिप्पिच्च शेषं वेधावुं देवकळोटरुळिच्चेय्तानेवं— दानवाराति करुणानिधि लक्ष्मीपति मानव प्रवरनाय्वन्नवतरिच्चीटुं ६० वासराधीशान्वये सोदरमयो-द्ध्ययिल् वासवादिकळाय निङ्ङळुमोन्नु वेणं वासुदेवनेप्परि-चरिच्चु कोळ्वानायि दास भावेन भूमिमण्डले पिरक्कणं । मानियां दशानन भृत्यन्माराकुं यातुधानवीरन्मारोटु युद्धं चेय्वतिन्नोरो कानन गिरि गुहाद्वार वृक्षङ्ङळ्तोरुं वानरप्रवरन्मारायेतुं वैकीटाते सुत्रामादिकळोटु पत्मसंभवन् निभर्त्तृशासनमरुळ् चेय्तुटन् कृतार्थनाय् सत्यलोकवुंपुक्कु सत्वरं धरित्रियुमस्तसन्तापमति स्वस्थयाय् मरुविनाळ् । तल्क्काले हरिप्रमुखन्मारां विबुधन्मारोक्केवे हरि

में जन्म लेगी, जो राक्षसवंश के लिए नाशकारिणी सिद्ध होगी। आदितेय लोग मेदिनी के अतिभार से उत्पन्न दुख को दूर करने के लिए कपिवीरों के रूप में पैदा होंगे। यह कहकर भगवान के अप्रत्यक्ष होते ही वेधा ने भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। आदिनायक के अप्रत्यक्ष होती दिशा को देखकर आदितेय लोगों की आधि दूर हो गयी। दुख के दूर होने तथा प्रीति के जन्म लेने के कारण वे दंडवत् प्रणाम करने लगे। मेदिनी देवी को समाश्वसित करके वेधा ने देवताओं से इस प्रकार कहा—दानवों के अराति तथा करुणानिधि लक्ष्मीपति मानव श्रेष्ठ बनकर। ६० —सूर्यवंश में सहोदरों के साथ अयोध्या में अवतार लेंगे। वासुदेव भगवान की सेवा शुश्रूषा करने के लिए आप देवता लोगों को दास्य भाव लेकर पृथ्वी मण्डल पर जन्म लेना होगा। घमण्डी दशानन के सेवक यातुधान वीरों से युद्ध करने के लिए कानन, गिरि, गुहाद्वार, वृक्ष आदि पर वानर प्रवर बनकर वास करो, इस प्रकार सुत्रामा, आदि को आदेश देकर कृतार्थ हो पद्मसंभव तुरंत सत्यलोक को चले गये और धरित्रि भी दुख से विमुक्त हो स्वस्थ भाव से रह गयी। तत्काल ही इन्द्रादि सभी विबुध लोग मानुष हरि (मनुष्य रूप में विष्णु) के सहायतार्थ मानुष हरि (मनुष्य सिंह) के समान

रूपधारिकळायारल्लो मानुष हरि सहायात्थंमाय्ततस्ततो मानुष हरि वेग विक्रमत्तोटें। पर्वत वृक्षोपलयोधिकळायुन्नत पर्वत तुल्यशरीरन्मारायनारतं ईश्वर प्रतीक्षमाणन्माराय् प्लवग वृन्देश्वरन्मारुं भुवि सुखिच्चु वाणारल्लो । ७०

पुत्रलाभालोचन

अमितगुणवानां नृपति दशरथनमलनयोद्धयाधिपति धर्म्मात्मावीरन् अमरकुलवर तुल्यनां सत्य पराक्रमनंगज समन् करुणारत्नाकरन् कौसल्यादेवियोटुं भर्तृशुश्रूषय्केट् कौशल्यमेऽीटुं कैकेयियुं सुमित्रयुं भार्य्यमारिवरोटुं चेर्न्नु मन्त्रिकळुमाय् कार्याकार्यङ्ङळ् विचारिच्चु भूतलमेल्लां परिपालिक्कुं कालमनपत्यत्वं कोण्टु परितापेन गुरु चरणांबुज द्वयं वन्दनं चेय्तु चोदिच्चीटिनेन्तुनल्लू नन्दनन्मारुण्टा-वानेन्तरुळ् चेय्तीटणं । पुत्रन्मारिल्लाय्यक यालेनिक्कु राज्यादि सम्पत्तु सर्ववुं दुःखप्रदमेन्तरिञ्ञालुं । वरिष्ठ तपोधनन् वसिष्ठनतु केट्टु चिरिच्चु दशरथ नृपनोटरुळ् चेय्तु-- निनक्कु नालु पुत्रन्मारुण्टाय्वरुमतु निनच्चु खेदिक्केण्टा मनसि नरपते !

वीरता लेकर हरि (वानर) रूप धारी बन गये। उन्नत पर्वत तुल्य शरीरधारी प्लवग वृन्देश्वर (श्रेष्ठ कपि वृन्द) पर्वतों, वृक्षों, पत्थरों के योद्धा बनकर ईश्वर की प्रतीक्षा करते हुए सुखपूर्वक पृथ्वी पर जीवन बिताने लगे । ७०

पुत्र-लाभ का विचार

अमित गुणवाले, अमल, धर्मात्मा, वीर, करुणानिधि अमर कुल मुख्य के समान सत्यशील एवं पराक्रमी तथा कामदेव के समान तेजस्वी अयोध्या पति महाराज दशरथ, पति की शुश्रूषा में अत्यन्त कुशल कौसल्या, कैकेई तथा सुमित्रा नामक पत्नियों तथा मंत्रियों से कार्य-अकार्य के संबंध में सलाह-मशविरा करते हुए भूतल का परिपालन करते आ रहे थे । (किन्तु) अनपत्यता दुख से खिन्न हो उन्होंने एक दिन अपने गुरु के दोनों चरण-सरोजों की वन्दना करते हुए कहा कि पुत्रोत्पत्ति के लिए उपाय बता दीजिए । आप यह जान लीजिए कि पुत्रों के अभाव में मेरे लिए राज्य आदि सारी सम्पत्तियाँ दुखप्रद सी लगती हैं । यह सुनकर वरिष्ठ तपोधन वसिष्ठ ने हँसते हुए दशरथ से कहा—"हे नरपति, आपको यह दुख नहीं होना चाहिए, आपके चार पुत्र होंगे । हे गुणी ! आप अविलंब ऋष्यशृंग

वैकाते वरुत्तणमृष्यश्रृंगनेंयिप्पोळ् चेंय्कन्नी गुणनिधे ! पुत्रकामेष्टि कर्म्मं। १० तन्नुट गुरुवाय वसिष्ठ नियोगत्ताल् मन्नवन् वैभण्डकन् तन्नेंयुं वरुत्तिनान् शालयुं पणिचेंय्तु सरयूतीरत्तिङ्कल् भूलोकपति यागं दीक्षिच्चानतु कालं। अश्वमेधानन्तरं तापसन्मारुमायि विश्वनायक समनाकिय दशरथन् विश्व-नायकनवतारं चेंय्वतिनायि विश्वास भक्तियोटुं पुत्रकामेष्टि कर्म्मं। ऋष्यश्रृंगनाल् चेंय्यप्पेंट्टोराहुतियाले विश्वदेवतागणं तृप्तमायतु नेरं। हेमपात्रस्थमाय पायसत्तोटुं कूटि हेमकुण्डत्तिल् न्निन्नु पौङ्ङिनान् वह्निदेवन्। तावकं पुत्रीयमिप्पायसं कैकोळ्क न्नी देव निर्म्मितमेन्नु परञ्ञु पावकनुं भूपति प्रवरनु कोटुत्तु मरञ्ञितु तापसाज्ञया परिग्रहिच्चु नृपतियुं। दक्षिण चेंय्तु नमस्करिच्चु भक्तिपूर्वं दक्षनां दशरथन् तल्क्षणं प्रीतियोटे। कौसल्या देवियक्कर्द्धं कोटुत्तु नृपवरन् शैथिल्यात्मना पाति नल्किनान् कैकेयिय्क्कुं। २० अन्नेरं सुमित्रय्क्कु कौसल्यादेवितानुं तन्नुटे पाति कोटुत्तीटिनाळ् मटियाते। एंन्नतु कण्टु पाति कोटुत्तु कैकेयियुं मन्नवनतु कण्टु सन्तोषं पूण्टानेटं। तल्प्रजकळ्क्कु

के लिए बुलावा भेजिए, अभी पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया जाना चाहिए। १० अपने गुरु वसिष्ठ के आदेशानुसार राजा वैभांडिक (ऋष्यश्रृंग) को बुला लाये। सरयू तट पर यागशाला बनवाकर भूलोकपति (दशरथ) ने याग का उपक्रम कर लिया। अश्वमेध यज्ञ के उपरांत विश्वनायक तुल्य दशरथ ने विश्वनायक के अवतार हेतु तापसों सहित विश्वास एवं भक्ति के साथ पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। उस समय ऋष्यश्रृंग से अर्पित आहुति से विश्वभर के देवता गण संतृप्त हुए। हेमपात्र में भरे खीर के साथ होमकुण्ड से अग्निदेव ऊपर उठे। पावक ने (राजा से) कहा—"आपकी पुत्र-प्राप्ति के लिए देवों से तैयार की गयी यह खीर आप स्वीकार कीजिए।" तापस की आज्ञा से नृपति ने उसे ग्रहण किया और राजा को (खीर) देकर (पावक) अप्रत्यक्ष हुए। तत्क्षण सक्षम दशरथ ने प्रीति एवं भक्तिपूर्वक सप्रणाम (तापस को) दक्षिणा अर्पित की। अस्त व्यस्त नृपवर ने (खीर का) आधा भाग कौसल्या जी को और शेष आधा भाग कैकेई जी को प्रदान किया। २० तभी कौसल्या देवी ने निस्संकोच भाव से सुमित्रा जी को अपने हिस्से का आधा भाग दे दिया और यह देखकर कैकेयी जी ने भी अपने हिस्से का आधा अंश दे दिया। यह देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुए। तभी तीनों (रानियों) ने अपनी प्रजाओं को

परमानन्दं वरुमारु गर्भवुं धरिच्चितु मूवरुमतु कालं । अप्पोळ्ळे तुटङ्ङि क्षोणीन्द्रनां दशरथन् विप्रेन्द्रन्मारेयोक्के वरुत्तितुटङ्ङिनान् । गर्भरक्षार्थं जपहोमादि कर्म्मङ्ङळुमुल्पलाक्षिकळ्क्कनुवासरं क्रमत्ताले। गर्भ चिह्नङ्ङळेल्लां वर्द्धिच्चु वरुन्तोरुमुळ्प्रेमं कूटेक्कूटे वर्द्धिच्चु नृपेन्द्रनुं तल् प्रणयिनिमाक्कुंळ्ळाभरणङ्ङळ् पोले विप्रादि प्रजकळ्क्कुं भूमिक्कुं देवकळ्क्कुं । अल्पमाय्च्चमञ्ञितु सन्तापं दिनन्तोरुमल्पभाषिणिमाक्कुं वर्द्धिच्चु तेजस्सेट्टं । सीमन्त-पुंसवनादि क्रियकळुं चेय्तु कामान्तदानङ्ङळुं चेय्तितु नरवीरन् । गर्भवुं परिपूर्णमाय् च्चमञ्ञितुकालमर्भकन्मारुं नाल्वर् पिऱन्नारुटनुटन् । ३० उच्चत्तिल् पंचग्रहं निल्कुन्न कालत्तिङ्क-लच्युतनयोद्धययिल् कौसल्यात्मजनायान् नक्षत्रं पुनर्वसु नवमियल्लो तिथि नक्षत्राधिपनोटु कूटवे बृहस्पति कर्क्कटकत्तिल-त्युच्चस्थितनायिट्टल्लो अर्कनुमत्युच्चस्थनुदयं कर्क्कटकं अर्क्कजन् तुलात्तिलुं भार्गवन् मीनत्तिलुं वक्रनुमुच्चस्थनाय् मकरं राशितन्निल् निल्कुम्पोळवतरिच्चीटिनान् जगन्नाथन् दिक्कुकळोक्के प्रसादिच्चितु

परमानंद प्रदान करते हुए गर्भधारण किया। तभी से क्षोणीन्द्र (श्रेष्ठ राजा) दशरथ विप्रेन्द्रों (ब्राह्मण श्रेष्ठ) को बुला लाने लगे। उत्पलाक्षियों (कमल लोचना रानियों) के गर्भ की रक्षा के लिए प्रतिदिन क्रम से जप होम आदि कार्य किये जाने लगे। जैसे-जैसे गर्भ के लक्षण बढ़ते गये वैसे-वैसे मन ही मन राजा का प्रेम बढ़ता गया। अपनी पत्नियों के साथ ब्राह्मणादि प्रजा वर्ग, भूमि एवं देवताओं के लिए भी आभूषण बनवा दिये जाने लगे। उनकी अल्प भाषिणी रानियों का दिन ब दिन सौन्दर्य बढता गया और उसके अनुरूप ही वे अल्पाल्प दुख का भी नाट्य रचने लगीं। नर श्रेष्ठ (राजा) ने सीमन्त, पुंसवन आदि संस्कार तथा (रानियों की) गर्भ-हेतु इच्छाएँ यथावसर पूर्ण कीं। गर्भ के परिपूर्ण होते ही बारी-बारी से चार बालकों का जन्म हुआ। ३० पंचग्रहों की उच्च स्थिति में अच्युत ने अयोध्यापुरी में कौसल्या के पुत्र रूप में अवतार लिया पुनर्वसु नक्षत्र, नवमी की तिथि उच्चस्थ चन्द्र के साथ बृहस्पति कर्क में उच्चस्थ सूर्य का कर्क में उदय, तुला में अर्क, मीन में रवि और मकर में मंगल, ऐसी राशियों में जगन्नाथ का अवतार हुआ; समस्त दिशाएँ और देवता लोग प्रसन्न हुए। पुष्य नक्षत्र में कैकेई ने पुत्र को जन्म दिया और अगले दिन सुमित्रा के पुत्रद्वय हुए। कौसल्या ने अपने पुत्र में भगवान परमात्मा, मुकुन्द, नारायण, जगदीश्वर, जन्मरहित, कमललोचन भुवनेश्वर

देबकळुं । पेट्टिु कैकेयियुं पुष्य नक्षत्रं कोण्टे पिट्टेन्नाळ् सुमित्रयुं पेट्टिु पुत्रद्वयं । भगवान् परमात्मा मुकुन्दन् नारायणन् जगदीश्वरन् जन्मरहितन् पत्मेक्षणन् भुवनेश्वरन् विष्णुतन्नुटे चिह्नत्तोटुमवतारं चेय्तप्पोळ् काणायि कौसल्यय्कुं सहस्र-किरणन्मारोरुमिच्चोरुन्नेरं सहस्रायुत मुदिच्चुयरुन्नतु पोले । सहस्रपत्रोत्भवनारदसनकादि सहस्रनेत्र मुख विबुधेन्द्रन्मारालुं ४० वन्द्यमायिरिप्पोरु निर्म्मल मकुटवुं सुन्दर चिकुरवुमळक सुषमयुं कारुण्यामृत रस सम्पूर्णनयनवुमारुण्यांबर परिशोभित जघनवुं शंख चक्राब्जगदा शोभित भुजङ्ङळुं शंख सन्निभगळ राजित कौस्तुभवुं भक्त वात्सल्यं भक्तन्मार्क्कु कण्टरिवानाय् व्यक्त-मायिरिप्पोरु श्रीवत्सवुं कुण्डल मुक्ताहार काञ्चिनूपुर मुख मण्डनङ्ङळुमिन्दु मण्डल वदनवुं पण्टु लोकङ्ङेळेल्लामळन्न पादाब्जवुं कण्टु कण्टुण्टायोरु परमानन्दत्तोटुं मोक्षदनाय जगत्साक्षियां परमात्मा साक्षाल् श्रीनारायणन् तानितेन्नरि-ञ्ञप्पोळ् सुन्दर गात्रियाय कौसल्या देवितानुं वन्दिच्चु तेरुतेरे स्तुतिच्चु तुटङ्ङिनाळ् । नमस्ते देव देव ! शंख चक्राब्जधर ! नमस्ते वासुदेव ! मधुसूदन ! हरे । नमस्ते नारायण ! नमस्ते नरकारे ! समस्तेश्वर ! शौरे ! नमस्ते

विष्णु के सारे लक्षण देखे । उन्होंने देखा (मानो) सहस्र अयुत (दस-हजार) सहस्र किरणों (सूर्य) का एक साथ उदय हुआ है । सहस्रपत्रोद्भव (ब्रह्मा), नारद, सनक, सहस्राक्ष (इन्द्र), सहस्रानन विष्णु देवों से सेवित उनका रूप था । ४० निर्मल किरीट, सुन्दर चिकुर, सुषमामयी अलक-जाल, कारुण्य से अमृतरस बरसानेवाले नेत्र, अरुणांबर से परिशोभित जघन; शंख, चक्र, कमल एवं गदा से शोभित भुजाएँ, शंख के समीप गले में विराजमान कौस्तुभ, भक्तों को (भगवान का) भक्त-वात्सल्य दिखाने वाला स्पष्ट श्रीवत्स, कांची, नूपुर; कुण्डल, मुक्ताहार जैसे मुखाभूषण, इन्दुमण्डल सदृश मुख, पहले सारे लोकों को नापने वाले चरण-कमल, सबको देख-देख परमानंद में निमग्न कोमलांगी कौसल्या उन्हें मोक्षदायक, जगद्साक्षी, परमात्मा एवं साक्षात् नारायण समझकर बार-बार (उनकी) वन्दना एवं स्तुति करने लगी—"हे देव ! देव ! (आपको) नमस्कार ! हे शंख चक्र, कमलधारी वासुदेव ! हे मधुसूदन ! हे हरि ! (आपको) प्रणाम ! हे नारायण ! हे नरकारि ! हे समस्तेश्वर ! हे शौरी ! हे जगत्पति !

जगत्पते ! ५० त्निन्तिरुवटि मायादेवियें क्कोण्टु विश्वं सन्ततं रक्षिच्चु संहरिक्कुन्नु सत्वादि गुणत्रयमाश्रयिच्चिच्चेन्तिनितेन्नुत्त मन्मार्क्कुं पोलुमरिवान वेलयत्रे । परमन् परापरन् परब्रह्माख्यन् परन् परमात्मावु परन् पुरुषन् परिपूर्णन् अच्युतननन्तन-व्यक्तनव्ययनेकन् निश्चलन् निरुपमन् निर्वाण प्रदन् नित्यन् निर्म्मलन् निरामयन् निर्विकारात्मदेवन् निर्म्ममन् निराकुलन् निरहङ्कार मूर्त्ति निष्कळन् निरञ्जनन् नीतिमान् निष्कल्मषन् निर्ग्गुणन् निगमान्त वाक्यार्त्थ वेद्यन्नाथन् । निष्क्रियन् निराकारन् निर्ज्जर निषेवितन् निष्कामन् नियमिनां हृदयनिलयनन् अद्वय-नजनमृतानन्दन् नारायणन् विद्वन्मानस पत्ममधुपन् मधुवैरि सत्यज्ञानात्मा समस्तेश्वरन् सनातनन् सत्व सञ्जय जीवन् सनकादिभिस्सेव्यन् तत्त्वार्त्थ बोधरूपन् सकल जगन्मयन् सत्ता-मात्रकनल्लो त्निन्तिरुवटि नूनं ६० त्निन्तिरुवटियुटे जठरत्तिङ्कल् नित्यमन्तमिल्लातोळं ब्रह्माण्डङ्ङळ् किटक्कुन्नु । अङ्ङनेयुळ्ळ भवानेन्नुटे जठरत्तिलिङ्ङने वसिप्पतिनेन्तु कारणं पोट्टी ! भक्तन्मार् विषयमायुळ्ळोरु पारवश्यं व्यक्तमाय्क्काणाय्वन्नु मुग्धयामेनिक्किप्पोळ् भर्त्तृ पुत्रार्त्थ कुल संसार दुःखाम्बुधौ

(आपको) प्रणाम ! ५० आप मायादेवी के सहारे निरंतर विश्व का संरक्षण एवं संहार करते रहते हैं। आप सत्वादि गुणत्रयों का आश्रय क्यों लेते हैं, यह उत्तम जन भी समझ नहीं पाते। हे नाथ ! आप परम, परापर, परब्रह्म, परमात्मा, पूर्णपुरुष, अच्युत, अनन्त, अव्यक्त, अव्यय, एक, निश्चल, निरुपम, निर्वाणप्रद, नित्य, निर्मल, निरामय, निर्विकारस्वरूप, निर्म्मम, निराकुल, निरहंकारस्वरूप, निष्कल, निरंजन, नीतिवान्, निष्कल्मष, निर्गुण, निगमान्त वाक्यार्थ से वेद्य, निष्क्रिय, निराकार, निर्जर-सेवित, निष्कामी, निष्ठावान जन के हृदय निलय में बसनेवाले, अद्वय, अज, अमृतानन्द, नारायण, विद्वान् जन के मानस-कमल के मधुप, मधुवैरि, सत्यज्ञानात्मा, समस्तेश्वर, सनातन, सत्वगुणों के लिए आधार, सनकादि से सेव्य, तत्वार्थ बोध से प्राप्त, सकल जगन्मय, केवल सत्ता हैं। ६० आपके जठर (उदर) में नित्य ही अन्तहीन ब्रह्माण्ड समाये हुए हैं। हे प्रभु ! ऐसे आप मेरे उदर में किसलिए आ बसे ? (आप पर) मुग्धा मुझे आपका भक्त पारवश्य स्पष्टतया व्यक्त दिखाई दे रहा है। पति, पुत्र, वंश आदि से संबंधित संसार दुख— सागर में निमग्न हो नित्य भ्रमित

नित्यवुं निमग्नयायत्यर्थं भ्रमिक्कुन्नेन् निन्नुटे महामाय तन्नुटे बलत्तिनालिन्नु निन् पादांभोजं काण्मानुं योगंवन्नु। त्वल् कारुण्यत्ताल् नित्यमुळ् काम्पिल् वसिक्केण मिक्काणाकिय रूपं दुष्कृतमोटुङ्ङुवान् विश्व मोहिनियाय निन्नुटे महामाय विश्वेश ! मोहिप्पिच्चीटायकमां लक्ष्मीपते ! केवलमलौकिकं वैष्णवमाय रूपं देवेश ! मऱ्ऱुकेणं मट्ठुळ्ळोऱकाणुंमुम्पे लाळनाश्लेषाद्यनुरूपमायिरिप्पोरु परिचरणत्ताले कटक्केणं दुःख संसारार्णवं। भक्ति पूण्टित्थं वीणु वणङ्ङि स्तुतिच्चप्पोळ् भक्त-वत्सलन् पुरुषोत्तमनरुल् चेय्तु-- ७० मातावे ! भवतिक्केन्तिष्ट माकुन्नतेन्नालेतुमन्तरमिल्ल चिन्तिच्चवण्णं वरुं। दुर्म्मदं वळन्नोरु रावणन् तन्नेकोन्नु सम्मोदं लोकङ्ङळ्क्कु वरुत्तिकोळ्वान् मुन्नं ब्रह्मशंकर प्रमुखामर प्रवीरन्मार् निर्म्मल पदङ्ङळाल् स्तुतिच्चु सेविक्कयाल् मानव वंशत्तिङ्कल् निङ्ङळ्क्कु तनयनाय् मानुष वेषंपूण्टु भूमियिल्प्पिऱन्नु ञान् पुत्रनाय्पिऱक्कणं ञान् तन्ने निङ्ङळ्क्कोन्नु चित्तत्तिल् निरूपिच्चु सेविच्चु चिरकालं पूर्वजन्मनि पुनरतु कारणमिप्पोळेवं भूतकमाय वेषत्तेक्काट्टित्तन्नु

होती मुझे आपकी महामाया के बल से आज आपके पादकमलों को देखने का सौभाग्य मिला। ऐसी कृपा करें कि मैं अपने मन में (आपका) यह रूप देख सकूँ और अपने पापों से मुक्त हो जाऊँ। हे विश्वेश्वर ! हे लक्ष्मीपति ! विश्व मोहिनी आपकी महामाया मुझे मोहित न कर पाए। हे देवेश ! अन्य जनों के देख पाने के पूर्व ही आप अपना यह अलौकिक विष्णु रूप छिपा दें। हे दयानिधि ! लालन-पालन एवं आश्लेष करने योग्य बाल भाव को आप मुझे दिखा दें। पुत्र वात्सल्य के बहाने आपकी सेवा करते हुए इस संसार दुख रूपी सागर को पार करने की इच्छा है।" भक्तिपूर्वक इस प्रकार (कौसल्या के) स्तुति करने पर भक्त वत्सल पुरुषोत्तम ने (उनको) बताया। ७० —"हे माता ! आपकी जो इच्छा है, वही बिना किसी अन्तर के होगी। पूर्वकाल में घमण्डी रावण की हत्या करके संसार में सुख-शांति स्थापित करने की ब्रह्मा, शंकर, प्रमुख अमर गणों के द्वारा निर्मल चित्त हो प्रार्थना करने के कारण मैं पृथ्वी पर मानव-कुल में तुम्हारे पुत्र रूप में मानव वेषधारी बनकर पैदा हुआ हूँ। (यही नहीं) तुमने भी पहले चिरकाल तक मुझे पुत्र रूप में प्राप्त करने की मन में आशा लेकर पूजा-अर्चना की थी। उसी कारण से आज मैंने तुम्हें अपना भौतिक स्वरूप दिखा दिया।

दुर्लभंमद्दर्शनं मोक्षत्तिनायिट्टुळ्ळोन्निल्लल्लो पिन्नेयोरु जन्मसंसार दुःखं। ऐन्नुटे रूपमिदं नित्यवुं ध्यानिच्चु कोळ्कोन्नाल् वन्नीटुं मोक्षमिल्ल संशयमेतुं। यातोरु मर्त्यनिह नम्मिलेस्संवाद-मिदादराल् पठिक्कतान् केळ्क्कतान् चेय्युन्नतुं साधिय्क्कुमवनु सारूप्यमेन्नतिन्नालुं चेतसि मरिक्कुम्पोळ् मल् स्मरणयुमुण्टां। ८०
इत्तरमरुळ् चेय्तु बालभावत्तेप्पूण्टु सत्वरं कालुं कैयुं कुटञ्ञु करयुन्नोन् इन्द्रनीलाभपूण्ट सुन्दर रूपनरविन्द लोचनन् मुकुन्दन् परमानन्दात्मा चन्द्र चूडारविन्द मन्दिर वृन्दारक वृन्द वन्दितन् भुवि वन्नवतारं चेय्तान्। नन्दननुण्टायितेन्नाशु केट्टोरु पंक्ति स्यन्दननथ परमानंदाकुलनायन्। पुत्र जन्मत्ते चोन्न भृत्यवर्गत्तिनेल्लां वस्त्रभूषणाद्यखिलार्त्थ दानङ्ङळ् चेय्तान्। पुत्र वक्त्राब्जं कण्टु तुष्टनाय् पुरप्पेट्टु शुद्धमाय् स्नानं चेय्तु गुरुविन् नियोगत्ताल्। जातकर्म्मंवुं चेय्तु दानवुं चेय्तु पिन्ने जातनायितु कैकेयि सुतन् पिट्टेन्नाळुं। सुमित्रा पुत्रन्मारायुण्टायि-तिरुवरुंममित्रान्तकन् दशरथनुं यथाविधि चेय्तितु जातकर्म्मं बालन्माक्केल्लावक्कुं पेय्तितु सन्तोषं कोण्टस्रुक्कळ् जनङ्ङळ्क्कुं।

मेरा यह दुर्लभ दर्शन मोक्षसाधन है, उसके उपरांत जन्म और संसार-दुख नहीं होता। मेरे इस रूप का नित्य ध्यान करने पर मोक्ष प्राप्ति होगी, इसमें कोई संदेह नहीं है। जो मानव हमारा यह संवाद श्रद्धा से पढ़ता या सुनता है, वह सारूप्य मुक्ति प्राप्त कर सकेगा और मृत्यु के समय उसके मन में मेरी स्मृति उद्भूत होगी।" ८० इतना कहकर बाल-भाव को अपनाकर तुरन्त ही हाथ-पाँव हिलाते हुए (भगवान) रोने लगे। इन्द्रनीलाभा से युक्त सुन्दर स्वरूप वाले, कमललोचन, मुकुन्द जो परमात्मा हैं, (और जो) चन्द्रचूड (शिव), ब्रह्मा एवं बृन्दारक वृन्द (देवगण) से आराध्य हैं, भूमि पर अवतार ले चुके। पुत्रोत्पत्ति की तुरन्त सूचना पाकर पंक्तिस्यंदन (दशरथ) परमानन्द में निमग्न हो गये। पुत्र-जन्म का समाचार पहुँचाने वाले सेवकों को वस्त्र, आभूषण एवं धन दान में दिये। गुरु का आदेश पाकर पुत्र के मुख-कमल का दर्शन करके सानंद बाहर आये और स्नान करके अपने को निर्मल बनाया। जन्मसंस्कार एवं दान-कर्म निभाये। फिर अगले दिन कैकेई का पुत्र-जन्म हुआ। शत्रुसंहारक दशरथ के सुमित्रा से दो पुत्र हुए। (उन्होंने) यथाविधि बालकों के जात-कर्म करवाये और जनता ने आनन्दाश्रु बरसाये। भूदेवों (ब्राह्मणों) के लिए स्वर्ण, रत्न, वस्त्र, ग्राम आदि भूरि पदार्थ दान में

स्वर्ण रत्नौघ वस्त्र ग्रामादि पदार्थङ्ङळॆण्णमिल्लातोळं दानं चॆय्तु भूदेवानां । ९० विण्णवर् न्नाट्टिलुमुण्टायितु महोत्सवं कण्णुकळायिरवं तॆळिञ्ञु महेन्द्रनुं । समस्त लोकङ्ङळुमात्मावांमिवङ्कले रमिच्चीटुन्नु नित्यमॆन्नोर्त्तु वसिष्ठनुं श्यामळ निऱं पूण्ट कोमळ कुमारनु रामनॆन्नॊरु तिरुनामवुमिट्टानल्लो । भरण निपुणनां कैकेयीतनयनु भरतनॆन्नु नाममरुळि च्चॆय्तु मुनि। लक्षणान्वितनाय सुमित्रातनयनु लक्ष्मणनॆन्नु तन्ने नामवुमरुळ् चॆय्तु शत्रुवृन्दत्तॆ हनिच्चीटुक निमित्तमाय् शत्रुघ्ननॆन्नु सुमित्रात्मजावरजनुं नामधेयवुं न्नालु पुत्रर्क्कुं विधिच्चेवं भूमि पालनुं भार्यमारुमायानन्दिच्चान् । सामोदं बाल क्रीडा तत्परन्मारां कालं रामलक्ष्मणन्मारुं तम्मिलॊन्निच्चु वाळ्ुं । भरतशत्रुघ्नन्मारॊरुमिच्चॆल्लान्नाळुं मरुवीटुन्नुपायसांशानु सारवशाल् । कोमळन्मारायॊरु सोदरन्मारुमाय् श्यामळ निऱं पूण्ट लोकाभिरामदेवन् १०० कारुण्यामृतपूर्णापांग वीक्षणं कॊण्टुं सारस्य व्यक्त वर्णालाप पीयूषं कोण्टुं विश्वमोहननाय रूप सौन्दर्यं कॊण्टुं निश्शेषानंद प्रद देहमार्दवं कॊण्टु बन्धूक दन्तांबर चुंबन रसं कॊण्टुं बन्धुर

दिये । ९० देवलोक में उत्सव मनाया गया; महेन्द्र (देवेन्द्र) के सहस्र नेत्र आनन्द से चमकने लगे । समस्त लोक आत्मस्वरूप इन्हीं में नित्य रमते हैं, यह सोचकर श्यामल रंगवाले कोमल बालक को वसिष्ठ ने पावन राम नामकरण किया, मुनि ने भरण पोषण में निपुण कैकेई-पुत्र को भरत नाम दिया और समस्त लक्षणों से शोभित सुमित्रा तनय का लक्ष्मण नाम रखा । शत्रु समूह के हनन के निमित्त (जन्म लेने से) सुमित्रा के द्वितीय पुत्र का नाम शत्रुघ्न रखा गया । इस प्रकार चारों पुत्रों का नामकरण करके भूमिपालक (दशरथ) पत्नियों के साथ आनंद मनाने लगे । सानंद बालक्रीड़ा में तत्पर होते समय, खीर के अंश का अनुसरण करते हुए (अर्थात् कौसल्या के खीर-भाग से लक्ष्मण और कैकेई के खीर-भाग से शत्रुघ्न पैदा हुए) राम और लक्ष्मण साथ-साथ रहे तथा भरत और शत्रुघ्न की जोड़ी सानंद बनी रही । कोमल सहोदरों के साथ श्यामल कलेवर एवं लोक के लिए अभिराम रामदेव । १०० —कारुण्यामृत निष्यंती अपने अपांग वीक्षण से, सरस एवं स्फुटाक्षरों से युक्त अमृतोपम आलाप से, विश्वविमोहन अपने रूप सौन्दर्य से, निश्शेषानंद प्रद देह मार्दवता से, बन्धूक तुल्य अधरों के चुंबन रस से, बंधुर (हंस) से स्वच्छ दन्तांकुरों की स्पष्ट हासाभा से, भूतलस्थित पादाब्जों की गति से, मनोहर चेष्टाओं से

दन्ताङ्कुर स्पष्ट हासाभ कौण्टुं । भूतल स्थित पादाब्ज द्वययानं कौण्टुं चेतोमोहनङ्ङळां चेष्टितङ्ङळें कौण्टुं । तातनुमम्ममाक्कुं नगरवासिकळ्क्कुं प्रीति नल्किनान् समस्तेन्द्रियङ्ङळ्क्कुमेल्लां फालदेशान्ते स्वर्णाश्वत्थ पर्णाकारमाय् मालेयमणिञ्ञतिल्प्पट्टीटुं कुरळवुं अञ्जनमणिञ्ञति मञ्जुळ तरमाय कञ्जनेत्रवुं कटाक्षावलोकनङ्ङळुं कर्णालंकार मणि कुण्डलं मिन्नीटुन्न स्वर्णदर्प्पण सम गण्ड मण्डलङ्ङळुं । शार्दूल नखङ्ङळुं विद्रुम मणिकळुं चेर्त्तुटन् कार्त्त स्वरमणिकळ् मद्ध्ये मद्ध्ये कोर्त्तु चार्त्तीटुन्नोरु कण्ठ काण्डोद्योतवुं ११० मुत्तुमालकळ् वन मालकळोटुं पूण्टु विस्तृतोरसि चार्त्तुं तुळसी मालकळुं अंगदङ्ङळुं वलयङ्ङळ् कङ्कणङ्ङळ् कौण्टुशोभिच्च करङ्ङळुं काञ्चन सदृश पीतांबरोपरि चार्त्तुं काञ्चिकळ् नूपुरङ्ङळेन्निव पलतरं अलङ्कारङ्ङळ् पूण्टु सोदरन्मारोटुमोरलङ्कारत्तेच्चेर्त्तान् भूमि-देविक्कुनाथन् । भर्त्ताविन्नधिवास मुण्टायोरयोद्ध्ययिल् पोल्त्तार् मानिनि तानुं कळिच्चु विळङ्ङिनाळ् । भूतलत्तिङ्कलेल्लामन्नु तोट्टनुदिनं भूतियुं वर्द्धिच्चितु लोकवुमानन्दिच्चु । दम्पतिमारे ब्बाल्यं कौण्टेवं रञ्जिप्पिच्चु सम्प्रति कौमारवुं सम्प्रापिच्चितु

तात (पिता), माताओं और नगरवासियों की समस्त इन्द्रियों को आनंद प्रदान किया । भालदेश पर स्वर्णिम अश्वत्थ पर्णाकार आभूषण पहनने से उत्पन्न शोभा, अञ्जन-रंजित मंजुल कंज-नेत्र और कटाक्षावलोकन, कर्णा-लंकार रूप मणिकुण्डलों की दीप्ति से मंडित स्वर्णिम दर्पण के समान गण्डस्थल, शार्दूल नख और विद्रुम के बीचो-बीच ध्वनिमयी मणियों से गुंथा कंठहार । ११० मुक्ताहार और वनमाला के साथ विशाल छाती का आश्लेष करती तुलसी माला, अंगद, कंकण, चूड़ियाँ, अंगुलीय से शोभित हाथ, कांचन के सदृश पीतांबर पर पहने मेखला, नाना नूपुर आदि विविध प्रकार के आभूषणों से लसित (श्रीराम) अपने भ्राताओं सहित भूमिदेवी के लिए अलंकार बन गये हैं। अपने पति के अधिवास स्थान अयोध्या में श्रीलक्ष्मी देवी (समृद्धि) क्रीडारत हो गयी तब से भूतल भर में दिन प्रतिदिन ऐश्वर्य बढ़ने लगा और संपूर्ण लोक आनंदित हो उठा । दम्पतियों (दशरथ और रानियों) को अपने बाल्य से अनुरंजित करते हुए धीरे-धीरे वे (राम और भ्राता) कौमारावस्था को पहुँच गये । ब्रह्मा के पुत्र एवं महामुनि वसिष्ठ ने विधिवत् बालकों

मेल्लें। विधि नन्दननाय वसिष्ठ महामुनि विधि पूर्वक मुपनिच्चितु बालन्मारें। श्रुतिकळोटु पुनरंगङ्ङळुपांगङ्ङळ् स्मृतिकळुपस्मृति कळुमश्रममेल्लां पाठमायतु पार्त्तलेन्तोरद्भुतमव पाटवमेरुं निज श्वासङ्ङळ् तन्नेयल्लो १२० सकल चराचर गुरुवाय् मरुवीटुं भगवान् तनिक्कोरु गुरुवाय् चमञ्ञीटुं सहस्र पत्रोत्भव पुत्रनां वसिष्ठन्टे महत्वमेरुं भाग्यमेन्तु चोल्लावतोर्त्ताल्। धनुर्वेदांबोनिधि पारगन्माराय् वन्नु तनयन्मारेन्नतु कण्टोरुदशरथन् मनसि वळर्न्नोरु परमानन्दं पूण्टु मुनि नायकनेयुमानन्दिप्पिच्चु तन्नाय्। आमोदं वळर्न्नुळ्ळिल् सेव्य सेवक भावं राम-लक्ष्मणन्मारुं कैकोण्टारतुपोलें। कोमळन्मारायमेवुं भरत शत्रुघ्नन्मार् स्वामि भृत्यक भावं कैकोण्टारनुदिनं। राघवनतुकालमेकदा कौतू-हलाल् वेगमेरीटुन्नोरु तुरग रत्नमेरि प्राण सम्मितनाय लक्ष्मणनोटुं चेर्न्नु बाण तूणीर बाणासनपूणिकळ् पूण्टु कानन देशे नटन्नी-टिनान् नायाट्टिनाय् क्काणाय दुष्ट मृग सञ्चयं कोलचेय्तान्। हरिण हरि करि करटि किटि किरि हरि शार्दूलादिकळमित वन्यमृगं १३० वधिच्चु कोण्टु वन्नु जनकन् काल्क्कल् वच्चु

का उपनयन संस्कार करा दिया। सभी अंगों सहित श्रुतिग्रन्थ, स्मृति, उपस्मृति सब अनायास ही उन्हें कंठस्थ हो गये। विचारपूर्वक देखा जाए तो आश्चर्य की बात है (कि भगवान बालक बनकर वेदाध्ययन कर रहे हैं) कि ये सब उन्हीं के निश्वास हैं। १२० —सारे चराचरों के स्वामी के गुरु बने सहस्रपत्रोद्भव (ब्रह्मा) के पुत्र व्यास जी की महत्ता एवं सौभाग्य के बारे में क्या कहा जाए! धनुर्वेद रूपी सागर में पारंगत अपने तनयों को देखकर महाराज दशरथ मन में अत्यन्त प्रसन्न हुए और (उन्होंने) मुनि नायक को भी (दान-दक्षिणा से) प्रसन्न करवा दिया। परस्पर प्रीतियुक्त राम एवं लक्ष्मण के बीच सेव्य-सेवक भाव बढ़ता गया। सुकुमार भरत-शत्रुघ्न ने भी प्रतिदिन स्वामी-दास भाव को प्रश्रय दिया। उस काल में एक दिन कौतूहलवश श्रीराम जी अपने प्राणोपम प्रिय लक्ष्मण को साथ लेकर एक तीव्रगामी घोड़े पर सवार हो तथा धनुष-बाण एवं तूणीर से अलंकृत हो जानवरों का शिकार खेलने के लिए कानन प्रदेश में घूमने लगे और जो भी जानवर दिखाई दिये उनका शिकार खेलते रहे। हरिण, हरि (सिंह), करि (हाथी), सुअर, चीता, व्याघ्र आदि असंख्य जंगली जानवरों का। १३० —वधकर और उन्हें दशरथ जी के चरणों में रखकर विधिवत् नमस्कार किया। प्रतिदिन उषा काल में उठकर

विधिच्च वण्णं नमस्करिच्चु वणङ्ङिनान् नित्यवुमुषस्युष-स्युत्थाय कुळिच्चूत्तु भक्ति कैक्कोण्टु संध्यावन्दनं चैय्त शेषं जनक जननिमार् चरणांबुजं वन्दिच्चनुजनोटुं चेर्न्नु पौरकार्यङ्ङळेल्लां चिन्तिच्चु दण्डनीति तीङ्ङाते लोकं तङ्कल् सन्ततं रञ्जिप्पिच्चु धर्मपालनं चेय्तु । बन्धुक्कळोटुं गुरुभूतन्मारोटुं चेर्न्नु सन्तुष्टात्मना मृष्ट भोजनं कळिच्चथ धर्म्मशास्त्रादि पुराणेतिहासङ्ङळ् केट्टु निर्म्मल ब्रह्मानन्दलीन चेतसा नित्यं परमन् परापरन् परब्रह्माख्यन् परन् पुरुषन् परमात्मा परमानन्दमूर्त्ति भूमियिल् मनुष्यनायवतारं चैय्तेवं भूमिपालक वृत्ति कैक्कोण्टु वाणीटिनान् । चेतसा विचारिच्चु कण्किलो परमार्त्थमेतुमे चेय्युन्नोनल्लिल्लल्लो विकारवुं । चिन्तिक्किल् परिणाममिल्लातोरात्मानन्दमेन्तोरु महामाया वैभवं चित्रं ! चित्रं !! १४०

विश्वामित्रन्टे यागरक्ष

अक्कालं विश्वामित्रनाकिय मुनिकुल मुख्यनुमयोद्ध्यक्का-म्मारेळुन्नळ्ळीटिनान् । रामनायवनियिल् मायया जनिच्चोरु कोमळमाय रूपं पूण्टोरु परात्मानं सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतं

स्नानादि से निवृत्त हो भक्तिपूर्वक संध्यावंदन के उपरांत जनक-जननियों के चरण-सरोजों पर प्रणाम करके तथा भाई के साथ प्रजाओं के हित के कार्य सोचकर, निर्विघ्न दण्डनीति का अनुसरण करते हुए धर्मानुसार लोकानुरंजन में दत्तचित्त हो, भाई-बंधुओं गुरुजनों के साथ सानंद मिष्ठान्न भोजनकर धर्मशास्त्र, पुराण और इतिहास आदि का श्रवणकर नित्य निर्मल ब्रह्मानन्द में लीन हो परात्परस्वरूप, परब्रह्मस्वरूप, परमानन्दमूर्ति भगवान् भूमि पर मनुष्यावतार लेकर भूमि पालकवृत्ति (शासन कार्य) अपनाकर विराजित हुए । मन में विचारपूर्वक सोच लें तो (भगवान) वास्तव में न कोई कार्य करता है, न किसी विकार के वशीभूत हैं । गहराई से सोचें तो परिणाम रहित आत्मानंद स्वरूप (भगवान) की महामाया की अद्भुत गति है । १४०

विश्वामित्र की यागरक्षा

उन दिनों मुनिकुल मुख्य विश्वामित्र भूमि पर कोमल सशरीर राम के रूप में अवतीर्ण सत्यज्ञानमय, अनंत एवं आनंदस्वरूप परमात्मा को प्रत्यक्ष देखने का संकल्प लेकर तथा मन में भक्ति से विह्वल हो अयोध्या

कण्टुकौळ्वान् चित्तत्तिल् त्तिरञ्ञाशु वळिञ्ञ भक्तियोटे। कौशिकन् तन्ने कण्टु भूपति दशरथनाशु संभ्रमत्तोटुं प्रत्युत्थानवुं चेय्तु विधिनंदननोटुं चेन्नेतिरेटु यथाविधि पूजयुं चेय्तु वन्दिच्चु त्तिन्नु भक्त्या। सस्मितं मुनिवरन् तन्नोटु चौल्लीटिनानस्मज्जन्मवु मिन्नु वन्नितु सफलमाय्। त्तिन्तिरुवटियेंळुन्नळिळय मूलं कृतार्थान्तरात्मावायितु ञानिह तपोनिधे! इङ्ङनेयुळ्ळ-त्तिङ्ङळेंळुन्नळ्ळीटुं देशं मंगलमाय्वन्नाशु सम्पत्तुं ताने वरुं। ऐन्तोन्नु चिन्तिच्चेळुन्नळिळयतुमिप्पोळ् त्तिन्तिरुवटियरुळ् चेय्यणं दयानिधे! ऐन्नालाकुन्नतेल्लां चेय्वन् ञान् मटियाते चौल्लालुं परमार्त्थं तापस कुलपते! १० विश्वामित्रनुं प्रीतनायरुळ् चेय्तीटिनान् विश्वासत्तोटु दशरथनोटतुन्नेरं। ञानमावास्य तोरुं पितृदेवादिकळे ध्यानिच्चु चेय्तीटुन्न होमत्ते मुटक्कुन्नोर् मारीच सुबाहु मुख्यन्मारां नक्तञ्चरन्मारिरुवरुमनुचरन्मारुमायुळ्ळोरुं अवरेनिग्रहिच्चु यागत्ते रक्षिप्पानायवनीपते! रामदेवनेययय्केणं पुष्करोत्भव पुत्रन् तन्नोटुं निरूपिच्चु लक्ष्मणनेयुं कूटे नल्कणं मटियाते। नल्लतु वन्नीटुक त्तिनक्कु महीपते! कल्याणमते!

में पधारे। कौशिक को देखते ही तुरंत भूपति (राजा) दशरथ ससंभ्रम उठ खड़े हो गये। विधिनन्दन (वसिष्ठ) के साथ यथाविधि स्वागत सत्कार करके भक्तिपूर्वक (उनकी) पूजा, स्तुति एवं वंदना करते वे खड़े रहे। (उन्होंने) सहर्ष मुनिवर को बताया कि आज मेरा जन्म सफल हुआ। हे तपोनिधि! आपके आगमन से आज मेरी अन्तरात्मा कृतकृत्य हो गयी है। आप सरीखे जन जिस देश में पदार्पण करते हैं, वह (देश) स्वयं ही मंगलदायक एवं समृद्ध अपने आप हो जाएगा। हे दयानिधि! आपके पधारने का उद्देश्य तुरन्त ही अवगत कराने की कृपा करें। हे तापसवंश के नाथ! आप निस्संकोच भाव से वास्तविक बात बता दें, मैं अपनी शक्ति भर (उसे पूर्ण करने के लिए) प्रयत्न करूँगा। १० विश्वामित्र ने संतुष्ट हो विश्वासपूर्वक तब दशरथ से कहा—"मैं अमावस्या के दिनों में पितृदेवों का अनुस्मरण कर जो होम किया करता हूँ उसमें अपने अनुचरों सहित मारीच तथा सुबाहु नामक दो राक्षस प्रमुख विघ्न डाला करते हैं। उनका वधकर यागरक्षा के लिए हे अवनिपति (राजा)! आप राम को भेज दीजिएगा। पुष्करोद्भ पुत्र (व्यास) से परामर्श लेकर आप बिना किसी संकोच के लक्ष्मण को भी साथ भेजिएगा। हे

करुणानिधे ! नरपते ! चिन्ता चञ्चलनाय पङ्क्ति स्यन्दन नृपन् मंत्रिच्चु गुरुविनोटेकान्ते चोंल्लीटिनान् ऐन्तु चोल्वतु गुरो ! नन्दनन् तन्ने मम संध्यजिच्चीट्टुवतिनिल्लल्लो शक्तियींट्टुं । ऐत्रयुं कोंतिच्चकालत्तिङ्ङल् दैववशाल् सिद्धिच्च तनयनां रामनेप्पिरियुम्पोळ् निर्णयं मरिक्कुं ञान् रामने नल्कीटाञ्ञालन्वय नाशं कूटे वरुत्तुं विश्वामित्रन् २० ऐन्तोन्तु नल्लतिप्पोळेन्तु निन्तिरुवटि चिन्तिच्चरुळिच्चेय्तीट्टुकवेणं । ऐङ्किलो देव गुह्यं केट्टालुमति गोप्यं सङ्कटमुण्टाकेण्टा सन्ततं धरापते ! मानुषनल्ल रामन् मानव शिखामणे ! मानमिल्लात परमात्मावु सदानन्दन् पत्मसंभवन् मुन्नं प्रार्थिक्कमूलमायि पत्मलोचनन् भूमि भारत्तेक्कळवानाय् निन्नुटे तनयनाय्क्कौसल्या देवि तन्निल् वन्नवतरिच्चितु वैकुण्ठन् नारायणन् । निन्नुटे पूर्वजन्मं चोंल्लुवन् दशरथ ! मुन्नं नी ब्रह्मात्मकन् कश्यप प्रजापति तन्नुटे पत्नियाकुमदिति कौसल्य केळ्निन्तिरुवरुं कूटिस्सन्ततियुण्टावानाय् बहुवत्सरमुग्र तपस्सु चेय्तु निङ्ङळ् मुहुरात्मनि विष्णु पूजाध्यानादियोटुं भक्तवत्सलन्

मंगलदायक, करुणानिधि महीपति (राजा)! आपका भला होगा ।" चिन्ता व्याकुल हो राजा दशरथ ने एकान्त में गुरु से पूछा—"हे गुरुवर ! क्या उपाय है ? मैं अपने पुत्र को त्यागने के लिए बिलकुल असमर्थ हूँ । दीर्घकालीन आशा के उपरांत दैवयोग से प्राप्त अपने पुत्र राम के वियोग में मैं मर जाऊँगा और राम को न भेज देने पर विश्वामित्र संताननाश ही कर डालेंगे । २० ऐसी स्थिति में आप विचारपूर्वक करणीय (जो करना उचित है) सुझा दें ।" (तब वसिष्ठ ने बताया) तो सुनिये । हे धरापति ! आप चिन्ता मत कीजिए । आप अत्यन्त रहस्यमय एवं गुप्त रखने योग्य देव संबंधी बात सुनिये । हे मानव-शिरोमणि (मानवों के सिरमौर)! राम मानव नहीं हैं । पहले पद्मसंभव (ब्रह्मा) के प्रार्थना करने पर कमललोचन, परमात्मस्वरूप एवं सदानंदमय वैकुण्ठवासी नारायण ने भूमि को भार-विमुक्त करने के लिए कौसल्या में आपके पुत्र के रूप में अवतार लिया है । मैं अब आपका भी पूर्वजन्म समझाता हूँ । पहले आप ब्रह्मा के पुत्र कश्यप प्रजापति थे और आपकी धर्मपत्नी कौसल्या अदिति थी । दोनों ने तब संतान-लाभ के लिए कई वर्षों तक उग्र तपस्या की । फिर पुत्र के लिए विष्णु की पूजा और ध्यान किया । भक्तों पर दया दिखाने वाले, वरदाता एवं देवतास्वरूप भगवान ने प्रत्यक्ष हो आपसे वर माँगने

देवन् वरदन् भगवानुं प्रत्यक्षी भविच्चु न्नी वाङ्ङिङ्क्कोळ् वरमेन्नान् । पुत्रनाय्प्पिरक्कणमेन्निक्कु भवानेन्नु सत्वरमपेक्षिच्च कारणमिन्नु नाथन् ३० पुत्रनाय्प्पिरन्निनतु रामनेन्नरिञ्ञालुं पृथ्वीन्द्रा ! शेषन् तन्ने लक्ष्मणनाकुन्नतुं शंख चक्रङ्ङळल्लो भरत शत्रुघ्नन्मार् शङ्क कैविट्टु कोण्टालुमिनियुं न्नी । योगमाया देवियुं सीतयाय् मिथिलयिल् यागवेलायामयोनिजयायुण्टाय् वन्नु । आगतनायान् विश्वामित्रनुमवर् तम्मिल् योगं कूटीटुवतिनेन्न-रिञ्ञीटणं न्नी । सन्तुष्टनाय दशरथनुं कौशिकने वन्दिच्चु यथा-विधि पूजिच्चु भक्ति पूर्वं रामलक्ष्मणन्मारेक्कोन्टु पोय्कोण्टालु-मेन्नामोदं पूण्टु न्नल्कि भूपति पुत्रन्मारे । वरिक राम राम ! लक्ष्मण ! वरिकेन्नरिके चेर्त्तु माऱिलणच्चु गाढं गाढं पुणर्न्नु पुणर्न्नुटन् नुकर्न्नु शिरस्सिङ्कल् गुणङ्ङळ् वरुवानाय्पोविनेन्नुर चेय्तान् । जनक जननिमार् चरणांबुजं कूप्पि मुनि नायकन् गुरु पादवुं वन्दिच्चुटन् विश्वामित्रनेच्चेन्नु वन्दिच्चु कुमारन्मार् विश्वरक्षार्थं परिग्रहिच्चु मुनीन्द्रनुं ४० चाप तूणीर बाण

को कहा । तुरन्त ही आपके द्वारा पुत्र रूप में भगवान को प्राप्त करने की याचना से आज भगवान ने । ३० —हे पृथ्वीपति ! राम रूप में आपका पुत्र बनकर अवतार ले लिया है । यह बात समझ लीजिए । लक्ष्मण शेषनाग हैं । भरत-शत्रुघ्न को शंख-चक्र समझकर आज अपना भय आप त्याग दीजिए । यज्ञ समय में मिथिला देश में योगमाया ही अयोनिजा सीता के रूप में पैदा हुई है । उन दोनों के (राम तथा सीता) संयोग (का अवसर प्रदान करने) के लिए ही विश्वामित्र का आगमन हुआ, यह आप समझ लीजिए । यह (रहस्य) बड़ा ही गोप्य है और कहने योग्य नहीं है । आप पुत्र को निर्भय (विश्वामित्र के) साथ भेजिए ।" सन्तुष्ट हो दशरथ ने यथाविधि कौशिक को प्रणाम किया और भक्तिपूर्वक पूजा की । राम-लक्ष्मण को साथ ले जाइये (कहकर) सहर्ष राजा ने पुत्रों को उन्हें सुपुर्द कर दिया । राजा ने कहा—"हे राम ! हे लक्ष्मण ! तुम मेरे पास आ जाओ ।" (फिर) राजा ने उन्हें पास लाकर गाढ़ाश्लेष किया । बार-बार गले से लगाते हुए उनका मस्तक चूम लिया और आग्रह किया कि मंगल लाने के लिए तुम (लोग) जाओ । पिता तथा माताओं के चरण-सरोजों को प्रणाम करके (राम-लक्ष्मण ने) मुनिश्रेष्ठ (अपने) गुरु के चरणों की वंदना की । (फिर) बालकों ने जाकर विश्वामित्र को प्रणाम किया और विश्वामित्र ने विश्व की रक्षा

खड्ग पाणिकळाय भूपतिकुमारन्मारोटुं कौशिकमुनि यात्रयुम-यप्पिच्चाशीर्वादङ्ङळुं चॊल्लि तीर्थपादन्मारोटुं नटन्नु विश्वामित्रन्। मन्दं पोय् चिल देशं कटन्नोरनन्तरं मन्दहासवुं चेय्तिट्टरुळि चेय्तु मुनि राम ! राघव ! राम ! लक्ष्मण कुमार ! केळ् कोमळन्मारायुळ्ळ बालन्मारल्लो निङ्ङळ् । दाहमॆन्तॆन्नु विशप्पॆन्तॆन्नुमरियातॆ देहङ्ङळल्लो मुन्नं निङ्ङळ्क्कॆन्नतु मूलं दाहवुं विशप्पुमुण्टाकातॆयिरिप्पानायि माहात्म्यमेरु न्नोरु विद्यकळिव रण्टुं बलवान्मारे ! निङ्ङळ् पठिच्चु जपिच्चालुं बलयुं पुनरतिबलयुं मटियातॆ । देव निर्मितकळीविद्यकळॆन्नु रामदेवनुमनुजनुमुपदेशिच्चु मुनि । क्षुत् पिपासादिकळुं तीर्न्नु बालन्मारुमायप्पोळ् गंगकटन्नीटिनान् विश्वामित्रन् । ताटकावनं प्रापिच्चीटिनोरनन्तरं गूढस्मेरवुं पूण्टु परञ्ञु विश्वामित्रन्- ५० राघवा ! सत्य पराक्रम वारिधे ! राम ! पोकुमारिल्लीवळियारुमेयितु कालं काटितु कण्टायों नी कामरूपिणियाय ताटका भयङ्करि वाणीटुं देशमल्लो। अवळॆप्पेटिच्चारुं नेर्वळि नटप्पील भुवनवासी जनं भुवनेश्वर पोट्टी! कॊल्लणमिवळॆ नी वल्लजातियुमतिनिल्लोरु दोषमॆन्नु मामुनि

के लिए उन्हें ग्रहण किया । ४० धनुष-बाण, तूणीर एवं खड्ग-पाणी राजकुमारों के साथ कौशिक मुनि को विदा किया और आशीर्वचन देकर तीर्थपादों (पुण्यश्लोक राम-लक्ष्मण) के साथ विश्वामित्र आगे बढ़े । धीरे-धीरे पैदल ही कुछ प्रदेशों को पार करने पर मुनि ने सहर्ष बताया— "हे राम ! हे राघव ! हे राम ! हे लक्ष्मण ! सुनो । तुम लोग कोमल बालक हो । तुमने पहले भूख-प्यास का कभी अनुभव नहीं किया । इसलिए भविष्य में भूख-प्यास न लगे, इसके लिए बला और अतिबला नामक दो महत्वपूर्ण मंत्र, जो महान विद्याएँ हैं, तुम लोग सीख कर उनका जप करते रहो । मुनि ने देव निर्मित इन दोनों विद्याओं का राम-लक्ष्मण को उपदेश किया । (फलस्वरूप) भूख-प्यास से विमुक्त बालकों को लेकर विश्वामित्र ने गंगा पार की । ताड़का वन के पास पहुँचते ही एक गूढहास लेकर विश्वामित्र ने कहा । ५० "हे राघव ! सत्य-स्वरूप एवं अपरिमेय पराक्रमशाली हे राम ! इस मार्ग से कोई नहीं जाया करता । यह जो वन है, इसे कामरूपिणी एवं भयंकरी ताड़का का निवासस्थान जान लो । संसार के नाथ ! हे प्रभु ! उसके भय से इस सीधे मार्ग से कोई भी संसारी व्यक्ति नहीं चलता । वह किसी भी जाति (स्त्री) की क्यों न हो, तुम उसे आज मार डालो, तुम्हें पाप नहीं लगेगा ।" मुनिश्रेष्ठ

परञ्ञप्पोळ् मॆल्लवेयोरु चॆरु ञाणॊलि चॆय्तु रामनॆल्लालोकवुमॊन्नु विरच्चितु नेरं। चॆरु ञाणॊलि केट्टु कोपिच्चु निशाचरि पॆरिकॆ वेगत्तोटुमटुत्तु भक्षिप्पानाय्। अन्नेरमॊरु शरमयच्चु राघवनं चॆन्नु ताटक मारिल् कॊण्टितु रामबाणं। पारतिल् मलचिरकट्टु वीणतु पोलॆ घोर रूपिणियाय ताटक वीणाळल्लो। स्वर्ण रत्नाभरण भूषित गात्रियायि सुन्दरियाय यक्षितन्नॆयुं काणाय्वन्नु। शापत्ताल् नक्तञ्चरियायॊरॆक्षितानुं प्रापिच्चु देवलोकं रामदेवानुज्ञया। ६० कौशिकमुनीन्द्रनुं दिव्यास्त्रङ्ङळॆयॆल्लामाशु राघवनुपदेशिच्चु सलक्षणं निर्म्मलन्मारां कुमारन्मारुं मुनीन्द्रनुं रम्य कानने तत्र वसिच्चु काम्याश्रमे। रात्रियुं पिन्निट्टवर् सन्ध्यावन्दनं चॆय्तु यात्रयुं तुटङ्ङिनारास्थया पुलरकाले। पुक्कितु सिद्धाश्रमं विश्वामित्रनुं मुनि मुख्यन्मारॆतिरेट्टु वन्दिच्चारतु नेरं। रामलक्ष्मणन्मारुं वन्दिच्चु मुनिकळॆ प्रेममुळ्क्कॊण्टु मुनिमारुं सत्कारं चॆय्तार्। विश्रमिच्चनन्तरं राघवन् तिरुवटि विश्वामित्रनॆ नोक्कि प्रीतिपूण्टरुळ् चॆय्तु तापसोत्तम! भवान् दीक्षिक्क यागमिनि तापं कूटातॆ रक्षिच्चीटुवनेतु चॆय्तुं। दुष्टरां निशाचरेन्द्रन्मारॆ काट्टित्तन्नाल् नष्टमाक्कुवन् बाणं कॊण्टु ञान् तपोनिधे! यागवुं

के यह कहते ही राम ने धनुष की लघु झंकार की, उस समय उसे सुनकर सारा संसार ही कंपित हो उठा। यह लघु झंकार सुनकर क्रोध विह्वल हो निशाचरी (राक्षसी) भोजनार्थ तीव्र वेग से (नजदीक) आ गयी। तब राम ने एक बाण का संधान किया, जो ताड़का की छाती में जा लगा। पंख कटे पर्वत के समान भयंकर स्वरूप वाली ताड़का भूमि पर गिर पड़ी। (भूमि पर पड़ते ही) वह स्वर्ण रत्नाभरणों से विभूषित सुन्दर गात्री यक्षिणी के रूप में परिवर्तित हुई। शाप से राक्षसी बनी यक्षिणी राम की आज्ञा से देवलोक पहुँच गयी। ६० कौशिक मुनि ने तुरन्त ही राम-लक्ष्मण को दिव्यास्त्रों का उपदेश किया। पवित्र कुमार (राम-लक्ष्मण) और मुनीन्द्र रम्य कानन में काम्याश्रम में रहने लगे। रात्रि वहीं बिताकर प्रातःकाल में आस्था के साथ संध्यावन्दन के उपरांत उन्होंने फिर यात्रा की। विश्वामित्र के सिद्धाश्रम में पहुँचते ही मुनि श्रेष्ठों ने आकर प्रेमपूर्वक उनका स्वागत किया। विश्राम लेने के बाद भगवान राम ने प्रेमपूर्वक विश्वामित्र से कहा— "तपस्वियों में श्रेष्ठ! आप निश्चिन्त हो यज्ञ का आरंभ कीजिए, किसी भी हालत में यज्ञ-रक्षा की जाएगी। हे तपस्वी! दुष्ट निशाचरों को आप दिखा दें तो मैं अपने

दीक्षिच्चितु कौशिकनतुकालमागमिच्चितु नक्तञ्चरन्मार् पटयोटुं मध्याह्न काले मेल् भागत्तिङ्कल् निन्नु तत्र रक्तवृष्टियुं तुटङ्ङी-टिनारतुन्नेरं ७० पारातें रण्टु शरं तोटुत्तु रामदेवन् मारीच बाहु वीरन्मारें प्रयोगिच्चान् । कोन्नितु सुबाहुवामवनेयोरुशरमन्नेरं मारीचनुं भीति पूण्टोटीटिनान् । चेन्नितु रामबाणं पिन्नाले कूटें क्कूटें खिन्ननायेत्रियोरु योजन पाञ्ञानवन् । अर्णवं तन्निल् चेन्नु वीणितु मारीचनुमन्नेरमविटेयुं चेन्नितु दहिप्पानाय् । पिन्ने मट्टेङ्ङुमोरु शरणमिल्लाञ्ञवनेन्ने रक्षिक्कणमेन्नभयं पुक्कीटिनान् भक्त वत्सलनभयं कोटुत्ततुमूलं भक्तनाय् वन्नानन्नु तुटङ्ङि मारीचनुं । पट्लर्कुल कालनाकिय सौमित्रियुं मट्टुळ्ळ पटयेल्लां कोन्नितु शरङ्ङळाल् । देवकळ् पुष्प वृष्टि चेय्तितु सन्तोषत्ताल् देवदुन्दुभिकळुं घोषिच्चितु नेरं । यक्ष किन्नर सिद्ध चारण गन्धर्वन्मार् तल्क्षणे कूप्पि स्तुतिच्चेट्वुमानन्दिच्चार् । विश्वा-मित्रनुं परमानन्दं पूण्टु पुणर्न्नश्रुपूर्णार्द्राकुल नेत्र पत्मङ्ङळोटुं ८० उत्संगे चेर्त्तु परमाशीर्वादवुं चेय्तु वत्सन्मारेयुं भुजिप्पिच्चितु वात्सल्यत्ताल् । इरुन्नु मून्नु दिनमोरोरो पुराणङ्ङळ्

बाणों से उनका संहार कर दूँगा।" तभी कौशिक ने यज्ञ का प्रारंभ किया और उसी समय रात्रिचर (राक्षस) अपनी सेना सहित आ गये। मध्याह्नकाल में उन्होंने ऊपर से रक्त-वर्षा भी की। ७० मारीच और सुबाहु को लक्ष्य करके राम ने तुरन्त दो बाण चलाये। एक बाण ने जाकर सुबाहु को समाप्त कर दिया, तो भय से मारीच भाग खड़ा हुआ। राम का बाण बार-बार उसका पीछा करता रहा और भयाक्रान्त हो वह एक योजन तक भागता गया। मारीच भाग-दौड़कर समुद्र में जा गिरा तो वहाँ भी (राम-बाण) उसे मारने के लिए पहुँच गया। और कहीं बचने का उपाय न पाकर उसने भगवान के पास जाकर अभय मांगा। भक्त-वत्सल भगवान के द्वारा शरण दी जाने पर वह तब से भक्त बन गया। राक्षसवंश के लिए काल स्वरूप सौमित्र (लक्ष्मण) ने अपने बाणों से शेष राक्षस सेना को समाप्त किया। प्रसन्न हो देवों ने फूलों की वर्षा की और उसी समय देव-दुन्दुभियाँ भी बज उठीं। यक्ष, किन्नर, सिद्ध लोग, चारण लोग एवं गन्धर्व लोग तत्क्षण ही हाथ जोड़कर राम की स्तुति करते हुए आनंदित हुए। परमानंद से ओत-प्रोत विश्वामित्र ने अश्रुस्निग्ध कमल पद्मों (नेत्र) को लेकर (राम-लक्ष्मण को) गले से लगाया। ८० कौशिक ने (उन्हें) गोद में बिठाकर वात्सल्यपूर्वक

पङ्ञुरसिप्पिच्चु कौशिकनवरुमाय्। अरुळ् चेय्तितु ञालां दिवसं पिन्ने मुनि अरुतु वृथाकालं कळकॆन्नुळ्ळतेतुं। जनक महीपति तन्नुटे महायज्ञमिनि वैकाते काण्मान् पोकनां वत्सन्मारे! चोल्लेळुं त्रैयम्बकमाकिय महेश्वर विल्लुण्टु विदेह राज्यत्तिङ्कलिरिक्कुन्नु श्रीमहादेवन् तन्ने वच्चिरिक्कुन्नु पुरा भूमिपालेन्द्रन्मारालर्च्चितमनुदिनं। क्षोणिपालेन्द्रकुल जातनाकिय भवान् काणणं महासत्वमाकिय धनूरत्नं। तापसेन्द्रन्मारोटुमीवण्णमरुळ् चेय्तु भूपतिबालन्मारुं कूटॆप्पोय् विश्वामित्रन्। प्रापिच्चु गंगातीरं गौतमाश्रमं तत्र शोभपूण्टोरु पुण्यदेशमानंदप्रदं दिव्य पादप लता कुसुम फलङ्ङकाल् सर्वमोहनकरं जन्तु सञ्चयहीनं ९० कण्टु कौतुकं पूण्टु विश्वामित्रनें नोक्कि पुण्डरीकेक्षणनुमीवण्णमरुळ् चेय्तु। आश्रम पदमिदमाक्कुंळ्ळू मनोहरमाश्रययोग्यं नाना जन्तु संवीतं तानुं। ऐत्रयुमाह्लादमुण्टायितु मनसिमे तत्त्वमेन्तेन्नतरुळ् चेय्यणं तपोनिधे! ९३

आशीर्वाद दिये और प्रेम से भोजन खिलाया। तीन दिन तक एक न एक पुराण की कथा सुनाकर उन्हें प्रसन्न किया। चौथे दिन मुनि ने मन में यह सोचकर कि वृथा समय बिताना ठीक नहीं है, उनसे कहा— हे वत्स! अब अविलंब जनक महाराज के महायज्ञ को देखने जाना है। त्र्यैयंबक नाम से प्रसिद्ध महेश्वर का चाप विदेह राज्य में रखा हुआ है। इसे स्वयं महादेव ने प्राचीन काल में वहाँ (लाकर) रखा है और वह प्रतिदिन भूमिपालक राजाओं से पूजित है। क्षोणि पालेन्द्र कुल (राजवंश) में जन्मजात आपका उस विशाल धनुष रत्न को देखना अत्यन्त आवश्यक है। (वहाँ उपस्थित) तापस श्रेष्ठों से भी मुनि ने यह बात कही और वे राजकुमारों को साथ लेकर (मिथिला को) निकले। वे गंगातट पर पहुँचे। वहाँ जानवरों के समूह से रहित, दिव्य पादपों, लताओं, कुसुमों, फलों के कारण मोहक एवं अपनी शोभा के कारण अत्यन्त आनंदप्रद प्रदेश में गौतम का आश्रम था। ९० उसे देखकर प्रसन्न मन से कमल-नेत्र श्रीराम ने विश्वामित्र से इस प्रकार पूछा —नाना प्राणियों से अनदेखा किया हुआ तथा आश्रय योग्य यह मनोहर आश्रम स्थान किसका है? हे तपोनिष्ठ! (इसे देखकर) मेरे मन में अत्यन्त कौतूहल बढ़ गया। कृपया आप इस (आश्रम) का रहस्य मुझे समझा दें। ९३

अहल्यामोक्षं

केट्टालुं पुरावृत्तमेंङ्किलो कुमारा ! न्नी वाट्टमिल्लात तपस्सुळ्ळ गौतम मुनि गंगारोधसिनल्लोराश्रमत्तिङ्कलन्न मंगलं वर्द्धिच्चीटुं तपसा वाळुंकालं, लोकेशन् निजसुतयायुळ्ळोरहल्ययां लोकसुन्दरियाय दिव्य कन्यकारत्नं गौतम मुनीन्द्रनु कोटुत्तु विधातावुं कौतुकं पूण्टु भार्य्याभर्त्ताक्कन्मारामवर् । भर्त्तृशुश्रूषा ब्रह्मचर्यादि गुणङ्ङळ् कण्टेन्नयुं प्रसादिच्चु गौतम मुनीन्द्रनुं । तन्नुटे पत्नियायोरहल्ययोटुंचेर्न्नु पर्णशालयिलन्न वसिच्चु चिरकालं । विश्व मोहिनियायोरहल्या रूपं कण्टु दुश्च्यवननुं कुसुमायुध वशनायान् । चेन्तोण्टि वाय्मलरुं पन्तोक्कुं मुलकळुं चन्तमेरीटुं तुटक्काम्पुमास्वदिप्पतिनेन्तोरु कळिवेन्नु चिन्तिच्चु शतमखन् चेन्ताऱ् बाणार्त्ति कोण्टु सन्तापं मुळुक्कयाल् सन्ततं मनक्काम्पिल् सुन्दरगात्री रूपं चिन्तिच्चुचिन्तिच्चनंगान्धनाय् वन्नानल्लो । १० अन्तरात्मनि विबुधेन्द्रनुमितिनप्पोळन्तरं कूटातेयोरन्तरमेन्तेन्नोर्त्तु । लोकेशात्मजसुतनन्दननुटे रूपं नाक नायकन् कैकोण्टन्त्य

अहल्या-मोक्ष

ऐसी तुम्हारी इच्छा हो, तो कुमार ! तुम सुनो । यह पुरानी कथा (मैं तुम्हें बताता हूँ) । कलंक रहित तपस्या से परिपूर्ण गौतम मुनि गंगा तट पर (निर्मित) सुन्दर आश्रम में मंगलदायिनी तपस्या को आधार बनाकर निवास करते आ रहे थे । लोकेश (ब्रह्मा) ने लोक सुन्दरी अपने दिव्य कन्यकारत्न अहल्या को गौतम के लिए (पत्नी रूप में) दे दिया । वे पति-पत्नी सानंद रहने लगे । (अहल्या में) पति सेवा, ब्रह्मचर्या आदि महान गुण देखकर गौतम मुनि अत्यधिक प्रसन्न हुए । अपनी पत्नी अहल्या के साथ वे चिरकाल तक पर्णशाला में रहे । विश्व-मोहिनी अहल्या के रूप सौन्दर्य को देखकर दुश्च्यवन (जो जल्दी च्युत नहीं होता—यहाँ इन्द्र) भी कुसुमायुध (कामदेव) के वश में पड़ गये । नव दाड़िम तुल्य (लाल-लाल) अधरों, गेंद तुल्य वक्षोजों, सुन्दर एवं मृदुल जघनों का आस्वादन करने का कौन-सा उपाय है, यह सोचते हुए शतमख (सौ यज्ञ करने वाले इन्द्र) कमल बाण (काम पीड़ा) से बिंधकर और उसकी पीड़ा के वशीभूत हो निरंतर सुन्दर शरीर वाली (अहल्या) के रूप सौन्दर्य का मन में ध्यान लगाये, कामांध हो दिन बिताने लगे । १० अविलम्ब विबुधेन्द्र (देवेन्द्र) की अन्तरात्मा ने इसके लिए एक उपाय

यामादियिङ्कल् सन्ध्या वन्दनत्तिनु गौतमन् पोयनेरमन्तरा पुक्कानुटजान्तरे परवशाल् । सुत्रामावहल्ययै प्रापिच्चु ससंभ्रमं सत्वरं पुरप्पॆट्ट नेरत्तु गौतमनुं । मित्रन् तन्नुदयमॊट्टट्टुत्तीलॆन्नु कण्टु बद्धसन्देहं चॆन्न नेरत्तु काणाय्वन्नु वृत्रारातिक्कु मुनिश्रेष्ठनॆब्बलालप्पोळ् वित्रस्तनायॆत्रयुं वेपथु पूण्टु निन्नान् । तन्नुटॆ रूपं परिग्रहिच्चु वरुन्नवन् तन्नॆक्कण्टति कोपं कैकॊण्टु मुनीन्द्रनुं । निल्लु निल्लाराकुन्नतॆन्तितु दुष्टात्मावे ! चॊल्लु चॊल्लॆन्नोटु नीयॆल्लामे परमार्थं । वल्लातॆ मम रूपं कैकोळ्वानॆन्तु मूलं निर्लज्जनाय भवानेतॊरु महापापि । सत्यमॆन्नोटु चॊल्लीटट्टिञ्ञेनल्लो तव वृत्तान्तं परयाय्किल् भस्ममाक्कुवनिप्पोळ् २० चॊल्लिनानतु नेरं तापसेन्द्रनॆ नोक्कि स्वर्लोकाधिपनाय कामकिङ्करनहं । वल्लाय्मयॆल्लामकप्पॆट्टितु मूढत्वं कॊण्टॆल्लां निन्तिरुवटि पॊरुत्तु कॊळ्ळणमे । सहस्रभगनायिब्भवियक्क भवानिनि सहिच्चीटुक चॆय्तदुष्कर्म्म फलमॆल्लां । तापसेश्वरनाय गौतमन् देवेन्द्रनॆ शपिच्चाश्रममकं पुक्कप्पोळहल्ययुं वेपथु पूण्टु निल्क्कुन्नतु कण्टरुळ् चॆय्तु तापसोत्तमनाय गौतमन् कोपत्तोटॆ ।

ढूंढ लिया । लोकेशात्मजा के पौत्र (गौतम) का रूप अंतिम पहर में नाकनायक (इन्द्र) ने धारण किया । गौतम मुनि के संध्यावन्दन के लिए जाते समय कामार्त सुत्रामा (इन्द्र) उटज के अन्दर अहल्या के समीप पहुँच गये । तत्काल गौतम मुनि ने साश्चर्य यह पहचान लिया कि मित्र (सूर्य) का उदय होने में अभी समय शेष है । ससंदेह गौतम के (आश्रम में) पहुँचने पर वृत्राराति (वृत्रासुर के शत्रु इन्द्र) (अपनी कल्पना के प्रतिकूल) प्रतीक्षा के विपरीत गौतम को सामने देखकर विशेष भयभीत एवं स्वेद सिक्त हो खड़े रह गये । अपना-सा रूप धारण कर आये (इंद्र) को देखकर मुनिश्रेष्ठ क्रोधाकुल हो उठे (और कहा), "खड़ा रह ! खड़ा रह ! अरे दुष्ट ! तू कौन है और यहां क्यों है ? तू मुझे बता, मुझे सारा सत्य बता दे । तू निर्लज्ज कौन महापापी है ? और कृत्रिम रूप से मेरा रूप धारण करने का क्या उद्देश्य है ? तू अपना यथार्थ रूप मुझे बता दे । मैंने तेरा पूरा रहस्य जान लिया । (तेरा हाल) न बताने पर मैं तुझे अभी भस्म कर दूँगा ।" २० तापस श्रेष्ठ की ओर देखकर स्वर्गलोक के अधिपति (इन्द्र) ने तब कहा कि मैं काम का दास हूँ । मूढ़त्व के कारण मुझसे सारा अपराध हो गया । आप मेरा अपराध क्षमा करें । 'तुम सहस्र भग बन अपने दुष्कर्म का फल भोग लो'

कष्टमेत्रयुं तव दुर्वृत्तं दुराचारे ! दुष्ट मानसे ! तव सामर्थ्यं नन्नुपारं। दुष्कृतमोट्टुङ्ङुवानितिन्नु चोल्लीट्टुवन् निष्कृतिया-युळ्ळोरुदद्धर महाव्रतं। कामकिङ्करे ! शिलारूपवुं कैकोण्टु नी रामपादाब्जं ध्यानिच्चविटे वसिय्क्कणं। नीहारातपवायु वर्षादिकळुं सहिच्चाहारादिकळेतुं कूटाते दिवारात्रं। नाना जन्तुक्कळोन्नु मिविटे युण्टाय्वरा काननदेशेमदीयाश्रमे मनोहरे। ३० इङ्ङने पलदिव्यवत्सरं कळियुम्पोळ् इङ्ङेळुन्नळ्ळुं रामदेवनु-मनुजनुं। श्रीरामपादांभोजस्पर्शमुण्टायीटुं नाळ् तीरुं निन् दुरितङ्ङळेल्लामेन्नरिञ्ञालुं। पिन्ने नी भक्तियोटे पूजिच्चु वळिपोले नन्नायि प्रदक्षिणं चेय्तु कुम्पिट्टु कूप्पि नाथने स्तुतिक्कुम्पोळ् शापमोक्षवुं वन्नु पूतमानसयायालेन्नेयुं शुश्रूषिक्कां। ऐन्नरुळ् चेय्तु मुनि हिमवल्पार्श्वं पुक्कानन्नुतोट्टिविटे वाणीटिनाळहल्ययुं। निन्तिरुमलरटिच्चेन्तळिर्प्पोटि येल्पानेन्तोरु कळिवेन्नु चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुळिळल्। सन्तापं पूण्टु कोण्टु

इन्द्र को यह शाप देकर तापस श्रेष्ठ गौतम आश्रम के भीतर गये तो अहल्या को भी पसीने से तर हो देखा। (उसे) देखकर तपस्वियों के सम्राट गौतम ने क्रोध में आकर कहा— "अरी दुराचारिणी ! दुष्टात्मा ! तुम्हारा यह दुर्वृत्त पापपूर्ण है ! तुम्हारी यह सामर्थ्य विचित्र है, अपार है। तुम्हारे प्रायश्चित्त के लिए मैं दुर्धर (धारण करने में कठिन) महाव्रत का उपदेश देता हूँ। हे काम की दासी ! तुम शिलारूप धारणकर श्रीराम के चरण कमलों का ध्यान करती हुई यहीं ठहरो। नीहार, आतप, वायु, वर्षा आदि सहते हुए तथा भोजनादि के बिना तुम दिन-रात यहीं रहो। अरी सुन्दरी ! मेरे इस आश्रम के आसपास के वन प्रदेश में कोई भी अन्य प्राणी नहीं रहेगा। ३० इस प्रकार कई वर्ष व्यतीत हो जाने पर श्रीरामदेव और अनुज यहाँ पधारेंगे। जिस मुहूर्त में श्रीराम जी के चरण कमल का स्पर्श होगा, तब तुम्हारा सारा पाप और दुःख दूर हो जाएगा, यह समझ लो। फिर भक्तिपूर्वक पूजा करने, यथाविधि ठीक ढंग से प्रदक्षिणा करने, घुटना टेककर और हाथ जोड़कर प्रभु की स्तुति करने से शाप विमुक्त हो पूतात्मा बन मेरी शुश्रूषा कर सकोगी।" इस प्रकार उपदेश देकर मुनि हिमालय को चले गये और तब से अहल्या यहीं पड़ी हुई है। सन्तों को सन्तोष एवं आनंद प्रदान करने वाले हे दुखार्तों के चिन्तामणि ! आपके चरणरूपी लाल पल्लवों की धूलि के स्पर्श का उपाय सोचती हुई, निरंतर संताप

सन्ततं वसिक्कुन्नु सन्तोष सन्दानन्दसन्तानमे ! चिन्तामणे ! आरालुं कण्टुकूटातोरु पाषाणांगियाय् घोरमां तपस्सोटुमिविटे वसिक्कुन्न ब्रह्मनन्दिनियाय गौतमपत्नियुटे कल्मषमशेषवुं तीर्त्तुटे पादङ्ङळाल् उन्मूलनाशं वरुत्तीटणमिन्नु तन्ने निर्म्मलयाय्वन्नीटुमहल्यादेवियेन्नाल् । ४० गाथिनन्दनन् दाशरथियोटेवं परञ्ञाशु तृक्कैयुं पिटिच्चुटजाङ्कणं पुक्कान् । उग्रमां तपस्सोटुमिरिक्कुं शिलारूपमग्रे काण्केन्नु काट्टिक्कोटुत्तु मुनिवरन् । श्रीपादांबुजं मेल्लेवच्चितु रामदेवन् श्रीपति रघुपति सत्पति जगत्पति । रामोहमेन्नु परञ्ञामोदं पूण्टु नाथन् कोमळरूपन् मुनि पत्नियें वणङ्ङिनान् । अन्नेरं नाथन् तन्नेकाणायितहल्यक्कुं वन्नोरानन्दमेतुं चोल्लावतल्लयल्लो । तापसश्रेष्ठनाय कौशिक मुनियोटुं तापसञ्चयं तीङ्ङुमारु सोदरनोटुं शापनाशन करनायोरु देवन् तन्ने चाप बाणङ्ङळोटुं पीतमां वस्त्रत्तोटुं श्रीवत्स वक्षस्सोटुं सुस्मित वक्त्रत्तोटुं श्रीवासांबुजदलसन्निभनेत्रत्तोटुं वासवनीलमणि सङ्काश गात्रत्तोटुं वासवाद्यमरौघ वन्दित पादत्तोटुं । पत्तु दिक्किलुमोक्के तिरञ्ञ

में तल्लीन हो वह यहाँ रहती आ रही है। दर्शन के लिए अयोग्य पाषाण गात्री बन तपस्या में डूबी रहती उस ब्रह्मनन्दिनी गौतम-पत्नी के अशेष पापों को आज ही अपने चरण कमलों से दूर करने की कृपा करें। ऐसा करने पर अहल्या देवी पवित्र एवं निर्मल बनेगी। ४० गाथिनन्दन (विश्वामित्र) दाशरथी (राम) से इस प्रकार कहकर और तुरन्त ही उनका हाथ पकड़कर उटज के अंकण की ओर ले गये। मुनि-श्रेष्ठ ने उग्र तपस्या में बैठे शिलारूप को सम्मुख दिखा दिया। लक्ष्मीपति, रघुवंश के स्वामी, सद्गुणों के पति एवं जगत के स्वामी श्रीरामदेव ने धीरे से अपना चरण कमल (शिलारूप पर) रख दिया। मैं राम हूँ, ऐसा कहते हुए सानंद कोमल स्वरूप भगवान ने मुनि-पत्नी को प्रणाम किया। तब अहल्या को स्वामी दिखाई दिये और (उन्हें) देखकर अहल्या को जो आनंद हुआ, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। तब अहल्या को तापस श्रेष्ठ कौशिक मुनि तथा सारे कल्मष को दूर करने वाले, सहोदर के साथ शापनाशक देव दिखाई दिये जो चाप-बाणों से युक्त, पीत वस्त्र पहने, श्रीवत्स से अंकित छाती वाले, मंदस्मिति से युक्त आननवाले, माधवी लता तथा कमल दल जैसे नेत्रवाले, सुन्दर नीलमणि सदृश गात्रवाले, इन्द्र जैसे देवताओं के समूह से वंदित

कान्तियोटुं भक्तवत्सलन् तन्नें काणायितहल्यय्क्कुं । ५०
तन्नुटॆ भर्त्तावाय गौतम तपोधनन् तन्नोटु मुन्नमुरचॆय्ततु
मोर्त्ताळ्प्पोळ् । निर्णयं नारायणन् तानितु जगन्नाथनर्णोज
विलोचनन् पत्मजा मनोहरन् । इत्थमात्मनि चिन्तिच्चुत्थानं
चॆय्तु भक्त्या सत्वरमर्घ्यादिकळ् कॊण्टु पूजिच्चीटिनाळ् ।
सन्तोषाश्रुक्कळॊळुकीटुं नेत्रङ्ङळोटुं सन्तापं तीर्न्नु दण्डनमस्कारवुं
चॆय्ताळ् । चित्तकाम्पिङ्ङ्लेटं वर्द्धिच्च भक्तियोटुमुत्थानं चॆय्तु
मुहुरञ्जलि बन्धत्तोटुं व्यक्तमायॊरु पुळकाञ्चित देहत्तोटुं
व्यक्तमल्लातवन्न गद्गद वर्णत्तोटुं अद्वयनायॊरनाद्य स्वरूपनॆक्कण्टु
सद्योजातानन्दाब्धिमग्नयाय् स्तुतिच्चाळ् । ञानहो कृतार्त्थयायेन्
जगन्नाथ ! निन्नॆक्काणाय्वन्नतुमूलमत्रयुमल्ल चॊल्लां पत्मज
रुद्रादिकळालपेक्षितं पाद पत्म संलग्न पांसु लेशमिन्नॆनिक्कल्लो
सिद्धिच्चु भवल् प्रसादातिरेकत्तालतिन्नॆत्तुमो बहुकल्पकाल-
माराधिच्चालुं ६० चित्रमॆत्रयुं तव चेष्टितं जगत् पते !
मर्त्त्य भावेन विमोहिप्पिच्चीटुन्नतेवं आनन्दमयनायोरति
मायिकन् पूर्णन् न्यूनातिरेक शून्यनचलनल्लो भवान् । त्वत्पादांबुज

पादवाले, दसों दिशाओं में परिव्याप्त कांतिवाले तथा भक्तों पर वात्सल्य रखनेवाले थे । ५० —तभी अपने पति गौतम मुनि के द्वारा पहले कही गयी बात उसे स्मरण आयी । निश्चय ही ये नारायण, जगत के स्वामी, कमल विलोचन तथा कमला के मन को हरनेवाले हैं, ऐसा मन में निश्चय करके वह उठ खड़ी हुई और जल्दी ही भक्ति के साथ अर्घ्य आदि से उसने (राम की) पूजा की । सारे दुखों से विमुक्त होकर, आनंदाश्रु भरे नेत्रों से उसने दण्डवत् नमस्कार किया । अपने मन में परिव्याप्त निस्सीम भक्ति से उठकर, फिर अंजलि जोड़कर स्पष्ट एवं व्यक्त पुलकावलियों से युक्त देह से, गद्गद के कारण अव्यक्त वर्णों से, अद्वय एवं अनाद्य भगवान को देखने से सद्य:जात आनंद-सागर में तल्लीन हो वह उनकी स्तुति करने लगी— "हे जगन्नाथ ! आपके दर्शन मात्र से मैं कृतार्थ हुई । यही नहीं ब्रह्मा, रुद्र, आदि से कांक्षित पाद-पद्मों में संलग्न धूल का अल्प भाग आज आपके अत्यधिक प्रसाद से मुझे प्राप्त हुआ, जिसके लिए कई कल्पों तक की आराधना करने पर भी मैं योग्य नहीं हूँ । ६० —हे संसार के नाथ ! आपकी चेष्टाएँ अत्यधिक विचित्र हैं । आप तो न्यूनातिरेक शून्य एवं अचल, आनंदस्वरूप एवं पूर्ण हैं, किन्तु अपनी माया के सहारे मर्त्य भाव से इस प्रकार (लोगों

पांसु पवित्रा भागीरथी सर्पभूषण विरिञ्चादिकळेल्लारेयुं शुद्धमाक्कीटुन्नतु त्वल्प्रभावत्तालल्लो सिद्धिच्चेनल्लो ञानुं त्वत्पादस्पर्शमिप्पोळ्। पण्टु ञान् चेय्त पुण्यमेन्तु वर्णिप्पतु वैकुण्ठ ! तल् क्कुण्ठात्मनां दुर्लभ मूर्त्ते विष्णो ! मर्त्यनायवतरिच्चोरु पूरुषं देवं चित्तमोहनं रमणीयदेहिनं रामं। शुद्धमत्भुतवीर्य्यं सुन्दरं धनुर्द्धरं तत्त्वमद्वयं सत्यसन्धमाद्यन्तहीनं नित्यमव्ययं भजिच्चीटुन्नेनिनिनित्यं भक्त्यैव मट्टारेयुं भजिच्चीटुन्नेनल्ल। यातोरु पादांबुजमारायुन्नितु वेदं यातोरु नाभि तन्निलुण्टायि विरिञ्चनुं। यातोरु नामं जपिक्कुन्नितु महादेवन् चेतसा तल्स्वामिये ञान् नित्यं वणङ्ङुन्नेन्। ७० नारद मुनीन्द्रनुं चन्द्रशेखरन् तानुं भारतीरमणनुं भारतीदेवि तानुं ब्रह्मलोकत्तिङ्कल्निन्नन्वहं कीर्त्तिय्क्कुन्नु कल्मषहरं रामचरितंरसायनं। कामरागादिकळ् तीर्न्नानंदं वरुवानाय रामदेवने ञानुं शरणं प्रापिय्क्कुन्नेन्। आद्यनद्वयनेकनव्यक्तनाकुलन् वेद्यनल्लारालुमेन्नालुं वेदान्तवेद्यन्

को) मोहित करते हैं। आपके चरण कमलों की धूल सर्पभूषण (शिव) तथा ब्रह्मा तक को परिशुद्ध करनेवाली पवित्र भागीरथी है। आपके प्रभाव से आज मैंने भी आपके श्रीचरणों का स्पर्श करने का सौभाग्य प्राप्त कर लिया। हे वैकुण्ठवासी ! मैं पापात्मा अपने पूर्व काल में किये पुण्य का क्या वर्णन करूँ ! आप दुर्लभ मूर्ति विष्णु हैं, जो मनुष्य रूप में अवतार लेकर आये हैं। चित्त को मोहित करनेवाले रमणीय देहवाले हे राम ! आप देव हैं। अद्‌भुत वीरता से पूर्ण सुन्दर धनुर्धारी (राम) ! आप शुद्ध, अद्वय तत्व, सत्यस्वरूप, आद्यन्त रहित, नित्य, अव्यय हैं। मैं आज से भक्ति के साथ आपका भजन करती हूँ, और किसी का भजन करने की अब मुझे आवश्यकता नहीं है। जिस स्वामी के चरणारविन्दों का वेद संधान करते हैं, जिसकी नाभि से ब्रह्मा ने जन्म लिया, और जिस स्वामी का नाम नित्य महादेव लेते हैं, उस स्वामी को मैं मन ही मन प्रणाम करती हूँ। ७० ब्रह्मलोक में रहकर मुनींद्र नारद, चंद्रशेखर (शिव), भारती रमणन (ब्रह्मा) तथा भारती देवी (सरस्वती) निरंतर कल्मषहर (पापों को दूर करने वाले) रसात्मक रामचरित का गुणगान करते हैं। काम एवं राग आदि (विकार) दूर हो आनंद की प्राप्ति के लिए मैं भी रामदेव की शरण लेती हूँ। हे स्वामी ! आप आद्य, अद्वय, एक, अव्यक्त, अनाकुल, वेद्य

परमन् परापरन् परमात्मावु परन् परब्रह्माख्यन् परमानंदमूर्त्ति नाथन् पुरुषन् पुरातनन् केवल स्वयंज्योतिस्सकल चराचर गुरु कारुण्यमूर्त्ति। भुवन मनोहरमायोरु रूपं पूण्टु भुवनत्तिङ्कलनुग्रहत्तै वरुत्तुवान्। अङ्ङनेयुळ्ळ रामचन्द्रनेस्सदा कालं तिङ्ङ्ङन भक्त्या भजिच्चीटुन्नेन् मनसि ञान्। स्वतंत्रन् परिपूर्णनानन्दात्मा रामनतन्द्रन् निज माया गुण बिबितनाय् जगदुत्भव स्थिति संहारादिकळ् चेय्वानखण्डन् ब्रह्मविष्णुरुद्र नामङ्ङळ् पूण्टु ८० रूपभेदङ्ङळ् कैक्कोण्टोरु निर्गुण मूर्ति वेदान्तवेद्यन् मम चेतसि वसिक्कणं। राम! राघव! पाद पङ्कजं नमोस्तुते श्रीमयं श्रीदेविपाणिद्वय पत्मार्च्चितं। मानहीनन्मारां दिव्यन्मारालनुध्येयं मानार्त्थं मून्निलकमाक्रान्त जगत्त्रयं। ब्रह्माविन् करङ्ङळाल् क्षाळितं पत्मोपमं निर्म्मलं शंख चक्र कुलिश मत्स्यांकितं मन्मनो निकेतनं कल्मषविनाशनं निर्म्मलात्मानं परमास्पदं नमोस्तुते। जगदाश्रयन् भवान् जगत्तायतु भवान् जगतामादिभूतनायतु भवानल्लो। सर्वभूतङ्ङळिलुमसक्तनल्लो भवान् निर्विकारात्मा साक्षिभूतनायतु भवान्।

न होते हुए भी वेदान्त वेद्य, परम, परात्पर, परमात्मा, परब्रह्मस्वरूप, परमानन्द मूर्ति, पुराण पुरुष, केवल, स्वयं ज्योतिस्वरूप एवं कारुण्यमूर्ति तथा सकल चराचरों के गुरु हैं। भुवनों को अनुगृहीत करने के लिए भुवन-मनोहर स्वरूप को धारण करने वाले श्रीरामचन्द्र जी का भक्ति परिपूर्ण मन से मैं सदाकाल भजन करती हूँ। स्वतंत्र, परिपूर्ण आनंदात्मा एवं अखण्ड राम, जो सदा साज्ञत हैं, और जिन्होंने संसार की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार के कार्य निभाने के लिए अपने ही माया गुण में बिम्बित हो ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र के नाम अपनाये। ८० जो निर्गुणमूर्ति रूप भेदों को अपनाते हैं, वे मेरे मन में सदा वास करें। हे राम! हे राघव! आपके ऐश्वर्य संपूर्ण एवं लक्ष्मी देवी के दो पाणि-पल्लवों से अर्चित उन पाद-पंकजों को मैं नमस्कार करती हूँ जिन पाद-पंकजों का अहंकारहीन दिव्यात्मा लोग प्रतिक्षण अनुस्मरण करते रहते हैं, जिन पादों ने त्रिभुवन को तीन कदमों में समाविष्ट कर दिया है, जो (पाद) ब्रह्मा के हाथों प्रक्षालित हैं तथा जो पद्म के समान निर्मल, शँख, चक्र, कुलिश एवं मत्स्य से अँकित, मेरे मन रूपी निकेतन के कल्मष को नाश करने वाले, पवित्र एवं परम सुन्दर हैं। आप जगत के आधार हैं और स्वयं जगत भी हैं। जगत के आदि पदार्थ भी

अजनव्ययन् भवानजितन् निरञ्जनन् वचसां विषयमल्ला-तोरानन्दमल्लो। वाच्यावाचकोभय भेदेन जगन्मयन् वाच्यमाय् वरेणमे वाक्किनु सदामम। कार्य कारण कर्त्तृ फलसाधनभेदं मायया बहुविधरूपया तोन्निक्कुन्नु। ९० केवलमेन्नाकिलुं निन्तिरुवटियतु सेवकन्मार्क्कुं पोलुमऱिवानरुतल्लो। त्वन्माया विमोहित चेतसामज्ञानिनां त्वन्माहात्म्यङ्ङळ् नेरेयरिञ्ञु-कूटायल्लो। मानसे विश्वात्मावां निन्तिरुवटि तन्ने मानुषनेन्नु कल्पिच्चीटुवोरज्ञानिकळ्। पुरत्तुमकत्तुमेल्लाटवुमोर्क्के निरञ्ञिरि-क्कुन्नतुम् नित्यं निन्तिरुवटियल्लो। शुद्धनद्वयन् समन् नित्यन् निर्म्मलनेकन् बुद्धनव्यक्तन् शान्तनसंगन् निराकारन्। सत्वादि गुणत्रययुक्तयां शक्तियुक्तन् सत्वङ्ङळुळ्ळिल् वाळुं जीवात्मावाय नाथन्। भक्तानां मुक्ति प्रदन् युक्तानां योगप्रदन् सक्तानां भक्तिप्रदन् सिद्धानां सिद्धि प्रदन्। तत्त्वाधारात्मा देवन् सकल जगन्मयन् तत्त्वज्ञन् निरुपमन् निष्कळन् निरञ्जनन् निर्गुणन् निश्चञ्चलन् निर्म्मलन् निराधारन् निष्क्रियन् निष्कारणन्

आप ही हैं। आप समस्त भूतों के प्रति अनासक्त हैं। निर्विकार स्वरूप आप सर्व वस्तुओं के लिए मात्र साक्षी हैं। आप अज, अव्यय, अजित, निरंजन, अनिर्वचनीय आनंदस्वरूप, वाच्य-वाचक उभय भेदों से जगन्मय हैं। आप सदा मेरे वचनों के लिए वाच्य बनकर रहें। मायावश ही आप कार्य, कारण, कर्ता, फल, साधन आदि नानाविधि रूपों में दिखाई देने लगते हैं। ९० आप केवल स्वरूप हैं, आपके सेवक लोग भी आपके स्वरूप को नहीं समझ पाते हैं। आपकी माया में मोहित अज्ञानी लोग आपके महत्व को नहीं समझते। विश्वात्म-स्वरूप आपको अपने मन में मनुष्य रूप में कल्पित करने वाले अज्ञानी ही हैं। नित्य अन्दर बाहर परिपूर्ण जो वस्तु है, वह आप ही हैं। आप शुद्ध, अद्वय, सम, नित्य, निर्मल, एक, बुद्ध, अव्यक्त, शान्त, असंग, निराकार हैं। सत्व आदि गुणत्रयों से परिपूर्ण शक्ति के लिए आप आधार हैं, आप सत्वों के भीतर निवास करती आत्मा हैं, स्वामी हैं। भक्तों को मुक्ति देने वाले, युक्ति-युक्त को योग प्रदान करने वाले, (आप पर) आसक्तों को भक्ति प्रदान करने वाले और सिद्धों को सिद्धि प्रदान करने वाले आप हैं। आप तत्वों के लिए आधारस्वरूप, सारे संसार में परिव्याप्त जगन्मय, तत्वज्ञ, निरुपम, निष्कल, निरंजन, निर्गुण, निश्चल, निर्मल, आधाररहित, निष्क्रिय, कारणरहित, अहंकाररहित, नित्यमय,

निरहङ्कारन् नित्यन् १०० सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतात्मकन् परन् सत्तामात्रात्मा परमात्मा सर्वात्मा विभु सच्चिल् ब्रह्मात्मा समस्तेश्वरन् महेश्वरन् अच्युतनादिनाथन् सर्वदेवतामयन्। ति्न्तिरुवटियायतेन्त्रयुं मूढात्मावायन्धयायुळ्ळोरु ञानेङ्ङनेयरियुन्नु ? ति्न्तिरुवटियुटे तत्त्वमेन्तालुं ञानो सन्ततं भूयोभूयो नमस्ते नमोनमः। यत्र कुत्रापि वसिच्चीटिलुमेल्ला ताळिलुं पौलूत्तळिरटिकळिलिळक्कं वरातोरु भक्तियुण्टाक वेणमेन्तोळ्ळिञ्ञपरं ञानर्त्थिच्चीटुन्नेनल्ल नमस्ते नमोनमः। नमस्ते राम ! राम ! पुरुषाद्ध्यक्ष ! विष्णो ! नमस्ते राम ! राम ! भक्तवत्सल ! राम ! नमस्ते हृषीकेश ! राम ! राघव ! राम ! नमस्ते नारायण ! सन्ततं नमोस्तुते। समस्त कर्म्मार्पिणं भवतिकरोमि ञान् समस्तपराधं क्षमस्वजगत्पते ! जननमरण दुःखापहं जगन्नाथं दिननायक कोटि सदृशप्रभं रामं। कनकरुचिरदिव्यांबरं रमावरं कनकोज्ज्वल रत्न कुण्डलाञ्चित गण्डं ११० कमल दल लोल विमल विलोचनं कमलोत्भवनतं मनसा राममीढे। पुरतःस्थितं साक्षादीश्वरं रघुनाथं पुरुषोत्तमं कूप्पिस्तुतिच्चाळ् भक्तियोटे।

सत्य ज्ञानानंदस्वरूप, केवल सत्ता मात्र परमात्मा एवं सर्वात्मा विभु हैं। १०० आप सत्, चित् ब्रह्ममय, समस्त वस्तुओं के लिए ईश्वर स्वरूप, महेश्वर, अच्युत, आदिनाथ, सर्वदेवमय हैं। ऐसे भगवान को मूढ़ात्मा एवं अँधी मैं कैसे जान सकती हूँ ? फिर भी आपके तत्व को मैं निरंतर बार-बार प्रणाम करती हूँ। आपको (मेरा) नमस्कार है, नमस्कार है। हे राम, राम ! (आपको) नमस्कार ! हे पुरुषाध्यक्ष ! हे विष्णु ! हे राम, हे राम ! हे भक्तवत्सल राम ! (आपको) नमस्कार है। हे हृषीकेश ! हे राम ! हे राघव ! (आपको) प्रणाम है। हे नारायण ! (आपको) नमस्कार है, सदा मैं (आपको) नमस्कार करती हूँ। मैं अपने समस्त कर्म आपको अर्पित करती हूँ। हे जगत के स्वामी ! आप मेरे समस्त अपराध क्षमा कीजिए। जन्म-मरण के दुखों को मिटाने वाले जगत के स्वामी ! करोड़ों दिननाथ (सूर्य) के समान प्रभायुक्त हे राम ! स्वर्णिम स्वच्छ दिव्य वस्त्र से विभूषित लक्ष्मी देवी के नाथ ! आपका गण्ड-स्थल कनकोज्ज्वल रत्नों से निर्मित कुण्डलों की दीप्ति से दीप्तिमय है। ११० आपके निर्मल नेत्र कमलदलों के समान मृदुल हैं। (आप) कमलसंभव (ब्रह्मा) से प्रणीत तथा उनके मन में रमण करनेवाले हैं। इस प्रकार आदिपुरुष साक्षात् ईश्वरस्वरूप

लोकेशात्मजयाकुमहल्य तानुं पिन्नें लोकेश्वरानुज्ञया पोयितु पवित्रयाय् । गौतमनाय तन्टे पतियें प्रापिच्चुटनाधियुं तीर्त्तु वसिच्चीटिनाळहल्ययुं । इस्तुति भक्तियोटें जपिच्चीटुन्न पुमान् शुद्धनायखिल पापङ्ङळुं नशिच्चुटन् परब्रह्मानन्दं प्रापिक्कु-मत्रयल्ल वरुमैहिक सौख्यं पुरुषन्माक्कुं नूनं । भक्त्या नाथनें हृदिसन्निधानं चेय्तु कोण्टिस्तुति जपिच्चीटिल् साधिक्कुं सकलवुं । पुत्रार्त्थि जपिक्किलों नल्ल पुत्रन्मारुण्टामर्त्थार्त्थि जपिच्चीटिलर्त्थंवुमेट्मुण्टां । गुरुतल्पगन् कनकस्तेयि सुरापायि धरणीसुरहन्ता पितृमातृहा भोगि पुरुषाधमनेट्मेङ्किलुमवन् नित्यं पुरुषोत्तमं भक्तवत्सलं नारायणं १२० चेतसि रामचन्द्रं ध्यानिच्चु भक्त्या जपिच्चादराल् वणङ्ङुकिल साधिक्कुमल्लो मोक्षं । सद्वृत्तनें्नायीटिल्प्परयेणमो मोक्षं सद्यः संभविच्चीटुं सन्देहमिल्लयेतुं । विश्वामित्रनुं परमानन्दं प्रापिच्चप्पोळ् विश्वनायकन् तन्नोटीवण्णमरुळ् चेय्तान् :— १२३

तथा पुरुषोत्तम राघव की हाथ जोड़ भक्ति से स्तुति करके लोकेशात्मजा (ब्रह्मा की पुत्री) अहल्या पवित्र बन के लोकेश्वर (राम) की आज्ञा पाकर अपने पति गौतम के समीप पहुँच अपने दुःख को विस्मृत कर (सानंद) रहने लगी। (अहल्या की) इस स्तुति का जो पुरुष भक्ति से जप करता है, वह अपने सकल पापों से मुक्त हो शुद्ध बन परब्रह्मानंद तो प्राप्त करेगा ही, साथ ही ऐसे व्यक्ति को निश्चय ही ऐहिक सुख भी प्राप्त होंगे। स्वामी का हृदय में संकल्प कर भक्ति के साथ इस स्तुति का जप करने से सब कुछ सिद्ध होंगे। पुत्र की कांक्षा लेकर यह जप करें तो सद्गुणी पुत्र होंगे, धन की इच्छा से इसका जप करें तो अत्यधिक मात्रा में धन मिलेगा। गुरु, भार्या-भोगी, चोर, मद्यप, ब्राह्मणहन्ता, पितृ-भोगी और मातृ-भोगी अधम व्यक्ति ही क्यों न हो, अगर वह अपने मन में नित्य पुरुषोत्तम, भक्तवत्सल, नारायणस्वरूप १२० —श्रीरामचन्द्र का ध्यान करते हुए भक्ति से (इस स्तुति का) जप करते हुए (भगवान को) प्रणाम करे तो उसे मोक्ष सिद्ध होगा। अगर (कोई) सद्वृत्तिवाला हो तो कहना न होगा, निस्संदेह (उसे) सद्यःमुक्ति प्राप्त होगी। विश्वामित्र ने तब प्रसन्न चित्त हो विश्वनायक (राम) से इस प्रकार कहा:— १२३

सीता स्वयंवरं

बालकन्मारे ! पोक मिथिलापुरिक्कु नां कालवुं वृथा कळञ्ञीटुकयरुतल्लो । यागवुं महादेव चापवुं कण्टु पिन्ने वेगमोटयोद्धययुं पुक्कु तातने क्काणां । इत्तरमरुळ् चेय्तु गंगयुं कटन्नवर् सत्वरं चेन्नु मिथिलापुरमकंपुक्कु । मुनिनायकनाय कौशिकन् विश्वामित्रन् मुनिवाटं प्रापिच्चितेन्न नेरं मनसि निरञ्ञोरु परमानन्दत्तोटुं जनक महीपति संभ्रम समन्वितं पूजा साधनङ्ङळुमेंटुत्तु भक्तियोटुमाचार्यनोटुमृषिवाटं प्रापिच्च नेरं आमोदपूर्वं पूजिच्चाचारं पूण्टु निन्न राम लक्ष्मण-न्मारेक्काणायि नृपेन्द्रनुं। चन्द्र सूर्यन्मारेन्न पोले भूपालेश्वर नन्दनन्मारेक्कण्टु चोदिच्चु नृपेन्द्रनुं। कन्दर्प्पन कण्टु वन्दिच्चीटिन जगदेक सुन्दरन्मारामिवरारन्नु केळ्प्पिक्कणं। नर नारायणन्माराय मूर्त्तिकळो नरवीराकारं कैकोण्टु काणायतिप्पोळ् । १० विश्वामित्रनुमतु केट्टरुळ् चेय्तीटिनान् विश्वसिच्चालुं मम वाक्यं नी नरपते ! वीरनां दशरथन् तन्नुटे पुत्रन्मारिल् श्रीरामन् ज्येष्ठनिवन् लक्ष्मणन् मून्नामवन्। एन्नुटे यागं रक्षिच्चीटुवानिवरे ञान् चेन्नुकूट्टिक्कोण्टु पोन्नीटिनेनितु कालं ।

सीता-स्वयंवर

हे बालक ! हम मिथिला जाएँगे, वृथा समय बिताना उचित नहीं है। (वहाँ जाकर) यज्ञ और महादेव का चाप देखकर पुनः जल्दी ही अयोध्या पहुँच पिता से मिलेंगे। यह कहकर गंगा पार करके वे जल्दी ही मिथिला में पहुँचे। मुनियों में श्रेष्ठ कौशिक विश्वामित्र को मंडप में आये जानकर मन में आनंद विभोर हो महाराज जनक जब आश्चर्य-चकित हो पूजा-सामग्री ले भक्तिपूर्वक आचार्य के साथ मुनि मंडप में पहुँचे तब राजा ने सामोद पूजा करके विधिवत् खड़े राम-लक्ष्मण की ओर देखा। सूर्य-चन्द्र जैसे राजकुमारों को देखकर राजा ने (विश्वा-मित्र से) पूँछा— "सँसार में अद्वितीय, सौन्दर्यशाली, कामदेव से भी वन्दनीय ये कौन हैं, कृपा करके बता दें। क्या नर और नारायण ही नरवीरों के आकार में यहाँ दिखाई दे रहे हैं ?" १० यह सुनकर विश्वामित्र ने कहा— 'हे नरपति ! आप मेरी बात मानिये। वीर दशरथ के पुत्रों में ज्येष्ठ ये राम हैं और वह तीसरा (पुत्र) लक्ष्मण है। मैं अपने यज्ञ की रक्षा के लिए इन्हें बुला लाया था। वन से जाते समय

त्र्यैयंबकमेन्नु मंत्रीन्द्रनुं । चन्द्रशेखरनुटे पळ्ळिविल् कण्टु रामचन्द्रनुमानंदमुळ्ळकोण्टु वन्दिच्चीटिनान् । विल्लेटुक्कामो कुलच्चीटामो वलिक्कामो चोल्लुकेन्नतु केट्टु चोल्लिनान् विश्वामित्रन् ऐल्लामामाकुन्नतु चेय्तालुं मटिक्केण्टा कल्याणमितु मूलं वन्नु कूटीटुमल्लो ३० मन्दहासवुं पूण्टु राघवनतु केट्टु मन्दमन्दं पोय्च्चेन्नु कण्टितु चापं । ज्वलिच्च तेजस्सोटु मेट्टुत्तु वेगत्तोटे कुलच्चु वलिच्चुटन् मुरिच्चु जितश्रमं । निन्नरुळुन्न नेरमीरेळु लोकङ्ङळु मोन्नु माट्टोलिक्कोण्टु विस्मयप्पेट्टु जनं । पाट्टुमाट्टवुं कूत्तुं पुष्पवृष्टि-युमोरो कूट्टमे वाद्यङ्ङळुं मंगलस्तुतिकळुं देवकळोक्के परमानंदं पूण्टु देवदेवने स्तुतिक्कयुमप्सरः स्त्रीकळेल्लां उत्साहं कैकोण्टु विश्वेश्वरनुटे विवाहोत्सवारंभ घोषं कण्टु कौतुकं पूण्टार् । जनकन् जगत्स्वामियाकिय भगवाने जनसंसदि गाढाश्लेषवुं चेय्तानल्लो । इटिवेट्टीटुंवण्णं विल्मुरिच्चोच्च केट्टु नट्टुङ्ङी राजाकन्मारुरगङ्ङळेप्पोले । मैथिलि मयिल्प्पेट पोले सन्तोषं पूण्टाळ् कौतुकमुण्टाय्वन्नु चेतसि कौशिकनुं । मैथिलि

सहस्रों घंटों, मणियों तथा उत्तम वस्त्रों से विभूषित त्र्यैयंबक को देखने का मंत्रीन्द्र ने आग्रह किया। चन्द्रशेखर के महिमान्वित धनुष को देखकर श्रीरामचन्द्र जी ने सानंद (उसे) प्रणाम किया। 'धनुष उठा सकते हो ? बाण चला सकते हो ? (उसकी) धन्वा खींच सकते हो ?' ऐसे प्रश्न सुनकर विश्वामित्र ने (राम से) कहा— "निःशंक हो, जो कर सकते हो करो, इससे मंगल होगा।" ३० यह सुनकर राम मुस्कराये और मंद-मंद चलकर चाप देखा। तेजोज्वल राम ने (धनुष) वेग-पूर्वक उठाया, लक्ष्य संधान किया, डोरी खींच ली और अनायास (धनुष) भंग किया। राम के ऐसा खड़े रहते समय चौदहों भुवन कंपित हुए और सारे लोग विस्मय विमुग्ध हुए। नाच-गान, पुष्प-वृष्टि, वाद्य, मंगलस्तुति—ये सब विविध प्रकार के हुए। सारे देवता अत्यन्त आनंदित हो देव की स्तुति करने लगे और अप्सराएँ विश्वेश्वर के विवाहोत्सव के प्रारंभ का घोष सुनकर उत्साह एवं कौतुक से भर गयीं। जनक ने सारी जनता के सामने ही संसार के स्वामी (राम) को गाढ़ भाव से आश्लेषित किया। मेघ-गर्जना के समान धनुष के टूटने की ध्वनि सुनकर राजा लोग उरगों के समान चौंक उठे, (किन्तु) मैथिली मोरनी के समान संतुष्ट हुई। कौशिक के मन में भी असीम

तन्नेप्परिचारकमारुं निज माताक्कन्मारुं कूटि ऩन्नायि चमयिच्चार्। ४० स्वर्णवर्णत्तोंप्पूण्ट मैथिलि मनोहरि स्वर्ण-भूषणङ्ङळुमणिञ्ञु शोभयोटें स्वर्णमालयुं धरिच्चादराल् मन्दमन्दमर्णोजनेत्रन् मुम्पिल् सत्रपं विनीतयाय् वन्नुटन् नेत्रोल्पलमालयुमिट्टाळ् मुन्ने पिन्नालें वरणार्त्थमालयुमिट्टीटिनाळ्। मालयुं धरिच्चु नीलोल्पल कान्तितेटुं बालकन् श्रीरामनुमेट्रवुं विळङ्ङिनान्। भूमिनन्दनय्कनुरूपनाय् शोभिच्चीटुं भूमिपालक बालन् तन्नेक्कण्टवर्कळुं आनंदांबुधि तन्निल् वीणुटन् मुळुकिनार् मानववीरन् वाळ्कंन्नाशियुं चौल्लीटिनार्। अन्नेरं विश्वामित्रन् तन्नोटुं जनकनुं वन्दिच्चु चौन्नानिनिक्कालत्तेक्कळयाते पत्रवुं कौटुत्तयच्चीटणं दूतन्मारें सत्वरं दशरथ भूपनें वरुत्तुवान्। विश्वामित्रनुं मिथिलाधिपन् तानुं कूटि विश्वासं दशरथन् तनिक्कु वरुंवण्णं निश्शेष वृत्तान्तङ्ङळेळुतिययच्चितु विश्रमत्तोटु ऩटकोण्टितु दूतन्मारुं। ५० सन्देशं कण्टु पंक्तिस्यंदनन् तानुमिनि सन्देहमिल्ल पुरप्पेटुकेन्नुर चेय्तु। अग्निमानुपाद्ध्यायनाकिय वसिष्ठनुं पत्नियामरुन्धति तानुमाय्प्पुरप्पेट्टु। कौतुकं पूण्टु चतुरंगवाहिनियोटुं कसल्यादिकळाय भार्य्यमारोटुं कूटि। भरत

आनंद हुआ। मैथिली का परिचारिकाओं और उनकी माताओं ने खूब सजाव-शृंगार किया। ४० स्वर्णिम कान्तिवाली एवं सुन्दरी मैथिली ने स्वर्णाभूषणों से सजकर दीप्ति फैलाती हुई तथा स्वर्णमाला पहने बड़े आदर भाव से मन्द-मन्द चलती हुई कमल लोचन (राम) के सामने अत्यन्त विनीत भाव से उपस्थित हो पहले अपनी नेत्रोत्पल माला (राम को) पहनायी और बाद में (हाथ की) वरमाला अर्पित की। माला पहनते हुए नीलकमल की सी आभा वाले बालक श्रीराम भी बहुत सुशोभित हुए। भूमिसुता के अनुरूप शोभित भूमिपालक (राजा) के पुत्र को जिन्होंने भी देखा वे आनंद सागर में निमग्न हुए तथा 'राजा की जय' का नारा भी लगाया। तब जनक ने विश्वामित्र की वंदना करते हुए बताया कि महाराज दशरथ को निमंत्रण देने के लिए अविलंब दूतों के हाथ पत्र भिजवा देना चाहिए। विश्वामित्र तथा मिथिलेश ने मिलकर महाराज दशरथ को विश्वास दिलाते हुए पूरे समाचार लिखे और दूत लोग तुरंत ही (अयोध्या) चल पड़े। ५० (जनक का) सन्देश पाकर दशरथ ने भी आश्वस्थ हो सब को (मिथिला) जाने का आदेश दिया। सूर्यवंशियों के गुरु वसिष्ठ अपनी पत्नी अरुन्धती के साथ

शत्रुघ्नन्मारांकिय पुत्रन्मारुं परमोत्सववाद्यघोषङ्ङळोटुं मिथिलापुरमकंपुक्कितु दशरथन् मिथिलाधिपन् तानुं चेन्नेति- रेट्टुकोण्टान्। वन्दिच्चु शतानन्दन् तन्नोटुं कूटेच्चेन्नु वन्द्यनां वसिष्ठनेत्तदनुपत्नियेयुं अर्घ्यपाद्यादिकळालर्च्चिच्चु यथाविधि सत्करिच्चितु यथा योग्यमुर्वीन्द्रन् तानुं। रामलक्ष्मणन्मारुं वन्दिच्चु पिताविनें सामोदं वसिष्ठनामाचार्य पादाब्जवुं तोळुतु मातृजनङ्ङळेयुं यथाक्रमं तोळुतु श्रीरामपादाम्भोजमनुजन्मार्। तोळुतु भरतनें लक्ष्मणकुमारनुं तोळुतु शत्रुघ्ननुं लक्ष्मण पादांभोजं ६० वक्षसि चेर्त्तु तातन् रामनेप्पुणर्न्निट्टु लक्ष्मणनेयुं गाढाश्लेषवुं चेय्तु नृपन्। जनकन् दशरथन् तन्नुटे कैयुं पिटिच्चनुमोदत्तोटुरचेय्तितु मधुरमाय् ञालु कन्यकमारुण्टेनिक्कु कोटुप्पानाय् ञालुपुत्रन्मार् भवान् तनिक्कुण्टल्लो तानुं। आकयाल् ञालु कुमारन्मार्क्कुं विवाहं चेय्ताकिलो निरूपिच्चालेतुमे मटिक्केण्ट। वसिष्ठन् तानुं शतानन्दनुं कौशिकनुं विधिच्चु मुहूर्त्तवुं ञाल्वर्क्कु यथाक्रमं। चित्रमायिरिप्पोरु मण्डपमतुं तीर्त्तु मुत्तुमालकळ् पुष्पफलङ्ङळ् तूक्किनाना रत्नमंडित स्तंभ तोरणङ्ङळुं ञात्रि रत्नमण्डित स्वर्णपीठवुं वच्चु भक्त्या

निकले। चतुरंग सेना, कौसल्या आदि पत्नियों, भरत-शत्रुघ्न नामक पुत्रों एवं उत्सव के विशिष्ट वाद्यों के साथ उत्साहपूर्वक दशरथ मिथिलापुर में पहुँचे तो मिथिलेश ने आगे बढ़कर उनका स्वागत किया। शतानंद को साथ लेकर जनक ने पूज्य वसिष्ठ और उनकी पत्नी की वंदना की और अर्घ्य आदि से यथाविधि उनकी अर्चना एवं स्वागत-सत्कार किया। राम-लक्ष्मण ने आगे बढ़कर पिता और आचार्य वसिष्ठ के चरण-कमलों पर प्रेमपूर्वक वंदना की और यथाक्रम मातृजनों को भी प्रणाम किया। भ्राताओं ने श्रीराम जी के चरण-पंकजों पर प्रणाम किया। कुमार लक्ष्मण ने भरत को और शत्रुघ्न ने लक्ष्मण के चरण-कमलों पर नमस्कार अर्पित किया। ६० पिता (दशरथ) ने राम को छाती से लगाकर (फिर) लक्ष्मण को आश्लेष किया। जनक ने दशरथ का हाथ पकड़कर इस प्रकार आनंद के साथ मधुर वचन कहे— "मेरे पास देने के लिए चार कन्याएँ हैं और आपके भी चार पुत्र हैं। इसलिए आपकी इच्छा हो तो चारों का विवाह करा दिया जाए, संकोच करने की आवश्यकता नहीं है। वसिष्ठ, शतानंद तथा कौशिक ने चारों बालकों के लिए यथाक्रम मुहूर्त भी निर्धारित किये। एक सुन्दर मंडप का निर्माण किया

श्रीरामपादांभोजं कऴुकिच्चनन्तरं भेरिदुन्दुभिमुख्यवाद्य-घोषङ्ङ्ळोटुं होमवुं कऴिच्चुतन् पुत्रियां वैदेहियॆ रामनु न्नल्कीटिनान् जनकमहीन्द्रनुं । तत्पादतीर्थं निजशिरसि-धरिच्चुटनुळ्प्पुळकांगत्तोटु निन्नितु जनकनुं; ७० यातॊरु पादतीर्थं शिरसिधरिक्कुन्नु भूतेशविधि मुनीन्द्रादिकळ् भक्तियोटॆ । ऊर्म्मिळ तन्नॆ वेट्टु लक्ष्मणकुमारनुं काम्यांगिमारां श्रुतकीर्तियुं माण्डवियुं भरत शत्रुघ्नन्मार् तम्मुटॆ पत्निमाराय्परमानन्दं पूण्टु वसिच्चारॆल्लावरुं । कौशिकात्मजनोटुं वसिष्ठनोटुं कूटि विशदस्मितपूर्वं पङ्ञ्ञु जनकनुं मुन्नं नारदनरुळ् चॆय्तु केट्टिरिप्पू ञानॆन्नुटॆ मकळाय सीतावृत्तान्तमॆल्लां । यागभूदेशं विशुद्धयर्त्थमायुऴुतप्पोळेकसा सितामध्ये काणायिकन्यारत्नं । जात यायॊरु दिव्यकन्यकतनिक्कु ञान् सीतयॆन्नॊरु नामं विळिच्चेनतु मूलं । पुत्रियाय्वळर्त्तु ञानिरिक्कुं कालत्तिङ्कलत्र नारदनॆ-ऴुन्नळ्ळिनानॊरु दिनं । ऎन्नोटु महामुनितानरुळ् चॆय्तानप्पोळ् निन्नुटॆ मकळाय सीतावृत्तान्तं केळ् न्नी । परमानन्द मूर्त्ति

गया और उसमें हीरों की मालाएँ, पुष्प-फल सब लटकाये गये । रत्नमंडित स्तंभ खड़ा कर दिया गया और रत्नालंकृत स्वर्णपीठ भी स्थापित किया गया। श्रीराम जी के चरण-कमलों का सादर प्रक्षालन करने के उपरांत महाराज जनक ने भेरी, दुंदुभी और अन्य मुख्य वाद्य घोषों के साथ होम कराकर वैदेही को राम के हाथ सुपुर्द कर दिया। उनके पादतीर्थ को अपने मस्तक पर धारण करके जनक पुलकित गात्र खड़े हो गये। ७० (जनक ने अपने मस्तक पर वही पादतीर्थ अर्पित किया) जिस पादतीर्थ को शंकर, ब्रह्मा और मुनिवर लोग भक्ति के साथ अपने सिर पर धारण करते हैं। कुमार लक्ष्मण ने उर्मिला से विवाह किया। सुन्दरांगी श्रुतिकीर्ति और माण्डवी शत्रुघ्न और भरत की पत्नियाँ बन गयीं और सभी आनँद पुलकित हो उठे। सहर्ष मुस्कराते हुए जनक ने कौशिकपुत्र विश्वामित्र और वसिष्ठ को बताया— पहले नारद से मैंने पुत्री सीता का सारा हाल सुन रखा है। यज्ञ भूमि को साफ करने के लिए हल चलाते समय अचानक सितामध्ये (एक) कन्यारत्न दिखाई दिया। पुत्री रूप में प्राप्त उस कन्या का मैंने इस कारण (सितामध्य से प्राप्त होने के कारण) सीता नामकरण किया। इस प्रकार जब मैं पुत्री का पालन-पोषण करता आ रहा था तब एक दिन नारद पधारे। तब महामुनि नारद ने मुझसे मेरी पुत्री का वृत्तान्त सुनने का आग्रह

भगवान् नारायणन् परमात्मावामजन् भक्तवत्सलन् नाथन् ८० देवकार्यात्थँ पङ्क्तिकंठ निग्रहत्तिनाय् देवेन्द्र विरिञ्च रुद्रादि-कळत्थिक्कयाल् भूमियिल् सूर्य्यान्वये वन्नवतरिच्चितु रामनाय् माया मर्त्य वेषं पूण्टङ्ङिञालुं। योगेशन् मनुष्यनायीटुम्पोळितु कालं योगमाया देवियुं मानुष वेषत्तोटे जातयायितु तववेश्मनि तल्क्कारणाल् सादरं श्रीरामनु कौटुक्क मटियाते। इत्थं नारदनरुळि चेय्तु मङ्ञ्ञितु पुत्रियाय् वळर्त्तितु भक्ति कैकोण्टु ञानुं। सीतये श्रीराघवनेङ्ङने कौटुक्कावू चेतसि निरूपिच्चा-लेङ्ङनेयङ्यिुन्नु। ऐन्नतोर्त्तिरिक्कुम्पोळोन्नु मनसे तोन्नि पन्नगविभूषणन् तन्ननुग्रहशक्त्या। मृत्युशासन चापं मुङ्च्ची-टुन्नपुमान् भर्त्तावाकुन्नतुमल्पुत्रिक्केन्नीरुपणं चित्तत्तिल् निरूपिच्चु वरुत्ति नृपन्मारे शक्तियिल्लितिन्नेन्नु पृथ्वीपालकन्मारुं उद्धत भावमेल्लामकलेक्कळञ्ञुटन् बुद्धियुं केट्टु पोयङ्ङटङ्ङि कौण्टारल्लो ९० अद्भुत पुरुषनामुल्पल नेत्रन् तन्ने त्वल् प्रसादत्तालिन्नु सिद्धिच्चेन् भाग्यवशाल्। दर्प्पक समनाय चिल्पुरुषने न्नोक्कि पिल्पाटुं तेळिञ्ञुर चेय्तितु जनकनुं। अद्यमे

किया। (उन्होंने कहा कि) परमानंद स्वरूप, परमात्मा, अजन्मा, भक्तवत्सल, भगवान, नारायण जो (सबके) स्वामी हैं, ८० देवताओं के कार्य के लिए दशमुख राक्षस का वध करने के लिए देवेन्द्र, ब्रह्मा, रुद्र आदि की प्रार्थना से भूमि पर सूर्यवंश में अपने मायावश मर्त्यवेशधारी राम के नाम से अवतीर्ण हुए हैं, यह आप समझ लीजिए। योगेशके मनुष्य रूप धारण करने के उसी काल में देवी योगमाया भी आपके यहाँ मनुष्य वेष में पैदा हुई है। इस कारण से आप सादर (सीता को) राम को दीजिए। इस प्रकार उपदेश देकर नारद जी चले गये और मैंने भक्ति के साथ पुत्री रूप में (सीता का) पालन किया। सीता राम को किस प्रकार दूँ, केवल मन में इच्छा रखने से क्या हुआ, इस प्रकार विचार करते-करते पन्नग विभूषण (शिव) की कृपा से मन में यह विचार आया कि शिवधनुष को तोड़नेवाला व्यक्ति ही मेरी पुत्री का पति बनेगा। मन में यह प्रण लेकर राजाओं को बुलाया। अपने दर्प को गँवाकर और इसके लिए (शिवधनुष को भँग करने के लिए) शक्ति नहीं है, यह मानकर बुद्धिहीन भाव से सारे राजा लोग वापस चले भी गये। ९० आज भगवान की कृपा से भाग्यवश अद्भुत पुरुष कमल-लोचन प्राप्त हुए।" कामदेव के समान सौन्दर्यशाली चित्-पुरुष

सफलमाय्वन्नु मानुषजन्मं खद्योतायुत सहस्रोद्योतरूपत्तोटुं खद्योतान्वये पिऱन्नोरु निन्तिरुवटि विद्युल् संयुतमाय जीमूतमेन्न पोले। शक्तियाँ देवियोटुं युक्तनाय्क्काण्कमूलं भक्तवत्सल ! मम सिद्धिच्चु मनोरथं। रक्त पङ्कज चरणाग्रे सन्ततं मम भक्ति संभविय्केणं मुक्तियुं लभिक्केणं। त्वल्पादांबुज गळितांबु धारणं कौण्टु सर्पभूषणन् जगत्तोक्केस्संहरिक्कुन्नु। त्वल्पादांबुज गळितांबु धारणं कौण्टु सत्पुमान् महाबलिसिद्धिच्चा-नैन्द्रपदं। त्वल्पादांबुज रजःस्पृष्टि कौण्टहल्ययुं किल्बिषत्तोटु वेर्प्पेट्टु निर्म्मलयायाळ्। निन्तिरुवटियुटे नामकीर्त्तनं कौण्टु बन्धवुमकन्नु मोक्षत्तेयुं लभिय्कुन्नु १०० सन्ततं योगस्थ-न्माराकिय मुनीन्द्रन्मार् चिन्तिक्कायवरेणमे पादपङ्कज द्वयं। इत्थमोरोन्ने चौल्लिस्तुतिच्चु जनकनुं भक्ति कैक्कौण्टु कौटत्तीटिनान् महाधनं। करिकळरुनूरुं पतिनायिरं तेरुं तुरगङ्ङळेयुं नल्कीटिनान् नूरायिरं। पत्तियुमोरुलक्षं मुन्नूरु दासिकळुं वस्त्रङ्ङळ् दिव्यङ्ङळायुळ्ळतुं बहुविधं मुत्तुमालकळ् दिव्यरत्नङ्ङळ् पलतरं प्रत्येकं नूरुकोटिक्काञ्चन भारङ्ङळुं सीतादेविक्कु

(राम) को देखकर और मन में प्रसन्न हो जनक ने कहा– आज ही मनुष्य जन्म सफल हुआ। अयुत सहस्र सूर्य बिम्ब तुल्य तेज के साथ सूर्यवंश में जात आपको अपनी शक्ति स्वरूपिणी देवी के साथ विद्युत् संयुत नील मेघ सदृश देखकर, हे भक्तवत्सल ! आज मेरा मनोरथ सफल हुआ। लाल कमल तुल्य आपके चरणों पर मेरी भक्ति सदा बनी रहे और मुझे मुक्ति लाभ भी प्राप्त हो। आपके चरणारविन्द से निर्गलित स्वेत जल धारण करने से सर्पभूषण (शिव) विश्व का संहार कर पाते हैं। आपके चरणारविन्द के जल को धारण करके सत्पुरुष महाबलि इन्द्रपद प्राप्त कर सके। आपके चरण कमलों की धूलि का स्पर्श करके अहल्या अपने पापों से मुक्त हो निर्मल बन गयी। आपके नाम स्मरण से (सांसारिक) बंधन छूटकर मुक्ति लाभ प्राप्त होता है। १०० निरंतर योगस्थ मुनिवरों से सेवित आपके दोनों चरण-कमल सदा मेरे ध्यान में रहें। इस प्रकार विविध प्रकार के स्तुति-गान करके राजा जनक ने बड़ी भक्ति के साथ राम को भूरि धन दिया। राजा ने छः सौ हाथी, दस हजार रथ, एक लाख घोड़े, एक लाख पैदल सेना, तीन सौ दासियाँ, नाना प्रकार के अमूल्य एवं दिव्य वस्त्र, कई प्रकार के दिव्य रत्न एवं मुक्ताहार, सौ करोड़ थालियाँ भर स्वर्ण, सब कुछ सीता के लिए दिये

कोंटुत्तीटिनान् जनकनुं प्रीति कैक्कोण्टु परिग्रहिच्चु राघवनुं विधिनन्दनप्रमुखन्मारां मुनिकळे विधिपूर्वकं भक्तिया पूजिच्चु वणङ्ङिनान्। सम्मानिच्चितु सुमन्त्रादि मंत्रिकळेयुं सम्मोद पूण्टु दशरथनुंपुऱप्पेट्टु। कल्मषमकन्नोरु जनक नृपेन्द्रनुं तम्मकळाय सीततन्नेयुमाश्लेषिच्चु निर्म्मल गात्रियाय पुत्रिक्कु पतिव्रता धर्म्मङ्ङळेल्लामुपदेशिच्चु वळिपोले ११० चिन्मयन् मायामयनाय राघवन् निज निज धर्म्म दारङ्ङळोटुं कूटवे पुऱप्पेट्टु मृदंगानकभेरीतूर्य्यघोषङ्ङळोटुं मृदुनादङ्ङळ् तेटुं वीणयुं कुळलुकळ् श्रृंगकाहळङ्ङळुं मद्दळमिटय्क्ककळ् श्रृंगार रस परिपूर्ण वेषङ्ङळोटुं। आनतेऱ कुतिर कालाळाय पटयोटुमानन्द मोटुं पितृमातृ भ्राताक्कळोटुं कौशिक वसिष्ठादि तापसेन्द्र-न्माराय देशिकन्मारोटुं भृत्यामात्यादिकळोटुं। वेगमोट-योद्धयय्क्कान्म्माऱङ्ङु तिरिच्चप्पोळाकाश देशे विमानङ्ङळुं तिङ्ञुते। सन्नाहत्तोटु नटन्नीटुम्पोळ् जनकनुं पिन्नाले चेन्नु यात्रययच्चोरु नेर वेङ्कोट्क्कुट तळ वेण् चामरङ्ङळोटुं तिङ्कळ् मण्डलं तोळुमालवट्टङ्ङळोटुं चेङ्कोटिक्कू-ऱकळ् कोण्टङ्कित ध्वजङ्ङळुं कुंकुममलयज कस्तूरि

और राम ने प्रीतिपूर्वक उन्हें ग्रहण किया। (जनक ने) वसिष्ठ सरीखे मुनिवरों की भक्ति के साथ यथोचित सेवा एवं पूजा की तथा सुमंत्र जैसे मंत्रियों का भी खूब आदर किया। सानंद दशरथ (अयोध्या को) निकल पड़े। सभी प्रकार के पापों से दूर जनक ने अपनी पुत्री सीता को गले से लगाया तथा अपनी निर्मल गात्री सीता को उचित रीति से पतिव्रता धर्म का उपदेश दिया। ११० चिन्मय एवं मायामय राघव और उनके भ्रातागण अपनी-अपनी पत्नियों के साथ निकले। मृदंग, भेरी, तूर्य, आदि विविध वाद्य बज उठे। मधुर ध्वनिमयी वीणा, मुरली, श्रृंग और बीच-बीच में दुंदुभी आदि बज उठी। श्रृंगाररसपूर्ण वेषों, हाथी, रथ, घोड़े, पैदल सेना, माता-पिता, भ्राता, वसिष्ठ, विश्वामित्र जैसे तापसेन्द्र, यात्री लोग, भृत्य एवं अमात्य लोग सब को साथ लेकर तेज़ी से अयोध्या के लिए चल पड़ते समय आकाश मार्ग (देवों के) विमानों से भर गया। बड़ी सजधज एवं धूमधाम से चलते समय पीछे से आ जनक ने उन्हें बिदा किया। छत्र, चामर, अम्बारी, स्वर्णिम पट्टियों से अंकित ध्वजाएँ, कुंकुम, चंदन, कस्तूरी आदि सुगंध द्रव्य आदि से आभूषित उनकी यह यात्रा तीन ही योजन तक चल पायी थी कि कई अपशकुन

गन्धत्तोटुं ऩटन्ऩु विरवोटु मून्ऩु योजनवऴि कटन्ऩनेरं कण्टु दुर्न्निमित्तङ्ङळेल्लां १२० अन्नेरं वसिष्ठने वन्दिच्चुदशरथन् दुर्न्निमित्तङ्ङळुटे कारणं चोल्लुकेन्ऩान्। मन्नव! कुऱञ्ञोरु भीतियुण्टाकुमिप्पोळ् पिन्नेटमभयवुमुण्टामेन्ऩऱिञ्ञालुं। एतुमे पेटिक्केण्ट ऩल्लतुवन्ऩुकूटुं खेदवुमुण्टाकेण्ट कीर्त्तियुं वर्द्धिच्चीटुं। इत्तरं विधिसुतनरुळिच्चेय्युन्नेरं पद्धति मध्ये काणाय्वन्ऩु भार्गवनेयुं। नील नीरदनिभ निर्म्मल वर्णत्तोटुं नील लोहित शिष्यन् बाडवानलसमन् क्रुद्धनाय् परशु बाणासनङ्ङळुं पूण्टु पद्धति मध्ये वन्ऩु निन्ऩप्पोळ्दशरथन् बद्धसाद्ध्वसं वीणु नमस्कारं चेय्तान् बुद्धियुं केट्टु निन्ऩु जनङ्ङळुं। आर्त्तनाय् पंक्तिरथन् भार्गवरामन् तन्ने पेर्त्तु वन्दिच्चु भक्त्या कीर्त्तिच्चान् पलतरं। कार्त्तवीर्यारे! परित्राहिमां तपोनिधे! मार्त्ताण्डकुलं परित्राहि कारुण्यांबुधे! क्षत्रियान्तक! परित्राहिमां जमदग्निपुत्र! मां परित्राहि रेणुकात्मज! विभो १३० परशु पाणे! परिपालय कुलं मम परमेश्वरप्रिय! परिपालयनित्यं पार्त्थिव समुदयरक्त तीर्त्थत्तिल् कुळिच्चास्थया पितृगणतर्प्पणं

दिखाई पड़े। १२० तब दशरथ ने वसिष्ठ को बुलाकर अपशकुनों का कारण पूछा। "हे नरपति! अब थोड़ा-सा भय उत्पन्न हो सकता है और बाद में वह भय दूर हो जायगा। यह आप जान लीजिए। आशंका की कोई बात नहीं है; भला होगा। चिन्ता मत कीजिए, यश बढ़ेगा।"–इस प्रकार जब वसिष्ठ समझा रहे थे तभी रास्ते पर भार्गव (परशुराम) दिखाई दिये। नील नीरद (मेघ) के समान निर्मल वर्ण वाले, परशु बाण और धनुष हाथ में लिये, शिव के शिष्य (परशुराम) को बाडवाग्नि के समान क्रोधाकुल हो मार्ग में खड़े देखकर दशरथ ने अंजलि जोड़ (उन्हें) दण्डवत् प्रणाम किया और (साथी) लोग हतबुद्धि हो रह गये। दशरथ ने परशुराम की ओर कातर भाव से देखा, (उनकी) वन्दना की और कई प्रकार से स्तुति की। "हे कार्तवीर्य के शत्रु श्रेष्ठ तपोधन! मेरी रक्षा कीजिए। हे करुणासागर! आप मार्तण्ड कुल (सूर्यवंश) की रक्षा कीजिए। हे क्षत्रियों के लिए काल! हे जमदग्नि के पुत्र! मेरी रक्षा कीजिए। हे रेणुका पुत्र! हे प्रभु! मेरी रक्षा कीजिए। १३० हे परशुपाणि! हे परमेश्वर प्रिय! मेरे कुल की रक्षा कीजिए! मेरे कुल की नित्य रक्षा कीजिए। हे नाथ! क्षत्रियों के समूह के रक्त तीर्थ में स्नान कर पितृगणों का तर्पण करने

चेय्तनाथ ! कात्तुकोळ्ळुक तपो वारिधे ! भृगुपते ! काल्त्त-ळिरिणतवशरणं मम विभो ! इत्तरं दशरथन् चोन्न-तादरियाते बद्धरोषेण वह्निज्वाल पोङ्ङीटुं वण्णं वक्त्रवुं मध्याह्नार्कमण्डलं पोले दीप्त्या सत्वरं श्रीरामनोटरुळि चेय्तीटिनान्। ञानोळिञ्ञुण्टो रामनित्रिभुवनत्तिङ्कल् मानवनाय भवान् क्षत्रियनेन्नाकिलो निल्लुनिल्लरक्षणमेन्नोटु युद्धं चेय्वान् विल्लिङ्कल् निनक्केट्टं वल्लभमुण्टल्लो केळ्। नीयल्लो बलाल् शैवचापं खण्डिच्चतेन्टे कय्यिलुण्टोरु चापं वैष्णवं महासारं। क्षत्रियकुल जातनाकिल् नीयितु कोण्टु सत्वरं प्रयोगिक्किल् निन्नोटुयुद्धं चेय्वन्। अल्लायिकिल् कूट्टत्तोटु संहरिच्चीटुन्नतुण्टिल्ल सन्देह मेनिक्केन्नतु धरिच्चालुं १४० क्षत्रिय कुलान्तकन् ञानेन्नतरिञ्ञीले शत्रुत्वं नम्मिल्प्पण्टुपण्टेयुण्टेन्नोक्कु नी। रेणुकात्मजनेवं परञ्ञोरनन्तरं क्षोणियुं पारमोन्नु विरच्चु गिरिकळुं। अन्धकारं कोण्टोक्के मरञ्ञु दिक्कुकळुं सिन्धु वारियुमोन्नु कलङ्ङि मरिञ्ञितु। एन्तोन्नु वरुन्नितेन्नोर्त्तु

वाले ! हे तपोनिधि ! हे भृगुपति ! मेरी रक्षा कीजिए। हे प्रभु ! आपके चरण पल्लव ही मेरे लिए शरण है।" इस प्रकार दशरथ की कही बातों पर ध्यान दिये बिना धधकती अग्नि-ज्वाला के समान अत्यधिक क्रोध के साथ तथा मध्याह्नकालीन सूर्य के समान तप्त मुख लेकर (परशुराम ने) श्रीराम जी से कहा— "क्या मेरे अतिरिक्त इस त्रिभुवन में और कोई राम है ? तुम क्षत्रिय कुल में उत्पन्न मानव हो तो ठहरो, ठहरो, मुझसे तुरन्त लड़ने को तैयार हो जाओ। सुना है, तुम्हारा धनुष पर अधिकार है। तुम्हीं ने तो बलात् शिवधनुष तोड़ा है न ? मेरे हाथ में एक प्रचण्ड वैष्णव चाप है। अगर तुम क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हो तो इसका प्रयोग करो। (इसका प्रयोग करने पर) मैं केवल तुमसे युद्ध करूँगा अन्यथा (अगर धनुष का प्रयोग नहीं कर सके) मैं तुम सब का एक साथ सँहार करूँगा। मेरी इस बात में कोई अन्तर नहीं, यह तुम अच्छी तरह समझ लो। १४० क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि मैं क्षत्रियवंश का संहारक हूँ। तुम यह याद रखो कि हम दोनों में बहुत पहले की शत्रुता है।" रेणुकात्मज (परशुराम) के इस प्रकार कहने पर पृथ्वी तथा पर्वत तनिक कंपित हो उठे। सारी दिशाएँ अँधकार से आवृत हो गयीं। सागर जल भी उमड़कर चंचल हो उठा। 'यह क्या हो रहा है'–सोचकर देवता लोग तथा चिन्तित हो तापस

देवादिकळुं चिन्त पूण्टुळ्ळन्तितु तापसवरन्मारुं। पङ्क्ति स्यन्दनन् भीति कोण्टु वेपथु पूण्टु सन्तापमुण्टाय्वन्नु विरिञ्च तनयनुं। मुग्ध भाववुं पूण्टु रामनां कुमारनुं क्रुद्धनां परशुरामन् तन्नोटरुळ् चेय्तु चोल्लेळुं महानुभावन्मारां प्रौढात्माक्कळ् वल्लाते बालन्मारोटिङ्ङने तुटङ्ङियाल् आश्रयमवर्क्केन्तोन्नुळ्ळतु तपोनिधे! स्वाश्रम कुलधर्म्मङ्ङळेङ्ङने पालिक्कुन्नु? निन्तिरुवटि तिरुवुळ्ळत्तिलेरुन्नतिन्नन्तरमुण्टो पिन्ने वरुन्नु निरूपिच्चाल्? अन्धनायिरिप्पोरु बालकनुण्टो गुण बन्धनं भविक्कुन्नु सन्ततं चिन्तिच्चालु १५० क्षत्रिय कुलत्तिङ्कलुत्भविक्कयुं चेय्तेन् शस्त्रास्त्रप्रयोग सामर्थ्यमिल्लल्लो तानुं। शत्रुमित्रोदासीन भेदवुमेनिक्किल्ल शत्रु संहारं चेय्यान् शक्तियुमिल्लयल्लो। अन्तकान्तन् पोलुं लंघिच्चीटुन्नतल्ल निन्तिरुवटियुटे चिन्तितमतुमूलं विल्लिङ्ङु तन्नालुं ञानाकिलो कुलच्चीटामल्लेङ्किल् तिरुवुळ्ळक्केटुमुण्टाकवेण्टा। सुन्दरन् सुकुमारनिन्दिरापति रामन् कन्दर्प्पकळेबरन् कञ्जलोचनन् परन् चन्द्रचूडारविन्द मन्दिरमहेन्द्रादि वृन्दारकेन्द्रमुनिवृन्द वन्दितन् देवन्। मन्दहासवुं पूण्टु

श्रेष्ठ लोग इधर-उधर भाग-दौड़ करने लगे। दशरथ भयातुर हो पसीने से तर हो गये और (उन्हें देखकर) वसिष्ठ को बड़ा दुःख हुआ। बालक राम ने प्रसन्न चित्त हो क्रोधी परशुराम से कहा– प्रसिद्ध प्रौढ़ात्मा महानुभाव लोग बालकों से इस प्रकार निर्दयतापूर्वक व्यवहार करें तो हे तपोनिधि! उनके लिए (फिर) कौन-सा आश्रय प्राप्त होगा? वे अपने आश्रम, कुल एवं धर्म का कैसे पालन करेंगे? सोचें तो आपके मन में हमारे प्रति प्रीतिभाव की क्या कमी है? जरा सोचिये, अंधा बालक (अज्ञानी बालक) क्या कभी गुण के बंधन में आबद्ध (गुणी) हो सकता है? १५० मैं क्षत्रिय कुल में पैदा तो हो गया हूँ, किन्तु शस्त्रों एवं अस्त्रों के प्रयोग की सामर्थ्य (मुझमें) नहीं है। शत्रु या मित्र में भेद या उनके प्रति उपेक्षाभाव मुझमें नहीं है और शत्रु का संहार करने की क्षमता भी मुझमें नहीं है। काल का काल (शिव) भी आपका उल्लंघन नहीं कर सकता। इस कारण मैं चिन्ता में पड़ गया हूँ (कि आपके हाथ के धनुष का कैसे प्रयोग करूँ।) आप जरा धनुष दीजिएगा। हो सका तो मैं उसका प्रयोग करूँगा, अगर मुझसे संभव नहीं हुआ तो आपके मन में क्रोध भी नहीं आना चाहिए।" सुन्दर, सुकुमार, लक्ष्मीदेवी के पति, कामदेव तुल्य सुन्दर शरीरवाले, कमल जैसे नेत्रवाले, चन्द्रचूड (शिव),

वन्दिच्चु मन्देतरं नन्दिच्चु दशरथनन्दनन् विल्लुं वाङ्ङि त्तिन्दरुळुन्न नेरमीरेळु लोकङ्ङळुमोन्निच्चु निरुन्नोरु तेजसा काणाय्वन्नु कुलच्चु बाणमेकमेट्टुत्तोट्टाशु वलिच्चु निरच्चुटन् तिन्नतुजितश्रमं। चोदिच्चु भृगुपतितन्नोटु रघुपति मोदत्तोटरुळि चेय्तीटणं दयानिधे ! १६० मार्ग्गणं निष्फलमायिरिक्कयिल्ल मम भार्गवराम ! लक्ष्यं काट्टित्तन्नीटवेणं। श्रीरामवचनं केट्टन्नेरं भार्गवनुमारूढानन्दमतिनुत्तरमरुळ् चेय्तु। श्री रामराम ! महाबाहो ! जानकीपते ! श्रीरमणात्मा राम ! लोकाभिराम राम ! श्रीराम ! सीताभिरामानन्दात्मक ! विष्णो ! श्रीराम राम ! रमारमण ! रघुपते ! श्रीराम ! राम ! पुरुषोत्तम ! दयानिधे ! श्रीराम ! सृष्टि स्थिति प्रलय हेतुमूर्त्ते ! श्रीराम ! दशरथ नन्दन ! हृषीकेश ! श्रीराम राम राम कौसल्यात्मज हरे ! ऐङ्किलो पुरावृत्तं केट्टु कोण्टालुं मम पङ्कजविलोचन ! कारुण्य वारानिधे ! चक्रतीर्थत्तिङ्कल् च्चेन्नेत्रयुं बाल्यकाले चक्रपाणियेत्तन्नेत्तपस्सु चेय्तेन् चिरं। उग्रमां तपस्सु कोण्टिन्द्रियङ्ङळेयेल्लां निग्रहिच्चनुदिनं सेविच्चेन्

अरविन्द मन्दिर (कमल जिनका वासस्थान है वह ब्रह्मा) महेन्द्र (इन्द्र) आदि देवसमूहों, मुनिगणों से सेव्य परम परमात्मास्वरूप दशरथ पुत्र राम ने मंदहास के साथ (परशुराम की) नम्रतापूर्वक वंदना की और सानंद (उनके हाथ से) धनुष लेते ही चौदहों भुवनों में परिव्याप्त उनका सौन्दर्य दिखाई दिया। धनुष की प्रत्यंचा पर एक बाण रखकर और अनायास प्रत्यंचा खींचकर बाण का संधान करते हुए सानंद रघुपति ने भृगुपति से कहा– "हे दयानिधि ! १६० आप लक्ष्य दिखा दीजिएगा। मेरा संधान निष्फल नहीं होगा।" श्रीराम जी के वचन सुनकर अत्यधिक आनंद में तल्लीन भार्गव ने उनको उत्तर दिया– "हे राम ! हे राम ! हे महाबाहु ! हे जानकीपति ! हे आनंदस्वरूप राम ! हे लोकाभिराम राम ! हे सीताभिराम ! हे आनंदात्मक विष्णु ! हे राम ! राम ! हे रमारमण ! हे रघुपति ! हे राम हे राम ! (आप) दयानिधि, सृष्टि, स्थिति, प्रलय के हेतुस्वरूप हैं। हे श्रीराम ! हे दशरथनन्दन ! हे हृषीकेश ! कौसल्या के पुत्र हे राम राम राम ! आप कमल नेत्र और करुणासागर हैं। (आप) मेरा पूर्व वृत्त सुनिएगा। मैंने अतीव बाल्यकाल में चक्रतीर्थ में जाकर चक्रपाणि (विष्णु) की तपस्या की थी। उग्र तपस्या से प्रतिदिन इंद्रियों

भगवानें। विष्णु कैवल्य मूर्त्ति भगवान् नारायणन् जिष्णु-सेवितन् भजनीयनीश्वरन् नाथन् १७० माधवन् प्रसादिच्चुमल् पुरोभागे वन्नु सादरं प्रत्यक्षनायरुळिच्चेय्तीटिनान्। उत्तिष्ठोत्तिष्ठ ब्रह्मन्! तुष्टोहं तपसाते सिद्धिच्चु सेवाफलं निनक्केन्नरिञ्ञालुं मत्तेजोयुक्तन् भवानेन्नतुमरिञ्ञालुं कर्त्तव्यं पलतुण्टु भवता भृगुपते! कोल्लणं पितृहन्तावाकिय हेहयनें चोल्लेळ्ळुं कार्त्तवीर्यार्जुननां नृपेन्द्रनें। वल्लजातियुमवन् मल्कलांश जातनल्लो वल्लभं धनुर्वेदत्तिनवनेरुमल्लो। क्षत्रियवंशमिरुपत्तोन्नु परिवृत्ति युद्धे निग्रहिच्चु कश्यपनु दानं चेय्क। पृथ्वीमण्डलमोक्कॆप्पिन्नें-श्शान्तियें प्रापिच्चुत्तममाय तपोनिष्ठया वसिच्चालुं। पिन्नें ञान् त्रेतायुगे भूमियिल्द्दशरथन् तन्नुटें तनयनाय्वन्नवतरिच्चीटुं अन्नुकण्टीटां तम्मिलेन्नालेन्नुटें तेजस्सन्यूनंदाशरथितन्निलाक्कीटुक नी। पिन्नेयुं तपस्सु चेय्ताब्रह्मप्रळयान्तमेन्नेस्सेविच्चु वसिच्चीटुक महामुने! १८० ऎन्नरुळ् चेय्तु मऱञ्ञीटिनान् नारायणन् तन्नियोगङ्ङळेल्लां चेय्तितु ञानुं नाथ! तिरित्तिरुवटि तन्नें वन्नवतरिच्चोरु पंक्तिस्यंदनसुतनल्लो नी जगल्पते! ऎङ्कुलुळ्ळोरु

का निग्रह करते हुए भगवान की सेवा की। कैवल्य स्वरूप, विष्णु सेवित, पूज्य एवं भजनीय भगवान जो (जीवों के) स्वामी, नारायण एवं विष्णु हैं—१७० —जो माधव हैं, मुझपर प्रसन्न हो मेरे सामने प्रत्यक्ष आ खड़े हुए और कृपापूर्वक कहा— हे ब्रह्मन्! तुम उठो, तुम उठो। मैं तुम्हारी तपस्या से सन्तुष्ट हुआ हूँ। तुम्हें अपना सेवा-फल मिला, ऐसा समझ लो। तुम यह भी समझ लो कि तुम मेरे तेज से युक्त हो। हे भृगुपति! तुम्हारे करने योग्य कई कर्तव्य हैं। तुम्हें पितृहन्ता कार्तवीर्यार्जुन नाम से प्रसिद्ध हेहय देश के नरपति की हत्या करनी होगी। वह नीच जाति का है, किन्तु मेरी कला के अंश से जन्मा हुआ है और धनुर्वेद उसके लिए अत्यन्त प्रियकर है। क्षत्रिय वंश को इक्कीस बार युद्ध में समाप्त करके पृथ्वी मंडल कश्यप को दान में दो और फिर शांतिपूर्वक उत्तम तपःनिष्ठा से रहो। फिर मैं त्रेतायुग में भूमि पर दशरथ के पुत्र के रूप में अवतार लूँगा। तब हम परस्पर मिलेंगे और तब मेरे सम्पूर्ण तेज को उन दाशरथी में प्रविष्ट करा दो। हे महामुनि! उसके बाद भी प्रलय तक तपस्या करते हुए मेरी सेवा में जीवन व्यतीत करो।" १८० यह कहकर नारायण अप्रत्यक्ष हो गये और उनके आदेश का मैं पालन करता रहा! हे जगत के स्वामी!

महावैष्णव तेजस्सेल्लां निङ्ङलाक्कीटुवानाय् तन्नितु शरासनं। ब्रह्मादि देवकळाल् प्रार्थिक्कप्पेट्टोरु कर्म्मङ्ङळ् माया बलङ्कोण्टु साधिप्पिक्कती। साक्षाल् श्रीनारायणन्तानल्लो भवान् जगल् साक्षियायीटुं विष्णु भगवान् जगन्मयन्। इन्निप्पोळ् सफलमाय्वन्नितु मम जन्मं मुन्नञ्चेय्तोरु तपस्साफल्यमेल्लां वन्नु। ब्रह्ममुख्यन्मारालुं कण्टुकिट्टीटातोरु निर्म्मलमाय रूपं काणाय्वन्नतु मूलं धन्यनाय् कृतार्थनाय् स्वस्थनाय् वन्नेनल्लो निन्नुटे रूपमुळ्ळिल् सन्ततं वसिक्कणं। अज्ञानोत्भवङ्ङळां जन्मादिषड्भावङ्ङळ् सुज्ञानस्वरूपनां निङ्ङलिल्लल्लो पोट्टी! निर्विकारात्मा परिपूर्णनायिरिप्पोरु निर्वाणप्रदनल्लो निन्तिरुवटि पार्त्ताल्। १९० वह्नियिल् धूमंपोले वारियिल् नुरपोले निन्नुटे महामायावैभवंचित्रंचित्रं। यावल्पर्यन्तं मायासंवृतं लोकमोर्त्ताल् तावल्पर्यन्तमरियावल्ल भवत्तत्त्वं। सत्संगं कोण्टु लभिच्चीटिन भक्तियोटुं त्वल् सेवा रतन्मारां मानुषर् मेल्ले मेल्ले त्वन्माया रचितमां संसार पारावारं तन्मरुकरयेरीटुन्नितु कालं कोण्टे। त्वल्ज्ञान परन्मारां मानुषजनङ्ङळ्क्कुळ्ळज्ञानं नीक्कुवोरु

आप भगवान विष्णु का दशरथ पुत्र रूप में अवतार ही हैं। मैंने अपने में समाविष्ट समस्त वैष्णव तेज को आप में प्रविष्ट कराने के लिए यह चाप दिया है। ब्रह्मा आदि देवताओं से प्रार्थित कर्म आप अपने माया बल से पूरा कर लीजिए। आप तो साक्षात् भगवान हैं। संसार के लिए साक्षी स्वरूप, जगन्मय भगवान विष्णु हैं। आज मेरा जीवन सफल हुआ, पूर्व में किये गये सारे तप आज फलवत् हुए। ब्रह्मा आदि प्रमुखों के लिए भी अप्राप्य (आपका) स्वरूप आज मुझे देखने को मिला। इस कारण मैं धन्य एवं कृतार्थ हुआ, स्वस्थ बना। (मेरी प्रार्थना है) कि आपका यह स्वरूप निरंतर मेरे मन में वास करे। हे प्रभु! अज्ञान की उपज जन्म और षड्विकार ज्ञान स्वरूप आप में नहीं हैं। आप वास्तव में निर्विकार स्वरूप परिपूर्ण एवं निर्वाणदाता हैं। १९० अग्नि में धूप, पानी में फेन के समान आपकी माया का वैभव विचित्र है, विचित्र है। जब तक यह संसार माया से संवृत है तब तक (वह) आपके तत्व को नहीं समझ सकता। कई वर्षों तक के सत्संग से प्राप्त भक्ति लेकर आपकी सेवा में रत मनुष्य अपने माया रचित सँसार-सागर को धीरे-धीरे पार कर लेते हैं। आपके प्रसाद से अज्ञानी लोगों को अपने अज्ञान को दूर करनेवाले सद्गुरु प्राप्त होते हैं और

सद्गुरु लभिच्चीटुं। सद्गुरुवरङ्ङल् निन्नम्पोटु वाक्यज्ञान-मुळ्क्काम्पिलुदिच्चीटुं त्वल्प्रसादत्तालप्पोळ् कर्म्मबन्धत्तिङ्ङल् निन्नाशु वेरुपेट्टुभवच्चिन्मय पदत्तिङ्ङलाहन्त लयिच्चीटुं। त्वद्भक्तिविहीनन्मारायुळ्ळ जनङ्ङळ्क्कु कल्पकोटिकळ् कोण्टुं सिद्धिक्कयिल्लयल्लो। विज्ञानज्ञान् सुखं मोक्षमेन्तरिञ्ञालु-भज्ञानं नीक्कित्वद्बोधं मम सिद्धिक्कणं। आकयाल् त्वत्पाद-पत्मङ्ङळिल् सदाकालमाकुलंकूटातोरु भक्तिसंभविक्कणं। २०० नमस्ते जगत्पते! नमस्ते रमापते! नमस्ते दाशरथे! नमस्ते सतांपते! नमस्ते वेदपते! नमस्ते देवपते! नमस्ते मखपते! नमस्ते धरापते! नमस्ते धर्म्मपते! नमस्ते सीतापते! नमस्ते कारुण्याब्धे! नमस्ते चारुमूर्त्ते! नमस्ते राम! राम! नमस्ते रामचन्द्र! नमस्ते राम राम! नमस्ते रामभद्र! सन्ततं नमोस्तुते भगवन्! नमोस्तुते चिन्तये भव चरणांबुजं नमोस्तुते। स्वर्गतिक्कायिट्टेन्नालसञ्चितमाय पुण्यमोक्के निन्

तब उनके मन में वाक्यज्ञान का उदय होता है। तुरंत कर्म-बँधन से छूटकर आपके चिन्मय चरणों में वे तल्लीन हो जाएँगे। आपकी भक्ति से विमुख अज्ञानी लोग कोटि कल्पों में भी विज्ञान-ज्ञान, सुख, मोक्ष आदि प्राप्त नहीं कर सकेंगे। (यह जानकर मैं प्रार्थना करता हूँ) मेरा अज्ञान दूर हो और मुझे आपका तत्वज्ञान प्राप्त हो। उससे सदाकाल आपके चरण-कमलों में निराकुल भक्ति उत्पन्न हो। २०० हे सँसार के स्वामी! नमस्कार। हे रमापति! (आपको) नमस्कार है। हे दशरथ पुत्र! (आपको) नमस्कार। हे सत्यस्वरूप! (आपको) नमस्कार है। हे वेदों के स्वामी! (आपको) नमस्कार है। हे देवों के स्वामी! (आपको) नमस्कार है। हे यज्ञाधिपति! (आपको) नमस्कार है। हे संसार के स्वामी! (आपको) नमस्कार है। हे धर्माध्यक्ष! (आपको) नमस्कार है। हे सीतापति! (आपको) नमस्कार है। हे करुणासागर! (आपको) नमस्कार है। हे सुन्दर मूर्त्ति! (आपको) नमस्कार है। हे राम! राम! (आपको) नमस्कार है। हे रामचन्द्र! (आपको) नमस्कार है। हे राम! राम! नमस्ते। हे रामभद्र! (आपको मेरा) नमस्कार है। हे भगवान! मैं सदा आपको प्रणाम करता हूँ। हे चिन्मय! (आपको) मेरा प्रणाम है। मैं आपके चरण-सरोजों पर प्रणाम करता हूँ। स्वर्ग प्राप्ति के लिए मुझसे सँचित सारे पुण्य आपके बाण का लक्ष्य बन जाएँ।

बाणत्तिन्नु लक्ष्यमाय् भविक्कणं। ऍन्नतु केट्टु तेंळिञ्ञन्तेरं जगन्नाथन् मन्दहासवुं चेय्तु भार्गवनोटु चोन्नान्। सन्तोषं प्रापिच्चेन् ञान् निन्तिरुवटियुळ्ळिलेन्तोन्नु चिन्तिच्चेतेन्ताल-वयेल्लां तन्नेन्। प्रीति कैक्कोण्टु जमदग्नि पुत्रनुमप्पोळ् सादरंदशरथपुत्रनोटरुळ् चेय्तु। एतानुमनुग्रहमुण्टेन्नेक्कुरिच्चेङ्किल् पादभक्तन्मारिलुं पादपत्मङ्ङळिलुं २१० चेतसि सदाकालं भक्तिसंभविक्केणं माधव रघुपते! राम कारुण्यांबुधे! इस्तोत्रं मयाकृतं जपिच्चीटुन्न पुमान् भक्तनाय् तत्त्वज्ञनायीटणं विशेषिच्चुं मृत्यु वन्नटुक्कुम्पोळ् त्वल्पादांबुज स्मृति चित्ते-संभविप्पतिनायनुग्रहिक्कणं। अङ्ङनेतन्नेयेन्नु राघवन् नियोगत्ताल् तिङ्ङिन भक्ति पूण्टु रेणुका तनयनुं सादरं प्रदक्षिणं चेय्तु कुम्पिट्टु कूप्पि प्रीतनाय्च्चेन्नु महेन्द्राचलं पुक्कीटिनान्। भूपति दशरथन् तानतिसन्तुष्टनाय् तापवुमकन्नु तन् पुत्रनां रामन्तन्ने गाढमायाश्लेषं चेय्तानन्दाश्रुक्कळोटुं प्रौढ़ात्मावाय विधिनन्दननोटुं कूटि पुत्रन्मारोटुं पटयोटुं चेन्नयोद्धययिल् स्वस्थ मानसनाय्वाणीटिनान् कीर्त्तियोटें। श्रीरामादिकळ् निज भार्य्य-मारोटुं कूटि स्वैरमाय् रमिच्चु वाणीटिनारेल्लावरुं। वैकुण्ठपुरि

यह सुनकर प्रसन्न हुए भगवान ने मंदहास के साथ तब भार्गव से कहा— "मैं प्रसन्न हूँ। आपने अपने मन में जिन वस्तुओं का संकल्प किया, वे सब (वस्तुएँ) मैंने दे दीं।" तब प्रीतिपूर्वक जमदग्नि पुत्र ने सादर दशरथ पुत्र से कहा– "आपके मन में मेरे प्रति अगर दया है तो (आपके) पाद-भक्तों तथा पाद-पंकजों के प्रति– २१० —हे माधव! हे रघुपति! हे राम! हे करुणासागर! मेरे मन में सदा भक्ति उत्पन्न होती रहे। मुझसे कृत यह स्तोत्र जो भी मनुष्य जपता रहे, वह भक्त तथा तत्वज्ञानी बने। आप विशेषकर यह अनुग्रह करें कि मृत्यु के समीप आते ही (उसके) मन में आपके चरण-कमलों की स्मृति आ जाए।" 'ऐसा ही हो' ऐसा राघव के कहने पर उमड़ती भक्ति लेकर रेणुका पुत्र सादर प्रदक्षिणा करके तथा हाथ जोड़ प्रणाम करके प्रीतिपूर्वक महेन्द्राचल को चले गये। महाराज दशरथ अत्यन्त संतुष्ट हुए और सारे दुखों से मुक्त हो नेत्रों में आनंदाश्रु भरते हुए राम का गाढ़ आलिंगन किया। (फिर वे) प्रौढ़ात्मा ब्रह्मापुत्र (वसिष्ठ), पुत्र, सेना आदि के साथ अयोध्या में पहुँच स्वस्थ मन एवं यशस्वी बन रहने लगे। श्रीराम आदि सभी जन अपनी पत्नियों के साथ सानंद रहने लगे। जैसे वैकुण्ठलोक

तन्निल् श्रीभगवतियोटुं वैकुण्ठन् वाळुं पोले राघवन् सीतयोटुं २२०
आनन्दमूर्त्ति माया मानुष वेषं कैकोण्टानन्दं पूण्टु वसिच्चीटिनाननुदिनं। केकयनराधिपनाकिय युधाजित्तुं कैकेयी तनयने क्कूट्टिक्कोण्टङ्ङु चेल्वान् दूतनेययच्चतु कण्टोरु दशरथन् सोदरनाय् मेवीटुं शत्रुघ्ननोटुं कूटि सादरं भरतनेप्पोवानाय् नियोगिच्चानादरवोटु नटत्तीटिनारवर्कळुं। मातुलन् तन्नेक्कण्टु भरत शत्रुघ्नन्मार् मोदमुळ्क्कोण्टु वसिच्चीटिनारतु कालं। मैथिलियोटुं निज नन्दननोटुं चेर्न्नु कौसल्यादेवितानुं परमानन्दं पूण्टाळ्। राम लक्ष्मणन्मारां पुत्रन्मारोटुं निज भामिनिमारोटुमानन्दिच्चु दशरथन् साकेतपुरि तन्निल् सुखिच्चु वाणीटिनान् पाकशासननमरालये वाळुं पोले। निर्विकारात्मावाय परमानन्दमूर्त्ति सर्वलोकानन्दार्त्थं मनुष्याकृति पूण्टु तन्नुटे मायादेवियाकिय सीतयोटुमोन्निच्चु वाणानयोद्ध्यापुरि तन्निलन्ने। २३०

॥ बालकाण्डं समाप्तं ॥

में महाविष्णु भगवती (लक्ष्मी) के साथ विराजमान हैं वैसे राघव सीता के साथ (विराजमान हुए)। २२० आनंदमूर्ति (भगवान राम) मानुष वेष धारण करते हुए प्रतिदिन सानंद रहने लगे। (तब एक दिन) केकय नरपति युधाजित ने कैकेई के पुत्र (भरत) को लिवा लाने के लिए दूत भेजा। यह देखकर प्रसन्न दशरथ ने सहोदर शत्रुघ्न के साथ भरत को जाने की अनुमति दी और वे सादर चल पड़े। मामा से मिलकर भरत और शत्रुघ्न सानंद वहाँ रहने लगे। (यहाँ) मैथिली और राम के साथ कौसल्या प्रसन्न थीं। राम और लक्ष्मण जैसे अपने पुत्रों तथा भामिनियों सहित महाराज दशरथ साकेतपुरी में ऐसे सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे मानो अमरपुरी में इन्द्र हों। निर्विकार स्वरूप एवं परमानंदमूर्ति, (भगवान) सारे संसार को आनंद प्रदान करने के लिए मानव-रूप धारण कर अपनी मायादेवी सीता जी के साथ अयोध्या में उन दिनों सामोद विराजित हुए। २३०

॥ बालकाण्ड समाप्त ॥

अयोध्याकाण्डम्

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

तार्‌मकळ्क्कन्पुळ्ळ तत्ते ! वरिकेंटो ! तामसशील-मकट्टेणमाशुनी । राम देवन् चरितामृतमिनियुमामोदमुळ्क्कोण्टु चोल्लु सरसमाय् । ऍङ्किलो केळ्प्पिन् चुरुक्कि ञान् चोल्लुवन् पङ्कमेल्लामकलुं पलजातियुं । सङ्कटमेतुं वरिकयुमिल्लल्लो पङ्कजनेत्रन् कथ केट्टीटिनाल् । भार्ग्गवियाकिय जानकि तन्नुटे भाग्य जलनिधियाकिय राघवन् भार्ग्गवन् तन्नुटे दर्प्पं शमिप्पिच्चु मार्ग्गवुं पिन्निट्टयोद्ध्या पुरिपुक्कु तातनोटुं निज मातृजनत्तोटुं धातृसुतनां गुरुवरन् तन्नोटुं वन्नेतिरेटोरु पौरजनत्तोटुं चेन्तु महाराजधानियकं पुक्कु । वन्नितु सौख्यं जगत्तिनु राघवन् तन्नुटे नाना गुणगणं काण्कयाल् । रुद्रन् परमेश्वरन् जगदीश्वरन् कद्रुसुतगण भूषण भूषितन् १०

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

लक्ष्मीदेवी की कृपापात्र शुकी ! आओ । तुम्हें आज अपनी तामसी वृत्ति दूर करनी होगी । तुम अब सानंद एवं सरस पदावली में श्रीरामचन्द्र जी के चरितामृत सुनाओ । ऐसी बात है तो (सब) सुनिये, मैं सँक्षेप में (उस चरित को) सुनाती हूँ, जो कई प्रकार की कालिमा को दूर करने वाला है । यही नहीं पंकज नेत्र (राम) के कथा श्रवण से सारे सँकट भी दूर हो जाते हैं । साक्षात् लक्ष्मीदेवी के अवतार स्वरूप जानकी के भाग्यरूपी सागर राघव भार्गव राम (परशुराम) का दर्प भंग करके और आगे का मार्ग तय करके अयोध्यापुरी में पहुँच गये । वे अपने पिता, मातृजन, ब्रह्मा के पुत्र अपने गुरुवर (वसिष्ठ), अगवानी के लिए पहुँचे पौरजन सबके साथ चलते हुए राजधानी में आ गये और राघव के नाना गुणगणों को देख-देखकर सारा जगत सुख का अनुभव करने लगा । रुद्र ने जो परमेश्वर, जगदीश्वर, कद्रूसुत गण (सर्पगण) से विभूषित-- १० चिद्रूप, अद्वय, मृत्युंजय, पर,

चिद्रूपनद्वयन् मृत्युञ्जयन् परन् भद्रप्रदन् भगवान् भवभञ्जनन्
रुद्राणियाकिय देविक्कुटन् रामभद्र कथामृत सारं कोट्टुत्तप्पोळ्
विद्रुम तुल्याधरियाय गौरियामद्रिसुतयुमानंद विवशयाय्
भर्तृपाद प्रणामं चेय्तु संपूर्ण भक्तियोटुं पुनरेवमरुळ् चेय्तु-
नारायणन् नलिनायतलोचनन् नारीजनमनोमोहनन् माधवन्
नारदसेव्यन् नळिनासनप्रियन् नारकाराति नळिनशर गुरु नाथन्
नरसखन् नाना जगन्मयन् नाद विद्यात्मकन् नामसहस्रवान्
नाळीकरम्यवदनन् नरकारि नाळीक बांधववंश समुत्भवन्
श्रीरामदेवन् परन् पुरुषोत्तमन् कारुण्य वारिधि कामफलप्रदन्
राक्षसवंश विनाशन कारणन् साक्षाल् मुकुन्दनानन्द प्रदन्पुमान् २०
भक्त जनोत्तम भुक्ति मुक्ति प्रदन् सक्ति विमुक्तन् विमुक्त हृदि
स्थितन् व्यक्तनव्यक्तननन्तननामयन् शक्तियुक्तन् शरणागत
वत्सलन् नक्तञ्चरेश्वरनाय दशास्यनु मुक्ति कोटुत्तवन् तन्टे
चरित्रङ्ङळ् नक्तं दिनं जीवितावधि केळ्क्किलुं तृप्तिवरा
मम वेण्टील मुक्तियुं । इत्थं भगवति गौरि महेश्वरि भक्त्या

भद्रप्रद एवं भव-भंजन हैं, जब अपनी प्रियतमा रुद्राणी (पार्वती) को श्रीरामचन्द्र के कथामृत का सारतत्व सुनाया, तब विद्रुम तुल्य अधरों से युक्त गिरिकन्यका गौरी ने अतीव आनंद-विवश हो अपने प्रिय के चरणों में प्रणाम करते हुए संपूर्ण भक्ति से इस प्रकार कहा– नारी जनों के मन को मोहित करने वाले माधव जो नारायण हैं, जिनके कमल जैसे नेत्र हैं, जो नारद से सेवित, कमलासन (ब्रह्मा) के लिए प्रिय, नरक दुःखों को दूर करनेवाले, नलिन शर (कामदेव) के गुरु, स्वामी, नर (अर्जुन) सखा, नाना जगन्मय, नादब्रह्मस्वरूप, सहस्रों नामों से प्रसिद्ध, कमल के समान रम्य मुखवाले, नरकारि, कमल वल्लभ वंश (सूर्यवंश) में उत्पन्न हैं, ऐसे श्रीराम जी परात्पर, पुरुषोत्तम, करुणासागर, इच्छित वस्तु को प्रदान करने वाले, राक्षस वंश के विनाश के कारण स्वरूप, साक्षात् मुकुन्द एवं आनंद देनेवाले पुरुष हैं । २० (वे) भक्तजनों को भोगवृत्ति से मुक्त कर देते हैं, सांसारिक आसक्तियों से मुक्ति दिलाते हैं, जीवन्मुक्तों के हृदय में निवास करते हैं, व्यक्त एवं अव्यक्त दोनों हैं, अनन्त एवं अनामय, शक्तियुक्त एवं शरणागत वत्सल हैं । (उन्होंने) निशाचर दशमुख को मुक्ति दिलायी । (ऐसे राम का) चरित रात-दिन जीवन पर्यन्त सुनते रहने पर भी तृप्ति नहीं आती । मुझे (उस कथा श्रवण की इच्छा है) मुक्ति की इच्छा नहीं है । इस प्रकार महेश्वरी

परमेश्वरनोट्टु चोन्नप्पोळ् मन्दस्मितं चेय्तु मन्मथनाशनन् सुन्दरी ! केट्टुकोळ्केन्नरुळिच्चेय्तु । ऐङ्किलोरुदिनं दाशरथि रामन् पङ्कजलोचनन् भक्तपरायणन् मंगल देवता कामुकन् राघवनंगजनाशनवन्दितन् केशवन् अंगज लीलपूण्टन्त:-पुरत्तिङ्कल् मंगलगात्रियां जानकि तन्नोटुं नीलोत्पलदळ श्यामळविग्रहन् नीलोत्पलदळ लोलविलोचनन् ३० नीलोत्पलाभन् निरुपमन् निर्म्मलन् नीलगळप्रियन् नित्यन् निरामयन् रत्नाभरण विभूषित देहनाय् रत्नसिंहासनं तन्मेलनाकुलं रत्नदण्डं पूण्ट वेण्चामरं कोण्टु पत्नियाल् विजितनायतिकोमळन् बाल निशाकर फालदेशेलसन्मालेय पङ्कमलङ्करिच्चङ्ङने बालार्क सन्निभ कौस्तुभ कन्धरन् प्रालेय भानु समाननयासमं लीलया तांबूल चर्वणाद्वैरति वेलं विनोदिच्चिरुन्नरुळुन्नेरं ३६

नारद-राघव संवादम्

आलोकनार्त्थं महामुनि नारदन् भूलोकमप्पोळलङ्करिच्चीटिनान् । मुग्ध शरच्चन्द्र तुल्य तेजस्सोटुं शुद्धस्फटिक सङ्काश

गिरिकन्यका भगवती के परमेश्वर से कहने पर, कामदेव के शत्रु (परमेश्वर) ने मंदस्मित के साथ कहा– हे सुन्दरी ! सुनो । कमल जैसे नेत्रवाले, भक्तों के प्रति वात्सल्य दिखानेवाले, लक्ष्मीदेवी के कामुक, रघुवंश में उत्पन्न, कामदेव के शत्रु (शिव) से पूजित, विष्णुस्वरूप दशरथ-पुत्र राम एक दिन अन्त:पुर में मंगलगात्री जानकी के साथ कामलीलाओं में तल्लीन हो बैठे थे । नीलकमल दल के समान श्यामल मूर्तिवाले, नीलकमल दलों के समान लोल नेत्रवाले, नीलकमल की आभावाले । ३० नीलकंठ (शिव) के लिए अत्यन्त प्रिय निरुपम, निर्मल, नित्यस्वरूप एवं निरामय भगवान (राम) अपने शरीर को रत्नाभरणों से विभूषित कर रत्न सिंहासन पर निराकुल बैठे थे । रत्नदण्ड से युक्त चामर ले पत्नी विजन दे रही थी । कोमल स्वरूप वाले (भगवान) के बालचन्द्र के समान तेजोमय एवं अर्ध चन्द्राकार भालदेश पर चन्दन का तिलक शोभा पा रहा था । कौस्तुभ मणियों से अलंकृत बालार्क सदृश कंधोंवाले एवं प्रलयकालीन सूर्य तुल्य तेजस्वी भगवान, लीलावश तांबूल चर्वण का रस लेते हुए सानंद एवं सविनोद रतिवेला बिता रहे थे । ३६

नारद और राम का संवाद

तब महामुनि नारद आलोकनार्थ भूलोक में विराजमान हुए । शरत्कालीन चन्द्रमा के समान दीप्तिवाले तथा शुद्धस्फटिक सदृश शरीर

शरीरनाय् सत्वरमंबरत्तिङ्कल् निन्नादराल् तत्रैव वेगालवतरिच्ची-
टिनान् । श्रीरामदेवनुं संभ्रमं कैकॊण्टु नारदनॆक्कण्टॆळुन्नेट्टु सादरं
नारीमणियाय जानकि तन्नोटुं पारिल् वीणाशु नमस्करिच्चीटिनान् ।
पाद्यासनाचमनीयार्घ्य पूर्वकमाद्येन पूजितनायॊरु नारदन्
तन्नियोगत्तालिरुन्नॊरु राघवन् मन्दस्मितं पूण्टु नन्दिच्चु सादरं ।
मन्दं मुनिवरन् तन्नोटरुळ् चॆय्तु वन्दे पदं करुणानिधे ! साम्प्रतं
नाना विषय संगं पूण्टुमेविन मानसत्तोटु संसारिकळायुळ्ळ मानव-
न्माराय अङ्ङळ्क्कु चिन्तिच्चाल् ज्ञानियाकुं तव पादपङ्केरुहं १०
कण्टु कॊळ्वानति दुर्लभं निर्णयं पण्टु ञान् चॆय्तोरु पुण्यफलोदयं
कॊण्टु काण्मानवकाशवुं वन्नितु पुण्डरीकोद्भव पुत्र ! महामुने !
ऎन्नुटॆ वंशवुं जन्मवुं राज्यवुमिन्नु विशुद्धमाय्वन्नु तपोनिधे !
ऎन्नालिनियॆन्तु कार्य्यमॆन्नुं पुनरॆन्नोटरुळ चॆय्क वेणं दयानिधे !
ऎन्तॊरु कार्य्यं निरूपिच्चॆळुन्नळ्ळ सन्तोषमुळ्ळक्कॊण्टरुळ् चॆय्कयुं
वेणं । मन्दनॆन्नाकिलुं कारुण्यमुण्टङ्किल् सन्देहमिल्ल
साधिप्पिप्पनॆल्लामे । इत्थमाकर्ण्य रघुवरन् तन्नोटु मुग्धहासेन
मुनिवरनाकिय नारदनुं भक्त वत्सलनां मनुवीरनॆ नोक्किस्सरस-

वाले नारद तुरन्त ही आकाश से वहाँ आदरपूर्वक अवतरित हुए।
नारद जी को देखकर आश्चर्यान्वित राम जी सादर उठ खड़े हुए और
नारी-रत्न सीता जी के साथ भूमि पर पड़े दंडवत् उन्हें प्रणाम किया ।
पाद-प्रक्षालन एवं अर्घ्य से पूजित नारद के आदेश से अपने स्थान पर
बैठकर राम ने सादर एवं मंदस्मित हो उनका अभिनंदन किया और
मुनिवर से मंदस्वर में बताया—हे करुणानिधे ! आपके चरणों पर
प्रणाम है। निरंतर नाना प्रकार के कार्यों में व्यस्त हम सांसारिक
मनुष्यों को निश्चय ही आप जैसे ज्ञानियों के चरण-कमलों की इच्छा
करने पर भी-- १० देख पाना कठिन है। हे पुण्डरीकोद्भव पुत्र (ब्रह्मा
के पुत्र) ! हे महामुनि ! मेरे पूर्व जन्म के पुण्यों के फलस्वरूप आज
(आपके चरण-कमलों को) देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । हे
तपस्वी ! आज मेरा कुल, जन्म और राज्य पवित्र हुआ। हे दया-
निधि ! आप कृपापूर्वक अपने आगमन का उद्देश्य एवं कार्य प्रसन्नता-
पूर्वक मुझे बता दें। मैं मंद बुद्धिवाला हूँ, फिर भी आपके प्रसाद से
मैं निस्संदेह उसे पूरा कर सकूँगा। (राम के इस कथन को) सुनकर
मुनिश्रेष्ठ नारद ने भक्त वत्सल मनुवीर राघव की ओर मुग्ध हँसी
हँसते हुए देखा और सरस वाणी में बताया—स्वयं लोकानुकारी बनकर

मरुळ् चेय्तु ऐन्तिनिन्नेन्ने मोहिप्पिप्पतिन्नु नी सन्ततं लोकानुकारि कळायति चातुर्यमुळ्ळोरु वाक्कुकळेट्वुं माधुर्यमोटु चौल्लीटुन्नति-ङ्ङने। २० मुग्धङ्ङळायुळ्ळ वाक्यङ्ङळेक्कोण्टु चित्तमोहं वळर्क्कण्ट रघुपते! लौकिकमायुळ्ळ वाक्यङ्ङळेन्नालुं लोकोत्तरन्मार्क्कु वेण्टिवरुमल्लो। योगीशनाय नी संसारि ञानेन्नु लोकेश! चौन्नतु सत्यमत्रे दृढं। सर्वं जगत्तिनुं कारणभूतयाय् सर्वमातावाय माया भगवति सर्वं जगल् पितावाकिय निन्नुटे दिव्य गृहिणियाकुन्नतु निर्णयं। ईरेळु लोकवुं निन्ट्टे गृहमप्पोळ् चेरुं गृहस्थ नाकुन्नतेन्नुळ्ळतुं। निन्नुटे सन्निधि मात्रेण मायथिल् निन्नु जनिक्कुन्नु नाना प्रजकळुं। अर्णोज संभवनादि तृणान्तमायोन्नोळियाते चराचर जन्तुक्कळोक्कवे निन्नपत्यं पुनराकयालोक्कुं परञ्ञतु संसारियेन्नतुं। इक्कण्ट लोक बन्धुक्कळ्क्कु सर्वदा मुख्यनाकुं पितावायतुं नीयल्लो। ३० शुक्ल रक्तासित वर्णभेदं पूण्ट सत्व रजस्तमो नाम गुणत्रययुक्तनायीटिन विष्णु महामाया शक्तियल्लो तव पत्नियाकुन्नतुं। सत्वङ्ङळेज्जनिप्पिक्कुन्नतुमवळ् सत्यं त्वयोक्तमतिनिल्ल संशयं। पुत्र मित्रात्थं कळत्र वस्तुक्कळिल्

मुझे मोह-पाश में डालने के लिए बड़े मधुर ढंग से चातुर्य युक्त शब्दों का ऐसा प्रयोग आप क्यों कर रहे हैं? २० हे रघुपति! मुग्ध करने वाले वाक्यों का प्रयोग करके मेरे मन का मोह न बढ़ाइएगा। लौकिक (अर्थवाले) वाक्य भी लोकोत्तर पुरुषों के काम आते हैं! हे लोकेश! योगिश्रेष्ठ आपने यह जो कहा कि मैं संसारी हूँ, निश्चय ही सत्य है! सर्वजगत् के लिए कारणभूत एवं सबकी माता भगवती माया निश्चय ही सारे जगत के पिता स्वरूप आपकी दिव्य गृहिणी तो है। चौदहों भुवन तो आपका गृह है। ऐसी हालत में आपका गृहस्थ भाव बिल-कुल ठीक ही है। आपके सान्निध्य मात्र से माया से नाना प्रजा वर्ग जन्म लेते हैं। बिना अन्तर के अर्णोज-संभव (कमल संभव ब्रह्मा) आदि से लेकर तृण तक समस्त चराचर प्राणि वर्ग आपकी ही संतानें हैं। इस कारण आपका कहा हुआ यह 'संसारी' शब्द बिलकुल उचित ही है। इस दृष्टिगोचर समस्त लोक वर्ग के लिए प्रधान जनक सर्वदा आप ही हैं। ३० शुक्ल, रक्तिम और असित वर्णभेदों से युक्त सत्व, रज एवं तम नामक गुणत्रय से परिपूर्ण विष्णु की महामाया नामक शक्ति ही आपकी पत्नी है। वही सत्वों को जन्म देती है। इसलिए आपका

सक्तनायुळ्ळ गृहस्थन् महामते ! लोकत्रय महागेहत्तिनु भवानेकनायोरु गृहस्थनाकुन्नतुं नारायणन् नी रमादेवि जानकि माराररियुं नीयुमादेवि जानकि। सारस संभवनायतु नी तव भारती देवियाकुन्नतु जानकि। आदित्यनल्लो भवान् प्रभ जानकि शीतकिरणन् नी रोहिणि जानकि। आदितेयाधिपन् नी शचि जानकि जातवेदस्सु नी स्वाहा महीसुत। अक्कंजन् नी दण्ड नीतियुं जानकि रक्षोवरन् भवान् तामसि जानकि ४० पुष्करेन्द्रन् भवान् भार्गवि जानकि शक्रद्रुतन् नी सदागति जानकि। राज राजन् भवान् सम्पत्करि सीत राजराजन् नी वसुन्धर जानकि। राज प्रवर कुमार ! रघुपते ! राजीव लोचन ! राम ! दयानिधे ! रुद्रनल्लो भवान् रुद्राणि जानकि सुद्रुमं नी लता रूपिणि जानकि। विस्तरिच्चेत्तिनेरेप्पर्ञ्ञीटुन्नु सत्य पराक्रम ! सद्गुण वारिधे ! यातोन्नु यातोन्नु पुल्लिग वाचकं वेदान्तवेद्य ! तल् सर्ववुमेवनी चेतो विमोहन स्त्रीलिंग वाचकं यातोन्नतोक्कवे जानकी देवियुं

कथन सत्य ही है, इसमें कोई संदेह नहीं है। हे महामति ! आप पुत्र, मित्र एवं कलत्र (पत्नी) आदि वस्तुओं के प्रति आसक्त गृहस्थ हैं। त्रिभुवन रूपी महा गेह (बड़े घर) के लिए आपही अकेले गृहस्थ हैं। आप नारायण हैं तो जानकी देवी रमा हैं, आप शिव हैं तो जानकी उमा हैं। आप ही सारस संभव (ब्रह्मा) हैं और उनकी भारती (सरस्वती) जानकी हैं। आप सूर्य हैं तो जानकी आपकी प्रभा हैं और आप चन्द्र हैं तो जानकी ही रोहिणी हैं। आप आदितेयाधिप (इन्द्र) हैं तो जानकी शची हैं। आप जातवेदस् (अग्नि) हैं तो महीसुता (जानकी) स्वाहा (अग्नि की पत्नी) हैं। आप अर्कात्मज (यमराज) हैं तो उनकी दण्डनीति ही जानकी हैं। आप रक्षोवर (रावण) हैं तो जानकी तामसी वृत्ति हैं। ४० आप पुष्करेन्द्र (शिव) हैं तो जानकी भार्गवी हैं। आप शक्रद्रुम हैं तो जानकी उससे प्राप्त होने वाली वायु हैं। आप सम्राट हैं तो जानकी वैभव एवं समृद्धि हैं। आप महाराजा हैं तो जानकी वसुन्धरा हैं। हे श्रेष्ठ राजकुमार ! हे रघुपति ! हे राजीव लोचन ! हे राम ! हे दयानिधि ! आप रुद्र हैं और जानकी रुद्राणी हैं; आप सुन्दर वृक्ष हैं तो जानकी लता स्वरूपिणी हैं। हे सत्य स्वरूप ! हे सद्गुणों के सागर ! मैं सविस्तार अधिक क्यों बताऊँ ! हे वेदान्तवेद्य ! जो-जो पुल्लिगवाची हैं सब आप ही हैं और जो-जो मनोमोहक स्त्रीलिंग वाचक (पदार्थ) हैं सब जानकी हैं।

निङ्ङळिरुवरु मॆन्नियॆ मट्टॊन्नु मॆङ्ङुमे कण्टील कॆळ्प्पानुमिल्लल्लो। अङ्ङनॆयुळ्ळॊरु निन्नॆत्तिरिञ्ञरि ञ्ञॆङ्ङनॆ सेविच्चु कॊळ्ळू जगत् पते ! मायया मूटि मरञ्ञिरिक्कुन्नॊरु नीयल्लो नूनमव्याकृतमावतु ५० पिन्नॆयतिङ्कल् निन्नुण्टायि महत्तत्त्व मॆन्नततिङ्कॆल् निन्नुण्टायि सूत्रवु । सर्वात्मकमाय लिंगमतिल् निन्नुर्वीपते ! पुनरुण्टाय्च्चमञ्ञतु अॆन्नतहङ्कारबुद्धिपञ्च प्राणनिन्द्रिय जाल संयुक्तमायॊन्नल्लो । जन्म मृति सुख दुःखादि-कळुण्टु निर्म्मलन्मार् जीवनॆन्नु चॊल्लुन्नितु । चॊल्लावतल्लातनाद्य विद्याख्ययॆ चॊल्लुन्नु कारणोपाधियॆन्नु चिलर् । स्थूलवु सूक्ष्मवु कारणमॆन्नतु मूलमां चित्तिनुळ्ळोरुपाधि त्रयं। ऐन्निवट्टाल् विशिष्टं जीवनायतु मन्यूननां परन् तद्वियुक्तन् विभो ! सर्वं प्रपञ्चत्तिनु बिम्ब भूतनाय् सर्वोपरि स्थितनाय् सर्व साक्षियाय् तेजोमयनां परन् परमात्मावु राजीव लोचननाकुन्न नीयल्लो । निङ्कल् निन्नुण्टाय्वरुन्नितु लोकङ्ङळ् निङ्कल् प्रतिष्ठित मायिरिक्कुन्नतु ६० निङ्कलत्ते लयिक्कुन्नतुमॊक्कवे निन् कळियाकुन्नतॊक्कॆयोक्कुं विधौ । कारणमॆल्लाट्टिनु भवान् निर्ण्णयं

आप दोनों को छोड़कर और कुछ न कहीं दिखाई दिया न सुनने में ही आया है। हे जगत् के स्वामी ! ऐसे आपको पहचान कर कैसे आपकी सेवा की जा सकती है ! माया से आच्छादित आप ही तो निस्संदेह अव्याकृत (वेदान्त शास्त्र में प्रसिद्ध बीजरूप अज्ञान) कहलाते हैं। ५० फिर उसी (अव्याकृत) से महत्तत्व उत्पन्न हुआ और उससे सूत्र बना। हे भूमिपति ! फिर उसी से सर्व वस्तुओं के आत्मा स्वरूप लिंग की उत्पत्ति हुई। इसी को निर्मल स्वभाववाले अहंकार बुद्धि, पंचप्राण, पंचेन्द्रिय आदि से संयुक्त तथा जन्म-मृत्यु, सुख-दुखों वाला जीवन कहते हैं। अकथनीय अनाद्यविद्या को कुछ लोग 'कारणोपाधि' की संज्ञा देते हैं। स्थूल, सूक्ष्म और कारण ये मूल स्वरूप चित् की तीन उपाधियाँ हैं। जीवन इनसे विशिष्ट है। हे प्रभु ! परिपूर्ण 'पर' उससे विमुक्त है। सर्व प्रपंचों के लिए बिम्ब बनकर, सर्वोपरि सबके लिए साक्षी बनकर रहनेवाले तेजोमय परमात्मा जो 'पर' हैं, कमल जैसे नेत्रवाले आप ही हैं। संपूर्ण लोक आपसे उद्भूत होते हैं और आप ही में प्रतिष्ठित हैं। ६० आप ही में सबका लय भी होता है। गहराई से विचार करें तो ये सब कुछ आपकी ही लीलाएँ हैं। हे नारायण ! हे नरक-विनाशक ! हे नरश्रेष्ठ !

नारायण ! नरकारे ! नराधिप ! जीवनुं रज्जुविङ्कल् सर्प्पमॆन्नुळ्ळ भावन कॊण्टु भयत्तॆ वहिक्कुन्नु । नेरे परमात्मा ञानॆन्नऱियुम्पोळ् तीरुं भवभय मृत्यु दुःखादिकळ् । त्वल्क्कथा नाम श्रवणादि कॊण्टुटनुळ् क्काम्पिलुण्टाय् वरुं क्रमाल् भक्तियुं । त्वल्पाद पङ्कज भक्ति मुळ्क्कुम्पोळ् त्वल् बोधवुं मनक्काम्पिलुदिच्चीटुं । भक्ति मुळ्त्तु तत्वज्ञानमुण्टायाल् मुक्तियुं वन्नीटु मिल्लॊरु संशयं । त्वल् भक्त भृत्यभृत्यन्मारिलेकनॆन्नल्पज्ञनामॆन्नॆयुं करुतेणमे । माययालॆन्नॆ मोहिप्पियातॆ जगन्नायक ! नित्यमनुग्रहिक्केणमे । त्वन्नाभि पङ्कजत्तिङ्कल् निन्नेकदा मुन्नमुण्टायि चतुर्म्मुखन् मल्पिता ७० निन्नुटॆ पौत्रनाय् भक्तनाय् मेविनोरॆन्नॆयनुग्रहिक्केणं विशेषिच्चुं। पिन्नॆयुं पिन्नॆयुं वीणु नमस्करिच्चॆन्निवण्णं पऱञ्ञीटिनान् नारदन् । आनन्द बाष्प परिप्लुत नेत्रनाय्वीणाधरन् मुनि पिन्नॆयुं चॊल्लिनान्। इप्पोळिविटेक्कु ञान् वन्न कारणमुल्पल संभवन् तन्टॆ नियोगत्ताल् । रावणनॆ क्कॊन्नु लोकङ्ङळ् पालिप्पान् देवकळोटरुळ् चॆय्ततु कारणं मर्त्यनाय् वन्नु जनिच्चु दशरथ पुत्रनायॆन्नतो

निस्संदेह आप सबके लिए कारणभूत हैं। रज्जु में सर्प की मिथ्या भावना से जीवन भयाक्रान्त है। किन्तु सीधे मैं ही परमात्मा हूँ, का बोध उत्पन्न होने पर मृत्यु, दुःख आदि से उत्पन्न सांसारिक भय दूर हो जाता है। आपकी कथा एवं नाम-श्रवण से धीरे-धीरे मन में भक्ति उत्पन्न होती है और आपके पाद-पंकजों के प्रति भक्ति बढ़ने पर आपका स्वरूपज्ञान मन में उदित होता है। भक्ति बढ़कर स्वरूप ज्ञान के उदय मात्र से मुक्ति प्राप्त हो जाएगी, इसमें कोई संदेह नहीं है। मुझ अल्पज्ञ को अपने भक्त दासों में से एक मान लेने की कृपा करें। हे जगत् के स्वामी ! अपनी माया से मुझे मोहित न करें, अपितु नित्य अनुगृहीत करें। पूर्व में एक बार आपकी नाभि में स्थित पंकज से मेरे पिता चतुरानन (ब्रह्मा) उत्पन्न हुए थे। ७० –नित्य भक्ति का आधार लेकर रहनेवाले अपने पौत्र मुझ पर विशेष अनुग्रह दिखाएँ। इस प्रकार कहते हुए बार-बार नारद जी (भूमि पर) गिर-गिर कर नमस्कार करते रहे। आनंदाश्रु से परिपूर्ण नेत्रोंवाले वीणाधारी मुनि फिर कहने लगे—पद्मसंभव (ब्रह्मा) के आदेश से मैं अब यहाँ (आपके पास) आ उपस्थित हुआ हूँ। रावण का वध करके लोक-रक्षा करने की देवों से प्रतिज्ञा करने के कारण ही आप मानव रूप में दशरथ-पुत्र बनकर पैदा हुए हैं। यह तो सर्वविदित बात है।

निश्चयमेङ्किलुं पूज्य नायोरु भवानेद्दशरथन् राज्य रक्षार्थमभिषेक मिक्कालं चेय्युमाऱोन्नोरुम्पेट्टिरिक्कुन्नतु नीयुमतिन्ननुकूलनाय् वन्निट्टुं। पिन्नेद्दशमुखने कोन्नु कोळ्ळुवानेन्नु मवकाश मुन्टाय् वरायल्लो। सत्यत्ते रक्षिच्चु कोळ्ळुकेन्नेन्नोटु सत्वरं चेन्नु परऽकेन्नरुळ् चेय्तु ८० सत्यसंधन् भवानेङ्किलुं मानसे मर्त्त्यजन्मं कोण्टु विस्मृतनाय् वरुं। इत्तरं नारदन् चोन्नतु केट्टति-नुत्तरमायरुळ् चेय्तितु राघवन्। सत्यत्ते लंघिक्कयिल्लोरु नाळुं ञान् चित्ते विषादमुण्टाकाय्कतु मूलं। काल विळंबनमेन्तिनेन्नल्लल्ली मूलमतिनुण्टतुं परऽञ्ञीटुवन्। कालावलोकनं कार्य्यं साध्यं नृणां कालस्वरूपनल्लो परमेश्वरन्। प्रारब्ध कर्म्म फलौघ क्षयं वरुन्नेरत्तोळिञ्ञु मटावतिल्लाक्कुंमे। कारण मात्रं पुरुष प्रयास-मेन्नारु मऱियातिरिक्कयुमल्लल्लो। नाळे वनत्तिनु पोकुन्नतुण्टु ञान् नाळीक लोचनन् पादङ्ङळ् तन्नाण। पिन्नेच्चतुर्द्दश संवत्सरं वनं तन्निल् मुनि वेषमोटु वाणीटुवन्। ऐन्नाल् निशाचर वंशवुं रावणन् तन्नेयुं कोन्नु मुटिक्कुन्नतुण्टल्लो ९० सीतयेक्कारण भूतयाक्किक्कोण्टु यातुधानान्वय नाशं वरुत्तुवन् सत्यमितेन्नरुळ्

किन्तु वर्तमान में राज्य-रक्षार्थ दशरथ पूजनीय आपका राज्याभिषेक करने की तैयारी में हैं। आप उनके अनुकूल हो जाएँगे तो दशमुख को मारने के लिए कभी अवसर नहीं मिलेगा। मुझे यह आदेश दिया गया है कि मैं आकर आपसे सत्य की रक्षा करने का आग्रह करूँ। ८० आप सत्य के पालक एवं रक्षक हैं, पर मर्त्य जन्म के कारण मन में विस्मृति आ सकती है। इस प्रकार नारद के कथन को सुनकर उसका उत्तर राम ने इस प्रकार दिया—मैं कभी सत्य का उल्लंघन नहीं करूँगा। यह सोचकर मन में विषाद लाने की आवश्यकता नहीं है। काल-विलंब करने का कारण है, वह मैं बताऊँगा। समयानुकूल कार्य करने से सिद्धि प्राप्त होती है। परमेश्वर तो कालस्वरूप ही है। किन्तु प्रारब्ध कर्मफल के परिणाम स्वरूप होनेवाले क्षय-नाश का निवारण कोई नहीं कर सकता। मनुष्य का प्रयास केवल निमित्त-मात्र है, इस बात से कोई अनभिज्ञ नहीं है। कमल लोचन (विष्णु) के चरणों की सौगंध है, मैं कल वन को जानेवाला हूँ। फिर चौदह वर्ष मुनिवेश धारण कर मैं वन में बिताऊँगा। मुझसे राक्षसवंश तथा रावण का वध किया जाएगा। ९० सीता को कारणभूत बनाकर राक्षस वंश का मैं क्षति-नाश कर डालूंगा। यह सत्य बात है। राम

चेय्तु रघुपति चित्त प्रमोदेन नारदनन्नेरं राघवन् तन्ने प्रदक्षिणवुं चेय्तु वेगेन दण्ड नमस्कारवुं चेय्तु देवमुनीन्द्रननुज्ञयुं कैकोण्टु देवलोकं गमिच्चीटिनानादराल् । नारद राघव संवादमिङ्ङने न्नेरे पठिक्कतान् केळ्क्कतानोर्क्कतान् भक्ति कैकोण्टु चेय्युन्न मनुष्यनु मुक्ति लभिक्कुमति निल्ल संशयं । शेष मिन्नुं कथकेळ्क्कणमेङ्किलो दोषमकलुवान् चोल्लुन्नतुण्टु ञान्:- ९७

श्रीरामाभिषेकारंभं

ऒङ्किलो राजा दशरथनेकदा सङ्कलितानंदमाम्मारिरिक्कुम्पोळ् पङ्कज संभव पुत्रन् वसिष्ठनां तन् कुलाचार्यने वन्दिच्चु चोल्लिनान्—पौरजनङ्ङळुं मंत्रिमुख्यन्मारुं श्रीरामने प्रशंसिक्कुन्निते प्पोळुं । ओरो गुण गणं कण्टवर्क्कुण्ट कतारिलानन्द मतिनिल्ल संशयं । वृद्धनाय् वन्नितु ञानुमोट्टाकयाल् पुत्ररिल् ज्येष्ठनां रामकुमारने पृथ्वी परिपालनार्थमभिषेक मेत्रयुं वेकाते चेय्यणमेन्नु ञान् कल्पिच्चतिप्पोळु तङ्ङनेयेङ्किलतुळ्प्पूविलोर्त्तु नियोगिक्कयुं वेणं । इप्रजकळ्क्कनुरागमवङ्कलुण्टेप्पोळुमेट्मतोर्त्तु कण्टीलयो । वन्नील

के मुंह से यह सुनकर मन में प्रसन्न हो नारद जी ने तुरन्त उनकी प्रदक्षिणा की और दण्डवत् नमस्कार किया । (फिर) देव-मुनि नारद (राम से) अनुमति लेकर सादर देवलोक को चले गये । इस नारद-राघव संवाद को जो कोई भक्तिपूर्वक पढ़ता है, सुनता है या स्मरण करता है, वह निस्संदेह मुक्ति प्राप्त करेगा । (शिव जी पार्वती से कहते हैं) सारे पापों को दूर करनेवाली शेष कथा भी आज ही सुनने की इच्छा है तो मैं बता दूँगा । ९७

श्रीराम जी के अभिषेक का आरंभ

तो सुनो, एक दिन जब राजा दशरथ प्रसन्न चित्त हो बैठे थे, तब उन्होंने पद्मसंभव के पुत्र तथा अपने कुलगुरु वसिष्ठ की वन्दना करते हुए कहा—सारे पुरवासी तथा मंत्रिप्रमुख लोग निरन्तर श्रीराम की प्रशंसा करते हैं । इसमें कोई संदेह नहीं, कि राम के प्रत्येक गुण से प्रभावित हो वे मन ही मन संतुष्ट हैं । मैं वार्द्धक्य में पहुँच गया हूँ । इसलिए मैंने मन में सोच रखा है कि चारों पुत्रों में ज्येष्ठ कुमार राम का पृथ्वी का शासन संभालने के लिए राज्याभिषेक कर लूं । मेरा यह संकल्प जल्दी से जल्दी कैसे पूरा किया जाए, इसका उपाय सोचकर बता देना होगा । सारी प्रजा का उनके प्रति अतीव अनु-

मातुलनेक्काण्मतिनेऱ् मुन्नमे पोय भरत शत्रुघ्नन्मार्
वन्नु मुहूर्त्तं मट्टुत्त दिनं तन्ने पुण्यमतीव पुष्यं नल्ल नक्षत्रं । १०
अेन्नालवर् वरुवान् पार्क्कयिल्लिनि यौन्नु कौण्टुमतु निर्णयं
मानसे । अेन्नालतिनु वेण्टुन्न संभारङ्ङळिन्नु तन्ने बत
संभरिच्चीटणं । रामनोटुं निन्तिरुवटि वैकाते सामोदमिप्पोळे
चेन्नरियिक्कणं । तोरण पंक्तिकळेल्लामुयर्त्तुक चारु
पताककळोटुमत्युन्नतं घोरमायुळ्ळ पेरुम्पऱ् नादवुं पूरिक्क दिक्कु
कळौक्कॆ मुळङ्ङवे । मन्नवनाय दशरथनादराल् पिन्नेसुमन्त्ररे
नोक्कियरुळ् चेय्तु । ऐल्लां वसिष्ठनरुळ् च्चेय्युं वण्णं कल्याण मुळ्
ळकौण्टीरुक्कि क्कौटुक्क नी । नाळे वेणमभिषेकमिळमयाय् नाळीक
नेत्रनां रामनु निर्णयं । नन्दितनाय सुमन्त्ररुमन्नेरं नन्दिच्चु
चौन्नान् वसिष्ठनोटादराल्—अेन्तौन्नु वेण्टुन्नतेन्नरुळ् चेय्तालु
मन्तर मेन्नियेे संभरिच्चीटुवन् २० चित्ते निरूपिच्चु कण्टु
सुमन्त्ररोटित्थं वसिष्ठ मुनियरुळ् चेय्तु—केळ्क्क नाळेप्पुलर् काले
चमयिच्चु चेल्कण्णिमाराय कन्यकमारेल्लां मध्य कक्ष्ये पतिन्नारु
पेर् निल्कणं मत्त गजङ्ङळे प्पोन्नणियिक्कणं । ऐरावत कुल जातनां

राग एवं लगाव है, यह आप भी देख रहे हैं। अपने मामा से भेंट करने गये भरत-शत्रुघ्न, इतने दिनों के बाद भी वापस नहीं आये हैं। (किन्तु) अगले दिन पुण्यप्रद एवं योग्य पुष्य नक्षत्र का शुभ मुहूर्त है। १० अत: मन में विचार कर लिया है कि अब किसी भी हालत में उनके आगमन की प्रतीक्षा नहीं करूँगा। इसलिए उसके लिए आवश्यक सभी सामग्रियाँ आज ही एकत्रित कर लेनी चाहिए। और अविलंब आप ही को जाकर राम को यह सुखद समाचार सुनाना होगा। तोरणों पर अत्युन्नत एव सुन्दर पताकाएँ उठायी जाएँ। सारी दिशाओं को गुंजित करते हुए गंभीर नगाड़े जोर-जोर से बजा दें। फिर राजा दशरथ ने सादर सुमंत्र की ओर देखकर कहा—वसिष्ठ जी के आदेशानुसार सभी मंगलदायक वस्तुएं सजा दो, क्योंकि कल ही राजीवनेत्र राम का युवराज के रूप में अभिषेक हो जाना चाहिए। यह सुनकर प्रसन्न मुद्रा में सुमन्त्र ने वसिष्ठ जी से सादर कहा—आवश्यक सभी वस्तुएँ बता दीजिए, बिना किसी हेर-फेर के मैं सब कुछ जुटा लूँगा। २० मुनि वसिष्ठ ने खूब मन में विचार करके सुमंत्र से इस प्रकार कहा—सुनो, कल प्रात:काल ही सोलह कोमलाक्षी कन्याओं को सज-धज के साथ मध्यकक्ष (अन्त:पुर) में खड़ा कर देना चाहिए। मातंगों को

नाल्कीम्पनाराल् वरेणमलङ्करिच्चङ्कणे। दिव्य नाना तीर्त्थ वारि पूर्ण्णङ्ङळाय् दिव्य रत्नङ्ङळमुळ्ळत्ति विचित्रमाय् स्वर्ण कलश सहस्रं मलयज पर्ण्णङ्ङळ् कोण्टु वाय्क्केटि वच्चीटणं। पुत्तन् पुलित्तोल् वरुत्तुक मून्निह च्छत्रं सुवर्ण दण्डं मणिशोभितं। मुक्ता मणि माल्य राजित निर्म्मल वस्त्रङ्ङळ् माल्यङ्ङळाभरणङ्ङळुं सल्कृतन्मारां मुनिजनं वन्निह न्निल्क्क कुश पाणिकळाय् सभान्तिके। नर्त्तकिमारोटुं वारवधूजनं नर्त्तक गायक वैणिक वर्गावुं ३० दिव्य वाद्यङ्ङळेल्लां प्रयोगिक्कण- मुर्वीश्वराङ्कणे न्निन्नु मनोहरं। हस्त्यश्वपत्तिरथादि महाबलं वस्त्राद्यलङ्कारमोटु वन्नीटणं। देवालयङ्ङळ् तोरुं बलि पूजयुं दीपावलिकळुं वेणं महोत्सवं। भूपालरेयुं वरुवान् नियोगिक्क शोभयोटे राघवाभिषेकार्त्थमाय्। इत्थं सुमन्त्ररेयुं नियोगिच्चति सत्वरं तेरिल् क्करेरि वसिष्ठनुं दाशरथिगृहमेत्रयुं भास्वरमाशु सन्तोषेण सम्प्राप्य सादरं। न्निन्नतु न्नेरमरिञ्ञु रघुवरन् चेन्नुटन् दण्ड नमस्कारवुं चेय्तान्। रत्नासनवुं कोटुत्तिरुत्तित्तदा

सोने से सुसज्जित किया जाना चाहिए। ऐरावत सदृश चार गजवरों को सजाकर प्रांगण में ला खड़ा करना चाहिए। नाना दिव्यतीर्थों के जल से परिपूर्ण, दिव्य रत्नों से समालंकृत एवं मलयज (चन्दन) के पर्णों से मुखाच्छादित सहस्र स्वर्ण-कलश तैयार रखने होंगे। बिलकुल नये तीन मृगचर्म मँगाकर लाने होंगे। छत्र, मणियों से शोभित स्वर्ण दण्ड, मुक्ताओं, रत्नों एवं पुष्पमालाओं से सुसज्जित एवं निर्मल वस्त्र, मालाएँ, आभूषण सब जुटा रखें। हाथ में कुशधारी पुण्यश्लोक मुनिजनों, नर्तकियों, वारवधुओं, नर्त्तकों, गायकों एवं वणिकों से सभा सुशोभित रहे। ३० भूमिपति के प्रांगण में सभी दिव्य वाद्य सुन्दर ढंग से बजाये जाने चाहिए। हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि सैनिकों को नाना वस्त्रों से समालंकृत हो उपस्थित होना चाहिए। प्रत्येक देव-मंदिरों में बलि-पूजाएँ, दीपावलियाँ और महोत्सव सबका समुचित आयोजन रहे। राम के अभिषेक की शोभा बढ़ाने के लिए सभी भूपालों को निमंत्रित किया जाना चाहिए। इस प्रकार सुमंत्र को आदेश दे तुरन्त ही वसिष्ठ रथ पर आरूढ़ हो गये और प्रसन्न चित्त हो अत्यन्त तीव्रगति से दाशरथी राम के भास्वर भवन में पहुँचे। वसिष्ठ जी को आकर खड़े देखकर राघव उठकर उनके पास आये और दण्डवत् नमस्कार किया। उन्हें रत्न सिंहासन पर बिठा दिया और पत्नी सहित विस्तृत कलश के

पत्नियोटुमति भक्त्या रघूत्तमन् पौल्ककलश स्थिर निर्म्मल वारिणा तृक्काल् कळुकिच्चु पादाब्जतीर्त्थवुं उत्तमांगेन धरिच्चु विशुद्धनाय् चित्त मोदेन चिरिच्चरुळिच्चेय्तु ४० पुण्य वानायेनटियनतीव केळिन्नु पादोदकतीर्त्थं धरिक्कयाल् । एन्निङ्ङने रामचन्द्र वाक्यं केट्टु तन्नाय्च्चिरिच्चु वसिष्ठनरुळ् चेय्तु— नन्नुनन्नेत्रयुं निन्नुटे वाक्कुकळोन्नुण्टु चोल्लुन्नतिप्पोळ् नृपात्मज ! त्वत्पाद पङ्कजतीर्त्थं धरिक्कयाल् दर्प्पक वैरियुं धन्य नायीटिनान् त्वत्पाद तीर्त्थ विशुद्धनाय् वन्नितु मत्पितावाय विरिञ्चनुं भूपते ! इप्पोळ् महाजनङ्ङळ्क्कुपदेशार्त्थमत्भुत विक्रमा ! चोन्नतु नीयेंटो ! नन्नायरिञ्ञिरिक्कुन्नितु निन्ने ञानिन्नवनाकुन्नतेन्नतु- मिन्नेंटो ! साक्षाल् परब्रह्ममां परमात्मावु मोक्षदन् नाना जगन्मयनीश्वरन् लक्ष्मी भगवतियोटुं धरणियिलिक्कालमत्र जनिच्चितु निश्चयं देवकार्य्यार्त्थं सिद्ध्यर्त्थं करुणया रावणने कोन्नु तापं केट्टुप्पानुं ५० भक्तजनङ्ङळ्क्कु मुक्ति सिद्धिप्पानुमित्थ- मवतरिच्चीटिन श्रीपते ! देव कार्य्यार्त्थमतीव गुह्यं पुनरेवं वेळिच्चत्तिटाञ्ञतु ञानिदं । कार्य्यङ्ङळेल्लां अनुष्ठिच्चु साधिक्क

निर्मल जल से उनका पाद-प्रक्षालन किया तथा उस पादाब्ज तीर्थ को उत्तम अंगों पर डालकर पवित्र हुए। फिर प्रसन्न मन से मंद मुस्कान लेकर कहा। ४० —आपके पादोदक तीर्थ से अभिषिक्त होने से आज यह दास पुण्यात्मा बन गया। श्रीरामचन्द्र जी के इस प्रकार का वाक्य सुनकर खूब हँसी हँसते हुए वसिष्ठ बोले—हे नृपात्मज ! आपके शब्द सुन्दर हैं, सुन्दर हैं। किन्तु मुझे आज इतना ही कहना है कि आपके चरण-कमलों का तीर्थ धारण करके कामदेव के शत्रु शिव भी अपने को धन्य समझते हैं। हे महाराज ! आपके पादतीर्थ में मेरे पिता ब्रह्मा भी पवित्र हो गये हैं। हे अद्भुत विक्रम ! आज वरिष्ठ जनों के लिए उपदेशार्थ आपने यह कहा है। मैंने आज आपको अपने वास्तविक रूप में खूब पहचान लिया है कि साक्षात् परब्रह्म जो परमात्मा, मोक्षप्रद, नाना जगत् में व्याप्त हैं, अपनी करुणा के वशीभूत हो देवताओं के कार्य को सिद्ध करने और रावण का वध करके उनके ताप को मिटाने के लिए निश्चय ही इस समय लक्ष्मी भगवती के साथ भूमि पर अवतार ले चुके हैं। ५० भक्त जनों को मुक्ति दिलाने के इस प्रकार अवतार लेने वाले हे श्रीपति ! देवताओं के अतीव गुप्त कार्य के लिए (आपके इस अवतार रूप) इस रहस्य को

मायया माया मनुष्यनाय् श्रीनिधे ! शिष्य नल्लो भवानाचाय
नेष ञान् शिक्षिक्क वेणं जगद्धितार्त्थं प्रभो ! साक्षाल्
चराचराचार्य्यनल्लो भवा नोर्किल् पितृणां पितामहनुं भवान् ।
सर्वेष्वगोचरनायन्तर्यामियाय् सर्वं जगद्यन्त्र वाहकनाय नी । शुद्ध
सत्वात्मक मायोरु विग्रहं धृत्वानिजाधीन संभवनायुटन् मर्त्त्य वेषेण
दशरथ पुत्रनाय् पृथ्वीतले योगमायया जातनां । ऎन्नतु मुन्ने
धरिच्चिरिक्कुन्नु ञानॆन्नोटु धाताव् तानरुळ् चेय्कयाल्
ऎन्तद्रिञ्ञत्ते सूर्यान्वयत्तिनु मुन्ने पुरोहित नायिरुन्नु मुदा ६०
ञानुं भवानोटु संबंध कांक्षया नूनं पुरोहित कर्म्ममनुष्ठिच्चु
निन्द्यमायुळ्ळतु चेय्ता लॊटुक्कत्तु नन्नाय् वरिकिलतुं पिळयल्लल्लो ।
इन्नु सफलमाय् वन्नु मनोरथ मॊन्नपेक्षिक्कुन्नतुण्टु ञानिनियुं
योगेश ! ते महामाया भगवति लोकैकमोहिनि मोहिप्पियाय्कमां ।
आचार्य निष्कृति कामन् भवानेङ्किलाशयं मायया मोहिप्पियाय्कमे ।

कहीं प्रकट नहीं किया । हे लक्ष्मीपति ! आप माया मनुष्य बनकर अपनी माया से सारे कार्यों का अनुष्ठान कीजिए । आप तो शिष्य हैं और मैं आपका आचार्य हूँ ! हे प्रभो ! यह दास आपको दण्ड भी देगा ! (वास्तव तो यह है) कि आप साक्षात् चराचरों के आचार्य हैं और ध्यानपूर्वक देखा जाए तो आप पिता पक्ष से मेरे पितामह हैं । आप सर्वेश्वर हैं । संपूर्ण जगत् के यंत्रवाहक आप सदा अगोचर और कभी अन्तर्यामी बनकर कार्य करते हैं । शुद्ध सत्वात्मक रूप को ब्रह्मा के अधीन कर आपने जन्म लिया । मैंने ब्रह्मा के उपदेश से यह पहले ही जान लिया था कि आप मनुष्य रूप से पृथ्वीतल पर अपनी योगमाया के सहारे दशरथ पुत्र बन जन्म लेनेवाले हैं । यह पहले ही समझकर मैंने प्रसन्न हो सूर्यवंश का पौरोहित्य स्वीकार किया था । ६० आपसे संबंध स्थापित करने की आकांक्षा लेकर निश्चय ही मैंने पुरोहित के कर्मों का अनुष्ठान किया । निन्दनीय कार्य का भी अंत अगर भला बना, तो वह (नीच कार्य) पाप नहीं समझा जाता । आज मेरा मनोरथ सफल हुआ । मैं आज आपसे एक प्रार्थना करूँगा—हे योगेश ! आपकी समस्त संसार को मोहित करनेवाली भगवती महामाया मुझे मोहित न करने पाये । आप कामनाओं से मुक्त करनेवाले आचार्य हैं तो मेरे मन को माया से मोहित न करवाइएगा । आपके संसर्ग से अब मैं सर्वमुक्त हूँ । अब आपसे मैं क्या कहूँ । मैं कहाँ और राम ! आप कहाँ ! (हम दोनों में इतना अन्तरहै कि मैं आपको क्या कहकर समझाऊँ !)

त्वल् प्रसंगाल् सर्वं मुक्तमिप्पोळिदम प्रवक्तव्यं मयाराम कुत्रचिल् राजा दशरथन् चोन्नतु कारणं राजीव नेत्र ! वन्नेनिविटेक्कु ञान् उण्टभिषेकमट्टुत्त नाळेन्नतु कण्टु चोल्वानायुळरि वन्नेनहं । वैदेहियोट्टुमुपवासवुं चेय्तु मेदिनि तन्निल् शयनवुं चेय्यणं । ब्रह्म-चर्य्यत्तोटिरिक्क ञानोरोरो कर्म्मङ्ङळ् चेन्नङ्ङोरुक्कुवन् वैकाते ७० वन्नीटुषस्सिनु नीयरुळ् चेय्तु चेन्नु तेरिल्करेरि मुनिश्रेष्ठनुं । पिन्ने श्रीरामनुं लक्ष्मणन् तन्नोटु तन्ते चिरिच्चरुळ् चेय्तु रहस्यमाय् । तातनेनिक्कभिषेकमिळमयाय् मोदेन चेय्युमट्टुत्त नाळ् निर्ण्णयं । तत्र निमित्तमात्रं ञानतिन्नोरु कर्त्तावु नी राज्य भोक्तावुं नीयत्रे । वत्स ! ममत्वं बहिः प्राणनायकालुत्सवत्तिन्नु कोप्पिट्टु कोळ्काशु नी । मत्समनाकुन्नतुं भवान् निश्चयं मत्सरिप्पानिल्लतिन्नु नम्मोटारुं । इत्तरमोरोन्नरुळ् चेय्तिरिक्कुम्पोळ् पृथ्वीन्द्र गेहं प्रविश्य वसिष्ठनुं वृत्तान्तमेल्लां दशरथन् तन्नोटु चित्तमोदालरियिच्चु समस्तवुं । राजीव संभवनन्दनन् तन्नोटु राजा दशरथनानन्द पूर्वकं राजीवनेत्राभिषेक वृत्तान्तङ्ङळ् पूजा विधानेन चोन्नतु केळ्क्कयाल् ८० कौसल्ययोटुं सुमित्र-

---

हे कमललोचन ! राजा दशरथ के कहने से मैं यहाँ आगत हूँ। आपका अभिषेक अगले दिन होनेवाला है, यह बात बताने के लिए मैं यहाँ भटकता आया हूँ। वैदेही के साथ उपवास करते हुए मेदिनी (भूमि) पर आज शयन करना चाहिए। आप ब्रह्मचर्य का पालन करते रहिए, मैं (आवश्यक) प्रत्येक कार्य का ठीक प्रबन्ध करने अविलंब वहाँ जा रहा हूँ। ७० 'आप उषाकाल में (वहाँ) आ जाइए' इतना कहकर मुनिश्रेष्ठ जाकर रथ पर आरूढ़ हो गये। फिर राम ने लक्ष्मण से मुस्कराते हुए अत्यन्त गुप्त रूप में बताया—अगले दिन निश्चय ही पिता जी सानंद मुझे युवराज के रूप में अभिषेक करेंगे। वहाँ मैं निमित्त मात्र के लिए हूँ। कर्ता और राज्य के भोक्ता तुम्हीं हो। हे वत्स ! ममत्व को त्यागकर प्राणाधार पिता से किये जानेवाले उत्सव को (धारण करने के लिए) तुम आवश्यक प्रबंध तुरन्त करो। तुम मेरे ही समान हो और निश्चय ही इस बात में हमसे कोई स्पर्धा नहीं कर सकता। इस प्रकार जब (राम-लक्ष्मण) एक-एक बात कहते बैठे थे तब वसिष्ठ महाराज के महल में प्रविष्ट हुए और दशरथ को सारा हाल बड़ी प्रसन्नता से कह सुनाया। राजीवसंभव के नंदन (वसिष्ठ) से राजीवनेत्र (राम) के अभिषेक के पूरे समाचार यथाविधि सुनने से

योटुं चेन्नु कौतुकमोटङ्ङियिच्चानोरु पुमान् । सम्मोद मुळ्क्कोण्टतु केट्ट नेरत्तु निर्म्मल मायोरु माल्यवुं नल्किनाऱ् । कौसल्ययुं तनयाभ्युदयार्त्थमाय् कौतुकमोटु पूजिच्चितु लक्ष्मियें— नाथे ! महादेवी ! नीयेतुणयेन्नु चेतसि भक्त्या वणङ्ङि वाणीटिनाळ् सत्य सन्धन् नृपवीरन् दशरथन् पुत्राभिषेकं कळिच्चीटु मेन्नुमे केकय पुत्रीवशगतनाकयालाकुल मुळ्ळल् वळरुन्नितेट्वुं दुर्ग्गे ! भगवति दुष्कृत नाशिनि ! दुर्गति नीक्कित्तुणच्चीटुकंबिके ! कामुकनल्लो नृपति दशरथन् कामिनि कैकेयि चित्तमेन्तीश्वरा ! नल्लवण्णं वरुत्तेणमेन्निङ्ङने चोल्लि विषादिच्चिरिक्कुन्नतु नेरं । ८९

रामाभिषेक विघ्नं

वानवरेल्लारुमोत्तु निरूपिच्चु वाणी भगवति तन्नोटपेक्षिच्चु लोकमातावे ! सरस्वती ! भारती ! वेगालयोद्ध्यक्केळुन्नळ्ळुकवेणं । रामाभिषेक विघ्नं वरुत्तीटुवा नामवरारुं मट्टिल्ल निरूपिच्चाल् । चेन्नुटन् मन्थर तन्नुटे नाविन्मेल् तन्ने

राजा दशरथ ने बड़े आनंद के साथ । ८० —कौसल्या तथा सुमित्रा के पास आकर बड़े कुतूहल के साथ समाचार कह सुनाये । बड़े आनंद के साथ सुनकर उन्होंने (राजा को) एक पवित्र पुष्पमाला पहनायी । अपने पुत्र के मंगल की कामना करते हुए कौसल्या ने लक्ष्मी की पूजा की । वे मन में उद्भूत भक्ति से आप्लावित हो प्रार्थना करने लगीं— हे स्वामिनी ! हे महादेवी ! केवल आप ही का भरोसा है । सत्यनिष्ठ राजा दशरथ निश्चय ही पुत्र का अभिषेक करेंगे । (किन्तु) उन्हें केकयपुत्री (कैकेई) के वश में पड़े जानकर मेरे मन में व्याकुलता बढ़ती ही रहती है । हे दुर्गे ! हे अंबिके ! पापनाशिनी हे भगवती ! मेरी दुर्गति को दूरकर मुझे अनुगृहीत करो । राजा दशरथ तो कामी हैं और कामिनी कैकेई के मन का भाव कौन समझ सकता है ! (अतः) देवी के सामने मंगल के लिए प्रार्थना करते हुए कौसल्य के खिन्न हो बैठते समय । ८९

राज्याभिषेक में विघ्न

समस्त देवताओं ने एकत्र हो विचार करके वाणी देवी (सरस्वती) से प्रार्थना की—हे लोकमाता ! हे सरस्वती ! हे भारती ! (आपको) तुरन्त ही अयोध्या पधारना होगा । बहुत सोच-विचार

वसिच्चवळॆक्कॊण्टु चॊल्लिच्चु पिन्नॆ विरवोटु कैकेयियॆ कोण्टु तन्नॆ पऱयिच्चु कॊण्टु मुटक्कणं। पिन्नॆयिङ्ङोट्टॆळुन्नॆळ्ळां मटि क्करुतॆन्नमरन्मार् परञ्ञोरनन्तरं वाणियु मन्थरतन् वदनान्तरे वाणीटिनाळ् चॆन्नु देव कार्य्यार्त्थमाय्। अप्पोळ् त्रिवक्रयां कुब्जयु मानसे कल्पिच्चुऱप्पिच्युटन् प्रासादमेऱिनाळ्। वेगेन चॆन्नॊरु मन्थरयॆक्कण्टु कैकेयितानुमवळोटु चॊल्लिनाळ्-मन्थरे! चॊल्लु नी राज्य मॆल्लाटवु मॆन्तॊरु मूलमलङ्करिच्चीटिनान् १० नाळीक लोचननाकिय रामनु नाळॆयभिषेकमुण्टन्नु निर्ण्णयं। दुर्भगे! मूढे! महागर्विते! किटन्नॆप्पोळुं नीयुऱङ्ङीटॊन्नऱियातॆ। एऱियॊरापत्तु वन्नटुत्तू निनक्कारुमॊरु बन्धुविल्लॆन्नु निर्ण्णयं। रामाभिषेकमटुत्त नाळुण्टॆटो! कामिनिमार् कुल मौलिमाणिक्यमे! इत्थमवळ् चॊन्नतु केट्टु संभ्रमिच्चुत्थानवु चॆय्तु केकयपुत्रियुं। चित्रमायॊरु चामीकरनूपुरं चित्तमोदेन नल्कीटिनाळादराल्। सन्तोष मान्तिरिक्कुन्न कालत्तिङ्कलॆन्तॊरु ताप मुपागतमॆन्नु नी

करने पर भी राज्याभिषेक में विघ्न डलवाने के लिए आपके अतिरिक्त कोई दूसरा योग्य पात्र नहीं दिखाई दे रहा। आप सीधे जाकर मंथरा की जिह्वा पर बैठकर उसीसे कहलवाकर और सीधे कैकेई के द्वारा कहलवाकर (राज्याभिषेक) में बाधा डालिए। उसके उपरांत आप सीधे यहाँ वापस आ सकती हैं। इसमें आप उपेक्षा न दिखाएँ। इस प्रकार देवताओं के कहने पर उनकी कार्य-सिद्धि के लिए वाणी देवी मंथरा के मुंह में जा बस गयी। तभी त्रिवक्रा कुब्जा (मंथरा) मन में निर्णय लेकर प्रासाद में प्रविष्ट हुई। शीघ्रगति से आती मंथरा को देखकर कैकेई ने उससे प्रश्न किया—हे मंथरा! जरा बताओ तो सही! आज किस कारण से समस्त नगरी सजायी गयी है? १० (मंथरा ने कैकेई को बताया) यह निश्चय जानो, कल कमललोचन राम का अभिषेक होनेवाला है। हे दुर्भाग्यवती! हे मूर्खे! हे गर्विते! तुम कुछ समझे बिना सदा सोती ही रहती हो। तुम्हारे लिए भारी विपत्ति आ गयी है और तुम यह जान लो कि तुम्हारा कोई अपना नहीं है। हे कामिनियों के कुल के लिए सिरमौर बनकर रहनेवाली (कैकेई)! राम का अभिषेक अगले ही दिन होने को है। इस प्रकार की वाणी सुनकर कैकेई आश्चर्यचकित हो उठ खड़ी हो गयी और प्रसन्नतावश उसे सोने का एक नूपुर पुरस्कार में

चौल्लुवान् कारणं ञानङ्ङीलतिनिल्लोरवकाशमेतुं निरूपिच्चाल्। ऐन्तुटे रामकुमारनोळं प्रियमेन्तुळ्ळिलारेयुमिल्लमटोक्र्क न्नी। अत्रयुमल्ल भरतनेक्काळ् मम पुत्रनां रामने स्नेहमेनिक्केरुं २० रामनुं कौसल्या देवियेक्काळेन्ने प्रेममेरुं नूनमिल्लोरु संशयं भक्तियुं विश्वासवुं बहुमानवुंमित्र मटारेयुमिल्लेन्तरिक न्नी। नल्ल वस्तुक्कळेनिक्कु तन्ने मट्टवल्लवक्कुं कोटुप्पू मम नन्दनन्। इष्ट मिल्लातोरुवाक्कु पडकयिल्लोट्टुमे भेदमवनिल्लोरिक्कलुं अश्रान्तमेन्नेयेत्रे मटिकूटातें शुश्रूष चेय्तु ञायं प्रीतिपूर्वकं। मूढे न्निनक्कोन्तु रामङ्कल् न्निन्नोरु पेटियुण्टावानवकाश मुण्टायतुं सर्वजन प्रियनल्लो ममात्मजन् निर्वैरमानसन् शान्तन् दयापरन्। केकय पुत्रितन् वाक्कुकळ् केट्टळवाकुल चेतसा पिन्नेयुं चोल्लिनाळ्-पापे महाभय कारणं केळ्क्क न्नी भूपतिन्निन्ने वञ्चिच्चतङ्ङीले ? त्वल् पुत्रनाय भरतनेयुं बलाल् तल् प्रियनाय शत्रुघ्ननेयुं नृपन् ३० मातुलनेक्काण्मतिन्नाययच्चतुं चेतसि कल्पिच्चु कोण्टुतन्नेयितुं। राज्याभिषेकं कृतं

दिया। (और पूछा) बड़े हर्षोल्लास के इस समय तुम्हारे द्वारा बड़ी विपत्ति आ गयी, ऐसा कहने का कौन-सा कारण है ? मेरे विचार में उसके लिए कोई कारण दिखाई नहीं दे रहा है। मेरे मन में राम के प्रति जितना वात्सल्य है उतना और किसीके प्रति नहीं, यह तुम जान लो। यही नहीं, मैं भरत से अधिक अपने पुत्र राम को चाहती हूँ। २० इसमें कोई संदेह नहीं कि राम भी कौसल्या से बढ़कर मुझे चाहते हैं। तुम यह भलीभाँति समझ लो कि (राम के मन में) मेरे प्रति जितनी भक्ति, विश्वास एवं आदरभाव है उतना दूसरे के प्रति नहीं है। अच्छी-अच्छी वस्तुएँ प्रथम मुझे देने के उपरांत ही मेरे पुत्र (राम) और किसी को देंगे। वे कभी अप्रिय शब्द नहीं बोलेंगे और उनके मन में कोई भेदभाव नहीं है। वे निरंतर बिना संकोच के प्रीतिपूर्वक अश्रान्त मेरी शुश्रूषा में लगे रहते हैं। हे मूर्खे ! तुम्हें राम के प्रति सशंकित होने की क्या बात है ? मेरे आत्मज (पुत्र) सबके लिए प्रिय हैं, उनके मन में किसी के प्रति विरोध नहीं; वे शान्त तथा दया-शील हैं। कैकेई की बात सुनकर मन में और व्याकुल हो (मंथरा ने) कहा—हे पापी ! मेरे अतीव भय का कारण तुम सुनो। तुमने यह नहीं समझा कि राजा ने तुम्हें धोखा दिया। तुम्हारे पुत्र भरत को तथा उसके प्रिय शत्रुघ्न को राजा ने जबरदस्ती। ३० —मामा से मिलने

रामनेङ्किलो राज्यानुभूति सौमित्रिय्क्कु निर्ण्णयं। भाग्यमत्रे सुमित्रक्कतु कण्टु निर्भाग्ययायोरु त्नी दासियाय् नित्यवु कौसल्य तन्नेप्परिचरिच्चीटुक कौसल्यानन्दनन् तन्नेब् भरतनु सेविच्चु कौण्टु पौरुक्केन्नतु वरु भाविक्कयु वेण्ट राजत्व मेतुमे। त्नाट्टिल् त्निन्नाट्टि कळकिलुमामोरु वाट्टं वरातें वधिच्चीटुकिलुमां। सापत्न्यजात पराभवं कौण्टुळ्ळ तापवु पूण्टु धरणियिल् वाळ्कयिल् नल्लू मरणमतिनिल्ल संशयं चौल्लुवन् ञान् तव नल्लतु केळ्क्क त्नी। उत्साहमुण्टु त्निनक्केङ्किलिक्कालं त्वल् सुतन् तन्ने वाळिक्कुं नरवरन्, रामनीरेळाण्टु कानन वासवु भूमि पालाज्ञया चेय्युमाराक्कणं ४० त्नाट्टवकं भरतन्नु वरुमति प्रौढ कीर्त्या त्निनक्कुं वसिक्कां चिरं; वेणमेन्नाकिलतिन्नोरुपायवु प्राणसमे! तव चौल्लित्तरुवन् ञान्, मुन्नं सुरासुर युद्धे दशरथन् तन्नेमित्रार्थं महेन्द्रनर्त्थिक्कयाल् मन्नवन् चाप बाणङ्ङळुं कैकोण्टु तन्नुटे सैन्यैस्समं तेरिलेरिनान्। त्निन्नोटु कूटवे विण्णिलकं पुक्कु सन्नद्धनाय् च्चेन्नसुररोटेट्टप्पोळ् छिन्नमाय् वन्नु रथाक्ष कीलं

के लिए भेजा है, वह पूर्व योजना का ही परिणाम है। राम का अभिषेक अगर किया गया तो निश्चय है, राज-सुख एवं राजभोग सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) को प्राप्त होंगे। यह सुमित्रा का ही सौभाग्य है। यह देखते हुए तुम दुर्भाग्यवती को दासी रूप में कौसल्या की तथा भरत को कौसल्या-पुत्र की सेवा-परिचर्या करनी पड़ेगी। तुम कभी अपने राजत्व का गर्व नहीं कर पाओगी। यह भी संभव है कि तुम्हें लांछितकर देश से निकाल दें या निर्दारुण भाव से मार डालें। सौतिया डाह में जलते हुए भूमि पर जिन्दा रहने से मरना बेहद अच्छा है, इसमें कोई शक नहीं है। मैं तुम्हारी भलाई की बात बोलती हूँ, तुम सुनो। इस समय अगर तुम्हारे मन में उमंग एवं उत्साह है तो निश्चित जानो, राजा तुम्हारे पुत्र का ही अभिषेक कर देंगे। राजा के आदेश से राम को चौदह वर्ष तक वनवास के लिए भिजवाना होगा। ४० –(ऐसा करने पर) संपूर्ण देश पर भरत का एकाधिकार स्थापित होगा और तुम भी चिरकाल तक यशस्विनी बनकर रह सकोगी। प्राणोपम प्रिय रानी! तुम्हारी इच्छा हो तो मैं इसके लिए तुम्हें उपाय सुझा दूंगी। पूर्वकाल में देवासुर संग्राम के समय महेन्द्र जी ने दशरथ का सहयोग माँगा था। महाराजा धनुष-बाण ले अपनी सेना सहित तुम्हारे साथ रथ पर सवार हो स्वर्गलोक में पहुँचे थे। वहाँ असुरों

पोरिलॆन्तरिञ्ञतु मिल्ल दशरथन्; सत्वरं कील रन्ध्रत्तिङ्कल्
तिन्नुटॆ हस्त दण्डं समावेश्य धैर्येण नी, चित्रमत्रे पति प्राण
रक्षात्थंमाय् युद्धं कळिवोळमङ्ङनॆ निन्नतुं। शत्रुक्कळॆ वधं
चॆय्तु पृथ्वीन्द्रनुं युद्ध निवृत्त नायोरु दशान्तरे निन्तॊळिल्
कण्टति सन्तोषमुळ्क्कॊण्टु चॆन्तळिर् मेनि पुणर्न्नुटन्-५०
पुञ्चिरि पूण्टु परञ्ञितु भूपनु निन् चरितं नन्नु नन्नु निरूपिच्चाल्
रण्टुवरं तरां नीयॆन्नॆ रक्षिच्चु कॊण्टतु मूलं वरिच्चु कॊण्टालुं नी;
भत्तृं वाक्यं केट्टु नीयुमन्नेरत्तु चित्त सम्मोदं कलर्न्नु
चॊल्लीटिनाळ्—दत्त मायोरु वरद्वयं सादरं न्यस्तं भवति मया
नृपतीश्वरा ! ञानोरवसरत्तिङ्कलपेक्षिच्चालूनं वरातॆ तरिकॆन्नते
वेण्टु। ऎन्नु परञ्ञरिक्कुन्न वरद्वय मिन्नपेक्षिच्चु कॊळ्ळणं मटियातॆ।
ञानुं मरन्नु किटन्नितु मुन्नमे मानसे तोन्नि बलालीश्वराज्ञया।
धीरतयोटिनि क्षिप्रमिप्पोळ् क्रोधागारं प्रविश्य कोपेन किटक्क नी।
आभरणङ्ङळुं पॊट्टिच्चॆरिञ्ञति शोभ पूण्टोरु कार्कून्तलळिच्चिट्टु
पूमेनियुं पॊटि कॊण्टङ्ङणिञ्ञह भूमियिल् तन्नॆ

से युद्ध करते समय रथ के पहिये की धुरी टूट गयी थी, जिसका दशरथ
को पता तक नहीं था। तुमने तुरन्त बड़े साहस के साथ धुरी के छिद्र
में अपना हस्तदण्ड समाविष्ट कर दिया और युद्ध की समाप्ति तक वैसे
ही खड़ी रहकर पति की रक्षा करते हुए तुमने विचित्र साहस का
परिचय दिया। शत्रुओं का संहार करके युद्ध से निवृत्त होने पर
तुम्हारे इस कार्य से प्रभावित एवं प्रसन्न हो राजा ने तुम्हारे पल्लव
सदृश गात्र का आश्लेष किया। ५० —मुस्कान भरते हुए भूपति ने अनु-
मोदन किया कि तुम्हारा चरित्र ही बहुत-बहुत प्रशंसनीय है। मेरी
रक्षा करने के उपलक्ष्य में मैं तुम्हें दो वर अभी दूँगा, तुम कृपापूर्वक
ग्रहण करो। पति के इस कथन को सुनकर तुमने उस समय मन ही
मन पुलकित हो बताया कि महाराज ! आपके प्रदत्त दोनों वर आप
ही के पास मैं न्यस्त रखती हूँ ! जब कभी मैं माँगूँगी तब प्रदान
करना होगा। इस प्रकार (राजा के पास न्यस्त) रखे दोनों वर आज
तुम्हें निस्संकोच भाव से माँग लेना चाहिए। यह बात मैं अभी तक
भूल बैठी थी, आज सहसा दैवयोग से वह स्मरण आयी। (अतः) तुरन्त
ही साहसपूर्वक कोपगृह में प्रविष्ट हो क्रोध का नाट्य अपनाओ।
सारे आभूषणों को छिन्न-भिन्न करके इधर-उधर बिखरा देकर तथा
सुन्दर कुन्तलों को खुला छोड़कर भूमि पर लोटकर सुन्दर गात्र को

मलिनांबरत्तोटुं ६० कण्णु न्नीराले मुखवुं मुलकळुं नन्नाय् ननच्चु करञ्ञु-करञ्ञु कोण्टर्त्थिच्चु कोळ्क वरद्वयं भूपति सत्यं पऱञ्ञालुऱप्पिच्चु मानसं मंथर चोन्न पोलतिनेतु मोरन्तरं कूटाते चेन्नु कैकेयियुं पत्थ्यमितोवक्केत्तनिवकोन्नु कल्पिच्चु चित्त मोदेन कोपालये मेविनाळ्। कैकेयि मन्थरयोटु चोन्नाळिनि राघवन् काननत्तिन्नु पोवोळवुं ञानिविटे किटन्नीटुवनल्लायकिल् प्राणनेयुं कळञ्ञीटुवन् निर्णयं। भू परित्राणात्र्थं मिन्नु भरतनु भूपति चेय्तानभिषेक मेङ्किल ञान् वेऱे न्निनक्कु भोगात्र्थमाय् नल्कुवन् नूऱु देशङ्ङळतिनिल्ल संशयं; एतुमितिनोरिळक्कं वराय्किल् नी चेतसि चिन्तिच्च कार्यं वरुं दृढं। ऐन्नु पऱञ्ञु पोयीटिनाळ् मन्थर पिन्नेयव्वण्णमनुष्ठिच्चु राज्ञियुं ७० धीरनायेट् दयान्वितनाय् गुणाचार संयुक्तनाय् नीतिज्ञनाय् निज देशिक वाक्य स्थितनाय् सुशीलनायाशय शुद्धनायविद्या निरतनाय् शिष्टनायुळ्ळवनेन्नङ्ङिरिक्किलुं दुष्ट संगं कोण्टु कालान्तरत्तिनाल् सज्जन निन्द्यनाय् वन्नु कूटुं दुर्ज्जन संसर्गमेट्मकलवे वर्ज्जिक्क वेणं प्रयत्नेन सत्पुमान् कज्जळं

धूल से धूसरितकर और मलिन वेषधारी बन। ६० —आँसुओं से मुख तथा कुचों को स्निग्ध करती हुई रो-रोकर दोनों वरों की याचना करो और राजा के प्रतिज्ञाबद्ध होने पर ही मानस को दृढ़ बनाओ। (फिर) मंथरा के उपदेश को अपने लिए बिलकुल अनुकूल मानकर तथा मन के दुर्मोह को लेकर कैकेई कोपगृह में पहुँची। कैकेई ने मंथरा से कहा कि अब राघव के वन जाने तक मैं यहीं पड़ी रहूँगी, अन्यथा (राघव के वन न जाने पर) मैं निश्चय ही अपना प्राण छोड़ दूँगी। भूमि के परित्राणार्थ अगर राजा भरत का अभिषेक कर दें तो मैं तुम्हारे भोगार्थ निश्चय ही सौ देश अलग से दूँगी। 'तुम अपने इस कार्य से विचलित न होओगी तो तुम्हारा मन का संकल्प निश्चय ही सिद्ध होगा'—ऐसा कहकर मंथरा चली गयी और रानी ने वैसा ही (मंथरा के उपदेशानुसार ही) आचरण किया। ७० चाहे कोई कितना ही साहसी, दयावान, गुणी, आचारनिष्ठ, नीतिज्ञ, गुरु-वाक्य पर अटल, सुशील, शुद्ध, विद्यानिरत और शिष्ट व्यक्ति क्यों न हो दुर्गुणी लोगों की संगति से कालान्तर में निश्चय ही सज्जनों द्वारा निन्द्य बन जाएगा। इसलिए सत्पुरुषों को चाहिए कि वे प्रयत्नपूर्वक दुर्जनों के संसर्ग को दूर से नमस्कार कर दें क्योंकि कज्जल लगने से सोना भी

पट्टियाल् स्वर्णवुं निष्प्रभं। ऎङ्किलो राजा दशरथनादराल्
पङ्कज नेत्राभ्युदयं निमित्तमाय् मन्त्रि प्रभृतिकळोट्टु परञ्ञु
कोण्टःन्तपुरमकं पुक्करुळीटिनान्। अन्नेरमात्मप्रियतमयाक्किय
तन्नुटे पत्निये क्काणाय्क कारणं ऎन्नयुं विह्वलनायीरु भूपनुं
चित्ततारिङ्कल् निरूपिच्चितीदृशं: मन्दिरं तन्निल् ञान्
चॆन्नु कूटुं विधौ मन्दस्मितं चॆय्तरिके वरुं पुरा ८० सुन्दरियामवळि
न्नॆङ्ङु पोयिनाळ् मन्दमाकुन्नितुन्मेषमॆन् मानसे। चॊल्लुविन्
दासिकळे! भवत्स्वामिनि कल्याणगात्रि मट्टॆङ्ङु पोयीटिनाळ्?
एवं नरपति चोदिच्च नेरत्तु देवितन्नाळिकळुं परञ्ञीटिनार्
क्रोधालयं प्रवेशिच्चततिन्मूलमेतु मङ्ङ्ञील ञङ्ङळो मन्नव!
तत्र गत्वा निन्तिरुवटि देवितन् चित्तमनुसरिच्चीटुक वैकाते।
ऎन्नतु केट्टु भयेन महीपति चॆन्नङ्ङरिकत्तिरुन्नु ससंभ्रमं मन्द
मन्दं तलोटित्तलोटि प्रिये! सुन्दरी! चॊल्लु चॊल्लॆन्तिनु
वल्लभे! नाथे! वॆरुं निलत्तुळ्ळ पॊटियणिञ्ञातङ्कमोटु
किटक्कुन्नतॆन्तुनी? चेतो विमोहन रूपे! गुणशीले! खेद
मुण्टायतॆन्तॆन्नोटु चॊल्कॆंटो! मल् प्रजावृन्द मायुळ्ळवरारुमे विप्रियं
चॆय्कयुमिल्ल निनक्कॆंटो! ९० नारिकळो नरन्मारो

निष्प्रभ बन जाता है। तो राजा दशरथ पंकज नेत्र (राम) के अभ्युदय से संबंधित बातों की मंत्रि प्रभृति लोगों से चर्चा करके अन्तःपुर में पहुँचे। तब अपनी प्राणोपम प्यारी प्रियतमा पत्नी को (वहाँ) न देख पाने पर अत्यन्त व्याकुल हो हृदय-कमल में इस प्रकार सोचा; पहले मेरे अन्तःपुर में पहुँच पाते ही मंद मुस्कराती हुई मेरे निकट आती। ८० —वह सुन्दरी आज कहाँ गयी? आज मेरे मन का उत्साह मंद पड़ता जा रहा है। हे दासियो! तुम लोग बता दो कि तुम्हारी सुन्दर स्वरूपिणी स्वामिनी आज अन्यत्र कहाँ गयी हैं? इस प्रकार राजा के पूछने पर देवी की दासियों ने कहा कि हे महाराज! उनके कोपगृह में जा बसने के कारण हम कुछ नहीं जान पायी हैं। आप वहाँ पहुँचकर अविलंब देवी जी के मनोरथ को पूरा कीजिएगा। यह सुनकर मन में भयविह्वल हो राजा उनके निकट आ कातर हो बैठे और मंद-मंद उन पर हाथ फेरते-फेरते पूछा—हे सुन्दरी! हे प्रिये! हे स्वामिनी! बताओ तो सही कि तुम खिन्न हो इस फर्श पर धूल में क्यों पड़ी हो? मन को मोहित करनेवाली सुन्दरी! हे गुणशीले! तुम्हारे दुःख का कारण मुझे बताओ। मेरे प्रजावर्ग में से कोई भी

भवतियोटारोरु विप्रियं चेय्ततु वल्लभे ! दण्ड्यनेन्नाकिलुं वध्यनेन्नाकिलुं दण्डमेनिक्कतिनिल्ल निरूपिच्चाल् । निर्द्धननें त्वयुमिष्टन् निनक्केङ्किलत्थं पतियाक्कि वय्पनवनें ञान् । वध्यनें नूनमवध्यनाक्कीटुवन् वध्यनाक्कीटुमवध्यनें वेण्टुकिल् नूनं निनक्कधीनं ममज्जीवनं मानिनी ! खेदिप्पतिनेन्तु कारणं ? मल् प्राणनेक्काळ् प्रियतमनाकुन्न तिप्पोळेनिक्कु मल् पुत्रनां राघवन् अङ्ङने युळ्ळ रामन् मम नन्दनन् मंगलशीलनां श्रीरामनाण ञान् अंगनारत्नमे ! चेय्वन् तवहितमिङ्ङने खेदिप्पियाय्कमां वल्लभे ! इत्थं दशरथन् कैकेयि तन्नोटु सत्यं पड्ञतु केट्टु तेळिञ्ञवळ् कण्णु नीरुं तुटच्चुत्थानवुं चेय्तु मन्नवन् तन्नोटु मन्दमुरचेय्ताळ् १०० सत्य प्रतिज्ञनायुळ्ळ भवान् मम सत्यं पड्ञतु नेरेङ्किलेन्नुटे पत्थ्यमायुळ्ळतिनेप्पड्ञीटुवन् व्यत्थं माक्कीटाय्क सत्यत्तें मन्नवा ! ऐङ्किलो पण्टु सुरासुरायोधने सङ्कटं तीर्त्तु रक्षिच्चेन् भवाने ञान् । सन्तुष्ट चित्तनायन्नु भवान् मम चिन्तिच्चु रण्टु वरं नल्कीलयो । वेण्टुन्न नाळपेक्षिक्कुन्नतुण्टन्नु वेण्टुं वरङ्ङळ् तरिकेन्नु चोल्लिञान् । वच्चिरिक्कुन्नु

तुम्हारी इच्छा के प्रतिकूल कोई कार्य तो नहीं करता। ९० हे प्रिये ! कौन नर या नारी है, जिसने तुम्हारा अप्रिय कार्य किया है ? तुम यह जान लो कि उसे दंडित करने या उसका वध करने में मुझे कोई दुःख नहीं होगा। अगर किसी निर्धन व्यक्ति के प्रति तुम्हारी कृपा है तो मैं उसे धन-कुबेर बना दूँगा। तुम्हारी इच्छा हो तो किसी वध्य को अवध्य और अवध्य को वध्य घोषित कर दूँगा। हे मानिनी ! मेरा जीवन ही तुम्हारे अधीन है, फिर तुम्हारे दुःख का क्या कारण है ? इस समय मेरे लिए अपने प्राण से भी प्रिय मेरा पुत्र राघव है। हे नारीरत्न ! हे प्रिये ! ऐसे मेरे पुत्र मंगलकारी राम की सौंगध है, मैं तुम्हारा आग्रह पूर्ण कर दूँगा। तुम इस प्रकार व्यर्थ दुःखी मत होओ। इस प्रकार दशरथ को प्रतिज्ञाबद्ध होते सुनकर कैकेई का मुख खिल उठा; आँसू पोंछती हुई वे उठीं और राजा से धीरे-धीरे कहा। १०० —दृढ़ प्रतिज्ञावान आपने आज मेरे सामने जो प्रतिज्ञा की, वह सत्य है तो आज मैं अपनी कामना प्रकट करती हूँ, हे राजा ! उसे आप व्यर्थ जाने न दीजिए। तो सुनिये, पूर्वकाल में देवासुर संग्राम के अवसर पर मैंने आपको विपत्ति से बचा लिया था और तब आपने मेरे उपकार के बदले में प्रसन्न हो दो वर प्रदान किये थे। मैंने

भवाङ्कलतु रण्टुं इच्छयुण्टिन्नु वाङ्ङीटुवान् भूपते !
ऐन्नतिलोन्नु राज्याभिषेकं भवानिन्नु भरतनु चेय्येण मेन्नतुं पिन्ने
मट्टेतु रामन् वनवासत्तिनिन्नु तन्ने गमिक्केणमेन्नुळ्ळतुं ।
भूपति वीरन् जटा वल्कलं पूण्टु तापस वेषं धरिच्चु वनान्तरे
कालं पतिन्नालु वत्सरं वाळणं मूल फलङ्ङळ् भुजिच्चु
महीपते ! ११० भूमि पालिप्पान् भरतनेयाक्कणं रामनुषसि
वनत्तिन्नु पोकणं । ऐन्निव रण्टु वरङ्ङळुं नल्कुकिलिन्नु मरणमेनि
क्किल्ल निर्णयं । एन्नु कैकेयि परञ्ञोरनन्तरं मन्नवन् मोहिच्चु
वीणानवनियिल् । वज्रमेट्टद्रि पतिच्च पोले भुवि सज्वर चेतसा
वीणितु भूपनुं । पिन्ने मुहूर्त्त मात्रं चेन्न नेरत्तु कण्णुनीर् वार्त्तु विरच्चु
नृपाधिपन् दुस्सह वाक्कुकळ् केळ्क्कायतेन्तय्यो ? मम मृत्यु
समयमुपस्थितमाकयो ? किंकिमेतल् कृतं शंकर ! दैवमे !
पङ्कज लोचन ! हा ! परब्रह्ममे ! व्याघ्रियेप्पोले समीपे
वसिक्कुन्न मूर्ख मतियाय कैकेयितन् मुखं नोक्कि नोक्कि ब्भयं पूण्टु
दशरथन् दीर्घमाय्वीर्त्तु वीर्त्तेवमुरचेय्तु—ऐन्तिवण्णं परयुन्नतुभद्रे !
नी ऐन्तु निन्नोटु पिळच्चितु राघवन् १२० मल् प्राण हानिकरमाय

आवश्यकता पड़ने पर वर माँगने तथा तब जरूर देने का प्रस्ताव रखा था। इस प्रकार आपके पास न्यस्त दोनों वरों को हे राजा! आज प्राप्त करने की इच्छा है। उनमें से एक वर से मेरे पुत्र भरत का आज आप राज्याभिषेक कर दीजिए और दूसरा यह वर चाहिए कि राम आज ही वनवास के लिए चले जाएँ। हे राजा! राजकुमार (राम) को जटा–वल्कलधारी तापसवेष में फल-मूल खाते हुए चौदह वर्ष तक वन में निवास करना होगा। ११० राज्यशासन के लिए भरत को नियुक्त करें तथा राम उषाकाल में वन को प्रस्थान करें—ये दो वर प्रदान किये जाने पर आज मेरी मृत्यु नहीं होगी। कैकेई के मुख से ये वचन सुनते ही राजा मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़े। वज्राहत पर्वत के समान मन में परिताप ले राजा पृथ्वी पर पड़े थे। फिर क्षण भर के उपरांत अश्रु बहाते हुए तथा कंपित गात्र राजा बोल उठे—आज ऐसे असहनीय शब्द क्यों सुनने पड़ रहे हैं? क्या मेरी मृत्यु समीप आ रही है? हे भगवान! हे शंकर! आपने यह क्या किया? हे कमललोचन! हा परब्रह्म! बाघनी के समान समीप बैठी दुर्बुद्धि कैकेई का मुख बार-बार देखकर भयातुर हो दशरथ ने दीर्घश्वास भरते हुए पूछा—हे भद्रे! आज ऐसी बात क्यों कर रही

वाक्कु नीयिप्पोळुर चेय्वतिनेन्तु कारणं। अेन्नोटु राम गुणङ्ङळे वर्णिच्चु मुन्नमेल्लां नी परञ्ञल्लो केळ्प्पू ञान्। ऐन्नेयुं कौसल्या देवियेयुमवन् तन्नुळ्ळिलिल्लोरु भेदमोरिक्कलुं ऐन्नल्लो मुन्नं परञ्ञिरुन्नु निनक्किन्नितु तोन्नुवानेन्तोरु कारणं ? निन्नुटे पुत्रनु राज्यं तरामल्लो धन्यशीले ! रामन् पोकणमेन्नुण्टो ? रामनालेतुं भयं निनक्कुण्टाका भूमि पतियाय् भरतनिरुन्नालुं। ऐन्नु परञ्ञु करञ्ञु करञ्ञु पोय् चेन्नुटन् कालकल् वीणु महीपालनुं। नेत्रङ्ङळुं चुवप्पिच्चु कैकेयियुं धात्रीपतीश्वरनोटु चोल्लीटिनाळ्— भ्रान्तनेन्नाकयो भूमीपते ! भवान् भ्रान्ति वाक्यङ्ङळ् चोल्लुन्नतेन्तिङ्ङने ! घोरङ्ङळाय नरकङ्ङळिल् चेन्नु चेरुमसत्य वाक्यङ्ङळ चोल्लीटिनाल् १३० पङ्कज नेत्रनां रामनुषस्सिनु शंका विहीनं वनत्तिन्नु पोकाय्किल् ऐन्नुटे जीवने ञान् कळञ्ञीटुवन् मन्नवन् मुम्पिल् निन्निल्लोरु संशयं। सत्य संधन् भुवि राजा दशरथनेन्नयुमेन्नुळ्ळ कीर्ति रक्षिक्कणं; साधु मार्गत्ते वेटिञ्ञतु कारणं यातना दुःखानुभूति युण्टाकेण्ट, रामोपरिभवान् चेय्त शपथवुं भूमीपते ! वृथा

हो ? राम ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? १२० —किस कारण तुम मेरे लिए प्राणघातक ये शब्द आज बोल उठीं ? पहले तुम मेरे सामने राम के गुण का बखान किया करते थीं और मैं सुन लिया करता था। (तुम कहा करती थीं) उसके मन में मुझमें और कौसल्यादेवी में कोई भेदभाव कभी नहीं आने पाया है। इस प्रकार जब तुम पहले कहती थीं तो आज इस प्रकार के कटुवचन तुमसे कहे जाने का क्या कारण है ? हे धन्य-शीले ! मैं तुम्हारे पुत्र को राज्य दे सकता हूँ, किन्तु क्या राम का (वन) जाना आवश्यक है ? भूमिपति बन भरत रहें, किन्तु तुम्हें राम के कारण कोई बाधा नहीं आ पाएगी। ऐसा कहकर रो-रोकर राजा उनके चरणों पर जा गिर पड़े। अपने नेत्रों को लाल-लाल करती हुई कैकेई ने राजा से कहा—'हे भूमिपति ! क्या आप पागल होते जा रहे हैं ? आप ऐसे प्रलाप क्यों कर रहे हैं ? असत्य वचन बोलने से आप भयंकर नरकों में जा पड़ेंगे। १३० —पंकजनेत्र राम प्रातःकाल में निश्शंक वन को प्रस्थान नहीं करेंगे तो मैं राजा के सम्मुख ही प्राण त्याग करूँगी, यह निश्चित जानिये। 'संसार में राजा दशरथ बड़े सत्यकामी एवं दृढ़ प्रतिज्ञावान हैं'—यह यश आपको बचाये रखना चाहिए। सन्मार्ग को त्यागने से उत्पन्न होनेवाली यातनाएँ और

मिथ्ययाक्कीटॊला, कैकेयि तन्नुटॆ निर्ब्बन्ध वाक्यवुं राघवनोटु वियोगं वरुन्नतुं चिन्तिच्चु दुःख समुद्रे निमग्ननाय् सन्तापमोटु मोहिच्चु वीणीटिनान् । पिन्नॆयुणर्न्निरुन्नुं किटन्नुं मकन् तन्नॆयोर्त्तु परञ्ञुं करञ्ञुं सदा राम रामेति रामेति प्रलापेन यामिनि पोयितु वत्सर तुल्ययाय् । चॆन्नारुणोदयत्तिनु सादरं वन्दिकळ् गायकन्मारॆन्निवरॆल्लां १४० मंगल वाद्य स्तुति जय शब्दङ्ङळ् संगीत भेदङ्ङळॆन्निवट्टॆक्कॊण्टुं । पळ्ळि क्कुरुप्पुणर्त्तीटिनारन्नेर मुळ्ळिलुण्टाय कोपेन कैकेयियुं क्षिप्रमवरॆ निवारणवुं चॆय्ताळ् विभ्रमं कैकॊण्टु निन्नारवर्कळुं । अप्पोळभिषेक कोलाहलार्त्थमाय् तल् पुरमॊक्कॆ निरञ्ञु जनङ्ङळाल् । भूमि देवन्मारुं भूमिपालन्मारुं भूमि स्पृशो वृषलादि जनङ्ङळुं, तापस्स वर्ग्गवुं कन्यका वृन्दवुं शोभतेटुन्न वॆङ्कॊट्क्कुटतळ चामरं तालवृन्दं कॊटि तोरणं चामीकराभरणाद्यलंकारवुं; वारण वाजि रथङ्ङळ् पदातियुं वारनारीजनं पौरजनङ्ङळुं, हेमरत्नोज्ज्वल दिव्य सिंहासनं हेमकुंभङ्ङळुं शार्दूलचर्म्मवुं मट्टुं वसिष्ठन् नियोगिच्चतॊक्कवे कुट्मॊळिञ्ञाशु संभरिच्चीटिनार् । १५० स्त्री बाल वृद्धावधि

दुःख आप क्यों सहेंगे ? हे राजा ! राम का नाम लेकर किया गया सत्य वचन असत्य होने न दीजिए । कैकेई के जिद वचन और राम के वियोग की बात सोचते हुए दुःख-समुद्र में निमग्न हो सन्ताप से राजा विमोहित हो गिर पड़े ! फिर कभी जागते हुए, कभी लेटते हुए सदा पुत्र को स्मरण करते हुए रो-धोकर प्रलाप करते गये । राम राम राम का प्रलाप करते हुए वर्ष तुल्य यामिनी काट ली । अरुणोदय पर चारण-गायक सब लोग सादर (राजा के यहाँ) पहुँच गये । १४० —मंगल वाद्य, स्तुति गीत, जय जयकार, नानाविध संगीत ध्वनियों आदि से (उन्होंने) राजा को निद्रा से जगाने का प्रयत्न किया । तब मन ही मन क्रुद्ध हो कैकेई ने तुरन्त उन्हें वहाँ से भगा दिया और वे हक्बकाकर खड़े रह गये । अब अभिषेक के उत्सव के लिए आये ब्राह्मण-श्रेष्ठों, राजा-महाराजाओं, भूमिस्पृशों (वैश्य), वृषल जनों, तापस श्रेष्ठों, कन्याओं आदि से वह नगरी भर गयी । चामर, तालवृन्द, कोटि तोरण, सोने के आभूषण एवं अलंकार, हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेनाएँ, वार वनिताएँ और नागरिक जन, स्वर्ण-रत्नों से उज्ज्वल दिव्य सिंहासन, स्वर्ण कलश, शार्दूल चर्म सब कुछ वसिष्ठ के निर्देशानुसार बिना किसी व्यतिक्रम के एकत्रित हुए । १५० स्त्री, बालक

पुरवासिकळाबद्ध कौतूहलाब्धि निमग्नराय् रात्रियिल् निद्रयुं कैविट्टु मानसे चीर्त्तपरमानंदत्तोटुमेविनार् । नम्मुटे जीवनां रामकुमारने निर्म्मलरत्न किरीट मणिञ्जतिरम्यमकरायित मणि कुण्डल समुग्ध शोभित गण्ड स्थलङ्ङळुं, पुण्डरीकच्छद लोचन भंगियुं पुण्डरीकाराति मण्डल तुण्डवुं, चन्द्रिका सुन्दर मन्द स्मिताभयुं कुन्दमुकुळ समान दन्तङ्ङळुं, बन्धूक सून समानाधराभयुं कन्धरराजित कौस्तुभ रत्नवुं बन्धुराभं, तिरुमारुमुदरवुं सन्ध्या भ्रसन्निभ पीतांबराभयुं, पूञ्चेल मीते विळङ्ङि मिन्नीटुन्न काञ्चन काञ्चिकळुं तनुमध्यवुं, कुंभि कुलोत्तमन् तुम्पिक्करं कौण्टु कुम्पिट्टु कूप्पीटुमूरुकाण्डङ्ङळुं १६० कुंभीन्द्र मस्तक सन्निभ जानुवुमंभोज बाण निषंगाभ जंघयुं, कम्पं कलर्न्नु कमठ प्रवरनुं कुम्पीटुन्नोरु पुरवटि शोभयुं, अंभोज तुल्यमामंघ्रितलङ्ङळुं जंभारिरत्नं तोळुं तिरुमेनियुं, हार कटक वलयांगुलीयादि चारुतराभरणावलियुं पूण्टु वारण वीरन् कळुत्तिल्त्तिरुत्तोटु गौरातपत्रं धरिच्चरिके निज लक्ष्मणनाकिय सोदरन् तन्नोटुं लक्ष्मी निवासनां रामचन्द्रं मुदा; काणाय्वरुन्नु नमुक्किनियेन्निदं मानस तारिल् कौतिच्च नमुक्केल्लां क्षोणीपति सुतनाकिय

और वृद्ध सभी पुरवासी लोग कुतूहल के सागर में आमग्न हो रात्रि में निद्रा तज घने आनंद के साथ (प्रभात की प्रतीक्षा में) बैठे रहे। (वे सोचने लगे) निर्मल रत्नमय किरीट से शोभित, रम्य मकरमणि कुण्डलों की दीप्ति से प्रशोभित गण्डस्थल, सुन्दर नील कमलदल जैसे लोचन, कामदेव का सा मुखमंडल, स्निग्ध ज्योत्स्नासम मंद मुस्कान की आभा, कुन्द कलियों जैसे दन्त, बंधूक कुसुम की आभावाले अधर, कौस्तुभ रत्न से शोभित कंधस्थल, स्वर्णिम कांतिमय उदर, संध्याकालीन मेघ तुल्य आभा से युक्त पीतांबर, कमरबंद पर जगमगाती स्वर्णिम मेखला से सुशोभित कटिप्रदेश, श्रेष्ठ गजराज से नमित ऊरुद्वय। १६० कुंभीन्द्र के मस्तक सदृश जानु तथा बाण सरासन से शोभित कमलसम मृदुल जांघ, कच्छप को भी मोहितकर लज्जित करनेवाला सुन्दर पीठदेश, कमल समान मृदुल पादतल, वज्र की कांति को फीका करनेवाली देह-कांति, हार, कटक, अंगुलीय आदि सुन्दर आभूषण आदि से सभालंकृत ऐश्वर्य-शाली एवं हमारे लिए प्राणोपम प्रिय कुमार राम को अपने बगल में भ्राता लक्ष्मण सहित हाथ में छत्र लिये गजराज की पीठ पर विराज-मान देखने की हमारे मन में जो साध बनी हुई है, कल प्रातःकाल में

रामनेक्काणाय्वरुं प्रभाते बत ! निर्ण्णयं रात्रियां राक्षसि पोकुन्नतिल्लेन्नु चीर्त्त विषादमोटौत्सुक्यमुळ्ळोण्टु मार्त्ताण्ड देवनेक्काणान्नु नोक्कियुं पार्त्तु पार्त्तानंद पूर्ण्णामृताब्धियिल् १७० वीणुमुळुकियुं पिन्नेयुं पोङ्ङियुं वाणीटिनार् पुरवासिकळादराल् । १७१

विच्छिन्नाभिषेकं

अन्नेरमादित्यनुमुदिच्चीटिनान् मन्नवन् पळ्ळिक्कुरुप्पुणर्न्नीलिन्नुं । ऎन्तोरु मूलमतिनेन्नु मानसे चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु मन्दमन्दं तदा मन्त्रि प्रवरनाकुन्न सुमन्त्ररुमन्तः पुरमकं पुक्कानति द्रुतं । राजीव मित्र गोत्रोल्भूत भूपते ! राजराजेन्द्र प्रवर ! जय जय ! इत्थं नृपनें स्तुतिच्चु नमस्करिच्चुत्थानवुं चेय्तु वन्दिच्चु निन्नप्पोळ् ऎन्नयुं खिन्ननायक्कण्णु नीरुं वार्त्तु पृथ्वियिल्त्तन्ने किटक्कुं नरेन्द्रने चित्ताकुलतया कण्टु सुमन्त्ररुं सत्वरं कैकेयितन्नोटु चोदिच्चान् देवनारी समे ! राजप्रियतमे ! देविकैकेयि ! जय जय सन्ततं । भूलोक पालन् प्रकृति पकरुवान् मूलमेन्तेन्नु महाराज वल्लभे ! चौल्लुकेन्नोटेन्नु केट्टु कैकेयियुं चौल्लिनाळाशु सुमन्त्ररोटन्नेरं १०

राजकुमार राम को देखकर निश्चय ही पूर्ण हो जाएगी। रात्रि-रूपी राक्षसी के न बीतने पर कभी क्रोध प्रकट करते हुए, कभी उत्सुकता-वश जागृत हो मार्तण्ड देव के उदय को देखते हुए, कभी (कल के दृश्य का स्मरण करते हुए) आनंदरूपी अमृत के सागर में, १७० निमग्न हो, फिर सिर उठाकर देखते हुए, नगरवासी लोग बेचैन थे । १७१

अभिषेक-भंग

तब सूर्योदय हुआ, किन्तु महाराजा की सुषुप्ति नहीं छूटी । राजा के न जागने का क्या कारण है, यह सोचते-सोचते मंत्रिप्रवर सुमंत्र शीघ्र ही अन्तःपुर में पहुँचे । कमल के मित्र (सूर्य) के गोत्रज हे भूपति ! हे श्रेष्ठ राजराजेन्द्र ! (आपकी) जय हो ! जय हो ! इस प्रकार राजा की स्तुति एवं नमस्कार करके वंदना के साथ खड़े सुमंत्र ने अत्यन्त खिन्न हो अश्रुधारा बहाते हुए पृथ्वी पर ही लेटे व्याकुल नरेन्द्र को देखकर तुरन्त ही कैकेई से पूछा—हे देवनारी तुल्य ! राजा की प्रियतमे ! देवी कैकेई ! सदा (आपकी) जय हो ! जय हो ! हे महाराजा की प्रिये ! भूलोक-पालक की प्रकृति में इस प्रकार परिवर्तन होने का मुझे कारण बताइएगा । यह सुनकर तुरन्त कैकेई ने

धात्रीपतीन्द्रनु निद्रयुण्टायील रात्रियिलेन्नतु कारणमाकयाल्
स्वस्थनल्लातॆ चमञ्ञतु तन्नुटॆ चित्तत्तिनस्वतन्त्रत्वं भविक्कयाल्
राम रामेति रामेति जपिक्कयुं रामनॆत्तन्नॆ मनसि चिन्तिक्कयुं
उद्यल् प्रजागर सेवयुं चॆय्कयालत्यन्तमाकुल नायितु मन्नवन्
रामनॆक्काणाञ्ञु दुःखं नृपेन्द्रनु रामनॆच्चॆन्नु वरुत्तुक वैकातॆ।
ऎन्नतु केट्टु सुमन्त्ररुं चॊल्लिनान् चॆन्नु कुमारनॆक्कॊण्टु वरामल्लो
राजवचनमनाकर्ण्य ञानिह राजीव लोचने! पोकुन्नतॆङ्ङनॆ?
अॆन्नतु केट्टु भूपालनुं चॊल्लिनान् चॆन्नु नी तन्नॆ वरुत्तुक रामनॆ
सुन्दरनायॊरु रामकुमारनां नन्दनन् तन्मुखं वैकातॆ काणणं।
ऎन्नतु केट्टु सुमन्त्ररुळ्ळिप्पोय् चॆन्नु कौसल्या सुतनोटु
चॊल्लिनान् २० तातन् भवानॆयुण्टल्लो विळिक्कुन्नु सादरं
वैकातॆळुन्नळ्ळुक वेणं। मन्त्रि प्रवर वाक्यं केट्टु राघवन्
मन्देतरमवन् तन्नोटु कूटवे सौमित्रियोटुं करेरि रथोपरि प्रेम
विवशनां तातन् मरुवीटुं मन्दिरे चॆन्नु पिताविन् पदद्वयं वन्दिच्चु
वीणु नमस्करिच्चीटिनान्। रामनॆच्चॆन्नॆटुत्तालिंगनं चॆय्वान्
भूमिपनाशु समुत्थाय संभ्रमाल्। बाहुक्कळ् नीट्टिय नेरत्तु दुःखेन
मोहिच्चु भूमियिल् वीणितु भूपनुं। राम रामेति परञ्ञु मोहिच्चॊरु

सुमंत्र को बताया। १० —महाराजा को रात्रि में नींद नहीं आयी। इस कारण से अस्वस्थ से हो गये। चित्तभार से पीड़ित हो राम राम राम रटते तथा मन में राम का स्मरण करते रहे। अस्वाभाविक जागरण के कारण राजा अत्यन्त आकुल-व्याकुल हुए हैं। राम को न देख पाने से राजा दुखी हैं, (इसलिए) तुरन्त राम को लिवा लाइये। यह सुनकर सुमंत्र ने कहा कि मैं कुमार को बुला ला सकता हूँ। हे कमल-लोचने! (किन्तु) राजा का आदेश पाये बिना मैं कैसे जाऊँ? यह सुनकर भूपालक ने कहा कि आप जाकर राम को बुला लाइये, मुझे अपने पुत्र कुमार राम का सुन्दर मुख अविलंब देखना है। यह सुनकर भागते हुए जाकर सुमंत्र ने कौसल्यातनय से कहा। २० —पिता जी आपको बुला रहे हैं, आपको तुरन्त पधारना होगा। मंत्रिप्रवर के वाक्य सुनकर राम उनके और लक्ष्मण के साथ रथ पर चढ़कर प्रेम-विवश पड़े पिता के भवन में पहुँचे और पादद्वय पर गिर पड़ वंदना एवं नमस्कार किया। राम को आलिंगन करने के लिए बाहुएँ फैलाये अंधाधुंध उठे महाराज दुःख से मूर्छित हो भू पर गिर पड़े। राम राम की रट लगाये मूर्छित होते राजा को देखकर तीव्रगति से राम ने उन्हें उठाया और

भूमिपनेंक्कण्टु वेगेन राघवन् तातनेंच्चेंन्नेटुत्ताश्लेषवुं चेय्तु सादरं तन्टे मटियिल्क्किटत्तिनान् । नारीजनङ्ङळतु कण्टनन्तरमारूढ शोकाल् विलापं तुटङ्ङिनार् । रोदनं केट्टु वसिष्ठ मुनीन्द्रनुं खेदेन मन्दिरं पुक्कितु सत्वरं ३० श्रीरामदेवनुं चोदिच्चितन्नेरं कारणमेन्तेन्नु तात दुःखत्तिनु नेरे पऱविनऱिञ्ञवरेन्नतु नेरं पऱञ्ञितु केकय पुत्रियुं कारणं तात दुःखत्तिनु नी तन्ने पारिल् सुखं दुःखमूलमल्लो नृणां । चेतसि नी निरूपिक्किलेंळुतिनि तातनु दुःखनिवृत्ति वरुत्तुवान् । भर्त्तृ दुःखोपशान्तियक्कु किञ्चिल् त्वयं कर्त्तव्यमायोरु कर्म्मं मेन्नायवरुं सत्यवादि श्रेष्ठनाय पिताविने सत्य प्रतिज्ञनाक्कीटुक नीयतु चित्तहितं नृपतीन्द्रनु निर्ण्णयं पुत्ररिल् ज्येष्ठनाकुन्नतु नीयल्लो रण्टु वरं मम दत्तमायिट्टुण्टु पण्टु निन् तातनाल् सन्तुष्ट चेतसा । निन्नाले साध्यमायुळ्ळोन्नतु रण्टु मिन्नु तरेण मेन्नर्त्थियक्कयुं चेय्तेन् । निन्नोटतु पऱञ्ञीटुवान् नाणिच्चु खिन्ननाय् वन्नितु तातनऱिक नी ४० सत्य पाशेन संबद्धनां तातने सत्वरं रक्षिप्पतिन्नु योग्यन् भवान् पुन्नाममाकुं नरकत्तिल् निन्नुटन् तन्नुटे

आश्लेष किया तथा सादर अपनी गोद में लिटा दिया । यह देखकर अत्यन्त दुखी हो नारी जन विलाप करने लगीं । उनका रोना सुनते ही सत्वर मुनीन्द्र वसिष्ठ मन में दुखी हो महल में आ गये । ३० तब श्रीरामदेव ने पिता जी के दुःख का कारण पूछा और आग्रह किया कि जिनको कारण मालूम है, वे सीधे बता दें । तब कैकेई ने (राम से) कहा कि पिता के दुःख के तुम्हीं कारण हो; संसार-सुख निश्चय ही दुःख के लिए कारण बनता है । अगर तुम मन से चाहोगे तो पिता जी के दुःख का निराकरण करना सरल है । मेरे पति के दुःख की उपशांति के लिए तुम्हें थोड़ा-सा अपना कर्तव्य निभाना पड़ेगा । सत्यवादियों में श्रेष्ठ पिता को सत्य प्रतिज्ञावान रहने देना ही वह (तुम्हारा कर्तव्य) है । तुम्हीं पिता के पुत्रों में ज्येष्ठ हो और (तुम्हारे कर्तव्य निर्वहण से) राजा को चित्तसुख प्राप्त होगा । तुम्हारे पिता ने प्रसन्न चित्त हो पहले मुझे दो वर प्रदान किये थे । तुमसे साध्य उन दो वरों को आज प्रदान करने का मैंने (राजा से) आग्रह किया । तुमसे यह कहने में लज्जित हो राजा खिन्न हो उठे हैं । तुम यह जान लो । ४० सत्य-पाश से आबद्ध पिता की तुरन्त रक्षा करने की योग्यता तुम्हें प्राप्त है । पुन्नाम नरक (परस्त्री गमन आदि महापापों के लिए प्राप्त एक नरक) से अपने पिता का परित्राण करने के उपलक्ष्य में

तातने त्राणनं चेय्कयाल् पुत्रनेन्नुळ्ळ शब्दं विधिच्चू शतपत्र समुत्भवनेन्नतरिक नी। मातृवचन शूलाभिहतनाय् मेदिनि पालक कुमारनां रामनुं ऐत्रयुमेटं व्यथितनाय् चोल्लिनानित्रयेल्लां परयेणमो मातावे! तातार्थमायिट्टु जीवनेत्तन्नेयुं मातावु तन्नेयुं सीतयेत्तन्नेयुं आनुपेक्षिप्पतिनिल्ल संशयं मानसे खेद मतिनिल्लेनिक्केतुम्। राज्यमेन्नाकिलुं तातन् नियोगिक्किकल् त्याज्यमेन्नालेन्नतरिक नी मातावे! लक्ष्मणन् तन्ने त्यजिक्कुन्नु चोल्किलुं तल्क्षणं आनुपेक्षिप्पनरिक नी। पावकन् तङ्कल् प्पतिक्केणमेङ्किलुमेवं विषं कुटिक्केणमेन्नाकिलुं ५० तातन् नियोगिक्किलेतुमे संशयं चेतसि चेट्टिल्लेनिक्केन्नतरिक नी। तात कार्य्यमनाज्ञप्तमेन्नाकिलुं मोदेन चेय्युन्न नन्दननुत्तमन्। पित्रानियुक्तनायिट्टु चेय्युन्नवन् मध्यमनायुळ्ळ पुत्रनरिञ्ञालुं; उक्त मेन्नाकिलुमिक्कार्यमेन्नाले कर्त्तव्यमल्लेन्नु वच्चटङ्ङुन्नवन् पित्रोर्म्मलमेन्नु चोल्लुन्नु सज्जनमित्थमेल्लां परिज्ञातं मयाधुना। आकयाल् तात नियोगमनुष्ठिप्पानाकुलमेतुमेनिक्किल्ल निर्णयं

शतपत्रसंभव (ब्रह्मा) को पुत्र का अभिधान प्राप्त हुआ, इस बात को तुम समझ लो। मातृ वचन रूपी काँटों से आहत हो मेदिनी पालक (राजा) कुमार राम ने अत्यन्त व्यथित होकर कहा—हे माता! इतनी सब बातें क्यों कहती हो? पिता जी के लिए मैं निस्संदेह अपने जीवन, माता, सीता तक को त्यागने के लिए तैयार हूँ। फिर भी मुझे मन में कुछ दुःख अनुभव नहीं होगा। हे माता! तुम यह अच्छी तरह जान लो, पिता के आदेश पर मैं राज्य भी त्यागने को सन्नद्ध हूँ। अगर लक्ष्मण को छोड़ने के लिए आदेश दें तो तुम समझ लो, मैं उसी क्षण (उन्हें भी) त्याग दूँगा। अग्नि में कूदने या विष पीने के लिए भी। ५० तात का आदेश होने पर मेरे मन में तनिक संकोच नहीं होगा, यह तुम समझ लो। बिना आज्ञा के भी पिता का कार्य सानंद संपन्न करनेवाला पुत्र उत्तमकोटि का है और पिता की आज्ञा पर कार्य करनेवाले पुत्र को मध्यम कोटि का समझ लो। (पिता के) कहने पर यह कार्य करना मेरा कर्तव्य नहीं है, ऐसा सोच समाश्वस्त होनेवाला तथा पिता को अपवित्र कहनेवाला सज्जन!—सब कोई अभी मेरे लिए परि-ज्ञात हैं। इसलिए पिता के आदेश का अनुष्ठान करने में मुझे निस्संदेह कोई दुःख नहीं है। मैं सत्य का पालन करूँगा, मैं सत्य का पालन करूँगा, मेरा यह कथन सत्य है और इसमें कोई व्यतिरेक नहीं होगा। राम

सत्यं करोम्यहं सत्यं करोम्यहं सत्यंमयोक्तं मरिच्चु रण्टाय्वरा।
राम प्रतिज्ञ केट्टीरु कैकेयियुं रामनोटाशु चौल्लीटिनाळादराल्-
तातन् ङिनक्कभिषेकार्त्थमायुटनादराल् संभरिच्चोरु संभारङ्ङळ्
कौण्टभिषेकं भरतनु चेय्यणं रण्टांवरं पिन्नेयौन्नुण्टु वेण्टुन्नु ६०
ङी पतिन्नालु संवत्सरं कानने तापस वेषेण वाळुकयुं वेणं। ङिन्नोटतु
नियोगिप्पान् मटियुण्टु मन्नवनिन्नतु दुःखमाकुन्नतुं।
ऐन्नतु केट्टु श्रीरामनुं चौल्लिनानिन्नतिन्नेन्तीरु वैषम्यमायतुं।
चेय्कभिषेकं भरतनु जानिनि वैकाते पोवन् वनत्तिन्नु मातावे!
ऐन्ततन्नोटु चौल्लान्ञु पितावतु चिन्तिच्चु दुःखिप्पतिनेन्तु कारणं?
राज्यत्ते रक्षिप्पतिन्नु मतियवन् राज्यमुपेक्षिप्पतिन्नु ञानुं मति
दण्डमल्ले राज्य भारं वहिप्पतु दण्डक वासत्तिनेट्मेळुतल्लो
स्नेहमेन्नेक्कुरिच्चेरुमम्मय्क्कुमिद्देहमात्रं भरिक्केन्नु विधिक्कयाल्
आकाश गंगयेप्पाताळ लोकत्तु वेगेन कौण्टु चेन्नाक्किब्भगीरथन्
तृप्ति वरुत्तिप्पितृक्कळक्कु पूरुवुं तृप्तनाक्कीटिनान् तातनु
तन्नुटे ७० यौवनं नल्कि जरा नरयुं वाङ्ङि दिव्यन्मारायाङ्
पितृ प्रसादत्तिनाल्। अल्पमायुळ्ळोरु कार्य्यं निरूपिच्चु मल्प्पिता

की प्रतिज्ञा सुनकर तुरन्त ही कैकेई ने राम से सादर कहा—पिता ने तुम्हारे अभिषेक के लिए निष्ठापूर्वक जो-जो सामग्रियाँ जमायी थीं, उन्हीं से भरत का अभिषेक किया जाना चाहिए और एक दूसरा वर भी है जिसके अनुसार। ६० —तुम्हें चौदह वर्ष तक वन में तापस वेष में रहना होगा। तुम्हें यह आदेश देने में राजा संकोच का अनुभव कर रहे हैं, यही उनके दुःख का कारण बन रहा है। यह सुनकर राम ने उत्तर दिया कि इसमें आज क्या कठिनाई है। हे माता! भरत का अभिषेक करा दो, मैं तो अभी अविलंब वन को जा रहा हूँ। पिता जी ने यह बात मुझसे क्यों नहीं कही? इसकी चिन्ता में दुखी होने की क्या पड़ी है? राज्य-रक्षा के लिए वह (भरत) पर्याप्त है और राज्य-त्याग के लिए मैं पर्याप्त हूँ। राज्यभार वहन करना वास्तव में दण्ड (सजा) है और दण्डकवन में वास करना सहज कार्य है। मेरे प्रति असीम वात्सल्य के कारण ही माता जी ने उसीको (भरत को) शासन करने की आज्ञा दी। आकाशगंगा को शीघ्र ही पाताल लोक में पहुँचाकर भगीरथ ने पितृगणों को संतृप्त कर दिया था। पुरु ने स्वयं पिता की जरा-नरा स्वीकार कर। ७० —तथा अपना यौवन देकर पिता को सन्तुष्ट कर लिया था और ये दोनों

दु:खिप्पतिनिल्लवकाशं । राघव वाक्यमेवं केट्टु भूपति शोकेन नन्दनन् तन्नोट्टु चौल्लिनान्:- स्त्रीजित नायति कामुकनायौरु राजाधमनाकु मेन्नेयुं वैकाते पाशेन बन्धिच्चु राज्यं ग्रहिक्क त्ती दोषं त्तिनक्कतिनेतुमकप्पेटा; अल्लाय्किलेन्नोट्टु सत्य दोषं पट्टुमल्लो कुमारा ! गुणांबुधे ! राघव ! पृथ्वीपतीन्द्रन् दशरथनुं पुनरित्थं परञ्ञु करञ्ञु तुटङ्ङिनान्—हा राम! हा जगन्नाथ! हा हा! राम! हा राम ! हाहा मम प्राण वल्लभ ! त्तिन्नेप्पिरिञ्ञु पौरु क्कुन्ततेङ्ङने ? ऐन्नेप्पिरिञ्ञु त्ती घोर महावनं तन्निल् गमिक्कुन्नतेङ्ङने नन्दन ! ऐन्नित्तरं पल जाति परकयुं ८० कण्णु त्तीरालोले वार्त्तु करकयुं त्तन्नाय् मुरुके मुरुके तळुकयुं, पिन्ने चुट्टु चुटे दीर्घमाय् वीर्क्कयुं; खिन्ननायौरु पिताविनेक्कण्टुटन् तन्नुटे कय्याल् कुळिर्त्त जलं कौण्टु कण्णुं मुखवुं तुटच्चु रघूत्तमन् । आश्लेष नीति वाग्वैभवाद्यङ्ङळालाश्वसिप्पिच्चान् नयकोविदन् तदा । ऐन्तिनेन् तातन् वृथैव दु:खिक्कुन्न तेन्तौरु दण्डमितिन्नु महीपते ! सत्यत्ते रक्षिच्चु कौळ्वान् अङ्ङळ्क्कु शक्ति पोराय्कयुमिल्लितु रण्टिनुं । सोदरन् त्नाट्टुं

अपने-अपने पिता के प्रसाद से दिव्य बन गये। इस मामूली सी बात की चिन्ता करके मेरे पिता जी को दुखित होने की कोई आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार के वचन सुनकर शोकार्त्त राजा ने अपने पुत्र राघव से कहा—अत्यधिक कामासक्ति के कारण स्त्रीजित मुझ अधम राजा को जल्दी ही पाश से आबद्ध कर तुम राज्य ग्रहण करो, उससे तुम्हें पाप नहीं लगेगा। हे कुमार! हे गुणनिधि ! हे राघव ! अन्यथा मुझसे सत्यदोष होगा। पृथ्वीपति दशरथ इस प्रकार कहते हुए पुकार उठे—हा राम ! हा जगन्नाथ ! हा हा ! राम ! हा राम ! हा हा ! मेरे प्राणवल्लभ ! तुम्हारे वियोग में कैसे जीवित रहूँ। मुझे छोड़कर हे मेरे पुत्र ! तुम कैसे घोर वन में जाओगे ! इस प्रकार कई प्रकार की बातें करने। ८० --अश्रु-धारा बहाते हुए रोने, खूब जोर लगाकर (राम को) आश्लेष करने तथा जल्दी-जल्दी लंबी लंबी आहें भरने लगे। अपने दुखी पिता जी को देखकर राम ने अपने ही हाथों ठंडे जल से उनके नेत्र तथा मुख धो लिया और नीति कुशल राम ने आश्लेष, नीति, वाग्वैभव आदि से राजा को आश्वासन प्रदान किया। हे महीपति ! हे मेरे तात ! आप व्यर्थ क्यों दुखी हो रहे हैं ? इसमें कौन सी कठिनाई है ! सत्य रक्षार्थ इन दोनों (भरत का अभिषेक और राम का वनवास) को निभाने

भरिच्चिरुन्नीटुक सादरं ञानरण्यत्तिलुं वाळुवन्। ओर्क्किलो राज्य
भारं वहिक्कुन्नतिल् सौख्यमेरुं वनत्तिङ्कल् वाणीटुवान्। एतुमे
दण्डमिल्लात कर्म्मं मम मातावेनिक्कु विधिच्चतु नन्नल्लो। मातावु
कौसल्य तन्नेयुं वन्दिच्चु मैथिलियोटुं पऱञ्ञिनि वैकाते ९०
पोवतिन्नाय् वरुन्नेनेन्नरुळ् चेय्तु देवनुं मातृगृहं पुक्कतु नेरं।
धार्मिकयाकिय मातासुसम्मत ब्राह्मणरेक्कोण्टु होम पूजादिकळ्
पुत्राभ्युदयत्तिनाय्क्कोण्टु चेय्यिच्चु वित्तमतीव दानङ्ङळ्
चेय्तादराल् भक्ति कैक्कोण्टु भगवल् पादांबुजं चित्तत्तिल्
नन्नायुऱप्पिच्चिळकाते, नन्नाय् समाधियुऱच्चिरिक्कुन्नेरं चेन्नोरु
पुत्रनेयुं कण्टतिल्लल्लो। अन्तिके चेन्नु कौसल्ययोटन्नेरं सन्तोष-
मोटु सुमित्र चोल्लीटिनाळ्—रामनुपगतनायतु कण्टीले ?
भूमिपाल प्रिये ! तोक्कीटुकेन्नप्पोळ् वन्दिच्चु निल्कुन्न
राम कुमारने मन्देतरं मुरुके प्पुणर्न्नीटिनाळ्। पिन्ने मटियिलिरुत्ति
नेरुकयिल् नन्नाय् मुकर्न्नु मुकर्न्नु कुतूहलाल्। इन्दीवरदल
श्याम कलेबरं मन्दमन्दं तलोटि पऱञ्ञीटिनाळ् १००
ऐन्तेन्मकने ! मुखांबुजं वाटुवान् बन्धमुण्टायतु पारंविशक्कयो ?

के लिए हमारे पास शक्ति की कमी नहीं है। सहोदर को सानंद राज्य शासन सम्भालने दीजिए और मुझे वन में निवास करने के लिए छोड़ दीजिए। सोचें तो राज्यभार सम्भालने की अपेक्षा वन के वास में अधिक सुख मिलेगा। किसी भी प्रकार के दुःख से रहित कर्म की आज्ञा देकर मेरी माता ने अच्छा ही किया। अब तुरन्त ही माता कौसल्या की वंदना करके तथा मैथिली को सूचना देकर। ९० —मैं जाने की तैयारी करूँगा। यह कहकर भगवान (राम) तुरन्त ही मातृगृह को गये। धर्मप्राण माता ने सुसम्मत ब्राह्मणों से पुत्र के अभ्युदय के लिए होम, पूजा आदि करायी, सश्रद्ध भूरि धन दान में दिये। उसके उपरांत भक्ति से अनुप्राणित हो भगवत् चरण कमलों पर अटल ध्यान लगाये समाधिस्थ हो बैठने के कारण उस समय आगत अपने पुत्र को वे देख नहीं पायीं। तब कौसल्या के निकट आ सुमित्रा ने प्रसन्न मुद्रा में पूछा—हे राजा की प्रियतमे ! राम को आते हुए नहीं देखा ? जरा देखो तो सही ! (कौसल्या ने) नमस्कार मुद्रा में खड़े राम को गाढ़ाश्लेष किया और फिर गोद में लेकर कुतूहलवश उनके मस्तक पर बार-बार चुंबन अंकित किया। फिर इन्दीवर के दल के समान श्यामल (राम के) कलेवर पर मंद-मंद हाथ फेरते हुए पूछा। १०० —हे मेरे पुत्र !

वन्निरुन्नीटु भुजिप्पतिन्नाशु नी। ऎन्नु मातावु पऱञ्ञोरनन्तरं वन्न शोकत्तयटक्कि रघुवरन् तन्नुटॆ माताविनोटरुळ् चॆय्तु—इप्पोळ् भुजिप्पानवसरमिल्लम्मे ! क्षिप्रमरण्य वासत्तिन्नु पोकणं। मुल्प्पाटु केकय पुत्रियामम्मक्कु मल्प्पिता रंटुवरं कॊटुत्तीटिनान्। ऒन्नु भरतनॆ वाळिक्कयॆन्नतुमॆन्नॆ वनत्तिन्नयय्क्कॆन्नु मट्टुं। तत्र पतिन्नालु संवत्सरं वसिच्चु वन्नीटुवन् पिन्नॆ ञान् वैकातॆ। सन्तापमेतुं मनस्सिलुण्टाकातॆ सन्तुष्टयाय् वसिच्चीटुक मातावुं। श्रीराम वाक्यमेवं केट्टु कौसल्य पारिल् मोहिच्चु वीणीटिनाळा—कुलाल्। पिन्नॆ मोहं तीर्न्निरुन्नु दुःखार्णवं तन्निल् मुळ्किक्करञ्ञु करञ्ञुटन् ११० तन्नुटॆ नन्दनन् तन्नोटु चॊल्लिनाळिन्नु नी काननत्तिन्नु पोयीटुकिल् ऎन्नेयुं कॊण्टु पोकणं मटियातॆ निन्नॆप्पिरिञ्ञाल् क्षणार्द्धं पॊरुक्कुमो ? दण्डकारण्यत्तिनाशु नी पोकिल् ञान् दण्डधरालयत्तिन्नु पोयीटुवन्। पैतलॆ वेऱिट्टु पोय पशुविनुळ्ळाधि पऱञ्ञऱियिच्चीटरुतल्लो। नाटु वाळेणं भरतनॆन्नाकिल् नी काटु वाळेणमॆन्नुण्टो विधिमतं ? ऎन्तु पिळच्चितु कैकेयियोटु नी ? चिन्तिक्क भूपनोटुं कुमारा !

तुम्हारे मुखारविन्द के मुरझा जाने का क्या कारण है ? क्या खूब भूख लगी है ? तो आ बैठो, तुम्हें शीघ्र खिला देती हूँ। इस प्रकार माता के कहने पर मन में उमड़े शोक को सम्भालकर राम ने अपनी माता जी से कहा—हे माता जी ! अब भोजन के लिए समय नहीं है। शीघ्र ही अरण्यवास के लिए जाना है। पहले केकय पुत्री मेरी माता को पिता जी ने दो वर दिये थे—एक भरत को राजा बनाने का तथा दूसरा मुझे वन भेजने का। (इसलिए) मैं वहाँ चौदह वर्ष बिताकर तुरन्त वापस आ जाऊँगा। हे माता जी ! मन में किसी प्रकार का दुःख लाये बिना आप सन्तुष्ट रहिए। श्रीराम जी का यह कथन सुनकर आकुलतावश कौसल्या भूमि पर मूर्छित हो गिर पड़ीं। फिर मूर्छा हटने पर रो-रोकर दुख-सागर में डूबने लगीं। ११० –(उन्होंने) अपने पुत्र से कहा कि आज अगर तुम कानन को जा रहे हो तो मुझे भी साथ ले चलो, क्या तुमसे वियुक्त हो मैं आधा क्षण भी जीवित रह सकूँगी ? अगर तुम दण्डकारण्य को जाओगे तो मैं दण्डधरालय (मृत्युलोक) में जाऊँगी। बछड़े से वियुक्त गाय का दुःख बोलकर समझाया नहीं जा सकता। भरत को राज्य करना है तो क्या यह भी विधि का अभिमत है कि तुम वन में जा वास करो ? तुमने कैकेई का क्या अहित किया ? हे पुत्र ! जरा सोचो,

बलाल् । तातनुं ञानु मौक्कुं गुरुत्वं कौण्टु भेदं निनक्कु चैट्टिल्लेन्नु निर्णयं । पोकणमेन्नु तातन् नियोगिक्किल् पोकरुतेन्नु चेरुक्कुन्नतुण्टल्लो । ऐन्नुटे वाक्यत्तें लंघिच्चु भूपति तन्नुटे वाचा गमिक्कुन्नताकिलो ञानुमन् प्राणङ्ङळे त्यजिच्चीटुवन् मानव वंशवुमिन्ने मुटिञ्ञु पों । १२० तत्र कौसल्या वचनङ्ङळिङ्ङने चित्त तापेन केट्टोरु सौमित्रियुं शोक रोषङ्ङळ् निऱञ्ञ नेत्राग्निना लोकङ्ङळेल्लां दहिच्चु पोकुं वण्णं राघवन् तन्ने नोक्कि प्पऱञ्ञीटिनानाकुलमेन्तितु कारण मुण्टावान् । भ्रान्त चित्तं जडं वधूजितं शान्तेतरं त्रपाहीनं शठप्रियं बन्धिच्चु तातनेयुं पिन्ने ञान् परि पन्थिकळायुळ्ळवरेयुमोक्कवे अन्तकन् वीट्टिन्नयच्चभिषेक मौरन्तरं कूटाते साधिच्च्यु कोळ्ळुवन् बन्धमिल्लेतु मितिन्नु शोकिप्पतिन्नन्तरम्मुदा वसिच्चीटुक मातावे ! आर्य्यपुत्राभिषेकं कळिच्चीटुवन् शौर्यमेनिक्कतिनुण्टेन्नु निर्णयं कार्य्यमिल्लात्तु चेय्युन्नताकिलाचार्य्यनुं शासनं चेय्केन्नते वरू । इत्थं पऱञ्ञु लोकत्रयं तद्रुषा दग्धमाम्मारु सौमित्रि निल्क्कुन्नेरं १३० मन्द हासं चेय्तु मन्देतरं चैन्नु नन्दिच्चु गाढमायालिगनं चेय्तु

तुमने पिता का क्या अहित किया ? पिता जी तथा मेरे प्रति तुम्हारे मन में निश्चय ही कोई भेदभाव नहीं आ पाया है। अगर (वन में) जाने का आदेश है तो मैं (तुम्हें) जाने से मना करती हूँ। मेरे वचन का उल्लंघन कर अगर राजा अपने वचन पर चलना चाहेंगे तो मैं अपना प्राण छोड़ दूँगी और मानववंश भी आज समाप्त हो जाएगा। १२० कौसल्या के दुःख संतप्त वचनों को सुनते वहाँ खड़े सौमित्र ने, सारे विश्व को दग्ध करने योग्य शोक एवँ रोष से उद्भूत नेत्राग्नि ले राम की ओर देखकर कहा—यहाँ व्याकुल होने की क्या बात है ? भ्रान्त चित्त, जड़, दुर्बल, निर्लज्ज, शठप्रिय एवं वधूजित वृद्ध पिता को बंधितकर तथा उनके सहायक हमारे शत्रुओं को अन्तक (यमराज) के घर भेजकर बिना किसी विघ्न-बाधा के (राम का) अभिषेक पूरा कर दूँगा। मेरे इस कथन में कोई अन्तर नहीं आएगा। आपके दुखी होने की आवश्यकता नहीं है। हे माता जी ! आप सानंद बैठिए। आर्यपुत्र का अभिषेक करने के लिए आवश्यक शौर्य निस्संशय मुझे प्राप्त है। अकार्य करनेवाले आचार्य भी दंड योग्य ही हैं। इस प्रकार कह कर तीनों लोकों को अपने रोष में दग्ध करने के लिए कटिबद्ध खड़े लक्ष्मण को। १३० —सुन्दर विष्णुस्वरूप, आनंदमूर्ति, इन्दिन्दिर (भ्रमर) के सदृश श्यामल विग्रहवाले, इन्दीवराक्ष, इन्द्र आदि देवता वृन्द

सुन्दरनिन्दिरामन्दिर वत्सनानन्दस्वरूपनिन्दिन्दिर विग्रहन् इन्दीवराक्षनिन्द्रादि वृन्दारक वृन्द वन्द्यांघ्रियुग्मारविन्दन् पूर्ण चन्द्र बिम्बानननिन्दु चूडप्रियन् वन्दारु वृन्द मन्दारदारूपमन् वत्स ! सौमित्रे ! कुमार ! नी केळ्क्कणं मत्सराद्यं वेटिञ्ञेन्नुटे वाक्कुकळ्। निन्नुटे तत्वमरिञ्ञिरिक्कुन्नितु मुन्नमे ञानेंटो ! निन्नुळ्ळिलेप्पोळुं ऍन्नेक्कुरिच्चुळ्ळ वात्सल्य पूरवुं निन्नोळमिल्ल मट्टार्क्कुं मेन्नुळ्ळतुं निन्नालसाध्य मायिल्लोरु कर्म्मवुं निर्णय मेङ्किलुमोन्नितु केळ्क्क नी। दृश्यमायुळ्ळोरु राज्य देहादियुं विश्ववुं निश्शेष धान्य धनादियुं सत्य मॆन्नाकिले तल् प्रयासं तव युक्तमतल्लाय्किलॆन्ततिनाल् फलं १४० भोगङ्ङळॆल्लां क्षणप्रभा चञ्चलं वेगेन नष्टमामायस्सुमोर्क्क नी। वह्नि सन्तप्त लोहस्थांबु विन्दुना सन्निभं मर्त्य जन्मं क्षणभंगुरं। चक्षुः श्रवण गळस्थमां दरद्दुरं भक्षणत्तिन्नपेक्षिक्कुन्नतु पोले कालाहीना परिग्रस्तमां लोकवुमालोल चेतसा भोगङ्ङळ् तेटुन्नु। पुत्र मित्रार्त्थ कळत्रादि संगममेत्रयुमल्पकाल स्थितमोर्क्क नी

से सेवित युगल चरण कमलोंवाले, पूर्ण चन्द्र बिम्ब सदृश आननवाले, इन्दुचूड़ (शिव) प्रिय, वन्दित वृन्दों से वेष्टित, मन्दारवृक्ष से उपमित राम ने मंद मुस्कान के साथ मंद-मंद उनके पास आकर गाढालिंगन किया और बताया—हे वत्स ! हे कुमार सौमित्र ! तुम अपने मद मात्सर्य को छोड़कर मेरा कथन सुनो। मैं पहले से तुम्हारे स्वरूप को पहचान चुका हूँ। तुम्हारे हृदय में सदा मेरे प्रति अपार प्रेम भरा हुआ है तथा तुम्हारे समान मेरे प्रति स्नेह और किसी में नहीं है। निश्चय ही तुम्हारे लिए कठिन कोई कर्म नहीं है। फिर भी तुम एक बात सुनो। यह दृश्यमान राज्य, देह, विश्व, समस्त धन-धान्य आदि अगर वास्तविक हैं तो तुम्हारा प्रयत्न (राज्याभिषेक का) उपयुक्त है। अन्यथा उससे क्या लाभ है? १४० समस्त सांसारिक भोग चंचल क्षणप्रभा (बिजली) के समान है और यह मानव का जीवन भी तुरन्त ही नष्ट होनेवाला है, यह तुम सदा ध्यान में रखो। यह मर्त्य-जन्म आग में तप्त लोहे पर पड़े जलबिन्दु के समान क्षणभंगुर है। अपने गले पर चक्षु तथा श्रवणेन्द्रिय को धारण करता मेंढक जिस प्रकार चारे की अपेक्षा करता है वैसे ही अकाल में ही मृत्यु का ग्रास बनता यह संसार चंचल मन हो अपने भोगों के लिए भटकता है। तुम यह स्मरण रखो कि पुत्र, मित्र, पत्नी, धन आदि का संयोग क्षणिक है। रास्ते पर चलते हुए सराय

पान्थर पेँरुवळि यम्पलं तन्निले तान्तरायक्कूटि वियोगं वरुं पोले
नद्यामोँळुकुन्न काष्ठङ्ङळ् पोलेँयुमेँन्नयुं चंचलमालय संगमं।
लक्ष्मियुमस्थिरयल्लो मनुष्यक्कुं निल्क्कुमो यौवनवुं पुनरध्रुवुं
स्वप्न समानं कळत्र सुखं नृणां अल्पमायुस्सुं निरूपिक्क लक्ष्मण!
रागादि संकुलमायुळ्ळ संसारमाका निरूपिक्किल् स्वप्न तुल्यं
सखे! १५० ओक्क गन्धर्व नगर सममतिल् मूर्खन्मारु नित्य
मनुवर्त्तिच्चीटुन्नु आदित्य देवनुदिच्चितु वेगेनयादःपतियिल्
मरुञ्ञितु सत्वरं निद्रयुं वन्नितुदय शैलोपरि विद्रुतं वन्नितु
पिन्नेँयुं भास्करन्। इत्थं मतिभ्रममुळ्ळोरु जन्तुक्कळ् चित्ते
विचारिप्पतिल्ल कालान्तरं। आयुस्सु पोकुन्नतेतुमरिवील माया
समुद्रत्तिल् मुङ्ङिक्किटक्कयाल्। वार्द्धक्य मोट्टु जरा नरयुं
वन्नु चीर्त्त मोहेन मरिक्कुन्नितु चिलर्। नेत्रेन्द्रियं कोँण्टु
कण्टिरिक्केँप्पुनरोर्त्तरि युन्नील मायतन् वैभवं। इप्पोळितु पकल्
पिल्प्पाटु रात्रियुं पिल्प्पाटु पिन्नेँप्पकलु मुण्टाय्वरुं। इप्रकारं
निरूपिच्चु मूढात्माक्कळ् चिल्पुरुषन् गतियेतु मरियातेँ काल
स्वरूपनामीश्वरन् तन्नुटेँ लीला विशेषङ्ङळोँन्नुमोरायक्कयाल्। १६०

में मिलते और बिछुड़ते यात्रियों के समान या नदी की गति में पड़ बहते काष्ठ (लकड़ी) के समान इस आलय (विश्वरूपी घर) का संगम या संयोग चंचल एवं क्षणिक है। यहाँ लक्ष्मी (संपत्ति) अस्थिर है और मनुष्य का चंचल यौवन भी अस्थायी है। हे लक्ष्मण! जरा सोचो तो सही, पत्नी से प्राप्त सुख स्वप्न के समान है और निश्चय ही जीवन अल्पायु है। हे सखा! राग-विकारों से संकुल यह संसार, विचार करने पर स्वप्न के समान है। १५० —इस संसार को गंधर्व नगर समझ लो, जिस पर मूर्ख लोग अनुदिन अनुरक्त होते रहते हैं। (प्रकृति में देखो) सूर्यदेव उदित होकर तुरन्त ही यादःपति (समुद्र) में डूबता है। फिर सो उठकर तुरन्त ही भास्कर (सूर्य) उदयशैल पर आ जाता है। मति-भ्रष्ट जीव मन में इसके सम्बन्ध में सोचते नहीं, माया-समुद्र में डूबे रहने के कारण कालान्तर में वे आयु के व्यतीत होने की बात से अवगत नहीं होते। वार्द्धक्य में जरा-नरा से ग्रस्त हो अपनी आसक्ति लिए लोग मर ही जाते हैं। नेत्रेन्द्रिय से देखे माया-वैभव के सम्बन्ध में वे विचार नहीं करते। अब यह दिन का समय है, फिर रात और रात के बाद दिन आएगा। इस प्रकार विचार करके मूर्ख लोग चित्स्वरूप की गति समझे बिना तथा कालस्वरूप भगवान की लीलाओं से अवगत हुए बिना। १६०

आम कुम्भांबु समानमायुस्सुटन् पोमतेतुं धरिक्कुन्नतिल्लारुमे रोगङ्ङ्ळायुळ्ळ शत्रुक्कळुं वन्नु देहं नशिप्पिक्कुमेवनुं निर्णयं। मृत्युवुं कूटोरु नेरं पिरियातॆ छिद्रवुं पार्त्तु पार्त्तुळ्ळिलिरिक्कुन्नु देहं निमित्त महं बुद्धिकैक्कोण्टु मोहं कलर्न्नुळ्ळ जन्तुक्कळ् निरूपिक्कुं ब्राह्मणोहं नरेन्द्रोहमाढ्योह मॆन्नाम्रेडितं कलर्न्नीटुं दशान्तरे; जन्तुक्कळ् भक्षिच्चु काष्ठिच्चु पोकिलां वॆन्तु वॆण्णीऱायुच्चमञ्ञु पोयीटिलां। मण्णिनु कीऴाय् पोकिलां नन्नल्ल देहं निमित्तं महामोहं। त्वङ्मांस रक्तास्थिविण् मूत्र रेतसां सम्मेळनं पञ्चभूतक निर्म्मितं मायामयमाय् परिणामियॊरु कायं विकारियायुळ्ळॊन्नितु ध्रुवं। देहाभिमानं निमित्तमायुण्टाय मोहेन लोकं दहिप्पिप्पतिन्नु नी १७० मानसतारिल् निरूपिच्चतुं तव ज्ञानमिल्लायकॊन्नऱिक नी लक्ष्मणा ! दोषङ्ङ्ळॊक्कवे देहाभिमानिनां रोषेण वन्नु भविक्कुन्न तोक्कंनी। देहोहमॆन्नुळ्ळ बुद्धि मनुष्यर्क्कु मोह मातावामविद्ययाकुन्नतुं देहमल्लोर्क्किल् ञानायतात्मावॆन्नु मोहैक हन्त्रियायुळ्ळतु विद्यकेळ्। संसार कारिणियायतविद्ययुं संसार

—कूपमण्डूक बन आयु की गति से अनभिज्ञ रहते हैं। सब लोग निस्संदेह रोगादि शत्रुओं के अधीन हो अपने शरीर को नष्ट कर देते हैं। मृत्यु भी कभी साथ छोड़े बिना फँसाने का अवसर ताकती हुई देह में बैठी है। देह के कारण अहंकार को अपनाकर मोहासक्त प्राणी मन ही मन कल्पना करते हैं कि मैं ब्राह्मण हूँ, मैं नरेन्द्र हूं, मैं धनी हूं। इस प्रकार पागल बन शब्दों को दोहराते फिरते समय कभी जानवर आ अपना चारा बना सकते हैं, कभी जलकर स्वयं भस्मीभूत हो सकते हैं, कभी मिट्टी में पड़कर कृमियों में परिवर्तित हो सकते हैं। (इसलिए) देहजनित अहंकार ठीक नहीं है। त्वचा, मांस, रक्त, अस्थि, मज्जा, मूत्र, रेतस का संगम स्थल यह पंचभूत निर्मित शरीर निश्चय ही मायात्मक, परिणामस्वरूप एवं विकारशील है। देहबोध से उत्पन्न मोह के वशीभूत हो तुमने संसार को जलाने। १७० —का जो संकल्प मन में किया, हे लक्ष्मण ! वह भी तत्वज्ञान के अभाव का ही परिणाम है। यह बात तुम समझ लो। देहाभिमान से उद्भूत रोष से सब प्रकार के दोष आ जाते हैं। 'देहोहं' का बोध मनुष्य में मोह की माता अविद्या की उपज है। 'मैं देह नहीं आत्मा हूँ' का विचार मोहनाशक विद्या का स्वरूप समझ लो। संसार का कारणभूत अविद्या है और संसार का नाश करनेवाली विद्या है। इसलिए

नाशिनियायतु विद्ययुं; आकयाल् मोक्षार्त्थियाकिल् विद्याभ्यास-
मेकान्त चेतसा चेय्य वेण्टुन्नतुं। तत्र काम क्रोध लोभ मोहादिकळ्
शत्रुक्कळा कुन्नतेन्नु मद्रिक न्नी। मुक्तिक्कु विघ्नं वरुत्तुवानेत्रयुं
शक्तियुळ्ळीन्नतिल् क्रोधमद्रिक न्नी। माता पितृ भ्रातृ मित्र-
सखिकळे क्रोधं निमित्तं हनिक्कुन्नितु पुमान्। क्रोधमूलं मनस्ताप-
मुण्टाय्वरुं क्रोधमूलं नृणां संसार बन्धनं १८० क्रोधमल्लो
निज कर्म्म क्षयकरं क्रोधं परित्यजिक्केणं बुधजनं। क्रोधमल्लो
यमनायतु निर्ण्णयं वैतरण्याख्ययाकुन्नतु तृष्णयुं; सन्तोष माकुन्नतु
नन्दन वनं सन्ततं शान्तियें काम सुरभिकेळ्। चिन्तिच्चु
शान्तियैतन्ने भजिक्क न्नी सन्तापमेन्नालीरुजातियुं वरा,
देहेन्द्रिय प्राणबुद्ध्यादिकळ्क्केल्लामहन्तमेले वसिप्पतात्मावु केळ्
शुद्ध स्वयं ज्योतिरानन्द पूर्ण्णमाय् तत्त्वार्थमाय् निराकारमाय्
नित्यमाय् निर्विकल्पं परं निर्विकारं घनं सर्वैककारणं सर्व-
जगन्मयं सर्वैक साक्षिणं सर्वज्ञमीश्वरं सर्वदा चेतसि भाविच्चु
कौळ्क न्नी। सारज्ञनाय् न्नी केळ् सुख दुःखदं प्रारब्ध
मेल्लामनुभविच्चीटणं कर्म्मेन्द्रियङ्ङळाल् कर्त्तव्यमोक्कवे
निर्म्मायमाचरिच्चीटुकेन्ने वरू। १९० कर्म्मङ्ङळ् संगङ्ङ-

मोक्षार्थियों को एकान्त मन से विद्या का अभ्यास करना चाहिए। वहाँ पर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि को शत्रु समझ लो। उनमें भी क्रोध मुक्ति के मार्ग पर बाधा उपस्थित करने में अतीव शक्तिशाली है, इस बात से अवगत हो जाओ। मनुष्य इसी क्रोध के वश में पड़कर माता-पिता, भ्राता-मित्र, सखाओं की हत्या कर बैठते हैं। इसी क्रोध से मनस्ताप होता है और निश्चय ही यही क्रोध संसार का बन्धन है। १८०—क्रोध ही हमारे कर्म का नाशक है, इसलिए बुद्धिमान को चाहिए कि क्रोध त्याग दे। निस्संदेह यही क्रोध यमराज है, तृष्णा ही वैतरणी के नाम से अभिहित है। सन्तोष ही नन्दनवन है और निरन्तर शांति को कामधेनु जानो। ध्यानपूर्वक केवल शांति का भजन करने से किसी भी प्रकार का संताप आने नहीं पाता। देहेन्द्रिय, प्राण, बुद्धि आदि सबके परे जो है उसे आत्मा समझ लो। यह आत्मा शुद्ध, स्वयं ज्योति, आनंद-पूर्ण, तत्वार्थपूर्ण, निराकार, नित्य, निर्विकल्प, पर, निर्विकार, सबका कारण, सर्वजगन्मय, सबका साक्षी, सर्वज्ञ एवं ईश्वर है। तुम सर्वदा अपने मन में इस भाव को अपनाते रहो। तुम सारज्ञ बनकर सुख-दुखादि प्रारब्ध का अनुभव करो। माया में विमोहित हुए बिना किसी कर्मेन्द्रियों से अपने

ळोन्निलुं कूटाते कर्म्मफलङ्ङळिल् कांक्षयुं कूटाते कर्म्मङ्ङ-
ळेल्लां विधिच्च वण्ण परब्रह्मणि नित्यं समर्पिच्चु चेय्यणं
निर्म्मलमायुळ्ळोरात्मावु तन्नोटु कर्म्मङ्ङळोन्नुमे पट्टुकयिल्लेन्नाल्।
ज्ञानिप्परञ्ञतेल्लामे धरिच्चु तल् ज्ञानस्वरूपं विचारिच्चु सन्ततं
मानत्तेयोक्के त्यजिच्चु नित्यं परमानन्दमुळ्क्कोण्टु माया
विमोहङ्ङळ् मानसत्तिङ्कल् निन्नाशु कळक नी मानमल्लो
परमापदामास्पदं। सौमित्रि तन्नोटीवण्णमरुळ् चेय्तु सौमुख्य
मोटु मातावोटु चोल्लिनान् केळ्क्कणमम्मे! तेळिञ्ञु नीयेन्नुटे
वाक्कुकळेतुं विषादमुण्टाकोला। आत्माविन्नेतुमे पीडयुण्टा-
क्करुतात्माविनें यरियात्तवरेप्पोले। सर्वलोकङ्ङळिलुं वसिच्चीटुन्न
सर्वजनङ्ङळुं तङ्ङळिल् तङ्ङळिल् २०० सर्वदा कूटि वाळ्के
न्नुळ्ळतिल्लल्लो सर्वज्ञयल्लो जननि! नी केवलं। आशु
पतिन्नालु संवत्सरं वनदेशे वसिच्चु वरुन्नतुमुण्टु
ञान् दुःखङ्ङळेल्लामकलेक्कळञ्ञुटनुळ्क्कनिवोटुमनुग्रहिच्चीटणं।
अच्छनेन्तुळ्ळिलोन्निच्छयेन्नालतिङ्ङिच्छयेन्नङ्ङुरुच्चीटण-
मम्मयुं। भर्त्तृ कर्म्मानुकरणमत्रे पातिव्रत्य निष्ठा वधूनामेन्नु

सारे कर्तव्य करते रहना ही अपेक्षित है। १९० —कर्म-संसर्ग में तल्लीन हुए बिना, कर्मफल की आकांक्षा किये बिना, सारे कर्मों को ईश्वर पर अर्पित करते हुए नित्य यथाविधि करना ही चाहिए। ऐसा करने से निर्मल आत्मा पर इन कर्मों का कोई असर नहीं पड़ेगा। मैंने यह जो कुछ समझाया, उसे समझते हुए, निरंतर अपने स्वरूप का विचार रखते हुए तथा मानाभिमान को मन से त्यागकर नित्य परमानन्द को अपनाते हुए मन से मायात्मक मोह को हटा दो। तुम यह ध्यान में रखो कि मान ही सबसे बड़ा बाधक तत्व है। सौमित्र को यह उपदेश देने के उपरांत सानन्द (राम ने) माता जी से कहा—हे माता जी, आप मेरी बातों पर जरा ध्यान दीजिए। आप मन को मैला न कीजिए, प्रसन्न रखिए। आत्म-ज्ञान से विमुख-जनों के समान आत्मा को पीड़ित होने न दीजिए। सारे संसार में वास करनेवाले सभी लोग परस्पर। २०० —सर्वदा मिल-जुलकर रहें, यह असंभव है। हे माता जी! आप सर्वज्ञा हैं। मैं केवल चौदह वर्ष वन में वास करके तुरन्त आ जानेवाला हूँ। सारे दुखों को दूरकर अनुकंपापूर्वक मुझे आशीर्वाद दें। पिता जी के मन की जो भी अभिलाषा है, उसे आप अपने मन की अभिलाषा मानकर चलें। निश्चय ही पति के कर्मों का अनुसरण करने में ही वधू का पातिव्रत्य धर्म है।

निर्णयं । मातावु मोदालनुवदिच्चीट्टुकिलेतुमे दुःखमेनिक्किल्ल केवलं काननवासं सुखमाय्वरुं तव मानसे खेदं कुरुच्चु वाणीटुकिल् । ऐन्नु परञ्ञु नमस्करिच्चीटिनान् पिन्नेयुं पिन्नेयुं मातृपादान्तिके । प्रीति कैकोण्टेटुत्तुत्संगसीम्नि चेर्त्तादराल् मूर्द्धनि वाष्पभिषेकं चेय्तु चौल्लिनाळाशीर्वचनङ्ङळाशु कौसल्ययुं देवकळोटिरन्नीटिनाळ् २१० सृष्टि कर्त्तावे ! विरिञ्च ! पत्मासन ! पुष्टदयाब्धे ! पुरुषोत्तम ! हरे ! मृत्युञ्जय ! महादेव ! गौरीपते ! वृत्रारि मुम्पाय दिक्पालकन्मारे ! दुर्ग्गे ! भगवती ! दुःख विनाशिनि ! सर्ग्गस्थितिलय-कारिणी ! चण्डिके ! ऐन्मकनाशु नटक्कुन्न नेरवुं कल्मषं तीर्न्निरुन्नीटुन्नु नेरवुं तन्मति केट्टुरङ्ङीटुन्न नेरवुं सम्मोदमान्नु रक्षिच्चीटुविन् निङ्ङळ् । इत्थमर्त्थिच्चु तन् पुत्रनां रामने बद्धबाष्प गाढ गाढं पुणर्न्नुटन् ईरेळु संवत्सरं कानने वसिच्चा-राल् वरिकेन्नानुवदिच्चीटिनाळ् । तल्क्षणे राघवं नत्वा सगद्गदं लक्ष्मणन् तानु परञ्ञाननाकुलं— ऐन्नुळ्ळिलुण्टायिरुन्नोरु संशयं निन्नरुळप्पाटु केट्टु तीर्न्नु तुलों। त्वल्पाद सेवार्त्थमायिन्नटियनुमिप्पोळ्

माता जी की अनुमति मिलने पर मुझे किसी बात का दुःख नहीं रह जाता। आप अपने मन का दुःख दूरकर सुखपूर्वक रहें तो मेरे लिए वनवास सुख-दायक रहेगा। यह कहकर (राम ने) बार-बार माता जी के चरणों पर प्रणाम किया। कौसल्या ने बड़े प्रेम से उन्हें गोद में उठाकर तथा गले से लगाकर मस्तक पर अश्रुधारा से अभिषेक किया, आशीर्वाद दिये और देवगणों से याचना की। २१० —हे सृष्टिकर्त्ता ! हे ब्रह्मा ! हे पद्मासन ! हे अतीव दयानिधि ! हे पुरुषोत्तम ! हे हर ! हे मृत्युंजय ! हे महादेव ! हे पार्वतीपति ! वृत्रारि ! हे दिग्पालक ! हे दुर्गे ! हे भगवती ! हे दुःख विनाशिनी ! सृष्टि स्थिति संहारकारिणी ! हे चंडी ! मेरे पुत्र के (वन में) चलते समय, थककर कहीं बैठते समय, बोधरहित हो सोते समय तुम प्रसन्न हो उनकी रक्षा करें। इस प्रकार (देवगणों से) याचनाकर तथा अश्रुधारा प्रवाहित करते हुए पुनः पुनः गाढ़ाश्लेष कर चौदह वर्ष का वनवास पूरा करके आने की अनुमति दी। तत्क्षण ही राघव का नमनकर लक्ष्मण ने अनाकुल हो गद्गद वाणी में कहा—आपके भगवत् वाक्य श्रवण कर मेरे मन के सारे संदेह मिट गये। आपके पाद-सेवार्थ यह दास भी (वन के) रास्ते पर आपका अनुगमन करना चाहता है। २२० —हे सीतापति ! हे रामचन्द्र ! हे दयानिधि !

वळ्ियये विटकोळ्वनेन्तुमे २२० मोदालतिन्नायनुवदिच्चीटणं सीतापते ! रामचन्द्र ! दयानिधे ! प्राणङ्ङळेक्कळञ्ञी-टुवनल्लाय्किलेणाङ्क वदन ! रघुपते ! ऎङ्किल् नी पोन्नु कोण्टालु मन्नादराल् पङ्कज लोचनन्तानुमरुळ् चेय्तु। वैदेहितन्नोटु यात्र चोल्लीटुवान् मोदेन सीतागृहं पुक्करुळिनान्। आगतनाय भर्त्ताविनेक्कण्टवळ् वेगेन सस्मितमुत्थानवुं चेय्तु काञ्चन पात्रस्थमाय तोयं कोण्टु वाञ्छया तृक्काल् कळुकिच्चु सादरं मन्दाक्षमुळ्क्कोण्टु मन्दस्मितं चेय्तु सुन्दरि मन्दमन्दं पऱञ्ञीटिनाळ् आरुमकम्पटि कूटाते श्रीपाद चारेण वन्नतुमेन्तु कृपानिधे ! वारणवीरनेङ्ङु मम वल्लभ ! गौरातपत्रवुं तालवृन्दादियुं चामरद्वन्द्ववुं वाद्य घोषङ्ङळुं चामीकराभरणाद्यलङ्कारवुं २३० सामन्त भूपालरेयुं पिरिञ्ञति रोमाञ्चमोटेळुन्नळ्ळियतेन्तय्यो ! इत्थं विदेहात्मजा वचनं केट्टु पृथ्वीपति सुतन् तानुमरुळ् चेय्तु— तन्नितु दण्डकारण्य राज्यं मम पुण्यं वरुत्तुवान् तातनऱिकेटो ! ञानतु पालिप्पतिन्नाशु पोकुन्नु मानसे खेद मिळच्चु वाणीटुक। मातावु कौसल्य तन्नेयुं शुश्रूष चेय्तु सुखेन

संतुष्ट हो उसके लिए अनुमति दीजिएगा। हे चन्द्रवदन ! हे रघुपति ! अन्यथा मैं अपना प्राण त्याग करूँगा। कमललोचन (राम) ने कहा कि ऐसी तुम्हारी इच्छा है तो तुम भी साथ चलो। (फिर) वैदेही से बिदा लेने के लिए उनके निवास-स्थान पर पहुंच गये। अपने पति को आये हुए देखकर तुरन्त ही वे मंजु मुस्कान ले उठीं। उन्होंने सादर स्वर्ण कलश के जल से इच्छापूर्वक भगवत्-चरणों का प्रक्षालन किया तथा सलज्ज मंद मुस्कान भरती हुई धीरे-धीरे सुन्दरी (सीता) ने पूछा—हे कृपानिधि, बिना किसी संगी-साथी के तथा पैदल ही आने का क्या कारण है ? हे मेरे स्वामी ! गजवर, श्वेतछत्र, तालवृन्द, चामरद्वय, वाद्यघोष, स्वर्णिम आभूषण एवं अलंकार सब कहाँ हैं ? २३० —सामन्तों भूपालों को छोड़कर पुलकित गात्र (आपके) पधारने का क्या कारण है ? विदेहात्मजा (जानकी) के इस प्रकार के वचन सुनकर पृथ्वीपति के सुत (राम) ने बताया—तुम यह जान लो कि पिता जी ने मेरे पुण्य के लिए मुझे दण्डकारण्य का राज्य दिया है। मैं उसका परिपालन करने तुरन्त जा रहा हूँ, तुम दुःख की कालिमा मन में लाये बिना सानंद यहाँ रहो। हे प्रियतमे ! तुम माता कौसल्या की सेवा-शुश्रूषा करती हुई सुख से रहो। पति के वाक्य सुनकर जानकी ने अत्यन्त पीड़ा से रामचन्द्र जी

वसिक्क नी वल्लभे ! भर्तृ वाक्यं केट्टु जानकियुं रामभद्र
नोटित्थमाहन्त चौल्लीटिनाळ्— रात्रियिल्क्कूटेप्पिरिञ्ञाल्
प्पौरुतोळमास्थयुण्टल्लो भवानें प्पिताविनुं; ऐन्निरिक्के वनराज्यं
तरुवतिनिन्नु तोन्नीटुवानेन्तोरु कारणं ? मन्नवन् तानल्लयो
कौतुकत्तोटुमिन्नलें राज्याभिषेकमारंभिच्चु। सत्यमो चौल्क
भर्त्तावे ! विरवोटु वृत्तान्तमेंत्रयुं चित्र मोर्त्तालिदं ! २४०
ऐन्नतु केट्टरुळ् चैय्तु रघुवरन् तन्वी कुलमौलि मालिके !
केळ्क्क नी मन्नवन् केकय पुत्रियामम्मक्कु मुन्नमे रण्टु वरं
कौटुत्तीटिनान्, विण्णवर् नाट्टिल् सुरासुर युद्धत्तिनन्यून विक्रमं
कैक्कौण्टु पोयनाळ्। औन्नु भरतनें वाळिक्कयेन्नतुमेंन्ने
वनत्तिन्नयक्कॆन्नु मट्टुं। सत्य विरोधं वरुमेन्नु चित्ते निरूपिच्चु
पेटिच्चु तातनुं माताविनाशु वरवुंकौटुत्तितु तातनतुकौण्टु
ञानिन्नु पोकुन्नु। दण्डकारण्ये पतिन्नालु वत्सरं दण्डमौळिञ्ञु
वरुवन् ञान्। नीयतिनेतुं मुटक्कं परुकौल्ला मय्यल्
कळञ्ञु मातावुमाय् वाळ्क नी। राघवनित्थं परञ्ञतु
केट्टीरुराकाशशिमुखि तानुमरुळ् चैय्तु— मुन्निल् नटप्पन्
वनत्तिनु ञान् मम पिन्नालें वेणमेळुन्नळ्ळुवान् भवान् २५०

की ओर देखकर कहा—आपका रात भर के लिए भी वियोग न होने पाये, पिताजी इसका विशेष ध्यान रखते हैं। ऐसी हालत में आपको वन का राज्य देने का कौन-सा कारण है ? पिता जी ने ही तो कल उत्सुकतावश आपके अभिषेक की तैयारी आरंभ की ? हे प्रिय ! क्या आपका कथन सत्य है ? मुझे कृपया बताइये। यह समाचार अत्यन्त विचित्र-सा जान पड़ता है। २४० यह सुनकर रघुवर ने कहा—तन्वियों के कुल की मौलि पर विराजमान मालिका-सम सुन्दरी ! तुम सुनो। राजा ने केकयपुत्री माता जी को पहले स्वर्गलोक में देवासुर संग्राम के समय अतीव विक्रम दिखाने के उपलक्ष्य में दो वर दे दिये थे। प्रथम वर भरत का राज्याभिषेक तथा द्वितीय वर मुझे वनवास देने का (उन्होंने माँगा)। सत्य का विरोध होने के भय से आशंकित हो पिता जी ने माता जी को तुरन्त वर दे दिये। इसलिए आज मैं दण्डकवन को जा रहा हूँ। चौदह वर्ष तक बिना दण्ड के (सुखपूर्वक) वहाँ रहकर मैं वापस आ जाऊँगा। तुम इसके प्रतिकूल कुछ न बोलकर माता जी के साथ दुःख छोड़कर सुखपूर्वक रहो। राघव को इस प्रकार कहते सुनकर राकाशशिमुखी (शरद्कालीन चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाली सीता) ने बताया—मैं वन को आगे-आगे जाऊँगी

ऐन्नेप्पिरिञ्ञु पोकुन्नतुचितमल्लोन्नु कोण्टुं भवानेन्नु धरिक्कणं काकुल्स्थनुं प्रियवादिनियाकिय नागेन्द्रगामिनियोटु चोल्लीटिनान् ऐङ्ङने निन्ने ञान् कोण्टु पोकुन्नतु तिङ्ङि मरङ्ङळ् निरञ्ञ वनङ्ङळिल् ? घोर सिंह व्याघ्र सूकर सैरिभ वारण व्याळ भल्लूक वृकादिकळ् मानुष भोजिकळायुळ्ळ राक्षसर् काननं तन्निल् मट्टुं दुष्ट जन्तुक्कळ् संख्ययिल्लातोळमुण्टवट्टेक्कण्टाल् सङ्कटं पूण्टु भयमां नमुक्केल्लां। नारी जनत्तिनेल्लां विशेषिच्चुमोट्टेरे युण्टां भयमेन्नरिञ्ञीटटो ! मूलफलङ्ङळ् कट्वम्ल कषायङ्ङळ् बाले ! भुजिप्पतिनाकुन्नतुं तत्र निर्म्मल व्यञ्जनापूपान्नपानादि सन्मधु क्षीरङ्ङळिल्लोरु नेरवुं। निम्नोन्नत गुहा गह्वर शर्करादर्म्मार्ग्गमेत्रयुं कण्ठक वृन्दवुं २६० नेरे पेरुवळियुमरियावतल्लारेयुं काण्मानुमिल्लरिञ्ञीटुवान्। दुष्टरायुळ्ळोरु राक्षसरेक्कण्टालोट्टुं पोरुक्कयिल्लाक्कुं मरिकेटो। ऐन्नुटे चोल्लिनाल् मातावु तन्नेयुं नन्नाय् प्परिचरिच्चिङ्ङिरुन्नीटुक। वन्नीटुवन् पतिन्नालु संवत्सरं चेन्नालतिनुटनिल्लोरु संशयं। श्रीराम वाक्कु केट्टोरु वैदेहि-

---

और आपको पीछे-पीछे पधारना चाहिए। २५० आपको यह समझ लेना चाहिए कि किसी भी हालत में मुझे छोड़ आपका जाना उचित नहीं है। काकुत्स्थ (रघुवंश के राजा राम) ने अपनी प्रियवादिनी गजगामिनी (सीता) से कहा—घने वृक्षों से संकुल वनों में मैं तुम्हें कैसे साथ ले चलूँ ! वन में भयंकर सिंह, व्याघ्र, सूकर, भैंसा, वारण (हाथी), व्याल (सर्प), भालू, वृक, मानुषभोजी राक्षस तथा अन्य दुष्ट जानवर असंख्य मात्रा में हैं, जिन्हें देखते ही हमें दुःख एवं भय होने लगता है। तुम यह जान लो कि उन्हें देखकर नारीजन विशेष भयविह्वल एवं आतंकित हो उठती हैं। हे बाले ! वहाँ मूल, फल, कट्वम्ल कषाय ही भोजनार्थ मिलते हैं। एक बार भी सुन्दर व्यंजन, अपूप (गेहूँ आदि की रोटी), अन्न, शहद, क्षीर आदि प्राप्त नहीं होंगे। निम्नोन्नत, गुहा-गह्वरों, कंकड़-पत्थरों, काँटों से भरे मार्ग दुर्गम हैं। २६० —सीधे मार्ग अविदित हैं और पता लगाने के लिए कोई मनुष्य देखने पर भी नहीं मिलेगा। तुम यह समझ लो कि दुष्ट राक्षसों को देखते ही प्राण निकल जाएँगे। (अतः) मेरी बात मानकर माता जी की परिचर्या करती हुई यहीं तुम रहो और मैं भी चौदह वर्ष पूरा होते ही वापस आ जाऊँगा; यह निश्चित बात है। श्रीराम के वचन सुनकर अत्यधिक परिताप से युक्त हो वैदेही

युमारूढ तापेन पिन्नेयुं चौल्लिनाळ्— नाथ ! पतिव्रतयां धर्म्म पत्नि ञानाधारवुमिल्ल मट्टेनिक्कारुमे । एतुमे दोषवुमिल्ल दयानिधे ! पाद शुश्रूषाव्रतं मुटक्कायकमे । निन्नुटे सन्निधौ सन्ततं वाणीटुमेन्ने मट्टार्क्कानुं पीडिच्चु कूटुमो ? वल्लतुं मूल फल जलाहारङ्ङळ् वल्लभोच्छिष्टमेनिक्कमृतोपमं । भर्त्तावु तन्नोटु कूटे नटक्कुम्पोळेवयुं कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ कल्लुं मुळ्ळुं २७० पुष्पास्तरण तुल्यङ्ङळेनिक्कतुं पुष्प बाणोपम ! नी वेटिञ्ञीटोला एतुमे पीडयुण्टाकयिल्लेन् मूलं भीतियुमेतुमेनिक्किल्ल भर्त्तावे ! कश्चिद्द्विजन् ज्योतिश्शास्त्र विशारदन् निश्चयिच्चेन्नोटरुळि चेय्तु भर्त्ताविनोटु वनत्तिल् वसिप्पतिनेत्तुं भवतिक्कु संशयमिल्लेतुं । इत्थं पुरैव ञान् केट्टिरिक्कुन्नतु सत्यमतिन्नियुमोन्नु चौल्लीटुवन् रामायणङ्ङळ् पलतुं कविवररामोदमोटु परञ्ञु केळ्प्पुण्टु ञान् जानकियोटु कूटाते रघुवरन् कानन वासत्तिनेन्नु पोयिट्टुळ्ळू ? उण्टो पुरुषन् प्रकृतियेँ वेर्पिट्टु रण्टुमोन्नत्रे विचारिच्चु काण्किलो पाणिग्रहण मन्त्रार्थवु मोक्कणं प्राणावसान कालत्तुं पिरियुमो ? ऒन्तिरिक्कॆप्पुनरॆन्नेयुपेक्षिच्चु तन्ने वनत्तिनाय्क्कोण्टे-

---

ने फिर कहा—हे स्वामी ! मैं पतिव्रता धर्मपत्नी हूँ । मेरे लिए और कोई आधार नहीं है । हे दयानिधि ! मैं निर्दोष भी हूँ । आपकी चरणसेवा का मेरा व्रत भंग होने न दीजिए । आपके निकट सदा वास करती मुझे क्या कोई डरा सकता है ? प्रियतम के जूठे मूल, फल, जल आदि आहार भी मेरे लिए अमृत तुल्य हैं । प्रियतम के साथ चलते हुए अतीव चिकने एवं तेज नोकदार पत्थर और कण्टक। २७० —हे कंदर्पतुल्य ! मेरे लिए पुष्पास्तरण के समान (सुखदायक) हैं । (इसलिए) आप मुझे न त्याग दीजिए । हे प्रियतम ! न मेरे कारण आपको कुछ कष्ट होगा, न मुझे किसीका भय होगा । ज्योतिषशास्त्र में विशारद एक ब्राह्मण ने शास्त्र देखकर मुझे बताया है कि मुझे प्रियतम के साथ निश्चय ही वनवास करने का अवसर आ पड़ेगा । इस प्रकार पहले से सुने हुए सत्य वचन को आप गलत सिद्ध न कीजिए । मैं और एक बात कहती हूँ कि मैंने कविवरों को सहर्ष रामायणों का पाठ करते सुना है । (उनमें) जानकी के बिना रघुवर कब वनवास के लिए गये हैं ? (यही क्यों) क्या पुरुष प्रकृति से दूर रह सकता है ? विचारपूर्वक देखा जाए तो दोनों एक ही हैं । (फिर) पाणिग्रहण के समय का प्रतिज्ञावचन भी स्मरण रखना होगा, क्या आप प्राणान्त के समय भी मुझसे पृथक् हो सकते हैं ? इन बातों के रहते

ळुन्नॆळ्ळुकिल् २८० ऒन्तिुमॆन् प्राण परित्यागवुं चॆय्वनिन्नु तन्ने निश्तिरुवटि तन्नाण। ऎन्निङ्ङनॆ देवि चॊन्नतु केट्टॊरु मन्नवन् मन्दस्मितं पूण्टरुळ् चॆय्तु— ऎङ्किलो वल्लभे! पोरिक वैकाते सङ्कटमिन्नितु चॊल्लियुण्टाकेण्टा, दानमरुन्धतिक्का-य्क्कॊण्टु चॆय्क नी जानकी! हारादि भूषणमॊक्कवे। इत्थ मरुळ् चॆय्तु लक्ष्मणन् तन्नोटु पृथ्वीसुरोत्तमन्मारॆ वरुत्तुकॆ-न्नत्यादरमरुळ् चॆय्तन्नेरं द्विजेन्द्रोत्तमन्मारॆ वरुत्ति कुमारनुं। वस्त्रङ्ङलाभरणङ्ङळ् पशुक्कळुमर्थमवधियिल्लातोळमादराळ् सद्वृत्तराय्क्कुल शील गुणङ्ङळालुत्तमन्माराय्क्कुटुंबिकळाकिय वेद विज्ञानिकळां द्विजेन्द्रन्मार्क्कु सादरं दानङ्ङळ् चॆय्तु बहु-विधं; मातावु तन्नुटॆ सेवकन्माराय भूदेव सत्तमन्मार्क्कुं कॊटुत्तितु २९० पिन्ने निजान्तःपुर वासिकळ्क्कुं मट्टुयरां सेवकन्मार्क्कुं बहुविधं दानङ्ङळ् चॆय्कयालानंदमग्नराय् मानव नायकनाशीर्वचनवुं चॆय्तितु तापसन्मारुं द्विजन्मारुं पॆय्तु पॆय्ती-टुन्नितश्रुजलङ्ङळुं। जानकी देवियुमन्पोटरुन्धतिक्कानंद मुळ्क्कॊण्टु दानङ्ङळ् नल्किनाळ्। लक्ष्मण वीरन् सुमित्रयामम्मयॆ तल्क्षणे कौसल्य कय्यिल् समर्पिच्चु वन्दिच्च नेरं सुमित्रयुं

हुए भी मुझे (यहाँ) छोड़ अगर आप अकेले वन चले जाएँगे। २८० —तो आपकी कसम खाकर कहती हूँ, मैं आज ही निस्संदेह अपने प्राण त्याग दूँगी। इस प्रकार देवी के कहने पर राजा (राम) ने मंदस्मिति के साथ बताया—अगर ऐसी बात है तो हे प्रियतमे! तुरन्त ही आने की तैयारी करो। आगे इस बात को लेकर दुखी होना नहीं। हे जानकी! तुम अरुन्धती के लिए हार आदि सभी आभूषण दानार्पण करो। यह कहकर लक्ष्मण को आदेश दिया कि ब्राह्मण श्रेष्ठों को सादर बुलाया जाए। तभी कुमार श्रेष्ठ ब्राह्मणों को बुला लाये। फिर सद्वृत्त, कुल-शील उत्तम गुणवाले, कुटुंबी वेदज्ञानी ब्राह्मण श्रेष्ठों को अपरिमेय वस्त्र, आभूषण, गौएँ, धन आदि सादर दान में दिये गये। माता के सेवक भूदेव सत्तमों को भी अत्यधिक दान से संतुष्ट किया गया। २९० फिर अपने अन्तःपुर के तथा अन्य सेवकों को नाना प्रकार के दान दिये जाने पर प्रसन्न हो (उन्होंने) मानव-नायक (राम) को कई प्रकार के आशीर्वाद दिये तथा तापस और द्विज लोग बार-बार अश्रुजल बहाने लगे। जानकी ने भी सानंद अरुन्धती को खूब दान दिये। तत्क्षण ही वीर लक्ष्मण ने माता सुमित्रा को कौसल्या जी के हाथ में समर्पित कर प्रणाम किया और तब

पुत्रनें नन्दिच्चेंट्टु समाश्लेषवुं चेंय्तु। तन्नायनुग्रहं चेंय्तु तनयनु पिन्नेंयुपदेश वाक्कुमरुळ् चेंय्ताळ्— अग्रजन तन्नेंप्परि-चरिच्चेंप्पोंळुमग्रे ऩटन्तु कोंळ्ळेणं पिरियातें। रामनें नित्यं दशरथनेंन्तुळ्ळिलामोदमोटु निरूपिच्चु कोंळ्ळणं ॲन्नेंज्जन-कात्मजयेंन्तुरुच्चु कोंळ् पिन्नेंययोद्ध्ययेंन्तोर्त्तीटटवियें ३०० माया-विहीनमीवण्ण मुरप्पिच्चु पोयालुमेंङ्किल् सुखमाय्वरिकते मातृ वचनं शिरसि धरिच्चु कोंण्टादर वोटु तोंळुतु सौमित्रियुं तन्तुटें चाप शरादिकळ् कैक्कोंण्टु चेंन्नु रामान्तिके ऩिन्नु वणङ्ङिनान्। तल्क्षणे राघवन् जानकि तन्नोटुं लक्ष्मणनोटुं जनकनें वन्दिप्पान् पोकुन्न नेरत्तु पौरजनङ्ङळें रागमोटे कटाक्षिच्चु कुतूहलाल् कोमळनाय कुमारन् मनोहरन् श्यामळ रम्य कळेबरन् राघवन् कामदेवोपमन कामदन् सुन्दरन् रामन् तिरुवटि नाना जगदभि—रामनात्मारामनंबुज लोचनन् कामारि सेवितन् नाना जगन्मयन् तातालयं प्रति पोकुन्न नेरत्तु सादं कलर्न्नोरु पौरजनङ्ङळुं पाद चारेण ऩटक्कुन्ततु कण्टु खेदं कलर्न्नु परस्परं चोंल्लिनार ३१० कष्टमाहन्त! कष्टं! पश्य पश्यहा! कष्टमेंन्तिङ्ङनें वन्नतु दैवमे! सोदरनोटुं

सुमित्रा ने प्रसन्न हो पुत्र को आश्लेष किया। खूब अनुग्रह वचन देकर उन्होंने पुत्र को उपदेश के वचन सुनाये—ज्येष्ठ भ्राता की सदा परिचर्या करते हुए निर्विघ्न आगे-आगे बढ़ते रहो। सदा मन में राम को दशरथ तुल्य समझना चाहिए। जनकात्मजा (सीता) को मेरे जैसे तथा अरण्य को अयोध्या मानकर चलो। ३०० इस प्रकार मन में दृढ़ निश्चय लेकर निष्कपट भाव से जाने पर सुख प्राप्त होगा। माता के वचन आदरपूर्वक शिरसा स्वीकारकर लक्ष्मण ने प्रणाम किया; और (फिर) अपने शर-चाप हाथ में ले राम के समीप पहुँच उनकी वन्दना की। तुरन्त ही लक्ष्मण और सीता को साथ लेकर दशरथ की वन्दना करने जाते हुए राम ने कुतूहलवश पुरवासियों की ओर प्रेमपूर्वक देखा। श्यामल रम्य कलेवर वाले, कामतुल्य सौन्दर्यशाली, कामनापूर्ति करनेवाले सुन्दर स्वरूप, जगत् के लिए अभिकाम्य, कमल जैसे नेत्रवाले, शिव से सेवित, नाना जगन्मय एवं अपने सौन्दर्य से मन को मोहित करनेवाले कुमार राम को पैदल ही पिता के महल की ओर चलते हुए देखकर दुखार्त पौरजनों ने करुणापूरित वाणी में परस्पर कहा—३१० अतीव कष्ट है! अतीव कष्ट है! हा देखो देखो! हे दैव! ऐसा कष्ट क्यों हुआ? भाई तथा पत्नी के साथ बिना किसी

प्रणयिनि तन्नॊटुं पाद चारेण सहायवुं कूटात शर्करा कण्टक निम्नोन्नतयुत दुर्घटमायुळ्ळ दुर्गं मार्ग्गङ्ङळिल् रक्त पत्मत्तिनु काठिन्यमेकुन्न मुग्ध मृदुतर स्निग्ध पादङ्ङळाल् नित्यं वनान्ते नटक्कॆन्नु कल्पिच्च पृथ्वीशचित्तं कठोरमत्रे तुलों। पुत्र वात्सल्यं दशरथन् तन्नोळं मर्त्यरिलाक्कुंमिल्लिन्नलॆयोळवु इन्नितु तोन्नुवानॆन्तॊरु कारणमॆन्नतु केट्टुटन् चॊल्लिनान्यनुं केकय पुत्रिक्कु रण्टु वरं नृपनेकिनान् पोलतु कारणं राघवन् पोकुन्नितु वनत्तिन्नु भरतनुं वाळ्कॆन्नु वन्नुकूटुं धरामण्डलं। पोकनामॆङ्किल् वनत्तिन्नु कूटवे राघवन् तन्नॆप्पिरिञ्ञाल् प्पॊरुक्कुमो। ३२० इप्रकारं पुरवासिकळायुळ्ळ विप्रादिकळ् वाक्कु केट्टॊरनन्तरं वामदेवन् पुरवासिकळ् तम्मोटु सामोदमेवमरुळ् चॆय्तितन्नेरं :—३२२

राम सीता रहस्यं

रामनॆच्चिन्तिच्चु दुःखियाय्कारुमे कोमळ गात्रियां जानकि मूलवुं, तत्त्वमायुळ्ळतु चॊल्लुन्नतुण्टु ञान् चित्तं तॆळिञ्ञु केट्टीटुवनेवरु। रामनाकुन्नतु साक्षाल् महाविष्णु तामर साक्षना-

---

सहायक के कण्टकों एवं कंकड़ों से परिपूर्ण एवं निम्नोन्नत कठोर दुर्गम मार्गों से युक्त वन में नित्य ही रक्तकमल समान मोहक, मृदुल एवं स्निग्ध पादों से पैदल ही घूमने का आदेश देनेवाले महाराजा का मन कितना कठोर है! कल तक राजा दशरथ के समान पुत्र वात्सल्य किसी मर्त्य में नहीं देखा गया था, किन्तु आज ऐसा भाव धारण करने का क्या कारण हुआ? यह सुनकर दूसरे ने कहा—राजा ने कैकयपुत्री को दो वर दिये हैं, जिसमें एक के अनुसार राघव वन को जा रहे हैं और दूसरे के अनुसार भरत को पृथ्वीमंडल का शासन भार संभालना पड़ेगा। ऐसी बात है तो हम भी वन जाएँगे क्योंकि राघव से बिछुड़कर हम कैसे जी सकेंगे? ३२० नगरवासी विप्रों के इस प्रकार कथन सुनने के उपरांत वामदेव ने नगरवासियों से इस प्रकार सानन्द बताया :—३२२

राम-सीता का रहस्य

राम तथा कोमलगात्री जानकी के संबंध में सोचकर कोई दुखी न हो। मैं उनके वास्तविक स्वरूप का परिचय दूँगा, आप लोग मन का विषाद दूर कर सुनें। राम साक्षात् महाविष्णु, परमेश्वर या आदि

मादि नारायणन् लक्ष्मणनायतनन्तन् जनकजा लक्ष्मी भगवति लोकमाया परा; माया गुणङ्ङळेत्तानवलंबिच्चु काय भेदं धरिक्कुन्निताात्मा परन्। राजसमाय गुणत्तोटु कूटवे राजीव-संभवनाय् प्रपञ्च द्वयं व्यक्तमाय् सृष्टिच्चु सत्व प्रधानना‌य् भक्त परायणन् विश्वरूपं पूण्टु नित्यवुं रक्षिच्चु कोळ्ळुन्न-तीश्वरनाद्यनजन् परमात्मावु सादरं। रुद्र वेषत्ताल् तमोगुण युक्तनायद्रिजा वल्लभन् संहरिक्कुन्नतुं वैवस्वत मनु भक्ति प्रसन्ननाय् देवन् मकरावतारमनुष्ठिच्चु। १० वेदङ्ङळल्लां हयग्रीवनेक्कोन्नु वेधाविनाक्किक्कोटुत्तती राघवन्। पाथो निधि-मथने पण्टु मन्दरं पाताळ लोकं प्रवेशिच्चतु नेरं निष्ठुर मायोरु कूर्म्माकृति पूण्टु पृष्ठे गिरीन्द्रं धरिच्चतीराघवन्। दुष्टनायोरु हिरण्याक्षनेक्कोन्नु घृष्टियाय् तेट्मेल् क्षोणियेप्पोङ्ङिच्चु कारण वारिधि तन्निल्क्कळिच्चतुं कारणपूरुषनाकुमी राघवन्। निर्ह्लादमोटु नरसिंह रूपमाय् प्रह्लादनेप्परिपालिच्चु कोळ्ळुवान् क्रूरङ्ङळाय नखरङ्ङळेक्कोण्टु घोरनायोरु हिरण्यकशिपुतन् वक्षः प्रदेश प्रपाटनं चेय्ततुं रक्षा चतुरनां लक्ष्मीवरनिवन्। पुत्र लाभार्त्थमदितियुं भक्ति पूण्टर्त्थिच्चु

नारायण हैं, लक्ष्मण अनन्त (के अवतार) और जानकी पराभाया स्वरूपिणी भगवती लक्ष्मी हैं। परमात्मा ही मायात्मक गुणों का अवलंब लेकर नाना शरीर धारण करते हैं। राजसगुण को अपनाकर ब्रह्मारूप में प्रपंचद्वय की प्रत्यक्ष सृष्टि की; अनाद्य, अज, परमात्मा, ईश्वर जो भक्त परायण एवं सत्वप्रधान हैं, विश्वरूप धारण करके नित्य ही (सृष्टि की) रक्षा करते हैं। वे ही गिरिजापति (पार्वतीपति) तमोगुण से युक्त हो रुद्रवेष अपनाकर (संसार का) संहार करते हैं। उन्हीं भगवान ने वैवस्वत मनु की भक्ति से प्रसन्न हो मत्स्यावतार लिया। १० ये ही वे राघव हैं जिन्होंने हयग्रीव का वधकर सारे वेद ब्रह्मा को दिला दिये थे। पहले समुद्र-मंथन के समय मन्दर पर्वत के पाताललोक में प्रवेश करने पर निष्ठुर कूर्माकार धारणकर पर्वत को पृष्ठ पर धारण करनेवाले ये ही राघव थे। ये ही वे कारण-पुरुष राघव हैं जो दुष्ट हिरण्याक्ष का वध कर वाराह दंष्ट्रा पर पृथ्वी को ऊपर उठाकर कारणवारि (सृष्टि के प्रारम्भ का जल) में खेलते रहे। अपने भक्त की रक्षा में अतीव समर्थ लक्ष्मीपति ये ही राघव हैं जिन्होंने प्रह्लाद की रक्षा करने हेतु घोर गर्जना करते हुए नृसिंह रूप में अवतीर्ण हो भयंकर हिरण्यकशिप के वक्षःस्थल

सादरमर्च्चिचक्क कारणं अँत्रयुं कारुण्यमोटवळ् तन्नुटे पुत्र-नायिन्द्रानुजनाय् पिऱन्नति २० भक्तनायोरु महाबलियोटु चेन्नर्त्थिच्चु मून्नटियाक्कि जगत्त्रयं सत्वरंवाङ्ङि मरुत्वानु नल्किय भक्तप्रियनां त्रिविक्रमनुमिवन्। धात्रीसुर द्वेषिकळाय् जनिच्चोरु धात्रीपति कुलनाशं वरुत्तुवान् धात्रियिल् भार्ग्गवनायि प्पिऱन्नतुं धात्रीवरनाय राघवनामिवन्। धात्रियिलिप्पोळ् दशरथ पुत्रनाय् धात्रीसुतावरनाय् पिऱन्नीटिनान्, रात्रिञ्चर कुलमोक्के नशिप्पिच्चु धात्रिभारं तीर्त्तु धर्म्मत्ते रक्षिप्पान् आद्य-नजन् परमात्मा परापरन् वेद्यनल्लात वेदान्तवेद्यन् परन् नारायणन् पुरुषोत्तमनव्ययन् कारणमानुषन् रामन् मनोहरन् रावण निग्रहार्त्थं विपिनत्तिनु देवहितार्त्थं गमिक्कुन्नतिन्नतिन् कारणं मंथरयल्ल कैकेयियल्लारुं भ्रमिक्काय्क राजावु-मल्लल्लो। ३० विष्णु भगवान् जगन्मयन् माधवन् विष्णु महामाया देवि जनकजा सृष्टि स्थितिलय कारिणि तन्नोटुं पुष्ट प्रमोदं पुऱप्पेट्टितिन्निप्पोळ्। इन्नले नारदन् वन्नु चोन्नानवन् तन्नोटु राघवन् तानुमरुळ् चेय्तु। नक्तञ्चरान्वय निग्रहत्तिन्नु

को अपने प्रचण्ड नखों से विदीर्ण कर दिया था। पुत्र लाभार्थ अदिति के द्वारा भक्तिपूर्वक यथाविधि अर्चना करने पर अत्यधिक कारुण्य से उसके पुत्र रूप में इन्द्रानुज (वामन) के नाम से जन्म लेकर। २० —भक्त महाबलि से माँगकर त्रिलोक को तीन कदमों में नाप लेकर इन्द्र को प्रदान करनेवाले भक्तप्रिय त्रिविक्रम (महाविष्णु) भी ये ही हैं। धात्रीसुर (ब्राह्मण) विद्रोही बन पैदा हुए धात्रीपति (क्षत्रिय) के कुल नाश के लिए धात्री (भूमि) पर भार्गव रूप में अवतीर्ण धात्रीवर (ईश्वर) ये ही राघव हैं। अब ये रात्रिचर (राक्षस) वंश का नाशकर धात्री (भूमि) का भार दूरकर धर्म की रक्षा करने के लिए धात्री (भूमि) पर दशरथ-पुत्र तथा धात्रीसुता (सीता) के वर के रूप में अवतार ले चुके हैं। ये मनोहर राम आद्य, अज, परमात्मा, परापर, वेद्य न होते हुए भी वेदान्त वेद्य, पर, नारायण, पुरुषोत्तम, अव्यय, कारण-मानुष हैं। ये देवताओं के कार्यार्थ रावण का वध करने विपिन को जा रहे हैं। आप लोग भ्रम में न पड़ें, उसके लिए न कारण मंथरा है, न कैकेयी है न राजा ही हैं। ३० सृष्टि, स्थिति एवं लय के लिए कारण स्वरूपिणी महामाया देवी जानकी के साथ जगन्मय, माधव भगवान विष्णु बड़े हर्षोत्साह के साथ उसके लिए (रावण के वध के लिए) अभी निकले हैं। कल नारद ने आकर

ञान् व्यक्तं वनत्तिनु ताळॆंप्पुरप्पॆट्टुं ऎन्नतु मूलं गमिक्कुन्नु राघवनिन्नु विषादं कळविनॆल्लावरुं। रामनॆच्चिन्तिच्चु दुःखि-यायकारुमे राम रामेति जपिप्पिनॆल्लावरुं। नित्यवुं राम रामेति जपिक्कुन्न मर्त्यनु मृत्यु भयादिकळॊन्नुमे सिद्धिक्कयिल्लतेयल्ल कैवल्यवुं सिद्धिक्कुमेवनुमॆन्नुतु निर्णयं। दुःख सौख्यादि विकल्पङ्ङळिल्लात निष्कळन् निर्गुणात्मा रघुसत्तमन् न्यूनातिरेक विहीनन् निरञ्जननानन्दपूर्णनन्तननाकुलन् ४० अङ्ङनॆयुळ्ळ भगवल् स्वरूपत्तिनॆङ्ङनॆ दुःखादि संभविच्चीटुन्नु? भक्त जनानां भजनार्त्थमायवन्नु भवतप्रियन् पिरन्नीटिनान् भूतले पंक्ति रथाभीष्ट सिद्ध्यर्त्थमायवन्नु पंक्ति कंठन् तन्नॆक्कॊन्नु जगत्त्रयं पालिप्पतिन्नायवतरिच्चीटिनान् बालिशन्मारे! मनुष्य नायीश्वरन्। राम सीता रहस्यं मुहुरीदृशमामोद पूर्वकं ध्यानिप्पवर्क्कॆल्लां रामदेवङ्कलुरच्चोरु भक्तियुमामय नाशवुं सिद्धिक्कुमेवनुं। गोपनीयं रहस्यं परमीदृशं पाप विनाशनं चॊन्नतिन् कारणं राम प्रियन्मार् भवान्मारॆन्नोर्त्तु ञान् राम तत्त्वं परमोपदेशं चॆय्तु। रामविषयमीवण्णमरुळ् चॆय्तु वाम-

---

स्मरण दिलाया था तो राम ने उनसे कहा था कि नक्तञ्चरान्वय (राक्षस वंश) के निग्रह के लिए मैं कल निश्चित रूप से जाऊँगा। इसी कारण आज राघव जा रहे हैं, आप सब अपना दुःख त्याग दीजिए। सब लोग राम के प्रति अपना दुःख दूरकर 'राम राम' का जप कीजिए। राम राम का नित्य जाप करनेवाले मर्त्य को मृत्यु का भय तो होगा नहीं, यही नहीं सबको कैवल्य भी प्राप्त होगा। इस बात में कोई संदेह नहीं। रघुसत्तम सुख-दुःख आदि विकल्पों से रहित, निष्कल, निर्गुणात्मा, न्यूनातिरेक विहीन, निरंजन, आनंदपूर्ण, अनन्त एवं अनाकुल हैं। ४० ऐसे भगवत्-स्वरूप को दुःख आदि का कैसे अनुभव हो सकता है? भक्त-प्रिय (भगवान) ने भक्तजनों के भजनार्थ भूतल पर जन्म लिया। हे बालिश स्वभाववाले! ईश्वर ने पंक्तिरथ (दशरथ) के अभीष्ट की सिद्धि के लिए तथा पंक्तिकंठ (रावण) का वधकर तीनों लोकों का पालन करने के लिए मनुष्य के रूप में अवतार धारण किया। राम-सीता के इस रहस्य का बार-बार प्रसन्नतापूर्वक ध्यान करनेवाले सबको रामदेव के प्रति अटूट भक्ति और दुःख-नाश की सिद्धि मिलेगी। (राम-सीता का) ईदृश परम रहस्य गोपनीय है। आपको राम के प्रति अपार भक्त समझकर पापनाशक इस रामतत्व का मैंने उपदेश किया। वामदेव के द्वारा राम

देवन् विरमिच्चोरनन्तरं वामदेव वचनामृतं सेविच्चु रामनै नारायणनेन्नरिञ्ञुटन् ५० पौरजनं परमानंदमायोरु वाराब्धि-धियिल् मुळ्किनारेवरुं । तापवुं तीर्न्नितु पौरजनङ्ङळ्क्कु तापस श्रेष्ठनुं मोदालेळुन्नळिळ । ५२

वनयात्र

राघवन् तातगेहं प्रवेशिच्चुटन् व्याकुलहीनं वणङ्ङियरुळ् चेय्तु कैकेयियाकिय मातावु तन्नोटु शोकं कळञ्ञालुमम्मे ! मनसिते । सौमित्रियुं जनकात्मजयुं ञानुं सौमुख्यमान्नु पोवानाय् प्पुरप्पेट्टु खेदमकलेक्कळञ्ञिनि अङ्ङळेत्तातनाज्ञापिक्क वेण्टतु वैकाते । इष्ट वाक्यं केट्टु कैकेयि सादरं पेट्टेन्नेळुन्नेट्टिरुन्नु ससंभ्रमं । श्रीरामनुं मैथिलिक्कुमनुजनुं चीरङ्ङळ् वेव्वेरे नल्किनाळम्मयुं । धन्य वस्त्रङ्ङळुपेक्षिच्चु राघवन् वन्य चीरङ्ङळ् धरिच्चीटिनान् । पुष्करलोचनानुज्ञया वल्कलं लक्ष्मणन् तानुमुट्टुत्तानतु नेरं । लक्ष्मी भगवतियाकिय जानकि वल्कलं कैयिल् पिटिच्चु कोण्टाकुलाल् पक्षमेन्तुळ्ळिळलेन्नुळ्ळतरिवानाय्

तत्व का उपदेश समाप्त किये जाने पर, वामदेव के वचनामृत का सेवन कर, राम को नारायण रूप में समझ लेने पर । ५० —सारे पौरजन परमानंद रूपी पारावार में निमग्न हुए और उनका सारा संताप दूर हुआ । तापस श्रेष्ठ भी सानंद चले गये । ५२

वन-यात्रा

राघव ने पितृगृह में प्रविष्ट हो माता कैकेई को प्रणामकर, व्याकुल रहित हो कहा—हे माता जी, मन का दुःख त्याग दीजिए । सौमित्र, जनकात्मजा और मैं (वन में) जाने के लिए सुखपूर्वक निकला हूँ । अब बिना देरी किये, मन का सन्ताप दूरकर पिता जी हमें आज्ञा दें, इतना ही पर्याप्त है । मन-पसन्द वाक्य सुनकर प्रसन्न-चित्त हो कैकेई कौतूहलवश तुरन्त उठ बैठी । श्रीराम, मैथिली और अनुज को माता (कैकेई) ने अलग-अलग चीर (वस्त्र) पहनने को दिये । अपने उत्तम वस्त्र उतारकर राम ने वन्य चीर (वनवास के लिए दिये वस्त्र) पहन लिये । फिर पुष्करलोचन (राम) की आज्ञा पाकर उसी समय लक्ष्मण ने भी वल्कल धारण किया । भगवती लक्ष्मी स्वरूपिणी जानकी ने वल्कल अपने हाथ में ले, तत्क्षण ही आकुल एवं सलज्ज भाव से, प्रियतम

तल्क्षणे लज्जया भर्तृ मुखांबुजं १० गूढमाय् नोक्किनाळेङ्ङने ञानितु गाढमेंटुक्कुन्नतेंन्तुळ्ळ चिन्तया। मंगल देवता वल्लभन् राघवनिंगितज्ञन् तदा वाङ्ङिप्परुषमां वल्क्कलं दिव्यांबरोपरि वेष्टिच्चु सल्क्कारमानं कलर्न्नु निन्नीटिनान्। अन्नतु कण्टोरु राजदारङ्ङळुमन्यरायुळ्ळ जनङ्ङळुमोक्कवे वन्न दुःखत्ताल् करयुन्नतु केट्टु निन्नरुळीटुं वसिष्ठ महामुनि कोपेन भर्त्सिच्चु कैकेयि तन्नोटु तापेन चोल्लिनानेंत्तितु तोन्नुवान् दुष्टे ! निशाचरी ! दुर्वृत्त मानसे ! कष्टमोर्त्तोळं कठोरशीले ! वरत्ते खले ! रामन् वनत्तिन्नु पोकणमेंन्नल्लो तामसशीले ! वरत्ते वरिच्चु नी। जानकि देविक्कु वल्कलं नल्कुवान् मानसे तोन्नियतेंन्तोरु कारणं ? भक्त्या पतिव्रतयायोरु जानकि भर्त्ता-विनोटु कूटे प्रयाणं चेय्किल् २० सर्वाभरण विभूषित गात्रियाय् दिव्यांबरं पूण्टनुगमिच्चीटुक कानन दुःख निवारणार्त्थं पति मानसवुं रमिप्पिच्चु सदाकालं भर्तृ शुश्रूषयुं चेय्तु पिरियाते चित्त शुद्ध्या चरिच्चीटुकेंन्ने वरू। इत्थं वसिष्ठोक्ति केट्टु दशरथन् नत्वा सुमन्त्ररोटेवमरुळ् चेय्तु— राजयोग्यं रथ-

के हृदयगत भाव का अन्दाज लगाने के उद्देश्य से उनके मुख-कमल। १० —की ओर ऐसी गूढ़ दृष्टि से देखा मानो वह पूछ रही थी कि ऐसे भारी वस्त्र को मैं कैसे पहन लूँ। संकेत को पहचानकर मंगलदेवता (सीता) के वल्लभ राघव ने तुरन्त ही कठोर वल्कल को उनके हाथ से ले उनके दिव्यांबरों (दिव्य वस्त्रों) के ऊपर पहना लिया और सत्कारपूर्वक स्वाभिमान के साथ खड़े हो गये। यह देखकर राज दरबार की स्त्रियों तथा अन्य जनों को दुखार्त हो रोते हुए सुनकर वहाँ खड़े महामुनि वसिष्ठ ने कोपाकुल हो कैकेई की भर्त्सना करते हुए तथा अत्यधिक ताप का अनुभव करते हुए पूछा—हे दुष्टे, हे निशाचरी, हे मन से दुर्वृत्त ! हे कठोरशीले ! हे खले ! पाप है, पाप है ! तुम्हें ऐसा क्यों सूझा ? हे तामसशीले ! तुमने राम के वनगमन का वर माँगा ! देवी जानकी को वल्कल देने की तुम्हारे मन में इच्छा कैसे हुई ? पतिव्रता जानकी भक्तिपूर्वक अपने पति के साथ अगर प्रयाण करती हैं। २० —तो सर्वा-भरणों से विभूषिता हो तथा दिव्यवस्त्रों से समालंकृता हो पति का अनुगमन करके सदाकाल पति के वनवास दुःख को निवारण करने के लिए, चित्त शुद्धि के साथ उनकी शुश्रूषा करते हुए, साथ रहकर उनके मन को प्रसन्न रखना मात्र उन्हें पर्याप्त है। वसिष्ठ के इस कथन को सुनकर

माशु वरुत्तुक राजीवनेत्र प्रयाणाय सत्वरं। इत्थमुक्त्वा राम वक्त्रांबुजं पार्त्तु पुत्र ! हा ! राम ! सौमित्रे ! जनकजे ! राम ! राम ! त्रिलोकाभिरामांग ! हा ! हा ! मम प्राण समान ! मनोहर ! दुःखिच्चु भूमियिल् वीणु दशरथनुळ्क्काम्पळिञ्ञु करयुन्नतु नेरं तेरुमौरुमिच्चु निर्त्ति सुमंत्ररुं श्रीराम देवनुमप्पोळरुळ् चेय्तु— तेरिल्क्करेरुक सीते ! विरविल् नी नेरमिनि कळञ्ञीटरुतेतुमे। ३० सुन्दरि वन्दिच्चु तेरिल्क्करेरिनाळिन्दिरा वल्लभनाकिय रामनुं मानसे खेदं कळञ्ञु जनकनें वीणु वणङ्ङि प्रदक्षिणवुं चेय्तु, ताणु तोंळुतुटन् तेरिल्करेरिनान् बाण चापासि तूणीरादिकळेल्लां कैक्कोण्टु वन्दिच्चु तानुं करेरिनान् लक्ष्मणनप्पोळ् सुमन्त्ररुमाकुलाल् दुःखेन तेर् नटत्तीटिनान् भूपनुं निल्क निल्कॅन्नु चॊन्नान् रघुनाथनुं गच्छ गच्छति वेगालरुळ् चेय्तितु निश्चलमायितु लोकवुमन्नेरं। राजीव लोचनन् दूरे मरञ्ञप्पोळ् राजावु मोहिच्चु वीणितु भूतले। स्त्री बाल वृद्धावधि पुरवासिकळ् तापं मुळुत्तु विलापिच्चु पिन्नालें— तिष्ट तिष्ठ प्रभो ! राम ! दयानिधे ! दृष्टिक्क-

---

दशरथ ने विनीत भाव से सुमंत्र को बताया कि तुरन्त राम के प्रयाणार्थ राजयोग्य रथ मँगा ले आएँ। यह कहकर तथा पुत्र के मुखांबुज को निहारकर 'पुत्र ! हा राम ! सौमित्र ! जनकात्मजे ! राम ! राम ! त्रिकोलाभिरामांग ! हा ! हा ! मम प्राण समान ! हे मनोहर !' पुकारते हुए दुःखपूर्वक भूमि पर गिर पड़कर हृदय-व्यथा से द्रवित हो दशरथ के विलाप करते समय सुमंत्र ने रथ लाकर खड़ाकर दिया। तब श्रीराम जी ने कहा—हे सीते ! अब अविलंब रथ पर सवार हो जाओ। ३० सुन्दरी (सीता) प्रणाम कर रथारूढ़ हो गयीं। इन्दिरा-वल्लभ राम भी मन का दुःख संभालकर, पिता के चरणों पर पड़ प्रणाम करके तथा उनकी प्रदक्षिणा एवं नतमस्तक हो नमस्कार करके, रथ पर बैठ गये। बाण, चाप, असि, तूणीर आदि हाथ में लिये, (पिता जी की) वन्दना करके लक्ष्मण भी रथारूढ़ हो गये। अत्यन्त व्याकुल हो सुमंत्र ने रथ आगे बढ़ाया। तब भूपति ने 'रोको रोको' की पुकार मचायी तो तुरन्त राम ने 'गच्छ गच्छ' की आज्ञा दी। (यह देखकर) तब सारा संसार स्तब्ध रह गया। राजीवलोचन के दूर जा अगोचर होते ही राजा मूर्छित हो भूतल पर गिर पड़े। (यह देख) आबाल वृद्ध पुरवासी लोग दुखार्त हो विलाप करने लगे—'तिष्ठ तिष्ठ हे प्रभो ! हे राम ! हे दयानिधे !'

मृतमायोरु तिरुमेनि काणाय्किलेङ्ङने ञङ्ङळ् पोरुक्कुन्नु प्राणनो पोयितल्लो मम दैवमे ! ४० इत्तरं चोल्लि विलापिच्चु सर्वरुं सत्वरं तेरिन् पिऱके नटकोण्टारु। मन्नवन् तानुं चिरं विलापिच्चथ चोन्नान् परिचारकन्मारोटाकुलाल्— अेन्नेयेट्टुत्तिनिक्कोण्टु पोय् श्रीरामन् तन्नुटे मातृगेहत्तिङ्कलाक्कुविन् रामने वेर्पिट्टु जीविच्चु ञानिनि भूमियिल् वाळ्केन्नतिल्लेन्नु निर्णयं। अेन्नतु केट्टोरु भृत्य जनङ्ङळुं मन्नवन् तन्नेयेट्टुत्तु कौसल्यतन् मन्दिरत्तिङ्कलाक्कीटिनारन्नेरं वन्नोरु दुःखेन मोहिच्चु वीणित्तु। पिन्नेयुणर्न्नुं करञ्ञु तुटङ्ङिनान् खिन्नयाय् मेवुन्न कौसल्य तन्नोटुं। श्रीरामनुं तमसानदि तन्नुटे तीरं गमिच्चु वसिच्चु निशामुखे पानीय मात्रमुपजीवनं चेय्तु जानकियोटुं निराहारनायोरु वृक्षमूले शयनं चेय्तुरङ्ङिनान् लक्ष्मणन् विल्लुमम्पुं धरिच्चन्तिके ५० रक्षिच्चु निन्नु सुमन्त्ररुमायोरो दुःख वृत्तान्तङ्ङळुं परञ्ञाकुलाल्। पौरजनङ्ङळुं चेन्नरिके पुक्कु श्रीरामनेयङ्ङुकोण्टु पोय्क्कूटाय्किल् कानन वासं नमुक्कु मेन्तेवरुं मानसत्तिङ्कलुरच्चु मरुविनारु। पौरजनत्तिन् परिदेवनं कण्टु श्रीरामदेवनुमुळ्ळिल् निरूपिच्चु सूर्य्यनुदिच्चालयय्क्कयु

अपनी दृष्टि के लिए अमृतोपम आपकी सुन्दर मूर्ति को देखे बिना हम कैसे जीवित रह पाएँगे ! हे दैव ! हमारे प्राण निकल गये !' ४० इस प्रकार का विलाप करते हुए सारे लोग सत्वर गति से रथ का पीछा करने लगे। चिरविलाप करते हुए अत्यन्त खिन्न हो राजा ने अपने सेवकों से कहा कि मुझे अब ले जाकर श्रीराम जी के मातृगृह में पहुँचा दें। राम से बिछुड़कर अब मैं संसार में रह नहीं पाऊँगा। यह निश्चित बात है। यह सुनकर भृत्यजनों ने राजा को तुरन्त ही कौसल्या जी के महल में पहुँचा दिया और अत्यधिक दुःख से राजा मूर्छित हो गये। मूर्छा हटने पर खिन्न बैठी कौसल्या के सामने राजा दुखार्त हो प्रलाप करने लगे। श्रीराम भी तमसा नदी के तट पर पहुँचकर रात वहीं बिताने लगे। सीता जी सहित केवल पानी का आचमन कर निराहार हो एक वृक्ष के नीचे लेटकर वे सो गये। धनुष-बाण लिये लक्ष्मण निकट ही। ५० —(उनकी) रक्षा में खड़े रहे और आकुल-व्याकुल हो सुमन्त्र से एक न एक दुःख कहानी कहते गये। पुरवासी लोग भी निकट आ बस गये। 'अगर राम जी को साथ नहीं ले जा सकेंगे तो हमारे लिए भी कानननवास ही बदा है,' मन में यह दृढ़ संकल्प ले वे वहीं रह गये। पौरजनों के

मिल्लिवर् कार्यत्तिनु वरुं विघ्नमेन्नालिवर् खेदं कलर्न्नु तळर्न्नुरङ्ङुन्नितु बोधमिल्लिप्पोळिनियुणरुं मुम्पे पोकनामिप्पोळ् कूट्टुक तेरेन्नु राघवन् वाक्कुकळ् केट्टु सुमन्त्ररुं वेगेन तेरुमोरुमिच्चितन्नेरं राघवन्मारुं जनक तनूजयुं तेरिलेरीटिनारेतु मरिञ्ञील पौरजनङ्ङळन्नेरं सुमन्त्ररुं चेंट्योद्ध्याभिमुखं गमिच्चिट्टथ तेंट्टन्नु तेक्कोट्टुतन्ने न्नट कोंण्टु । ६० चुट्टुंकिटन्न पुरवासिकळेल्लां पिट्टेन्नाळ् तङ्ङळुणर्न्नु नोक्कुन्नेरं कण्टील रामनेयेन्नु करञ्ञति कुण्ठितन्मारायि पुरंपुक्कुमेविनार् । सीता समेतनां रामनेस्सन्ततं चेतसि चिन्तिच्चु चिन्तिच्चनुदिनं पुत्रमित्रादिकळोटुमिट चेर्न्नु चित्त शुद्धया वसिच्चीटिनारेवरुं । मंगलदेवता वल्लभन् राघवन् गंगातटं पुक्कु जानकि तन्नोटुं मंगल स्नानवुं चेय्तु सहानुजं श्रृंगिवेरा विदूरे मरुवीटिनान् दाशरथियुं विदेह तनूजयुं शिशपामूले सुखेन वाणीटिनार् । ६७

गुह संगमं

रामागमन महोत्सव मैत्रयुमामोदमुळ्क्कोंण्टु केट्टु गुहन्

दृढ़ संकल्प से अवगत हो राम ने मन में निर्णय किया कि सूर्योदय होने पर ये लोग हमें जाने नहीं देंगे और ये कार्य में बाधा डालेंगे। अब ये मन में दुखी हो आलस्यवश बोधरहित पड़े सो रहे हैं। अतः इनके जाग उठने के पूर्व ही हमारा प्रस्थान करना आवश्यक है। अतः रथ ले आने की राम की आज्ञा पाकर सुमन्त्र रथ ले आये। राघव लोग और जनकात्मजा के रथारूढ़ होने की पौरजनों को खबर नहीं लगी। सुमंत्र ने (थोड़ी देर तक) अयोध्याभिमुख रथ चलाकर तुरन्त उसे दक्षिण दिशा की ओर मोड़ दिया। ६० अगले दिन प्रातःकाल नींद से उठे पौरजन राम को न पाकर रो उठे और कुंठित मन अयोध्या वापस चले गये। प्रतिदिन पुत्र-मित्र आदि के साथ सीता समेत राम का मन में ध्यान लगाये, चित्तशुद्धि से वे रहने लगे। मंगलदेवता वल्लभ राघव जानकी तथा भ्राता के साथ गंगातट पर आ मंगल स्नान के उपरांत सुदूर श्रृंगवेरपुर में पहुँचे। वहाँ शिंशुपा वृक्ष के नीचे दाशरथी तथा विदेह-तनूजा सुखपूर्वक रहने लगे। ६७

गुह से भेंट

तब (निषादराज) गुह ने रामागमन के पर्व का आनंदप्रद समाचार

तदा स्वामियायिष्टवयस्यनायुळ्ळोरु रामन् तिरुवटियेक्कण्टु वन्दिप्पान् पक्वमनस्सोटु भक्त्यैव सत्वरं पक्व फल मधु पुष्पादिकळेल्लां कैक्कोण्टु चेन्नु रामाग्रे विनिक्षिप्य भक्त्यैव दण्ड नमस्कारवुं चेय्तु। पेट्टेन्नेटुत्तेळुन्नेल्पिच्चु वक्षसि तुष्ट्या दृढमणच्चाश्लेषवुं चेय्तु। कञ्ज विलोचनन् तन् तिरुमेनि कण्टञ्जलि पूण्टु गुहनुमुर चेय्तु— धन्य नायेनटियनिन्नु केवलं निर्णयं नैषाद जन्मवुं पावनं। नैषादमायुळ्ळ राज्यमितु-मोरु भूषणहीनमधीनमल्लो तव किङ्करनामटियनेयुं राज्यवुं सङ्कटं कूटाते रक्षिच्चु कोळ्ळुक। सन्तोषमुळ्क्कोण्टिनि न्निन्तिरुवटि सन्ततमत्र वसिच्चरुळीटणं १० अन्तःपुरं मम शुद्धमाक्कीटणमन्तरम्मुदा पादपद्म रेणुक्कळाल् मूलफलङ्ङळ् परिग्रहिक्केणमे काले कनिवोटनुग्रहिक्केणमे। इत्तरं प्रार्थिच्चु निल्क्कुं गुहनोटु मुग्ध हासं पूण्टरुळ् चय्तु राघवन्-- केळ्क्क नी वाक्यं मदीयं मम सखे ! सौख्य मितिल्प्परमिल्लेनिक्केतुमे; संवत्सरं पतिन्नालु कळियणं संवसिच्चीटुवान् ग्रामालयङ्ङळिल् अन्य दत्तं भुजिक्कन्नतुमिल्लेन्नु मन्ये वनवास कालं कळिवोळं।

सुना। अपने स्वामी एवं सखा भगवान राम से भेंटकर उनकी वन्दना करने का निश्चय मन में लेकर सत्वर भक्ति से आपूरित हो पक्वफल, मधु, पुष्प आदि ले आकर, राम के सम्मुख रखकर दण्डवत् नमस्कार किया। कमललोचन राम ने तुरन्त उठाकर सानंद उन्हें छाती से लगाकर गाढ़ भाव से आश्लेष किया तो अपने भगवान को सामने देखकर हाथ जोड़कर गुह ने कहा—'आज यह दास धन्य हुआ और निश्चय ही निषाद वंश में जन्म भी पावन है। यह वैभवहीन निषादों का राज्य भी आपके ही अधीन है और अपने इस दास और राज्य की निर्विघ्न आप रक्षा कीजिए। अब सन्तोषपूर्वक आप वहीं निरन्तर आकर बसिये। १० —और सानंद अपने पाद-पद्मों की रज से मेरे अन्तःपुर को पवित्र एवं स्वच्छ बनाने की कृपा करें। फल मूल (जो भी मैं दे सकूँ) ग्रहण करें और यथावसर अनुकंपापूर्वक मुझे अनुगृहीत करें।' इस प्रकार की प्रार्थना लेकर खड़े गुह से राघव ने सहास कहा—'मेरे सखा ! तुम मेरी बात सुनो। मुझे इससे अधिक प्रसन्नता की कोई बात नहीं है। (किन्तु) ग्रामालयों (ग्रामीण घरों) में वास करने के लिए अब चौदह वर्ष व्यतीत करने होंगे। और वनवास की अवधि पूरी करने तक दूसरों का दिया कुछ न खाने का भी दृढ़ संकल्प है। (तुम्हारा

राज्यं ममैतत्भवान् मत्सखियल्लो पूज्यनां त्री परिपालिक्क सन्ततं। कुण्ठ भावं चेरुतुण्टाकयुं वेण्टा कौण्टुवरिक वटक्षीर-माशु त्री। तत्क्षणं कौण्टुवन्नू वटक्षीरवुं लक्ष्मणनोटुं कलर्न्नु रघूत्तमन् शुद्ध वटक्षीर भूतिकळेक्कोण्टु बद्धमायोरु जटा-मकुटत्तोटुं २० सोदरन् तन्नाल् कुशदलाद्यङ्ङळाल् सादर मास्मृतमाय तल्पस्थले पानीयमात्रमशिच्चु वैदेहियुं तानुमाय् पळ्ळिक्कुरिप्पु कौण्टीटिनान्; प्रासाद मूर्द्ध्नि पर्य्यङ्के यथा पुरावासवुं चेय्तुरङ्ङीटुन्नतु पोले। लक्ष्मणन् विल्लुमम्पुं धरिच्चन्तिके रक्षिच्चु त्रित्तु गुहनोटु कूटवे। लक्ष्मीपतियाय राघव स्वामियुं लक्ष्मी भगवतियाकिय सीतयुं वृक्षमूले किटक्कुन्नतु कण्टतिदुःखं कलर्न्नु बाष्पाकुलनाय् गुहन् लक्ष्मणनोटु परञ्ञु तुटङ्ङिनान् पुष्कर नेत्रनेक्कण्टीलयो सखे! पर्ण्ण तल्पे भुवि दारु मूले किटन्नर्ण्णोज नेत्रनुरङ्ङुमाराय्तु; स्वर्ण्ण तल्पे भवनोत्तमे सत्पुरे पुण्य पुरुषन् जनकात्मजयोटुं पळ्ळिक्कुरिप्पु कोळ्ळुं मुन्नमिन्निह पल्लव पल्यङ्कसीम्नि वनान्तरे ३० श्रीरामदेवनु दुःखमुण्टाकुवान् कारण भूतयाय्

राज्य) मेरा ही राज्य है और तुम तो मेरे सखा हो। मेरे लिए पूज्य तुम ही निष्ठापूर्वक राज्यपालन करते जाओ। मन में ज़रा भी कुंठित होने की आवश्यकता नहीं है; तुम तुरन्त ही वटक्षीर ला दो।' तुरन्त ही वटक्षीर लाये गये और लक्ष्मण के साथ शुद्ध वटक्षीर आदि से आबद्ध जटा मुकुट धारण किये राम। २० —सहोदर के द्वारा कुश-दल आदि बिछाकर तैयार किये गये तल्पस्थल पर वैदेही सहित पानी मात्र का सेवनकर सो गये, जैसा कि पहले अयोध्यापुरी में प्रासाद के अन्दर पर्यंक पर सोया करते थे। धनुष-बाणधारी लक्ष्मण निकट ही गुह सहित रक्षार्थ खड़े हो गये। लक्ष्मीपति स्वरूप स्वामी राघव तथा भगवती लक्ष्मी स्वरूपिणी सीता को वृक्ष के नीचे सोते देख अतीव दुःख के कारण अश्रु बहाते हुए गुह ने लक्ष्मण को बताया—'हे सखा! पुष्करनेत्र को देखो। पत्तों की शय्या पर, वृक्ष के तले भूमिपर अर्णोजनेत्र को सोना पड़ रहा है। पहले पावन नगरी के उत्तम भवन में पुण्य-पुरुष जनकात्मजा के साथ स्वर्णतल्प पर सोया करते थे, (किन्तु) आज वनान्तर में पल्लव-शय्या पर सो रहे हैं। ३० —कैकेई श्रीरामदेव के दुःख के लिए कारण बन गयी। हन्त! मंथरा के चित्त पर विश्वास करके कैकेई ने यह महा-पाप किया।' गुह की इस प्रकार की विषादमय उक्ति सुनकर तुरन्त

वन्नितु कैकेयि । मन्थरा चित्तमास्थाय कैकेयितान् हन्त ! महापापमाचरिच्चाळल्लो । श्रुत्वागुहोक्तिकळित्थमाहन्त ! सौमित्रियुं सत्वरमुत्तरं चौल्लिनान्—भद्रमते ! शृणुमद्वचनं रामभद्रनामं जपिच्चीटुक सन्ततं । कस्य दुःखस्य कोहेतुर्जगत्रये कस्य सुखस्य वा कोपिहेतुस्सखे ! पूर्वजन्मार्ज्जित कर्म्ममत्रे भुवि सर्वलोकक्कुं सुख दुःख कारणं । सुख दुःखङ्ङळ् दानं चैय्वतिन्नारुमुळ्ळकाम्पिलोर्त्तु कण्टालिल्ल निर्ण्णयं । एकन्मम सुखदाता जगति मट्टेकन् मम दुःखदातावितिवृथा तोन्नुन्नतज्ञान बुद्धिकळ्क्कॆप्पोळ्ळु तोन्नुकयिल्ल बुधन्मार्क्कतेतुमे । ञानितिनिन्नु कर्त्तावेन्नु तोन्नुन्नु मानस तारिल् वृथाभिमानेन केळ् ४० लोकं निज कर्म्मसूत्र बद्धं सखे ! भोगङ्ङळुं निज कर्म्मानुसारिकळ् । मित्रार्य्युदासीन बान्धव द्वेषमद्ध्यस्थ सुहृज्जन भेद बुद्धिभ्रमं । चित्रमत्रे निरूपिच्चाल् स्वकर्म्मङ्ङळ् यत्रविभाव्यते तत्रयथातथा । दुःख सुखं निज कर्म्म वशगतमॆक्कॆयॆन्नुळ्ळकाम्पु कौण्टु तिनच्चतिल् यद्यद्यदागतं तत्र कालान्तरे तत्तल् भुजिच्चति स्वस्थनाय् वाळणं । भोगत्तिनाय्क्कौण्टु कामिक्कयुं वेण्टा

लक्ष्मण ने उत्तर में बताया—हे सुबुद्धिवाले ! तुम मेरा वचन सुनो। निरन्तर रामभद्र का नाम जपते रहो। हे सखा ! इस त्रिलोक में कौन किसके दुःख का हेतु है ? और कौन किसके सुख का हेतु है ? संसार में सबके सुख-दुःख के लिए कारण बनकर पूर्वजन्म में अर्जित कर्म रहते हैं। मन में गहराई से सोचे तो निश्चय ही कोई सुख-दुःख देनेवाला नहीं है। केवल अज्ञानी लोगों को ही व्यर्थ ऐसा लगता है कि एक मेरा सुखदाता है और दूसरा मेरे लिए दुखदाता है; बुद्धिमान व्यक्तियों को कुछ ऐसा नहीं जान पड़ता है। व्यर्थ के अहंकार के कारण मन में यह विचार आता है कि आज मैं ही इस (कार्य) का कर्ता हूँ। ४० —हे सखा ! यह संसार अपने कर्मसूत्र में आबद्ध है और (यहाँ) भोग कर्मों का अनुसरण करते हैं। मित्रों के प्रति उदासीनता, बंधु-बांधवों के प्रति द्वेष, सुहृज्जनों में भेदबुद्धि—ये सब मतिभ्रष्ट होने के लक्षण हैं। विचार करने पर यहाँ के कर्म विचित्र हैं, वे जिस रूप में कल्पित होते हैं, वैसे अनुभूत होते हैं। इसलिए सुख-दुःख आदि को अपने मन में कर्मवशगत समझकर, जो-जो कालान्तर में जैसे अनुभूत होते हैं, उन्हें वैसे ही स्वीकार करके स्वस्थ-चित्त रहना चाहिए। कभी भोगों की कामना नहीं की जानी चाहिए और विधिवत् भोगों का तिरस्कार भी नहीं किया जाना चाहिए। विषाद

भोगं विधिकृतं वर्ज्जिक्कयुं वेण्ट। व्यर्त्थमोर्त्तोळं विषादाति-हर्षङ्ङळ् चित्ते शुभाशुभ कर्म्म फलोदये मर्त्यदेहं पुण्य पापङ्ङळेक्कोण्टु नित्यमुल्पन्नं विधिविहितं सखे! सौख्य दुःखङ्ङळ् सहजमेवक्कुमे तीक्कावतल्ल सुरासुरन्मारालुं। लोके सुखानन्तरं दुःखमाय्वरुमाकुलमिल्ल दुःखानन्तरं सुखं ५० नूनं दिन रात्रि पोले गतागतं मानसे चिन्तिक्किलत्रयुमल्लेटो! दुःखमद्ध्ये सुखमायुं वरुं पिन्ने दुःखं सुख मद्ध्य संस्थमायुं वरुं; रण्टुमन्योन्य संयुक्तमायेवनुमुण्टु जलपङ्कमेन्नपोले सखे! आकयाल् धैर्य्येण विद्वज्जनं हृदि शोक हर्षङ्ङळ् कूटाते वसिक्कुन्नु। इष्टमायुळ्ळतु तन्नेवरुम्पोळुमिष्ट मल्लात्ततु तन्ने वरुम्पोळुं तुष्टात्मना मरुवुन्नु बुधजनं दृष्टमेल्लां महामायेति भावनाल्। इत्थं गुहनुं सुमित्रात्मजनुमाय् वृत्तान्त भेदं परञ्ञु निल्क्कुन्नेरं मित्रनुदिच्चितु सत्वरं राघवन् नित्य कर्म्मङ्ङळुं चेय्तरुळिच्चेय्तु तोणि वरुत्तुकेन्नप्पोळ् गुहन् नल्ल तोणियुं कोण्टु वन्नाशु वणङ्ङिनान्। स्वामिन्नियं द्रोणिका समारुह्यतां सौमित्रिणा जनकात्मजया समं ६० तोणितुळयुन्नतुमटियन्

एवं हर्ष, विचारपूर्वक देखा जाए तो निरर्थक हैं, और वे ही मन में शुभा-शुभ फलों को जन्म देते हैं, विधिवश नित्य ही यह मनुष्य शरीर सुख-दुःखों से आपूरित है। सुख-दुःख सबको सहज ही प्राप्त होते रहते हैं, सुरासुर भी प्रयत्नपूर्वक उनसे बच नहीं पाते हैं। संसार में सुख के उपरांत दुःख और दुःख के उपरांत सुख प्राप्त होते ही रहते हैं। ५० —जैसे दिन-रात बारी बारी से आते ही रहते हैं। विचारपूर्वक देखा जाए तो इतना ही नहीं, अपितु दुःख भोगते समय सुख और सुख भोगते समय दुःख आया करता है। हे मित्र! सबके जीवन में दोनों परस्पर संबद्ध हैं जैसे कि जल और पंक परस्पर संयुत हैं। इस कारण विद्वान लोग साहसपूर्वक अपने मन में सुख-दुःख को कभी अनुभव होने नहीं देते। अपने अनुकूल कार्य के आ पहुँचने पर तथा प्रतिकूल कार्य के आ पड़ने पर बुधजन सबको माया का परिणाम समझकर, मन में संतुष्ट हो जीवन व्यतीत करते हैं।' इस प्रकार जब गुह तथा सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) के बीच नाना प्रकार के वार्तालाप चल रहे थे, तब तुरन्त सूर्योदय हुआ और राघव ने अपने नित्य कर्मों से विरत हो नाव मँगा लाने का आग्रह किया। गुह ने सुन्दर नाव ले आकर प्रणाम किया। और कहा—"हे स्वामी! सौमित्र तथा जनकात्मजा सहित आप नाव पर आरूढ़ हो जाइये। ६०

तन्ने मानव वीर ! मम प्राण वल्लभ ! श्रृंगिवेराधिपन् वाक्कु केट्टन्नेरं मंगलदेवतयाकिय सीतयॆ कय्युं पिटिच्चु करेट्टिग्गुहनुटॆ कय्युं पिटिच्चु तानुं करेरिनान् । आयुधमॆल्लामॆटुत्तु सौमित्रियुमायतमायॊरु तोणि करेरिनान् । ज्ञाति वर्गत्तोटु कूटॆग्गुहन् परमादरवोटु वहिच्चितु तोणियुं । मंगलापांगियां जानकीदेवियुं गंगयॆ प्रार्त्थिच्चु नन्नाय् वणङ्ङिनाळ्-- गंगे ! भगवति ! देवि ! नमोस्तुते संगेन शंभुतन् मौलियिले वाळुन्न सुन्दरी ! हैमवती ! नमस्ते नमो मन्दाकिनी ! देवि ! गंगे ! नमोस्तुते । ञङ्ङळ् वनवासवुं कळिञ्ञादराल् इङ्ङु वन्नाल् बलिपूजकळ् नल्कुवन् रक्षिच्चु कॊळ्क नीयापत्तु । कूटातॆ दक्षारिवल्लभे ! गंगे ! नमोस्तुते । इत्तरं प्रार्त्थिच्चु वन्दिच्चिरिक्कवे सत्वरं पारकूलं गमिच्चीटिनार् ७० तोणियिल् निन्नु ताळत्तिरङ्ङी गुहन् ताणु तॊळुतपेक्षिच्चान् मनोगतं कूटॆ विटकॊळ्वतिन्नटियनुमॊराटल् कूटातॆयनुज्ञ नल्कीटणं प्राणङ्ङळॆक्कळञ्ञीटुवनल्लाय् किलेणाङ्क बिम्बानन ! जगतीपते ! नैषाद वाक्यङ्ङळ् केट्टु मनसि सन्तोषेण राघवनेव-

हे मानववीर, हे मेरे प्राणवल्लभ ! मैं खुद नाव चलाऊँगा।" श्रृंगवेराधिप (गुह) के वचन सुनते ही राम ने मंगलादेवि सीता का हाथ पकड़कर उन्हें नाव पर चढ़ाया और स्वयं गुह के हाथ सहारा लेकर वे नाव पर चढ़ गये। आयुधों से सज्जित लक्ष्मण भी नाव पर चढ़ गये। गुह अपने स्वजनों के साथ श्रद्धापूर्वक नाव खे चला। मंगलापांगी (सुन्दर अपागों से युक्त) सीता खूब गंगा जी की वन्दना और प्रार्थना करने लगीं--'हे गंगे ! हे भगवती ! हे देवी ! तुम्हें नमस्कार है। शंभु की मौलि पर विराजमान हे सुन्दरी ! हे हेमवती ! हे मन्दाकिनी ! तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है। हे देवी ! हे गंगे ! नमनपूर्वक (मैं) तुम्हारी स्तुति करती हूँ। वनवास के उपरांत सुख-पूर्वक यहाँ लौटकर हम (तुम्हारे लिए) बलि-पूजाएँ अर्पित करेंगे। हे दक्षारिवल्लभे ! हे गंगे ! तुम्हारे लिए नमस्कार है। तुम निर्विघ्न हमारी रक्षा करो।' इस प्रकार प्रार्थना और वन्दना करते रहते समय वे (गंगा के) पार पहुँच गये। ७० नाव से नीचे उतर पड़ने पर गुह ने नम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर अपने मन की अभिलाषा प्रकट करते हुए प्रार्थना की—'बिना किसी आपत्ति के मुझे भी साथ चलने की अनुमति दीजिएगा। हे चन्द्रबिम्ब तुल्य सुन्दर आनन (मुख) वाले ! हे जगन्नाथ ! अन्यथा मैं अपने प्राण छोड़ दूंगा।' निषाद का कथन सुनकर मन ही मन प्रसन्न हो राघव ने इस प्रकार कहा--'मैं ठीक चौदह वर्ष

मरुळ् चेय्तु-सत्यं पतिन्नालु संवत्सरं विपिनत्तिल् वसिच्चु वरुवन् विरविल्ञान्। चित्त विषादमोंळिञ्ञु वाणीटु नी सत्य विरोधं वरा रामभाषितं। इत्तरमोरोविधमरुळि चेय्तु चित्त-मोदेन गाढाश्लेषवुं चेय्तु भक्तनेंप्पोकेंन्नयच्चु रघूत्तमन् भक्त्या नमस्करिच्चञ्जलियुं चेय्तु मन्दमन्दं तोणि मेले गुहन् वीण्टु मन्दिरं पुक्कु चिन्तिच्चु मरुविनान्। ७९

भरद्वाजाश्रम प्रवेशं

वैदेहि तन्नोटु कूटवे राघवन् सोदरनोटुमोंरु मृगत्तें कोंन्नु सादरं भुक्त्वा सुखेन वसिच्चितु पादप मूले दलाढ्य तल्पस्थले। मार्त्तण्ड देवनुदिच्चोरनन्तरं पार्त्थिवनर्घ्यादि नित्य कर्म्मं चेय्तु। चेंन्नु भरद्वाजनाय तपोधनन् तन्नाश्रम पदत्तिन्नटुत्तादराल्। चित्त मोदत्तोटिरुन्नोंरु नेरतु तत्र काणायितोंरु वटु तन्नेयुं अप्पोळवनोटरुळ् चेय्तु राघवनिप्पोंळ्ळे नी मुनियोंटुणर्त्तिक्कणं; रामन् दशरथ नन्दननुण्टु तन् भामिनियोटुमनुजनोटुं वन्न

तक वनवास करके निश्चय ही वापस (इधर) आऊँगा। (तब तक) मन का विषाद दूरकर तुम (यहाँ) रहो। यह सत्य बात है। राम का कथन कभी असत्य नहीं निकलेगा।' इस प्रकार नाना प्रकार से सांत्वना देते हुए सहर्ष आश्लेष कर राम ने अपने भक्त (गुह) को जाने की आज्ञा दी। अंजलि जोड़कर नमस्कार कर मंद-मद नाव चलाता हुआ गुह अपने भवन में पहुँचा और (राम का) ध्यान करता हुआ जीवन बिताने लगा। ७९

भरद्वाज के आश्रम में प्रवेश

एक गजकन्द * को उखाड़कर तथा उसका उपयोग करके राघव अपने सहोदर तथा वैदेही के साथ एक पादप के नीचे पर्ण-शय्या पर सुखपूर्वक रहे। मार्तण्ड देव (सूर्य-देव) के उदित होने पर पार्थिव (राजा राम) अर्घ्य आदि दैनिक कर्मों से निवृत्त हो तपोधन भरद्वाज के आश्रम-स्थान के निकट सहर्ष पहुँचे। वहाँ सहर्ष जब बैठे थे तब एक ब्रह्मचारी वहाँ दिखाई दिया। तब राम ने उससे कहा—'तुम अभी जाकर मुनि को सूचना दो कि दशरथ-पुत्र राम अपनी भामिनी (पत्नी) तथा अनुज के

* 'मृग' का अर्थ गजकन्द लिया है, उसका मांस-परक अर्थ लेना अनुचित समझा गया है।

पार्त्तिरिक्कुन्नितुटजान्तिके येन्न वार्त्त वैकातेयुणर्त्तिक्कयेन्नप्पोळ्
तापस श्रेष्ठनोटा ब्रह्मचारि चेन्नाभोग सन्तोषमोटु चोल्लीटिनान्:
आश्रमोपान्ते दशरथ पुत्रनुण्टाश्रित वत्सल ! पार्त्तिरुन्नीटुन्नु । १०
श्रुत्वा भरद्वाजनित्थं समुत्थाय हस्ते समादाय सार्घ्यं पाद्यादियुं
गत्वा रघूत्तम सन्निधौ सत्वरं भक्त्यैव पूजयित्वा सह लक्ष्मणं
दृष्ट्वा रमावरं रामदयापरं तुष्ट्या परमानंदाब्धौ मुळ्किनान् ।
दाशरथियुं भरद्वाज पादङ्ङळाशु वणङ्ङिनान् भार्यानुजान्वितं ।
आशीर्वचन पूर्वं मुनि पुंगवनाशयानन्दमियन्नरुळि चेय्तु :—
पाद रजसा पवित्रयाक्कीटु न्नी वेदात्मक ! मम पर्णशालामिमां
इत्थमुक्तोटजमानीय सीतया सत्य स्वरूपं सहानुजं सादरं ।
पूजा विधानेन पूजिच्चुटन् भरद्वाज तपोधन श्रेष्ठनरुळ् चेय्तु—
न्निन्नोटु संगममुण्टाककारणमिन्नु वन्नू तपस्साफल्यमोक्कवे
ज्ञातं मयातवोदन्तं रघुपते ! भूतमागामिकं वा करुणानिधे ! २०
ञानरिञ्ञेन् परमात्मा भवान् कार्य्यं मानुषनायितु मायया भूतले
ब्रह्मणा पण्टु संप्रार्त्थितनाकयाल् जन्ममुण्टायितु यातोन्निन्नेन्नतुं

साथ आ उटज के समीप प्रतीक्षा में बैठे हैं ।' तुरन्त जाकर सूचना देने
की बात सुनकर उस ब्रह्मचारी ने जाकर तापस-श्रेष्ठ को ससन्तोष यह
बताया कि—'हे आश्रित वत्सल ! आश्रम के निकट ही दशरथ-पुत्र
(आपकी) प्रतीक्षा में बैठे हैं ।' १० इस प्रकार सुनकर, तुरन्त उठकर
और हाथ में अर्घ्य एवं पाद्य (चरण धोने के लिए जल) आदि लेकर
तुरन्त भरद्वाज ने राघव के निकट जाकर भक्तिपूर्वक लक्ष्मण सहित (राम
की) पूजा की। दयालु रमापति राम को देखकर सन्तुष्ट हो (वे)
अत्यधिक आनन्द-सागर में निमग्न हुए । दाशरथी ने भी अपनी पत्नी
तथा अनुज के साथ तुरन्त ही भरद्वाज के चरणों की वन्दना की।
मुनिप्रवर ने बड़ी ही प्रसन्नता एवं आनन्द के साथ आशीर्वचन पूर्वक
बताया—'हे वेदात्म स्वरूप ! अभी अपनी चरणधूलि से मेरी पर्णशाला
को पावन कर दीजिए ।' इस प्रकार कहकर (भरद्वाज) सत्य स्वरूप
(राम) को सीता तथा अनुज के साथ प्रेमपूर्वक उटज में ले आये।
यथाविधि पूजा करके तपोधन श्रेष्ठ भरद्वाज बोले—'आपसे मिलने का
अवसर पाने के कारण आज मेरी तपस्या पूर्ण फलवती हुई । हे रघुपति !
हे करुणानिधि ! आपके भूत एवं भावी चरित मुझे ज्ञात हैं । २०
—मुझे यह विदित हुआ है कि पहले ब्रह्मा से प्रार्थना की जाने से परमात्मा
स्वरूप आप भूतल पर माया-मानुष रूप में अवतीर्ण हुए हैं। आज मुझे

कानन वासावकाशमुण्टायतुं ज्ञानरि्ञ्ञीटिनेनिन्नतिनेन्नेटो ! ज्ञान दृष्ट्या तवध्यानैक जातया ज्ञानमूर्ते ! सकलत्तेयुं कण्टु-ज्ञान् । ॲन्तिनु ज्ञान् वळरेप्पर्ञ्ञीटुन्नु सन्तुष्ट बुद्ध्या कृतार्थ-नायेनहं । श्रीपति राघवन् वन्दिच्चु सादरं तापस श्रेष्ठनोटेव-मरुळ् चेय्तु— क्षत्रबंधुक्कळायुळ्ळोरु ञङ्ङळे चित्तमोदत्तोटनु-ग्रहिक्केणमे । इत्थमन्योन्यमा भाषणवुं चेय्तु तत्र कळिञ्ञितु रात्रि मुनियुमाय् । २८

वाल्मीक्याश्रम प्रवेशं

उत्थानवुं चेय्तुषसि मुनिवरपुत्ररायुळ्ळ कुमारकन्मारुमाय् उत्तमयाय काळिन्दी नदियेयु मुत्तीर्य्य तापसादिष्ट मार्ग्गेण पोय् चित्रकूटाद्रियॆ प्रापिच्चितु जवाल् तत्र वाल्मीकि तन्नाश्रमं निर्म्मलं नाना मुनिकुल संकुलं केवलं नाना मृग द्विजाकीर्णं मनोहरं उत्तम वृक्षलता परिशोभितं नित्य कुसुमफलदल संयुतं । तत्र गत्वा समासीनं मुनिकुल सत्तमं दृष्ट्वा नमस्करिच्चीटिनान् । रामं रमावरं वीरं मनोहरं कोमळं श्यामळं कामदं मोहनं

यह भी ज्ञात है कि आपका अवतार किस उद्देश्य से हुआ और कानन-वास का अवसर कैसे आ पड़ा । हे ज्ञानमूर्ति ! ज्ञान दृष्टि से आप का ध्यान करने से मैंने सब कुछ देख (समझ) लिया है । मैं अधिक क्या बताऊँ ! सन्तुष्ट बुद्ध्या मैं कृतार्थ बन गया हूँ ।' श्रीपति राघव ने प्रेमपूर्वक वन्दना करते हुए तापस प्रवर से इस प्रकार कहा—'हम क्षत्रिय बंधुओं पर सानन्द अनुगृहीत करने की कृपा करें ।' इस प्रकार परस्पर वार्तालाप करते हुए वहाँ मुनि के साथ (राम ने) रात बितायी । २८

बाल्मीकि के आश्रम में प्रवेश

प्रातःकाल में उठकर मुनिवर के बालकों को साथ लेकर पवित्र कालिन्दी नदी पार करके तथा मुनि के बताये मार्ग पर चलते हुए चित्रकूट पर्वत के पास (राम) पहुँच गये । वहाँ बाल्मीकि मुनि का निर्मल आश्रम था, जो नाना मुनिबृन्दों से संकुल, मनोहर तथा नाना प्रकार के पशु-पक्षियों से आकीर्ण और नित्य कुसुमों, फलों, दलों से संयुत उत्तम वृक्ष-लतादि से परिशोभित था । वहाँ जाकर तथा समासीन मुनिप्रवर को देखकर (राम ने) नमस्कार किया । जानकी और लक्ष्मण के संग रमापति, वीर, मनोहर, कोमल स्वरूपवाले, श्यामल वर्णवाले, इच्छित

कन्दर्प्प सुन्दरमिन्दीवरेक्षणमिन्द्रादि वृन्दारकैरभिवन्दितं, बाण तूणीर धनुर्धरं विष्टप त्राण निपुणं जटा मकुटोज्ज्वलं जानकी लक्ष्मणोपेतं रघूत्तमं मानवेन्द्रं कण्टु वाल्मीकियुं तदा १० सन्तोष बाष्पाकुलाक्षनाय् राघवन् तन् तिरुमेनि गाढं पुर्णर्न्नीटिनान् । नारायणं परमानन्द विग्रहं कारुण्य पीयूष सागरं मानुषं पूजयित्वा जगल् पूज्यं जगन्मयं राजीव लोचनं राजेन्द्र शेखरं । भक्ति पूण्टर्घ्यं पाद्यादिकळ् कोण्टथ मुक्ति प्रदनाय नाथनु सादरं पक्व मधुर मधु फल मूलङ्ङळेक्के निवेदिच्चु भोजनार्त्थं मुदा । भुक्त्वा परिश्रमं तीर्त्तु रघुवरन् नत्वा मुनिवरन् तन्नोटरुळ् चेय्तु– ताताज्ञया वनत्तिन्नु पुरप्पेट्टु सोदरनोटुं जनकात्मजयोटुं; हेतुवो ञान् परयेणमेन्निल्लल्लो वेदान्तिनां भवतामरियामल्लो । यातोरिटत्तु सुखेन वसिक्कावू सीतयोटुं कूटियेन्तरुळ् चेय्यणं । इद्दिक्किलोट्टु कालं वसिच्ची-ट्टुवान् चित्ते पेरिकेयुण्टाश महामुने ! २० इङ्ङनेयुळ्ळ दिव्यत्मारिरिक्कुन्न मंगलदेशङ्ङळ् मुख्य वासोचितं । एन्नतु केट्टु वाल्मीकि महामुनि मन्दस्मितं चेय्तिवण्णमरुळ् चेय्तु

वस्तुओं के दाता, मोहन, कंदर्प सम सुन्दर तथा इन्दीवर जैसे नेत्रवाले, इन्द्र जैसे देवताओं से वंदित, धनुष-बाण-तूणीर धारी, विष्टप (लोक) त्राण-निपुण एवं जटा-मुकुट से अलंकृत मानवों में श्रेष्ठ राघव को देखकर, तब बाल्मीकि । १० —के नेत्र आनन्दाश्रुओं से परिपूर्ण हुए और (उन्होंने) राघव के मृदुल शरीर को गाढ़भाव से आश्लेष किया । संसार के आराध्य नारायण, परमानन्द मूर्ति, करुणामृत-सागर, मनुष्यावतारी, जगन्मय, राजीव लोचन एवं राजेन्द्रों के सिरमौर (राम) की पूजा करके तथा भक्ति पुरस्सर चरण-प्रक्षालन एवं अर्घ्यार्पण से निवृत्त हो (बाल्मीकि ने) उनके भोजनार्थ सानंद पक्व एवं मधुर फल-मूल प्रदान किये । उन्हें खाकर और विश्राम करने के उपरांत श्रीराम जी ने सविनय मुनि से कहा--पिता जी की आज्ञा से (मैं) अपने भ्राता तथा जनकात्मजा के साथ वनवास को निकला हूँ । उसका कारण आपको समझाने की आवश्यकता नहीं होगी, ज्ञानी आप जानते ही हैं । कृपया यह समझा दें कि कहाँ सीता सहित सुखपूर्वक मैं रह सकता हूँ । हे महामुनि ! इस प्रदेश में अधिक समय वास करने की मन में बड़ी इच्छा है । २० —आप जैसे दिव्यात्मा लोगों से अलंकृत कल्याणदायक प्रदेश ही मुख्यत: रहने योग्य है ।' यह सुनकर महामुनि बाल्मीकि ने मंद हँसी के साथ इस प्रकार

सर्वलोकङ्ङळुं निङ्ङल् वसिक्कुन्नु सर्वलोकेषु नीयुं वसिच्चीटुन्नु इङ्ङने साधारणं निवासस्थलमङ्ङनेयाकयालेन्तु चौल्लावतुं सीता सहितनाय् वाळुवानिन्नोरु देशं विशेषेण चोदिक्क कारणं सौख्येन ते वसिप्पानुळ्ळ मन्दिरमाख्या विशेषेण चौल्लुन्नुतुण्टुञान् सन्तुष्टराय् समदृष्टिकळाय् बहुजन्तुक्कळिल् दोषहीन मतिकळाय् शान्तराय् निन्नेब्भजिप्पवर् तम्मुटे स्वान्तं निनक्कु सुखवास मन्दिरं। नित्य धर्म्माधर्म्मेल्लामुपेक्षिच्चु भक्त्या भवानेब्-भजिक्कुन्नवरुटे चित्त सरोजं भवानिरुन्नीटु वानुत्तममाय् विळङ्ङीटुन्न मन्दिरं, ३० नित्यवुं निन्नेशरणमाय् प्रापिच्चु निर्द्वन्द्वराय् निस्पृहराय् निरीहराय् त्वन्मन्त्र जापकरायुळ्ळ मानुषर् तन्मनः पङ्कजं ते सुख मन्दिरं, शान्तन्माराय् निरहङ्कारिकळुमाय् शान्त रागद्वेष मानसन्मारुमाय् लोष्टाश्म काञ्चन तुल्यमतिकळां श्रेष्ठमतिकळ् मनस्तव मन्दिरं, निङ्कल् समस्त कर्म्मङ्ङळ् समर्प्पिच्चु निङ्कले दत्तमायोरु मनस्सोटुं सन्तुष्टराय् मरुवुन्नवर् मानसं सन्ततं ते सुखवासाय मन्दिरं; इष्टं लभिच्चिट्टु सन्तोषमिल्लोट्टु मिष्टातराप्तिक्कनुतापवुमिल्ल

बताया—'सारा ब्रह्माण्ड आपमें और आप सारे ब्रह्माण्ड में वास करते हैं। ऐसी हालत में साधारण निवास-स्थान के संबंध में क्या बताऊँ! (फिर भी) सीता सहित रहने योग्य वासस्थान की विशेष पूछताछ करने से सुखपूर्वक आपके रहने योग्य विशेष वासस्थल का मैं आज परिचय दूंगा। सन्तुष्ट एवं समदृष्टि, नानाजनों में दोषहीन मतिवाले एवं शान्त-चित्त लोग जो आपका भजन करते हैं, उनका हृदय आपके रहने योग्य सुखमय मंदिर है। अपने दैनिक धर्माधर्म का परित्याग कर निरंतर आपका भजन करनेवाले भक्तों का चित्त-सरोज आपके बैठने योग्य सुन्दर मंदिर है। ३० —नित्य आपको शरण मानकर निर्द्वन्द्व, निस्पृह एवं निरीह भाव से आपका ही मंत्र जाप करनेवाले मनुष्यों का मन-सरोज आपका सुख-मय मंदिर है। जिनका मन शान्त, अहंकार रहित, रागद्वेषों के प्रति उदासीन तथा तप्त स्वर्ण के समान निर्मल है, ऐसे श्रेष्ठ मनस्वियों का मन आपका मंदिर है। सभी कर्मों को आपके लिए समर्पित कर और आपसे प्रदत्त फलों से सन्तुष्ट हो जो लोग रहते हैं उनका मन आपके रहने योग्य सुखमय मंदिर है। इच्छित वस्तु के लभ्य होने से जो न प्रसन्न होते हैं और अनिश्चित वस्तु की प्राप्ति पर चिन्तित भी नहीं होते तथा सबको माया समझकर निश्चित रहनेवालों का दिव्य मन आपका

सर्व्वं मायेति निश्चित्य वाळुन्न दिव्य मनस्तवाय मन्दिरं; षड्भाव भेदविकारङ्ङळोक्कयुमुळ्ळ्पूविलोर्क्किलो देहत्तिनेयुळ्ळु क्षत्तृड्भव सुखदुःखादि सर्व्वंचित्ते विचारिक्किलात्मा-विनिल्लेतुं । ४० इत्थमुरच्चु भजिक्कुन्नवर्ट्टे चित्तं तव सुख-वासाय मन्दिरं; यातोरुत्तन् भवन्तं परं चिद्घनं वेदस्वरूप-मनन्तमेकं सतां वेदान्त वेद्यमाद्यं जगल्क्कारणं नादान्तरूपं परब्रह्ममच्युतं सर्वगुहाशयस्थं समस्ताधारं सर्वगतं परमात्मान-मलेपकं वासुदेवं वरदं वरेण्यं जगद्वासिनामात्मना काणुन्नतुं सदा तस्यचित्ते जनकात्मजया समं निस्संशयं वसिच्चीटुक श्रीपते ! सन्तताभ्यास दृढीकृत चेतसां सन्ततं त्वल्पादसेवारतात्मनां सन्ततं त्वन्नाममन्त्र जपशुचि सन्तोष चेतसां भक्ति द्रवात्मनां अन्तर्गतनाय् वसिक्क नी सीतया चिन्तित चिन्तामणे ! दयावारिधे ! कर्ण्णामृतं तवनाम माहात्म्यमो वर्ण्णिप्पतिनाक्कु-मावतुमल्लल्लो । ५० चिन्मयनाय निन् नाम महिमयाल् ब्रह्म-मुनियाय्च्चमञ्ञतु ञानेंटो ! दुर्म्मति ञान् किरातन्मारुमाय् पुरा निर्म्मरियादकळ् चेय्तेन् पलतरं । जन्ममात्र द्विजत्वं मुन्नमुळ्ळतुं

वासस्थान है। विचारपूर्वक देखा जाए तो षड्भाव-विकार सब शरीर से संबंधित हैं। पीड़ा, इच्छा आदि भाव तथा सुख-दुःख सब गहराई से सोचने पर आत्मा के गुण नहीं हैं। ४० इस प्रकार का दृढ़ निश्चय लेकर आपका भजन करनेवालों का मन आपका सुखवास योग्य मंदिर है। जो लोग सदा आपको पर, चित्स्वरूप, वेदस्वरूप, अनन्त, एक, सत्, वेदान्तवेद्य, आद्य, जगत्-कारणस्वरूप, अनन्त, परब्रह्म, अच्युत, सर्वगुहाशयस्थ (सबके हृदय और बुद्धि में निवास करनेवाली जीवात्मा) सबके आधार, सर्वशक्तिमान, वासुदेव, वरद, वरेण्य और संसार के प्राणि वर्ग की आत्मा रूप में देखते हैं, उनके चित्त में हे श्रीपति, आप जनकात्मजा सहित निस्संकोच वास कीजिए। ध्यान करनेवालों के लिए चिन्तामणि स्वरूप ! हे दयानिधि ! निरन्तर के अभ्यास से जिनका चित्त दृढ़ है, निरंतर जिनकी आत्मा आपकी पाद-सेवा में रत है, जो निरंतर शुचिमय एवं संतोषमय मन से आपके पावन नाम का जाप करते रहते हैं, और जो आपकी भक्ति में द्रवित होते हैं, उनके अन्तर आप सीता समेत वास कीजिए। कर्णामृततुल्य आपके नाम की महत्ता का वर्णन करने की सामर्थ्य किसी को प्राप्त नहीं है। ५० —चिन्मय स्वरूप आपके नाम की महत्ता से मैं ब्रह्ममुनि बन सका हूँ। दुर्बुद्धि स्वरूप मैंने किरात लोगों

ब्रह्मकर्म्मङ्ङळुमोक्कॆ वॆटिञ्ञु ञान् शूद्र समाचार तल्परनायॊरु शूद्र तरुणियुमाय् वसिच्चेन् चिरं। पुत्ररेयुं वळरॆज्जनिप्पिच्चितु निस्रपं चोरन्मारोटु कूटॆच्चेर्न्नु नित्यवुं चोरनाय्विल्लुमम्पुं धरिच्चेत्र जन्तुक्कळॆक्कॊन्नान् चतिच्चुञान्। एत्र वस्तु परिच्चेन् द्विजन्मारोटुमत्रमुनीन्द्र वनत्तिल् निन्नेकदा सप्तमुनिकळ् वरुन्नतु कण्टुञान् तत्रवेगेन चॆन्नेन् मुनिमारुटॆ वस्त्रादिकळ् परिच्चीटुवान् मूढनाय् मद्ध्याह्न मार्ताण्ड तेजस्वरूपिकळ् निर्द्दयं प्राप्तनां दुष्टनामॆन्नेयुं विद्रुतं निर्ज्जन घोर महावने ६० दृष्ट्वा ससंभ्रम-मॆन्नोटरुळ् चॆय्तु तिष्ठतिष्ठत्वया कर्त्तव्यमत्रकिं। दुष्टमते ! परमार्त्थं परकॆन्नु तुष्ट्या मुनिवरन्माररुळ् चॆय्तप्पोळ् निष्ठुरात्मावाय ञानुमवर्कळोटिष्टं मदीयं परञ्ञेन् नृपात्मज ! पुत्र दारादिकळुण्टॆनिक्कॆत्रयुं क्षुत्तृट्प्रपीडितन्मारायिरिक्कुन्नु वृत्ति कऴिप्पान् वऴिपोक्करोटु ञान् नित्यं पिटिच्चु परिक्कु-माराकुन्नु। निङ्ङळोटुं ग्रहिच्चीटणमेतानुमिङ्ङनॆ चिन्तिच्चु वेगेन वन्नु ञान्। चॊन्नार् मुनिवरन्मारतु केट्टुटनॆन्नोटु मन्दस्मितं चॆय्तु सादरं— ऎङ्किल् नी ञङ्ङळ् चॊल्लुन्नतु केळ्क्कणं निन्

को साथ लेकर पहले कई प्रकार के दुष्कृत्य किये। जन्म से प्राप्त द्विजत्व और ब्रह्मकर्मों को त्यागकर, शूद्रतुल्य आचारों को अपनाकर शूद्र नारी के साथ मैंने अपना जीवन चिरकाल तक व्यतीत किया। कई सन्तानों को जन्म दिया; निर्लज्ज हो चोर-डाकुओं की संगति अपनायी और चोर-स्वभाव को अपनाकर नित्य कितने ही जीव-जन्तुओं की धनुष-बाण ले छलपूर्वक हत्या की ! मैंने वन में खड़े रहकर अनेक द्विजजनों तथा मुनि-जनों की वस्तुओं का निर्दय अपहरण किया था। एक दिन सप्तमुनियों को आते हुए देखकर मैं दुर्बुद्धि, मुनियों के वस्त्र आदि छीन लेने के उद्देश्य से जल्दी ही उनकी ओर झपट पड़ा। उस निर्जन एवं घोर वन में मुझ दुष्ट एवं निर्दय को पाकर मध्याह्न सूर्य–सम तेजस्वी मुनियों ने। ६० —घबराये हुए स्वर में मुझसे कहा—'हे दुर्बुद्धि ! ठहरो ! ठहरो ! तुम क्या करने जा रहे हो ? सत्य बात बताओ !' संतुष्ट चित्त मुनिवरों के पूछने पर, हे नृपात्मज ! निष्ठुर स्वभाव-युक्त मैंने उन्हें अपना उद्देश्य बता दिया—'मेरे पत्नी तथा पुत्र हैं, जो क्षुधा से प्रपीड़ित हो जीवन बिता रहे हैं। जीवनयापन के लिए नित्य यात्रियों का अपहरण किया करता हूँ। आप लोगों से भी कुछ न कुछ ग्रहण कर लेने के विचार से मैं तुरन्त आ गया हूँ। यह सुनकर मंदहास के साथ मुनिवरों ने तब मुझे सप्रेम बताया

कुटुंबत्तोटु चेन्नु चोदिक्क नी निङ्ङळे च्चौल्लि ञान् चेय्युन्न पापङ्ङळ् निङ्ङळ् कूटेप्पकुत्तोट्टु वाङ्ङीटुमो ऐन्नु नी चेन्नु चोदिच्चु वरुवोळं निन्नीटुमवैव ञङ्ङळ् निस्संशयं। ७० इत्थ-माकर्ण्य ञान् वीण्टुं पोय्च्चेन्नु मल् पुत्रदारादिकळोटु चोद्यं चेय्तेन्। दुष्क्कर्म्म सञ्चयं चेय्तु ञान् निङ्ङळेयोक्केब्भरिच्चु कोळ्ळुन्नु दिनंप्रति तल्फलमोट्टोट्टु निङ्ङळ् वाङ्ङीटुमो मत्पापमोक्के ञान् तन्ने भुजिक्केन्नो सत्यं पऱयेणमेन्नु ञान् चोन्नतिनुत्तर-मायवरेन्नोटु चोल्लिनार्— नित्यवुं चेय्युन्न कर्म्मगणफलं कर्त्तावोळिञ्ञु मट्ट्न्यन् भुजिक्कुमो। तान्तान् निरन्तरं चेय्युन्न कर्म्मङ्ङळ् तान्ताननुभविच्चीटुकेन्ने वरू। ञानुमतु केट्टु जात निर्वेदनाय् मानसे चिन्तिच्चु चिन्तिच्चीरोतरं तापसन्मार् निन्नरुळुन्न दिक्किनु तापेन चेन्नु नमस्करिच्चीटिनेन्। नित्य तपोधन संगमहेतुना शुद्धमाय्वन्नितेन्नन्त:करणवुं त्यक्त्वा धनुश्शराद्यङ्ङळुं दूरे ञान् भक्त्या नमस्करिच्चेन् पादसन्निधौ ८० दुर्गति सागरे मग्ननायीटुवान् निर्गमिच्चीटुमेन्नेक्करुणात्मना स्पष्टमित्युक्त्वा पतितं पदान्तिके दृष्ट्वा मुनिवरन्मारुमरुळ् चेय्तु

कि तुम हमारी बात सुनो। तुम अपने घर में जाकर परिवार के लोगों से पूछो कि तुम्हारे लिए मैं जो पाप करता हूँ, उसके तुम लोग भी क्या भागी बनोगे। तुम्हारे यह पूछकर आने तक हम निश्चय ही यहाँ ठहरेंगे।' ७० —यह सुनकर मैंने घर में जाकर पत्नी तथा पुत्रों से कहा कि मैं रोज़ दुष्कर्म करके तुम लोगों का पालन-पोषण करता आ रहा हूँ। उसके फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले पाप का कुछ अंश क्या तुम लोग अपनाओगे या वह पूरा पाप मुझे ही क्या भोगना पड़ेगा ? सत्य बोलने का मेरा आग्रह सुनकर उन्होंने उत्तर में बताया कि नित्य किये जानेवाले कर्मों का फल कर्ता के अतिरिक्त क्या अन्य कोई भोगेगा ? प्रत्येक व्यक्ति जो कर्म करता है, उसका फल उसे स्वयं भोगना ही पड़ेगा। यह सुनकर उत्पन्न निर्वेद भाव को लिये तथा मन में कई प्रकार की चिन्ताओं से ग्रस्त एवं अतीव दुखी हो उस स्थान पर आया जहाँ तापस लोग खड़े थे और उनसे कहा—'आप जैसे नित्य तपोधनों के संसर्ग में आने से मेरा अन्त:करण पवित्र हो गया।' (फिर) अपने धनुष-बाण को दूर फेंककर मैंने उनके चरणों पर सभक्ति प्रणाम किया। ८० —पापरूपी सागर में निमग्न पड़े मुझे (उससे) बाहर पहुँचाओ, इस प्रकार की विनय करते हुए उनके चरणों पर गिर पड़े मुझे देखकर करुणामूर्त्ति मुनिवरों ने उपदेश दिया--

उत्तिष्ठ भद्रमुत्तिष्ठते सन्ततं स्वस्त्यस्तु चित्तशुद्धिस्सदैवास्तुते सद्यःफलं वरुं सज्जन संगमा द्विद्वज्जनानां महत्वमेतादृशं । इन्नु तन्नें तरुन्नुण्टौरुपदेशमेन्नाल् निनंक्कतिनाले गतिवरुं । अन्योन्य-मालोकनं चेय्तु मानसे धन्य तपोधनन्मारुं विचारिच्चु दुर्वृत्तनेटं द्विजाधमनामिवन् दिव्य जनत्तालुपेक्षितनेन्नाकिलुं रक्षरक्षेति शरणं गमिच्चवन् रक्षणीयन् प्रयत्नेन दुष्टोपिवा मोक्ष मार्ग्गोपदेशेन रक्षिक्कणं साक्षाल् परब्रह्मबोध प्रदानेन इत्थ-मुक्त्या राम नाम वर्ण्णद्वयं व्यत्यस्त वर्ण्णरूपेण चौल्लित्तन्नार् । ९० नित्यं मरामरेत्येवं जपिक्कनी चित्तमेकाग्रमाक्कि क्कौण्टनारतं ञङ्ङळिङ्ङोट्टु वरुवोळवुं पुनरिङ्ङनें तन्नें जपिच्चिरुन्नीटु नी इत्थमनुग्रहं दत्वा मुनीन्द्रन्मार् सत्वरं दिव्यपथा गमिच्चीटिनार् नत्वामरेति जपिच्चिरुन्नेनहं भक्त्या सहस्रयुगं कळिवोळवुं पुट्टुकौण्टेन्नुटल् मूटिच्चमञ्ञितु मुट्टुं मरञ्ञु चमञ्ञितु बाह्यवुं तापसेन्द्रन्मारुमन्नोळुन्नळ्ळिनार् गोपतिमारुदयं चेय्ततु पोलें ।

हे भद्र ! उठो ! उठो ! तुम्हारा मंगल हो । तुम सदा अपने चित्त को शुद्ध बनाये रखो । सज्जनों की संगति सद्यः फल की दानी है और उनके महत्त्वपूर्ण आदर्श को अपनाना चाहिए । आज ही तुम्हें एक ऐसा उपदेश दूँगा, जिस (के आचरण मात्र) से तुम्हारी सद्गति सम्भव होगी । फिर धन्य तपोधनों ने परस्पर अवलोकन किया तथा मन में खूब विचार किया । 'यह बड़ा ही दुर्वृत्त द्विजाधम भले ही दिव्यजनों से तिरस्कृत किये जाने योग्य है; तो भी दुष्ट होने पर भी 'रक्षा करो, रक्षा करो' की प्रार्थना करते हुए शरण में आया व्यक्ति प्रयत्नपूर्वक भी शरणीय है और मोक्षमार्ग का उपदेश देकर तथा साक्षात् परब्रह्म का बोध प्रदानकर उसका उद्धार करना चाहिए' यह कहते हुए (मुनियों ने) राम के वर्णद्वय का व्यत्यस्त रूप में उपदेश किया । ९० (और बताया) 'तुम प्रतिदिन निरंतर अपने मन को एकाग्र रखते हुए 'मरा मरा' इस प्रकार जप करते जाओ । फिर हम लोगों के वापस आने तक तुम इसी प्रकार जप करते ही बैठो ।' इस प्रकार आशीर्वाद देकर मुनीन्द्र सत्वर दिव्यपथ पर चले गये । (उनका) नमस्कार करके सहस्र युगों तक मैं भक्तिपूर्वक 'मरा' का जाप करता हुआ बैठा रहा । मेरी देह वल्मीक से ढक गयी और मेरे लिए बाह्य संसार अगोचर हो गया । तब तापस लोग वहाँ ऐसे आ पहुँचे मानो गोपतिगण (आदित्यों) का उदय हुआ हो । (उनकी) बाहर निकलने की आज्ञा सुनकर मैं वल्मीक के बाहर निकल आया । वल्मीक के भीतर

निष्क्रमिच्चीटेन्नु चोन्नतु केट्टु ञान् निर्गमिच्चीटिनेनाशु नाकूदराल् । वल्मीक मद्ध्यतो न्निन्नु जनिक्कयालम्मुनीन्द्रन्मारभिधानवुं चेय्तार् वाल्मीकियां मुनिश्रेष्ठन् भवान् बहुलाम्नाय वेदियाय् ब्रह्मज्ञनाक न्नी । ऐन्नरुळ् चेय्तेळुन्नळ्ळि मुनिकळुमन्नुतुटङ्ङि ञानिङ्ङने वन्नतुं १०० राम नामत्तिन् प्रभावं निमित्तमाय् राम ! ञानिङ्ङनेयायिच्चमञ्ञीटिनेन् । इन्नु सीता सुमित्रात्मजन्मारोटुं न्निन्ने मुदा काण्मतिन्नवकाशवुं वन्नितेनिक्कु मुन्नं चेय्त पुण्यवुं तन्नाय् फलिच्चु करुणाजलनिधे ! राजीवलोचनं रामं दयापरं राजेन्द्रशेखरं राघवं चक्षुषा काणाय मूलं विमुक्तनायेनहं त्राण निपुण ! त्रिदशकुलपते ! १०५

चित्रकूट प्रवेशं

सीतयासार्द्धं वसिप्पतिनायोरु मोदकरस्थलं काट्टित्तरुवन् ञान् पोन्नालुमेन्नेळुन्नळ्ळिनानन्तिके चेर्न्नुळ्ळ शिष्य परिवृतनांमुनि चित्रकूटाचल गंगयोरन्तरा चित्रमायोरुटजं तीर्त्तु मामुनि तेक्कु वटक्कुं किळक्कु पटिञारुमक्षि विमोहनमाय् रण्टु शालयुं

से (नया) जन्म लेने के कारण उन मुनीन्द्रों ने वाल्मीकि का अभिधान किया और (बताया) आप मुनि श्रेष्ठ वाल्मीकि हैं और बहुवेदों के ज्ञाता होकर ब्रह्मज्ञ बनिये । यह उपदेश देकर मुनियों ने प्रस्थान किया और तब से मैं इस रूप में रहता आ रहा हूं । १०० —हे राम ! राम नाम के प्रभाव से मैं इस रूप में बन पड़ा हूँ । आज सीता तथा सुमित्रात्मज सहित आपका सानन्द दर्शन करने का सुअवर मुझे प्राप्त हुआ । हे करुणानिधि ! मेरे पूर्व में किये पुण्यकर्म आज खूब फलान्वित हो गये । हे त्राण निपुण (समर्थ रक्षक) ! हे त्रिदशकुलपति (देवताओं के देवता) ! राजीवलोचन, दयापर, राजेन्द्रशेखर, रघुवंशी हे राम ! नेत्र सम्मुख आपको देखने के कारण मैं विमुक्त हो गया हूँ । १०५

चित्रकूट-प्रवेश

'सीता के साथ निवास करने योग्य सुखद स्थान मैं आपको दिखा दूंगा, आप मेरे साथ पधारिएगा' यह कहते हुए अपने शिष्यों से परिवृत मुनि (राम के साथ) चले और गंगा के समीप चित्रकूट में मुनि ने एक सुन्दर उटज तैयार किया । फिर उत्तर-दक्षिण तथा पूर्व-पश्चिम में नेत्रों को मोहित करनेवाली दो शालाएँ बनायीं और बताया कि यहीं वास

निर्मिच्चविटेयिरिक्केन्नरुळ् चेय्तु मन्मथतुल्यन् जनकज तन्नोटुं निर्म्मलनाकिय लक्ष्मणन् तन्नोटुं ब्रह्मात्मना मरुवीटिनान् रामनुं । वाल्मीकियाल् नित्य पूजितनाय् सदा काम्यांगियायुळ्ळ जानकि तन्नोटुं सोदरनाकिय लक्ष्मणन्तन्नोटुं सादरमानंदमुळ्क्कोण्टु मेविनान् देवमुनिवर सेवितनायोरु देवराजन् दिवि वाळुन्नतु पोले । ९

दशरथन्द्रे चरमगति

मंत्रिवरनां सुमन्त्ररुमेड्रियोरन्तः शुचा चेन्नयोद्ध्य पुक्कीटिनान् । वस्त्रेण वक्त्रवुमाच्छाद्य कण्णुनीरत्यर्थमिट्टुवीणुं तुटच्चुम— त्तेरुं पुरत्तु भागत्तु निर्त्तिच्चेन्नु धीरतयोटु नृपनें वणङ्ङिनान् धात्रीपते ! जयवीरमौले ! जयशास्त्रमते ! जय शौर्यांबुधे ! जय कीर्त्तिनिधे ! जय स्वामिन् जयजय मार्त्ताण्ड गोत्रजातोत्तंसमे ! जय । इत्तरं चौल्लि स्तुतिच्चु वणङ्ङ्य भृत्यनोटाशु चोदिच्चु नृपोत्तमन् । सोदरनोटुं जन-कात्मजयोटुमेतोरु दिक्किलिरिक्कुन्नु राघवन् । निर्लज्जनायति-पापियामेन्नोटु चोल्लुवानेन्तोन्नु चोल्लियतेन्तुटे लक्ष्मणनेन्तु

कीजिए । ब्रह्मात्मस्वरूप तथा मन्मथ-तुल्य राम जनकजा तथा निर्मल (स्वभाववाले) लक्ष्मण सहित वहीं बस गये । वाल्मीकि से नित्य सेवित होकर तथा कामिनी जानकी और भ्राता लक्ष्मण के साथ प्रेम एवं सन्तोष सहित राम वहाँ पर ऐसे विराजमान हुए जैसे देवमुनियों से पूजित देवराज स्वर्गलोक में परिशोभित होते हैं । ९

दशरथ का स्वर्गवास

मंत्रिप्रवर सुमन्त्र अत्यधिक मानसिक व्यथा लेकर अयोध्या वापस आये तथा अपने मुख को वस्त्र से आच्छादितकर, अत्यधिक दुःख से अश्रु-कण गिराते हुए और (उन्हें) पोंछते हुए, रथ को बाहर खड़ा करके, अपने को संभालकर धैर्यपूर्वक आ राजा को नमस्कार किया । 'हे धात्री-पति ! हे वीरश्रेष्ठ ! (आपकी) जय हो ! हे शास्त्रमति ! (आपकी) जय हो ! हे अगाध शौर्यवाले ! (आपकी) जय हो ! हे कीर्ति-सागर ! जय हो । हे स्वामी ! जय हो ! मार्तण्ड गोत्रजातों के आभूषण ! जय हो ! जय हो !' इस प्रकार स्तुति सहित नमस्कार करनेवाले अपने सेवक से नृपोत्तम ने तुरन्त पूछा—'भ्राता तथा जनकात्मजा सहित राघव

परञ्ञु विशेषिच्चु लक्ष्मीसमयाय जानकी देवियुं। हा राम! हा गुणवारिधे! लक्ष्मण! वारिजलोचने! बाले! मिथिलजे! १० दुःखं मुळुत्तु मरिप्पान् तुटङ्ङुन्न दुष्कृतियामेन्नरिकत्तिरिप्पानुं मक्कळेयुं कण्टेनिक्कु मरिप्पानु मिक्कालमिल्लाते वन्नु सुकृतवुं। इत्थं परञ्ञु केळुन्न नृपेन्द्र-नोटुळ्ळत्तापमोटुर चेय्तु सुमन्त्ररुं श्रीराम सीता सुमित्रात्मजन्मारे-त्तेरिलेट्टिक्कोण्टु पोयेन् तवाज्ञया। श्रृंगिवेराख्यपुर सविधे चेन्नु गंगातटं वसिच्चीटुं दशान्तरे कण्टुतोळुतितु श्रृंगवेराधिपन् कोण्टुवन्नू गुहन् मूलफलादिकळ्। तृक्कैकळ् कोण्टतु तोट्टु परिग्रहिच्चु कुमारन्मार् जटयुं धरिच्चितु पिन्ने रघूत्तमनेन्नोटु चोल्लिनानेन्ने निरूपिच्चु दुःखियाय्कारुमे। चोल्लेणमेन्नुटे तातनोटुं बलालल्ललुळ्ळत्तिलुण्टाकातिरिक्कणं। सौख्यमाययोद्-ध्ययिलेरुं वनङ्ङळिल् मोक्षसिद्धिक्कुं पेरुवळियाय्वरुं। २० माताविनुं नमस्कारं विशेषिच्चु खेदमेन्नेक्कुरिच्चुण्टाकरुतेतुं पिन्नेयुं पिन्नेयुं चोल्क पितावति खिन्ननाय्वार्द्धक्य पीडितनाकयाल्

किस दिशा में बसे हुए हैं? निर्लज्ज एवं अत्यन्त पापी मुझसे बोलने के लिए राम ने क्या कहा? मेरे लक्ष्मण ने क्या कहा? और विशेषकर लक्ष्मी सम जानकीदेवी ने (क्या कहा)? हा राम! हा गुण वारिधि! हे लक्ष्मण! हे वारिजलोचने! हे बाले! हे मिथिलजे! १० —अत्य-धिक दुःख के कारण मृत्यु की राह देखनेवाले मुझ पापी का इस समय यह सौभाग्य नहीं रहा कि (उनके) पुत्र निकट रहें तथा पुत्रों को देखते हुए मर जायँ।' इस प्रकार कहते हुए विलाप करनेवाले नृपेन्द्र से सुमंत्र ने मार्मिक व्यथा लेकर कहा—'आपकी आज्ञा से मैं श्रीराम, सीता और सुमित्रात्मज को रथ में बिठाकर ले गया। श्रृंगवेर नामक पुर में पहुँच-कर गंगातट पर जब सानंद बैठ गये, तब उन्हें देखकर श्रृंगवेरपुर के अधिप गुह ने कंद, मूल, फल आदि के साथ आकर प्रणाम किया। अपने भगवद् करों से स्पर्शकर कुमारों ने उन्हें ग्रहण किया और फिर जटा धारण करके रघूत्तम (राम) ने मुझे बताया कि मेरे संबंध में कोई दुखी न बने, मेरे पिता जी से जाकर बतायें कि मन में जो दुःख है, उसे दूर करें। मैं वन में अयोध्या से भी अधिक सुखी रहूँगा और (मेरे लिए) मोक्षसिद्धिका मार्ग भी प्रशस्त होगा। २० —माता को मेरी ओर से विशेष प्रणाम है; मेरे प्रति उन्हें कुछ भी दुःख होने न पाये। पिता जी को वार्द्धक्य से अत्यधिक पीड़ित समझकर तुम बार-बार मधुर वाक्यामृत

अेन्नॆप्पिरिञ्ञुळ्ळ दुःखमशेषवुं धन्यवाक्यामृतं कॊण्टवकीटणं । जानकियुं तॊळुतॆन्नोटु चॊल्लीटिनाळाननपत्मवुं ताळ्त्ति मन्दंमन्दं अश्रुकणङ्ङळुं वार्त्तु सगद्गदं श्वश्रुपादेषु साष्टांग नमस्कारं । तोणि करेट्टिगुहनोटु कूटवे प्राणवियोगेन निन्नेनटियनुं अक्करेचॆन्निरङ्ङिप्पोय् मरवोळमिक्करे निन्नु शवशरीरं पोलॆ । नालञ्चु नाळिक चॆन्न वारे धैर्यमालंब्य मन्दं निवृत्तनायीटिनेन् । तत्र कौसल्य करञ्ञु तुटङ्ङिनाळ् दत्तमल्लो पण्टु पण्टे वरद्वयं इष्टयायोरु कैकेयिक्कु राज्यमो तुष्टनाय् नल्कियाल् प्पोरायि-रुन्नितो ३० मल्पुत्रनॆक्काननान्ते कळवतिनिप्पापियॆन्तु पिळच्चितु दैवमे ! एवमॆल्लां वरुत्तित्तनिये परिदेवनं चॆय्वति-नॆन्तॊरु कारणं ? भूपति, कौसल्य चॊन्नॊरु वाक्कुकळ् तापेन केट्टु मन्दं परञ्ञीटिनान्—पुण्णिलॊरु कॊळ्ळिवय्क्कुन्नतु पोलॆ पुण्यमिल्लातमां खेदिप्पियाय्क नी, दुःखमुळ्ळकॊण्टु मरिप्पान् तुटङ्ङुमॆन्नुळ्क्काम्पुरुक्किच्चमय्क्काय्क वल्लभे! प्राण प्रयाणमटुत्त तपोधनन् प्राणवियोगे शपिच्चतु कारणं केळ्क्क नी शाप प्रकारं मनोहरे ! साक्षाल् तपस्विकळीश्वरन्मारल्लो; अर्द्धरात्रौ शर-

---

से मेरे कारण उनके मन में उत्पन्न पीड़ा एवं दुःख को दूर करते रहो।' अपने मुख कमल को आनतकर तथा हाथ जोड़कर जानकी ने अश्रुकणों की वर्षा करते हुए मंद-मंद एवं गद्गद वाणी में मुझसे कहा, 'श्वशुर के चरणों पर साष्टांग प्रणाम है।' गुह के साथ वे नाव पर चढ़े और मैं दास प्राण-वियोग दुःख लेकर खड़ा रह गया। उस पार उतरकर उनके अगोचर होने तक मैं इधर किनारे पर हतप्रभ एवं मृत-प्राय खड़ा रहा। चार-पाँच घड़ियाँ बीतनेपर मैं साहसपूर्वक संभल पाया। तब कौसल्या रो-रोकर कहने लगीं—'दो वर उन्हें पहले से प्रदत्त हैं। अपनी प्यारी कैकेई को सन्तुष्ट हो राज्य देना भर क्या पर्याप्त नहीं था? । ३० मेरे पुत्र को वनान्तर में भिजवा देने योग्य मैंने (आपका) क्या अपराध किया था? यह सब स्वयं करके अब खिन्न होने की क्या पड़ी?' बड़े उत्ताप के साथ कौसल्या की बातें सुनकर भूपति ने धीरे से कहा—'जले पर नामक डालकर इस पापात्मा को और अधिक दुखी मत बनाओ। हे वल्लभे! दुःख से मरनेवाले मेरे मन को और टुकड़े-टुकड़े होने मत दो। यह सब (राम का वियोग दुःख) मृत्यु की राह देखते तपोधन के प्राण-वियोग के समय के शाप का परिणाम है। हे सुन्दरी! तुम शाप की बात सुनो। तपस्वी लोग साक्षात् ईश्वर

जालवुं चापवुं हस्तेधरिच्चु मृगया विवशनाय् वाहिनीतीरे वनान्तरे मानसमोहेन निल्क्कुन्न नेरमोरुमुनि दाहेन माता पिताक्कळ् नियोगत्ताल् साहसत्तोटिरुट्टत्तु पुऱप्पेट्टु ४० कुंभवुं कौण्टु नीऱ्-कोरुवान् वन्नवन् कुंभेन वेळ्ळमन्पोटु मुक्कुंविधौ कुंभत्तिल् नीरकं पुक्कशब्दं केट्टु कुंभितुम्पिक्कय्यिलंभो गतमिति चिन्तिच्चुटन् नादभेदिनं सायकं सन्धाय चापे दृढमयच्चीटिनेन् । हा ! हा ! हतोस्म्यहं हा ! हा ! हतोस्म्यहं हाहेति केट्टितु मानुष वाक्यवुं; ञानोरु दोषमारोटुमे चेय्तील केनवाहन्त ! हतोहं विधे ! वृथा, पार्त्तिरिक्कुन्नितु मातापिताक्कन्मारार्त्ति कैक्कोण्टु तण्णीक्कुं दाहिक्कयाल् । इत्तरं मर्त्यनादं केट्टु ञानति त्रस्तनाय्त्तत्र चेन्नत्तलोटुं तदा । तापस बालकन् पादङ्ङळिल् वीणु तापेन चौन्नेन् मुनिसुतनोटु ञान् स्वामिन् दशरथनाय राजावु ञान् मामपराधिनं रक्षिक्क वेणमे । ञानङ्यिातें मृगया विवशनायानतण्णीऱ् कुटिक्कुं नादमेन्नोर्त्तु ५० बाणमेय्तेनति— पायापियोरु ञान् प्राणन् कळयुन्नितुण्टिनि वैकातें । पादङ्ङळिल् वीणु केणीटुमेन्नोटु खेदं कलर्न्नु चौन्नान् मुनिबालकन्—कर्म्ममत्रे

तुल्य हैं । आधी रात को वनान्तर में वाहिनी (नदी) तीरपर, हाथ में धनुष-बाण लिये, मृगया-विवश मन से खड़े रहते समय, प्यास से खिन्न अपने माता-पिता के अनुरोध पर एक मुनि पानी भर ले जाने के लिए हाथ में घड़ा लिये रात के अंधेरे में साहसपूर्वक निकल पड़ा । ४० पानी में घड़ा डुबाते समय घड़े के भीतर जल के जाने की ध्वनि सुनकर उसे हाथी के सूँड में जल भरने की ध्वनि समझकर मैंने धनुष खींचकर ज़ोर से शब्द-बेधी बाण चलाया । 'हा हा ! मैं मारा गया, मैं मारा गया, हा हा !' की मनुष्य-वाणी सुनी । 'मैंने किसीका कभी बुरा नहीं किया । हे भगवान ! फिर मैं क्यों मारा गया, व्यर्थ मैं क्यों मारा गया ! दाहवश पानी के लिये तरसते हुए मेरे माता-पिता (मेरी) प्रतीक्षा में बैठे हुए हैं ।' इस तरह की मनुष्य-वाणी सुनकर अत्यन्त त्रस्त एवं दुखी हो तापस-बालक के निकट पहुँचकर तथा उसके चरणों पर पड़कर मैंने दुखार्त वाणी में कहा—'हे स्वामी ! मैं राजा दशरथ हूँ । मुझ अपराधी की रक्षा करें । मुझ पापी ने मृगया-विवश होने के कारण हाथी के जल पीने के स्वर की मिथ्या प्रतीति के कारण बाण चलाया । अब मैं अविलम्ब अपने प्राणों को छोड़ दूँगा ।' ५० चरणों पर पड़कर दीन वाणी में प्रलाप करते मुझ (अपराधी) से मुनि-बालक ने खिन्न

तट्टक्कावतल्लाक्कुमे ब्रह्महत्यादि पाप मुण्टाकयिल्लते वैश्यनत्रे ञान् ममपिताक्कन्मारेयाश्वसिप्पिक्क नी येतुमे वैकाते। वार्द्धक्यमेरि जरानरयुं पूण्टु नेत्रवुं काणाते पार्त्तिरुन्नीटुन्नु; दाहेन ञान् जलं कोण्टङ्ङु चेल्लुवान् दाहं कॆट्टुक्क नी तण्णीर कॊटुत्तिनि वृत्तान्तमॆल्लामवरोट रियिक्क सत्यमॆन्नालवर् निन्नेयुं रक्षिक्कुं। ॲन्नुटॆ तातनु कोपमुण्टाकिलो निन्नेयुं भस्म-माक्कीटुमरिक नी। प्राणङ्ङळ् पोकाञ्ञु पीडयुण्टेट्वुं बाणं परिक्क नी वैकरुतेतुमे। ॲन्नतु केट्टु शल्योद्धरणं चॆय्तु पिन्नॆस्सजलं कलशवुं कैक्कोण्टु ६० दम्पतिमारिरिक्कुन्नविटेक्कति संभ्रमत्तोटु ञान् चॆल्लुं दशान्तरे! वृद्धतयोटु नेत्रङ्ङळुं वेर्पॆट्टर्द्धरात्रिक्कु विशन्नु दाहिच्चहो! वर्त्तिक्कुमॆङ्ङळ्क्कु तण्णीर्क्कु पोयोरु पुत्रनुमिन्नु मरन्नु कळञ्ञतो; मट्टिल्लोराश्रयं ञङ्ङळ्क्कोरु नाळुं मुट्टुं भवानोळिञ्ञेन्तु वैकीटुवान्। भक्ति-मानेट्वुं मुन्नमॆल्लामति स्वस्थनाय् वन्नितो नी कुमारा! बलाल्। इप्रकारं निरूपिच्चिरिक्कुं विधौमल्पाद विन्यासजध्वनि केळ्क्कायि। कालूप्पॆरुमाट्टं मदीयं तदा केट्टु तात्पर्य्यमोटु परञ्ञु

होकर कहा--"कर्मफल है, कोई उसे रोक नहीं सकता। मैं वैश्य हूँ, इसलिए आपको ब्रह्महत्या का पाप लगने न पायेगा। अब आप तुरन्त (जाकर) मेरे माता-पिता को सांत्वना दीजिए। वे वार्द्धक्य सहज जरा-नरा तथा अंधेपन से पीड़ित हो बैठे हैं। दाहवश मेरे जल लाने की प्रतीक्षा में हैं। जल देकर उनकी प्यास बुझा दीजिए और सारा हाल कह समझाइए। वे निश्चय ही, आपको क्षमाकर देंगे। अगर मेरे पिता को क्रोध आ जाए तो वे आपको भस्मकर देंगे, यह आप ध्यान में रखिए। (अब) प्राण के न निकलने से मैं अत्यन्त पीड़ित हूँ, (इसलिए) आप तुरन्त बाण निकाल लीजिए।" यह सुनकर मैंने बाण निकाल लिया और जलपूर्ण कुंभ हाथ में लिये। ६० --अत्यन्त संकोच एवं भय के साथ माता-पिता के बैठने के स्थान पर मेरे पहुँचते समय (वे कह रहे थे) 'वार्द्धक्य से अंधे और भूख-प्यास से खिन्न हमारे लिए पानी लाने आधी रात को गया पुत्र भी क्या आज हमें भूल गया! हे भगवान! और कोई अन्य आसरा हमें नहीं है। आज (उसके) विलम्ब का क्या कारण है! हे पुत्र, तुम (हमारे प्रति) अतीव भक्त हो! पहले तुम सानन्द जल्दी ही आया करते थे।' इस प्रकार के सोच-विचार में बैठते समय अचानक मेरे पाद-विन्यास की ध्वनि सुनाई पड़ी। मेरी आहट

जनकनुं वैकुवानेन्तु मूलं मम नन्दन ! वेगेन तण्णीर तरिक न्नी सादरं। इत्थमाकर्ण्य ञान् दम्पतिमार् पदं भक्त्या नमस्करिच्चेत्रयुं भीतनाय् वृत्तान्तमेल्लामड़ियिच्चितन्नेरं पुत्र- नल्लल्लयोद्ध्याधिपनाकिय ७० पृथ्वीवरन् ञान् दशरथनेन्नु पेर् रात्रौ वनान्ते मृगया विवशनाय् शार्दूलमुख्य मृगङ्ङळेयुं कोन्नु पार्त्तिरुन्नेन् नदीतीरे मृगाशया। कुंभत्तिल् नीरकं पुक्क शब्दं केट्टु कुंभिवरन् निज तुम्पिक्करं तन्नि- लंभस्सु कोळ्ळुन्न शब्दमेन्नोर्क्कयालम्पयच्चे नड़ियातेयतुं बलाल् पुत्रनु कोण्ट नेरत्तु करच्चिल् केट्टेत्रयुं भीतनाय् तत्र चेन्नीटिनेन्। बालनेक्कण्टु नमस्करिच्चेनतुमूलमवनुमेन्नोटु चोल्लीटिनान् कर्म्ममत्रे मम वन्नितु तव ब्रह्महत्या पापमुण्टाकयिल्लेटो ! कण्णुंपोटिञ्ञु वयस्सुमेरेप्पुक्कु पर्ण्णशालान्ते विशन्नु दाहत्तोटुं ऐन्नेयुं पार्त्तिरिक्कुं पिताक्कन्मार्क्कु तण्णीर् कोटुक्कयेन्नेन्नोटु चोल्लिनान्। ञानतु केट्टुळ्ळ्टोटु वन्नेनिनि ज्ञानिकळां निङ्ङळोक्के क्षमिक्कणं ८० श्रीपाद पङ्कजमेन्नियेे मट्टिल्ल पापियायोरटि- यन्नवलंबनं। जन्तु विषय कृपावशन्मारल्लो सन्ततं तापस

सुनकर बड़े उत्साह के साथ तब जनक (पिता) ने कहा—'हे मेरे पुत्र ! विलंब क्यों हुआ ? तुम तुरन्त जल दो।' यह सुनकर भक्तिपूर्वक दम्पति के चरणों में प्रणाम अर्पित करके, अत्यन्त भयातुर वाणी में उन्हें सारा वृत्तान्त तब कह सुनाया कि मैं (आपका) पुत्र नहीं हूँ, अयोध्यापति। ७० —राजा दशरथ मेरा नाम है। रात के समय शार्दूल जैसे भयंकर जन्तुओं को मारकर, मृगया विवश हो वन में नदी तीर पर और जानवरों की प्रतीक्षा में बैठा रहा। कुंभ (घड़े) में जल भरने की ध्वनि सुनकर उसे कुंभिवर (गजवर) के सूँड़ में पानी भरने की ध्वनि समझकर, भूल से मैंने बाण चलाया, जो एकदम जाकर पुत्र को लगा। तब उसकी पुकार सुनकर मैं भयभीत हो उसके पास पहुँच गया। बालक को देखकर प्रणाम किया, जबकि उसने मुझे बताया कि यह मेरे कर्म का ही फल है, आपको इस कारण ब्रह्महत्या का पाप नहीं लगेगा। उसने आग्रह किया कि अत्यधिक वार्द्धक्य के कारण निस्तेज नेत्रवाले मेरे माता-पिता पर्णशाला में भूख-प्यास से पीड़ित हो मेरे जल लाने की प्रतीक्षा में हैं; आप उन्हें जल ले जाकर प्रदान करें। यह (आग्रह) सुनकर मैं तुरन्त आपके पास पहुँचा हूँ। आप ज्ञानी लोग सब कुछ क्षमा करें। ८० —मुझ पापी दास के लिए (आपके) पाद-पंकजों को छोड़ दूसरा कोई अवलम्ब नहीं है।

पुंगवऩ्मार निङ्ङळ् । इत्थमाकर्ण्य करञ्ञु करञ्ञवरॆन्नयुं दुःखं कलर्न्नु चॊल्लीटिनार् पुत्रनॆविटॆक्किटक्कुन्नितु भवान् तत्रैव ञङ्ङळॆक्कॊण्टु पोयीटणं । ञानतु केट्टवर् तम्मॆयॆटुत्तति दीनतयोटु मकनुटल् काट्टिनेन् । कष्टमाहन्त ! कष्टं ! कर्म्ममॆन्नवर् तॊट्टु तलोटि तनयशरीरवुं पिन्नॆप्पलतरं चॊल्लि विलापिच्चु खिन्नत-योटवरॆन्नोटु चॊल्लिनार्—ऩीयिनिऩल्ल चित चमच्चीटणं तीयुमेटं ज्वलिप्पिच्चु वैकीटातॆ । तत्र ञानुं चित कूट्टिनेनन्नेरं पुत्रेणसाकं प्रवेशिच्चवर्कळुं । दग्ध देहऩ्मारुमाय् च्चॆऩ्नु मूवरुं वृत्रारिलोकं गमिच्चु वाणीटिनार् ९० वृद्ध तपोधननऩ्नॆरमॆन्नोटु पुत्रशोकत्ताल् मरिक्कॆऩ्नु चॊल्लिनान् । शापकालं ऩमुक्कागत-मायितु तापस वाक्यमसत्यमायुं वरा। मन्नवनेवं पऱञ्ञु विलापिच्चु पिन्नॆयुं पिन्नॆयुं केणु तुटङ्ङिनान् हा ! राम ! पुत्र ! हा ! सीते ! जनकजे ! हा राम ! लक्ष्मण ! हा हा ! गुणांबुधे ! ऩिङ्ङळोटुं पिरिञ्ञॆन्मरणं पुनरिङ्ङनॆ वऩ्नतु कैकेयि संभवं । राजीव नेत्रनॆच्चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु राजा दशरथन् पुक्कु सुरालयं । ९६

आप तापस प्रवर सदा जीवियों के प्रति कृपालु ही तो हैं ।' मेरी बात सुनकर रो-रोकर अत्यन्त कातर वाणी में उन्होंने मुझे बताया कि पुत्र जहाँ पड़ा है, वहाँ आप हमें ले चलें । यह सुनकर उन्हें उठा ले जाकर मैंने पुत्र का शरीर दिखाया । तनय के शरीर में लिपटकर वे बोल उठे– "कष्ट है ! कष्ट है ! हन्त ! कर्म है ।" इस प्रकार कई तरह प्रलाप एवं विलाप करते हुए उन्होंने मुझसे आग्रह किया—'आप विलंब किये बिना, तुरन्त ही चिता सजाइये और खूब अग्नि प्रज्वलितकर दीजिए ।' मैंने तब चिता जलायी और पुत्र के साथ ही उन्होंने भी चिता में प्रवेश किया । इस प्रकार अपने शरीर को दग्ध करके वे तीनों वृत्रारि-लोक (स्वर्ग) में पहुँच गये । ९० वृद्ध तपोधन ने तब (चिता में जल मरते समय) मुझे बताया था कि पुत्र-शोक से तुम्हें मरना पड़ेगा । (अत:) शाप-समय मेरे लिए आ गया है; तापस-वाक्य कभी असत्य नहीं निकल सकता है । यह कहते हुए बार-बार विलाप करते-करते राजा चिल्लाने लगे—"हा ! राम ! पुत्र ! हा ! सीते ! जनकजे ! हा ! राम ! लक्ष्मण ! हा हा ! गुणांबुधे ! कैकेई के कारण तुम लोगों से वियुक्त हो इस प्रकार मुझे मरना पड़ रहा है ।' राजीवनेत्र की चिन्ता करते-करते राजा दशरथ सुरालय को चले गये । ९६

नारीजन विलापं

दुःखिच्चु राजनारी जनवुं पुनरोक्कै वाविट्टु करञ्ञु तुटङ्ङिनार्। वक्षसि ताडिच्चु केळुन्नघोषङ्ङळ् तल्क्षणं केट्टु वसिष्ठ मुनीन्द्रनुं। मन्त्रिकळोटुमुळ्ळिस्ससंभ्रममन्तःपुरमकं पुक्करुळि चेय्तु-तैलमय द्रोणितन्निलाक्कू धरापालकन् तन्नुटल् केटु वन्नीटाय्वान्। अन्नरुळ् चेय्तु दूतन्मारेयुं विळिच्चिन्नु तन्ने निङ्ङळ् वेगेन पोकणं वेगमेरीटुं कुतिरयेरिच्चेन्नु केकय-राज्यमकं पुक्कु चोल्लुक। मातुलनाय युधाजित्तिनोटिनियेतुमे कालं कळयातयय्क्कणं शत्रुघ्ननोटुं भरतनेयेन्नति विद्रुतं चेन्नु चोल्केन्नयच्चीटिनान्। केळ्क्क नृपेन्द्र! वसिष्ठनरुळ् चेय्त वाक्कुकळ् शत्रुघ्ननोटुं भरतने एतुमे वैकातयोद्ध्यय्कयय्क्केन्नु दूतवाक्यं केट्टनेरं नराधिपन् १० बालकन्मारोटु पोकेन्नु चोल्लिनान् काले पुरप्पेट्टितु कुमारन्मारुं। एतानुमङ्ङीरापत्त-कप्पेट्टितु तातनेन्नाकिलुं भ्रातावितेन्नाकिलुं अन्तकप्पेट्टतेन्नुळ्ळिल् पलतरं चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु मार्गे भरतनुं सन्तापमोटुमयोद्ध्या-पुरि पुक्कु सन्तोष वर्जितं शब्दहीनं तथा। भ्रष्टलक्ष्मीकं

नारीजनों का विलाप

रानियाँ दुखी हुईं; फिर सब चिल्लाकर रो उठीं। छाती पीटकर रोने की आवाज़ तब मुनीन्द्र वसिष्ठ ने सुनी। वे मंत्रियों के साथ घूमते हुए विवश हो अन्तःपुर में आकर बोले—धरापालक (राजा) का शरीर तैलपात्र में रखिए ताकि वह सड़ने न पाए। यह उपदेश देने के उपरांत दूतों को बुलाकर कहा कि तुम लोग तेज़ घोड़ोंपर सवार हो आज शीघ्र ही केकय राज्य में पहुँचकर मामा युधाजित से यह कहें कि भरत-शत्रुघ्न को अविलंब बुला लाने के लिए हमें भेजा गया है। दूतों के यह कहने पर कि नृपेन्द्र! वसिष्ठ का आदेश सुनिए, शत्रुघ्न के साथ भरत को किसी भी प्रकार तुरन्त अयोध्या भिजवा दें, नराधिप ने। १० —बालकों को जाने की अनुमति दी और कुमार लोग तत्क्षण (अयोध्या को) निकले। 'वहाँ क्या विपत्ति आ पड़ी होगी? पिता या भ्राता पर क्या गुज़री है' इस प्रकार मार्ग में कई प्रकार की चिन्ताओं से ग्रस्त हो, बड़े सन्ताप के साथ भरत सन्तोषवर्जित एवं शब्दहीन अयोध्या में पहुँचे। लक्ष्मीरहित, निर्जन एवं उत्सवहीन राज्य को देखकर उसके संबंध में आशंकित हो निस्तेज भरत-शत्रुघ्न राज-लक्षणों से रहित राजगृह के अन्दर प्रविष्ट हुए। वहाँ

जनोद्बाधजर्ज्जितं दृष्ट्वा विगतोत्सवं राज्यमेंत्तिदं तेजो-
विहीनमकं पुक्किनु चेन्नु राजगेहं राजलक्षण वर्ज्जितं। तत्र
कैकेयियेक्कण्टु कुमारन्मार् भक्त्या नमस्करिच्चीटिनारन्तिके।
पुत्रनेक्कण्टु सन्तोषेणमातावुमुत्थाय गाढमालिंग्य मटियिल् व—
च्चुत्तमांगे मुकर्न्नाशु चोदिच्चितु भद्रमल्लीमल् कुलत्तिङ्कलेक्कवे,
माताविनुं पितृ भ्रातृजनङ्ङळ्क्कुमेतुमे दुःखमिल्लल्ली पऱक न्नी। २०
इत्तरं कैकेयि चोन्न नेरत्ततिनुत्तरमाशु भरतनुं चोल्लिनान्
खेदमुण्टच्छनेक्काणाञ्ञेनिक्कुळिळल् तातनेविटे वसिक्कुन्नु
मातावे! मातावितोटु पिरिञ्ञु रहसि ञान् तातनेप्पण्टु
काण्मीलोरुन्नाळुमे। इप्पोळ् भवति ताने वसिक्कुन्नतेन्तुळ्प्पूविलुण्टुमे
तापवुं भीतियुं। मल्पितावेङ्ङु पऱकेन्ततु केट्टु तल्प्रियमाशु
कैकेयियुं चोल्लिनाळ्--एन्मकनेन्तु दुःखिप्पानवकाशं त्निन्मनो-
वाञ्चितमोक्के वरुत्ति ञान्। अश्वमेधादि यागङ्ङळेल्लां चेय्तु
विश्वमेल्लाटवुं कीर्त्ति परत्तिय सल्पुरुषन्मार् गतिलभिच्चीटिनान्
त्वल्पितावेन्नुकेट्टोरु भरतनुं क्षोणीतले दुःख विह्वल चित्तनाय्-
वीणु विलापं तुटङ्ङिनानेवयुं हा! तात! दुःख समुद्रे
निमज्यमामेतोरु दिक्किनु पोयितु भूपते! ३० अन्नेयुं राज्य

कैकेई को देखकर कुमारों ने भक्तिपूर्वक उनके निकट आकर प्रणाम किया। पुत्र को देखकर सन्तोषपूर्वक उसे उठाकर माता ने उसको गले से लगाया, गोद में बिठाकर (उसके) उत्तमांगों का चुंबन लिया और पूछा 'क्या मेरे कुल में सब कुशल-से हैं ? बताओ तो सही, माता, पिता और भ्रातृजनों को किसी प्रकार का दुःख तो नहीं।' २० —इस प्रकार कैकेई के पूछने पर उसके उत्तर के रूप में भरत ने कहा—हे माता जी! पिता जी को न देख पाने से मेरे मन में बड़ा दुःख हो रहा है, पिता जी कहाँ रहते हैं ? माताजी से अलग हो मैंने पहले कभी पिताजी को एकान्त में नहीं देखा है। अब आपको अकेली यहाँ पाकर मेरे मन में ताप एवं भीति उत्पन्न हो रही है।' 'मेरे पिताजी कहाँ हैं' यह (प्रश्न) सुनकर अपने पुत्र को कैकेई ने समझाया—'मेरे पुत्र को चिन्तित होने की क्या बात है, मैंने तुम्हारी मनोकामना सिद्धकर ली है। अश्वमेध आदि सारे यज्ञों का अनुष्ठान करके संसार भर में यशस्वी बने सद्पुरुषों को जो गति प्राप्त होती है, वही तुम्हारे पिताजी को प्राप्त हुई है।' यह सुनकर मन में अत्यधिक दुखी एवं विह्वल हो भूमिपर पड़कर भरत विलाप करने लगे— 'हे तात! मुझे दुःख-सागर में निमज्जितकर आप किस दिशा में गये

भारत्तेयुं राघवन् तन्नुटे कय्यिल् समर्पियाते पिरि— ञ्ञेङ्ङु पोय्क्कोण्टु पितावे ! गुणनिधे ! ञङ्ङळ्क्कुमारुटयोरिनि दैवमे ! पुत्रनीवण्णं करयुन्नतुनेरमुत्थाप्य कैकेयि कण्णुनीरुं तुट— च्चाश्वसिच्चीटुक दुःखेनकिंफलमीश्वर कल्पितमेल्लामरिक न्नी। अभ्युदयं वरुत्तीटिनेन् ञान् तव लभ्यमेल्लामे लभिच्चितरिक न्नी। मातृवाक्यं समाकर्ण्य भरतनुं खेद परवश चेतसा चोदिच्चु एतानु- मोन्नु परञ्ञतिल्ले मम तातन् मरिक्कुन्न नेरत्तु मातावे ! हा ! राम ! राम ! कुमार ! सीते ! मम श्रीराम लक्ष्मण ! राम ! राम ! राम ! सीते ! जनकसुतेति पुनः पुनरातुरनाय् विलापिच्चु मरिच्चितु ताततु केट्टनेरं भरतनुं मातविनोटु चोदिच्चानतेन्तय्यो ! ४० तातन् मरिक्कुन्न नेरत्तु रामनुं सीतयुं सौमित्रियुमरिकत्तिल्ले ? ऐन्नतु केट्टु कैकेयियुं चोल्लिनाळ् मन्नवन् रामनभिषेकमारभ्य सन्नद्धनायतु कण्टनेरत्तु ञानेन्तुटे नन्दनन् तन्ने वाळिक्कणं ऐन्नु परञ्ञभिषेकं मुटक्कियेन् निन्नोटतिन् प्रकारं परयामल्लो। रण्टु वरं मम तन्नु तव पिता पण्टतिलोन्निनाल् निन्ने वाळिक्केन्नुं रामन् वनत्तिन्नु पोकेन्नु

हैं ? ३० --हे पिताजी ! हे गुणनिधे ! मुझे और राज्यभार को राम के हाथ में समर्पित किये बिना आप हमसे कहाँ दूर चले गये ? हे दैव ! अब हमारा कौन रक्षक है !' पुत्र के इस प्रकार रोते समय कैकेई ने उन्हें उठाया और अश्रुजल पोंछ लिया, (और कहा) शान्त हो जाओ, दुःख से क्या फलहोगा ? तुम यह समझ लो कि सब कुछ ईश्वर-कल्पित है। मैंने तुम्हारे अभ्युदय का पूरा प्रबन्धकर लिया है; तुम भलीभाँति जान लो कि तुम्हारे लिए प्राप्य सब कुछ मैंने (तुम्हारे लिए) हस्तगत कर लिया है।' मातृ-वचन सुनकर भरत ने दुःख-परवश हो पूछा--'हे माताजी ! मेरे पिताजी ने मरते समय कुछ भी नहीं कहा ?' (कैकेई ने कहा) हा ! राम ! राम ! कुमार ! सीते ! मम श्रीराम लक्ष्मण ! राम ! राम ! राम ! सीते ! जनकसुते ! इस प्रकार बार-बार आतुरता पूर्वक चिल्ला- चिल्लाकर और विलापकर पिता मर गये।' यह सुनकर भरत ने माता से पूछा--ऐसा क्यों ! ४० 'पिता की मृत्यु के समय राम, सीता और सौमित्र क्या उनके निकट नहीं थे ?' यह सुनकर कैकेई ने कहा--"राजा को राम के अभिषेक का आरंभ करने के लिए सन्नद्ध देखकर मैंने अपने पुत्र के अभिषेक का आग्रह करके उसमें बाधा डाली। यह कैसे हुआ, यह मैं तुम्हें बता दूंगी। तुम्हारे पिता ने मुझे पहले दो वर दिये थे। एक वर से तुम्हें

मट्टेतुं भूमिपन् तन्नोटितु कालमर्त्थिच्चेन्; सत्य परायणनाय नरपति पृथ्वीतलं निनक्कुं तन्नु रामने कानन वासत्तिनाय-यच्चीटिनान् । जानकी देवि पातिव्रत्यमालंब्य—भर्त्रासमं गमिच्चीटिनाळाशु सौमित्रियुं भ्रातविनोटु कूटेप्पोयान् । तातनवरे निनच्चु विलापिच्चु खेदेन राम रामेति देवालयं ५० पुक्कानरिकेन्नु मातृ वाक्यं केट्टु दुःखिच्चु भूमियिल् वीणु भरतनुं; मोहं कलर्न्न नेरत्तु कैकेयियुमाहन्त ! शोकत्तिनेन्तोरु कारणं ? राज्यं निनक्कु संप्राप्तमाय् वन्नितु पूज्यनाय् वाळ्क चापल्यं कळञ्ञुनी । एन्नु कैकेयि परञ्ञतु केट्टुटनोन्नु कोपिच्चु नोकीटिनान् मातरं । क्रोधाग्नि तन्निल् दहिच्चु पोमम्मयेन्नाधि पूण्टीटिनार् कण्टु निन्नोर्कळुं । भर्त्ताविनेक्कोन्न पापे ! महाघोरे ! निस्रपे ! निर्द्दये ! दुष्टे ! निशाचरी ! निन्नुटे गर्भत्तिलुत्भविच्चेनोरु पुण्यमिल्लात महापापि ञानहो । निन्नोटुरियाटरुतिनि ञान् चेन्नु वह्नियिल् वीणु मरिप्पनल्लाय्किलो । काळकूटं कुटिच्चीटुवनल्लाय्किल् वाळेट्टुत्ताशु कळुत्तरुत्तीटुवन् । वल्ल कणक्किलुं ञान्

राजा बनाने तथा दूसरे से राम को चौदहवर्ष के लिए वन में भेज देने की मैंने उस समय अभ्यर्थना की । सत्यपरायण राजा ने पृथ्वीतल तुम्हें दिया और राम को वनवास के लिए भेज दिया । जानकी देवी पातिव्रत्य धर्म का पालन करती हुई पति के साथ वन में गयी तो सौमित्र भी भ्राता के साथ (वन को) गया । उनका अनुस्मरण कर दुःख से विलाप एवं 'राम, राम' चिल्लाते हुए पिता को देवालय (स्वर्गलोक) । ५० —गया जान लो, माता का यह वचन सुनकर उत्ताप से भरत भूमि पर गिर पड़े । उनको बुद्धिभ्रष्ट होते देखकर कैकेई पूछने लगी—"हन्त ! शोक के लिए क्या कारण है ? राज्य तुम्हें प्राप्त हो गया है, तुम चापल्य को त्यागकर यशस्वी बन शासन करो ।" इस प्रकार जब कैकेई को कहते हुए सुना तब (उन्होंने) माता की ओर कोप से देखा । क्रोधाग्नि में माता दग्ध हो जाएगी, यह सोचकर दर्शक लोग घबरा उठे । 'अपने पति की हत्या करनेवाली हे पापी ! महाभयंकरी ! हे निस्रपे (निर्लज्जा) ! हे निर्दये ! हे दुष्टे ! हे निशाचरी ! तुम्हारे गर्भ से पैदा हुआ पुण्यहीन मैं महापापी हूँ । तुमसे मुझे अब बात तक नहीं करनी चाहिए । या तो आग में कूद मरूँगा या कालकूट पी लूँगा या तलवार लेकर स्वयं गला काट डालूंगा । हे दुष्टे ! हे भयंकरी ! किसी न किसी प्रकार से मैं अपना

मरिच्चीटुवनिल्लोरु संशयं दुष्टे ! भयङ्करी ! ६० घोरमायुळ्ळ कुंभी पाक माकिय नारकं तन्निल् वसिक्कु मितुमूलं। इत्तरं मातरं भर्त्सिच्चु दुःखिच्चु सत्वरं चेन्नु कौसल्या गृहं पुक्कान् पादे नमस्करिच्चोरु भरतने मातावु कौसल्ययुं पुणर्न्नीटिनाळ् कण्णु नीरोटुं मेलिञ्ञाति दीनयाय् खिन्नयायोरु कौसल्य चोल्लीवाळ् कर्म्म दोषङ्ङळितेल्लामकप्पेट्टितेन्मकन् दूरत्तकप्पेट्ट कारणं। श्रीरामनुमनुजातनुं सीतयुं चीरांबर जटाधारिकळाय्वनं प्रापिच्चितेन्नेयुं दुःखांबुराशियिल् तापेन मग्नयाक्कीटिनाऱ् निर्द्दयं। हा ! राम ! राम ! रघुवंश नायक ! नारायण ! परमात्मन् जगल्पते ! नाथ ! भवान् मम नन्दननाय् वन्नु जातनायीटिनान् केवलमेङ्किलुं दुःखमेन्नेप्पिरियुन्निल्लोरिक्कलुमुळ्-क्काम्पिलोर्त्तालि विधिबलमां तुलों। ७० इत्थं करयुन्न मातावु तन्नेयुं तत्वा भरतनुं दुःखेन चोल्लिनान् आतुरमानसयाकाय्कितु कोण्टु मातावु ञान् पऱयुन्नतु केळ्क्कणं। राघव राज्याभिषेकं मुटक्कियाळ् कैकेयियाकिय मातावु मातावे ! ञानऱिञ्ञिट्टिल्ल राघवन् तन्नाण ञानऱिञ्ञवेयतेङ्किलो मातावे ! ब्रह्महत्या

अन्तकर डालूँगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। ६० तुम इस कारण घोर कुंभीपाक नरक में जाकर पड़ोगी।' इस प्रकार माता की भर्त्सनाकर और (स्वयं) दुखी हो तुरन्त कौसल्या के गृह में (भरत) चले गये। अपने चरणों पर प्रणाम करनेवाले भरत को माता कौसल्या ने उठाकर गले से लगाया और खिन्नता से कृशकाया बनी कौसल्या ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से कहा—"मेरे पुत्र के दूर रहने के कारण ये सारे कर्मदोष आ पड़े। मुझे निर्दय दुख-सागर में निमज्जितकर श्रीराम अनुज और सीता सहित वल्कल एवं जटाधारी बन बन में चले गये। हा राम ! राम ! हे रघुवंश-नायक ! हे नारायण ! हे परमात्मा ! हे जगत्पते ! हे नाथ ! आपने केवल मेरे पुत्र रूप में जन्म लिया है। (फिर भी) दुःख मेरा पीछा नहीं छोड़ता। मन में विचार करें तो सब विधि-बल ही है।"७० इस प्रकार विलाप करती माता को प्रणामकर भरत ने व्यथित होकर कहा—'आप इसके संबंध में सोचकर मन में कुंठित न हो जाइये; माता जी ! आप मेरा कथन सुनने की कृपा करें ! हे माता जी ! राम के राज्याभिषेक में विघ्न माता कैकेई ने डाला है। राघव की सौगंध है, मुझे इसकी पहले सूचना नहीं थी। हे माता जी ! मेरी जानकारी से अगर यह हुआ है तो शतब्रह्म हत्याओं का पाप मैं भोगूँगा, इसमें कोई संदेह नहीं

शतजातमां पापवुमम्मे ! भुजिक्कुन्नतुण्टु ञान् निर्णयं। ब्रह्मात्मजनां वसिष्ठ मुनियेयुं धर्म्मदारङ्ङळरुन्धति तन्नेयुं खड्गेन निग्रहिच्चालुळ्ळ पापवुमोक्कयनुभविच्चीटुन्नतुण्टु ञान्। इङ्ङने नाना शपथङ्ङळुं चेय्तु तिङ्ङिन दुःखं कलर्न्नु भरतनुं केळुन्न नेरं जननियुं चोल्लिनाळ् दोषं निनक्केतुमिल्लेन्नरिञ्ञु ञान्। इत्थं परञ्ञु पुणर्न्नु गाढं गाढमुत्तमांगे मुकर्न्नाळतु कण्टव—८० रोक्के वाविट्टु करञ्ञु तुटङ्ङिनारक्कथ केट्टु वसिष्ठ मुनीन्द्रनुं मन्त्रिजनत्तोटु मन्पोट्टेळुन्नळ्ळि सन्तापमोटु तोळुतु भरतनुं रोदनं कण्टरुळ् चेय्तु वसिष्ठनुं खेदं मतिमति केळितु केवलं। वृद्धन् दशरथनाय राजाधिपन् सत्यपराक्रमन् विज्ञानवीर्य्यवान्; मर्त्त्य सुखङ्ङळां राजभोगङ्ङळुं भुक्त्वा यथाविधि यज्ञङ्ङळुं बहु कृत्वा बहुधन दक्षिणयुं मुदा दत्वात्रिविष्टपंगत्वा यथासुखं लब्ध्वा पुरन्दरार्द्धासनं दुर्ल्लभं वृत्रारिमुख्य त्रिदशौघ वन्द्यना— यानन्दमोटिरिक्कुन्नतिनेन्तु नीयाननं ताळ्ति नेत्रांबु तूकीटुन्नु। शुद्धनात्मा जन्मनाशादि वर्ज्जितन् नित्यन् निरुपमनव्ययनद्वयन् सत्य स्वरूपन् सकल

है। ब्रह्मात्मज मुनि वसिष्ठ और धर्मपत्नी अरुन्धती को खड्ग से मारने पर जो पाप हो सकता है, वह पूरा मैं भोग लूँगा।' इस प्रकार कई प्रकार की सौगंध लेकर असीम दुःख से परितप्त हो विलाप करनेवाले भरत से माता ने कहा कि मैं भलीभाँति जानती हूँ कि इसमें तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं है। इस प्रकार कहती हुई वे गाढ़ आश्लेष और उत्तमांगों पर गाढ़ चुम्बन अंकित करने लगीं, जिसपर दर्शक लोग। ८० अनियंत्रित रूप से रो उठे। यह समाचार सुनकर मुनीन्द्र वसिष्ठ—मंत्रिजनों के साथ तुरन्त पधारे। संतापयुक्त भरत ने उन्हें हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उनको रोते हुए देखकर वसिष्ठ ने कहा—दुःख संभालो, संभालो; मेरी बात सुनो। वृद्ध राजाधिप दशरथ सत्य पराक्रमी एवं महान विज्ञानवेत्ता थे। उन्होंने मर्त्यों के लिए संप्राप्य सभी सुख भोगकर और विधिवत् नाना यज्ञ करके तथा प्रसन्न-चित्त हो दक्षिणाएँ देकर यथासुख त्रिविष्टप (स्वर्ग) पहुँचकर पुरन्दर (इन्द्र) का दुर्लभ अर्द्धासन (सिंहासन का अर्धभाग) प्राप्त किया। वहाँ वृत्रारि (इन्द्र) जैसे मुख्य देवताओं से परिसेवित एवं वंदित हो बैठनेवाले (दशरथ) की चिन्ता में तुम क्यों आनन (मुख) झुकाए नेत्रांबु (अश्रुजल) बहाते हो? आत्मा शुद्ध, जन्म-नाश आदि को वर्जित किये, नित्य, निरुपम, अव्यय, अद्वय, सत्यस्वरूप, सकल जगन्मय,

जगन्मयन् मृत्यु जन्मादि हीनन् जगल्क्कारणन् ९० देहमत्यर्थं जडं क्षणभंगुरं मोहैक कारण मुक्ति विरोधकं शुद्धिविहीनं पवित्रमल्लोट्टुमे चित्ते विचारिच्चु कण्टालोरिक्कलुं दुःखिप्पतिन्नवकाशमिल्लेतुमे दुःखेन किं फलं मृत्युवशात्मनां तातनेन्नाकिलुं पुत्रनेन्नाकिलुं प्रेतरायालति मूढरायुळ्ळवर् मारत्तलच्चु तोळिच्चु मुरविळिच्चेरेत्तळर्न्नु मोहिच्चु वीणीटुवोर् । निस्सारमेत्रयुं संसारमोर्क्किलो सत्संगमोन्ने शुभकरमायुळ्ळु । तत्र सौख्यं वरुत्तीटुवान् नल्लतु नित्यमायुळ्ळोरु शान्तियरिक नी । जन्ममुण्टाकिल् मरणवु निश्चयं जन्मं मरिच्चवर्क्कुं वरुं निर्ण्णयं । आर्क्कुं तटुक्करुतातोरवस्थयेन्नोर्क्कणमेल्लां स्वकर्म्मवशगतं तत्त्वमरिञ्ञुळ्ळ विद्वानोरिक्कलुं पुत्रमित्रार्त्थ कळत्रादि वस्तुना १०० वेर्पेटुन्नेरवुं दुःखमिल्लेतुमे स्वोपेतमेन्नाल् सुख-वुमिल्लेतुमे । ब्रह्माण्ड कोटिकळ् नष्टङ्ङळायतुं ब्रह्मणा सृष्टङ्ङळायतुं पार्क्किलो सख्ययिल्लातोळ मुण्टिटेन्नाल् क्षण भंगुरमायुळ्ळ जीवित कालत्ति— लेन्तोरास्था महाज्ञानिनामुळ्ळतुं बन्धमेन्ती देहदेहिकळ्क्कन्नतुं चिन्तिच्चु मायागुण

मृत्यु-जन्मरहित, एवं जगत् के लिए कारण स्वरूप है। ९० मन में विचार करके देखें तो यह अतीव जड़, क्षणभंगुर, मोह के लिए एकमात्र कारण भूत, मुक्ति में बाधक—शुद्धिविहीन (मलिन) एवं अपवित्र है। (ऐसी हालत में) दुःख के लिए कोई कारण नहीं रह जाता है और (फिर) दुखी होने से क्या फल है ? चाहे पिता हो चाहे पुत्र, मृत्यु के वश में पड़ा जीव केवल प्रेत है। केवल मूढ़ लोग छाती पीटकर, हाथ-पाव पटककर, चिल्ला-चिल्लाकर अत्यन्त दुर्बल बन मूर्छित पड़ते हैं। विचारपूर्वक देखा जाए तो यह संसार अत्यन्त सारहीन है और (यहाँ) केवल सत्संग ही लाभदायक है। यहाँ सुख पहुँचानेवाला एवं शाश्वत स्वरूप मात्र शांति है, यह जान लो। (यहाँ) जन्म हुआ तो मृत्यु निश्चित है और निश्चय ही मरे हुए लोगों का जन्म भी अनिवार्य है। ये सब स्वकर्मवशगत ऐसी अवस्थाएँ हैं, जिनपर किसीका वश नहीं चलता है, यह याद रखो। तत्वज्ञानी विद्वान को कभी पुत्र, मित्र, या कलत्र (पत्नी) के १०० न वियोग के समय दुःख अनुभव होता है, न संयोग के समय सुख ही। सोचें तो ये करोड़ों ब्रह्माण्ड नष्ट होकर (फिर) ब्रह्मा से सृष्ट हुए हैं। भले ही ये असंख्य हैं, महाज्ञानियों को क्षणभंगुर इस जीवनकाल पर क्या आस्था हो सकती है ? देह-देही के संबंध एवं मायागुण वैभव पर जिन्होंने

वैभवङ्ङळुमन्तर्म्मुदा कण्टवर्क्कॅन्तु संभ्रमं; कम्पित पत्राग्र लग्नांबुवल् संपतिच्चीटुमायुस्सतिनश्वरं। प्राक्तन देहस्थ कर्म्मणा पिन्नॅयुं प्राप्तमां देहिक्कु देहं पुनरपि जीर्ण्णवस्त्रङ्ङळुपेक्षिच्चु देहिकळ् पूर्ण्णशोभं नववस्त्रङ्ङळ् कॊळ्ळुन्नु। काल चक्रत्तिन् भ्रमण वेगत्तिनु मूलमिक्कर्म्मं देहङ्ङळऱिक नी। दुःख-त्तिनॅन्तॊरु कारणं चॊल्लु नी मुख्य जनमतं केळ्क्क ञान् चॊल्लुवन्, ११० आत्माविनिल्ल जननमरणवुमात्मनि चिन्तिक्क षड्-भाववुमिल्ल, नित्यनानन्द स्वरूपन् निराकुलन् सत्य रूपन् सकलेश्वरन् शाश्वतन् बुद्ध्यादि साक्षि सर्वात्मा-सनातननद्वयनेकन् परन् परमन् शिवन्; इत्थमनारतं चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु चित्ते दृढ मतऱिञ्ञु दुःखङ्ङळुं त्यक्त्वा तुटङ्ङुक कर्म्मसमूहवुं सत्वरमेतुं विषाद मुण्टाकॊला। ११५

संस्कार कर्म्मं

श्रुत्वा गुरु वचनं नृपनन्दनन् कृत्वा यथाविधि संस्कार कर्म्मवुं मित्र भृत्यामात्य सोदरोपाद्ध्याय युक्तनायोरु भरत

मन ही मन गहराई से विचार किया है, उन्हें क्या भ्रम हो सकता है ? हिलते हुए पत्राग्र पर ढुलकते जलकण के समान जीवन अत्यन्त नश्वर है। पूर्वजन्म के कर्म के अनुसार देही को पुनः देह प्राप्त होती है। देही जीर्ण वस्त्रों को त्यागकर सुन्दर एवं स्वच्छ नूतन वस्त्र धारण करते हैं। तुम यह समझ लो कि कालचक्र की गति के लिए एकमात्र कारण कर्ममय देह है। (ऐसी हालत में) तुम ही बताओ कि दुखी क्यों होना चाहिए ? विद्वानों का विचार सुनो, मैं तुम्हें बता दूँगा। ११० (उनके अनुसार) आत्मा जन्म-मरण से परे है। आत्मा षड्विकारों के वशीभूत भी नहीं है। —वह नित्यानन्द स्वरूप, निराकुल, सत्य स्वरूप, सकलेश्वर, शाश्वत, बुद्धि आदि के लिए साक्षी, सर्वात्मा, सनातन, अद्वय, एक, पर, परम, शिवस्वरूप है निरंतर यह समझते हुए तथा दृढ़तापूर्वक दुखों को त्यागकर (तुम) तुरन्त कर्म करते जाओ, मन में मालिन्य आने मत दो। ११५

अंत्येष्टि कर्म

नृपनन्दन (भरत) ने गुरु-वचन सुनकर यथाविधि अंत्येष्टि क्रियाएँ सम्पन्न कीं। मित्र, भृत्य, अमात्य, सहोदर, उपाध्याय सहित कुमार भरत ने प्रेमपूर्वक पिता का शरीर तैलपूर्ण नौका से निकालकर उसे पानी में नहलाया तथा दिव्यांबर (दिव्य वस्त्र), आभरण, लेपन द्रव्य आदि से

कुमारनुं तात शरीरमॆण्णत्तोणितन्निल् त्तिन्नादर पूर्वमॆंट्टु त्तीराटिच्चु; दिव्यांबराभरणलेपनङ्ङळाल् सर्वांगमॆल्ला-मलङ्करिच्चीटिनान्। अग्निहोत्राग्नि तन्नालग्निहोत्रियॆ संस्करिक्कुं वण्णमाचार्य संयुतं दत्वातिलोदकं द्वादश वासरे भक्त्या कळिच्चितु पिण्डवुमादराल्। वेदपरायणन्मारां द्विजा-वलिक्कोदन गोधन ग्रामरत्नांबर भूषण लेपन तांबूलपूगङ्ङळ् तोषेण दानवुं चॆय्तु ससोदरं, वीणु नमस्करिच्चाशीर्वचनमा-दानवुं चॆय्तुविशुद्धनाय् मेविनान्। जानकी लक्ष्मण संयुक्तनायुटन् काननं प्रापिच्च रामकुमारनॆ १० मानसे चिन्तिच्चु चिन्तिच्चनुदिनं मानववीरनायोरु भरतनुं सानुजनाय् वसिच्ची-टिनानद्दिनं नाना सुहृज्जनत्तोटुमनाकुलं। तत्र वसिष्ठ मुनीन्द्रन् मुनिकुल सत्तमन्मारुमाय् वन्नुसभान्तिके। अर्णोरुहासन सन्निभनां मुनि स्वर्णासने मरुवीटिनानादराल् शत्रुघ्न संयुक्तनाय भरतनॆ तत्रवरुत्तियन्नेरमवर्कळुं; मंत्रिकळोटुं पुरवासिकळोटुमन्त-रानंदं वळन्नु मरुविनार्। कुम्पिट्टुनिन्न भरतकुमारनोटम्भोज-संभवनन्दनन् चॊल्लिनान् देश कालोचितमायुळ्ळ वाक्कुकळ् देशिकनाय ञानाशु चॊल्लीटुवन्। सत्यसन्धन तव तातन् दशरथन्

सर्वांग अलंकृत कर दिया। फिर अग्निहोत्राग्नि से अग्निहोत्री का जैसे संस्कार किया जाता है, वैसे आचार्य के साथ द्वादश दिन तक भक्ति से विधि-वत् तिल, उदक (पानी) और पिण्ड क्रियाएँ करते रहे। वेद परायण द्विज-गणों को ओदन (भोजन), गोधन, ग्राम, रत्न, अंबर (वस्त्र), भूषण, लेपन, तांबूल, पूग (सुपारी) आदि (भरत ने) सहोदर सहित दान में दिये और चरणों पर नमस्कार करके आशीर्वाद लेकर पवित्र बने। जानकी और लक्ष्मण के साथ वन में गये कुमार राम का। १० —प्रतिदिन मन में अनुस्मरण करते हुए मानव वीर भरत सुहृद्जनों तथा भ्राता सहित उन दिनों अनाकुल भाव से रहे। तब वहाँ सभा में मुनीन्द्र वसिष्ठ अन्य मुनि प्रवरों के साथ आ उपस्थित हुए और अर्णोरुहासन (कमलासन) तुल्य मुनि स्वर्णासन पर विराजित हुए। शत्रुघ्न सहित भरत को उन्होंने वहाँ बुला लिया। मंत्री लोग, पुरवासी लोग भी सानन्द उपस्थित थे। नमस्कार करते खड़े कुमार भरत से अम्भोजसम्भव नन्दन (वसिष्ठ) ने कहा—देशिक (गुरुनाथ) मैं अभी देश-कालोचित बातें तुम्हें समझाता हूँ। तुम्हारे पिता सत्यवादी दशरथ ने पुत्राभ्युदय की कामना रखती कैकेई को पहले से प्रदत्त दो वरों के अनुसार, पृथ्वीतल तुम्हें सौंप

पृथ्वीतलं त्निनक्कद्य त्नल्कीटिनान्, पुत्राभ्युदयार्त्थमेष कैकेयिक्कु दत्तमायोरु वरद्वय कारणं २० मन्त्रपूर्वमभिषेकं त्निनक्कु ञान् मंत्रिकळोटुमन्पोटु चेय्तीटुवन् । राज्यमराजकमां भवानालिनि त्याज्यमल्लेन्नु धरिक्क कुमारा ! नी । तात नियोगमनुष्ठिक्कयुं वेणं पातकमुण्टामतल्लाय्किलेवनुं । औन्नोळियाते गुणङ्ङळ् नरन्मार्क्कु वन्नु कूटुन्नु गुरुप्रसादत्तिनाल् । अन्नरुळ चेय्त वसिष्ठ मुनियोटु त्नन्नाय्त्तोळुतुणर्त्तिच्चु भरतनुं : इन्नटियनु राज्यं कोण्टु किं फलं ? मन्नवनाकुन्नतुंमम पूर्वजन्; ञङ्ङ-ळवनुटे किङ्करन्मारत्रे त्निङ्ङळितेल्लामरिञ्ञल्लो मेवुन्नु । २७

राम सन्निधियिलेय्क्कु भरतन्ट यात्र

नाळेप्पुलर्काले पोकुन्नतुण्टु ञान् नाळीक नेत्रनेक्कोण्टिङ्ङु पोरुवान् । ञानुं भवानुमरुन्धती देवियुं नाना पुरवासिकळुममात्यरुं आनतेर्कालाळ् कुतिरप्पटयोटुमानकशंख पटहवाद्यत्तोटुं, सोदर भूसुर तापस सामन्त मेदिनी पालक वैश्य शूद्रादियुं सादरमाशु कैकेयियोळिञ्ञुळ्ळ मातृजनङ्ङळुमायिट्टु पोकणं । रामनिङ्ङागमिच्चीटुवोळं ञङ्ङळ् भूमियिल्त्तन्ने शयिक्कु-

---

दिया है । २० (इसलिए) मैं आज मंत्रियों के सामने मन्त्रोच्चारण के साथ तुम्हारा अभिषेक कर दूँगा । हे कुमार ! तुम यह जानलो कि राजारहित यह राज्य अब तुमसे त्याज्य नहीं है । पिता की आज्ञा का (तुम्हें) अनुसरण करना होगा, अन्यथा पाप लगेगा । गुरु-प्रसाद से मनुष्य को सब प्रकार के गुण प्राप्त होते हैं । इस प्रकार कहते मुनि वसिष्ठ के सामने हाथ जोड़कर भरत ने कहा--'आज इस दास को राज्य से क्या प्रयोजन है ? राजा मेरे पूर्वजन (ज्येष्ठ भ्राता) ही हैं । हम लोग उनके सेवक मात्र हैं । आप लोग यह सब जानते ही हैं । २७

राम के निकट भरत-गमन

कमललोचन (राम) को यहाँ बुला लाने मैं कल प्रातःकाल ही जानेवाला हूँ । मैं, आप (वसिष्ठ), और देवी अरुन्धती को नाना पुरवासी अमात्य लोग, हाथी, रथ, पैदल सेना, घुड़सवार, आनक (मृदंग) शंख, पटह आदिवाद्य, सहोदर, भूसुर, तापस, सामन्त, मेदिनी (भूमि) पालक, वैश्य, शूद्र, तथा कैकेई को छोड़ अन्य माताओं के साथ जाना होगा । राम के यहाँ आने तक हम भूमि पर ही सोयेंगे, फल मूल खाकर, शरीर पर

न्नतेयुळ्ळु, मूल फलङ्ङळ् भुजिच्चु भसितवुमालेपनं चेय्तु वल्कलवुं पूण्टु तापस वेषं धरिच्चु जटपूण्टु तापं कलर्न्नु वसिक्कुन्नतेयुळ्ळु। इत्थं भरतन् पऱञ्ञतु केट्टवरेल्लयुं नन्नु नन्नेन्नु चोल्लीटिनार्। चित्ते निनक्किंतु तोन्नियतद्भुतमुत्तम-न्मारिलुत्तमनल्लो नी १० साधुक्कळेवं पुकळ्त्तुन्नतु नेरमादित्य-देवनुदिच्चु भरतनुं शत्रुघ्ननोटु कूटेप्पुऱप्पेट्टितु तत्र सुमन्त्र नियोगेन सैन्यवुं, सत्वरं रामनेक्काण्मान् नटन्नितु चित्तेनिऱञ्ञु वळिञ्ञ मोदत्तोटुं; राजदारङ्ङळ् कौसल्यादिकळ् तदा राजीव नेत्रनेक्काण्मान् नटन्नितु। तापसश्रेष्ठन् वसिष्ठनुं पत्नियुं तापस-वृन्देनसाकं पुऱप्पेट्टु। भूमि किळर्न्नु पोङ्ङीटुं पोटिकळुं व्योमनि चेन्नु परन्नु चमञ्ञितु। राघवालोकनानन्द विवशरां लोकरऱिञ्ञिल्ल मार्गं खेदङ्ङळुं। शृंगिवेराख्यपुरं गमिच्चिट्टुटन् गंगातटेचेन्नु निन्नुपेरुम्पट। केकयपुत्रीसुतन् पटयोटुमिङ्ङागत-नायतु केट्टु गुहन् तदा शङ्कित मानसनाय्वन्नु तन्नुटे किङ्करन्मारोटु चोन्नानितन्नेरं २० बाण चापादि शस्त्रङ्ङळुं कैकोण्टु तोणिकळोक्के बंधिच्चु सन्नद्धराय् निल्पिनेल्लावरुं ञानङ्ङुचेन्नुकण्टिप्पोळ् वरुन्नतुमुण्टु वैकीटाते। अन्तिके चेन्नु

भस्म लगाकर, वल्कलधारी बन तापस वेष में जटा-युक्त हो सब प्रकार के कष्ट सहते रहेंगे। इस प्रकार भरत को कहते सुनकर सबने कहा—"खूब अच्छा है, अच्छा है। आश्चर्य है, तुम्हारे मन में ऐसा (पवित्र) विचार उत्पन्न हुआ। तुम उत्तम लोगों में भी उत्तम हो।" १० जब साधु-सन्त लोग (भरत की) इस प्रकार स्तुति कर ही रहे थे कि आदित्य-देव उदित हुआ। भरत शत्रुघ्न सहित निकल पड़े। सुमन्त्र का आदेश पाकर सेनाएँ भी तुरन्त राम का दर्शन करने का अतुल्य आनन्द लेकर चल पड़ीं। राजरानियाँ कौसल्या आदि राजीवनेत्र के दर्शन के लिए चल निकलीं। तापसप्रवर वसिष्ठ और (उनकी) पत्नी तापसवृन्दों के साथ निकले। (सबके चलने से उड़ती) धूल व्योम में घिर गयी। राम के दर्शन लाभ के लिए जिज्ञासु लोग मार्ग की कठिनाइयाँ बिलकुल भूल ही गये। लोगों की भीड़ शृंगवेर नामक स्थान में गंगा तट पर आ रुकी। केकय-पुत्री (कैकेई) के सुत (भरत) के जनता सहित आ पहुँचने का समाचार पाकर गुह मन ही मन शंकित हो अपने लोगों के पास आकर कहने लगा। २० —'धनुष-बाण आदि शस्त्र हाथ में धारणकर तथा नौकाएँ बाँधकर सभी लोग बिलकुल तैयार खड़े रहें, वहाँ तक जाकर मैं तुरन्त

वन्दिच्चालवनुटॅयन्तर्गतमरिञ्ञीटुन्नतुण्टल्लो। राघवनोटु विरोध-त्तिनॆङ्किलो पोकरुतारुमिवरिनि निर्णयं। शुद्धरॆन्नाकिल् कटत्तुकयुं वेणं पद्धतिक्केतुं विषादवुंकूटाते; इत्थं विचारिच्चुरच्चु गुहन् चॆन्नु सत्वरं काल्कल् नमस्करिच्चीटिनान्। नानाविधो-पायनङ्ङळुं काळ्चवचानन्दपूर्वं तॊळुतु निन्नीटिनान्। चीरांबर घनश्यामं जटाधरं श्रीराममन्त्रं जपन्तमनारतं धीरंकुमारं कुमारोपमं महावीरं रघुवरसोदरं सानुजं, मारसमान शरीरं मनोहरं कारुण्यसागरं कण्टु गुहन् तदा ३० भूमियिल वीणु गुहोहमित्युक्त्वा प्रणामवुं चॆय्तु भरतनुमन्नेरं। उत्थाप्यगाढ-मालिंग्य रघुनाथ भक्तं वयस्यमनामयवाक्यवुं उक्त्वा गुहनोटु पिन्नॆयुं चॊल्लिनानुत्तम पूरुषोत्तंसरत्नं भवान्। आलिंगनं चॆय्तु-वल्लो भवानॆलोकालंबनभूतनाकिय राघवन्। लक्ष्मी भगवति क्कॊळिञ्ञु सिद्धिक्कुमोमट्टॊरुवर्क्कमतोर्क्कु नी! धन्यनाकुन्नतु नी भुवनत्तिङ्कलिन्नतिनिल्लॊरु संशयं मल् सखे! सोदरनोटुं जनकात्मजयोटुमेतॊरिटत्तु निन्नम्पोटु कण्टितु रामनॆ नीयवनॆन्तु

आ जाऊँगा। उनके पास पहुँचकर प्रणाम करके उनके मन के विचार भाँप लूँगा। अगर राम से विरोध लेने का विचार है तो इनमें से कोई भी पार जाने नहीं पाएगा। अगर ये मन से शुद्ध हैं तो इन्हें निर्विघ्न (गंगा के) पार पहुँचा देना चाहिए।' इस प्रकार का विचार एवं निर्णय लेकर जल्दी से जल्दी जाकर उसने (उनके) चरणों पर प्रणाम किया। चीरांबर एवं जटाधारी घनश्यामल रंगवाले, निरन्तर श्रीराम मन्त्र का जप करनेवाले, धैर्यशाली, कुमार (कार्त्तिकेय) तुल्य सुकुमार एवं महावीर रघुवर सोदर (श्रीराम के सहोदर भरत) को, जो कामदेव के समान दीप्तिमय शरीरवाले, मनोहर एवं करुणासागर हैं, सानुज (शत्रुघ्न सहित) देखकर, तब गुह ने। ३० —भूमि पर गिर पड़कर, 'मैं गुह हूँ' ऐसा कहते हुए प्रणाम किया। राम भक्त मित्र (गुह) को उठा ले आश्लेष करके भरत ने उत्साहपूर्वक वचन कहे—'तुम उत्तम पुरुषों के लिए आभूषण स्वरूप रत्न हो। क्योंकि तुम्हें लोकालंबन भूत (लोक के लिए आधार स्वरूप) राघव ने आश्लेष अर्पित किया था। तुम ही सोचो, लक्ष्मी भगवती के अतिरिक्त और किसे यह सौभाग्य प्राप्त हो सकता है! हे मेरे मित्र! इसलिए तुम अतीव धन्य हो, इसमें कोई सन्देह नहीं है। भ्राता तथा जनकात्मजा के साथ राम को तुमने कहाँ खड़े होकर देखा, उन्होंने तुमसे क्या कहा, तुमने राम से क्या कहा,

पऱञ्ञतुं ञी मुदा रामनोटॆन्तोऱ्ऱु चॊन्ऩतुं यातॊरिटत्तुऱङ्ङि रघुनायकन् सीतयोटुं कूटि ञीयविटं मुदा काट्टित्तरिकॆऩ्ऩु केट्टुगुहन् तदा वाट्टमिल्लातॊरु सन्तोष चेतसा ४० भक्तन् भरतनत्युत्तमनॆन्ऩु तन् चित्ते निरूपिच्चुटन् ञटन्ऩीटिनान् । यत्र सुप्तानिशि राघवन् सीतया तत्रगत्वा गुहन् सत्वरं चॊल्लिनान् कण्टालुमॆङ्किल् कुशास्ततं सीतया कॊण्टल्वर्ण्णन् तन् महाशयनस्थलं । कण्टु भरतनुं मुक्त बाष्पोदकं तॊण्ट विऱच्चु सगद्गदं चॊल्लिनान् हा ! सुकुमारि मनोहरि जानकि प्रासाद् मूर्द्ध्नि सुवर्ण्ण तल्पस्थले कोमळ स्निग्ध धवळांबरास्तृते रामेणशेते महासुखं साकथं शेतेकुशमय विष्टरे निष्ठुरे खेदेन सीता मदीयाग्रजन्मना मद्दोष कारणालॆन्ऩतु चिन्तिच्चु मद्देहमाशु परित्यजिच्चीटुवन् । किल्बिष कारिणियाय कैकेयि तन् गर्भत्तिल् निन्ऩु जनिच्चॊरु-कारणं दुष्कृतियायति पापियामॆन्नॆयुं धिक्करिच्चीटिनान् पिन्नॆयुं पिन्नॆयुं । ५० जन्म साफल्यवुं वन्निऩतनुजनु निर्म्मल मानसन् भाग्यवानॆत्रयुं । अग्रजन तन्नॆप्परिचरिच्चॆप्पॊऴुं व्यग्रं वनत्तिन्नु

सीता सहित राम को जहाँ सोते हुए तुमने देखा, वह स्थान मुझे दिखा दें,--ये सब प्रश्न सुनकर तब गुह ने बिना किसी सन्देह भाव के, मन में सन्तुष्ट हो। ४० —यह निर्णय किया कि भरत अत्युत्तम (राम के) भक्त हैं। यह मन में विचारकर वह (भरत को साथ लेकर) आगे बढ़ा और जहाँ राम सीता सहित सो चुके थे, वहाँ पहुँचकर तुरन्त गुह ने भरत को बताया—"आप देखिए, यही कुशास्तत घनश्याम का सीता सहित महाशयन-स्थल है।" (उसे) देखकर अनियंत्रित अश्रुधारा प्रवाहित करते हुए कंपित कण्ठ एवं गद्गद वाणी में भरत ने कहा--हाय ! सुकुमारी एवं मनोहरी जानकी सौध में सुवर्ण-तल्प पर कोमल, स्निग्ध एवं धवलांबर शय्या पर राम के साथ सोती हुई जो महासुख प्राप्त किया करती थी, वह सुख इस कठोर कुशमय विष्टर (कुशासन) पर सोते हुए कहां प्राप्त हो सकता है !' सीता तथा अग्रज को मेरे ही दोष से इतना कष्ट उठाना पड़ रहा है, यह सोचकर, वे बोले 'मैं अपना यह शरीर ही परित्याग कर दूंगा। समस्त अपराधों के लिए कारणभूत कैकेई के गर्भ से संजात होने से दृष्कृति-स्वरूप एवं पापी मुझे बार-बार धिक्कार है। ५० अनुज (लक्ष्मण) का जन्म सफल हुआ, निर्मल मनस्वी वह अतीव भाग्यशाली है क्योंकि सदा अग्रज (बड़े भाई) की परिचर्या करने की व्यग्रता में वही वन में गया। श्रीराम जी के

पोयतवनल्लो । श्रीरामदास दासऩ्मार्क्कु दासनायारूढ भक्ति पूण्टेष ञानु सदा नित्यवु सेविच्चुकोंळ्वनेंन्नाल् वरुं मर्त्य जन्मत्तिन् फलमेंऩ्नु निर्ण्णयं । चोंल्लुऩीयेंन्नोटेंविटे वसति कौसल्या तनयनविटेक्कु वेंकातें चेंऩ्नु ञानिङ्ङुकूट्टिक्कोंण्टु पोरुवनेंऩ्नतु केट्टु गुहनुमुर चेंय्तान्– मंगलदेवतावल्लभन् तङ्कलिऩ्निङ्ङनें-युळ्ळोंरु भक्तियुण्टाकयाल् पुण्यवाऩ्मारिल् वच्चग्रेसरन् भवान् निर्ण्णयमेंङ्किलो केळ्क्क महामते ! गंगा नदिकटऩ्नालटुत्तेंत्रयु मंगलमायुळ्ळ चित्रकूटाचलं तन्निकटे वसिक्कुऩ्नितु सीतया तन्नुटें सोदरनोटुं यथासुखं । ६० इत्थं गुहोक्तिकळ् केट्टु भरतनु तत्रगच्छामहेशीघ्रं प्रियसख ! तर्त्तुममर्त्यं तटिनियेंस्सत्वरं कर्त्तुमुद्योगं समर्त्थोभवाद्य ऩी । श्रुत्वा भरतवाक्यं गुहन् सादरं गत्वा विबुधनदियेंक्कटत्तुवान् । भृत्यजनत्तोटु कूटेंस्ससंभ्रमं विस्तारयुक्तं महाक्षेपणीयुतं अञ्जसा कूलदेशं ऩिरच्चीटिनानञ्ञूरु तोणि वरुत्ति ऩिरत्तिनान् । ऊट्मायोरु तुळ्युमेंट्टुत्ततिलेट् वलियोंरु तोणियिल्त्तान् मुदा शत्रुघ्ननेयु भरतनेयु मुनिसत्तमनाय वसिष्ठनेयु तदा राममातावाय कौसल्य तन्नेयुं वामशीलांगियां कैकेयितन्नेंयुं उत्तमयां सुमित्रादेवि तन्नेंयुं पृथ्वीश पत्निमार्

दासों का सदा दास बनकर, सदा मन में गंभीर भक्ति लिये नित्य उनकी सेवा करने पर मेरा मर्त्य जन्म भी सफल होगा, यह निश्चित बात है। (हे गुह !) तुम मुझे यह बताओ कि कौसल्यातनय कहाँ बसे हुए हैं। तुरन्त वहाँ पहुँचकर मैं उन्हें साथ लिवा ले चलूँगा।" यह सुनकर गुह ने कहा—'मंगलदेवता के वल्लभ के प्रति ऐसी भक्ति होने से आप निश्चय ही पुण्यात्मा लोगों में अग्रगण्य अवश्य हैं। अतः आप सुनिये, गंगा नदी पार करने पर निकट ही मंगलदायक चित्रकूट पर्वत है, जिसके पास ही सीता तथा अपने भ्राता के साथ (राम) सुखपूर्वक निवास कर रहे हैं।' ६० —इस प्रकार का गुह का कथन सुनकर भरत ने बताया—'प्रिय सखा ! अमर्त्य तटिनी (अलौकिक नदी) को पारकर हम वहाँ जाएंगे। तुम उसके लिए आवश्यक प्रबन्ध करो।' भरत का आदेश सुनकर गुह बिबुध नदी (देव नदी) को पार कराने (का प्रबन्ध करने) गया। जल्दी ही अपने सेवकों सहित महाक्षेपणी (बड़ा पतवार) युत पाँच सौ विशाल नौकाएँ नदी कूल पर कतारों में लाकर खड़ी कर दी गयीं। उनमें सबसे बड़ी नौका में शत्रुघ्न, भरत, मुनिप्रवर वसिष्ठ, राम की माता कौसल्या, सुन्दरी कैकेई, उत्तम चरित्रवाली सुमित्रा तथा अन्य पृथ्वीश-पत्नियों को

मट्टुळ्ळवरेयुं भक्त्या तोळुतु करेट्टि मन्दं तुळञ्ञस्तभीत्या कटत्तीटिनानादराल् ७० उम्पर तटिनियेक्कुम्पिट्टनाकुलं मुम्पे न्नटन्नितु वम्पटयुं तदा । शीघ्रं भरद्वाज तापसेन्द्राश्रमं व्याघ्र गोवृन्दपूर्णं विरोधं विना सम्प्राप्य सम्प्रीतनाय भरतनु वन्पटयेक्कवे दूरेन्निर्त्तीटिनान् । तानुमनुजनुमायुटजाङ्कणे सानन्द-माविश्य निन्नोरनन्तरं उज्ज्वलन्तं महातेजसं तापसं विज्व-रात्मानमासीनं विधिसमं दृष्ट्वाननाम साष्टांगं ससोदरं पुष्ट भक्त्या भरद्वाज मुनीश्वरं । ज्ञात्वादशरथनन्दनं बालकं प्रीत्यैव पूजयामास मुनीन्द्रनु हृष्ट वाचाकुशलप्रश्नवुं चेय्तु दृष्ट्वा तदा जटा वल्कलधारिणं तुष्टि कलर्न्नरुळ् चेय्तानितेन्तेटो ! कष्टमिक्कोप्पुपपन्नमल्लोट्टुमे । राज्यवुं पालिच्चु नाना जनङ्ङळाल् पूज्यनायोरु नीयेन्तिनायिङ्ङने ८० वल्ककलवुं जटयुं पूण्टु तापसमुख्य वेषत्तेप्परिग्रहिच्चीटुवान् एन्तोरु कारणं वन्पटयोटुमाहन्त ! वनान्तरे वन्नतु चोल्लुनी । श्रुत्वा भरद्वाज वाक्यं भरतनुमित्थं मुनिवरन् तन्नोटु चोल्लिनान् निन्तिरुवुळ्ळत्तिलेत्रातें लोकत्तिलेन्तोरु वृत्तान्तमुळ्ळू महामुने ! एङ्किलुं वास्तवं

गुह ने सप्रणाम चढ़ाकर तथा सबसे बड़े पतवार से अनायास उसे खेकर सबको निर्भय पार पहुँचा दिया । ७० फिर वह जन-समुद्र देवनदी को प्रणाम करके अनाकुल भाव से आगे-आगे बढ़ा । शीघ्र ही तापस भरद्वाज के आश्रम में, जहाँ व्याघ्र और गौएँ बिना वैरभाव के सानन्द रहते हैं, पहुँचकर प्रीतिपूर्ण भरत ने विशाल जन-समुद्र को ज़रा दूर ठहरा दिया । फिर अनुज सहित भरत ने स्वयं उटज के प्रांगण में सानन्द प्रवेश करके थोड़ी देर तक प्रतीक्षा की तथा उज्ज्वल एवं महातेजस्वी तापस को विधि सम उन्मेष-युक्त बैठे देखकर सम्मुख आ भक्तियुक्त भरत ने अपने भ्राता सहित मुनीश्वर भरद्वाज को साष्टांग प्रणाम किया । मुनीन्द्र ने उन्हें दशरथ पुत्र जानकर उनका प्रेम से स्वागत किया तथा स्पष्ट शब्दों में कुशल प्रश्न किया । फिर उन्हें जटा-वल्कलधारी देखकर मन में प्रसन्न हो पूछा—'यह क्या किया है ? हाय ! यह वेश आपके बिलकुल उपयुक्त नहीं है । राज्य-शासन करते हुए नाना लोगों से पूजित रहने योग्य आप क्यों । ८० —वल्कल और जटा धारणकर तापस वेष को अपनाये हुए हैं ? हन्त ! इतना विशाल जन-समूह साथ लेकर वनान्तर में आपके आने का क्या कारण है ?' भरद्वाज के वचन सुनकर भरत मुनिवर से इस प्रकार बोले—"महामुनि ! संसार में ऐसी कौन-सी बात है, जिसे आप नहीं समझते

ञानुणर्त्तिप्पनिस्सङ्कटं पोवाननुग्रहिक्केणमे। रामाभिषेक विघ्नत्तिनु कारणं रामपादाब्जङ्ङळाण तपोनिधे! ञानेतुमेयोन्नरिञ्ञील राघवन् काननत्तिन्नेळुन्नळ्ळुवान् मूलवुं। केकयपुत्रियामम्म तन् वाक्काय काकोळवेगमे मूलमतिनुळ्ळु। इप्पोळशुद्धनो शुद्धनो ञानतिनिप्पाद पत्मं प्रमाणं दयानिधे! श्रीरामचन्द्रनु भृत्यनाय्त्तल्पाद वारिजयुग्मं भजिक्कॆन्नियॆ मम ९० मट्टुळ्ळ भोगङ्ङळालॆन्तोरु फलं मट्टुमतिनोळिञ्ञिल्लोराकांक्षितं। श्रीराघवन् चरणान्तिके वीणु संभारङ्ङळॆल्लामविटॆस्समर्प्पिच्चु पौर वसिष्ठादिकळोटु कूटवे श्रीरामचन्द्रनभिषेकवुं चॆय्तु राज्यत्ति-नाशु कूट्टिक्कॊण्टु पोयिट्टु पूज्यनां ज्येष्ठनॆस्सेविच्चु कॊळ्ळुवन्। इङ्ङनॆ केट्टु भरत वाक्यं मुनि मंगलात्मानमेनं पुणर्न्नीटिनान्; चुंबिच्चु मूर्द्धनि सन्तोषिच्चरुळिनान् किंबहुना वत्स! वृत्तान्तमॊक्कॆ ञान् ज्ञानदृशा कण्टरिञ्ञिरिक्कुन्नितु मानसे शोकमुण्टाकॊला केळ्क्क नी। लक्ष्मणनेक्काळ् निनक्केरुमे भक्ति लक्ष्मीपतियाय रामङ्कल् निर्ण्णयं। इन्निनि सल्क्करिच्चीटुवन् निन्नॆ ञान् वन्नपटयोटुमिल्लोरु संशयं। ऊणु कळिञ्ञङ्ङुर्ङ्ङिप्पुलर्कालि

हैं? फिर भी मैं सत्य बात आपको बताऊँगा। अपने अनुग्रह से सारी विपत्तियों को दूर करने की कृपा करें। हे तपोनिधि! राम के पाद-कमलों की सौगंध है, राम के राज्याभिषेक में विघ्न तथा राम के कानन-वास का हेतु—इनमें से किसी का मुझे पूर्वज्ञान नहीं रहा। इन सबका एकमात्र कारण केकय-पुत्री मेरी माता का पापकर्म ही है। हे दयानिधे! मेरी पवित्रता या अपवित्रता के लिए आपके चरण-कमलों का ही प्रमाण है। श्रीरामचन्द्र जी का सेवक बनकर उनके युगल पाद-पद्मों की भक्ति-पूर्वक सेवा ही मेरा लक्ष्य है। ९० —अन्य भोगों से क्या लाभ है? और उन भोगों के प्रति मेरे मन में आकांक्षा भी नहीं है। श्रीरामचन्द्र जी के चरणोंपर पड़कर, समस्त वस्तुएँ (उन्हें) समर्पितकर तथा समस्त पुरवासियों तथा वसिष्ठ की उपस्थिति में उनका अभिषेक करके राज्य (अयोध्या) को ले जाकर, पूज्य भ्राता की मैं सेवा करूँगा।" इस प्रकार भरत-वचन सुनकर मंगलात्मा मुनिने उन्हें गले से लगाया तथा मस्तक को चूमकर उन्होंने बड़े प्रेम से इस प्रकार कहा—"हे वत्स! अधिक क्या बताऊँ! मैंने ज्ञानचक्षु से सारे वृत्तान्त जान लिये हैं। आप दुःख त्याग कर सुनिये। निस्सन्देह लक्ष्मीपति राम के प्रति लक्ष्मण से भी अधिक प्रीति आपको है। आज मैं आगत जनसमूह के साथ आपका निस्संशय

वेणं रघुनाथनें चेन्नु कूप्पुवान् । १०० ॲल्लामरुळ् चेय्तवण्णमॅनिक्कतिनिल्लोरु वैमुख्यमेन्नु भरतनुं; काल् कळुकिस्समाचम्य मुनीन्द्रनुमेकाग्र मानसनायति विद्रुतं होमगेहस्थनाय् ध्यानवुं चेय्तितु देवकळायिच्चमञ्ञु तरुक्कळुं देव वनितमारायि लतकळुं भावनावैभयुमेत्रयुमत्भुतं । भक्तभक्ष्यादि पेयङ्ङळ् भोज्यङ्ङळुं भुक्ति प्रसादनं मट्टु बहुविधं । भोजनशालकळ् सेनागृहङ्ङळुं राजगेहङ्ङळुमॆत्र मनोहरं । स्वर्णरत्नव्रात निर्म्मितमॊक्कवे वर्ण्णिप्पतिनु पणियुण्टनन्तनुं । कर्म्मणा शास्त्रदृष्टेन वसिष्ठनें सम्मोदमोट्टु पूजिच्चितु मुम्पिनाल्; पश्चाल् ससैन्यं भरतं ससोदरमिच्छानुरूपेण पूजिच्चनन्तरं । तृप्तराय् तत्र भरद्वाज मन्दिरे सुप्तरायारमरावती सन्निभे । ११० उत्थानवुं चय्तुषसि नियमङ्ङळ् कृत्वा भरद्वाज पादङ्ङळ् कूप्पिनार् । तापसन् तन्नोटनुज्ञयुं कैकॊण्टु भूपति नन्दनऩ्मारुं पुऱप्पॆट्टु । चित्रकूटाचलं प्राप्य महाबलं तत्र पार्प्पिच्चु दूरे किञ्चिदन्तिके मित्रमायोरु गुहनुं सुमन्त्ररुं शत्रुघ्ननुं तानुमायिब्भरतनुं श्रीरामसन्दर्शनाकांक्षया मन्दमाराञ्ञु नाना तपोधनमण्डले

स्वागत-सत्कार करूँगा। भोजनकर यहीं सोकर कल प्रातःकाल राम के दर्शन के लिए जाना होगा।" १०० 'सब जैसी आपकी इच्छा है, मुझे इसमें कोई वैमनस्य नहीं है।' भरत के यह कहते ही पाद-प्रक्षालन सब करके मुनि तुरन्त ही एकाग्रचित्त हो गये। होम-गृह में ध्यान लगाये बैठ गये तो सारे वृक्षों ने देवताओं का रूप धारणकर लिया। सारी लताएँ देव-वनिताओं के रूप में प्रकट हुईं। भावना-वैभव अतीव विचित्र है! भक्तों के उपयुक्त भोजन, पेय पदार्थ तथा बहुविध अन्य सामग्रियाँ सुन्दर एवं मनोहर भोजनशालाएँ, सेनागृह, राजगृह वहाँ तैयार हो गये और वे सबके सब स्वर्णरत्नों से निर्मित थे। अनन्त नाग भी उनका वर्णन करने में असमर्थ हैं। शास्त्र दृष्टि से सबसे पहले मुनि ने वसिष्ठ जी की सानन्द पूजा की। उसके बाद सेना सहित भरत, शत्रुघ्न सबका यथानुरूप सेवा-सत्कार किया। भरद्वाज का आतिथ्य ग्रहणकर सब लोग अमरावती सदृश मन्दिरों में सानन्द सो गये। ११० प्रातःकाल सो उठकर और नित्य कर्मों से विमुक्त हो (सबने) भरद्वाज के चरणों पर नमस्कार किया। तापसप्रवर से अनुज्ञा लेकर भूपतिकुमार चल पड़े। विशाल जनसमूह चित्रकूटाचल से किंचित दूर पहुँच गया तो मित्र गुह, सुमन्त्र तथा शत्रुघ्न को लेकर श्रीराम दर्शन के लिए अत्यन्त व्याकुल भरत

काणाञ्ञोरोरो मुनिवरऩ्मारोटु ताणुतॊऴुतु चोदिच्चुमत्यादरं कुत्र वाऴुन्नु रघूत्तमनत्र सौमित्रियोटुं महीपुत्रियोटुं मुदा ? उत्तमनाय भरतकुमारनोटुत्तरं तापसऩ्मारुमरुळ् चेय्तु उत्तरतीरे सुरसरितःस्थले चित्रकूटाद्रितन् पार्श्वे महाश्रमे उत्तमपूरुषन् वाऴुन्नितॆन्नु केट्टित्रयुं कौतुकत्तोटे भरतनुं १२० तत्रैव चॆन्नु नेरत्तु काणाय्वन्नितत्यत्भुतमाय रामचन्द्राश्रमं । पुष्पफलदलपूर्ण वल्ली तरुशष्परमणीय कानन मण्डले आम्र कदळि बकुळ-पनसङ्ङळाम्रातकार्ज्जुननागपुन्नागङ्ङळ् केरपूगङ्ङळुं कोविदा-रङ्ङळु मेरण्ड चम्पकाशोकतालङ्ङळुं मालत जाति प्रमुख लतावली शालिकळाय तमालसालङ्ङळुं भृंगादि नाना विहगनादङ्ङळुं तुंगमातंग भुजंग प्लवंग कु— रंगादि नाना मृग व्रातलीलयुं भंग्या समालोक्य दूरॆ्ब्भरतनुं । वृक्षाग्र संलग्न-वल्ककलालंकृतं पुष्कराक्षाश्रमं भक्त्या वणङ्ङिनान् । भाग्य-वानाय भरतनतु नेरं मार्ग्ग रजसि पतिञ्ञु काणाय्वन्नु । सीता रघुनाथ पादारविन्दङ्ङळ् नूतनमायति शोभनं पावन, १३०

ने नाना तपोधन मंडलों में (राम की) पूछताछ की। कहीं न देख पाने से, प्रत्येक मुनिवर से विनम्र एवं आदर से (राम के संबंध में) प्रश्न किया—'रघूत्तम सौमित्र तथा महीसुता के साथ सानन्द कहाँ रहते हैं?' उत्तम गुणवाले कुमार भरत से तापस प्रवरों ने उत्तर में कहा—'सुरसरिता के उत्तर तीर पर स्थित चित्रकूटाचल के पार्श्वभाग में बने महाश्रम में उत्तम (राम) शोभित हैं।' भरत ने यह वृत्तान्त कौतुक के साथ सुन लिया। १२० वहाँ पहुँचते समय अतीव विचित्र श्रीरामाश्रम दिखाई पड़ा। वह कानन प्रदेश पुष्पों, फलों, दलों, पर्णों, लताओं, वृक्षों, शष्पों (दूर्वा) से संकुल होने से अत्यन्त रमणीय था। आम्र, कदली, बकुल, पनस (कटहल), अम्रात, अर्जुनपाकी, नाग (नाग केसर), पुन्नाग (जायफल), नारीकेल (नारियल), पूग (सुपारी), कोविदार (कचनार), एरण्ट (रेंडी), चम्पक, अशोक, तालवृक्ष आदि, मालती की जाति की अनेक लताएँ, तमाल एवं सालवृक्ष, भृंगों तथा विविध विहगों का कलकूजन; उन्नत मातंग (हाथी), भुजंग, प्लवंग (बन्दर), कुरंग (हिरण) आदि जन्तुओं के झुण्ड की लीलाएँ सब देखकर, दूर पर स्थित वृक्षाग्र संलग्न एवं वल्कल से अलंकृत पुष्कराक्षाश्रम (कमललोचन राम का आश्रम) की भरत ने भक्तिपरिपूर्ण हृदय से वन्दना की। तब सौभाग्यशाली भरत को रास्ते की धूल में राम-सीता के

अङ्कुशाब्ज ध्वज वज्र मत्स्यादि कोण्टङ्कितं मंगल मानंदमग्ननाय्
वीणुरुण्टु पणिञ्ञु करञ्ञु तदा रेणु मौलियिल् क्कोरियिट्टीटिनान् ।
धन्योहमित्तहो धन्योहमित्तहो ! मुन्नं मयाकृतं पुण्य पूरं परं,
श्रीराम पाद पत्माञ्चितं भूतलमारालेनिक्कु काण्मानवकाशवु
वन्तितल्लो मुहुरिप्पाद पांसुक्कळन्वेषणं चेय्तळुन्नितेट्वु
वेधावुमीशनु देवक दंबवुं वेदङ्ङळुं नारदादि मुनिकळुं । इत्थ-
मोर्त्तत्भुत प्रेमरसाप्लुत चित्तनायानन्द बाष्पाकुलनाय् मन्द मन्दं
परमाश्रम सन्निधौ चेन्नु निन्नोरु नेरत्तु काणायितुसुन्दरं रामचन्द्रं
परमानन्द मन्दिरमिन्द्रादि वृन्दारक वृन्द वन्दितमिन्दिरा
मन्दिरोर:स्थलमिन्द्रावरजमिन्दीवर लोचनं; १४० दूर्वादळनिभ
श्यामळं कोमळं पूर्वजं नील नळिनदलेक्षणं रामं जटामकुटं
वल्क्कलांबरं सोमबिम्बाभ प्रसन्न वक्त्रांबुजं; उद्यत्तरुणारुणायुत
शोभितं विद्युत्समांगियां जानकियायोरु विद्ययुमाय् विनोदिच्चि-
रिक्कुन्नोरु विद्योतमानमात्मानमव्याकुलं वक्षसि श्रीवत्स लक्षण-
मव्ययं लक्ष्मी निवासं जगन्मयमच्युतं; लक्ष्मण सेवित पाद

चरण-कमलों के सुन्दर एवं पवित्र नूतन चिह्न अंकित दिखाई दिये । १३०
—अंकुश, अब्ज, ध्वज, वज्र, मत्स्य आदि अंकित मंगलदायक उन चरणचिह्नों
को देखकर आनन्द निमग्न भरत धूल में लोटने लगे तथा बिलखते-रोते हुए
(चरणांकित) पावनरज मस्तक पर डालने लगे । (वे चिल्ला उठे)
मैं आज धन्य बना, मैं आज धन्य बना । मेरे पूर्वकालीन सुकृत आज
फलवत् हुए जिस कारण मुझे श्रीराम जी के चरण-कमलों से अंकित वह
भूतल आज देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । इस चरणरज की खोज में
ब्रह्मा, ईश, देववृन्द, सारे वेद, नारद सरीखे मुनि सब भटकते हैं । यह
सोचकर अद्भुत प्रेमरस में अपने मन को निमग्नकर तथा आनन्दाश्रु
पोंछते हुए जब भरत मंद-मंद चलकर परम रमणीय आश्रम के निकट आ
खड़े हुए तो उन्हें सुन्दर रामचन्द्र दिखाई दिये, जो परमानन्द की खान,
इन्द्रादि देवसमूहों से पूजित विष्णु हैं, जिनका वक्षःस्थल इन्दिरा का वास-
स्थान है, जिनके नेत्र इन्दीवर (नीलकमल) तुल्य सुन्दर एवं कोमल
हैं । १४० —जो दूर्वादल श्यामल कोमल हैं, जो (भरत के) पूर्वज
(ज्येष्ठ) हैं, जो नील नलिन तुल्य ईक्षणों से मुग्ध करते हैं, जो जटा मुकुट,
वल्कलांबर से विभूषित हैं, सोमबिम्ब के समान जिनका प्रसन्न मुख-कमल
शोभित है, सहस्रों तरुण अरुण सम दीप्तिवाले हैं, विद्युत् के समान आभा
वाले अंगों से युक्त जानकी रूपी विद्या के साथ मनोविनोद करते प्रकाशित

पङ्केरुहं लक्षण लक्ष्य स्वरूपं पुरातनं, दक्षारिसेवितं पक्षीन्द्रवाहनं रक्षोविनाशनं रक्षाविचक्षणं; चक्षुःश्रवण प्रवर पल्यङ्कगं कुक्षिस्थितानेकपत्मजाण्डं परं कारुण्य पूर्णं दशरथ नन्दन मारण्य वास रसिकं मनोहरं। दुःखवुं प्रीतियुं भक्तियुं कैकोण्टु तृक्काल्क्कल् वीणु नमस्करिच्चीटिनान्। १५० रामनवनेयुं शत्रुघ्ननेयुमामोदालेट्टु निर्वत्तिस्ससंभ्रमं। दीर्घ बाहुक्कळालालिंगनं चेय्तु दीर्घ निश्वासवुमन्योन्यमुळ्क्कोण्टु; दीर्घ नेत्रङ्ङळिल् निन्नु बाष्पोदकं दीर्घ कालं वार्त्तु सोदरन्मारेयुं उत्संग सीमनि चेत्तु पुनरपि वत्सङ्ङळुमणच्चानन्द पूर्वकं तत्संगमेरेयुळ्ळोरु सौमित्रियुं तत्समये भरतांघ्रिकळ् कूप्पिनान्। शत्रुघ्ननुमति भक्ति कलर्न्नु सौमित्रितन् पादांबुजङ्ङळ् कूप्पीटिनान्; उग्र तृषार्त्तमाराय पशुकुलमग्रे जलाशयं कण्टपोले तदा वेगेन सन्निधौ चेन्नाशु कण्टितु राघवन् तन्तिरुमेनि मनोधृतं रोदनं चेय्युन्न माताविनेक्कण्टु पादङ्ङळिल् नमिच्चान् रघुनाथनुं; अत्रयु मार्त्ति कैक्काण्टु

एवं अव्याकुल आत्मा हैं, वक्षःस्थल पर जिनके चिरन्तन श्रीवत्स का चिह्न है, जो लक्ष्मी का निवास स्थान, अच्युत (नाश रहित), लक्ष्मण से सेवित पाद-कमलों वाले, लक्षण-लक्ष्य स्वरूप, पुरातन, दक्षारि (शिव) से पूजित हैं, पक्षीन्द्र (गरुड़) जिनका वाहन है, रक्षोवंश के जो विनाशक हैं, (भक्तों की) रक्षा करने में अतीव समर्थ हैं, जो चक्षु श्रवण प्रवर हैं, जिनकी कुक्षि के कमल में अनेक ब्राह्मणों को धारण करने की क्षमता है तथा जिन कारुण्यमूर्ति दशरथपुत्र का आरण्यवास रसवत् एवं मनोहर है। दुःख, प्रीति एवं भक्ति से समन्वित हो (भरत ने ऐसे राम के) भागवत् पादों पर गिरकर नमस्कार किया। १५० तुरन्त सानन्द राम ने उन्हें और शत्रुघ्न को उठाया और दीर्घ बाहुओं में लपेट लिया। सभी ने दीर्घ निःश्वास लेते हुए दीर्घकाल तक दीर्घनेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित की और राम ने दोनों भ्राताओं को उत्संग (गोद) में बिठाकर फिर आनन्दपूर्वक छाती से लगाया। (राम के) साथ सदा रहते लक्ष्मण ने भी तुरन्त भरत के चरणों पर प्रणाम किया। तभी भक्ति से परिपूर्ण शत्रुघ्न ने भी सौमित्र के चरणांबुजों पर नमस्कार किया। जैसे उग्र तृषार्त पशुकुल अपने आगे जलाशय देखकर शीघ्र उस तरफ भागते हैं, वैसे ही मन ही मन अत्यधिक व्यग्र हो श्रीराम जी शीघ्र माता जी के निकट दौड़ आये और विलाप करती हुई अपनी माता जी को देखकर उनके चरणों पर नमन किया। अत्यधिक पीड़ित कौसल्या ने पुत्र का अश्रुधारा से अभिषेक

कौसल्ययुं पुत्रनु बाष्पधाराभिषेकं चेय्तु, १६० गाढमाश्लिष्य शिरसिमुकर्न्नुटनूढमोदं मुलयुं चुरन्नू तदा। अन्यरायुळ्ळोरु मातृजनत्तेयुं पिन्ने नमस्करिच्चीटिनानादराल्। लक्ष्मणन्तानु-मौव्वण्णं वणङ्ङिनान् लक्ष्मी समयाय जानकि तन्नेयुं; गाढमाश्लिष्य कौसल्यादिकळ् समारूढ खेदं तुटच्चीटिनार् कण्णुनीर। तत्र समागतं दृष्ट्वा गुरुवरं भक्त्या वसिष्ठं साष्टांगमांमारुटन् नत्वा रघूत्तमनाशु चोल्लीटिनानेत्रयुं भाग्यवान् ञानेन्नु निर्णयं। तातनु सौख्यमल्ली ? निज मानसे खेद मुण्टो पुनरेन्नैप्पिरिकयाल्; अेन्तोन्नु चोन्नतेन्नोटुचोल्ली टुवानेन्तु सौमित्रियेक्कोण्टु परञ्ञतुं ? रामवाक्यं केट्टु चोन्नान् वसिष्ठनुं धीमतां श्रेष्ठ! तातोदन्तमाशु केळ् निन्नेप्पिरिञ्ञतु तन्ने निरूपिच्चु मन्नवन् पिन्नेयुं पिन्नेयुं दुःखिच्चु १७० राम रामेति सीतेति कुमारेति रामेति लक्ष्मणेति प्रलापं चेय्तु देवलोकं चेन्नु पुक्का-नरिक नी देव भोगेन सुखिच्चु सन्तुष्टनाय्। कर्णशूलाभं गुरुवचनं समाकर्ण्य रघुवरन् वीणितु भूमियिल्, तल्क्षणमुच्चै-र्विलापिच्चितेट्वुं लक्ष्मणनोटुं जननी जनङ्ङळुं। दुःखमालोक्य

किया। १६० गाढाश्लेष और मस्तक पर चुंबन अंकित करती हुई प्रसन्नमना कौसल्या के स्तन भर आये। (राम ने) अन्य माताओं को भी सादर नमस्कार किया। वैसे ही लक्ष्मण ने भी सबको नमन किया। कौसल्या आदि (माताओं) ने जानकी का गाढाश्लेष किया और मन के घने उत्ताप को आँसुओं की अजस्र धारा को पोंछ लिया। वहाँ आये गुरुवर वसिष्ठ जी को देखकर भक्तिपूर्ण मन से राम ने उनके सामने साष्टांग नमस्कार किया और बोले कि मैं अवश्य ही भाग्यशाली हूँ। (फिर राम ने पूछा) पिता जी कुशल से तो हैं ? मेरे वियोग का दुःख क्या उनके मन को व्याकुल बना रहा है ? (उन्होंने) मेरे लिए क्या सन्देश भेजा है और लक्ष्मण के बारे में क्या कहा है ? राम के वचन सुनकर वसिष्ठ ने कहा—हे श्रेष्ठ ज्ञानी ! पिता जी की खबर सुनिये। आपके वियोग की बात सोचते-सोचते महाराज व्याकुल होकर। १७० —तथा 'राम राम !, सीता !, कुमार !, राम !, लक्ष्मण !' का प्रलाप करते हुए देवलोक में पहुँचकर देवभोगों से सन्तुष्ट एवं सुखी बन बैठे हैं, यह आप समझिए। शूल सदृश गुरुवचन सुनकर राम भूमि पर गिर पड़े और (यह देखकर) तुरन्त ही लक्ष्मण सहित माताएँ भी उच्चस्वर में विलाप करने लगीं। (राम विलाप करने लगे) हा तात ! विधिवश मुझे छोड़कर

मट्ठुळ्ळजनङ्ङळुमॊक्कॆ वाविट्टु करञ्ञु तुटङ्ङिनार् हा! तात ! मां परित्यज्य विधिवशालॆतॊरुदिक्किनु पोयितय्यो भवान् ! हा ! हा ! हतोहमनाथोस्मिमामिनि स्नेहेन लाळिप्पतारनुवासरं ? देहमिनि त्यजिच्चीटुन्नतुण्टु ञान् मोहमॆनिक्किनियिल्ल जीविक्कयिल् । सीतयुं सौमित्रि तानुमव्वण्णमे रोदनं चॆय्तु वीणीटिनार् भूतले । तद्दशायां वसिष्ठोक्तिकळ् केट्टवरुळ्त्तापमॊट्टु चुरुक्किमरुविनार् । १८० मन्दाकिनियिलिरङ्ङिक्कुळिच्चवर् मन्देतरमुदक क्रिययुं चॆय्तार् । पिण्डं मधु सहितॆंगुदी सल्फल पिण्याक निर्म्मितान्नं कॊण्टु वच्चितु । यातॊरन्नं तान् भुजिक्कुन्नतुमतु सादरं पितृक्कळ्क्कुमॆन्नल्लो, वेदस्मृतिकळ् विधिच्चतॆन्नोर्त्तिति खेदेन पिण्डदानानन्तरं तदा स्नानं कळिच्चु पुण्याहवुं चॆय्तथ स्नानादनन्तरं प्रापिच्चिताश्रमं । अन्नुपवासवुं चॆय्तितॆल्लावरुं वन्नुदिच्चीटिनानादित्य देवनुं । मन्दाकिनियिल् कुळिच्चुत्तु सन्ध्ययुं वन्दिच्चु पोन्नाश्रमे वसिच्चीटिनार् । १८७

भरत राघव संवादं

अन्नेरमाशु भरतनुं रामनॆच्चॆन्नु तॊळुतु परञ्ञु तुटङ्ङिनान्-

आप किस दिशा में चले गये ? हा हा ! मैं मर गया; मैं अनाथ हो गया । अब प्रतिदिन स्नेह एवं लाड-प्यार कौन हम पर दिखाएगा ? अब मैं यह शरीर-त्याग कर दूँगा; मुझे और जीवित रहने की ज़रा भी इच्छा नहीं है । सीता और लक्ष्मण भी वैसे ही विलाप करते हुए पृथ्वी पर गिर पड़े । इस अवस्था में वसिष्ठ जी की उक्तियाँ सुनकर वे अपने मन के दु:ख पर अल्पमात्रा में विजय प्राप्त कर सके । १८० फिर मंदाकिनी में उतरकर स्नानादि से निवृत्त हो उन्होंने श्रद्धापूर्वक उदक क्रियाएँ सम्पन्न कीं तथा (आत्मा की शान्ति के लिए) मधु, ईगुदी और पिण्याक से निर्मित अन्न का पिण्डदान भी किया क्योंकि जिस अन्न का कोई उपभोग करता है वही श्रद्धा से पितरों को भी दें, यही वेदों स्मृतिग्रंथों का आदेश है । यह सोचकर दु:खपूर्वक पिण्डदान करके, स्नान तथा पुण्याह उपरांत स्नान से निवृत्त हो वे आश्रम में वापस आ गये । उस दिन सभीने उपवास किया । फिर सूर्योदय हुआ और सभी लोग जाकर मन्दाकिनी स्नान तथा संध्या वन्दना के उपरांत आश्रम में पहुँच गये । १८७

भरत और राम का संवाद

तब भरत राम के सामने हाथ जोड़कर कहने लगे—"हे राम !

राम ! राम ! प्रभो ! राम ! महाभाग ! मामक वाक्यं
चेंवितन्नु केळ्क्कणं । उण्टटियनभिषेक संभारङ्ङळ् कोण्टु
वन्निट्टुकोंण्टिनि वैकाते चेय्क वेणमभिषेकवुं पालनं चेय्क राज्यं
तव पैत्र्यं यथोचितं । ज्येष्ठनल्लो भवान् क्षत्रियाणामति
श्रेष्ठमां धर्म्मं प्रजापरिपालनं; अश्वमेधादियुं चेय्तु कीर्त्या चिरं
विश्वमेल्लां परत्तिक्कुल तन्तवे; पुत्ररेयुं जनिप्पिच्चु राज्यं निज
पुत्रङ्कलाक्कि वनत्तिन्नु पोकणं । इप्पोळनुचितमत्रे वनवासमत्भुत
विक्रम ! नाथ ! प्रसीदमे । मातावु तन्नुटे दुष्कृतं चेतसि
चिन्तिक्करुतु दयानिधे ! भ्रातावु तन्नुटे पादांबुजं शिरस्यादाय
भक्ति पूण्टित्थमरुळ् चेय्तु । १० दण्डनमस्कारवुं चेयतु निन्नितु
पण्डितनाय भरतकुमारनुं । उत्थाप्य राघवनुत्संगमारोप्य चित्त
मोदेन पुणर्न्नु चोल्लीटिनान्— मद्वाक्यमत्र केट्टालुं कुमार ! नी
यत्त्वयोक्तं मयातत्तथैव श्रुतं । तातनेन्नेप्पतिन्नालु संवत्सरं
प्रीतनाय्क्काननं वाळेन्नु चोल्लिनान् । पित्रा निनक्कु राज्यं
मातृसम्मतं दत्तमायी पुनरेन्नतु कारणं चेतसा पार्क्किल

हे राम ! हे प्रभो ! हे राम !, हे महाभाग ! मेरा कथन ध्यान से सुनने की कृपा करें। यह दास अभिषेक के सभी साधन ले आया है। इसलिए अब तुरन्त अभिषेक (आपका) हो जाना चाहिए और फिर अपने विरासत में प्राप्त राज्य का यथोचित शासन सम्भालें। आप (हम भ्राताओं में) ज्येष्ठ हैं और क्षत्रियों का सर्वोच्च धर्म राज्य-पालन करना ही है। इसलिए आप अश्वमेध आदि यज्ञों का निर्वाहकर अपना यश विश्व में फैला दें तथा कुल के विकास के लिए पुत्रोत्पत्ति में लग जाएँ तथा (जीवन के अन्तिम चरण में) राज्य अपने पुत्र को अर्पितकर वनवास को जाएँ। हे अद्भुत पराक्रमशाली ! हे नाथ ! अब आपका वनवास अनुचित है। हे दयानिधे ! आप मुझे अनुगृहीत करें। मेरी माता के कुकर्म पर ध्यान न दें।" भ्राता के चरण कमलों पर नतमस्तक हो, अत्यन्त भक्तिरस में ओतप्रोत हो भरत ने इस प्रकार कहा। १० —फिर पंडित कुमार भरत दण्ड नमस्कार करते रह गये। उन्हें उठाकर तथा उत्संग में बिठाकर प्रसन्नतापूर्वक आश्लेष करते हुए राम ने बताया—'हे कुमार ! तुम मेरी बात सुनो। तुम्हारी कही हुई बात मैंने वैसे ही (ध्यान से) सुन ली है। (किन्तु) पिता जी ने बड़े प्रेम से मुझे चौदहवर्ष तक वनवास करने का आदेश दिया है। और माता के आग्रह पर पिता ने तुम्हें राज्य प्रदान किया है। इस कारण से, मन में विचार करके देखें तो हम दोनों के लिए यह

ञमुक्किरुवक्कुमित्तात नियोगमनुष्ठिक्कयु वेणं। यातोरुत्तन् पितृवाक्यत्तै लंघिच्चु नीतिहीनं वसिक्कुन्नितु भूतले जीवन्मृतनवन् पिन्ने नरकत्तिल्मेवुं मरिच्चालुमिल्लोरु संशयं। आकयाल् नी परिपालिक्क राज्यवु पोक ञान् दण्डकं तन्निल् वाणीटुवान्। राम वाक्यं केट्टु चोन्नान् भरतनुं कामुकनाय तातन् मूढमानसन्, २० चोन्न वाक्यं ग्राह्यमल्लो महामते! मन्नवनाय् भवान् वाळ्क मटियाते। ऎन्नु भरत वाक्यं केट्टु राघवन् पिन्नेयु मन्दस्मितं चेय्तु चोल्लिनान्— भूमि-भर्त्ता पिता नारीजितनल्ल कामियुमल्ल मूढात्मावुमल्ल केळ्। तातनसत्य भयं कोण्टु चेय्ततिनेतुमे दोषं पऱयरुतोक्क नी। साधुजनङ्ङळ् नरकत्तिलुमति भीति पूण्टीटुमसत्यत्तिल् मानसे। ऎङ्किल् ञान् वाळ्वन् वने निन्तिरुवटि सङ्कटमेन्निये राज्यवु वाळ्क। सोदरनित्थं पऱञ्ञतु केट्टति सादरं राघवन् तानुमरुळ् चेय्तु— राज्यं निनक्कुमेनिक्कु विपिनवु पूज्यनां तातन् विधिच्चितु मुन्नमे, व्यत्ययमायनुष्ठिच्चाल् नमुक्कतु सत्य विरोधं वरुमेन्नु निर्णयं। ऎङ्किल् ञानुं तिरुवटि पिन्नाले किङ्करनाय् सुमित्रा-

---

आवश्यक है कि हम पिता के आदेश का पालन करें। जो मनुष्य पिता की आज्ञा का उल्लंघन करता हुआ भूतल पर रहता है, वह जीवित रहता हुआ भी मृतक तुल्य है और मरने के उपरांत वह नरक भागी ही होगा, यह असंदिग्ध बात है। अतः तुम राज्यभार सम्भाल लो और मैं दण्डक वन में वास करने जाऊँगा। राम का (यह) कथन सुनकर भरत बोले—'मन से मूढ तथा कामी पिता का २० —कहा हुआ वचन स्वीकार करने योग्य नहीं है। इसलिए, हे महामति! आप निस्संकोच भाव से राजा बनकर शासन कीजिए।' (भरत का यह कथन सुनकर राम ने उन्हें समझाया) 'भूमिपति हमारे पिता नारीजित नहीं, कामी नहीं और मूढात्मा भी नहीं। तुम यह जान लो कि सत्य वचन से भयभीत हो उन्होंने जो कुछ किया, उसके लिए तुम उन्हें दोषी मत ठहराओ। सज्जन लोग नरक में पहुँचकर भी असत्य भाषण से मन में भयभीत रहते हैं।' अगर ऐसी बात है तो मैं वन में रहूँगा और आप निरापद शासन करते रहिए, भरत का यह कथन सुनकर राम ने प्रीतियुक्त वाणी में बताया— 'आदरणीय पिता जी ने पहले ही तुम्हारे लिए राज्य तथा मेरे लिए वन निश्चित किया है। उसके विपरीत आचरण से हमें सत्य विरोध का पाप लगेगा, इसमें सन्देह नहीं है।' ऐसी बात है तो 'मैं भी सुमित्रात्मज

त्मजनैंप्पोलें ३० पोरुवन् काननत्तिन्नतरुतेंङ्किल् चेरुवन् चेंन्नु सुरलोकमाशु ञान् । नित्योपवासेन देहमुपेक्षिप्प नित्येवमात्मनि निश्चयिच्चग्निके दर्भ विरिच्चु किळक्कु तिरिञ्ञु निन्नप्पोळ् वेंयिलत्तु पुक्कु भरतनुं । निर्बन्ध बुद्धि कण्टप्पोळ् रघुवरन् तद्बोधनात्थं नयनान्त संज्ञया चौंन्नान् गुरुविनोटप्पोळ् वसिष्ठनुं कैकेयीसुतनोटु चौंल्लिनान्— मूढनायीटोला केळ्क्क नीयेंङ्किलो गूढमायोरु वृत्तान्तं नृपात्मज ! रामनाकुन्नतु नारायणन् परन् तामरसोत्भवनर्त्थिक्क कारणं भूमियिल् सूर्य कुलत्तिलयोद्ध्ययिल् भूमिपालात्मजनायिप्पिरन्नितु, रावणनेंक्कोंन्नु धर्म्मंत्तें रक्षिच्चु देवकळेंप्परिपालिच्चु कोंळ्ळुवान् । योगमायादेवियायतु जानकि भोगि प्रवरनाकुन्नतु लक्ष्मणन्; ४० लोकमातावुं पितावुं जनकजा राघवन्मारेन्नरिक वळि पोलें । रावणनेंक्कोंल्वतिन्नु वनत्तिनु देवकार्य्यात्थं पुरप्पेंट्टु राघवन् । मन्थरा वाक्यवुं कैकेयिचित्त निर्बन्धवुं देवकृतमेंन्नरिक नी । श्रीरामदेवनिवर्त्तनत्तिङ्कलुळ्ळाग्रहं नीयुं परित्यजिच्चीटुक । कारण पूरुषानुज्ञया सत्वरं नी राजधानिक्कु पोक मटियातें, मंत्रिकळोटुँ जननी

के जैसे सेवक बनकर आपके पीछे ३० —वन में आऊँगा । अगर आप मुझे रोकेंगे तो मैं तुरन्त ही सुरलोक में जाऊँगा ।' यह कहकर नित्योपवास के द्वारा शरीर त्यागका दृढ़ निश्चय लेकर भरत कुश बिछाकर, धूप में पूर्व दिशा की ओर मुख किये खड़े हो गये । उनकी हठधर्मिता देखकर राम ने नयनों के संकेत से अपने गुरु से उन्हें समझाने का आग्रह किया । वसिष्ठ कैकेई-पुत्र (भरत) से बोले—"तुम मूर्ख का-सा आचरण मत करो । हे नृपात्मज ! अगर तुम्हारी ऐसी जिद है तो अत्यन्त रहस्यमय एक वृत्तान्त सुन लो । राम नारायण परमात्मा हैं, जो वारिजोद्भव की प्रार्थना करने पर पृथ्वी पर सूर्यवंश में अयोध्या के भूमिपालक के पुत्र-रूप में, रावण का वधकर, धर्म की रक्षा करने तथा देवताओं का परिपालन करने के लिए जन्मे हैं । योगमाया ही जानकी है और भोगीप्रवर (सर्पश्रेष्ठ शेष) ही लक्ष्मण हैं । ४० —यह भलीभाँति जान लो कि जनकजा और राम लोकमाता तथा लोकपिता हैं । देवकार्य के लिए, रावण का वध करने के लिए राम वन को निकल पड़े हैं । मंथरावचन तथा कैकेई की जिद सब देवकृत हैं, यह समझ लो । इसलिए श्रीरामचन्द्र को 'लक्ष्य से निवृत्त करने का आग्रह तुम परित्याग कर दो । कारण-पुरुष (राम) की आज्ञा लेकर तुम निस्संकोच मंत्रियों, माताओं,

जनत्तोटुमन्त मिल्लात पटयोंटुमिप्पोंळे। चेन्नयोद्ध्यापुरि पुक्कु वसिक्क नी वन्नीटुमग्रजन् तानुमनुजनुं देवियुमीरेळु संवत्सरावधौ रावणन्तन्नै वधिच्चु सपुत्रकं। इत्थं गुरूक्तिकळ् केट्टु भरतनुं चित्तेवळन्नोरु विस्मयं कैक्कोण्टु, भक्त्या रघूत्तम सन्निधौ सादरं नत्वा मुहुर्न्नमस्कृत्वा ससोदरं। ५० पादुकांदेहि राजेन्द्र! राज्यायते पादबुद्ध्या मम सेविच्चु कोळ्ळुवान्। यावत्तवागमनं देव देव! मे तावदेवानारतं भजिच्चीटुवन्। इत्थं भरतोक्ति केट्टु रघूत्तमन् पोल्त्तारटि कळिल्च्चेर्त्त मेतियटि भक्तिमानाय भरतनु नल्किनान् नत्वा परिग्रहिच्चीटिनान् तम्पियुं; उत्तम रत्न विभूषित पादुकामुत्तमांगे चेर्त्त रामनरेन्द्रनै— भक्त्या प्रदक्षिणं कृत्वा नमस्करिच्चुत्थाय वन्दिच्चु चोन्नान् सगद्गदं— मन्वब्द पूर्णे प्रथम दिने भवान् वन्नतिल्लेन्नु वन्नीटुकिलिपन्नै ञान् अन्य दिवसमुषसि ज्वलिप्पिच्च वह्नियिल्च्चाटि मरिक्कुन्नतुण्टल्लो। ऐन्नतु केट्टु रघुपतियुं निज कण्णुनीरुं तुटच्चम्पोटु चोल्लिनान्— अङ्ङनेतन्नैयोरन्तरमिल्लतिनङ्ङु ञानन्नु तन्नै वरुं निर्णयं। ६०

प्रजावर्ग तथा विशाल सेना को लेकर अब राजधानी लौट चलो और अयोध्यापुर में पहुँचकर सुख से रहो। तुम्हारे अग्रज (ज्येष्ठ भ्राता) अनुज तथा देवी सहित चौदहवर्ष की अवधि पूर्ण होनेपर रावण को सपुत्र मारकर वापस आ जाएँगे। गुरु के इन वचनों को सुनकर मन में उत्पन्न अत्यन्त विस्मय को लिये,अपने सहोदर(शत्रुघ्न)के साथ राम के सम्मुख पहुंच भक्तिपूर्वक भरत ने नतमस्तक हो प्रणाम किया। ५० —(और कहा) हे राजेन्द्र! आप अपनी पादुकाएं (मुझे) दीजिए। उन्हीं को आपके पाद समझकर तथा उन्हीं पर राज्यभार रखकर हे देव! आपके आगमन पर्यन्त मैं निरन्तर उन्हीं की सेवा करता रहूँगा। भरत की यह उक्ति सुनकर अपने भगवद् चरणों से परिशोभित पादुकाएँ राम ने अपने भक्त भरत को दे दीं और अनुज (भरत) ने नतमस्तक हो उन्हें हाथ में ग्रहण किया। उत्तम रत्नों से विभूषित पादुकाओं को छाती से लगाये हुए भरत ने श्रीरामचन्द्र जी की परिक्रमा की, फिर नमस्कारपूर्वक वन्दना से उठकर सगद्गद वाणी में कहा—"मन्वब्द (चौदहवर्ष) के पूर्ण होने पर अगर आप प्रथम दिन ही नहीं आ पाएँ तो फिर अगले दिन उषाकाल में ही आग में कूद पड़कर मैं अपने शरीर को भस्मीभूत कर दूंगा।" यह सुनकर रघुपति ने अश्रु पोंछते हुए कहा—"ऐसा ही होगा, इसमें कोई अन्तर नहीं आने पाएगा, मैं उसी दिन निस्संदेह आ जाऊँगा।" ६०

अन्नरुळ् चेय्तु विटयुं कोंटुत्तितु धन्यन् भरतन् नमस्करिच्चीटिनान् । पिन्ने प्रदक्षिणवुं चेय्तु वन्दिच्चु मन्देतरं पुरप्पेट्टु भरतनुं, मातृजनङ्ङळुं मन्त्रिवरन्मारु भ्रातावुमाचार्यनुं महासेनयुं, श्रीरामदेवनेच्चेतसि चेर्त्तुकोण्टारूढ मोदेन कोण्टुपोयीटिनार् । श्रृंगिवेराधिपनाय गुहनेयुं मंगलवाचा पऽञ्ञयच्चीटिनान् । मुन्पिल् नटन्नु गुहन् वळिकाट्टुवान् पिम्पे पेरुम्पटयुं नटकोण्टितु; कैकेयितानुं सुतानुवादं कोण्टु शोकमकन्नु नटन्नु मकनुमाय् । गंगकटन्नु गुहानुवादेन नालंगप्पटयोटुं कूटेक्कुमारन्मार् चेन्नयोद्ध्यापुरिपुक्कु रघुवरन् तन्नेयुं चिन्तिच्चु चिन्तिच्चनुदिनं । भक्त्या विशुद्ध बुद्ध्या पुरवासिकळ् नित्य सुखेन वसिच्चितेल्लावरुं । ७० तापस वेषं धरिच्चु भरतनुं तापेन शत्रुघ्ननुं व्रतत्तोटुटन् चेन्नु नन्दिग्राममन्पोटु पुक्कितु वन्नितानंदं जगद्वासिकळ्क्केल्लां । पादुकं वच्चु सिंहासने राघव पादङ्ङळेन्नु सङ्कल्पिच्चु सादरं गन्धपुष्पाद्यङ्ङळ् कोण्टु पूजिच्चु कोण्टन्तिके सेविच्चुतिन्नारिरुवरुं । नाना मुनिजन सेवितनायोरु मानव वीरन् मनोहरन् राघवन् जानकियोटुमनुजनोटुं मुदा मानसानन्दं

यह समझाकर राम ने उन्हें बिदा किया । श्रेष्ठ भरत ने नमस्कार किया । फिर (राम की) प्रदक्षिणा और स्तुति-वन्दना के उपरांत भरत धीरे-से निकल पड़े । माताएँ, मन्त्रि लोग, भ्राता, आचार्य, विशाल सेना सबके साथ मन में राम को प्रतिष्ठितकर भरत सप्रेम चलने लगे । (राम ने) श्रृंगवेराधिप गुह को मंगल वचन कहकर विदा कर दिया । रास्ता दिखाते हुए आगे-आगे गुह और पीछे-पीछे विशाल जन समुदाय चलने लगा । (राम से) अनुमति लेकर तथा हृदय के संताप को दूर करके कैकेयी भी अपने पुत्र के साथ चलने लगी । गंगा पार करने के उपरांत गुह से अनुमति लेकर कुमार लोग अपनी चतुरंग सेनासहित अयोध्या पहुँचे । पुरवासी लोग प्रतिदिन राम का अनुस्मरण करते हुए भक्तिपूर्ण हृदय एवं पवित्र बुद्धि से युक्त हो शाश्वत सुखी बन जीवन यापन करने लगे । ७० अविलम्ब तापस वेष धारणकर भरत तथा संताप-युक्त शत्रुघ्न व्रतधारी बन-नंदिग्राम में चले गये । सेवक लोग बहुत ही प्रसन्न एवं आनन्दित हुए । सिंहासन पर पादुकाएँ रखी गयीं और उन्हें मन ही मन राम के चरण मानकर, सुगंधमय पुष्पों से उनकी आदरपूर्वक पूजा करते हुए दोनों भाई निकट ही सेवा तत्पर हो रहने लगे । (यहाँ) नाना मुनिजनों से सेवित मानव वीर तथा मनोहर राम ने अपने भ्राता एवं जानकी सहित थोड़े दिन

कलर्न्नु चिल दिनं चित्रकूटाचले वाणोरनन्तरं चित्ते निरूपिच्चु कण्टु रघुवरन्, मित्र वर्गङ्ङळयोद्ध्ययिल् निन्नु वन्नेत्तुमिविटे-यिरुन्नालिनियुटन् सत्वरं दण्डकारण्यत्तिनाय्क्कोण्टु बद्धमोदं गमिच्चीटुक वेण्टतु। इत्थं विचार्य्य धरित्रीसुतयुमत्युत्तमनाय सौमित्रियुमाय्त्तदा ८० तत्याज चित्रकूटाचल राघवन् सत्य-संधन् नटकोण्टान् वनान्तरे। अत्रि तन्नाश्रमं पुक्कु मुनीन्द्रने भक्त्या नमस्करिच्चु रघुनाथनु-- रामोहमद्य धन्योस्मि महामुने ! श्रीमल् पदं तव काणाय कारणं। साक्षाल् महाविष्णु नारायणन् परन् मोक्षदनेन्नतरिञ्ञु मुनीन्द्रनुं पूजिच्चितर्घ्य पाद्यादिकळ् कोण्टुतं राजीव लोचनं भ्रातृभार्यान्वितं। चोल्लिनान् भूपाल नन्दनन्मारोटु चोल्लेळुमेन्नुटे पत्नियुण्टत्र केळ्; अवयु वृद्ध, तपस्विनिमारिल् वच्चुत्तमयाय धर्म्मज्ञा तपोधना; पर्ण्ण शालान्तर् गृहे वसिक्कुन्नितु चेन्नु कण्टालुं जनक नृपात्मजे। अन्नतु केट्टु रामाज्ञया जानकि चेन्ननसूया पदङ्ङळ् वणङ्ङिनाळ्। वत्से ! वरिकरिके जनकात्मजे ! सल्संगमं जन्म साफल्यमोर्क्क नी। ९० वत्से पिटिच्चु चेर्त्तालिंगनं चेय्तु

सानन्द चित्रकूटाचल पर निवास किया। फिर उन्होंने मन ही मन सोच लिया कि अब यहाँ अधिक दिन तक निवास करने पर अयोध्या से मित्रवर्ग के आने की सम्भावना है, इसलिए तुरन्त ही सीधे दण्डकारण्य को चलना ही उचित होगा। यह सोचकर धरित्री-सुता तथा अत्युत्तम गुणवाले लक्ष्मण के साथ ८० —चित्रकूटाचल को त्यागकर सत्यप्रिय राघव वनान्तर में चलने लगे। अत्रि के आश्रम में पहुँचकर 'मैं राम हूँ ! हे महामुने ! आपके चरणों का दर्शन करके मैं अब धन्य हुआ' कहते हुए राम ने मुनीन्द्र को भक्तिपूर्ण मन से प्रणाम किया। राम को साक्षात् महाविष्णु, नारायण एवं मोक्षदात्ता परात्पर समझकर मुनि ने भ्राता एवं भार्या सहित राजीव-लोचन राम के पाद प्रक्षालन, अर्घ्य एवं पूजा की। भूपाल नन्दनों से (अत्रि ने) कहा कि मेरी वृद्धा पत्नी वहाँ (पर्णशाला के भीतर) है। वह तपस्विनियों में उत्तमा है तथा धर्मज्ञा एवं तपोधना है। हे जनक नृपात्मजे ! पर्णशाला के अन्दर बैठी मेरी पत्नी से जाकर मिलिए। यह सुनकर राम की आज्ञा लेकर जानकी ने अनुसूया के चरणों की वन्दना की। (अनुसूया ने कहा) वत्से ! हे जनकात्मजे ! नज़दीक आओ। सत्संग से जन्म को सफल होता हुआ समझ लो। ९० (फिर) मुनि पत्नी ने अत्यन्त प्रसन्न होकर पुत्री-सम जानकी को बलात् छाती से लगा

तत्स्वभावं तेँळिञ्ञु मुनि पत्नियुं। विश्वकर्म्माविनाल् निर्म्मितमायोरुविश्व विमोहनमाय दुकूलवुं कुण्डलवुमंगरागवुमेन्निव मण्डनार्त्थमनसूय नल्कीटि नाळ्। नन्नु पातिव्रत्यमाश्रित्य राघवन् तन्नोटु कूटे नी पोन्नतुमुत्तमं; कान्ति निनक्कु कुऱयाय्कीरिक्कलुं शान्तनाकुं तव वल्लभन् तन्नोटुं चेन्नु महाराजधानियकं पुक्कु नन्नाय् सुखिच्चु सुचिरं वसिक्क नी! इत्थमनुग्रहवुं कोटुत्तादराल् भर्त्तुरग्रेगमिक्केन्नयच्चीटिनाळ्। मृष्टमाय् मूवरेयुं भुजिप्पिच्चथ तुष्टिकलर्न्नु तपोधननत्रियुं श्रीरामनोटरुळ् चेय्तु भवानहो! नारायणनायतेन्नतऱिञ्ञेनहं। निन्महामाया जगत्त्रय वासिनां सम्मोहन कारिणियायतु निर्ण्णयं। १०० इत्तरमत्रिमुनीन्द्र वाक्यं केट्टु तत्र रात्रौ वसिच्चु रघुनाथनुं। देवनुमादेवियोटरुळ्च्चेय्तितेवमेन्नाळ् किळिप्पैतलक्कालमे। १०२

इत्यद्ध्यात्म रामायणे उमा-महेश्वर संवादे

॥ अयोद्ध्या काण्डं समाप्तं ॥

लिया और विश्वकर्मा से रचित विश्वविमोहक दुकूल, कुण्डल, अंगराग आदि उन्हें अलंकार के लिए दे दिये। (अनुसूया ने आशीर्वचन कहे) अपने पातिव्रत्य से प्रेरित हो राम के संग चलकर तुमने उत्तम कार्य किया। तुम्हारी दीप्ति कभी मन्द नहीं पड़ेगी। अपने शान्तचित्त पति के साथ महाराजधानी में पहुँचकर तुम चिरकाल तक सुखी रहो। इस प्रकार के आशीर्वाद देकर भर्ता के आगे-आगे चलने का उपदेश दिया। सन्तुष्ट चित्त हो अत्रि ने तीनों को मृष्टान्न भोजन खिलाया और प्रसन्न हो राम से कहा—"मैंने यह समझ लिया है कि आप नारायण हैं। आपकी महामाया ही निस्संदेह जगत्रय के जीवों को सम्मोहित किया करती है।" १०० मुनिवर अत्रि के ऐसे वचन सुनते हुए राम ने वहाँ रात्रि व्यतीत की। (कवि का कथन है) कि शुकी ने तब कहा कि देव (शिव) ने इस प्रकार देवी (पार्वती) को (रामकथा) सुनायी। १०२

अध्यात्म रामायण में उमा-महेश्वर संवाद रूप

॥ अयोध्या काण्ड समाप्त ॥

अरण्य काण्डम्

॥ हरिः श्रीगणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

बालिके ! शुक कुल मौलि मालिके ! गुणशालिनी ! चारु-शीले चौल्लीटु मटियातें नील नीरदनिभन् निर्म्मलन् निरञ्जनन् नीलनीरदलोचनन् नारायणन् नील लोहित सेव्यन् निष्कळन् नित्यन् परन् कालदेशानुरूपन् कारुण्यनिलयनन् पालन परायणन् परमात्मावु तन्टे लीलकळ् केट्टाल् मतियाकयिल्लोरिक्कलुं। श्रीराम-चरितङ्ङळतिलुं विशेषिच्चु सारमायोरु मुक्ति साधनं रसायनं। भारती गुणं तव परमामृतमल्लो परातें परकेन्नु केट्टु पैङ्किळि चौन्नाळ्— फाललोचनन् परमेश्वरन् पशुपति बालशीतांशु मौलिभगवान् परापरन् प्रालेयाचल मकळोटरुळ् चेय्तीटिनान् बालिके ! केट्टुकौळ्क पार्वती ! भक्तप्रिये ! रामनां पर-मात्मावानन्दरूपनात्मा रामनद्वयनेकनव्ययनभिरामन् अत्रि तापस-प्रवराश्रमे मुनियुमायेत्रयुं सुखिच्चु वाणीटिनानोरु दिनं। १०

॥ हरिः श्रीगणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

गुणी एवं चारुशीलयुक्त तथा शुककुल के लिए सिरमौर बनकर रहने-वाली हे प्रिय शुकी ! तुम (रामकथा का शेष अंश) निर्विघ्न बोलो। नील नीरद के समान (रंगवाले), निर्मल, निरंजन, नीर नीरद के समान नील नेत्रवाले जो नारायण हैं, जो नील लोहित (शिव) से सेव्य, निष्कल, नित्य, अलौकिक, कालदेशानुरूप, कारुण्यनिलय, (भक्तों के) पालन-पोषण में परायण, परमात्मा हैं, उनकी लीलाएँ कितनी भी सुनें, कभी संतृप्ति नहीं होती। उसमें भी श्रीरामचन्द्र जी का चरित विशेषकर सारपूर्ण, मुक्ति का साधन स्वरूप एवं रसायन है। तुम्हारा वाग्विलास परम मधुर अमृतोपम है, तुम उनका गुणगान करो। यह (आग्रह) सुनकर शुकी ने कहा कि फाललोचन, परमेश्वर, पशुपति एवं मौलि पर बालशीतांशु को धारण करनेवाले परात्पर भगवान ने प्रालेयाचल (हिमवान) पुत्री को बताया—हे बालिके ! हे पार्वती ! हे भक्तप्रिये ! तुम सुनो। राम नाम से प्रसिद्ध परमात्मा आनन्द स्वरूप आत्मा हैं। राम अद्वय, एक, अव्यय, अभिराम हैं। उन्होंने एक दिन अत्रि के तापसाश्रम में मुनि के साथ अत्यन्त सुखपूर्वक जीवन बिताया। १०

महारण्य प्रवेशं

प्रत्युषस्युत्थाय तन् नित्य कर्म्मवुं चेय्तु नत्वा तापसं महाप्रस्थानमारंभिच्चान् । पुण्डरीकोत्भवेष्ट पुत्र ! ञङ्ङळ्क्कु मुनि मण्डल मण्डितमां दण्डकारण्यत्तिनु दण्डमेन्नियेे पोवानाय-नुग्रहिक्कणं पण्डित श्रेष्ठ ! करुणानिधे ! तपोनिधे ! ञङ्ङळे-प्पोरुवळि कूट्टणमतिनिप्पोळिङ्ङु निन्नयरकणं शिष्यरिल् चिलरेयुं । इङ्ङने राम वाक्यमत्रिमामुनि केट्टु तिङ्ङीट्टुं कौतूहलं पूण्टुटनरुळ् चेय्तु— नेरुळ्ळ मार्ग्गं भवानेवक्कुं काट्टीटुन्नितारुळ्ळहो ! तवन्नेर्वळि काट्टीटुवान् । अङ्किलुं जगदनुकारियां निनक्कोरु सङ्कटं वेण्टा वळि काट्टीटुं शिष्यरेल्लां । चेल्लुविन् निङ्ङळ् मुम्पिल् नटक्केन्तवरोटु चोल्लिमामुनितानुमोट्टु पिन्नाले चेन्नान् । अन्नेरं तिरिञ्ञु निन्नरुळिच्चेय्तु मुनि तन्नोटु रामचन्द्रन् वन्दिच्चु भक्ति पूर्वं— निन्तिरुवटि कनिञ्ञङ्ङेळ्ु-न्नळ्ळीटणमन्तिके शिष्यजनमुण्टल्लो वळिक्कुमे । १० ऎन्नु केट्टाशीर्वादं चेय्तुटन् मन्दमन्दं चेन्नु तन् पर्ण्णशालं पुक्करुळिनान् । पिन्नेयुं क्रोशमात्रं नटन्नारवरप्पोळ् मुन्निला-

---

महारण्य में प्रवेश

अत्यन्त प्रातःकाल में उठकर अपने नित्य कर्मों से निवृत्त हो तथा तापस को प्रणाम करके (राम ने) महाप्रस्थान आरम्भ किया। (उन्होंने अत्रि से प्रार्थना की) हे पुण्डरीकोद्भव के प्रिय पुत्र ! हमें मुनिमण्डलों से मंडित दण्डकारण्य को बिना किसी कठिनाई के जाने का अनुग्रह प्रदान कीजिए। हे पंडित श्रेष्ठ ! हे करुणानिधि ! हे तपोनिधि ! हमें सीधा मार्ग दिखा देने के लिए अभी शिष्यों में से कुछ लोगों को भिजवा दीजिएगा। इस प्रकार के राम के वचन सुनकर तपस्वी श्रेष्ठ अत्रि ने उमड़ते आनन्द के साथ कहा—सबको सही मार्ग दिखा देनेवाले आपको सीधा मार्ग दिखाने की किसमें सामर्थ्य है ? फिर भी संसार का अनुसरण करनेवाले आपको कोई कष्ट न होने पाये, इसके लिए मेरे शिष्य लोग आपको मार्ग दिखा देंगे। शिष्यों से यह कहकर कि तुम लोग आगे-आगे चलो, मुनि भी ज़रा पीछे-पीछे चलने लगे। तब पीछे मुड़कर श्रीराम-चन्द्र जी ने भक्ति पूर्वक वन्दना करते हुए कहा कि आप कृपा करके (पर्णशाला के) अन्दर चले जाएँ, रास्ता दिखाने के लिए शिष्यगण तो हैं ही। १० यह सुनकर (मुनि) आशीर्वाद देकर धीरे-धीरे पर्णशाला के भीतर चले गये। फिर क्रोशमात्र (एक चौथाई योजन) चलने पर उन्हें

ऩमारु महावाहिनि काणाय्वऩ्ऩु। अऩ्ऩेरं शिष्यर्कळोटरुळि चेय्तु रामनिऩ्ऩदि कटप्पतिनेऩ्तुपायङ्ङळुळ्ळु ? ऎन्नु केट्टवर्कळुं चोल्लिनारेन्तु दण्डं मऩ्नव ! ऩल्ल तोणियुण्टेऩ्ऩु धरिच्चालुं। वेगेन ञङ्ङळ् कटत्तीटुऩ्ऩतुण्टु तानुमाकुलं वेण्टा ञङ्ङळ्क्कुण्टल्लो परिचयं। ऎङ्किलो तोणि करेऱीटामेऩ्ऩवर् चोऩ्ऩार् शङ्कूटाते शीघ्रं तोणियुं कटत्तिऩार्। श्रीरामन् प्रसादिच्चु तापस कुमारकऩ्मारोटु ऩिङ्ङळ् कटऩ्ऩङ्ङु पोकेन्तु चोऩ्ऩान्। चेऩ्ऩुट-नत्रिपादं वन्दिच्चु कुमारऩ्मारोऩ्ऩोळियाते रामवृत्तान्त-मऱियिच्चार्। श्रीराम सीता सुमित्रात्मजऩ्मारुमथ घोरमायुळ्ळ काननमकं पुक्कार्। झिल्लि झंकार नाद मण्डितं सिंह व्याघ्र शल्यादि मृगगण कीर्ण्णमातपहीनं; २० घोर राक्षस कुल सेवितं भयानकं क्रूर सर्प्पादि पूर्ण्णं कण्टु राघवन् चोऩ्ऩान्— लक्ष्मण ! ऩऩ्ऩाय् ऩालु पुऱवुं ऩोक्किक्कोळ्क भक्षणार्त्थिकळल्लो राक्षसां परिषकळ्। विल्लिनि ऩऩ्ऩाय् कुळियेक्कुलय्क्कयुं वेणं ऩल्लोरु शरमूरिप्पिटिच्चुकोळ्क कय्यिल्। मुऩ्ऩिल् ऩी ऩटक्कणं वळियॆ वैदेहियुं पिन्नाले ञानुं ऩटऩ्ऩीटुवन् गतभयं। जीवात्म

(श्रीराम आदि को) सामने ही महावाहिनी (महानदी) दिखाई दी। तब राम ने मुनि शिष्यों से पूछा कि यह नदी पार करने का क्या उपाय है ? यह सुनकर उन्होंने कहा—'हे महाराज ! क्या दिक्कत है ? (हमारे पास) अच्छी नौकाएँ हैं, यह आप जान लीजिए। आप निश्चिन्त रहिए, हम जल्दी ही (नदी के) पार उतार देंगे, हमें (नाव खेने का) अभ्यास है। उन्होंने (राम ने) कहा कि ऐसी बात है तो हम नौका पर चढ़ेंगे और उन लोगों ने निश्शंक उन्हें नदी पार पहुँचा दिया। श्रीराम जी ने प्रसन्न हो मुनिकुमारों को अनुज्ञा दी कि वे नदी पार करके वापस चले जाएँ। उन्होंने (आश्रम में) पहुँचकर अत्रि के चरणों पर प्रणाम करते हुए बिना कुछ छूट पाए, राम का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। श्रीराम, सीता और सुमित्रात्मज तब तक घोर कानन के अन्दर प्रविष्ट हुए। झिल्लियों के झंकार नाद से मंडित, सिंह, व्याघ्र, वराह आदि जानवरों से आकीर्ण, आतपहीन २० —तथा घोर राक्षस कुल से भरे हुए तथा भयंकर क्रूर सर्पों से परिपूर्ण कानन को देखकर राम ने कहा—'लक्ष्मण ! सावधानी से चारों ओर देखते रहो। नीच राक्षस मनुष्य भोगी हैं। धनुष खूब चलाना होगा, एक तेज बाण (तरकस से) निकालकर हाथों में थाम लो। तुम आगे-आगे जाओ और तुम्हारे पीछे वैदेही और उनके पीछे मैं निर्भय

परमात्माक्कळ्क्कु मद्ध्यस्थयाकुं देवियां महामाया शक्तियॆन्नतु पोलॆ आवयोम्मद्ध्ये नटन्नीटुक वेणं सीता देवियुमॆन्नालॊरु भीतियुमुण्टाय्वरा। इत्तरमरुळ् चॆय्तु तल्प्रकारेण पुरुषोत्तमन् धनुर्द्धरनाय् नटन्नॊरु शेषं पिन्निट्टारुटनॊरुयोजन वळियप्पोळ् मुन्निलाम्मारङ्ङॊरु पुष्करिणियुं कण्टार्। कल्हारोत्पल कुमुदांबुज रक्तोत्पल फुल्लपुष्पेन्दीवर शोभितमच्छजलं। तोयपानवुं चॆय्तु विश्रान्तन्माराय् वृक्षच्छाया भूतले पुनरिरुन्नु यथासुखं। ३०

विराध वधं

अन्नेरमाशु काणाय् वन्नितु वरुन्नतत्युन्नतमाय महासत्व-मत्युग्रारवं; उद्धूतवृक्षं कराळोज्ज्वलदंष्ट्रान्वित वक्त्र गह्वरं घोराकारमारुण्य नेत्रं, वामांसस्थलन्यस्त शूलाग्रत्तिङ्कलुण्टु भीमशार्दूल सिंह महिष वराहादि वारणमृगवनगोचर जन्तुक्कळुं पूरुषन्मारुं करञ्ञॆट्वुं तुळ्ळित्तुळ्ळि, पच्चमांसङ्ङळॆल्लां भक्षिच्चु भक्षिच्चुकॊण्टुच्चत्तिललरि वन्नीटिनानतुन्नेरं। उत्थानं

चलूँगा। जैसे कि जीवात्मा और परमात्मा के बीच में देवी महामाया शक्ति की उपस्थिति है, वैसे ही हम दोनों के बीच सीता देवी को चलना होगा; तब किसी बात का भय नहीं रहेगा।' इस प्रकार कहकर तथा उसके अनुरूप ही धनुषधारी श्रीराम जी के चलते हुए एक योजन दूरी तय करने पर सामने ही उन्होंने एक पुष्करणी देखी। कल्हार (सफेद कमल), कुमुद, अंबुज, रक्तोत्पल (लाल कमल), इन्दीवर आदि फुल्ल कुसुमों से शोभित उसका जल स्वच्छ था। (राम, लक्ष्मण और सीता) उसका जल पीकर वृक्ष छाया में पृथ्वी पर ही विश्राम के लिए यथासुख बैठ गये। ३०

विराध-वध

तभी एक अत्युन्नत महासत्व घोर रव के साथ आता हुआ दिखायी पड़ा। वह वृक्ष उठाया हुआ, भयंकर दंष्ट्रान्वित, घोराकार वक्त्र गह्वर-वाला तथा लाल नेत्रोंवाला था। बाएँ कंधे से लगे शूलाग्र पर भीमाकार शार्दूल, सिंह, महिष, वराह, वारण, हिरण आदि वन्य जानवर तथा मनुष्य लटक रहे थे। कच्चा मांस चबाता हुआ, घोर गर्जना करता हुआ, चिल्ला-चिल्लाकर वह उनकी ओर आ लपक पड़ा। तुरन्त उठकर धनुष-बाण हाथ में संभालते हुए राम ने लक्ष्मण से कहा—'एक भयंकर निशाचर

चेय्तु चापबाणङ्ङळ् कैकोण्टथ लक्ष्मणन् तन्नोटरुळ् चेय्तितु रामचंद्रन्-- कण्टो नी भयङ्करनायोरु निशाचरनुण्टु नम्मुटे नेरे वरुन्नु लघुतरं। सन्नाहत्तोटु बाणं तोटुत्तु नोक्किक्कोण्टु निन्नु कोळ्ळुक चित्तमुरच्चु कुमारा! नी! वल्लभे! बाले! सीते! पेटियाय्केतुमेटो! वल्लजातियु परिपालिच्चु कोळ्ळुवनल्लो। अन्नरुळ् चेय्तु निन्नानेतुमोन्निळकाते वन्नुटनटुत्तितु राक्षस प्रवरनुं। १० निष्ठुरतरमवनेट्टाश पोट्टुं वण्णमट्टहासं चेय्तिटि वेट्टीटु नादं पोले। दृष्टियिल् निन्नु कनल्कट्टकळ् वीळुंवण्णं पुष्टकोपेन लोकं ञेट्टुमारुरचेय्तान्— कष्टमाहन्त! कष्टं! निङ्ङळारिरुवरुं दुष्ट जन्तुक्कळेट्मुळ्ळ वन् काट्टिलिप्पोळ्, निल्कुन्नितस्तभयं चाप तूणीर बाण वल्कलजट कळुं धरिच्चु मुनिवेषं कय्क्कोण्टु मनोहरियायोरु नारियोटुं उळ्क्करुत्तेरुमति बालन्मारल्लो निङ्ङळ्। किञ्चन भयं विना घोरमां कोटुङ्काट्टिल् सञ्चरिच्चीटुन्नतुमेन्तोरु मूलं चोल्विन्? रक्षो वाणिकळ् केट्टु तल्क्ष-णमरुळ् चेय्तानिक्ष्वाकु कुलनाथन् मन्दहासानन्तरं-- रामनेन्नेनिक्कु पेरेन्नुटे पत्नियिवळ् वामलोचन सीतादेवियेन्नल्लो नामं। लक्ष्मण

को धीरे-धीरे हमारी ओर आते हुए तुम देखो। हे कुमार! तुम पूरी तैयारी के साथ धनुष पर बाण चढ़ाये दृढ़चित्तता के साथ देखते ही रहो।' 'हे वल्लभे! हे बाले! हे सीते! तुम कुछ भी मत डरो। वह कौन-सा भी हो, मैं किसी न किसी प्रकार तुम्हारी रक्षा करूँगा।' (सीता से) यह कहकर बिना किसी प्रकार की घबराहट के (राम) अटल खड़े हो गये और (तब तक) भयंकर राक्षस भी निकट आ पहुँचा। १० —उसने मेघ गर्जना के घोष के समान आठों दिशाओं को कंपित करता हुआ निष्ठुर अट्टहास भर लिया। अत्यधिक कोपार्त हो आँखों से अंगार उगालते हुए तथा संसार को विकंपित करते हुए (भयंकर स्वर में कहा)—"हा! कष्ट है! कष्ट है! दुष्ट एवं हिंस्र जानवरों से परिपूर्ण इस घोर वन में तुम दोनों कौन निर्भय आ खड़े हो? चाप, तूणीर, बाण, वल्कल जटाधारी मुनिवेष को अपनाये तथा मनोहरी नारी को साथ लिये खड़े तुम बालक दृढ़ चित्त ही हो। ज़रा बताओ कि किंचित् भय के बिना, इस घोर कानन में तुम किस कारण घूम रहे हो?" राक्षस की वाणी सुनकर तुरन्त ही इक्ष्वाकु कुल के लिए स्वामी स्वरूप (राम) ने मंदहास करते हुए कहा— 'मेरा नाम राम है और यह वामलोचना, जिसका नाम सीता है, मेरी पत्नी है। यह मेरा भ्राता है जिसका नाम लक्ष्मण है। हम पिता की आज्ञा

नेन्नु नाममिवनु मल्सोदरन् पुक्किनु वनान्तरं जनकनियोगत्ताल् रक्षोजातिकळाकुमिङ्ङनेयुळ्ळवरे शिक्षिच्चु जगत्त्रयं रक्षिप्पानरिक नी। २० श्रुत्वा राघव वाक्यमट्टहासवुं चेय्तु वक्त्रवुं पिळन्नोरु सालवुं परिच्चोङ्ङि क्रुद्धनां निशाचरन् राघवनोटु चोन्नान् शक्तनां विराधनेन्नेन्ने केट्टिट्टिल्ले ? इत्रिलोकत्तिलेन्नेयाररियातेयुळ्ळतेत्रयुं मूढन् भवानेन्निह धरिच्चेन् ञान्। मत्भयं निमित्तमाय् तापसरेल्लामिप्पोळिप्रदेशत्ते वेटिञ्ञोक्कवे दूरप्पोयार्; निङ्ङळ्क्कु जीविक्कयिलाशयुण्टुळ्ळिलेङ्किलंगनारत्नत्तेयुमायुधङ्ङळुं वेटि-- ञ्ञेङ्ङानुमोटिप्पोविनल्लाय् किलेनिक्किप्पोळ् तिङ्ङीटुं विशप्पटक्कीटुवन् भवान्माराल्! इत्तरं परञ्ञवन् मैथिलितन्ने नोक्किस्सत्वर मटुत्तु कण्टु राघवनप्पोळ् पत्रिकळ् कोण्टुतन्ने हस्तङ्ङळरुत्तप्पोळ् क्रुद्धिच्चु रामं प्रति वक्त्रवुंपिळन्नेति; सत्वरं नक्तञ्चरनटुत्ता नतुनेरमस्त्रङ्ङळ् कोण्टु खण्डिच्चीटिनान् पादङ्ङळुं; बद्धरोषत्तोटवन् पिन्नेयुमटुत्तप्पोळुत्तमांगवुं मुरिच्चीटिनानेय्तु रामन्। ३० रक्तवुं परन्नितु भूमियिलतु कण्टु चित्तकौतुकत्तोटु पुणर्न्नु वैदेहियुं।

से, राक्षस जाति में उत्पन्न तुम्हारे जैसे लोगों का वध करके त्रिलोक की रक्षा करने के उद्देश्य से वन में आये हैं, यह तुम समझ लो।' २० राम की वाणी सुनकर अट्टहास के साथ अपना मुँह खोले तथा एक सालवृक्ष उखाड़ मारने की चेष्टा करते हुए क्रुद्ध निशाचर ने राम से कहा--'शक्तिशाली मुझ विराध का क्या तुमने नाम नहीं सुना है ? इस त्रिभुवन में मुझे कौन नहीं जानता ? (मुझे न जाननेवाले) तुम्हें मैं निरा मूर्ख समझता हूँ। मेरे भय से सारे तापस लोग इस प्रदेश को छोड़कर बहुत दूर भाग गये हैं। तुम (दोनों) को जीवन की आशा है तो इस अंगना रत्न (नारी रत्न) को तथा आयुध त्यागकर कहीं भाग चले जाओ, अन्यथा तुमको खाकर मैं अपनी कठिन भूख शान्त करूँगा।' इस प्रकार कहकर मैथिली की ओर तुरन्त लपकते उसे देखकर राम ने बाणों से उसके हाथ काट डाले। तब क्रुद्ध हो वह राक्षस अपना भयंकर मुँह खोले राम की ओर लपका तो राम ने बाणों से उसके पैर काट डाले। अत्यन्त क्रोधाकुल हो पुनः निकट आते उसका उत्तमांग (सिर) राम ने बाण से काट डाला। ३० पृथ्वी रक्त से स्निग्ध हो उठी। यह देख प्रसन्नचित्त हो वैदेही ने (राम का) आश्लेष किया। अप्सराएँ नृत्य निरत हो गयीं और देवों ने उच्च स्वर में दुंदुभी बजायी। तब विराध के भीतर से

नृत्तवु तुटङ्ङिनारप्सर: स्त्रीकळेल्लामत्युच्चं प्रयोगिच्चु देव दुन्दुभिकळु । अन्नेरं विराधन् तन्नुळिळल् निन्नुण्टायोरु धन्यरूपने-क्काणाय्वन्निताकाशमार्ग्गे; स्वर्ण्ण भूषणं पूण्टु सूर्य्य सन्निभ कान्त्या सुन्दर शरीरनाय् निर्म्मलांबरत्तोटु । राघवं प्रणतार्त्ति-हारिणं घृणाकरं राकेन्दुमुखं भवभञ्जनं भयहरं, इन्दिरा-रमणमिन्दीवरदळ श्याममिन्द्रादिवृन्दारक वृन्द वन्दितपादं; सुन्दरं सुकुमारं सुकृति जन मनोमन्दिरं रामचन्द्रं जगताम-भिरामं । वन्दिच्चु दण्ड नमस्कारवुं चेय्तु चित्तानंदं पूण्टवन् चित्ते स्तुतिच्चु तुटङ्ङिनान्-- श्रीराम राम राम ! ञानोरु विद्याधरन् कारुण्यमूर्त्ते ! कमलापते ! धरापते ! दुर्वासावाय मुनितन्नुटे शापत्तिनाल् गर्वितनायोरु रात्रिञ्चरनायेनल्लो । ४० निन्तिरुवटियुटे माहात्म्यं कोण्टु शापबन्धवुं तीर्न्नु मोक्षं प्रापिच्चे-निन्नु नाथ ! सन्ततमिनिच्चरणांबुज युगं तव चिन्तिक्काय्-वरेणमे मानसत्तिनु भक्त्या, वाणिकळ् कोण्टु नाम कीर्त्तनं चेय्याकणं पाणिकळ्कोण्टु चरणार्च्चनं चेय्याकणं; श्रोत्रङ्ङळ् कोण्टु कथा श्रवणं चेय्याकणं नेत्रङ्ङळ् कोण्टु रामलिंगङ्ङळ् काणाकणं; उत्तमांगेन नमस्करिक्काय्वन्नीटणमुत्तम भक्त-

---

निकले एक सुन्दर रूप को आकाश मार्ग पर देखा गया, जो स्वर्णाभूषणों से अलंकृत, सूर्य सम तेजोयुक्त एवं निर्मल वस्त्रों से युक्त शरीरवाला था। उसने आर्त्तिहरण सुकुमार, राकेन्दु-सम मुखवाले, भवभंजन, भयहारी, इन्दिरारमण, इन्दीवर दल के समान श्यामल मूर्त्तिवाले, इन्द्र आदि देववृन्दों से पूजित सुन्दर, सुकुमार, पुण्यात्माओं के मन-मन्दिर में निवास करनेवाले जगताभिराम राम के चरण कमलों को प्रणाम किया। वन्दना एवं दण्डवत् नमस्कार करके मन ही मन प्रसन्न हो उसने राम की स्तुति की-- हे राम ! हे राम ! हे राम ! हे कारुण्यमूर्ति ! मैं एक विद्याधर हूँ। हे कमलापति ! हे धरापति ! दुर्वासा मुनि के शापवश मैं ऐसा घमण्डी राक्षस बन गया था। ४० —हे नाथ ! भगवद् कृपा एवं महत्ता से शाप बन्धन से मुक्त हो गया हूँ। ऐसी कृपा कीजिए कि अब मेरा मन निरन्तर भक्ति से ओत-प्रोत हो आपके चरणांबुज द्वय का ध्यान लगाये, वाणी सदा आपके नामों का कीर्त्तन करे, हाथ आपके चरणों का प्रक्षालन करें, कान आपकी कथाएँ सुनें, नेत्र राम के स्वरूप को देख पाएँ, उत्तमांग आपको प्रणाम करे तथा मैं भक्तों का दास बन पाऊँ। हे भगवान ! हे ज्ञानमूर्ति ! नमस्कार है। मैं प्रणाम करता हूँ। रामायनमोनमः।

ऩ्माक्कुं भृत्यनाय् वरेणं ञान् । नमस्ते भगवते ज्ञानमूर्त्तये नमो नमस्ते रामायात्मा रामायनमोनमः । नमस्ते रामाय सीताभिरामाय नित्यं नमस्ते रामाय लोकाभिरामाय नमः । देवलोकत्तिनु पोवाननुग्रहिक्केणं देव देवेश ! पुनरोऩ्ऩपेक्षिच्चीटुऩ्ऩेन्-- ऩिऩ्महामाया देवियेऩ्ऩे मोहिप्पिच्चीटाय्कंबुज विलोचन ! संततं नमस्कारं । इङ्ङने विज्ञापितनाकिय रघुनाथनङ्ङने तन्ने येऩ्ऩु कोटुत्तु वरङ्ङळुं । ५० मुक्तनेन्नियेे कण्टु किट्टुकयिल्लयेन्ने भक्तियुण्टायालुटन् मुक्तियुं लभिच्चीटुं । रामनोटनुज्ञयुं कैक्कोण्टु विद्याधरन् कामलाभेन पोयि नाकलोकवुं पुक्कान् । इक्कथ चोल्लिस्तुतिच्चीटुऩ्ऩ पुरुषनु दुष्कृतमकऩ्ऩु मोक्षत्तेयुं प्रापिच्चीटां । ५३

शरभंग मन्दिर प्रवेशं

राम लक्ष्मणऩ्मारुं जानकि तानुं पिन्ने श्रीमयमाय शरभंग मन्दिरं पुक्कार् । साक्षालीश्वरने मांसेक्षणङ्ङळेक्कोण्टु वीक्ष्य तापस वरन् पूजिच्चु भक्तियोटे । कन्द पक्वादिकळालातिथ्यं चेय्तु चित्तानंदमुळ्क्कोण्टु शरभंगनुमरुळ् चेय्तु-- ञाननेकं

हे सीताभिराम ! हे राम ! नमस्कार करता हूँ । हे लोकाभिराम स्वरूपवाले राम ! आपके प्रति मेरा नमस्कार है; मैं प्रणाम करता हूँ । हे देव ! हे देवेश ! मुझ पर कृपा करें कि मैं देवलोक जा सकूँ । मेरी और एक प्रार्थना है कि हे अंबुज लोचन ! आपकी महामाया देवी मुझे मोहित करने न पाए । मैं सतत् आपको प्रणाम करता हूँ । (विद्याधर के द्वारा) इस प्रकार विज्ञापित होने पर राम ने वर दिया कि ऐसा ही होगा । ५० मुक्तात्मा को छोड़ और कोई (भगवान को) ढूँढ नहीं पाता; भक्ति प्राप्त करने पर तुरन्त मुक्ति लभ्य होती है । राम से अनुज्ञा पाकर अपना प्रकाम्य (फल) पा विद्याधर नाकलोक को चला गया । यह कथा कहकर जो पुरुष स्तुति करता है, वह अपने दुष्कृतों से छुटकारा पाकर मोक्ष सिद्ध करता है । ५३

शरभंगाश्रम में प्रवेश

राम-लक्ष्मण तथा जानकी फिर ऐश्वर्य सम्पूर्ण शरभंग मन्दिर में पहुँचे । साक्षात् भगवान को बाह्य चक्षुओं के सम्मुख देखकर तापसवर ने भक्ति से उनकी सेवा की । कन्द, फल आदि से उन्हें आतिथ्य अर्पित करके मन में पुलकित हो शरभंग ने कहा—मैं कई दिनों से जानकी के साथ

नाळुण्टु पार्त्तिरिक्कुन्नितत्र जानकियोटुं निन्नेक्काण्मतिन्नाशयाले । आर्ज्जव बुद्ध्या चिरं तपसा बहुतरमार्ज्जिच्चेनल्लो पुण्यमिन्नु ञानवयेल्लां मर्त्य नाय्प्पिरन्नोरु निनक्कु तन्नीटिनेनद्य ञान् मोक्षत्तिनायुद्योग पूण्टेनल्लो । निन्नेयुं कण्टु मम पुण्यवुं निङ्कलाक्कियेन्निये देहत्यागं चेय्येरुतेन्नु तन्नै चिन्तिच्चु बहुकालं पार्त्तु ञानिरुन्नितु बन्धवुमट्टु कैवल्यत्तेयुं प्रापिक्कुन्नेन् । योगीन्द्रनाय शरभंगनां तपोधनन् योगेशनाय रामन् तन् पदं वणङ्ङिनान् । चिन्तिच्चीटुन्नेनन्तस्सन्ततं चराचर जन्तुक्कळन्तर्भागे वसन्तं जगन्नाथं । १० श्रीरामं दूर्वादळ श्यामळमंभोजाक्षं चीरवाससं जटा मकुटं धनुर्द्धरं, सौमित्रि सेव्यं जनकात्मजा समन्वितं सौमुख्य मनोहरं करुणारत्नाकरं । कुण्ठ भाववु नीक्किस्सीतया रघुनाथं कण्टु कण्टिरिक्कवे देहवुं दहिप्पिच्चु लोकेशपदं प्रापिच्चीटिनान् तपोधननाकाशमार्ग्गं विमानङ्ङळुं निरञ्ञुते । नाकेशादिकळ् पुष्प वृष्टियुं चेय्तीटिनार् पाकशासनन् पादांभोजवुं वणङ्ङिनान् । मैथिल्या सौमित्रिणा तापसगति कण्टु कौसल्या तनयनुं कौतुकमुण्टाय्वन्नु । तत्रैव

आपको देख पाने की प्रतीक्षा में बैठा हूँ । अपनी अर्जित बुद्धि एवं चिर तपस्या से मैंने कई पुण्य प्राप्त किये, जिन्हें अभी मर्त्य रूप में अवतीर्ण आपको अर्पित करता हूँ और मोक्ष-प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होता हूँ । आपको देखने और अपने पुण्य को आप में निक्षिप्त करने के पूर्व देहत्याग न करूँ, यह सोचता हुआ बहुत काल तक आपकी प्रतीक्षा में बैठा रहा (और आज) बन्धन को तोड़ मैं कैवल्य को प्राप्त करता हूँ । (यह कहते हुए) योगीन्द्र एवं तपोधन शरभंग ने योगेश राम के चरणों पर प्रणाम किया (और बताया) कि चराचरों के अन्तर्भाग में निवास करनेवाले जगत के स्वामी का मैं निरन्तर अपने अन्तःकरण में ध्यान करता हूँ । १० —जो राम दूर्वादल के समान श्यामल कोमल हैं, अंभोज के जैसे नेत्रवाले हैं, चीरवस्त्र, जटा, मुकुट एवं धनुषधारी हैं, जो सौमित्र से सेवित, सीता से समन्वित, सुमुख, मनोहर और करुणा के सागर हैं । सारे कुंठित भावों को छोड़ सीता सहित राम को देखते हुए तपोधन ने देह जला दी और लोकेश पद प्राप्त किया । (तब) आकाश मार्ग विमानों से भर गया, नाकेश आदि ने पुष्प वृष्टि की और पाकशासन (इन्द्र) ने पादांभोज को प्रणति अर्पित की । तापस की यह गति देखकर मैथिली और सौमित्र युक्त कौसल्या तनय को विस्मय हुआ । वहाँ थोड़ा समय बिताने के उपरान्त

किञ्चल् कालं कळिञ्ञोरनन्तरं वृत्रारि मुख्यन्मारुमोक्कॅप्पोय् स्वर्गं पुक्कार् । १७

मुनि मण्डलागमनवुं तदाश्रम प्रवेशवुं

दण्डकारण्य तल वासिकळाय मुनि मण्डलं दाशरथि वन्नतु केट्टु केट्टु चण्डदीधितिकुल जातनां जगन्नाथन् पुण्डरीकाक्षन् तन्नॅक्काण्मानाय् वन्नीटिनार् । राम लक्ष्मणन्मारुं जानकीदेवि तानुं मामुनिमारॆ वीणु नमस्कारवुं चॆय्तार । तापसन्मारुमाशीर्वादं चॆय्तवर्कळोटा भोगानन्द विवशन्मारायरुळ् चॆय्तार्— निन्नुटॆ तत्त्वं ञङ्ङळिङ्ङरिञ्ञिरिक्कुन्नु पन्नगोत्तम तल्पे पळ्ळिकॊळ्ळुन्न भवान् धातावर्त्थिक्क मूलं भूभारं कळवानाय् जातनायितु भुवि मार्त्तण्ड कुलत्तिङ्कल् । लक्ष्मण नाकुन्नतु शेषनुं सीतादेवि लक्ष्मियाकुन्नतल्लो भरत शत्रुघ्नन्मार् शंख चक्रङ्ङळभिषेक विघ्नादिकळुं सङ्कटं ञङ्ङळ्क्कु तीर्त्तीटुवानॆन्नु नूनं । नाना तापस कुल सेविताश्रमस्थलं काननं काण्मानाशु नी कूटॆप्पोन्नीटणं । जानकियोटुं सुमित्रात्मजनोटुं कूटि मानसे कारुण्यमुण्टाय् वरुमल्लो कण्टाल् । १० ॲन्नरुळ् चॆय्त मुनि

वृत्रारि (इन्द्र) आदि सभी प्रमुख देवता लोग स्वर्ग वापस चले गये। १७

मुनि मण्डल का आगमन और आश्रम-प्रवेश

दाशरथी के आगमन का समाचार सुन-सुनकर चण्डदीधिति (सूर्य) कुलजात जगत के स्वामी पुण्डरीकाक्ष को देखने के लिए दण्डकारण्य के निवासी मुनि मण्डल उपस्थित हुए। राम-लक्ष्मण और जानकी ने मुनियों को दण्डवत् प्रणाम अर्पित किया। तापस लोग आशीर्वचन देकर अत्यधिक आनन्द-विभोर हो उठे। (उन्होंने कहा) आपका रहस्य हम लोग जान चुके हैं। पन्नग श्रेष्ठ (शेषनाग) रूपी उत्तम तल्प पर विराजमान आप धाता की प्रार्थना करने से भू-भार को दूर करने के लिए पृथ्वी पर मार्तण्ड कुल में पैदा हुए हैं। लक्ष्मण शेषनाग हैं, सीतादेवी तो लक्ष्मी हैं और भरत-शत्रुघ्न शंख-चक्र हैं। अभिषेक में विघ्न (जो उपस्थित हुआ) हमारे संकट दूर करने के निमित्त ही हुआ, यह निश्चित है। नाना तापसों से अलंकृत आश्रम स्थल तथा वन देखने के लिए आप जानकी तथा सुमित्रात्मज के साथ तुरन्त हमारे साथ चलने की कृपा करें। (उन्हें) देखने पर आपके मन में (हमारे प्रति) करुणा उत्पन्न होगी। १० इस

श्रेष्ठऩ्मारोटुं कुटि चेऩ्ऩवरोरो मुनि पर्ण्णशालकळ् कण्टार् । अऩ्ऩेरं तलयोटुमेल्लुकळेल्लामोरो कुऩ्ऩुकळ् पोले कण्टु राघवन् चोद्यं चेय्तान्— मर्त्यमस्तकङ्ङळुमस्थिक्कूट्टवुमेल्लामत्रैवमूल-मेऩ्तोऩ्निव्वयुण्टावानहो ! तद्वाक्यं केट्टु चोऩ्ऩार् तापस जनं राम भद्र ! ऩी केळ्क्क मुनिसत्तमऩ्मारेक्कोऩ्ऩु निर्द्दयं रक्षोगणं भक्षिक्क निमित्तमायिद्देशमस्थि व्याप्तमाय्च्चमञ्ञतु नाथा ! श्रुत्वा वृत्तान्तमित्थं कारुण्य परवश चित्तनायोरु पुरुषोत्तमनरुळ् चेय्तु— निष्ठुरतरमाय दुष्ट राक्षस कुलमोट्टोळ्ियाते कोऩ्ऩु नष्टमाक्कीटुवन् ञान् । इष्टानुरूपं तपोनिष्ठया वसिक्क सन्तुष्ट्या तापसकुलमिष्टियुं चेय्तु नित्यं । सत्य विक्रमनिति सत्यवुं चेय्तु तत्र नित्य संपूज्यमाननाय्वनवासिकळाल् । तत्र तत्रैव मुनि सत्तमाश्रमङ्ङळिल् पृथ्वीनन्दिनियोटुमनुजनोटुं कूटि २० तत्संसर्गानन्देन वसिच्चु कळिञ्ञतु वत्सरं त्रयोदश-मक्कालं काणाय्वऩ्ऩु । २१

सुतीक्ष्णाश्रम प्रवेशं

विख्यातमाय सुतीक्ष्णाश्रमं मनोहरं मुख्य तापसकुल शिष्य

प्रकार कहते मुनिप्रवरों के साथ चलकर उन्होंने एक-एक पर्णशाला देखी । तब वहाँ पर ढेर के ढेर पड़ी खोपड़ियों, हड्डियों आदि को देखकर राम ने पूछा—हाय ! मर्त्यमस्तक, अस्थिपंजर आदि यहाँ इतनी मात्रा में दिखाई देने का क्या कारण है ? उनका वचन सुनकर तापसजनों ने उत्तर दिया—'हे रामभद्र ! हे नाथ ! आप सुन लें । मुनिसत्तमों को मारकर राक्षसों के द्वारा निर्दय खाये जाने के कारण यह देश अस्थियों से परिव्याप्त है ।' यह वृत्तान्त सुनकर करुणा प्लावित मनवाले पुरुषोत्तम ने बताया—"निष्ठुर एवं दुष्ट सम्पूर्ण राक्षस कुल का वधकर उन्हें समाप्तकर दूँगा । फिर अपने इच्छानुसार तपोनिष्ठ हो तथा सानन्द यज्ञ करते हुए तापस लोग नित्य सुखपूर्वक रहेंगे ।" सत्य पराक्रमी ने इस प्रकार सत्य प्रतिज्ञा की और वहाँ वनवासियों से सदा सम्पूज्य बन गये । जहाँ-जहाँ मुनिश्रेष्ठों के आश्रम थे वहाँ-वहाँ पृथ्वीनन्दिनी तथा अनुज के साथ २० —सत्संग से प्राप्त आनन्द अनुभव करते हुए (राम को) तेरह वर्ष व्यतीत हुए । तब दिखाई पड़ा—२१

•

सुतीक्ष्णाश्रम में प्रवेश

—विख्यात एवं मनोहर सुतीक्ष्ण का आश्रम, जो मुख्य तापसों, शिष्य

सञ्चय पूर्ण्णं; सर्वर्त्तुगुणगण सम्पन्नमनुपमं सर्व कालानन्ददानो-दयमत्यत्भुतं। सर्व पादपलता गुल्म संकुलस्थलं सर्वसत्पक्षि मृग भुजंगनिषेवितं। राघवनवरजन् तन्नोटुं सीतयोटुमागत नायितेन्नु केट्टीरु मुनि श्रेष्ठन् कुम्भ संभवनाकुमगस्त्य शिष्योत्तमन् संप्रीतन् राममन्त्रोपासनरतन् मुनि, संभ्रमत्तोटु चेन्नु कूट्टिक-कोण्टिङ्ङु पोन्नु संपूजिच्चरुळिनानर्घ्य पाद्यादिकळाल्! भक्ति पूण्टश्रुजलनेत्रनाय् सगद्गदं भक्त वत्सलनाय राघवनोटु चोन्नान्— निन्तिरुवटियुटे नाम मन्त्रत्तेत्तन्ने सन्ततं जपिप्पू ञान् मद्गुरु नियोगत्ताल्। ब्रह्म शङ्कर मुख वन्द्यमां पदमल्लो निन्म-हामायार्ण्णवं कटप्पानोरु पोतं। आद्यन्तमिल्लातोरु परमात्मा-वल्लो नी वेद्यमल्लोरु नाळुमारालुं भवत्तत्त्वं। १० त्वद् भक्त भृत्य भृत्य भृत्यनायीटणं ञान् त्वल् पादांबुजं नित्यमुळ्ळकाम्पिलु-दिक्कणं; पुत्र भार्य्यार्त्थ निलयान्ध कूपत्तिल् वीणु बद्धनाय् मुळ्ळुकीटुमेन्ने निन्तिरुवटि भक्त वात्सल्य करुणा कटाक्षङ्ङळ् तन्नालुद्धरिच्चीटेणमे सत्वरं दयानिधे! मूत्रमांसामेद्ध्यान्त्र-पुल्गल पिण्डमाकुं गात्र मोर्त्तोळमतिकश्मलमतिङ्कलु— ळ्ळास्थयां

समूहों से भरा हुआ था। वह सब प्रकार के गुणगणों से सम्पन्न, अनुपम, सर्वकाल आनन्द प्रदायक एवं अतीव आश्चर्यकारी था। सब प्रकार के पादपों, लता-गुल्मों से संकुल वह स्थान सब तरह के पशु-पक्षियों, भुजंगों आदि से युक्त था। श्रीराम जी को अनुज तथा सीता सहित आगत जानकर कुम्भसम्भव अगस्त्य के शिष्यों में उत्तम मुनिश्रेष्ठ जो राममन्त्र की उपासना में अनवरत तल्लीन हैं, प्रीतिपूर्वक तुरन्त जाकर उन्हें लिवा ले आये और अर्घ्य पाद्यादि से उनकी पूजा की तथा उमड़ती भक्ति से परिपूर्ण हो साश्रुनेत्र एवं सगद्गद वाणी में भक्तवत्सल राम से कहा—मैंने अपने गुरु की आज्ञा पाकर भगवद् नाम का सतत् जप किया। ब्रह्मा एवं शंकर से प्रणत आपके चरण ही आपकी मायारूपी अर्णव (सागर) पार करने के लिए योग्य पोत हैं। आप आद्यन्त-रहित परमात्मा हैं, कभी किसी के लिए आपका तत्व वेद्य नहीं है। १० (मेरी यही इच्छा है कि) मैं आपके भक्तों के दास के दास का दास बनूँ तथा अपने मन-मुकुर में नित्य आपके पादांबुज प्रतिबिम्बित होते रहें। पुत्र, भार्या, धन, भवन आदि (सांसारिक) अंधकूप में पड़कर आबद्ध हो जीवन बितानेवाले मुझे हे दयानिधि! अपने भक्त वात्सल्य एवं करुणा-कटाक्ष से सत्वर उद्धार करें। मल-मूत्र, आँत, मज्जा-मांस के पिण्डों से बना यह शरीर, विचार करने पर

महामोहपाश बन्धवुं छेदिच्चार्त्ति नाशन ! भवान् वाळुकॆन्नुळ्ळिल् नित्यं । सर्वभूतङ्ङळुटॆयुळ्ळिल् वाणीटुन्नतुं सर्वदा भवान् तन्नॆ केवलमॆन्नाकिलुं; त्वन्मन्त्रजप रतन्माराय जनङ्ङळॆ त्वन्महामायादेवि बन्धिच्चीटुकयिल्ल । त्वन्मन्त्र जप विमुख-न्मारां जनङ्ङळॆ त्वन्महामायादेवि बन्धिप्पिच्चीटुन्नतुं । सेवानुरूप फल दानतत्परन् भवान् देव पादपङ्ङळॆप्पोलॆ विश्वेश ! पोट्टि ! विश्व संहार सृष्टि स्थितिकळ् चॆय्वानायि विश्व मोहि-नियाय तन् गुणङ्ङळाल् २० रुद्रपङ्कजभव विष्णुरूपङ्ङळायि चिद्रूपनाय भवान् वाळुन्नु महात्मनां । नाना रूपङ्ङ-ळायित्तोन्नुन्नु लोकत्तिङ्कल् भानुमान् जलंप्रति वॆव्वेरॆ काणुं पोलॆ । इङ्ङनॆयुळ्ळ भगवल् स्वरूपत्तॆ नित्यमॆङ्ङनॆयरिञ्ञुपासिप्पु ञान् दयानिधे ! अद्यैव भवच्चरणांबुज युगं मम प्रत्यक्षमाय् वन्नि-तुमत्तपोबल वशाल् । त्वन्मत्र जप विशुद्धात्मनां प्रसादिक्कुं निर्म्मलनाय भवान् चिन्मयनॆन्नाकिलुं सन्मयमायि परब्रह्ममाय रूपमाय् कर्म्मणामगोचरमायॊरु भव द्रूपं । त्वन्मायाविडंबन-रचितं मानुष्यकं मन्मथ कोटि कोटि सुभगं कमनीयं; कारुण्य

अत्यन्त घृणित है । हे दुःखविदारक ! उसके प्रति आस्था तथा महामोह पाश का बन्धन तोड़कर आप निरन्तर मेरे अन्तःकरण में निवास करें । केवल स्वरूपवाले होते हुए भी सर्वभूतों के भीतर सदा निवास करनेवाले आप ही हैं । आपके मन्त्र-जपों में अनवरत तल्लीन लोगों को आपकी महामाया देवी कभी बन्धन में नहीं बाँधती, किन्तु आपके मन्त्र-जप के प्रति विमुख लोगों को आपकी महामाया देवी बन्धन में डालती है । हे विश्वेश्वर ! हे प्रभु ! आप सेवानुरूप फल प्रदान करने में तत्पर हैं जैसे कि देवपादप (कल्पवृक्ष) फलदायक होता है । विश्वविमोहक अपने गुणों को लेकर विश्व की सृष्टि, स्थिति एवं संहार करने के लिए २० —ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र रूपों को अपना लिया । महान् आत्मा आप चित् रूप में रहते हैं किन्तु संसार में आप नानारूपी दिखाई देते हैं, जैसे कि सूर्य प्रत्येक जल में पृथक्-पृथक् दिखाई देता है । हे दयानिधि ! ऐसे आपके स्वरूप को पहचान लेकर मैं नित्य किस प्रकार उसकी उपासना करूँ ! अपने तपोबल के परिणामस्वरूप अभी आपके दोनों चरण-पंकज मेरे लिए प्रत्यक्ष दिखायी पड़े । निर्मल एवं चिन्मय स्वरूपवाले आप मन्त्रों-जपों से परिशुद्ध जीव पर कृपा करते हैं । आपका स्वरूप सन्मय, परब्रह्मात्मक एवं कर्मों से अगोचर तो है, आपका (यह) कोटि-कोटि मन्मथ

पूर्ण नेत्रं कार्मुकबाणधरं स्मेर सुन्दर मुख मजिनांबरधरं, सीता संयुतं सुमित्रात्मज निषेवित पाद पङ्कजं नील नीरद कळेबरं; कोमळमति शान्तमनन्त गुणमभिराममात्मारामममानन्द सम्पूर्णामृतं । ३० प्रत्यक्षमद्य मम नेत्रगोचरमायोरित्तिरुमेनि नित्यं चित्ते वाळुकवेणं । मुट्टीटुं भक्त्या नाममुच्चरिक्कायीटणं मट्टोरुवरमपेक्षिक्कुन्नेनिल्ल पोट्टी ! वन्दिच्चु कूप्पि स्तुतिच्चीटिन मुनियोटु मन्दहासवुं पूण्टु राघवनरुळ् चेय्तु— नित्यवुमुपासना शुद्धमायिरिप्पोरु चित्तं ञानरिञ्ञते काण्मानाय्वन्नू मुने ! सन्ततमेन्नेत्तन्ने शरणं प्रापिच्चु मन्मन्त्रोपासकन्माराय् निरपेक्षन्मारुमाय् सन्तुष्टन्मारायुळ्ळ भक्तन्मावर्क्केन्ने नित्यं चिन्तिच्च वण्णं तन्ने काणाय् वन्नीटुमल्लो । त्वल् कृतमेतल् स्तोत्रं मल् प्रियं पठिच्चीटुं सल्कृति प्रवरनां मर्त्यनु विशेषिच्चुं सद्भक्ति भविच्चीटुं ब्रह्म ज्ञानवुमुण्टामल्पवुमतिनिल्ल संशयं निरूपिच्चाल् । तापसोत्तम ! भवानेन्नेस्सेविक्कमूलं प्रापिक्कुमल्लो मम सायुज्यं देहनाशे । उण्टोराग्रहं तवाचार्य्यनामगस्त्यनेक्कण्टु वन्दिच्चु

सम सुभग एवं कमनीय मनुष्य रूप आपकी माया की विडम्बना से रचित है । आपके नेत्र करुणामय हैं, आप धनुष-बाण धारी, सुस्मेर एवं सुन्दर मुखवाले, अजिनांबर धारण किये हुए एवं सीता संयुत हैं । सुमित्रात्मज से सेवित आपके पाद-पंकज हैं; नील नीरद तुल्य शरीर है । आप कोमल, अत्यन्त शान्त, अनन्त गुणों से अभिराम, आनन्द-युक्त एवं अमृत तुल्य हैं । ३० अभी मेरे नेत्रों के सम्मुख गोचर आपका भगवद्रूप नित्य मेरे मन में वास करे । हे प्रभु ! मैं सदा अतुल भक्ति से आपका नामोच्चारण कर पाऊँ, इसके अतिरिक्त कोई दूसरा वर मैं आपसे नहीं माँगता हूँ । हाथ जोड़कर प्रणाम निरत हो स्तुति करते मुनि से मंदहास के साथ राम ने कहा--नित्य की उपासना से पवित्र बने आपके चित्त का मैंने परिचय प्राप्तकर लिया है, आज उसे मैं देखने आया । सदा ही मेरी शरण में आकर मन्त्रोपासक बन तथा निरपेक्ष भाव को अपनाकर सदा ही सन्तुष्ट रहनेवाले भक्त जिस रूप में मेरा ध्यान करेंगे वैसे ही मैं उन्हें दिखायी देता हूँ । मेरे लिए प्रिय जो भी स्तोत्र पढ़ेंगे, सत्कार्य प्रवर ऐसे मनुष्य को सद्भक्ति प्राप्त होगी और ब्रह्मज्ञान का उदय होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है । हे तापसोत्तम ! मेरी सेवा करते रहने के फलस्वरूप देहनाश के उपरान्त आपको सायुज्य प्राप्त होगा । आपके आचार्य अगस्त्य से मिलकर वन्दना करने की मेरी बड़ी इच्छा है, उसके लिए कौन-सा उपाय

कौळ्वानेन्ततिनावतिप्पोळ् । ४० तत्रैव किञ्चिल्क्कालं वस्तु मुण्टत्याग्रहमेत्रयुण्टट्टुत्ततुमगस्त्याश्रमं मुने ! इत्थं रामोक्ति केट्टु चोल्लिनान् सुतीक्ष्णनुमस्तु तद्भद्रमतु तोन्नियततिन्नु ञान् काट्टुवनल्लो वळि कूटेप्पोन्नट्टुत्तनाळ् वाट्टमेन्निये वसिक्केण-मिन्निविटे नां । ओट्टु ताळुण्टु ञानुं कण्टिट्टेन् गुरुविने पुष्टमोदत्तोटोक्केत्तक्कप्पोय्क्काणामल्लो । इत्थमानंदं पूण्टु रात्रियुं कळिञ्ञप्पोळुत्थानं चेय्तु सन्ध्या वन्दनं कृत्वाशीघ्रं, प्रीतनां मुनियोटुं जानकीदेवियोटुं सोदरनोटुं मन्दं नटन्नु मद्ध्याह्ने पोय् चेन्नितुरामनगस्त्यानुजा श्रमे जवं वन्नु सत्कारं चेय्तानगस्त्य सहजनुं । वन्य भोजनवुं चेय्तवरेल्लावरुमन्योन्य सल्लापवुं चेय्तिरुन्नोरु शेषं । ४८

अगस्त्य सन्दर्शनम्

भानुमानुदिच्चप्पोळर्घ्यवुं नल्कि महाकानन मार्ग्गे नटकोण्टितु मन्दंमन्दं । सर्वर्त्तु फल कुसुमाढ्य पादपलता संवृतं नाना मृग सञ्चय निषेवितं नाना पक्षिकळ् नादं कोण्टति मनोहरं काननं जातिवैररहित जन्तु पूर्ण्णं; नन्दन समान-

---

है ? ४० हे मुनि ! वहाँ पर थोड़ा समय बिताने की अतीव इच्छा है। उनका आश्रम कितनी दूर पर है ? राम का यह कथन सुनकर सुतीक्ष्ण ने कहा कि आपको यह अच्छा ही सूझा, मैं अगले दिन साथ आकर आपको रास्ता दिखा दूँगा; आज हम यहीं सानन्द रहेंगे । मुझे भी अपने गुरु से मिले कई दिन हुए हैं । इसलिए वहाँ जाकर बड़े प्रसन्न मन से सुविधा-नुसार मिलेंगे । इस प्रकार सानन्द रात बिताकर, उठकर शीघ्र ही संध्या-वन्दना करके प्रीतियुक्त मुनि, जानकी और सहोदर के साथ धीरे-धीरे चलकर मध्याह्न तक राम अगस्त्य के अनुज के आश्रम में पहुँचे । अगस्त्य के भ्राता ने जल्दी ही आकर (उनका) सत्कार किया । वन्य भोजन (कंद मूल आदि) करके परस्पर वार्तालाप करने के उपरान्त— ४८

अगस्त्य से भेंट

—सूर्योदय के साथ ही अर्घ्यदान करके महाकानन के मार्ग पर धीरे-धीरे चल पड़े । (वह महाकानन) सब प्रकार के फलों, कुसुमों से सम्पन्न पादप-लताओं से संवृत एवं नाना प्रकार के पशुओं से परिपूर्ण था । नाना पक्षियों के कलनाद से मंडित कानन पारस्परिक भेद-भाव से उत्पन्न शत्रुता रहित जन्तुओं से भरा हुआ था । नन्दन (पुत्र) सम आनन्द प्रदायक

मानन्द दानाढ्यं मुनि नन्दन वेदध्वनि मण्डितमनुपमं ब्रह्मर्षि प्रवरन्मारमरमुनिकळु सम्मोदं पूण्टु वाळुं मन्दिर निकरङ्ङळ्, संख्ययिल्लातोळमुण्टोरोरोतरं नल्ल संख्यावत्तुक्कळुमुण्टढ़मिल्लात-वण्णं। ब्रह्मलोकवुमितिनोट्टु नेरल्लेन्नत्रे ब्रह्मज्ञन्मारायुळ्ळोर् चौल्लुन्नु काणुंतोरुं। आश्चर्य्यं मोरोन्निव कण्टु कण्टवरुं चेन्नाश्रमत्तिनु पुरत्तट्टु शुभ देशे विश्रमिच्चनन्तरमरुळिच्चैयतु रामन् विश्रुतनाय सुदीक्षणन् तन्नोटिनियिप्पोळ्— वेगेन चेन्नु भवानगस्त्य मुनीन्द्रनोटागत नायोरेन्नेयङ्ङुणर्त्तिच्चीटणं १० जानकियोटुं भ्रातावाय लक्ष्मणनोटुं काननद्वारे वसिच्ची टुन्नितुपाश्रमं। श्रुत्वा रामोक्तं सुदीक्षणन् महाप्रसादमित्युक्त्वा सत्वरं गत्वाचार्य्यं मंदिरं मुदा नत्वातं गुरुवरमगस्त्यं मुनिकुल सत्तमं रघूत्तम भक्त सञ्चयावृतं; राम मन्त्रार्त्थं व्याख्या तत्परं शिष्यन्माक्कर्यिक्कामदमगस्त्य मात्मारामं मुनीश्वरं। आरूढ विनयं कौण्टानत वक्त्रत्तोटुमाराल् वीणुटन् दण्ड नमस्कारवुं चैय्तान्। रामनां दाशरथि सोदरनोटुं निज भामिनियोटुमुण्टिङ्ङागतनायिट्टिप्पोळ्, निल्क्कुन्नु पुरत्तु

मुनिकुमारों की वेदध्वनि से मुखरित वह कानन अनुपम था। ब्रह्मर्षि प्रवरों, अमर मुनियों के सुखदायक कई प्रकार के मन्दिरों की कतारों की कोई संख्या नहीं रही। वैसे ही अच्छे विद्वान् लोगों की भी कोई सीमा नहीं रही। इसे (कानन को) देखकर ब्रह्मज्ञ लोग कहा करते हैं कि ब्रह्मलोक भी इसकी समता नहीं कर सकता। इनमें से प्रत्येक वस्तु का दर्शन करते हुए विस्मय विमुग्ध हो वे आश्रम के बाहर सुन्दर स्थान पर आ खड़े हुए। विश्राम लेने के उपरान्त राम ने विश्रुत सुतीक्ष्ण से कहा कि अब आप शीघ्र जाकर अगस्त्य को यह सूचना दें कि मैं १० —जानकी और भ्राता लक्ष्मण सहित आश्रम के निकट ही कानन-द्वार पर खड़ा हूँ। राम का वचन सुनकर तुरन्त आचार्य के आश्रम में पहुँचकर अत्यन्त सन्तोष के साथ सुतीक्ष्ण ने खबर दी। राम के भक्त वृन्दों से आवृत मुनिकुल सत्तम अपने गुरुवर अगस्त्य को, जो अपने प्रिय एवं इच्छुक शिष्यों को राममन्त्र की व्याख्या करके सुनाने में निरन्तर तत्पर बैठे हैं तथा जो आत्माराम और मुनीश्वर हैं, प्रणाम किया तथा अत्यन्त नम्रता-पूर्वक सिर नवाते हुए फिर उनके चरणों पर पड़कर दण्डवत् नमस्कार किया (और बताया) दाशरथी राम अपने सहोदर तथा भामिनी सहित यहाँ आ पहुंचे हैं। हे करुणासागर! आपके भगवद् चरणों को भक्ति-

भागत्तु कारुण्याब्धे ! त्तिन् तृक्कळलिण कण्टुवन्दिप्पान् भक्तियोटे । मुम्पेतन्नकक्काम्पिल् कण्टरिञ्ञिरिक्कुन्नु कुंभ-संभवन् पुनरेङ्ङिलुमरुळ् चेय्तान्— भद्रंतेरघुनाथमानय क्षिप्रं रामभद्रं मे हृदिस्थितं भक्तवत्सलं देवं; पार्त्तिरुन्नीटुन्नु ञानेत्र नाळुण्टु काण्मान् प्रार्त्थिच्चु सदाकालं ध्यानिच्चु रामरूपं । २० राम रामेति राममन्त्रवुं जपिच्चति कोमळं काळमेघश्यामळं नळिनाक्षं । इत्युक्त्वा सरभ समुत्थाय मुनि प्रवरोत्तमन्मद्ध्ये चित्तमत्यन्त भक्त्या मुनिसत्तमरोटुं निज शिष्य सञ्चयत्तोटुं गत्वा श्रीरामचन्द्र वक्त्रं पार्त्तरुळ् चेय्तान्— भद्रं ते निरन्तरमस्तु सन्ततं रामभद्रं मे दृष्ट्वा चिरमद्यैव समागतं योग्यनायिरिप्पो-रिष्टातिथि बलाल् मम भाग्यपूर्णत्वेन संप्राप्तनायितु भवान् । अद्यवासरं मम सफलमत्रयल्ल मत्तपस्साफल्यवुं वन्नितु जगत्पते ! कुंभसंभवन् तन्नेक्कण्टु राघवन् तानुं तम्पियुं वैदेहियुं संभ्रमसमन्वितं कुम्पिट्टु भक्त्या दण्ड नमस्कारं चेय्तप्पोळ् कुंभजन्मावुमेट्टुत्ते-ळुनेल्पिच्चु शीघ्रं । गाढाश्लेषवुं चेय्तु परमानंदत्तोटुं गूढपादी-

---

पूर्वक प्रत्यक्ष प्रणाम करने के विचार से वे बाहर खड़े हैं । कुंभसंभव ने पहले ही अपनी दिव्य दृष्टि से यह बात जान ली थी; फिर भी उन्होंने कहा—'हे भद्र ! मेरे हृदय निवासी भक्तों पर वात्सल्य दिखानेवाले देव रामभद्र को तुम तुरन्त ले आओ । सदाकाल राम के रूप का ध्यान एवं नाम-स्मरण करता हुआ मैं कब से उनके दर्शन की प्रतीक्षा में बैठा हूँ । २० —राम ! राम ! इस प्रकार जप करता हुआ तथा कोमल मेघ के समान घनश्याम एवं नलिनाक्ष का ध्यान करता आ रहा हूँ ।' इस प्रकार कहकर, शीघ्र उठकर तथा अपने मन को भक्ति से आप्लावित कर मुनि प्रवरों एवं अपने शिष्यमंडल को लेकर वे श्रीराम जी के पास आये और उनके मुख को देखकर कहा—'मेरे रामभद्र ! आप सदा भद्र पुरुष हैं । मेरी दृष्टि में समाया हुआ आपका जो रूप है, उसी रूप में अभी आप सामने खड़े हैं । अपने भाग्य के पूर्णत्व के कारण ही आप जैसे योग्य एवं प्रिय अतिथि अचानक मुझे प्राप्त हुए । आज का दिन मेरा सफल हुआ है, यही नहीं हे संसार के स्वामी, मेरी कामनाएँ भी पूर्ण हुई हैं ।' कुंभसंभव को देखकर श्रीराम जी, अनुज तथा वैदेही ने प्रेम से प्रणाम किया तथा भक्तिपूर्वक दण्डवत् नमस्कार भी किया, तो कुंभोद्भव ने शीघ्र ही उन्हें उठा लिया और परमानन्द के साथ राम तथा शेषनाग के अवतार लक्ष्मण का गाढ़ाश्लेष किया । गात्रस्पर्श से उत्पन्न परमाह्लाद के फलस्वरूप तापसप्रवर के नेत्र

शांशजनाय लक्ष्मणनेयुं गात्रस्पर्शन परमाह्लाद जातस्रवन्नेत्रकीलालाकुलनाय तापस वरन् ३० एकेन करेण संगृह्य रोमाञ्चान्वितं राघवनुटे करपङ्कजमति द्रुतं, साश्रमं जगामहृष्टात्मना मुनिश्रेष्ठ नाश्रित जनप्रियनाय विश्वेशं रामं पाद्यार्घ्यासन मधु पर्क्क मुख्यङ्ङळुमापाद्य संपूज्य सुखमायु पविष्टं नाथं। वन्य भोज्यङ्ङळ् कोण्टु सादरं भुजिप्पिच्चु धन्यनां तपोधननेकान्ते चौल्लीट्टिनान्-- नी वरुन्नतुं पार्त्तु ञानिरुन्नितु मुन्नं देवकळोटुं कमलासननोटुं भवान् क्षीर वारिधि तीरत्तिङ्कल् निन्नरुळ् चेय्तु घोर रावणन् तन्नेक्कोन्नु ञान् भूमण्डलं भारापहरणं चेय्तीटुवनेन्नु तन्ने सारसानन ! सकलेश्वर ! दयानिधे ! ञानन्नु तुटङ्ङि वन्निविटे वाणीटिनेनानन्द स्वरूपनां निन्नुटल् कण्टु कोळ्वान्। तापस जनत्तोटुं शिष्य संघातत्तोटुं श्रीपादांबुजं नित्यं ध्यानिच्चु वसिच्चु ञान्। ३९

अगस्त्य स्तुति

लोक सृष्टिक्कु मुन्नमेकनायानन्दनाय् लोककारणन् विकल्पोपाधि रहितन्। तन्नुटे माय तनिक्काश्रय भूतनायि

आनन्दाश्रु से भर आये। ३० उन्होंने पुलकित हो अपने एक हाथ से राम के कर-कमल को ग्रहण किया और हृष्ट-पुष्ट मुनिश्रेष्ठ ने आश्रितजनों के लिए प्रिय विश्वेश्वर राम को श्रमपूर्वक आश्लेष किया। पाद्य, अर्घ्य, आसन, मधुपर्क आदि नाना वस्तुओं से उनका सत्कार किया और स्वामी (राम) सुखपूर्वक बैठ गये। वन्य भोजन सादर खिलाकर धन्य तपोधन ने एकांत में बताया—"हे सारसानन ! हे अखिलेश्वर ! हे दयानिधि मैं आपके आगमन की प्रतीक्षा में था। पूर्व में क्षीरसागर के तट पर बैठकर आपने देवताओं और कमलासन (ब्रह्मा) को यह बताया था कि दुष्ट रावण का वध करके मैं भूमंडल का भार उतार दूँगा। आनन्दस्वरूप आपके शरीर को प्रत्यक्ष देखने की इच्छा लेकर तब से मैं यहाँ आ बस गया हूँ। तापसजनों तथा शिष्यमंडल सहित नित्य आपके श्री चरण-कमलों का ध्यान करता आया हूँ। ३९

अगस्त्य-स्तुति

लोक के लिए कारणभूत आप लोकसृष्टि के पूर्व एक, आनन्दस्वरूप एवं विकल्प-रहित थे। आप अपनी माया के आश्रित हुए और आपकी यह शक्ति महामाया प्रकृति निर्गुणस्वरूप आपको अपने आवरण में फंसाकर,

तन्नुटे शक्ति येन्नु प्रकृति महामाया। निर्ग्गुणनाय निन्नेयावरणं चेय्तिट्टु तद्गुणङ्ङळेयनुसरिप्पिच्चीटुन्नतुं। निर्व्याजं वेदान्तिकळ् चोल्लुन्नु निन्ने मुन्नं दिव्यमामव्याहृतमेन्नुपनिषद्वशाल्। मायादेवियें मूल प्रकृतियेन्नु चोल्लुं मायातीतन्मारेल्लां संसृतियेन्नु चोल्लुं। विद्वान्मारविद्ययेन्नु परयुन्नुवल्लो शक्तियेप्पलनामं चोल्लुन्नु पलतरं। निन्नाल् संभोक्ष्यमाणयाकिय मायतन्निल् निन्नुण्टायवन्नु महत्तत्त्वमेन्नल्लो चोल्लु निन्नुटे नियोगत्ताल् महत्तत्त्वत्तिङ्कले निन्नुण्टायवन्नु पुनरहङ्कारवुं पुरा। महत्तत्त्ववुमहङ्कारवुं संसारवुं महद्वेदिकळेवं मून्नायि चोल्लीटुन्नु। सात्विकं राजसवं तामसमेन्नीवण्णं वेद्यमायच्चमव्विनुमून्नुमेन्नरिञ्ञालुं। १० तामसत्तिङ्कल् निन्नु सूक्ष्म तन्मात्रकळुं भूमिपूर्वक स्थूल पञ्चभूतवुं पिन्ने; राजसत्तिङ्कल् निन्नुण्टायितिन्द्रियङ्ङळुं तेजोरूपङ्ङळाय दैवतङ्ङळुं पिन्ने। सात्विकत्तिङ्कल् निन्नु मनस्सुमुण्टायवन्नु सूत्ररूपकं लिंगमिवट्टिल् निन्नुण्टायि। सर्वत्र व्याप्त स्थूल सञ्चयत्तिङ्कल् निन्नु दिव्यनां विराट्पुमानुण्टायितेन्नु केळ्प्पू। अङ्ङनेयुळ्ळ विराट् पुरुषन् तन्नेयल्लो तिङ्ङीटुं चराचर लोकङ्ङळाकुन्नतुं। देव मानुष तिर्य्यग्योनिजातिकळ् बहु स्थावर जंगमौघ पूर्णमायुण्टाय् वन्नु।

अपने अनुरूप गुणों का अनुसरण कराती है। (आपको) वेदान्ती लोग निर्व्याज कहते हैं तो उपनिषद् आपको दिव्य अव्याहृत की संज्ञा देते हैं। मायादेवी को मूल प्रकृति कहते हैं। मायातीत लोग उसे संसृति की संज्ञा देते हैं। विद्वान् लोग उसे अविद्या नाम से अभिहित करते हैं। (इस प्रकार आपकी) शक्ति को विविध नाम दिये जाते हैं। आपसे संपोषित माया से ही महत्तत्त्व की उत्पत्ति बतायी जाती है। फिर आपके ही नियोग से महत्तत्त्व से अहंकार उत्पन्न हुआ। पंडित लोग महत्तत्त्व, अहंकार तथा संसार—इस प्रकार तीन तत्वों का उल्लेख करते हैं। ये ही तीन तत्व सात्विक, राजस एवं तामस इन तीन नामों से अभिहित हुए समझने चाहिए। १० तामस से सूक्ष्म तन्मात्राएँ तथा भूमि सहित स्थूल पंचभूत और राजस से इन्द्रियों और तेजोमय देवताओं की उत्पत्ति हुई। सात्विक से मन बना और इन सब में से सूत्र रूप लिंग की उत्पत्ति हुई। सर्वत्र व्याप्त स्थूल संचय से दिव्य विराट् पुरुष की उत्पत्ति कही जाती है। यही विराट् पुरुष ही विपुल चराचर जगत के रूप में उद्भासित होता है। देव, मनुष्य, तिर्यक जाति, विशाल स्थावर-जंगम समूह सब उसी से उत्पन्न

त्वन्मायागुणङ्ङळे मून्नुमाश्रयिच्चल्लो ब्रह्मावुं विष्णु तानुं रुद्रनुमुण्टाय् वन्नु। लोक सृष्टिक्कुरजोगुण माश्रयिच्चल्लो लोकेशनाय धाता नाभियिल् निन्नुण्टायि। सत्वमां गुणत्तिङ्कल् निन्नु रक्षिप्पान् विष्णु रुद्रनुं तमोगुणं कॊण्टु संहरिप्पानुं। बुद्धिजातकळाय वृत्तिकळ् गुणत्रयं नित्यमंशिच्चु जाग्रल् स्वप्नवुं सुषुप्तियुं। २० इवट्टिनॆल्लां साक्षियाय चिन्मयन् भवान् निवृत्तन् नित्यनेकनव्ययनल्लो नाथ ! यातॊरु कालं सृष्टि चॆय्वानिच्छिच्चु भवान् मोदमोटप्पोळंगीकरिच्चु मायतन्नॆ। तन्मूलं गुणवानॆप्पोलॆयायितु भवान् त्वन्महामाय रण्टुविधमाय् वन्नाळल्लो। विद्ययुमविद्ययुमॆन्नुळ्ळ भेदाख्यया विद्ययॆन्नल्लो चॊल्लू निवृत्ति निरतन्मार्। अविद्यावशन्माराय् वर्त्तिच्चीटिन जनं प्रवृत्ति निरतन्मारॆन्नत्रे भेदमुळ्ळु। वेदान्त वाक्यार्थवेदिकळाय् समन्माराय् पादभक्तन्मारायुळ्ळवर् विद्यात्मकन्मार्। अविद्यावशगन्मार् नित्य संसारि कळॆन्नवश्यं तत्त्वज्ञन्मार् चॊल्लीटुन्नु निरन्तरं। विद्याभ्यासैक निरतन्माराय जनङ्ङळॆ नित्य मुक्तन्मारॆन्नु चॊल्लुन्नु तत्त्वज्ञन्मार्। त्वन्मन्त्रोपासकन्मारायुळ्ळ भक्तन्मार्क्कुं निर्म्मलमाय विद्यताने संभविच्चीटुं; मट्टुळ्ळ

हैं। आपके तीन मायागुणों पर आश्रित होकर ही ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र बने। रजोगुण का आश्रय लेकर ही लोकसृष्टि के लिए कारणभूत लोकेश ब्रह्मा नाभि से उत्पन्न हुए। (लोक की) रक्षा करने के लिए सत्वगुण से विष्णु तथा तमोगुण से संहार हेतु रुद्र अवतरित हुए। इन्हीं गुणत्रयों का आधार लेकर जाग्रत्, स्वप्न एवं सुषुप्ति नामक तीन बौद्धिक वृत्तियाँ रहती हैं। २० हे नाथ ! इन सबके लिए साक्षीभूत आप चिन्मय, निवृत्त, नित्य, निस्संग, अव्यय हैं। जिस समय आपने सृष्टि की कामना की तब (आपने) सानंद माया का आश्रय लिया। इस कारण आप सगुण जैसे हो गये। आपकी महामाया दो रूपों में प्रकट होती है, जो विद्या एवं अविद्या के नाम से जानी जाती हैं। निर्वृत्ति निरत लोग विद्या कहलाते हैं। और अविद्या के वश में पड़े लोग प्रवृत्ति निरत कहलाते हैं—यही भेद है। वेदान्त वाक्यार्थ के ज्ञाता बन समचित्त हो (भगवान् के) पाद-भक्त बने लोग विद्यात्मा हैं। तत्वज्ञानी लोगों का कथन है कि अविद्या के वशवर्ती लोग नित्य संसारी हैं। तत्वज्ञाता लोग विद्याध्ययन में निरत लोगों को नित्यमुक्त की संज्ञा देते हैं। आपके नाम-मन्त्र के उपासक भक्त लोगों को निर्मल विद्या स्वयमेव प्राप्त होती है। अन्य मूर्ख

मूढन्माक्कुं विद्ययुण्टाकॆन्नतुं चॆट्टिल्ल तूरायिरं जन्मङ्ङळ् कळिञ्ञालुं । ३० आकयाल् त्वल् भक्ति संपन्नन्मारायुळ्ळ-वरेकान्तमुक्तन्मारिल्लेतुं संशयमोर्त्ताल् । त्वद् भक्ति सुधाहीनन्मारायुळ्ळवर्क्कॆल्लां स्वप्नत्तिलुम्पोलुं मोक्षं संभविक्कयुमिल्ल । श्रीराम ! रघुपते ! केवलज्ञानमूर्त्ते ! श्रीरमणात्माराम ! कारुण्यामृत सिन्धो ! ऎन्तिनु वळरॆ ञानिङ्ङनॆ परयुन्नु चिन्तिक्किल् सारं किञ्चिल् चॊल्लुवन् धरापते ! साधु संगति तन्नॆ मोक्षकारणमॆन्नु वेदान्तज्ञन्माराय विद्वान्मार् चॊल्लीटुन्नु । साधुक्कळाकुन्नतु समचित्तन्मारल्लो बोधिप्पिच्चीटुमात्मज्ञानवुं भक्तन्मार्क्काय् । निस्पृहन्माराय् विगतैषणन्माराय् सदा त्वल्भक्तन्माराय् निवृत्ताखिल कामन्माराय्, इष्टानिष्ट प्राप्तिकळ् रण्टिनुं समन्माराय् नष्टसंगमन्मारुमाय् संन्यस्त कर्म्मिक्कळाय्, तुष्ट मानसन्माराय् ब्रह्मतत्परन्माराय् शिष्टाचारैक परायणन्मारायि नित्यं योगात्थं यमनियमादि सम्पन्नन्मारायेकान्ते शमदमसाधनयुक्तन्माराय्, ४० साधुक्कळवरोटु संगतियुण्टाकुम्पोळ् चेतसि भवल्ककथा श्रवणे रतियुण्टां । त्वल्ककथा श्रवणेन भक्तियुं वर्द्धिच्चीटुं भक्ति वर्द्धिच्चीटुम्पोळ् विज्ञानमुण्टाय् वरुं ।

लोग लाख जन्म लेने पर भी विद्या प्राप्त नहीं कर पाते । ३० इसलिए निस्सन्देह (कहा जा सकता है) आपकी भक्ति से सम्पन्न लोग निस्संग मुक्त हैं । आपकी भक्ति-सुधा रहित लोग स्वप्न में भी मोक्ष को प्राप्त नहीं कर पाते । हे श्रीराम !, हे रघुपति !, हे केवल ज्ञान स्वरूप !, हे श्री के साथ रमण करनेवाले राम !, हे करुणारूपी अमृत सिन्धु ! मैं इस प्रकार अधिक विस्तार के साथ (आपका तत्त्व) क्यों बताऊँ ! हे धरापति ! मैं सोच-विचार करके सार तत्व संक्षेप में बताऊँगा । वेदान्त ज्ञानी विद्वान् लोग कहते हैं कि साधु-संगति ही मोक्ष साधन है । समचित्त लोग ही साधु हैं, जो भक्तों को आत्मज्ञान का बोध कराते हैं । जो निस्पृह, विगतैषण, सदा भगवद्भक्त सभी कामनाओं से रहित, इष्ट और अनिष्ट वस्तुओं की प्राप्ति के समय समचित्त, निस्संग, संन्यास कर्म के अनुष्ठाता, सन्तुष्ट मन, ब्रह्मतत्पर, शिष्टाचार निरत, नित्य यम-नियमादि योग साधना में निरत, एकान्त में शमदम साधन युक्त बने सज्जन हैं । ४० —ऐसे लोगों की संगति से मन में आपके कथा-श्रवण के प्रति अनुराग उत्पन्न होता है । और आपके कथा-श्रवण मात्र से भक्ति बढ़ती है और भक्ति के बढ़ने से ज्ञानोदय होता है । इसलिए हे श्रीराम जी ! आपके प्रति

आकयाल् त्वद्भक्तियुं निङ्कलें प्रेमवाय्पुं राघव ! संभविक्केणमे दयानिधे ! त्वत्पादाब्जङ्ङळिलुं त्वद्भक्तन्मारिलुमेन्नुळ्ळूविल् भक्ति पुनरेप्पोळुमुण्टाकणं । इन्नल्लो सफलमाय्वन्नितु मम जन्ममिन्नु मल्कतङ्ङळुं वन्नितु सफलमाय् । इन्नल्लो तपस्सिनुं साफल्यमुण्टाय् वन्नु इन्नल्लो सफलमाय् वन्नितु मन्नेत्रवुं । सीतयासार्द्धं हृदि वसिक्क सदा भवान् सीता वल्लभ ! जगन्नायक ! दाशरथे ! नटक्कुम्पोळुमिरिक्कुम्पोळुमोरिटत्तु किटक्कुम्पोळुं भुजिक्कुम्पोळुमेन्नु वेण्टा नाना कर्म्मङ्ङळनुष्ठि- क्कुम्पोळ् सदा कालं मानसे भवद्रूपं तोन्नणं दयांबुधे ! कुंभ संभवनिति स्तुतिच्चु भक्तियोटे जंभारि तन्नाल् मुन्नं निक्षिप्तमाय चापं ५० बाण तूणीरत्तोटुं कोटत्तु खड्गत्तोटुमानन्द विवशनाय्- पिन्नेयुमरुळ् चेय्तान्— भूभारभूतमायराक्षसवंशं तिन्नाल् भूपते! विनष्टमाक्कीटणं वैकीटाते । साक्षाल् श्रीनारायणनाय नी माययोटुं राक्षस वधत्तिनु मर्त्यनाय्प्पिरन्नतुं; रण्टु योजनवळि चेल्लुम्पोळिविटे निन्नुण्टल्लो पुण्य भूमियाय पञ्चवटि । गौत- मीतीरे नल्लोराश्रमं चमच्चतिल् सीतया वसिक्क पोय् शेषमुळ्ळोरु कालं । तत्रैव वसिच्चु नी देव कार्य्यङ्ङळेल्ला सत्वरं चेय्केन्नु-

---

भक्ति एवं प्रेम (मेरे हृदय में) उत्पन्न करने की कृपा करें । आज ही मेरा जीवन सफल हुआ और आज ही मेरे क्रिया-कर्म सब सफल हुए । आज ही मेरी तपस्या सफलीकृत हुई और आज ही मेरे नेत्र भी सफल हुए । हे सीतापति !, हे जगन्नायक !, हे दाशरथी ! सदा सीता सहित आप मेरे हृदय में वास करें । हे दयासागर ! उठते-बैठते, चलते-फिरते, लेटते, भोजन करते, अधिक क्यों, नाना कर्मों का अनुष्ठान करते समय सदा मेरे मन में आपका स्वरूप स्मरण आये । इस प्रकार भक्तिपूर्वक स्तुति करके कुंभसंभव ने अपने पास जंभारि (इन्द्र) से पूर्व में न्यस्त चाप । ५० बाण-तूणीर और खड्ग सहित दे दिया । फिर अत्यधिक आनंद से पुलकित होकर कहा— 'हे भूपति ! पृथ्वी के लिए भाररूप राक्षसवंश का अविलंब समूलनाश किया जाना चाहिए । आप वास्तव में नारायण हैं जो अपनी माया सहित राक्षसवध के लिए मर्त्य रूप में अवतीर्ण हुए हैं । यहाँ से दो योजन की दूरी तय करने पर पुण्यभूमि पंचवटी मिलेगी । वहाँ गौतमी (गोदावरी) तट पर एक सुन्दर आश्रम बनाकर सीता सहित शेष समय बिताइये । वहाँ रहते हुए तुरन्त आप देवताओं का कार्य सम्पन्न कीजिए ।' मुनि ने यह आदेश दिया । अगस्त्य के स्तोत्र

टननुज्ञ नल्कि मुनि। श्रुत्वैतल् स्तोत्र सारमगस्त्य सुभाषितं तत्त्वार्थं समन्वितं राघवन् तिरुवटि बाण चापादिकळुं तत्रैव निक्षेपिच्चु वीणुटन् नमस्करिच्चगस्त्य पादांबुजं। यात्रयुमयप्पिच्चु सुमित्रात्मजनोटुं प्रीत्या जानकियोटुमेंळुन्नळ्ळीटुन्नेरं। ५९

जटायुस्संगमं

अद्रिश्रृंगाभं तत्र पद्धति मद्ध्ये कण्टु पत्रि सत्तमनाकुं वृद्धनां जटायुषं। एैत्रयुं वळर्न्नोरु विस्मयं पूण्टुरामन् बद्धरोषेण सुमित्रात्मजनोटु चोन्नान्- रक्षसां प्रवरनिक्किटक्कुन्नतुमुनि भक्षकनिवनें नी कण्टतिल्लयो सखे! विल्लिङ्ङु तन्नीटु नी भीतियुमुण्टाकौला कौल्लुवनिवनें ञान् वैकातेयिनियिप्पोळ्। लक्ष्मणन् तन्नोटित्थं रामन् चोन्नतु केट्टु पक्षिश्रेष्ठनुं भयपीडितनायि चोन्नान्– वध्यनल्लहं तव तातनु चेरुप्पत्तिलेत्रयुमिष्टनाय वयस्यनरिञ्ञालुं। निन्तिरुवटिक्कुं ञानिष्टत्तेच्चेय्तीटुवन् हन्तव्यनल्ल भवद् भक्तनां जटायु ञान्। एन्निव केट्टु बहुस्नेह मुळ्क्कोण्टु नाथन् नन्नायाश्लेषं चेय्तु नल्किनानुग्रहं। एङ्किल् ञानिरिप्पतिनटुत्तु वसिक्क नी सङ्कटमिनियोन्नु कोण्टुमे

सारयुक्त तत्वार्थ समन्वित सुभाषित सुनकर श्रीराम जी ने चापबाण आदि को वहीं निक्षिप्तकर अगस्त्य के पादांबुजों पर पड़कर प्रणाम किया। फिर सुमित्रात्मज एवं सीता सहित यात्रा पर निकले राम को (अगस्त्य ने) बिदा किया। ५९

जटायु से भेंट

वहाँ अद्रिश्रृंग (पर्वत शिखर) पर मार्ग में पत्रिसत्तम (पक्षीश्रेष्ठ) वृद्ध जटायु दिखाई पड़ा। अत्यधिक आश्चर्ययुक्त हो राम ने रोषाकुल होकर सुमित्रात्मज से कहा– 'हे सखे! मुनि-भक्षक तथा मार्ग पर पड़े इस भीमाकार राक्षस को क्या तुम देख रहे हो? तुम जरा धनुष दे दो, भयभीत होने की बात नहीं है, अभी अविलम्ब मैं इसका वध करूँगा।' इस प्रकार राम को लक्ष्मण से कहते सुनकर पक्षिश्रेष्ठ भयपीड़ित हो बोला– 'मैं वध्य नहीं हूँ, अपने पिता का अत्यन्त प्रिय बाल्य सहचर मुझे जान लीजिए। आपका भी मैं भला ही करूँगा। आपका भक्त मैं जटायु मारने योग्य नहीं हूँ।' यह सुनकर नाथ ने अत्यन्त प्रीति से युक्त हो खूब आश्लेष करके उसे अनुग्रह प्रदान किया। (और कहा) 'तब तो मेरे वासस्थान के समीप ही रहो, आगे तुम पर कोई विपत्ति

त्तिनक्किल्ल। शङ्किच्चेनल्लो त्तिन्ने ञानतु कष्टं! कष्टं!
किङ्करप्रवरनाय् वाळुक मेलिल् भवान्। १०

पञ्चवटि प्रवेशं

ऍन्तरुळ् चेय्तु चेन्नु पुक्कितु पञ्चवटि तन्निलाम्मारु सीतालक्ष्मणसमेतनाय्। पर्ण्णशालयुं तीर्त्तु लक्ष्मणन् मनोज्ञमाय् पर्ण्णपुष्पङ्ङळ् कॊण्टु तल्पवुमुण्टाक्किनान्। उत्तमं गंगानदिक्कुत्तरतीरे पुरुषोत्तमन् वसिच्चितु जानकी देवियोटुं। कदळि पनसाम्राद्यखिल फल वृक्षावृत कानने जन संबाध विवर्ज्जिते नीरुजस्थले विनोदिप्पिच्चु देवितन्नै श्रीरामनयोद्ध्ययिल् वाणतु पोलै वाणान्। फलमूलादिकळुं लक्ष्मणननुदिनं पलवुं कॊण्टु वन्नु कॊटुक्कुं प्रीतियोटॆ। रात्रियिलुरङ्ङातॆ चाप बाणवुं धरिच्चास्थया रक्षार्त्थमाय् त्तिन्नीटुं भक्तियोटे। सीतयॆ मद्ध्येयाक्कि मूवरुं प्रातःकाले गौतमितन्निल्क्कुळिच्चर्घ्यवुं कळिच्चुटन् पोरुम्पोळ् सौमित्रि पानीयवुं कॊण्टुपोरुं वारंवारं प्रीतिपूण्टिङ्ङने वाळुंकालं। ९

नहीं आ पड़ पाएगी। खेद है! खेद है! मैंने तुम पर सन्देह किया। भविष्य में तुम मेरे श्रेष्ठ दास बनकर जीवन बिताओ।' १०

पंचवटी में प्रवेश

यह कहकर श्रीरामजी सीता-लक्ष्मण सहित चलते हुए पंचवटी में पहुंचे। लक्ष्मण ने एक सुन्दर पर्णशाला तैयार की और विविधरंगी पुष्पों से एक तल्प भी बनाया। उत्तम गंगा नदी के उत्तर तीर पर जानकी देवी के साथ पुरुषोत्तम (राम) ने वास किया, जहाँ कदली, कटहल, आम्र आदि अखिल फलदायक वृक्षों से भरा हुआ तथा जन-विवर्जित कानन था। उस नीरुज (स्वास्थ्यप्रद) स्थान पर सीता देवी को आनन्द प्रदान करते हुए वे ऐसे रहे जैसे कि अयोध्या में रहा करते थे। लक्ष्मण प्रतिदिन कई प्रकार के कंद, मूल, फल आदि ले आकर सन्तोष के साथ दिया करते थे। (यही नहीं राम-सीता के) रात में सोते समय वे स्वयं जागृत हो धनुष-बाण धारण करते हुए बड़ी आस्था के साथ भक्तिपूर्वक उनके रक्षार्थ खड़े रहते थे। प्रातःकाल में सीता को दोनों के बीच में चलने देकर तीनों गौतमी में स्नानकर अर्घ्य देते थे और लौटती बार पीने का जल लक्ष्मण स्वयं उठा ले आते थे। इस प्रकार दिन-प्रतिदिन प्रेम-पूर्वक जीवन बिताते समय— ९

लक्ष्मणोपदेशं

लक्ष्मणनोरुदिनमेकान्ते रामदेवन् तृक्कळ्ल् कूप्पिविनयानत-नायिच्चोन्नान्— मुक्तिमार्गत्तेयरुळ् चेय्यणं भगवाने ! भक्तनामटियनोटज्ञानं तीङ्ङुं वण्णं। ज्ञान विज्ञान भक्ति वैराग्य चिह्नमेल्लां मानसानंदं वरुमारुरुळ् चेय्तीटणं। आरुं तिन्तिरु-वटियोळिङ्ङिल्लिवयेल्लां तेरोटुपदेशिच्चीटुवान् भूमण्डले। श्रीरामनतु केट्टु लक्ष्मणन् तन्नोटप्पोळारूढानन्दमरुळ् चेय्तितु वळ्ळिपोले; केट्टालुमेङ्किलति गुह्यमामुपदेशं केट्टोळं तीर्न्नु कूटुं विकल्प भ्रममेल्लां। मुम्पिनाल् मायास्वरूपत्ते ज्ञान् चोल्लीटु-वनम्पोटु पिन्ने ज्ञान साधनं चोल्लामल्लो। विज्ञान सहितमां ज्ञानवुं चोल्वन् पिन्ने विज्ञेयमात्मस्वरूपत्तेयुं चोल्लामेटो ! ज्ञेयमायुळ्ळ परमात्मानमरियुम्पोळ् मायासंबंधभयमोक्कें तीङ्ङीटुमल्लो। आत्मावल्लातेयुळ्ळ देहादिवस्तुकळिलात्मावेन्नुळ्ळ बोधंयातोन्नु जगत्त्रये १० माययाकुन्नततु निर्ण्णयमतिनाले काय संबन्धमाकुं संसारं भविक्कुन्नु। उण्टल्लो पिन्ने विक्षेपावरणङ्ङळेन्नु रण्टु रूपं मायय्क्केन्नरिक सौमित्रे ! नी। अेन्नतिल् मुन्नेतल्लो लोकत्तेक्क-

---

लक्ष्मण को उपदेश

—एक दिन एकांत में रहते समय लक्ष्मण ने राम के भगवत् श्रीचरणोंपर प्रणाम करते हुए विनयसमन्वित वाणी में आग्रह किया—'हे प्रभु ! इस भक्तदास के अज्ञान को दूर करने के लिए मुक्ति के साधन समझा दें। ज्ञान-विज्ञान, भक्ति-वैराग्य सबके लक्षण ऐसे बता दें कि (सुनकर) मन में प्रसन्नता हो। इस भूमण्डल पर आपके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है जो सुचारु रूप से बता सकेंगे।' यह सुनकर प्रसन्न मन से श्रीराम ने लक्ष्मण को बताया— ऐसी तुम्हारी इच्छा है तो अत्यन्त रहस्यमय (मेरा) उपदेश सुनो जिससे, तुम्हारे सारे भ्रम दूर होंगे। पहले मैं माया के स्वरूप को समझाऊँगा और फिर ज्ञान के साधन बताऊँगा, फिर विज्ञानयुक्त ज्ञान के बारे में कहूँगा और फिर (अन्त में) विज्ञेय आत्मस्वरूप का परिचय करा दूँगा। ज्ञेय परमात्मा की जानकारी प्राप्त होते ही माया जनित सारे भय मिट जाएँगे। आत्मा के अरितिक्त जो देहादि वस्तुएँ हैं, उन्हें आत्मा समझना ही इस त्रिलोक की माया है। १० —और निश्चय ही इस कारण काया से संबंधित संसार की उत्पत्ति होती है। हे सौमित्र ! तुम जान लो कि माया के विक्षेप एवं आवरण नाम के दो

ल्पिक्कुन्नतेन्नरिकतिस्थूल सूक्ष्मभेदङ्ङळोटुं लिंगादि ब्रह्मान्तमाम-
विद्या रूपमतुं संगादि दोषङ्ङळेस्संभविप्पिक्कुन्नतुं। ज्ञान रूपिणि-
याकुं विद्ययायतु मटेतानन्द हेतुभूतयेन्नरिञ्ञालुं। मायाकल्पितं
परमात्मनि विश्वमेंटो ! मायकोण्टल्लोविश्वमुण्टेन्नु तोन्निक्कुन्नु।
रज्जुखण्डत्तिङ्कलेप्पन्नग बुद्धिपोले निश्चयं विचारिक्किलेतुमो-
न्निल्लयल्लो; मानवन्माराल् काणप्पेट्टतुं केळ्क्कायतुं मानस-
त्तिङ्कल् स्मरिक्कप्पेट्टुन्नतुमेल्लां स्वप्नसन्निभं विचारिक्कि-
लिल्लातोन्नल्लो विभ्रमं कळञ्ञालुं विकल्पमुण्टाकेण्टा। जन्म
संसार वृक्षमूलमायतु देहं तन्मूलं पुत्र कळत्रादि संबन्धमेल्लां; २०
देहमायतु पञ्चभूत सञ्चयमयं देहसंबन्धं मायावैभवं विचारिते।
इन्द्रियदशकवुमहङ्कारवुं बुद्धि मनस्सुं चित्तं मूलप्रकृतियेन्नितेल्लां
ओर्त्तुकण्टालुमोरुमिच्चिरिक्कुन्नतल्लो क्षेत्रमायतु देहमेन्नुमुण्टल्लो
नामं। ऐन्निवट्टिङ्कल् निन्नु वेरोन्नु जीवनतुं निर्णयं परमात्मा
निश्चलन् निरामयन्। जीवात्मस्वरूपत्तेयरिञ्ञु कोळ्वानुळ्ळ
साधनङ्ङळेक्केट्टु कोळ्ळुक सौमित्रे ! नी। जीवात्मावेन्नुं
परमात्मावेन्नुमोर्क्किल् केवलं पर्य्यायशब्दङ्ङळेन्नरिञ्ञालुं।

भेद हैं। उनमें से प्रथम ही लोक की कल्पना कराती है, जो अति स्थूल-सूक्ष्म भेदों की जननी, लिंगात्मक तथा ब्रह्मबोध में बाधक अविद्या है। यही संगति सम्बन्धी विविध दोषों को जन्म देती है। यह जानलो कि दूसरा ज्ञानस्वरूपिणी विद्या माया है, जो आनन्द के लिए हेतु है। परमात्मा को विश्व मानना माया की कल्पना है और माया के कारण ही विश्व की प्रतीति होती है। रज्जु खण्ड में पन्नग (सर्प) बोध के समान विचारपूर्वक देखने पर निश्चय ही किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। मानव से देखी, सुनी एवं मन में स्मृत सभी वस्तुएँ यथार्थ में स्वप्न के समान हैं, जिनका कोई अस्तित्व नहीं है। इसलिए विकल्प को जन्म देनेवाले विभ्रम को त्यागना ही होगा। जन्मयुक्त इस संसार वृक्ष के लिए कारणभूत वस्तु शरीर है और उसी के कारण पुत्र, कलत्र आदि का सम्बन्ध बना रहता है। २० —यह शरीर पंचभूतों का समुच्चय है और देह-सम्बन्ध को माया का वैभव मान लेना चाहिए। दस इंद्रियाँ, अहंकार, बुद्धि, मन, चित्त, मूल प्रकृति इन सबके मिल-जुलकर रहने का स्थान ही देह संज्ञा से विदित है। इन सबसे पृथक् निश्चय ही एक और जीवन है, जो निश्चल और निरामय परमात्मा है। हे सौमित्र ! तुम जीवात्मस्वरूप को पहचान लेने के साधन सुनो।

भेदमेतुमेयिल्ल रण्टुमोन्नत्रे नूनं भेदमुण्टेन्नु परयुन्नतज्ञन्मारल्लो। मानवुं डंभुं हिंसा वक्रत्वं कामं क्रोधं मानसे वेटिञ्ञु सन्तुष्टनाय् सदाकालं, अन्याक्षेपादिकळुं सहिच्चु समबुद्धयामन्युभाववुमकलेक्कळञ्ञनुदिनं, भक्ति कैक्कोण्टु गुरुसेवयुं चेय्तुनिजचित्तशुद्धियुं देहशुद्धियुं चेय्तु कोण्टु, ३० नित्यवुं सल्क्कर्म्मङ्ङळ्क्किळक्कवराते सत्यत्तेस्समाश्रयिच्चानंदस्वरूपनाय् मानसवचन देहङ्ङळेयटक्किक्कत्तन् मानसे विषय सौख्यङ्ङळेच्चिन्तियाते, जननजरामरणङ्ङळेच्चिन्तिच्चुळ्ळिलनहङ्कारत्वेन समभावनयोटुं, सर्वात्मावाकुमेङ्कलुरच्च मनस्सोटुं सर्वदा रामरामेत्यमित जपत्तोटुं, पुत्रदारात्थादिषुनिःस्नेहत्ववुं चैय्तु सक्तियुमोन्निङ्कलुं कूटाते निरन्तरं इष्टानिष्ट प्राप्तिक्कुतुल्य भावत्तोटु सन्तुष्टनाय्विविक्तशुद्धस्थले वसिक्कणं। प्राकृतजनङ्ङळुमाय् वसिक्करुतोट्टुमेकान्ते परमात्मज्ञानतल्परनायि वेदान्त वाक्यार्त्थङ्ङळवलोकनं चेय्तु वैदिककर्म्मङ्ङळुमात्मनिसमर्प्पिच्चाल् ज्ञानवुमकतारिलुरच्चु चमञ्ञीटुं मानसे विकल्पङ्ङळेतुमेयुण्टाकोला।

यह जान लेना चाहिए कि वास्तव में जीवात्मा तथा परमात्मा केवल पर्याय शब्द हैं, दोनों में कोई भेद नहीं है, दोनों एक हैं, भेद की कल्पना केवल अज्ञानी लोग ही करते हैं। मान, दंभ, हिंसा, वक्रता, काम, क्रोध सब भाव मन से निकालकर सदा समय सन्तोषयुक्त हो, परनिन्दा सहते हुए समचित्त हो, अहंभाव को छोड़कर प्रतिदिन भक्ति के साथ गुरु-सेवा करते हुए चित्तशुद्धि और देहशुद्धि करके। ३० —नित्य अविचल भाव से सद्कर्मों का अनुष्ठान करते हुए, सत्य का अवलंब ले सानन्द मन, वचन, देह को वश में रखते हुए, मन से विषय भोगों से प्राप्त सुख की चिन्ता त्याग, जन्म-मरण पर विचार करके मन में निरहंकार भाव को अपनाकर, समभाव से सर्वात्म स्वरूप मुझपर अटल विश्वास धारणकर 'राम राम' का जप करते हुए, पुत्र-पत्नी के प्रति अनासक्त तथा किसी भी प्रकार की आसक्ति छोड़, निरन्तर इष्ट-अनिष्ट की प्राप्ति को समान मानकर, सन्तुष्ट मन से विविक्त (एकान्त) एवं पवित्र स्थान पर आवास करना चाहिए। प्राकृत जनों की संगति बिलकुल त्यागकर परमज्ञान में तत्पर हो एकान्त में वेदान्त वाक्यार्थों का अवलोकन करते हुए वैदिक कर्मों को आत्मा पर समर्पित करने पर मन में अटल ज्ञान का उदय होगा तथा मन में किसी भी प्रकार का विकल्प आने न पाएगा। आत्मा का स्वरूप क्या है, यह जानने की इच्छा है तो सुनो, देह-प्राण-बुद्धि

आत्मावाकुन्नतॆन्तॆन्नुण्टो केळतुमॆङ्किल् आत्मावल्लल्लो देह प्राण-बुद्ध्यहङ्कारं । ४० मानसादिकळॆन्नुमिवट्टिल् निन्नु मेले मान-मिल्लातपरमात्मावु ताने वेऱे । निर्लिप्तु चिदात्मावुशुद्ध-मव्यक्तं बुद्धं तत्पदात्मानिहत्वत्पदार्त्थवुमायि; ज्ञानं कॊण्टॆन्नॆवळिपोलॆ कण्टऱिञ्ञीटां ज्ञानमाकुन्नतॆन्नॆक्काट्टुन्नवस्तु-तन्नॆ । ज्ञानमुण्टाकुन्नतु विज्ञानं कॊण्टुतन्नॆ ञानितॆन्नऱिविनु साधनमाकयालॆ । सर्वत्र परिपूर्णनात्मावु चिदानन्दन् सर्व सत्वान्तर्गतनपरिच्छेद्यनल्लो; एकनद्वयन् परनव्ययन् जगन्मयन् योगेशनजनखिलाधारन् निराधारन्, नित्य सत्यज्ञानादि लक्षणन् ब्रह्मात्मकन् बुद्ध्युपाधिकळिल् वेऱिट्टवन् मायामयन् । ज्ञानं कॊण्टुपगम्यन् योगिनामेकात्मनां ज्ञानमाचार्य्यशास्त्रौघोपदे-शैक्यज्ञानं । आत्मनोरेवंजीवपरयोर् मूलविद्या आत्मनिकार्य्य-कारणङ्ङळुं कूटिच्चेर्न्नु लयिच्चीटुम्पोळुळ्ळोरवस्थयल्लो मुक्ति लयत्तोटाशु वेऱिट्टिरिप्पतात्मावॆन्ने । ५० ज्ञान विज्ञानवैराग्य-त्तोटु सहितमामानन्दमायिट्टुळ्ळ कैवल्य स्वरूपमि– तुळ्ळ-वण्णमे परवानुमितऱिवानुमुळ्ळं नल्लुणर्वुळ्ळोरिल्लारुं जग-

---

अहंकार तो आत्मा नहीं हैं । ४० —मन आदि से परे रहनेवाला विकार रहित परमात्मा बिलकुल अलग है । जो चिदात्मा, शुद्ध, अव्यक्त, बुद्ध ब्रह्म मैं हूँ, जो तुम्हारा अभिकाम्य लेकर उपस्थित हूँ । ज्ञान के द्वारा मुझे ठीक से पहचाना जा सकता है (क्योंकि) ज्ञान मेरा परिचय करानेवाला साधन है । ज्ञान विज्ञान से उत्पन्न होता है क्योंकि 'वह मैं हूँ' के बोध का वह साधन है । सर्वत्र परिपूर्ण आत्मा चिदानन्द है जो सर्वभूतों के अन्तर्गत अपरिच्छेद्य बनकर निवास करती है । वह निस्संग, अद्वय, परे, अव्यय, जगन्मय, योगेश, अजन्मा, निखिल वस्तुओं के लिए आधार स्वरूप, निराधार, नित्य, सत्यज्ञान आदि लक्षणों से युक्त, ब्रह्मात्मा, बुद्धिगत उपाधियों से दूर मायामय है । ज्ञान से वह प्राप्य है । आचार्यों द्वारा शास्त्रोक्त ज्ञान का उपदेश ग्रहण कर 'मैं आत्मा हूँ, जीव अमर है' ऐसी विद्या लेकर आत्मा में कार्य-कारण संबंधों सहित विलीन होने की अवस्था ही मुक्ति है और इस विलयन से पृथक् जो है वह केवल आत्मा है । ५० —ज्ञान-विज्ञान-वैराग्य युक्त आनन्दमय जो कैवल्य स्वरूप है, उसका यथार्थ रूप समझाने की योग्यता रखनेवाला तथा उसे ग्रहण करने की जाग्रत बुद्धिवाला जगत में कोई नहीं है । मुझ पर भक्तिरहित के लिए यह दुर्लभ है और सुनो, मेरी भक्ति से ही यह कैवल्य प्राप्त

त्तिङ्कल् । मत्भक्तियिल्लातवर्क्कॆत्रयुं दुर्ल्लभं केळ् मत्भक्ति कॊण्टुतन्ने कैवल्यं वरुन्तानुं । नेत्रमुण्टॆन्नाकिलुं काण्मतिनुण्टु पणि रात्रियिल् तन्टॆ पदं दीपमुण्टॆन्नाकिलो । न्नेरुळ्ळ वळि- यरिञ्ञीटावतव्वण्णमे श्रीरामभक्तियुण्टॆन्नाकिले काणाय्वरू; भक्तनु न्नन्नाय् प्रकाशिक्कुमात्मावु नूनं भक्तिक्कु कारणवुमॆन्तॆन्नु केट्टालुं न्नी– मत्भक्तन्मारोटुळ्ळ नित्यसंगममतु मत्भक्तन्मा- रॆक्कनिवोटु सेविक्कॆन्नतुं, एकादश्यादि व्रतानुष्ठानङ्ङळुं पुनराकुलमॆन्निये साधिच्चु केळ्क्कयुमथ, पूजनं नन्दनवुं भावनं दास्यं न्नल्लभोजनमग्निविप्राणां कॊटुक्कयुमथ मत्कथापाठ- श्रवणङ्ङळ् चॆय्कयुं मुदामद्गुणनामङ्ङळॆक्कीर्त्तिच्चु कॊळ्ळु- कयुं; ६० सन्ततमित्थमॆङ्कल् वर्त्तिक्कुं जनङ्ङळ्क्कॊरन्तरं- वरातॊरु भक्तियुमुण्टाय् वरुं । भक्ति वर्द्धिच्चाल्प्पिन्ने मट्टॊन्नुं वरॆण्टतिल्लुत्तमोत्तमन्मारायुळ्ळवरवरल्लो । भक्तियुक्तनु विज्ञान ज्ञान वैराग्यङ्ङळ् सद्यस्संभविच्चीटुमॆन्नाल् मुक्तियुं वरुं; मुक्तिमार्ग्गं तावकप्रश्नानुसार वशालुक्तमायितु न्निनक्कॆन्नालॆ धरिक्क न्नी । वक्तव्यमल्ल नूनमॆत्रयुं गुह्यं मम भक्तन्मावर्क्कॊ- ळिञ्ञुपदेशिच्चीटरुतल्लो । भक्तनॆन्नाकिलवन् चोदिच्चीलॆ-

होगा । नेत्र के रहते हुए भी रात में अपना मार्ग देख पाना कठिन है, किन्तु दीप के रहने पर सीधा मार्ग पहचाना जा सकता है, वैसे ही श्रीराम के प्रति भक्ति के द्वारा ही (कैवल्य स्वरूप को) देखा जा सकता है । इसमें सन्देह नहीं कि भक्त को ब्रह्म खूब प्रकाशित होता है । अब भक्ति के साधन कौन-कौन से हैं, यह तुम सुनो । मेरे भक्तों की नित्य सद्संगति, मेरे भक्तों की उदार सेवा, एकादश व्रतों का अनाकुल भाव से अनुष्ठान करना, पूजा, वंदना, स्मरण, दास्य, भूखे ब्राह्मणों को अभीष्ट भोजन दिलाना, मेरी कथा का श्रवण करना, प्रसन्नतापूर्वक मेरे गुणों की स्तुति करना । ६० —इस प्रकार के कार्यों में निरन्तर दत्तचित्त हो रहनेवाले जनों को निर्व्याज भक्ति प्राप्त होगी । भक्ति के बढ़ने पर उन्हें कुछ और प्राप्त करने की इच्छा नहीं है और ऐसे लोग ही सर्वोत्तम हैं । भक्तियुक्त जन के तुरन्त ज्ञान-विज्ञान-वैराग्य निरत होने पर उन्हें मुक्ति-लाभ होता है । तुम्हारे प्रश्न के कारण (मुझसे) उक्त यह मुक्तिमार्ग केवल तुम्हारे (ज्ञान के) लिए है, यह बात समझ लो । मेरे भक्तों के अतिरिक्त अन्य किसी को इस अत्यन्त रहस्यमय ज्ञान का उपदेश नहीं किया जाना चाहिए । भक्त पर अटल विश्वास रहने के कारण उसके द्वारा न पूछा

न्नाकिलुं वक्तव्यमवनोटु विश्वासं वरिकयाल् । भक्ति विश्वास श्रद्धायुक्तनां मर्त्यनितु नित्यमाय्पाठं चेय्किलज्ञानमकन्नुपों । भक्तिसंयुक्तन्मारां योगीन्द्रन्मार्क्कु नूनं हस्तसंस्थितयल्लो मुक्ति-येन्नरिञ्ञालुं । इत्तरं सौमित्रियोटरुळि चेय्तु पुनरित्तिरिन्नेर-मिरुन्नीटिनोरनन्तरं गौतमी तीरे महाकानने पञ्चवटि भूतले मनोहरे सञ्चरिच्चीटुन्नोरु ७० यामिनीचरि जनस्थान वासिनियायकामरूपिणि कण्टाळ् कामिनी विमोहिनी । पङ्कजध्वज-कुलिशाङ्कुशाङ्कितङ्ङळाय् भंगितेटीटुं पदपातङ्ङळतुन्नेरं पाद सौन्दर्यं कण्टु मोहितयाकयाले कौतुकमुळ्क्कोण्टु रामाश्रममकं-पुक्काळ्; भानुमडलसहस्रोज्ज्वलं रामनाथं भानुजोत्रजं भवभय-नाशनं परं मानव वीरं मनोमोहनं मायामयं मानसभवसमं माधवं मधुहरं जानकियोटुं कूटे वाणीटुन्नतु कण्टु मीनकेतन बाण पीडितमायाळेट्टं । सुन्दरवेषत्तोटु मन्दहासवुं पोळिञ्ञिन्दिरा-वरनोटु मन्दमायरुळ् चेय्ताळ्— आरेटो ! भवान् चोल्लीटारुटे पुत्रनेन्नुं न्नेरोटेन्तिविटेक्कु वरुवान् मूलमेन्तु; अन्तोरुमूलं जटा वल्कलादिकळेल्लामेन्तिनु धरिच्चितु तापसवेषमेन्नुं; अन्नुटे

जाने पर भी यह वक्तव्य है । जो मर्त्य भक्ति, विश्वास एवं श्रद्धायुक्त हो नित्य इसका पारायण करता है, उसका अज्ञान दूर हो जाता है और भक्ति संयुक्त योगीन्द्रों को मुक्ति हस्तामलकवत् प्राप्त हुई, समझ लो । इस प्रकार सौमित्र को उपदेश देकर बैठे थोड़ी ही देर में गौतमी के तीरस्थ महाकानन में सुन्दर पंचवटी प्रदेश में घूमती हुई जनस्थान वासिनी । ७० —राक्षसी दिखाई पड़ी जो विमोहित करनेवाली कामस्वरू-पिणी कामिनी थी । तब पंकज, ध्वज, कुलिश, अंकुश आदि अंकित पद-चिह्नों को वहाँ देखकर उस पाद-सौन्दर्य पर मोहित हो वह (सीधे) कौतूहल समन्वित हो रामाश्रम के अन्दर आ पहुँची । सहस्र भानुमण्डल तुल्य तेजोज्वल, संसार दुःख के हर्ता, अलौकिक स्वरूपवाले मनोमोहक, मायामय, कामदेव तुल्य, माधव, मधुहर, मानववीर एवं भानुगोत्रज स्वामी रामजी को सीता जी के साथ विराजमान देखकर वह मीनकेतन (काम) के बाणों से अत्यधिक पीड़ित हो उठी । अपने मनोहरवेष से आवृत उसने मंदहास के साथ इन्दिरापति से मंदशब्दों में प्रश्न किया— 'तुम कौन हो ? किनके पुत्र हो तथा यहाँ आने का क्या कारण है ? तुम सच बोलो कि जटा-वल्कल किसलिए धारण किये हुए हो और तुम्हारे तापसवेष का क्या उद्देश्य है ? मैं पहले अपना वास्तविक परिचय

परमार्थं मुन्ने ञान् पऱञ्ञीटां निन्नोटु नीयॆन्नोटु पिन्नॆच्चोदिक्कुमल्लो। ८० राक्षसेश्वरनाय रावण भगिनि ञानाख्यया शूर्पणखां कामरूपिणियल्लो; खरदूषण त्रिशिराक्कळां भ्राताक्कन्माक्करिके जनस्थाने ञानिरिप्पतु सदा। निन्ने ञानारॆन्नतुमऱिञ्ञीलतुं पुनरॆन्नोटु परमार्थं चॊल्लणं दयानिधे! सुन्दरी! केट्टुकॊळ्क ञानयोद्ध्याधिपति नन्दनन् दाशरथि रामनॆन्नल्लो नामं। ऎन्नुटॆ भार्य्ययिवळ् जनकात्मजा सीताधन्ये मद्भ्रातावाय लक्ष्मणनिवनॆटो! ऎन्नालॆन्तोरु कार्य्यं निनक्कुमनोहरे! निन्नुटॆ मनोगतं चॊल्लुकमटियातॆ। ऎन्नतु केट्टु नेरं चॊल्लिनाळ् निशाचरि ऎन्नोटु कूटिप्पोन्नु रमिच्चु कॊळ्ळेणंनी। निन्नेयुं पिरिञ्ञु पोवान् मम शक्ति पोरा ऎन्नॆ नी परिग्रहिच्चीटणं मटियातॆ। जानकि तन्नॆक्कटाक्षिच्चु पुञ्चिरि पूण्टु मानव वीरनवळोटरुळ्चॆय्तीटिनान्— ञानिह तपोधन वेषवुं धरिच्चोरो काननं तोरुं नटन्नीटुन्नु सदा कालं। ९० जानकियाकुमिवळॆन्नुटॆ पत्नियल्लो मानसे पार्त्तालॆ वॆटिञ्ञीटरुतॊन्नु कॊण्टुं। सापत्न्योत्भव दुःखमॆत्रयुं कष्टं!

दे दूँगी जो तुम मुझसे पूछना चाहते हो।' ८० —'मैं राक्षसेश्वर रावण की बहिन हूँ और मुझ कामरूपिणी का शूर्पणखा नाम है। मैं सदा जनस्थान में अपने भ्राता खर-दूषण के साथ रहती हूँ। मैं यह नहीं जान पायी हूँ कि तुम कौन हो? हे दयानिधि! तुम दयापूर्वक मुझे बताओ (कि तुम कौन हो)।' (यह सुनकर राम ने बताया) 'हे सुन्दरी! सुनो। मैं अयोध्याधिपति का पुत्र दाशरथी हूँ और मेरा नाम राम है। यह जनकात्मजा सीता मेरी भार्या है। हे धन्ये! यह मेरा भ्राता लक्ष्मण है। हे मनोहरी! तुम्हारा क्या विचार है? तुम निस्संकोच अपनी मनोभिलाषा प्रकट करो।' यह सुनकर उस निशाचरी ने कहा— 'मेरे साथ आकर तुम मेरा उपभोग करो। तुम्हें छोड़ जाने में मैं असमर्थ हूँ। तुम निस्संकोच मेरा परिग्रह करो।' जानकी की ओर दृष्टिपात करते हुए मंद मुस्कान के साथ मानव वीर ने उससे कहा— 'मैं तपोधन का वेषधारण कर सदा प्रत्येक कानन में घूम-भटक रहा हूँ। ९० —यह जानकी मेरी पत्नी है, जिसे किसी भी हालत में त्याग नहीं सकता। सापत्न्य से उद्भूत दुःख अत्यन्त क्लेशकारी है, कष्टदायक है और ऐसा दुःख भोगने योग्य तुम नहीं हो! मेरा भाई लक्ष्मण सुन्दर एवं मनोहर है और तुम सब प्रकार से साक्षात् लक्ष्मी के समान हो। हे मनोहरी! निस्संदेह

कष्टं ! तापत्तेस्सहिप्पतिनाळल्लत्तीयुमेंटो ! लक्ष्मणन् मम भ्रातासुन्दरन् मनोहरन् लक्ष्मीदेविक्कु तन्नेयोक्कुत्तीयेल्लांकोण्टुं । त़िङ्ङळिल्च्चेरुमेऱ्रे निर्णयं मनोहरे ! संगवुं त़िन्निलेट़ं वद्धित़िक्कुमवनेंटो ! मंगलशीलननुरूपनेंवयुं त़िनक्कङ्ङु त़ी चेन्तु परञ्ञीटुक वैकीटातें । अेऩ्ऩतु केट्टन्तेरं सौमित्रि समीपे पोय् त़िऩ्ऩवळपेक्षिच्चाळ् भर्त्तावाकेन्तु तन्नें । चोन्नवळोटु चिरिच्चवनुमुर चेय्तानेन्नुटें परमार्त्थं त़िन्नोटु परञ्ञीटां; मन्नवनाय रामन् तन्नुटें दासन् ञानो धन्ये ! त़ी दासियाकान् तक्कवळल्लयल्लो । चेन्तु त़ी चोल्लीटखिलेश्वरनाय रामन् तन्नोटु तव कुलशीलाचारङ्ङळेंल्लां । अेन्नालन्तेरं तन्नें केक्कोळ्ळुमल्लों रामन् त़िन्नेयेन्तु केट्टु रावण सहोदरि १०० पिन्नेयुं रघुकुल नायकनोटु चोन्नाळेंन्ने त़ी परिग्रहिच्चीटुक त़ल्लूनिनक्कोन्तु कोण्टुमेयोरु सङ्कटमुण्टाय्वरा मन्नवा ! गिरि वनग्रामदेशङ्ङळ्तोरुं अेन्नोटुकूटेंत़टन्नोरोरो भोगमेल्लामन्योन्यं चेर्न्तु भुजिक्कायवरुमनारतं । इत्तरमवळुरचेय्ततु केट्टन्तेरमुत्तरमरुळ्चेय्तु राघवन् तिरुवटि— ओरुत्तनायालवनरिके शुश्रूषिप्पा-

---

तुम दोनों की जोड़ी अनुपम रहेगी और वह अधिक तुम्हारा साथ दे भी सकेगा। वह मंगलशील (लक्ष्मण) बिलकुल तुम्हारे अनुरूप है, इसलिए तुम अविलंब उसके पास जाकर प्रार्थना करो।' यह सुनकर तुरन्त ही उसने लक्ष्मण के समीप पहुँचकर पति बन रहने की याचना की। इस प्रकार की प्रार्थना करनेवाली उस (शूर्पणखा) से लक्ष्मण ने हँसते हुए कहा— 'मैं अपनी सच्चाई तुम्हें बताता हूँ। हे धन्ये ! मैं महाराज राम का सेवक (मात्र) हूँ और तुम दासी बनने योग्य नहीं हो। (इसलिए) तुम समस्त चराचरों के स्वामी राम से अपने कुल-शील-आचार सब कुछ कह दो। तब राम तुम्हें ग्रहण कर लेंगे।' यह सुनकर रावण की बहिन ने। १०० —फिर रघुकुल-नायक से आग्रह किया कि तुम मुझे अपना बना लो। हे राजा ! ऐसा करने से तुम्हारा ही भला होगा। तुम्हें किसी भी प्रकार का संकट नहीं आ पाएगा। तुम गिरि, वन, ग्राम, प्रदेशों में निरन्तर मेरे साथ घूमते हुए हर प्रकार का सुख लूट सकोगे। उसको इस प्रकार कहते सुनकर भगवान श्रीराम ने उत्तर दिया कि एक पुरुष को सदा अपनी परिचर्या के निमित्त साथ में एक स्त्री की आवश्यकता है और मेरे लिए तो यह (सीता) है ही। उसे (लक्ष्मण को) एक स्त्री की आवश्यकता रही और कौन स्त्री मिल सकती

नोरुत्ति वेणमतिनिवळुण्टेनिक्किप्पोळ् । औरुत्तिवेणमवनतिना-रेन्नु तिरञ्ञरिक्कुं नेरमिप्पोळ् निन्नेयुं कण्टुकिट्टि । वरुत्तुं दैवमोन्नु कौतिच्चालिनिन्निन्नेवरिच्चु कोळ्ळुमवनिल्ल संशयमेतुं । तेरिक्केन्निनिकालं कळञ्ञीटातेचेल्क करत्ते ग्रहिच्चीटुं कटुक्क-न्नवनेटो ! राघव वाक्यं केट्टु रावण सहोदरिव्याकुल चेतस्सोटुं लक्ष्मणान्तिके वेगाल् चेन्नु निन्नपेक्षिच्च नेरत्तु कुमारनुमेन्नोटित्तरं परञ्ञीटोल्ल वेरुते नी । ११० निन्नि-लिल्लेतुमोरु कांक्षयेन्नरिक नी मन्नवनाय रामन् तन्नोटु परञ्ञालुं । पिन्नेयुमतु केट्टु राघव समीपेपोय्च्चेन्नु निन्नपेक्षिच्चाशया पलतरं । कामवुमाशा भंगं कोण्टु कोपवुमति प्रेमवुमालस्यवुं पूण्टु राक्षसियप्पोळ् । मायारूपवुं वेर्पेट्टञ्जनशैलं पोले काया-कारवुं घोर दंष्ट्रयुं कैक्कोण्टप्पोळ् कम्पमुळ्ळकोण्टु सीतादेवि-योटटुत्तप्पोळ् संभ्रमत्तोटु रामन् तटुत्तुनिर्त्तुन्नेरं; बालकन् कण्टु शीघ्रं कुतिच्चु चाटिवन्नु वाळुरयूरिक्कातुं मुलयुं मूक्कुमेल्लां छेदिच्च नेरमवळलरि मुरयिट्ट नादत्तेक्कोण्टु लोकमोक्के माटो-लिक्कोण्टु । नीलपर्वतत्तिन्टे मुकळिल् निन्नु चाटि नालञ्चु-

---

है ?— इस सोच-विचार में ही है कि अकस्मात् तुम आ गयी हो। ईश्वर सबकी कामना-पूर्ति करता है। अब वह निस्संशय तुम्हें ग्रहण करेगा। अब व्यर्थ समय को हाथ से जाने मत दो। तुम तुरन्त उसके निकट पहुँच जाओ, वह बलात् तुम्हारा हाथ ग्रहण कर लेगा। राम का यह कथन सुनकर रावण-भगिनी के अत्यन्त खिन्न हो शीघ्र ही समीप आकर याचना करने पर कुमार (लक्ष्मण) ने बताया कि तुम मुझसे व्यर्थ ऐसी बात मत कहो। ११० —तुम यह समझ लो कि मेरे मन में तुम्हारे प्रति मोह नहीं है, तुम राजा राम से जाकर (यह बात) कहो। फिर बड़ी आशा लेकर राम के पास आ उसने कई प्रकार से प्रार्थना की। उस राक्षसी ने एक साथ काम, आशाभंग से कोप, प्रेम और आलस्य को अपनाया। माया रूप को त्यागकर अंजनशैल सम स्थूल, भयंकर रूप तथा घोर दंष्ट्रा को धारण करके कंपितगात्री बन उसको सीता देवी की ओर बढ़ते देख तुरन्त राम ने उसे रोक दिया और यह देखकर कुमार (लक्ष्मण) ने क्षिप्रगति से आ अपने कवच से खड्ग निकालकर उससे उसके कान, कुच और नाक काट डाले तो आर्त्तनाद के साथ उसकी पुकार की ध्वनि से सारा संसार ही कंपायमान हो उठा। नील पर्वत पर से अबाधगति से बह निकली स्रोतस्विनी के समान रक्त बहाती हुई

वळिवरुमरुवियारु पोले चोरयुमोलिप्पिच्चु काळरात्रियेप्पोले घोरयां निशाचरिवेगत्तिल् तटकोण्टाळ्। रावणन् तन्टे वरवु-ण्टिनियिप्पोळेन्नु देवदेवनुमरुळ् चेय्तिरुन्नरुळिनान्। १२० राक्षस प्रवरनायीटिन खरन् मुम्पिल् पक्षमटवनियिल्प्पर्वतं वीण पोले रोदनं चेय्तु मुम्पिल् पतनं चेय्त निज सोदरि तन्ने नोक्कि चोल्लिनानाशु खरन्– मृत्यु तन् वक्त्रत्तिङ्कल् सत्वरं प्रवेशिच्च तत्र चोल्लारेन्नेन्नोटेत्रयुं विरये नी। वीर्त्तु वीर्त्तेटं विरच्चल-रिस्सगद्गदमार्त्तिपूण्टोर्त्तु भीत्या चोल्लिनाळवळप्पोळ्– मर्त्यन्मार् दशरथ पुत्रन्मारिरुवरुण्टुत्तमगुणवान्मारेत्रयुं प्रसिद्धन्मार्; राम लक्ष्मणन्मारेन्नवर्क्कु नाममोरु कामिनियुण्टु कूटेस्सीतयेन्न-वळ्क्कु पेर्। अग्रजन् नियोगत्तालुग्रनामवरजन् खड्गेन छेदिच्चितुमल्क्कुचादिकळेल्लां। शूरनायीटुं नीयिन्नवरेक्कोल चेय्तु चोर नल्कुक दाहं तीरुमारेनिक्किप्पोळ्; पच्चमांसवुं तिन्नु रक्तवुं पानं चेय्किलिच्छवन्नीटुं मम निश्चयमरिञ्ञालुं। ॲन्निवकेट्टु खरन् कोपत्तोटुरचेय्तान् दुर्न्नयमुळ्ळ मानुषा-धमन्मारे– १३० क्कोन्नु मल् भगिनिक्कु भक्षिप्पान् कोटुक्क-णमतिनाशु पतिन्नालु पेर् पोकनिङ्ङळ्। नीकूटेचेन्नु कांट्टि-

---

कालरात्रि के समान घोर वह निशाचरी तुरन्त वहाँ से भाग गयी। अब रावण का आगमन होगा, यह कहकर राम वहीं बैठे रहे। १२० पक्षाघात से अवनि पर पतित पर्वत के समान बिलखकर अपने ही सम्मुख आ भूमि पर गिर पड़ी बहिन को देखकर राक्षसप्रवर खर ने तुरन्त पूछा —'तुम जल्दी ही मुझे बताओ कि मृत्यु का ग्रास बनने का मौका किसे आ गया है ?' हाँफती-काँपती, बिलख-बिलख तथा सगद्गद एवं कारुणिक वाणी में उसने कहा—'दशरथ के दो पुत्र हैं जो अत्यन्त गुणशाली एवं बहुत ही प्रसिद्ध हैं। राम-लक्ष्मण उनके नाम हैं, उनके साथ एक कामिनी भी है, जिसका नाम सीता है। अग्रज के आदेश पर क्रूर कनिष्क भ्राता ने खड्ग से मेरे कुच आदि का छेदन किया। शूर-वीर तुम आज उनका वध करके मुझे दाह-शान्ति के लिए रक्त प्रदान करो। उनका कच्चा माँस खाने तथा रक्त पीने पर ही मेरी अभिलाषा पूर्ण होगी, यह तुम जान लो।' ये बातें सुनकर कोपाकुल खर ने (अपने अनुचरों से) कहा— 'दुर्विनीत मनुष्याधमों का। १३० —वध करके उनका मांस मेरी बहिन के भोजनार्थ देना होगा। उस कार्य के लिए तुम चौदह लोग तुरन्त ही तैयार हो जाओ।' (फिर उसने शूर्पणखा

क्कौट्टत्तीटेन्नालिवराकूतं वरुत्तीटुं त्तिनक्कु मटियातें। अन्नवळोटु परञ्ञयच्चान् खरनेट्मुन्नतन्मारां पतिन्नालु राक्षसरेयुं; शूल-मुद्गर मुसलासि चापेषुभिण्डि पालादि पलविधमायुधङ्ङ-ळुमायि क्रुद्धन्मारार्त्तु विळिच्चुद्धतन्माराय् चेन्नु युद्ध सन्नद्ध-न्मारायटुत्तारतु न्नेरं। बद्ध वैरेण पतिन्नाल्वरुमौरुमिच्चु शस्त्रौघं प्रयोगिच्चार् चुटुंत्तिन्नौरिक्कले। मित्र गोत्रोद्भूत-नामुत्तमोतमन् रामन् शत्रुक्कळयच्चोरुशस्त्रौघं वरुन्नेरं प्रत्येक-मोरोशरं कौण्टव खण्डिच्चुटन् प्रत्यर्त्थिजनत्तेयुं वधिच्चानोरो-न्निनाल्। शूर्प्पणखयुमतु कण्टु पेटिच्चु मण्टि बाष्पवुं तूकि खरन् मुम्पिल् वीणलरिनाळ्। अङ्ङु पोय्क्कळञ्ञतु न्निन्नोटु कूटेप्परञ्ञङ्ङु न्निन्नयच्चवर् पतिन्नाल्वरुं चौल् न्नी। १४० अङ्ङुचेन्नेट्नेरंरामसायकङ्ङळ् कौण्टिङ्ङिनि वरात्तवण्णंपोयार् तेक्कोट्टवर्। अन्नु शूर्प्पणरवयुं चौल्लिनाळतु केट्टु वन्न कोपत्ताल् खरन् चौल्लिनानतु न्नेरं— पोरिक निशाचरर् पतिन्नालायिरवुं पोरिनु दूषणनुमनुजन् त्रिशिरस्सु। घोरनां खरनेवं चौन्नतु केट्ट न्नेरं शूरनां त्रिशिरस्सुं पटयुं पुरप्पेट्टु।

से कहा) तुम साथ जाकर (राम-लक्ष्मण को) दिखा दोगी तो ये लोग शीघ्र ही तुम्हारी इच्छा पूर्ण कर देंगे। यह कहकर उसने शूर्पणखा को भेज दिया। अत्यन्त बड़े चौदह राक्षस शूल, मुसल, असि, चाप, आदि विविध प्रकार के आयुधों से लैस होकर तथा क्रुद्ध, उन्मत्त एवं उद्धत स्वभाव से युक्त हो अट्टहास, कोलाहल भरते हुए युद्ध सन्नद्ध हो (राम के निकट) आये और (राम को) चारों ओर से घेरकर रूढमूल शत्रुता के साथ सब ने एक साथ उनपर शस्त्र समूहों का प्रयोग किया। मित्र गोत्र (सूर्यवंश) में जात उत्तमपुरुष राम ने शत्रुओं के शस्त्रों को आते देखकर उन्हें पृथक्-पृथक् बाणों से काट डाला और शत्रुओं को भी अन्य बाणों का प्रयोगकर मार डाला। यह देख भयभीत शूर्पणखा वहाँ से भाग खड़ी हुई और अश्रुधारा बहाती हुई खर के सामने आकर चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगी तो खर ने पूछा— "बताओ तो सही, यहाँ से तुम्हारे साथ भेजे गये चौदह लोग कहाँ जा छिप गये हैं?" १४० —शूर्पणखा ने बताया कि वहाँ पहुँचकर (राम का) सामना करते ही राम के सायक के लगने से यमपुरी चले गये, जिस कारण अब यहाँ नहीं आ सकेंगे। यह सुनते ही अत्यधिक कोप से युक्त खर ने तब कहा कि चौदह हजार राक्षसों सहित दूषण और भ्राता त्रिशिरस युद्ध के लिए

वीरनां दूषणनुं खरनुं ऩटकॊण्टु धीरतयोटॆ युद्धं चॆय्वतिन्नुऴ्टोटॆ। राक्षसप्पटयुटॆ रूक्षमां कोलाहलं केळ्क्काय ऩेरं रामन् लक्ष्मणनोटु चॊन्नान्— ब्रह्माण्डं ऩटुङ्ङुमाऱॆन्तॊरु घोषमितु ऩम्मोटु युद्धत्तिनु वरुऩ्नु रक्षोबलं। घोरमायिरिप्पोरु युद्धवुमुण्टा- यिप्पोळ् धीरतयोटुमत्र ऩीयॊरु कार्य्यं वेणं। मैथिलि तन्नॆयॊरु गुहयिलाक्किक्कॊण्टु भीतिकूटातॆ परिपालिक्क वेणं भवान्। ञानॊरुत्तने पोरुमिवरॆयॊक्कॆक्कॊल्वान् मानसे ऩिनक्कु सन्देहमुण्टा- यीटॊला। १५० मटॊऩ्नुं चॊल्लुन्निल्लॆऩ्नॆन्नॆयाणयिट्टु कट्वार् कुऴलियॆ रक्षिच्चु कॊळ्ळेणं ऩी। लक्ष्मीदेवियेयुं कॊण्टङ्ङनॆ तन्नॆयॆऩ्नु लक्ष्मणन् तॊऴुतुपोय् गह्वरमकं पुक्कान्। चाप बाण- ङ्ङळॆयुमॆटुत्तु परिकरमाभोगानन्दमुऱप्पिच्चु सन्नद्धनायि ऩिल्क्कुऩ्न ऩेरमार्त्तुविळिच्चु नक्तञ्चररॊक्कॆ वऩ्नॊरुमिच्चुशस्त्रौघं प्रयोगिच्चार्। वृक्षङ्ङळ् पाषाणङ्ङळॆऩ्निवकॊण्टुमेटं प्रक्षे- पिच्चितु वेगाल्पुष्करनेत्रन्मेय्मेल्। तल्क्षणमवयॆल्लामॆय्तु खण्डिच्चु रामन् रक्षोवीरन्मारॆयुं सायकावलितूकि निग्रहिच्चितु

मेरे साथ आ जाएँ। घोर खर के इस प्रकार कहते ही शूर त्रिशिरस और सेना निकल पड़ी। वीर दूषण और खर भी धीरता से युद्ध करने के लिए चल पड़े। राक्षस सेना के भारी कोलाहल को सुनकर तब राम ने लक्ष्मण को बताया कि ब्रह्माण्ड को कंपित करता हुआ यह क्या घोष सुनायी दे रहा है? (लगता है) हमसे युद्ध करने राक्षस सेना आ रही है। अब भयानक युद्ध होगा, (इसलिए) तुम साहस- पूर्वक एक काम करो। तुम निर्भय मैथिली को एक गुहा में छिपाकर उनकी रक्षा करते रहो। मैं अकेला ही इनको मारने के लिए पर्याप्त हूँ। तुम्हें मन में सशंकित होने की आवश्यकता नहीं है। १५० —और अधिक अब कुछ बोलने का नहीं है। तुम मेरी सौगंध लेकर कोमलांगी की रक्षा करो। 'ऐसा ही होगा' कहकर लक्ष्मण लक्ष्मीदेवी (सीता) को साथ लेकर गुहा के भीतर चले गये। धनुष-बाण उठाकर और सानंद बाण को प्रत्यंचा पर चढ़ाकर तथा परिकर कसकर सन्नद्ध हो (राम के) खड़े रहते समय कोलाहल करते हुए राक्षसों ने (राम पर) असंख्य शस्त्रों का एक साथ प्रयोग किया। (यही नहीं) उन्होंने वृक्ष तथा पत्थर का भी पुष्करनेत्र (राम) पर प्रहार किया। अपनी बाण वर्षा से राम ने उन सबको काट लिया तथा अपने बाण के आगे आ पहुँचे सभी राक्षस वीरों को भी मार गिराया। तब घोर सेनापति

निशिताग्रबाणङ्ङळ् तन्नालग्रे वन्नटुत्तोरु राक्षसप्पटयेल्लां। उग्रनां सेनापति दूषणनतुन्नेरमुग्र सन्निभनाय रामनोटटुत्तितु। तूकिनान् बाणगणमवटे रघुवरन् वेगेन शरङ्ङळालेण्मणिप्रायमाक्कि। न्नालु बाणङ्ङळेय्तुतुरगं न्नालिनेयुं कालवेश्मनि चेर्त्तु सारथियोटुं कूटे। १६० चापवुं मुरिच्चु तल्केतुवुं कळञ्ञप्पोळ् कोपेन तेरिल्निन्नु भूमियिल चाटि वीणान्। पिल्पाटु शतभारायसनिर्म्मितमाय कॅल्पेॅळुं परिघवुं धरिच्चु वन्नानवन्। तद्बाहुतन्नेच्छेदिच्चीटिनान् दाशरथि तल् परिघत्ताल् प्रहरिच्चितु सीतापति। मस्तकं पिळर्न्नुटनुर्वियिल् वीणु समवर्त्ति पत्तनं प्रवेशिच्चितु दूषणनुं; दूषणन् वीण नेरं वीरनां त्रिशिरस्सुं रोषेण मून्नु शरङ्ङोण्टु रामनेय्तान्। मून्नुं खण्डिच्चु रामन् मून्नुबाणङ्ङळेय्तान् मून्नुमेय्तुटन् मुरिच्चीटिनान् त्रिशिरस्सुं। नूरु बाणङ्ङळेय्तानन्नेरं दाशरथि नूरुं खण्डिच्चु पुनरायिरं बाणमेय्तान्। अवयुं मुरिच्चवनयुतं बाणमेय्तानवनीपति वीरनवयुं नुरुक्किनान्। अर्द्धचन्द्राकारमायिरिप्पोरम्पु तन्नालुत्तमांगङ्ङळ् मून्नुं मुरिच्चु पन्ताटिनान्। अन्नेरं खरनादित्याभतेटीटुं रथं तन्निलाम्मारु करयेरि ञाणो-

दूषण भी उग्ररूप धारणंकर बिलकुल राम के सामने आ गया और बाण-वर्षा ही की, जिन्हें रघुवर ने तिल-तिल कर काट लिया। (फिर) चार बाणों का प्रयोग करके चारों तुरगों को सारथी सहित यमलोक भेज दिया। १६० उसका धनुष तथा ध्वज काट गिराने पर वह क्रुद्ध हो रथ से नीचे उतर पड़ा। बड़ा भारी लौह कवच धारण किया हुआ वह परिघ ले सामने आया तो रघुपति ने उसकी भुजा ही काट डाली तथा उसी के परिघ से उप पर प्रहार भी किया। मस्तक फट जाने के कारण दूषण भूमि पर गिर पड़ा और सभवर्त्ती (यमधर्म) के राज्य में चला गया। दूषण के गिरते ही वीर त्रिशिरस ने क्रोधाकुल हो राम पर तीन बाणों का प्रहार किया। उन तीनों को काटकर रामने फिर तीन बाण चलाये, जिन्हें त्रिशिरस ने खण्डित कर डाला। उसने एक सौ बाण चलाये तो उन्हें काटकर दाशरथी ने फिर एक सहस्र बाण चलाये। उन्हें खण्डित करके उसने अयुत बाणों का प्रयोग किया तो अवनिपति (राम) ने उनके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। अर्द्धचन्द्राकार बाण से उसके उत्तमांग को काटकर राम ने सिर का गेंद खेला। तब खर ने आदित्य सम प्रकाशमान रथ पर चढ़कर प्रत्यंचा की झंकार

लियिट्टु । १७० वन्नु राघवनोटु बाणङ्ङळ् तूकीटिनानो-न्निनोन्नैय्तु मुरिच्चीटिनानवयेल्लां । राम बाणङ्ङळ् कोण्टुं खरबाणङ्ङळ् कोण्टुं भूमियुमाकाशवुं काणरुतातेयायि । निष्ठुर-तरमाय राघव शरासनं पोट्टिच्चान् मुष्टिदेशे बाणमेय्ताशु खरन् । चट्टयुं तुरुक्किनान् देहवुं शरङ्ङळ् कोण्टोट्टोळियाते पिळर्न्नीटिनानतु नेरं । तापस देवादिकळायुळ्ळ साधुक्कळुं तापमोटय्यो कष्टं ! कष्टमेन्नुर चेय्तार् । जयिप्पूताक रामन् जयिप्पूताकयेन्नु भयत्तोटमररुं तापसन्मारुं चोन्नार् । तल्क्काले कुंभोत्भवन् तन्नुटे कय्यिल्मुन्नं शक्रनाल् निक्षिप्तमायुळ्ळोरु-शरासनं तृक्कय्यिल्क्काणाय्वन्नितेत्रयुं चित्रं चित्रं ! मुख्य वैष्णवचापं कैक्कोण्टुत्तिल्क्कुन्नेरं, दिक्कुकळोक्के निरञ्ञोरु वैष्णव तेजस्सुळ्क्कोण्टु काणाय्वन्नु रामचन्द्रनेयप्पोळ् । खण्डिच्चान् खरनुटे चापवुं कवचवुं कुण्डलहारकिरीटङ्ङ-ळुमरक्षणाल् । १८० सूतनेक्कोन्नु तुरगङ्ङळुं तेरुं पोटिच्चा-दिनायकनटुत्तीटुन्न नेरत्तिङ्कल् मट्टोरु तेरिल्क्करयेरिनानाशु खरन् तेट्टेन्नु पोटिच्चितु राघवनतुमप्पोळ् । पिन्नेयुं गदयुमा-

---

की । १७० —और नज़दीक आकर बाण-वर्षा की जिनमें से प्रत्येक को राम ने खण्ड-खण्ड कर डाला । राम के बाणों तथा खर के बाणों से भूमि और आकाश ढक गये । तुरन्त खर ने मुष्ठिदेश पर बाण चलाकर राम के कठोर धनुष की डोरी खण्डित कर दी । उसने (राम का) कवच फाड़ डाला और शरीर को भी कई बाणों से विदीर्ण कर डाला । यह देखकर तापस, देवता आदि साधुजनों ने अत्यन्त परिताप के साथ 'कष्ट है ! कष्ट है !' की शोर मचायी । 'राम पराजित हो रहे हैं, पराजित हो रहे हैं', इस प्रकार अमरों तथा तापसों ने भयभीत हो चिल्ला-चिल्लाकर कहा। तब सबको विस्मय प्रदान करते हुए पूर्व में शक्र से कुंभोद्भव के पास न्यस्त धनुष भगवद् करों में दिखाई दिया । (वह दृश्य) विचित्र था ! विचित्र था ! मुख्य वैष्णव चाप को हाथ में लिए दशों दिशाओं में परिव्याप्त वैष्णव तेज से युक्त रामचन्द्र तब दिखाई दिये । तत्काल ही उन्होंने खर के चाप, कवच, कुण्डल, हार, और किरीट सब कुछ खण्डित कर दिये । १८० सूत को मारकर और तुरग तथा रथ को तितर-बितर कर आदिनायक (राम) के अग्रसर होते समय शीघ्र ही खर दूसरे रथ में बैठ गया, जिसे भी राघव ने तुरन्त ही छिन्नभिन्न कर के छोड़ दिया । फिर खर को गदा लेकर बढ़ते देखकर राम ने उसे

यट्टुत्तानाशु खरन् भिन्नमाक्किनान् विशिखङ्ङकालतुं रामन् । एड्रिय कोपत्तोटें पिन्नेमट्टोरुंतेरिलेड्रि वन्नस्त्र प्रयोगं तुटङ्ङिनान् खरन् । घोरमामाग्नेयास्त्रमेय्ततु रघुवरन् वारुणास्त्रेण तट्टुत्तीटिनान्जितश्रमं । पिन्नेक्कौबेरमस्त्रमेय्ततैन्द्रास्त्रं कोण्टु मन्नवन् तट्टुत्तु कण्टु राक्षस वीरन् नैऋतमस्त्रं प्रयोगिच्चतुयाम्यास्त्रेण वीरनां रघुपति तट्टुत्तु कळञ्ञप्पोळ्; वायव्यमयच्चतुमैशास्त्रं कोण्टु जगन्नायकन् तट्टुत्तु कण्टु राक्षसवीरन् गान्धर्वमयच्चतु गौह्यकमस्त्रं कोण्टु शान्तमायतु कण्टु खरनुं कोपत्तोटें । आसुरमस्त्रं प्रयोगिच्चतु कण्टु रामन् भासुरमाय दैवास्त्रं कोण्टु तट्टुक्कयाल् १९० तीक्ष्णमामैषीकास्त्रमेय्ततु रघुपति वैष्णवास्त्रेण कळञ्ञाशु मून्नम्पु तन्नाल् । सारथि तन्नेक्कोन्नु तुरगङ्ङळेक्कोन्नु तेरुमेप्पेरुं पोटिपेट्टुत्तु कळञ्ञप्पोळ् यातुधानाधिपति शूलवुं कैक्कोण्टति क्रोधेन रघुवरनोटट्टुत्तीटुं नेरं, इन्द्र दैवतमस्त्रमयच्चोरळवु चेन्निन्द्रारि तलयरुत्तीटिनान् जगन्नाथन् । वीणितु लङ्कानगरोत्तर द्वारे तल तूणिपुक्कितुवन्नु बाणवुमतु नेरं । कण्टु राक्षसरेल्लामारुटे तलयेन्नु कुण्ठ भावेनन्निन्नु संशयं

विशिखों से चूर-चूर कर दिया । इस पर अत्यधिक क्रोध विह्वल हो अन्य रथ पर सवार हो खर ने शस्त्रों का प्रयोग किया । उसके द्वारा प्रयुक्त भयंकर आग्नेयास्त्र को राम ने सरलता से वारुणास्त्र से रोक दिया। फिर अपने द्वारा प्रयुक्त कौबेरास्त्र को ऐन्द्रास्त्र से रोकते राम को देखकर राक्षस वीर ने नैऋतास्त्र का प्रयोग किया जिसे वीर रघुपति ने याम्यास्त्र से तुरन्त रोक दिया । उसके वायव्यास्त्र को जगन्नाथ ने मैशास्त्र से रोका । यह देख राक्षसवीर ने गांधर्व का प्रयोग किया जिसे (राम ने) गौह्यकास्त्र से शान्तकर दिया तो गुस्से में आकर खर ने आसुरास्त्र का प्रयोग किया । तब राम के द्वारा उसे भासुर दैवास्त्र से रोका हुआ पाकर । १९० —खर ने तीक्ष्ण मैषीकास्त्र चलाया जिसे रघुपति ने वैष्णवास्त्र से काट दिया । और शीघ्र ही राम ने तीन बाण मात्र से सारथी तथा तुरग को मारकर रथ को छिन्न-भिन्न कर दिया तो यातुधानपति अत्यधिक क्रोधपूर्वक हाथ में शूल लिए राम की ओर बढ़ा तो (राम ने) इन्द्रदैवतास्त्र का प्रयोग किया और (उससे) जगन्नाथ ने इन्द्रारि का सिर काट डाला । उसका मस्तक लंका नगरी के उत्तर द्वार पर जा गिरा और (राम का) बाण तूणीर में आ प्रविष्ट हुआ । (खर का) मस्तक देखकर राक्षस लोग यह विस्मय प्रकट करने

तुटङ्ङिनार् । खरदूषणत्रिशिराक्कळां निशाचरवररुं पति
न्नालायिरवुं मरिच्चितु । नाळिक मून्ने मुक्काल् कोण्टु राघवन्
तन्नालूळियिल् वीणाळल्लो रावण भगिनियुं । मरिच्च निशा-
चरर् पतिन्नालायिरवुं धरिच्चारल्लो दिव्य विग्रहमतु नेरं ।
ज्ञानवुं लभिच्चितु राघवन् पोक्कल् निन्नु मानसे पुनरवरेव-
रुमतुनेरं २०० रामने प्रदक्षिणं चेय्तुटन् नमस्करिच्चामोदं पूण्टु
कूप्पिस्तुतिच्चार् पलतरं— नमस्ते पादांबुजं राम ! लोका-
भिराम ! समस्तपापहरं सेवकाभीष्टप्रदं । समस्तेश्वर !
दयावारिधे ! रघुपते ! रमिच्चीटणं चित्तं भवति रमापते !
त्वल् पादांबुजं नित्यं ध्यानिच्चु मुनिजनमुत्भव मरणदुःखङ्ङ-
ळेक्कळयुन्नु; मुल्पाटु महेशनेत्तपस्सु चेय्तु सन्तोषिप्पिच्चु
ञङ्ङळ् मुम्पिल् प्रत्यक्षनाय नेरं, भेदविभ्रमं तीर्त्त संसार-
मूल वृक्षच्छेदन कुठारमाय् भविक्क भवानिति प्रार्त्थिच्चु
ञङ्ङळ् महादेवनोटतुमूलमोर्त्तरुळ् चेय्तु परमेश्वरनतु नेरं—
यामिनी चरन्माराय् जनिक्क निङ्ङळिनि रामनायवतरिच्ची-

लगे कि मस्तक किसका है ? श्रीरामजी के द्वारा सिर्फ पौने चार घड़ियों
के भीतर खर-दूषण और त्रिशिरस तथा चौदह हजार राक्षस मारे गये
(जिसे देखकर) रावण भगिनी (मूर्च्छित हो) पृथ्वी पर गिर पड़ी ।
मृत्यु को प्राप्त चौदह हजार निशाचरों ने तब दिव्य रूप धारणकर
लिया । राम के सामीप्य से उनके मन में ज्ञान का उदय हुआ और
तब सभी ने । २०० —राम की प्रदक्षिणा और नमस्कार करके हाथ
जोड़कर कई प्रकार से स्तुति की— हे राम ! आपके चरणों पर प्रणाम
है । हे लोकाभिराम ! आप समस्त पापों का हरण करनेवाले तथा
अपने सेवकों के अभीष्ट को प्रदान करनेवाले हैं । हे समस्तेश्वर ! हे
दयावारिधि ! हे रघुपति ! हे रमापति ! हमारा चित्त सदा आप पर
केन्द्रित रहे । आपके चरणांबुजों पर निरन्तर ध्यान लगाकर मुनिजन
जन्म-मृत्यु के दुःखों को दूर करते हैं । पूर्व में हमने अपनी तपस्या से
महेश्वर को प्रसन्न किया था तो वे हमें प्रत्यक्ष हुए । हमारे भ्रम एवं
अज्ञान को दूर करके संसार रूपी वृक्ष के मूल-छेदन के लिए कुठार बनने
की हमारी प्रार्थना सुनकर महेश्वर ने खूब सोच-विचार करने के उपरांत
हमें बताया था कि तुम लोग निशाचर बनकर जन्म लो; मैं भूमि पर
राम के रूप में अवतार लेने जा रहा हूँ । तब निशाचर रूपी आप लोगों
का वध करके मैं आप सबको मोक्ष प्रदान करूँगा, इसमें संदेह के लिए

टुवन् ञानुं भूमौ। राक्षस देहन्मारां त्तिङ्ङ्ळॆच्छेदिच्चन्नु मोक्षवुं तन्नीटुवनिल्ल संशयमेतुं। ऎन्नरुळ् चेय्तु परमेश्वरनतुमूलं निर्णयं महादेवनायतु रघुपति। २१० ज्ञानोपदेशं चेय्तु मोक्षवुं तन्नीटणमानन्द स्वरूपनां त्तिन्तिरुवटि नाथा! ऎन्नवरपेक्षिच्च नेरत्तु रघुनाथन् मन्दहासवुं पूण्टु सानन्दमरुळ् चेय्तु— विग्रहेन्द्रिय मनः प्राणाहङ्कारादिकळ्क्कॊक्कवे साक्षिभूतनायतु परमात्मा; जाग्रल् स्वप्नाख्याद्यवस्थाभेदङ्ङ्ळ्क्कु मीते साक्षियां परब्रह्मं सच्चिदानन्दमेकं। बाल्य कौमारादिकळागमापायिकळां कालादि भेदङ्ङ्ळ्क्कुं साक्षियाय् मीते त्तिल्क्कुं परमात्मावु परब्रह्मा-नन्दात्मकं परमं ध्यानिक्कुम्पोळ् कैवल्यं वन्नु कूटुं। ईवण्ण-मुपदेशं चेय्तु मोक्षवुं नल्कि देव देवेशन् जगल्क्कारणन् दाशरथि। राघवन् मून्नेमुक्काल् नाळिककॊण्टु कॊन्नान् वेगेन पतिन्नालु-सहस्रं रक्षोबलं। सौमित्रि सीतादेवि तन्नोटुं कूटि वन्नु-रामचन्द्रने वीणु नमस्कारं चेय्तान्। शस्त्रौघ निकृत्तमां भर्त्तृ विग्रहं कण्टु मुक्तबाष्पोदं विदेहात्मजा मन्दमन्दं २२० तृक्कैकळ् कॊण्टु तलोटिप्पोरुप्पिच्चीटिनाळॊक्कॆवे पुण्णुमतिन् वटुवुं माच्ची-

---

कोई अवकाश नहीं रहेगा। परमेश्वर के इस प्रकार कहने के कारण निश्चित है कि परमेश्वर ही राम हैं। २१० आनंदस्वरूप हे स्वामी! ज्ञानोपदेश देकर हमें मोक्ष प्रदान कीजिएगा। इस प्रकार उनके द्वारा प्रार्थना की जाने पर मंद मुस्कान के साथ राम ने सानंद बताया— 'शरीर इन्द्रिय, मन, प्राण, अहंकार आदि सबके लिए परमात्मा ही साक्षी स्वरूप है। यह सच्चिदानंद स्वरूप परब्रह्म जो निस्संग है, जाग्रत, स्वप्न आदि अवस्थाओं से परे है। बाल्य, कौमार, भूत, वर्तमान, भविष्य आदि काल भेद सबके लिए साक्षी बनकर इनसे परे रहनेवाला परमात्मा परब्रह्मस्वरूप, आनंदमय एवं सबसे परे है और उसका ध्यान करने से कैवल्य प्राप्त होगा। इस प्रकार का उपदेश देकर देवों के देव दाशरथी ने उन्हें मोक्ष प्रदान किया। (राम की अपरिमेय शक्ति का इससे पता चलता है कि) राम ने पौने चार घड़ियों के भीतर चौदह सहस्र राक्षस-सेना का वध किया। (राक्षसों को मुक्ति देकर भेज देने के उपरांत) सौमित्र ने सीतादेवी के साथ आकर श्रीरामचन्द्र जी को प्रणाम किया। शस्त्र समूह से आहत राम के दिव्य शरीर को देखकर सीता जी ने अश्रुधारा बहाती हुई मंद-मंद। २२० —उनके शरीर पर हाथ फेर लिया तथा सारे घावों तथा उनके धब्बों को पूर्णतया मिटा दिया। भूमि पर

टिनाळ्। रक्षोवीरन्मार् वीणुकिटक्कुन्नतुकण्टु लक्ष्मणन् निजहृदि विस्मयं तेटीटिनान्; रावणन् तन्टे वरवुण्टिनियिप्पोळेन्नु देव देवनुमरुळ् चेय्तिरुन्नरुळिनान्; पिन्ने लक्ष्मणन् तन्ने वेकाते नियोगिच्चान् चेन्नु नी मुनिवरन्मारोटु चोल्लीटणं युद्धं चेय्ततुं खरदूषण त्रिशिरावकळ् सिद्धियें प्रापिच्चतुं पतिन्नालायिरवुं; तापसन्मारोटरियिच्चु नी वरिकेन्नु पापनाशनरुळ् चेय्तयच्चोरु शेषं सुमित्रापुत्रन् तपोधनन्मारोटु चोन्नानमित्रान्तकन् खरन् मरिच्च वृत्तान्तङ्ङळ्। क्रमत्तालिनिक्कालं वैकातेयोटुङ्ङीटु-ममर्त्यं वैरिकळेन्नुरच्चु मुनिजनं। पलरुं कूटि निरूपिच्चु निर्म्मिच्चीटिनार् पललाशिकळ् मायतट्टाय्वान् मून्नुपेक्कुं अंगुलीयवुंचूडारत्नवुं कवचवुमंगे चेर्त्तीटुवानाय्क्कोटुत्तु विट्टी-टिनार्। २३० लक्ष्मणनव मून्नुं कोण्टु वन्नाशु रामन् तृक्कालक्कल् वच्चु तोळुतीटिनान् भक्तियोटे। अंगुलीयकमे-टुत्तंबुजविलोचननंगुलि तन्मेलिट्टु चूडारत्नवुं पिन्ने मैथिलि तनिक्कु नल्कीटिनान् कवचवुं भ्रातावुतनिक्कणिञ्ञीटुवानरुळिनान्। रावण भगिनियुं रोदनं चेय्तु पिन्ने रावणनोटु परञ्ञीटुवान्

मरे पड़े राक्षस वीरों को देखकर लक्ष्मण मन ही मन विस्मित हो उठे। तब देवों के देव राम ने समझाया कि रावण का अब आगमन होगा। फिर राम ने लक्ष्मण को आज्ञा दी कि मुनिवरों को जाकर युद्ध में खर, दूषण और त्रिशिरस की हत्या तथा चौदह हजार राक्षसों की मोक्ष प्राप्ति की सूचना दें। राम के द्वारा तापसों को तुरन्त सूचना देकर आने की आज्ञा लेकर सौमित्र ने तापसों के पास आकर यमराज सम शत्रु खर (आदि) की मृत्यु का समाचार सुनाया। अब क्रम से देवताओं के शत्रुओं का अन्त होगा, ऐसा कहकर मुनिजनों में से कइयों ने सोच-विचार करके (राक्षसों की) माया के प्रभाव से दूर रखने के निमित्त तीनों (राम, लक्ष्मण और सीता) के लिए अंगुलीय, चूडारत्न और कवच शरीर पर धारण करने के लिए बनाकर दिये और उन्हें हाथ में देकर (लक्ष्मण को) वापस भेज दिया। २३० तीनों लाकर लक्ष्मण ने श्रीराम जी के चरणों पर रखकर भक्ति के साथ प्रणाम किया। अंबुज विलोचन राम ने अंगुलीय लेकर उसे अपनी अंगुली पर धारण किया, चूडारत्न मैथिली को दिया और अपने भ्राता से कवच पहन लेने का आग्रह किया। (उधर) रावण की बहिन (शूर्पणखा) रावण को समाचार सुनाने बिलखती हुई चल पड़ी। साक्षात् अंजनशैल तुल्य

त्नटकोण्टाळ् । साक्षालञ्जनशैलम्पोले शूर्प्पणखयुं राक्षस राजन् मुम्पिल् वीणुटन् मुऱयिट्टाळ्; मुलयुं मूक्कुं कातुं कूटाते चोरयुमायलरुं भगिनियोटवनुमुर चेय्तान्— ऎन्तितु वत्से ! चोल्लीटेन्नोटु परमार्त्थं बन्धमुण्टायतेन्तु वैरूप्यं वन्नीटुवान् ? शक्रनो कृतान्तनो पाशियो कुबेरनो दुष्कृतं चेय्ततवन् तन्ने ञानोटुक्कुवन् । सत्यं चोल्लेन्नेरमवळुमुरचेय्ताळेवयुं मूढन् भवान् प्रमत्तन् पानसक्तन्; स्त्रीजितनतिशठनेन्तऱिञ्ञिरिक्कुन्नु राजावेन्नेन्तुकोण्टु चोल्लुन्नु निन्ने वृथा । २४० चार चक्षुस्सुं विचारवुमिल्लेतुं नित्यं नारी सेवयुं चेय्तुकिटन्नीटेल्लायुप्पोळुं; केट्टतिल्लयो खरदूषण त्रिशिराक्कळ् कूट्टमे पतिन्नालायिरवुं मुटिञ्ञतुं; प्रहरर्द्धेव रामन् वेगेन बाणगणं प्रहरिच्चोटुक्किनानेन्तोरु कष्टमोर्त्ताल् । ऎन्नतु केट्टु चोदिच्चीटिनान् दशानननेन्नोटु चोल्लीटेवन् रामनाकुन्नतेन्तुं, ऎन्तोरुमूलमवन् कोल्लुवानेन्नुमेन्नालन्तकन् तनिक्कु नल्कीटुवनवने ञान् । सोदरि चोन्नाळतुकेट्टु रावणनोटु यातुधानाधिपते ! केट्टालुं परमार्त्थं; ञानोरुदिनं जनस्थानदेशत्तिङ्कल् निन्नानन्दं पूण्टु ताने सञ्चरि-

---

शूर्पणखा राक्षसराज के सम्मुख गिर पड़कर विलाप करने लगी । स्तन, नाक और कान विहीन हो रक्त से भीगी, घोर गर्जना करती अपनी बहिन से उसने पूछा— 'हे वत्से ! यह क्या हुआ ! मुझे सही बात बता दो । इस प्रकार विकृत रूप प्राप्त करने का क्या कारण है ? चाहे शक्र हो, चाहे कृतान्त हो, चाहे वरुण हो, चाहे कुबेर, जिस किसी ने भी यह दुष्कृत किया, उसको मैं समाप्त कर दूँगा ।' (रावण के द्वारा) सत्य बात कहने का आग्रह किये जाने पर उसने कहा— 'आप मूढ, प्रमत्त, शराबखोर, स्त्रीजित और शठ हैं । आप (संसार की हालत) क्या जानते हैं? आपको राजा कहना ही व्यर्थ है । २४० —आप चारचक्षु (विलासी), विवेकहीन और सदा नारी सेवा में रत पड़े रहते हैं । क्या चौदह हज़ार साथियों के साथ खर, दूषण और त्रिशिरस की मृत्यु की बात नहीं सुनी ? कितनी दुःखद बात है कि राम ने बाण-गणों के प्रहार से आधे प्रहर के भीतर सबको समाप्त कर दिया ।' यह सुनकर दशानन ने कहा कि 'मुझे बताओ कि यह राम कौन है ? और (सबको) मारने का क्या कारण है ? तब मैं उसे (राम को) यमराज के पास भेज दूँगा ।' यह सुनकर (रावण की) बहिन ने कहा– "हे यातुधानाधिपति ! सच्ची बात सुनिये । मैं एक दिन सानंद जनस्थान में घूमती हुई कानन

च्चीटुं कालं, काननत्तूटे चेन्नु गौतमीतटं पुक्केन् सानन्दं पञ्चवटि कण्टु ञान् निल्क्कुन्नेरं, आश्रमत्तिङ्कल् तत्र रामने-क्कण्टेन् जगदाश्रय भूतन् जटा वल्कलङ्ङळुं पूण्टु; चाप बाणङ्ङळोटुमेत्रयुं तेजस्सोटुं तापस वेषत्तोटुं धर्म्मदारङ्ङ-ळोटुं; २५० सोदरनायीटिन लक्ष्मणनोटुं कूटि सादरमिरिक्कुम्पो-ळटुत्तु चेन्नु ञानुं; रामोत्संगे वाळुं भामिनि तन्नेक्कण्टाल् नारिकळ-ळवण्णं मट्टिल्लल्लो लोकत्तिङ्कल्। देवगन्धर्वनागमानुष नारिमारिलेवं काण्मानुमिल्ल केळ्प्पानुमिल्ल नूनं; इन्दिरादेवितानुं गौरियुं वाणिमातुमिन्द्राणि तानुमट्टुळ्ळप्सरः स्त्रीवर्ग्गवुं नाणं पूण्टो-ळिच्चीटुमवळे वळिपोले काणुम्पोळनंगनुं देवतयवळल्लो। तल्पतियाकुं पुरुषन् जगत्पतियेन्नु कल्पिक्कां विकल्पमिल्लल्पवु-मतिनिप्पोळ्। त्वल्पत्नियाक्कीटुवान् तक्कवळिवळेन्नु कल्पिच्चु कौण्टिङ्ङु पोन्नीटुवानोरुम्पेट्टेन्; मल्कुच नासा कर्ण्णच्छेदनं चेय्तानप्पोळ् लक्ष्मणन् कोपत्तोटेराघव नियोगत्ताल्। वृत्तान्तं खरनोटु चेन्नु ञानरियिच्चेन् युद्धार्त्थं नक्तञ्चरानीकिनियोटुमवन् रोषवेगेन चेन्नु रामनोटेट्टनेरं नाळिकमून्नेमुक्काल् कोण्टवनो-

---

मार्ग से गौतमी तीर पर पहुँची। तब पंचवटी को देखकर सानन्द खड़ी रह गयी। वहाँ आश्रम में जगत के लिए आश्रयस्वरूप राम को देखा जो जटा-वल्कलधारी हैं, जो धनुष-बाण युक्त हैं और जिनके साथ धर्मपत्नी। २५० —तथा भ्राता लक्ष्मण हैं। (भ्राता-पत्नी सहित) बैठे राम को देख मैं उनके निकट गयी। राम के निकट ही विराजमान (उनकी) भामिनी को देखा, जिसके समान (सुन्दरी) न संसार की नारियों में कोई है, न देव, गन्धर्व, नाग, मनुष्य की नारियों में कोई देखी या सुनी गयी है। उसके सीधे दर्शन मात्र से इन्दिरा देवी, गौरी, वाणीमाता (सरस्वती), इन्द्राणी तथा अन्य अप्सराएँ लज्जित हो अपना मुख छिपा लेंगी। वह वास्तव में काम देवता के योग्य (रति) है। उसके पति को जगत् का स्वामी मान लिया जा सकता है, उसमें जरा भी विकल्प के लिए अवकाश नहीं है। उसे आपकी पत्नी बनाने योग्य समझकर उसे यहाँ खींच ले आने के लिए सन्नद्ध हो गयी। तब क्रुद्ध हुए राम का आदेश पाकर लक्ष्मण ने मेरे कुचों, नासिका और कानों को काट डाला। मैंने यह समाचार खर को सुनाया तो उसने क्रुद्ध हो राक्षस-वीरों के साथ तुरन्त ही युद्धार्थ राम का सामना किया तो उन्होंने पौने चार घड़ियों के अन्तर ही (सबको) खतम कर दिया। २६० —शत्रुता

टुक्किनान् । २६० भस्ममाक्कीटुं पिणङ्ङीटुकिल् विश्वं क्षणाल् विस्मयं रामनुटे विक्रमं विचारिच्चाल् । कन्नल्नेर-मिळियाळां जानकीदेवियिप्पोळ्निन्नुटे भार्य्ययाकिल् जन्मसाफल्यं वरुं । त्वल्सकाशत्तिङ्कलाक्कीटुवान् तक्कवण्णमुत्साहं चेय्ती-टुकिलेत्रयुं नन्नु भवान् । तत्सामर्थ्यङ्ङळेल्लां पत्माक्षिया-कुमवळुत्संगे वसिक्क कोण्टाकुन्नु देवाराते ! रामनोटेट्टाल् निल्पान् निनक्कु शक्तिपोरा कामवैरिक्कुंनेरे निल्क्करुतेतिवर्कु-म्पोळ् । मोहिप्पिच्चोरु जाति मायया बालन्मारे मोहनगात्रि तन्नेक्कोण्टु पोरिकेयुळ्ळू । सोदरीवचनङ्ङळिङ्ङने केट्टनेरं सादर वाक्यङ्ङळालाश्वसिप्पिच्चु तूर्ण्णं तन्नुटे मणियर तन्निलङ्ङकं पुक्कान् वन्नतिल्लेतुं निद्रचिन्तयुण्टाकमूलं । एन्नयुं चित्रंचित्रमोर्त्तोळमिदमोरु मर्त्त्यनाल् मून्ने मुक्काल् नाळिकनेरं कोण्टु शक्तनां नक्तञ्चर प्रवरन् खरन् तानुं युद्ध वैदग्ध्यमेरुं सोदररिरुवरुं; २७० पत्तिकळ् पतिन्नालायिरवुं मुटिञ्ञुपोल् व्यक्तं मानुषनल्ल रामनेन्नतु नूनं । भक्त वत्सलनाय भगवान् पत्मेक्षणन् मुक्ति दानैक मूर्त्ति मुकुन्दन् भक्तप्रियन्, धातावु

मोल लेने पर पल भर में (वे) विश्व को भस्मीभूत कर देंगे; सोचें तो राम का पराक्रम आश्चर्यजनक है। हरिणी सी चंचल नेत्रवाली जानकी अगर तुम्हारी भार्या बन सके तो जन्म सफलीभूत होगा। उसको अपने निकट लाने का यदि आप उद्यम करें तो बहुत ही अच्छा रहेगा। कमल-लोचना (सीता) को अपने उत्संग में ला रखने में ही हे देवताओं के शत्रु ! आपकी सामर्थ्य (प्रकट होती) है। राम से टक्कर लेने की सामर्थ्य आपको प्राप्त नहीं है, यहाँ तक कि कामवैरी (शिव) भी उनका मुकाबला नहीं कर सकते। (इसलिए) बालकों (राम-लक्ष्मण) को एक प्रकार की माया से विमोहितकर मोहनगात्री (सीता) को ले आना होगा।" अपनी बहिन की ये बातें सुनकर (रावण ने) सुन्दर वचनों से उसे बहुत ही आश्वस्त किया और (फिर) अपने रत्न सौध के भीतर चला गया। चिन्तावश उसे निद्रा नहीं आयी। (वह सोचने लगा) यह बड़े ही विस्मय की बात है कि एक केवल पौने चार घड़ियों के भीतर बलशाली नक्तंचर प्रवर खर, युद्ध पटु उसके दो भाई। २७० —तथा चौदह हज़ार की सेना मिट गयी। (अतः) निश्चित है कि राम मानव नहीं है। पहले धाता के प्रार्थना करने से भक्तवत्सल भगवान जो कमललोचन, मुक्तिदाता, मुकुन्द हैं, आज भूमि पर रघुकुल में जन्म ले चुके हैं और

मुन्नं प्रार्त्थिच्चोरु कारणमिन्नु भूतले रघुकुले मर्त्यनाय्पिरन्नि-प्पोळ्; अन्नेक्कोल्लुवानोरुम्पेट्टु वन्नानेङ्किलो चेन्नु वैकुण्ठ राज्यं परिपालिक्कामल्लो; अल्लेङ्किलेन्नुं वाळां राक्षस राज्य-मेन्नालल्लविल्लोन्नु कोण्टुं मनसि निरूपिच्चाल्। कल्याण-प्रदनाय रामनोटेल्क्कुन्नतिनेल्ला जातियुं मटिक्केण्ट ञानोन्नु कोण्टुं। इत्थमात्मनिचिन्तिच्चुरच्चु रक्षोनाथन् तत्त्वज्ञानत्तोटु कूटत्यानन्दं पूण्टान्; साक्षाल् श्रीनारायणन् रामनेन्नरिञ्ञथ राक्षस प्रवरनुं पूर्वं वृत्तान्तमोर्त्तान्। विद्वेष बुद्ध्या रामन् तन्ने प्रापिक्केयुळ्ळु भक्तिकोण्टेन्ने प्रसादिक्कयिल्लखिलेशन्। २७९

रावण मारीच संवादं

इत्तरं निरूपिच्चु रात्रियुं कळिञ्ञतु चित्र भानुवुमुदयाद्रि मूर्द्धनि वन्नु। तेरतिलेरीटिनान् देव सञ्चयवैरि पाराते पारावारपारमां तीरं तत्र मारीचाश्रमं प्रापिच्चीटिनानति द्रुतं घोरनां दशानन् कार्य्यगौरवत्तोटुं। मौनवुं पूण्टु जटा वल्कलादियुं धरिच्चानन्दात्मकनाय रामने ध्यानिच्चुळ्ळल्; रामरामेति

अगर मुझे मारने का विचार लेकर (यहाँ) आये हुए हैं तो जाकर बैकुण्ठलोक प्राप्त करूँगा, अन्यथा सदा राक्षस राजा बनकर निवासकर सकूँगा। अतः विचार करने पर दोनों ओर से दुःख के लिए कोई कारण नहीं रह गया है। इसलिए कल्याणप्रद राम का सामना करने से मुझे किसी भी कारण भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार मन में विचार करके दृढ़ संकल्प हो राक्षस राज तत्वज्ञान पर अधिक आनंदित हो उठा। राम को वास्तव में नारायण जानकर राक्षसप्रवर ने पूर्व वृत्तान्त का स्मरण किया और (निश्चय किया) विद्वेष बुद्धि लेकर ही राम का सामीप्य प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि अखिलेश भक्तिवश मुझ पर कृपा नहीं दिखाएँगे। २७९

रावण-मारीच संवाद

इस प्रकार के सोच-विचार करते हुए रात बितायी और सुन्दर भानुबिंब उदय पर्वत के ऊपर प्रकट हुआ। देव समूहों का शत्रु (रावण) तुरन्त ही अपार पारावार के तटवर्ती मारीचाश्रम में पहुँच गया। घोर दशानन गंभीर मुद्रा में था, किन्तु मौन मुद्रा में मन ही मन जटा वल्कल-धारी आनंदस्वरूप राम का ध्यान कर रहा था। 'राम राम' का जप

जपिच्चुरुच्चु समाधि पूण्टामोदत्तोटु मरुवीटिन मारीचनुं लौकिकात्मना गृहत्तिङ्कलागतनाय लोकोपद्रवकारियाय रावणन् तन्नॆ कण्टु संभ्रमत्तोटुत्थानं चॆय्तु पूण्टु कॊण्टु तन्मारिलणच्चानन्दाश्रुक्कळोटुं । पूजिच्चु यथाविधि मानिच्चु दशकंठन् योजिच्चु चित्तमप्पोळ् चोदिच्चु मारीचनुं— ऎन्तोरागमनमितेकनाय्त्तन्नॆयॊरु चिन्तयुण्टॆन्नपोलॆ तोन्नुन्नु भावत्तिङ्कल् । चॊल्लुक रहस्यमल्लॆङ्किलो ञानुं तव नल्लतु वरुत्तुवानुळ्ळवरिल् मुम्पनल्लो । १० न्यायमाय् निष्कल्मषमायिरिक्कुन्न कार्य्यं मायमॆन्नियॆ चॆय्वान् मटियिल्लॆनिक्केतुं । मारीच वाक्यमेवं केट्टु रावणन् चॊन्नानारुमिल्लॆनिक्कु निन्नॆप्पोलॆ मुट्टुन्नेरं; साकेताधिपनाय राजावु दशरथन् लोकैकाधिपनुटॆ पुत्रन्मारायुण्टुपोल् राम लक्ष्मणन्मारॆन्निरुवरितुकालं कोमळगात्रियायोरंगना रत्नत्तोटुं, दण्डकारण्ये वन्नु वाळुन्नितवर् बलालॆन्नुटॆ भगिनितन् नासिका कुचङ्ङळुं कर्णवुं छेदिच्चतु केट्टुटन् खरादिकळ् चॆन्नितु पतिन्नालायिरवुमवरॆयुं निन्नु तानेकनायिट्टेतिर्त्तु रणत्तिङ्कल् कॊन्नितु मून्ने मुक्काल् नाळिक कॊण्टु रामन् । तल् प्राणेश्व-

---

करता हुआ समाधिस्थ हो आनंदमग्न मारीच लौकिक विषयों में तत्पर एवं लोकोपद्रवकारी रावण को गृह में आया हुआ देखकर तुरन्त ही उठ खड़ा हो गया और नेत्रों में आनंदाश्रु भरते हुए उसे छाती से लगाया। यथाविधि उसकी सेवा और सम्मान किया (इससे) प्रसन्न हो उठे रावण से मारीच ने पूछा— 'आपके अकेले आने का क्या कारण है ? मुखमुद्रा से लगता है कि आप मन ही मन चिन्ताग्रस्त हैं । आप अपना अभीष्ट सुनाइये, मैं तो आपके शुभाकांक्षियों में सबसे आगे हूँ । १० न्यायोचित एवं कल्पषरहित कार्य निर्व्याज रूप से करने में मुझे कोई विरोध कभी नहीं रहा ।' मारीच का वचन सुनकर रावण ने कहा कि तुम्हारे समान अवसर पर उपयुक्त मेरा कोई दूसरा मित्र नहीं है । सुना है कि साकेताधिप एवं लोकाधिपति राजा दशरथ के राम-लक्ष्मण के नाम से प्रसिद्ध दो पुत्र हैं, जो इस समय एक कोमलांगी नारी समेत दण्डकारण्य में आ ठहरे हुए हैं । (उन्होंने) अन्यायपूर्वक मेरी बहिन के नाक-कान-कुच काट डाले, और यह समाचार पाकर खर आदि ने अपने चौदह हजार सैनिक समेत उनका सामना किया तो राम ने युद्ध में अकेले सबका सामना करते हुए पौने चार घड़ियों में सबको मौत के घाट उतार दिया। इसलिए उनकी प्राणप्रिया जानकी को मैं अभी उठा ले आना चाहता हूँ,

रियाय जानकि तन्ने ञानुमिप्पोळ् कोण्टिङ्ङु पोन्नीटुवनतिन्नु न्नी हेम वर्ण्ण पूण्टोरु मानाय्च्चेन्नटवियिल् कामिनियाय सीततन्ने मोहिप्पिक्कणं; राम लक्ष्मणन्मारेयकट्टि दूरत्ताक्कू वामगात्रियेयप्पोळ् कोण्टु ञान् पोन्नीटुवन् । २० न्नी मम सहायमायिरिक्किल् मनोरथं मामकं साधिच्चीटुमिल्ल संशयमेतुं । पंक्तिकन्धर वाक्यं केट्टु मारीचनुळ्ळिल् चिन्तिच्चु भयत्तोटु-मीवण्णमुर चेय्तान् : आरुपदेशिच्चतु मूल नाशनमाय कारियं निन्नोटवन् निन्नुटे शत्रुवल्लो; निन्नुटे नाशं वरुत्तुवानवसरं तन्ने पात्तिरिप्पोरु शत्रुवाकुन्नतवन्; नल्लतु निनक्कु ञान् चोल्लुवन् केळ्क्कुन्नाकिल् नल्लतल्लेतुं निनक्किक्कोळ्ळिलरिक न्नी । रामचन्द्रनिलुळ्ळ भीतिकोण्टकतारिल् मामकेराजरत्नरमणी-रथादिकळ् केळ्क्कुम्पोळति भीतनायुळ्ळ ञानो नित्यं राक्षसवंशं परिपालिच्चु कोळ्क न्नीयुं । श्री नारायणन् परमात्मावु तन्ने रामन् ञानतिन् परमार्त्थमरिञ्ञेन् केळ्क्क न्नीयुं— नारदादिकळ् मुनिश्रेष्ठन्मार् परञ्ञु पण्टोरोरो वृत्तान्तङ्ङळ् केट्टेन् पौलस्त्य प्रभो ! पद्मसंभवन् मुन्नं प्रार्त्थिच्च कालं नाथन् पद्मलोचन-नरुळ् चेय्तितु वात्सल्यत्ताल् ३० एन्तुञान् वेण्टुन्नतु चोल्लु-

---

जिसके लिए हेमवर्ण का हिरन बन तुम्हें कानन में पहुँचकर कामिनी सीता को मोहित करना होगा। तुम राम-लक्ष्मण को उसके समीप से दूर हटाओगे तो मैं सुन्दरगात्री को उठा ले आऊँगा। २० अगर तुम (इस बात में) मेरा साथ दोगे तो संदेह नहीं, मेरी अभिलाषा पूर्ण होगी। दशानन के वचन सुनकर मन ही मन भयविह्वल हो मारीच ने इस प्रकार कहा— किसने आपको वंशनाश के लिए कारणभूत यह उपदेश दिया ? जिसने भी यह उपदेश दिया, वह आपका शत्रु है। आप अगर सुनना चाहेंगे तो मैं आपकी भलाई की बात कहूँगा। यह स्पष्ट जान लीजिए कि यह बात आपके लिए उपयुक्त नहीं है। श्रीरामचन्द्र के प्रति अपार प्रीति के कारण राज्य, रत्न, रमणी, रथ आदि के नाम सुनते ही मेरे मन में भय उत्पन्न होता है। और आप सदा राक्षसवंश को संभालते रहिए। श्रीराम नारायण परमात्मा ही हैं, मैंने उनकी वास्तविकता जान ली है। आप भी सुनिये। हे पुलस्त्यकुल के स्वामी! पहले नारद आदि मुनिश्रेष्ठों के मुख से मैंने यह बात सुनी है। पूर्व में पद्मसंभव की प्रार्थना पर स्वामी पद्मलोचन (विष्णु) ने वात्सल्यमय वाणी में कहा— ३० 'इसके लिए (रावण वध के लिए) मुझे क्या करना

कॆत्तु कॆट्टु चिन्तिच्चु विधाताविुमर्त्थिच्चु दयानिधे ! निन्ति-रुवटि तन्ने मानुष वेषं पूण्टु पंक्तिकन्धरन् तन्नॆक्कॊल्लणं मटियातॆ । अङ्ङने तन्नॆयॆन्तु समयं चॆय्तु नाथन् मंगलं वरुत्तुवान् देव तापसक्कॆल्लां । मानुषनल्ल रामन् साक्षाल् श्री नारायणन् तानॆन्तु धरिच्चु सेविच्चु कॊळ्ळुक भक्त्या । पोयालुं पुरं पुक्कु सुखिच्चु वसिक्क नी मायामानुषन् तन्नॆस्सेविच्चु कॊळ्क नित्यं । ऎन्नयुं परमकारुणिकन् जगन्नाथन् भक्तवत्सलन् भजनीयनीश्वरन् नाथन् । मारीचन् पऱञ्ञतु केट्टु रावणन् चॊन्नान् नेरत्रे पऱञ्ञतु निर्म्मलनल्लो भवान् । श्री नारायणस्वामि परमन् परमात्मा तानरविन्दोत्भवन् तन्नोटु सत्यं चॆय्तु; मर्त्त्यनाय्प्पिऱन्नॆन्ने कॊल्लुवान् भाविच्चतु सत्यसङ्कल्पनाय भगवान् तानॆङ्किलो पिन्नॆयव्वण्णमल्लॆन्नाक्कुवानाळारॆटो ! निन्नु निन्नज्ञानं आनिङ्ङ-नॆयोर्त्तीलॊट्टुं । ४० ऒन्नु कॊण्टुं आनटङ्ङीटुकयिल्ल नूनं चॆन्नु मैथिलि तन्नॆक्कॊण्टु पोरिक वेणं । उत्तिष्ठ महाभाग ! पॊन्मानाय् चमञ्ञु चॆन्नॆत्रयुमकट्टुक रामलक्ष्मणन्मारॆ; अन्नेरं

है ? आप ही समझाइये ।' यह सुनकर बहुत सोच-विचार करके विधाता ने प्रार्थना की— 'हे दयानिधि ! आप ही को मानव-रूप धारण करके दशकंठ का वध करना पड़ेगा ।' देवताओं, ऋषियों, तापसों का मंगल करने के विचार से स्वामी ने प्रतिज्ञा की 'ऐसा ही होगा ।' अतः राम मानव नहीं हैं, साक्षात् नारायण हैं । यह जानकर भक्तिपूर्वक उनकी सेवा कीजिए । आप अपनी राजधानी में पहुँचकर सुखपूर्वक रहिए तथा माया मानव की नित्य पूजा कीजिए । संसार के स्वामी (राम) अत्यन्त करुणामूर्ति एवं भक्तवत्सल हैं । वे पूजा करने योग्य स्वामी और ईश्वर हैं । मारीच के कहे वचनों को सुनकर रावण ने कहा कि आपका कथन सत्य है और आप निर्मल चित्तवाले हैं । प्रतिज्ञा-वान श्री नारायण, स्वामी, परात्पर, परमात्मा ने ही पद्मसंभव के प्रति प्रतिज्ञाबद्ध हो मेरे वध के लिए वास्तव में मर्त्यरूप में जन्म लिया है तो फिर (भगवान की इच्छा के) प्रतिकूल कार्य कौन कर सकता है ? (भगवान की इच्छा के अनुसार मेरी मृत्यु होगी, मुझे कोई बचा नहीं सकता) । तुम अपने अज्ञान की बात रोक लो । मैंने यह नहीं समझा था कि तुम भी ऐसे मूर्ख हो । ४० मैं अब किसी भी हालत में चुप नहीं रहूँगा, (मुझे) मैथिली को ले आना ही होगा । हे महाभाग ! तुम उठो । तुम स्वर्णमृग के वेष में वहाँ पहुँचकर राम तथा लक्ष्मण को दूर हटा लो ।

तेरिलेट्टिक्कोण्टिङ्ङु पोन्नीट्टुवन् पिन्ने नीयथासुखं वाळ्क-मुन्नेप्पोले। ओन्निनि मरुत्तु नीयुरचेय्युन्नताकिलेन्नुटे वाळक्कूणाक्कीटुन्नतुण्टिन्नु निन्ने। अेन्नतु केट्टु विचारिच्चितु मारीचनुं नन्नल्ल दुष्टायुधमेट्टु निर्य्याणं वन्नाल्। चेन्नुटन् नरकत्तिल् वीणुटन् किटक्कणं पुण्यसञ्चयं कोण्टु मुक्तनाय् वरुमल्लो राम सायकमेट्टु मरिच्चालेन्नु चिन्तिच्चामोदं पूण्टु पुरप्पेट्टालुमेन्नु चोन्नान्। राक्षस राजा भवानाज्ञापिच्चालुमेङ्किल् साक्षाल् श्रीरामन् परिपालिच्चु कोळ्क पोट्टि। अेन्नुर चेय्तु विचित्राकृति कलर्न्नोरु पोन्निरमायुळ्ळोरु मृगवेषवुं पूण्टान्; पंक्तिकन्धरन् तेरिलान्मारुं करेरिनान् चेन्तार्बाणनुं तेरिलेरिनानतु नेरं। ५० चेन्तार् मानिनियाय जानकि तन्नेयुळ्ळिल् चिन्तिच्चु दशास्यनुमन्धनाय्च्चमञ्ञितु; मारीचन् मनोहर-मायोरु पोन्मानायि चारुपुळ्ळिकळ् वेळ्ळि कोण्टु नेत्रङ्ङळ्रण्टुं, नीलक्कल् कोण्टु चेर्त्त मुग्ध भावत्तोटोरो लीलकळ् काट्टिक्का-ट्टिक्काट्टिलुळ्प्पुक्कुंपिन्ने वेगेन पुरप्पेट्टुं तुळ्ळिच्चाटियुमनुराग भावेन दूरेप्पोय् निन्नु कटाक्षिच्चुं, राघवाश्रमस्थलोपान्ते

तब मैं (सीता को) रथ में उठा ले आऊँगा। फिर तुम पूर्ववत् यथासुख रहो। अब भी तुम कुछ विरुद्ध वचन कहोगे तो तुम्हें अपनी खड्ग का शिकार बना दूंगा। यह सुनकर मारीच ने सोचा कि दुष्ट के हथियार से मरना ठीक नहीं है। क्योंकि (उसके परिणामस्वरूप) जाकर नरक में पड़ना होगा। अगर राम-सायक से मृत्यु हुई तो अपने संचित पुण्य के फलस्वरूप मैं मुक्त हो जाऊँगा। यह सोचकर सानंद उसने (रावण से) कहा— 'चलिए'। हे राक्षस राजा! आप आज्ञा दीजिए। (मन में यह प्रार्थना की) हे प्रभु! आप मेरी रक्षा करें। यह कहकर उसने एक विचित्र आकारवाले तथा स्वर्णिम रंग के हिरण का वेष धारण किया। पंक्तिकंठ अपने रथ में बैठ गया और (उसके साथ ही) तभी कमल बाण (काम) भी रथ पर आरूढ़ हो गया। (अर्थात् रथ पर बैठते ही सीता के लिए रावण कामार्त हो उठा।) ५० कमल को लज्जित करनेवाली जानकी के ध्यान में दशानन अंधा हो उठा। चाँदी की रेखाओं से युक्त शरीर तथा नीलम के से नेत्रवाले सुन्दर स्वर्णमृग के वेष में मारीच मोहक लीलाएँ दिखाता, नाचता-कूदता, छलाँग भरता हुआ कानन के भीतर पहुंच गया। राम के आश्रम के सम्मुख अनुराग भाव से आ नाचता-थिरकता था तो कभी दूर पहुंचकर कटाक्ष अर्पित करता था। इस प्रकार

सञ्चरिक्कुम्पोळ् राकेन्दुमुखि सीत कण्टु विस्मयं पूण्टाळ् । रावण विचेष्टितमरिञ्ञु रघुनाथन् देवियोटरुळ् चेय्तानेकान्ते कान्ते ! केळ्नी— रक्षोनायकन् निन्नेक्कोण्टु पोवतिनिप्पोळ् भिक्षुरूपेणवरुमन्तिके जनकजे ! नीयोरु कार्य्यं वेणमतिनुमटियाते मायासीतये पर्ण्णशालयिल् निर्त्तीटणं । वह्निमण्डलत्तिङ्कल् मरञ्ञु वसिक्क नी धन्ये ! रावणवधं कऴिञ्ञु कूटुवोळं; आश्रयाशङ्कलोराण्टिरुन्नीटणं जगदाश्रयभूते ! सीते ! धर्म्मरक्षार्त्थं प्रिये ! ६० रामचन्द्रोक्ति केट्टु जानकी देवितानुं कोमळ गात्रियायमायासीतयेत्तत्र पर्ण्णशालयिलाक्कि वह्नि मण्डलत्तिङ्कल् चेन्निरुन्नितु महाविष्णुमाययुमप्पोळ् । ६२

मारीच निग्रहं

माया निर्म्मितमाय कनक मृगं कण्टु माया सीतयुं रामचन्द्रनोटुर चेय्ताळ्; भर्त्तावे ! कण्टीलयो कनकमय मृगमेत्रयुं चित्र ! चित्रं ! रत्न भूषितमिदं; पेटियिल्लितिनेतुमेत्रयुमटुत्तु वन्नीटुन्नु मरुक्कमुण्टेत्रयुमेन्नु तोन्नुं । कळिप्पानति

उछलते-कूदते स्वर्णमृग को देखकर राकेन्दुमुखी सीता विस्मित हो उठी । रावण की चेष्टा से परिचित हो उठे राम ने एकांत में सीता से कहा— प्रिये ! सुनो । हे जनकजे ! राक्षसराज तुम्हें उठा ले चलने के लिए अब भिक्षु रूप में यहीं आनेवाला है । तुम्हें एक काम निस्संकोच करना पड़ेगा । हे धन्ये ! पर्णशाला में माया सीता को छोड़कर तुम अग्निमण्डल में छिपे रह जाओ । जगत् के लिए आश्रय स्वरूपिणी हे सीते ! हे प्रिये ! धर्म की रक्षा के लिए रावणवध तक एक वर्ष अपने आश्रय स्वरूप अग्नि में तुम बैठी रहो । ६० राम का कथन सुनकर जानकीदेवी ने वहाँ पर्णशाला में सुन्दरगात्री माया सीता को बिठा दिया और महाविष्णु की माया (सीता) तब जाकर अग्निमण्डल में बैठ गयी । ६२

मारीच-वध

मायामय कनकमृग को देखकर माया सीता ने श्रीरामचन्द्र जी से कहा— 'हे नाथ ! रत्न विभूषित कनकमृग को आप देखिए । वह विचित्र है ! वह विचित्र है ! उसे बिलकुल भय नहीं है, वह बिलकुल निकट आ जाता है । वह पालित मृग-सा जान पड़ता है । उसके साथ खेलने में बड़ा आनन्द आएगा । आप उसे मेरे लिए बुला ले आइये । लगता

सुखमुण्टितुन्नमुक्किकङ्ङु विळिच्चीटुक वरुमेन्नु तोन्नुन्नु नूनं; पिटिच्चु कोण्टिङ्ङु पोन्नीटुक वैकीटाते मटिच्चीटेरुतेतुं भर्त्तावे ! जगत्पते ! मैथिलि वाक्यं केट्टु राघवनरुळ् चेय्तु सोदरन् तन्नोटु नी कात्तुकोळ्ळुकवेणं सीतयेयवळ्क्कोरु भयवुमुण्टाकाते यातुधानन्मारुण्टु काननं तन्निलेङ्ङुं । एन्नरुळ् चेय्तु धनुर्बाण-ङ्ङळेट्टुत्तुटन् चेन्नितु मृगत्ते कैकोळ्ळुवान् जगन्नाथन्; अटुत्तु चेल्लुन्नेरं वेगत्तिलोटिक्कळञ्ञटुत्तु कूटायेन्नु तोन्नुम्पोळ् मन्द-मन्दं अटुत्तु वरुमप्पोळ् पिटिप्पान् भाविच्चीटुं पटुत्वमोटु दूरेक्कुतिच्चु चाटुमप्पोळ् । १० इङ्ङने तन्नेयोट्टु दूरत्तायतु-नेरमेङ्ङने पिटिक्कुन्नु वेगमुण्टितिनेट्टं— एन्नुरच्चाश विट्टु राघवनोरु शरं तन्नायितोट्टुत्तुटन् वलिच्चु विट्टीटिनान् । पोन्मानुमतु कोण्टु भूमियिल् वीणनेरं वन्मलपोलेयोरु राक्षसवेषं पूण्टान् । मारीचन् तन्नेयितु लक्ष्मणन् परञ्ञतु नेरन्नेयेन्नु रघुनाथनुं निरूपिच्चु । बाणमेट्टवनियिल् वीणप्पोळ् मारीचनुं प्राणवेदनयोटु करञ्ञानय्यो पापं— हा हा ! लक्ष्मण !

है, वह निश्चय ही पास आ जाएगा। हे स्वामी ! हे जगत के नाथ ! आप तुरन्त पकड़ ले आइएगा। आप इसमें लापरवाही मत दिखाइगा।' मैथिली के वचन सुनकर राम ने अपने भ्राता से कहा— 'तुम देखते रहो। कानन में इधर-उधर सब कहीं निशाचर लोग रहते हैं। सीता को कुछ भय न होने पाए, इसका ध्यान रखो।' यह आदेश देकर स्वर्ण-मृग को पकड़ ले आने के विचार से हाथ में धनुष-बाण ले जगत् के स्वामी आगे बढ़े। उसके निकट पहुँचते ही वह वेग से भाग उठता है और निकट न होने पर मंद-मंद चलकर निकट आ जाता है। किन्तु पकड़ लेने का विचार करते ही तुरन्त वह अतीव सामर्थ्य के साथ छलांग भरकर दूर चला जाता है। १० इस प्रकार उस मृग के कुछ दूर चले जाने पर, उसको कैसे पकड़ा जाए, वह बहुत तेज भाग जाता है, यह सोचकर तथा पकड़ लेने की अभिलाषा त्यागकर राम ने एक बाण चढ़ा-कर उसे खूब खींचकर मारा। बाण लगकर जब कनकमृग भूमि पर पतित हुआ तब उसने विशाल पर्वत सम राक्षस रूप अपनाया। राम ने मन में सोचा कि पहले लक्ष्मण का यह कथन कि वह मारीच ही है, सत्य निकला। बाण लगकर भूमि पर पड़ते ही मारीच मर्म पीड़ा से चिल्ला उठा—'हा पाप है ! हा हा लक्ष्मण ! मेरे भ्राता ! हे सहोदर ! हा हा ! मेरा विधि बल है। हे दयानिधि ! मेरी रक्षा करो।' यह आर्तवाणी

ममभ्रातावे ! सहोदर ! हा हा ! मेविधिबलं पाहिमां दया-
निधे ! आतुर नादं केट्टु लक्ष्मणनोटु चॊन्नाळ् सीतयुं
सौमित्रे ! नी चॆल्लुक वैकीटाते । अग्रजनुटॆ विलापङ्ङळ्
केट्टीले भवानुग्रन्माराय निशाचरन्मार् कॊल्लुं मुम्पे रक्षिच्चु
कॊळ्क चॆन्नु लक्ष्मण ! मटियाते रक्षोवीरन्मारिप्पोळ्
कॊल्लुमल्लॆङ्किलय्यो ! लक्ष्मणनतु केट्टु जानकियोटु चॊन्नान्
दुःखियाय्काय्यॆ देवी ! केळ्क्कणं मम वाक्यं । २० मारीचन्
तन्ने पॊन्मानाय् वन्नतवन् नल्ल चोरनॆत्रयुमेवं करञ्ञतवन् तन्ने;
अन्धनाय् ञानुमितु केट्टु पोयकलुम्पोळ् निन्तिरुवटियेयुङ्कॊण्टु
पोयीटामल्लो; पंक्तिकन्धरन् तनिक्कतिनुळ्ळुपायमितॆन्तरिया-
तॆयरुळ् चॆय्युन्नितत्रयल्ल, लोकवासिकळ्क्काक्कुं जयिच्चु
कूटायल्लो राघवन् तिरुवटि तन्नॆयॆन्तरियणं । आर्त्त नादवुं
मम ज्येष्ठनुण्टाकयिल्ल रात्रि चारिकळुटॆ माययितरिञ्ञालुं ।
विश्वनायकन् कोपिच्चीटिलरक्षणाल् विश्व संहारं चॆय्वान्
पोरुमॆन्नरिञ्ञालुं । अङ्ङनॆयुळ्ळ रामन् तन्मुखांबुजत्तिल्
निन्नॆङ्ङने दैन्यनादं भविच्चीटुन्नु नाथे ! जानकियतु केट्टु

सुनकर सीता ने लक्ष्मण से कहा—'हे सौमित्र, तुम अविलम्ब चले जाओ। क्या ज्येष्ठ भ्राता की पुकार नहीं सुन पा रहे हो ? हे लक्ष्मण ! भयंकर राक्षसों के हाथों मरने के पहले ही जाकर तुम राम की रक्षा करो। तुम विलम्ब मत करो। अन्यथा राक्षस वीर उन्हें अब मार डालेंगे।' यह सुनकर लक्ष्मण ने जानकी से कहा—'हे आर्ये ! हे देवी ! दुखी मत बनिए। आप मेरी बात सुनें। २० —मारीच ही कनक मृग बनकर आया है। वह बड़ा धूर्त एव मायावी है। वह पुकार उसी की है। यह सुन अंधाधुंध हो मेरे भी चले जाने पर दशानन आपको ले जा सकता है। यह उसी का उपाय है। यह न समझकर ही आप मुझे (जाने को) बता रही हैं। यही नहीं, यह आप स्पष्ट जान लीजिए कि कोई भी लोकवासी राम को जीत नहीं सकता। मेरे ज्येष्ठ भ्राता कभी आर्त-वाणी में नहीं पुकार उठेंगे। यह सब निशाचरों की माया है। आप यह समझ लीजिए कि क्रोध आने पर विश्वनायक (राम) में सारे संसार का तुरन्त संहार करने की अपार क्षमता है। हे स्वामिनी ! ऐसे राम के मुख-कमल से दीनवाणी कैसे निकल सकती है !' यह सुनकर अश्रुधारा प्रवाहित करती हुई तथा मन में उमड़े खेद और क्रोध को लेकर तब लक्ष्मण की ओर देखकर जानकी ने कहा—'निश्चय ही तुम भी राक्षस

कण्णुतीर तूकित्तूकि मानसे वळर्न्नोरु खेद कोपङ्ङ्ळोटुं लक्ष्मणन् तन्नै नोक्कि चौल्लिनाळतु नेरं रक्षो जातियिलल्ले नीयुमुण्टायि नूनं; भातृ नाशत्तिनल्ले कांक्षयाकुन्नु तव चेतसि दुष्टात्मावे ! ञानितोर्त्तीलयल्लो । ३० रामनाशाकांक्षित नाकिय भरतन्टे काम सिद्धयर्थमवन् तन्नुटे नियोगत्ताल् कूटेप्पोन्नितु नीयुं रामनु नाशं वन्नाल् गूढमायेन्नेयुं कौण्टङ्ङु चैल्लुवान् नूनं। ऍन्नुमे निन्नक्केन्नेक्किकट्टुकयिल्ल तानुमिन्नु- मल् प्राणत्यागं चेय्वन् ञानङ्ङिञ्ञालुं। चेतसि भार्य्याहरणोद्यत- नाय निन्नै स्सोदर बुद्धया धरिच्चील राघवनेतुं। रामनै- यौळिञ्ञुञान् मट्टोरु पुरुषनै रामपादङ्ङ्ळाण तीण्टुकयिल्लयल्लो। इत्तरं वाक्कु केट्टु सौमित्रि चेवि रण्टुं सत्वरं पौत्तिप्पुनरवळोटुर चेय्तान्— निनक्कु नाशमटुत्तिरिक्कुन्नितु पारमेनिक्कु निरूपिच्चाल् तटुत्तुकूटातानुं; इत्तरं चौल्लीटुवान् तोन्नियतेन्ते चण्डी: धिग्धिगत्यन्तं क्रूरचित्तं नारिकळक्केल्लां। वनदेवतमारे ! परिपालिच्चु कौळ्विन् मनुवंशाधीश्वर पत्नियै वळ्ळिपोले। देवियेट्टेवकळेब्भरमेल्पिच्चु मन्दं पूर्वजन् तन्नेक्काण्मान् नटन्नु सौमित्रियुं। ४० अन्तरं कण्टु दशकन्धरन् मदनबाणान्धनाय-

---

कुल में जन्मे हो। हे दुष्ट ! तुम्हारे मन में भ्रातृ-नाश की इच्छा है, यह मैंने नहीं सोचा था। ३० —राम-नाश की कांक्षा करनेवाले भरत के षड्यन्त्र पर उनकी इच्छा पूर्त्ति कराने के लिए तुम हमारे साथ चल पड़े थे। राम का नाश हो जाने पर गूढ़ भाव से मुझे ले चलने की निश्चय ही तुम सोच रहे हो। (लेकिन जान लो) तुम कभी मुझे प्राप्त नहीं कर पाओगे। तुम यह जान लो कि मैं आज ही अपना प्राण-त्याग करूँगी। सहोदर-बुद्धि के कारण राम ने तुम्हें अपनी पत्नी के अपहरण के लिए इच्छुक नहीं समझा। राम के चरणों की सौगन्ध है, राम के अतिरिक्त किसी पर-पुरुष का मैं स्पर्श नहीं करूँगी।' इस प्रकार के (कठोर) वचन सुन लक्ष्मण ने तुरन्त अपने कान बन्द करके उनसे कहा—'तुम्हारा नाश निकट आ गया है। कष्ट है, मैं उसे रोक नहीं सकता। हे दुष्टे ! ऐसे (कठोर) वचन बोलने की तुम्हें क्यों सूझी ? धिक्कार है, धिक्कार है ! नारियाँ हृदय से अत्यन्त क्रूर हैं। हे वन की देवियों ! मनुवंश के अधीश्वर की पत्नी की आप लोग भली प्रकार देखभाल करें।' (इस प्रकार) देवी को वनदेवियों के पास सुपुर्द करके सौमित्र अपने ज्येष्ठ भ्राता की खोज में चल पड़े। ४० —समय

वतरिच्चीटिनानवनियिल्; जटयुं वल्कलवुं धरिच्चु सन्यासियायुटजाङ्कणे वन्नु तिन्नितु दशास्यनुं। भिक्षुवेषत्तेप्पूण्ट रक्षोनाथनेक्कण्टु तल्क्षणं मायासीता देवियुं विनीतयाय् नत्वा संपूज्य भक्त्या फलमूलादिकळुं भुजिच्चु कौण्टित्तिरिन्नेरमिरुन्नीटुक तपोनिधे ! भर्त्तावुवरुमिप्पोळ् त्वल् प्रियमेल्लां चेय्युं क्षुत्तृडादियुं तीर्त्तु विश्रमिच्चालुं भवान्। इत्तरं मायादेवी मुग्धालापङ्ङ्ळ् केट्टु सत्वरं भिक्षुरूपि सस्मितं चोद्यं चेय्तान्— कमलविलोचने ! कमनीयांगि ! नीयारमले ! चोल्लीटुन्निन् कमितावारेन्नतुं ? निष्ठुर जातिकळां राक्षसरादियाय दुष्ट जन्तुक्कळुळ्ळ काननभूमि तन्निल् नीयोरु नारीमणि ताने वाळुन्नतेन्तीरायुधपाणिकळुमिल्लल्लो सहायमाय्। निन्नुटे परमार्थमीक्कवे परञ्ञाल् ञानेन्नुटे परमार्थं पऱ्युन्नुण्टु तानुं। ५० मेदिनी सुतयतु केट्टुर चेय्तीटिनाळ् मेदिनीपति वरनामयोद्ध्याधिपति वाट्टमिल्लात दशरथनां नृपाधिप ज्येष्ठ नन्दननाय रामनत्भुत वीर्य्यन्, तन्नुटे धर्मपत्नि

को अनुकूल देखकर दशकंठ मदनबाण से अन्धा हो वहाँ उपस्थित हुआ। जटा-वल्कलधारी संन्यासी के वेश में दशास्य उटज के आँगन में आ खड़ा हुआ। भिक्षुवेष में उपस्थित राक्षसराज को देखकर तुरन्त मायासीता ने अत्यन्त विनीत, पूज्य एवं भक्तिभाव से उसे प्रणाम किया और बताया—हे तपोनिधि ! फल-मूल आदि खाते हुए थोड़ी देर बैठिए। मेरे स्वामी अभी तुरन्त आ जायेंगे। वे आपकी अभिलाषाएँ पूर्ण करेंगे। (तब तक) आप भूख-प्यास मिटाकर थोड़ा विश्राम लीजिए। मायादेवी के इस प्रकार के मधुर अलाप सुनकर भिक्षु वेषधारी ने तुरन्त सस्मित प्रश्न किया—हे कमललोचने ! हे कमनीयांगी ! हे निर्मल चरित्रवाली ! तुम यह बताओ कि तुम्हारे कामुक कौन हैं ? और तुम कौन हो ? निष्ठुर स्वभाव वाले, दुष्ट राक्षसों से भरे इस कानन में तुम नारीरत्न अकेले कैसे रहती हो ? तुम्हारी सहायता करने के लिए कोई शस्त्रधारी भी साथ नहीं है। तुम अपना पूरा रहस्य मुझे बता दोगी तो मैं भी अपना वास्तविक परिचय तुम्हें दूँगा। ५० —मेदिनीसुता ने यह सुनकर बताया—मेदिनी पतियों (राजाओं) में श्रेष्ठ अयोध्यापति निर्मल स्वभाववाले महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र अद्भुत पराक्रमशाली राम की धर्मपत्नी मैं जनकात्मजा हूँ। मेरे अनुज (देवर) लक्ष्मण हैं, जो बड़े धन्य व्यक्ति हैं। हम तीनों पिता की आज्ञा से

जनकात्मज ञानो धन्यनामनुजनुं लक्ष्मणनॆन्नु नामं; ञङ्ङळ् मूवरुं पितुराज्ञया तपस्सिनायिङ्ङु वन्निरिक्कुन्नु दण्डक वनं तन्निल् । पतिन्नालाण्टु कळिवोळवुं वेणं तानुमतिनु पार्त्ती-टुन्नु सत्यमॆन्नरिञ्ञालुं । निन्तिरुवटियॆ ञानरिञ्ञीलेतुं पुनरॆन्तिनायॆळुन्नळ्ळिळ चॊल्लणं परमार्त्थं । ऎङ्किलो केट्टालुं नी मंगलशीले ! बाले ! पङ्कजविलोचने ! पञ्चबाणाधि-वासे ! पौलस्त्य तनयनां राक्षस राजावु ञान् त्रैलोक्य-त्तिङ्कलॆन्नॆयारऱियातॆयुळ्ळू । निर्म्मले ! काम परितप्तनायच्च-मञ्ञु ञान् निन्मूलमतिनु नी पोरणं मयासाकं । लङ्कयां राज्यं वानोर्नाट्टिलुं मनोहरं किङ्करनायेन् तव लोकसुन्दरी नाथे ! ६० तापस वेषं पूण्ट रामनालॆन्तु फलं तापमुळ्क्कॊण्टु काट्टिलिङ्ङने वसिक्केण्टा; शरणागत नायोरॆन्नॆ नी भजिच्चालु-मरुणाधरी ! महाभोगङ्ङळ् भुजिच्चालुं । रावण वाक्यमेवं केट्टतिभयत्तोटुं भाव वैवर्ण्यं पूण्टु जानकि चॊन्नाळ् मन्दं— केवल मट्टत्तितुं मरणं निनक्किप्पोळेवं नी चॊल्लुन्नाकिल् श्रीरामदेवन् तन्नालु, सोदरनोटुं कूटि वेगत्तिल् वरुमिप्पोळ् मेदिनीपति

तपस्या करने के लिए दण्डक वन में आये हुए हैं। हमें चौदह वर्ष (वन में) बिताने हैं, इसलिए यहाँ रहते आ रहे हैं। (मेरी) यह बात सत्य मानिये। मैंने आपको नहीं पहचाना। कृपया यह बता दें कि आप कौन हैं और किसलिए (यहाँ) पधारे हैं? सही बात समझाने की कृपा कीजिएगा। (रावण ने कहा)—तो सुनो। 'हे मंगलशीले! हे बाले! हे पंकजविलोचने! हे कामलोलुपे! मैं पुलस्त्य पुत्र राक्षसराजा हूँ। त्रिलोक में कौन ऐसा है, जो मुझे न जानता हो? हे निर्मले! मैं तुम्हारे कारण काम परितप्त हो गया हूँ, इसलिए तुम मेरे साथ आ जाओ। हे लोकसुन्दरी! हे स्वामिनी! (मेरी) लंकानगरी देवलोक से भी सुन्दर है और मैं तुम्हारा दास हूँ। ६० —तापस वेषधारी राम से तुम्हारा क्या प्रयोजन है? तुम तापयुक्त हो इस प्रकार वन में वास मत करो। हे अरुण अधरवाली! शरण में आगत मेरी तुम सेवा करो और सब प्रकार के महासुख भोग लो।' रावण के इस कथन को सुनकर अत्यन्त भयभीत हो तथा वैवर्ण्य के साथ जानकी ने धीरे से कहा—ऐसी बात करोगे तो राम के हाथों तुम्हारी मृत्यु निश्चित है। पृथ्वी के स्वामी मेरे प्रियतम श्रीरामचन्द्र अपने भ्राता के साथ जल्दी ही आनेवाले हैं। हे मूर्ख! तुम (ऐसी) व्यर्थ की बात मत कहो। क्या सिंह पत्नी

ममभर्त्ता श्रीरामचन्द्रन्। तोट्टु कूटुमो हरिपत्नियै शशत्तिनु कष्टमायुळ्ळ वाक्कु चॊल्लातॆ मूढात्मावे ! रामबाणङ्ङळ् कॊण्टु मारिटं पिळर्न्नु नी भूमियिल् वीळ्वानुळ्ळ कारणमितु नूनं। इङ्ङनॆ सीतावाक्यं केट्टु रावणनेटं तिङ्ङीटुं क्रोधं पूण्टु मूर्च्छितनायन्नेरं। तन्नुटॆ रूपं नेरे काट्टिनान् महागिरि सन्निभं दशाननं विंशति महाभुजं, अञ्जनशैलाकारं काणायन्नेरमुळ्ळिळ-लञ्जसाभयप्पॆट्टु वनदेवतमारुं। ७० राघव पत्नियेयुं तेरतिलॆट्टुत्तु-वच्चाकाश मार्ग्गे शीघ्रं पोयितुदशास्यनुं। हा हा ! राघव ! राम ! सौमित्रे ! कारुण्याब्धे ! हा हा ! मल् प्राणेश्वरा ! पाहिमां भयातुरां। इत्तरं सीताविलापं केट्टु पक्षीन्द्रनां सत्वरमुत्थानं चॆय्तॆत्तिनान् जटायुवुं। तिष्ठतिष्ठाग्रे मम स्वा-मितन् पत्नियेयुं कट्टुकॊण्टॆविटेक्कु पोकुन्नु मूढात्मावे ! अद्ध्वर-त्तिङ्कल्च्चॆन्नु शुनकन् मन्त्रं कॊण्टु शुद्धमां पुरोडाशं कॊण्टु पोकुन्न पोलॆ। पद्धति मद्ध्ये परमोद्धत बुद्धियोटुं गृद्ध्र राजनुमॊरु पत्रवानायुळ्ळॊरु कुद्ध्र राजनॆप्पोलॆ बद्धवैरत्तोटति क्रुद्धनायग्रे चॆन्नु युद्धवुं तुटङ्ङिनान्; अब्धियुं पत्रानिल क्षुब्धमाय्च्च-मयुन्नितद्रिकळिळकुन्नु विद्रुतमतु नेरं। काल्नखङ्ङळॆक्कॊण्टु

(सिंहनी) को शशक छू भी सकता है ? इस कारण रामबाण से छाती विदीर्ण हो तुम भूमि पर लोटने लगोगे।' इस प्रकार के सीता के परुष वचन सुनकर अत्यन्त क्रोधाकुल रावण मूर्छित हो उठा। तब रावण ने महापर्वत सम दस सिर, बीस भुजाओं, अंजनशैल सम आकार वाला अपना वास्तविक रूप प्रकट किया, जिसे देख वनदेवियाँ भी मन ही मन भयविह्वल हो गयीं। ७० राम-पत्नी को उठा रथ में बिठाकर दशास्य शीघ्र ही आकाश मार्ग से चला गया। 'हा हा राघव ! राम ! सौमित्र ! करुणामूर्त्ति ! हा हा मेरे प्राणेश्वर ! मेरी रक्षा करो'—इस प्रकार भयातुर सीता का विलाप सुनकर पक्षीन्द्र जटायु तुरन्त उड़कर (रथ के समीप) आ पहुँचा और (वह डाँटने लगा)–हे मूर्ख ! ठहर जा, ठहर जा। मेरे स्वामी की पत्नी को चुराकर कहाँ ले जा रहा है ? जैसे शुनक घर के भीतर घुस चालाकी से पुरोडास को ले भागता है ? बीच मार्ग में स्वाभिमानी गिद्धराज ने पंखयुक्त पर्वतराज के समान रोषाकुल हो सामने आ युद्ध छेड़ लिया। (यह देख) अब्धि, वायु सब क्षुब्ध हो उठे, उस समय पर्वत तक कम्पित हो उठे। (जटायु ने) अपने भयंकर नखों से (रावण के) चाप तोड़ दिये और उसके मुखों को नोच-

चापङ्ङळ् पोटिपेट्टुत्तानङ्ङळु कीऴिमुऴिञ्ञुवशंकेट्टु। तीक्ष्ण तुण्डाग्र कोण्टु तेत्तंट तर्क्कत्तु काल्क्षणं कोण्टु कोन्नु वीऴ्त्तिनानश्वङ्ङळे। ८० रूक्षत पेरुकिय पक्षपातङ्ङळेट्टु राक्षस प्रवरनु चञ्चलमुण्टाय् वन्नु। यात्रयुं मुटङ्ङि मल् कीर्त्तियुमोट्टुङ्ङीतेन्नार्त्ति पूण्टुळ्ळोरु रात्रि चारीन्द्रनप्पोळ् धात्रीपुत्रियेत्तत्र धात्रियिल् न्निर्त्तिप्पुनरोर्त्तु तन् चन्द्रहासमिळक्कि लघुतरं; पक्षिनायकनुटे पक्षङ्ङळ् छेदिच्चप्पोळ् अक्षिति तन्निल् वीणानक्षमनायिट्टवन्। रक्षो नायकन् पिन्ने लक्ष्मी देवियेयुं कोण्टक्षत चित्तत्तोटुं दक्षिणदिक्कुन्नोक्कि मट्टोरु तेरिलेऴित्तेट्टेन्नु न्नटकोण्टान् मट्टारुं पालिप्पानिल्लुट्वरायिट्टेन्नोर्त्तिट्टु वीणीटुन्न कण्णु न्नीरोटुमप्पोळ् कट्वारकुळलियां जानकिदेवितानुं, भर्त्तावु तन्नेक्कण्टु वृत्तान्तं पऱञ्ञोळ्ळ्ञुत्तमनाय न्निन्टे जीवनुं पोकायकेन्नु पृथ्वीपुत्रियुं वरं पत्रिराजनु न्नल्कि पृथ्वीमण्डलमकत्ताशु मेल्पोट्टु पोयाळ्। अय्यो! राघव! जगन्नायक! दयानिधे! न्नायेन्नेयुपेक्षिच्चतेन्तु कारणं? नाथ! ९० रक्षो नायकनेन्नेक्कोण्टिता पोयीटुन्नु रक्षितावायिट्टारुमिल्लेनिक्कय्यो! पापं! लक्ष्मणा! न्निन्नोटु ञान् परुषं चोन्नेनल्लो रक्षिच्चु कोळ्ळेणमे देवर! दयानिधे!

नोचकर विदीर्ण कर दिया। अपने तीक्ष्ण चोंचों से रथ को तहस-नहस कर दिया और पल भर में घोड़ों को भी मार गिराया। ८० —अत्यन्त भयंकर पक्ष-प्रहारों को सह-सहकर राक्षसप्रवर हताश हो उठा। 'यात्रा में विघ्न पड़ा, और मेरे यश को भी बट्टा लगेगा', इस प्रकार सोचकर आकुल निशाचर ने पृथ्वीपुत्री को वहीं पृथ्वी पर खड़ा करके, थोड़ी देर के सोच-विचार के उपरान्त अपना चन्द्रहास उठाकर पक्षीश्रेष्ठ के पक्ष काट डाले तो दुखार्त एवं लाचार हो जटायु पृथ्वी पर गिर पड़ा। राक्षसराजा लक्ष्मीदेवी को दूसरे रथ पर बिठाकर तुरन्त ही दक्षिण दिशा को केन्द्रित करके तीव्रगति से भाग चला। अब रक्षा करने के लिए अपना कोई प्रियजन नहीं है, यह सोचकर मनोहरी सीता ने अश्रु-स्निग्ध नयनों से पक्षीन्द्र को यह वर दिया कि स्वामी से मिल समाचार कह सुनाने के उपरान्त ही उत्तम स्वभाववाले तुम्हारे प्राण निकलेंगे। पृथ्वीपुत्री पक्षिराज को यह वर देकर पृथ्वी मण्डल से बहुत दूर ऊपर (रथ में) में चली गयी। 'हे नाथ! हाय! हे राघव! हे जगत के स्वामी, हे दयानिधि! आपने मुझे क्यों अनाथ छोड़ दिया? ९०

राम रामात्मा राम ! लोकाभिराम ! राम ! भूमि देवियु-मेन्ने वैटिञ्ञाळितु कालं। प्राणवल्लभा ! परित्राहिमां जगत्पते ! कौणपाधिपनेन्नेक्कोन्नु भक्षिक्कुं मुम्पे सत्वरं वन्नु परिपालिच्चु कोळ्ळेणमे सत्वचेतसा महासत्ववारिधे ! नाथ ! इत्तरं विलापिक्कुं नेरत्तु शीघ्रं रामभद्रनिङ्ङेत्तु-मेन्न शङ्कया नक्तञ्चरन् चित्तवेगेन नटन्नीटिनानतु नेरं पृथ्वीपुत्रियुं कोळ्प्पोट्टाशु नोक्कुन्न नेरं, अद्रिनाथाग्रे कण्टु पञ्चवानरन्मारे विद्रुतं विभूषण संचयमळिच्चुतन्नुत्तरीयार्द्ध-खंडं कोण्टु बन्धिप्पु रामभद्रनु काण्मान् योगं वरिकेन्नक-तारिल् स्मृत्वा कोळ्प्पोट्टु निक्षेप्पिच्चितु सीतादेवि मत्तनां नक्तञ्चरनरिञ्ञीलतुमप्पोळ्। १०० अब्धियुमुत्तीर्य्यतन् पत्तनं गत्वा तूर्ण्णं शुद्धान्तमद्ध्ये महाशोककाननदेशे शुद्धभूतले महाशिशपा तरुमूले हृद्यमाराय निज रक्षोनारिकळेयुं नित्यवुं पालिच्चु कोळ्केन्नुरप्पिच्चु तन्टे वस्त्यमुळ्प्पुक्कु वसिच्चीटि-नान् दशाननन्। उत्तमोत्तमयाय जानकीदेवि पातिव्रत्यमाश्रित्य

—राक्षसराजा मुझे ले भागता जा रहा है, मेरी रक्षा करनेवाला कोई नहीं। खेद की बात है। हे लक्ष्मण ! हे देवर ! हे दयानिधि ! मैंने तुमसे परुष वचन कहे (जो मुझे नहीं कहने चाहिए थे), तुम मेरी रक्षा करो। हे राम, राम, राम ! हे लोकाभिराम राम ! इस समय भूमि-देवी ने भी मेरा परित्यागकर दिया है ! हे प्राणप्रिय !, हे जगत् के स्वामी ! मेरी रक्षा करें। हे अन्तर्यामी ! हे महासत्ववारिधे ! हे स्वामी, राक्षसराजा मुझे खा ले, उससे पहले ही आकर मेरा उद्धार करें।' जब राक्षसराजा तीव्रगति से रथ ले चल रहा था, तब विलाप करती सीता ने रामभद्र शीघ्र ही यहाँ पहुँच जाएँगे इस कल्पना से नीचे की ओर झुककर देखा तो पर्वतश्रेष्ठ के ऊपर पाँच वानर दिखाई दिये। तुरन्त ही अपने सारे आभूषणों को उतारकर उन्हें अपने उत्तरीय के आधे हिस्से में बाँध लिया और उसे रामचन्द्र जी को देखने का अव-सर प्राप्त होगा, यह सोच नीचे की ओर डाल दिया। यह बात उन्मत्त राक्षस को विदित नहीं हुई। १०० —सागर पारकर अपनी पुरी में शीघ्र पहुँचकर (रावण ने) अन्तःपुर वासिनी राक्षस नारियों की देखभाल में सीता को अशोक कानन में महाशिशपा वृक्ष के नीचे शुद्ध भूतल पर बिठा दिया और दशानन अपने वासस्थान को चला गया। उत्तम चरित्रवाली जानकीदेवी ने पातिव्रत्य का अनुसरण करते

वसिच्चीटिनाळतु कालं । वस्त्र केशादिकळुमेन्नयुं मलिन-माय् वक्त्रवुं कुम्पिट्टु सन्तप्तमां चित्तत्तोटुं, राम रामेति जपध्याननिष्ठया बहुयामिनीचर कुल नारिकळुटे मद्ध्ये नीहार शीतातप वात पीडयुं सहिच्चाहारादिकळेतुं कूटाते दिवारात्रं लङ्कयिल् वसिच्चितातङ्कमुळ्क्कोण्टु माया सङ्कटं मनुष्य जन्मत्तिङ्कलार्क्किकल्लात्तू । १०८

सीतान्वेषणं

रामनुं मायामृग वेषत्तेक्कैक्कोण्टोरु कामरूपिणं मारीचा-सुरनेय्तु कोन्नु । वेगेन नटकोण्टानाश्रमं नोक्किप्पुनरा-गमक्कातलाय राघवन् तिरुवटि । नालञ्चु शरप्पाटु नटन्नोरनन्तरं बालकन् वरवीषदूरवे काणाय्वन्नु । लक्ष्मणन् वरुन्नतु कण्टु राघवन् तानुमुळ्क्काम्पिल् निरूपिच्चु कल्पिच्चु करणीयं । लक्ष्मणनेतुमरिञ्ञीलल्लो परमार्त्थमिक्कालमिवनेयुं वञ्चिक्कॆन्नतेवरू । रक्षोनायकन् कोण्टु पोयतु मायासीता लक्ष्मीदेवियेयुण्टो मट्टाक्कुं लभिक्कुन्नु । अग्निमण्डलतिङ्कल्

हुए अपना समय बिताया। अत्यधिक मलिन वस्त्र एवं बिखरे बालों से युक्त जानकी अपना संतप्त चित्त लेकर नतमुख 'राम राम' का जप ध्यान करती, असंख्य राक्षस नारियों के बीच में शीत, आतप, वात पीड़ाएँ सहती हुई, लंकापुरी में निराहार व्रत का पालन करती हुई दुःख से दिन-रात बिताने लगी। (कवि का कथन है) जन्म लेने पर मायात्मक संकटों से कौन बच सकता है! १०८

सीतान्वेषण

मायावश सुन्दर मृग का वेष धारणकर आये मारीच का वध करके आगम ग्रंथों के लिए आधारस्वरूप भगवान राम आश्रम के मार्ग पर चल पड़े। तीन-चार कदम चलने पर कुमार (लक्ष्मण) को अपनी ओर आते हुए देखा। लक्ष्मण को सामने से आते देख राम ने आगे जो करना है, उसका मन में निश्चय कर लिया। (राम सोचने लगे) लक्ष्मण को सत्य बात बिलकुल अविदित है, इस समय उसे भी भ्रम में रखना ही पड़ेगा। रावण तो केवल मायासीता को ले गया, साक्षात् लक्ष्मी-देवी को क्या कोई अन्य पा सकता है? अग्निमंडलस्थ सीता की जानकारी अगर लक्ष्मण को प्राप्त हो तो (वन में आने का मेरा उद्देश्य) यह कार्य पूरा नहीं होगा। अतः प्राकृतजन के समान मुझे विरहार्त

वाळुन्न सीततन्नें लक्ष्मणनद्रिञ्ञालिक्काय्र्यवुं वन्नुकूटा; दुःखिच्चु कौळळू ञानुं प्रकृतनेन्नपोले मैक्कण्णि तन्नेत्तिरञ्ञाशु पोय्-च्चेल्लामल्लो— रक्षोनायकनुटे राज्यत्तिलेन्नाल्प्पिन्ने तल्क्कुल-त्तोटुं कूटे रावणन् तन्नेक्कोन्नाल् । अग्निमण्डले वाळुं सीतयेस्सत्य व्याजाल् कैक्कोण्टु पोकामयोद्ध्यक्कु वैकातेपिन्ने । १० अक्षत धर्म्ममोटु राज्यत्ते वळिपोले रक्षिच्चु किञ्चिल्क्कालं भूमियिल् वसिच्चीटां । पुष्करोत्भवनित्थं प्रार्त्थिक्क निमित्त-मायर्क्क वंशत्तिङ्कल् ञान् मर्त्यनाय्प्पिरन्नतुं; माया मानुष-नाकुमेन्नुटे चरितवुं मायावैभवङ्ङळुं केळ्क्कयुं चोल्कयुं भक्तिमार्ग्गेणचेय्युं मर्त्त्यनप्रयासेन मुक्तियुं सिद्धिच्चीटुमिल्ल संशयमेतुं । आकयालिवनेयुं वञ्चिच्चु दुःखिप्पू ञान् प्राकृत पुरुषनेप्पोलेन्नकतारिल् निर्ण्णयिच्चवरजन्नोटरुळ् चेय्तीटिनान् पर्ण्णशालयिल् सीतय्क्कारोरु तुणयुळ्ळू ? ऎन्तिनिङ्ङोट्टु पोन्नु जानकि तन्नेब्बलालेन्तिनु वेटिञ्ञु नीराक्षसरवळेयुं कोण्टुपोकयो कोन्नु भक्षिच्चु कळकयो कण्टकजातिकळ्क्के-न्तोन्नरुतात्ततोर्त्तालु् । अग्रजवाक्यमेवं केट्टु लक्ष्मणन् तानुमग्रे-निन्नुटन् तोळुतु विवशनाय् गद्गदाक्षरमुरचेय्तितु देवियुटे दुर्ग्रह वचनङ्ङळ् बाष्पवुं तूकित्तूकि । २० हा हा ! लक्ष्मण !

होना पड़ेगा और सुन्दरी की खोज में भटकना ही होगा। (इस प्रकार) राक्षस-नेता के राज्य में पहुँच जाने पर वंशसहित रावण का वध करके अग्निमण्डल में विराजमान सीता को ग्रहणकर फिर अविलंब अयोध्या में जा सकूँगा। १० —अक्षत धर्म को अपनाकर राज्य का परिपालन करते हुए कुछ समय तक भूमि में वास करूँगा। पुष्करोद्भव (ब्रह्मा) की प्रार्थना पर अर्क (सूर्य) वंश में मनुष्य रूप में मेरा जन्म, माया मानव रूप में मेरा चरित और मेरी माया का वैभव—ये सब भक्ति से बोलने-सुननेवाले मनुष्य को सहज ही मुक्ति सिद्ध होगी, यह निश्चित बात है। इसलिए इन्हें (लक्ष्मण को) भी माया के भ्रम में डालकर मैं साधारण मनुष्य के समान दुःख का बहाना करूँगा—यह मन में दृढ़ संकल्प लेकर (राम ने) अनुज से पूछा—'पर्णकुटी में सीता के लिए कौन सहारा है? उसे बलात् छोड़कर तुम यहाँ क्यों आये हो? क्या पता राक्षस लोग उन्हें ले गये या खा गये; दुष्टजाति के लोग क्या नहीं करेंगे? अग्रज की वाणी सुनकर उनके सम्मुख हाथ जोड़कर तथा विवश (लक्ष्मण ने) गद्गद वाणी में आँसू बहाते हुए देवी के कठोर

परित्राहि सौमित्रे ! शीघ्रं हा हा ! राक्षसनेन्ने निग्रहिच्ची-
ट्टुमिप्पोळ्— इत्तरं नक्तञ्चरन् तन् विलापङ्ङळ् केट्टु
मुग्धगात्रियुं तव नादमेन्नुऱय्क्कयाल् अत्यर्थं परितापं कैक्कोण्टु
विलपिच्चु सत्वरं चेन्नु रक्षिक्केन्नेन्नोटरुळ् चेय्ताळ् । इत्तरं
नादं मम भ्राताविनुण्टाय्वरा चित्तमोहवुं वेण्टा सत्यमेन्न-
ऱिञ्ञालुं; राक्षसनुटे मायाभाषितमितु नूनं काल्क्षणं पोरुक्केन्नु
ञान् पलवुरु चोन्नेन् । ऐन्नतु केट्टु देविपिन्नेयुमुरचेय्ताळेन्नोटु
पलतरमिन्नवयेल्लामिप्पोळ् निन् तिरुमुम्पिल् निन्नु चोल्लुवान्
पणियेन्नाल् सन्तापत्तोटु ञानुं कर्णङ्ङळ् पोत्तिक्कोण्टु
चिन्तिच्चु देवकळे प्रार्त्थिच्चु रक्षार्त्थमाय् निन्तिरुमलरटि
वन्दिप्पान् विटकोण्टेन् । ऐङ्किलुं पिळच्चितु पोन्नतु सौमित्रे !
नी शङ्कयुण्टायीटामो दुर्वचनङ्ङळ् केट्टाल् ? योषमारुटे
वाक्कुकळ् सत्यमेन्नोर्क्कुन्नवन् भोषनेत्रयुमेन्नु नीयऱियुन्न-
तिल्ले ? ३० रक्षसां परिषकळ् कोण्टुपोय्क्कळकयो भक्षिच्चु
कळकयो चेय्ततेन्नऱिञ्ञील । इङ्ङन निनच्चुटजान्तर्भा-
गत्तिङ्कल्च्चेन्नेङ्ङुमे नोक्किक्काणाञ्ञाकुलप्पेट्टु रामन् ।

वचन कह सुनाये । २० —'हा हा लक्ष्मण !, परित्राहि सौमित्रे ! शीघ्र आओ हा हा ! राक्षस मुझे जल्दी ही मार डालेगा', ऐसे राक्षस के शब्दों को आपके शब्द मानकर अत्यन्त परितापपूर्ण वाणी में विलाप करती हुई मुग्धगात्री ने मुझसे आग्रह किया कि मैं तुरन्त आपकी रक्षा करने निकल पड़ूँ । मैंने कई बार उन्हें समझाया कि ऐसी कातर वाणी मेरे भ्राता की नहीं हो सकती । आप मोहग्रस्त मत होइये । आप इसे सत्य ही राक्षस का मायाभाषित जान लीजिये । आप पल भर के लिए साहस कर बैठिए । मेरी ये बातें सुनकर देवी ने मुझे कई प्रकार के भले-बुरे शब्द सुनाये, जो आपके सामने प्रकट करने में मैं अत्यन्त अस-मर्थ हूँ । अत्यन्त खेदपूर्वक कान बन्दकर तथा उनकी रक्षा के लिए देवताओं की वन्दना और प्रार्थनाकर आपके चरणों पर प्रणाम करने हेतु मैं निकल आया हूँ ।' (यह सुनकर राम ने बताया कि) हे सौमित्र ! फिर भी तुमने उन्हें अकेली छोड़कर बड़ी भूल की । दुर्वचन सुनकर भी क्या कोई हताश हो सकता है ? क्या तुम्हें मालूम नहीं कि स्त्रियों के वचनों को सत्य समझनेवाले महामूर्ख होते हैं ? ३० —पता नहीं दुष्ट राक्षस उन्हें खा गये या उठा ले गये । यह कहकर उटज के भीतर जाकर राम ने (सीता की) खोज की और कहीं न पाकर राम

दुःख भाववुं कैक्कोण्टेन्नेयुं विलपिच्चान् निष्कळनात्मारामन् निर्ग्गुणनात्मानन्दन्— हा हा ! वल्लभे ! सीते ! हा हा ! मैथिलीनाथे ! हा हा जानकीदेवी ! हा हा मल् प्राणेश्वरी ! ऍन्ने मोहिप्पिप्पतिन्नाय् मऽञ्ञिरिक्कयो ? धन्ये नी वेळिच्चत्तु वन्नीटुमटियाते । इत्तरं पऽकयुं काननं तोरुं नटन्नत्तल् पूण्टन्वेषिच्चुं काणाञ्ञुविवशनाय् । वनदेवतमारे ! निङ्ङळुमुण्टो कण्टु वनजेक्षणयाय सीतये ? सत्यं चौल्विन् । मृग सञ्चयङ्ङळे ! निङ्ङळुमुण्टो कण्टु मृगलोचनयाय जनकपुत्रितन्ने ? पक्षि सञ्चयङ्ङळे ! निङ्ङळुमुण्टो कण्टु ? पक्ष्मळाक्षियें मम चौल्लुविन् परमार्त्थं । वृक्ष वृन्दमे ! परञ्ञीटिन् परमार्त्थं पुष्कराक्षियेनिङ्ङळेङ्ङानमुण्टो कण्टु ? ४० इत्थमोरोन्ने पऽञ्ञेत्रयुं दुःखं पूण्टु सत्वरं नीळेत्तिरञ्ञेङ्ङुमे कण्टीलल्लो । सर्व दृक् सर्वेश्वरन् सर्वज्ञन् सर्वात्मावां सर्वकारणनेकनचलन् परिपूर्णन् निर्म्मलन् निराकारन् निरहङ्कारन् नित्यन् चिन्मयनखण्डानन्दात्मकन् जगन्मयन्, मायया मनुष्य भावेन दुःखिच्चीटिनान् मायामानुषन् मूढात्मावक्कळेयोप्पिप्पानाय् । तत्त्वज्ञन्मावर्कुं सुख दुःख भेदङ्ङळोन्नुं चित्ते तोन्नुकयुमिल्लज्ञानमिल्लायकयाल् । ४५

व्याकुल हो उठे । निष्कल स्वरूप, निर्गुण और आत्मानन्द राम दुखभाव अपनाकर विलाप करते गये—"हा हा ! वल्लभे ! सीते ! हा हा मैथिली ! हे स्वामिनी ! हा हा देवी जानकी ! हा हा ! मेरी प्राणेश्वरी ! क्या मुझे मोहित करने के लिए तुम छिप बैठी ? हे धन्ये ! तुम प्रकट में आ जाओ ।" यह कहते हुए दुखार्त हो कानन-कानन में उनकी खोज करते गये । कहीं न पाकर अत्यन्त विवश हो वे पूछने लगे—"वन के देवताओं, आपने क्या पद्मलोचना को कहीं देखा ? सत्य बताइए । हे मृगसंचय ! क्या तुम लोगों ने मृगलोचना जनकपुत्री को देखा ? हे पक्षियो ! तुमने मेरी पक्ष्मलाक्षी को देखा ? तुम सही बताओ । हे वृक्ष समूह ! सही बोलो, तुमने कहीं पुष्कराक्षी को देखा ?" ४० —इस प्रकार प्रलाप करते हुए अत्यन्त खिन्न हो सब कहीं (सीता को) ढूँढा, किन्तु कहीं नहीं मिलीं । सर्वद्रष्टा, सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, सर्वात्मा, सर्वकारणभूत, निस्संग, अचंचल, परिपूर्ण, निर्मल, निराकार, निरहंकारी, नित्य स्वरूप, चिन्मय, अखण्ड, आनन्दस्वरूप, जगन्मय भगवान मूर्ख लोगों को धोखा देने के लिए माया-मानव बनकर अपनी माया के वश में पड़

जटायुगति

श्रीरामदेवनेवं तिरञ्ञु नटक्कुम्पोळ् तेरळिञ्ञुटञ्ञु वीणा-कुलमटवियिल् शस्त्र चापङ्ङळोटुं कूटवे किटक्कुन्नतंत्रयुमटुत्तु काणायितु मद्ध्ये मार्ग्गं। अन्नेरं सौमित्रियोटरुळिच्चेय्तु रामन् भिन्नमायौरु रथं काणेंटोकुमारा ! नी। तन्वंगि तन्नेयौरु राक्षसन् कौण्टु पोम्पोळ अन्य राक्षसनवनोटु पोर्चेय्तीटिनान्। अन्नेर-मळिञ्ञतेक्कोप्पिता किटक्कुन्नु अन्नु वन्नीटामवर् कौन्नारो भक्षिच्चारो। श्रीरामनेवं पऱञ्ञित्तिरि नटक्कुम्पोळ् घोर-मायौरु रूपं काणायि भयानकं। जानकि तन्नेत्तिन्नु तृप्तनायौरु यातुधाननिक्किटक्कुन्नतत्र नी कण्टीलयो ? कौल्लुवनिवने ञान् वैकाते बाणङ्ङळुं विल्लुमिङ्ङाशु तन्नीटेन्नतु केट्ट नेरं, वित्रस्त हृदयनाय् पक्षिराजनुं चौन्नान् वध्यनल्लहं तव भक्त-नायौरुदासन्। मित्रमेत्रयुं तव तातनु विशेषिच्चुं स्निग्ध-नयिरिप्पौरु पक्षियां जटायु ञान्। १० दुष्टनां दशमुखन् निन्नुटे पत्नि तन्नेक्कट्टु कौण्टाकाशे पोकुन्नेरमडिञ्ञु ञान्

मनुष्य भाव को अपनाकर दुखित होते हैं। अज्ञानरहित तत्त्वज्ञ लोग अपने चित्त में सुख-दु:ख आदि भावभेदों का अनुभव नहीं करते। ४५

जटायु की परम गति

इस प्रकार (सीता को) खोजते भटकते समय मार्ग में श्रीराम ने छिन्न-भिन्न हो पड़ा रथ और उसके पास पड़े शस्त्र, चाप आदि देखे। तब राम ने लक्ष्मण को बुलाकर दिखाया—'कुमार, तुम टूटे हुए रथ को देखो। (लगता है) जब एक राक्षस तन्वंगी को उठा ले जा रहा था तब दूसरा राक्षस उस पर टूट पड़ा। तब छिन्न हुए रथ के पुर्जे यहाँ अब दिखाई दे रहे है। पता नहीं उन लोगों ने (सीता को) अपना भोजन बनाया या मार डाला। इस प्रकार कहकर थोड़ी दूर चलने पर राम ने एक घोर एवं भयानक रूप देखा (और लक्ष्मण से कहा), जानकी को खाकर संतृप्त पड़े उस राक्षस को क्या तुम देख रहे हो ? आज मैं उसे समाप्त कर दूंगा। तुम तुरन्त ही धनुष-बाण दे दो। यह सुनते ही अत्यन्त संत्रस्त हो पक्षिराज ने बताया कि मैं वध्य नहीं, आपका भक्त एक दास हूँ। विशेषकर आपके पिता का मित्र हूँ और रक्त में भीगा मैं पक्षी जटायु हूँ। १० —जब दुष्ट राक्षस रावण आपकी

पेट्टॆन्नु चेन्नु तट्टुत्तवनॊ युद्धं चेय्तु मुट्टिच्चु तेरुं विल्लुं पॊट्टिच्चु कळञ्ञप्पोळ्, वॆट्टिनान् चन्द्रहासं कॊण्टवन् ञानुमप्पोळ् पुष्टवेदनयोटु भूमियिल् वीणेनल्लो। निन्तिरुवटियॆक्कण्टॊ-ळिञ्ञु मरियायॆकॆन्निन्दिरा देवियोटु वरवुं वाङ्ङिक्कॊण्टेन्। तृक्कण पार्क्कॆणमॆन्नॆक्कृपया कृपानिधे तृक्कळलिण नित्य मुळ्ळक्काम्पिल् वसिक्कणं। इत्तरं जटायु तन् वाक्कुकळ् केट्टु नाथन् चित्तकारुण्यं पूण्टु चेन्नटुत्तिरुन्नु तन्तृक्कैकळ् कॊण्टु तलोटीटिनानवनुटल् दुःखाश्रुप्लुतनयनत्तोटुं रामचन्द्रन्। चॊल्लु चॊल्लहो! मम वल्लभा वृत्तान्तं नीयॆल्लामॆन्नतु केट्टु चॊल्लिनान् जटायुवुं— रक्षोनायकनाय रावणन् देवितन्नॆ दक्षिणदिशि कॊण्टु पोयानॆन्नऱिञ्ञालुं। चॊल्लुवानिल्ल शक्ति मरण पीडयालॆ नल्लतु वरुवतिनायनुग्रहिक्कणं। २० निन्तिरु-वटि तन्नॆक्कण्टु कण्टिरिक्कवे बन्धमट्टीटुं वण्णं मरिक्कान-वकाशं वन्नितु भवल् कृपापात्रमाकयालहं पुण्य पूरुष! पुरुषोत्तम दयानिधे! निन्तिरुवटि साक्षाल् श्रीमहाविष्णु परानन्दात्मापरमात्मा माया मानुष रूपि। सन्ततमन्तर्भागे

पत्नी को चुरा ले आकाश मार्ग से जा रहा था, तब समाचार पाकर जल्दी ही जाकर मैंने उसका रथ रोका, उससे युद्ध किया, रथ तोड़ दिया और धनुष काट दिया। जब उसने अपने चन्द्रहास से प्रहार किया तब मैं असह्य वेदना से पृथ्वी पर गिर पड़ा। आपके दर्शन पाने तक न मरने का इंदिरादेवी से वर-प्रसाद लेकर मैं यहाँ पड़ा हूँ। हे कृपानिधि! आप कृपा करके अपने अलौकिक नेत्रों से मुझे देखें। (मैं चाहता हूँ) आपके भगवद्पाद सदा मेरे मन में बसें। जटायु का यह कथन सुनकर नाथ कारुण्य से परिपूर्ण मन लेकर उसके समीप आ बैठे और अश्रुस्निग्ध नयनों से युक्त राम ने अपना भगवद्हस्त उसके शरीर पर फेर लिया, (और आग्रह किया) बोलो, तुम मेरी प्रिया का सारा हाल कह सुनाओ। यह सुन जटायु ने कहा कि आप यह जान लीजिए कि राक्षस-राजा रावण देवी को दक्षिण दिशा की ओर उठा ले गया। मृत्युपीड़ा के कारण मैं अधिक बोलने को असमर्थ हूँ। आप मुझे शुभानुग्रह प्रदान करें। २० —हे पुण्यपुरुष!, हे दयानिधि पुरुषोत्तम! आपका कृपापात्र होने के कारण आपका दर्शन करते-करते संसार-बंधन से मुक्त होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आप साक्षात् श्री महाविष्णु, परमानंदात्मा, परमात्मा हैं जो माया मानव रूप में अवतीर्ण हुए हैं।

वसिच्चीटुक वेणं त्तिन्तिरुमेनि घनश्यामळमभिरामं। अन्त्य-कालत्तिङ्ङीवण्णं काणायमूलं बन्धवुमट्टु मुक्तनायेन् ञानेन्नु नूनं। बन्धुभावेन दासनायोरटियनॆ बन्धूक सुम सम तृक्कर-तलं तन्नाल् बन्धुवत्सला! मन्दं तॊट्टुरुळेणमॆन्नाल् त्तिन्तिरुमल-रटियोटु चेर्न्नीटामल्लो। इन्दिरापातियतु केट्टुटन् तलोटिनान् मन्दं मन्दं पूर्णात्मानन्दं वन्नीटुं वण्णं। अन्नेरं प्राणङ्ङळॆ त्यजिच्चु जटायुवुं मन्निटं तन्निल् वीणन्नेरत्तु राघवन् कण्णु-न्नीवार्त्तु भक्तवात्सल्य परवशालण्णोजनेत्रन् पितृमित्रमां पक्षोन्द्रन्टॆ। ३० उत्तमांगत्तॆयॆटुत्तुत्संग सीम्नि चेर्त्तिट्टुत्तर कार्य्यार्त्थमाय्सोदरनोटु चॊन्नान्— काष्ठङ्ङळ् कॊण्टुवन्नु नल्लॊरु चित तीर्त्तु कूट्टणमग्नि संस्कारत्तिनु वैकीटाते। लक्ष्मणनतु केट्टु चितयुं तीर्त्तीटिनान् तल्क्षणं कुळिच्चु संस्कारवुं चेय्तुपिन्नॆ। स्नानवुं कळिच्चुदकक्रियादियुं चेय्तु कानने तत्र मृगं वधिच्चु मांसखण्डं पुल्लिन्मेल् वच्चु जलादिकळुं नल्कीटिनान् नल्लॊरु गतियवनुण्टावान् पित्रर्त्थमाय्। पक्षिकळिवयॆल्लां भक्षिच्चु सुखिच्चालुं पक्षीन्द्रनतु कण्टु तृप्तनाय् भविच्चालुं। कारुण्य-

---

आपका अभिराम एवं घनश्यामल सुन्दर रूप सदा मेरे मन में निवास करे, इसके लिए अनुग्रह प्रदान करें। अन्तिम समय में इस प्रकार (आपका) दर्शन प्राप्त होने से मैं निस्संदेह मुक्त हो गया। हे बन्धु-वत्सल! आप बन्धु-भाव से प्रेरित हो अपने बन्धूक सुमन सम अपने हाथ से मेरे शरीर का आश्लेष करें ताकि मैं भगवद्चरणों में लीन हो सकूँ। यह सुनकर शीघ्र ही इंदिरापति राम ने (उसे) आनन्द प्रदान करते हुए मन्द-मन्द उसके शरीर पर अपना हाथ फेर लिया। तब प्राण-त्याग करके पृथ्वी पर गिर पड़े जटायु को देखकर भक्तवत्सल एवं कमलनेत्र राम ने अश्रुस्निग्ध नेत्रों से युक्त हो अपने पिता के घनिष्ठ मित्र जटायु का, ३० —उत्तमांग अपने उत्संग में रखकर भावी कार्य का स्मरण दिलाते हुए अपने सहोदर से कहा—अब अविलम्ब (जटायु के) अग्नि संस्कार के लिए काष्ठ लाकर खूब चिता जलानी चाहिये। यह सुनकर लक्ष्मण ने चिता बनाई और स्नानोपरान्त (जटायु का) अग्नि-संस्कार पूरा करके फिर स्नान किया और उदक क्रियाएँ भी पूर्ण कीं। उसकी आत्मा की शान्ति के लिए वन से गजकंद उखाड़कर उसे दर्प पर रखकर जल अर्पित किया (और कहा)—पक्षियों, तुम लोग इसे चुगकर सुखी बनो। हे पक्षीन्द्र! तुम यह (दृश्य) देख संतृप्त बनो। कारुण्यमूर्ति कमलनेत्र

मूर्नि कमलेक्षणन् मधुवैरि सारूप्यं भविक्कॆन्नु सादरमरुळ् चेय्तु। अन्तेरं विमानमारुह्य भास्वरं भानु सन्निभं दिव्य रूपं पूण्टीरु जटायुवुं शंखारिगदापत्ममकुट पीतांबराद्यङ्कित रूपं पूण्टु विष्णु पार्षदन्माराल् पूजितनायि स्तुतिक्कप्पॆट्टु मुनिकळाल् तेजसा सकल दिग्व्याप्तनाय्क्काणाय्वन्नु। ४०
सन्नतगात्रत्तोटुमुयरॆक्कूप्पित्तॊळुतुन्नत भक्तियोटॆ रामनॆ स्तुति चॆय्तान्। ४१

जटायुस्तुति

अगण्य गुणमाद्यमव्ययप्रमेयमखिल जगल् सृष्टि स्थिति संहारमूलं; परमं परा परमानन्दं परात्मानां वरदमहं प्रणतोस्मिसन्ततं रामं। महित कटाक्षविक्षपितामरशुचं रहितावधि सुखमिन्दिरा मनोहरं, श्यामळं जटा मकुटोज्ज्वलं चापशर कोमळ करांबुजं प्रणतोस्म्यहं रामं। भुवन कमनीय रूपमीडितं शतरवि भासुरमभीष्टप्रदं शरणदं, सुर पादपमूल रचितनिलयनं सुरसञ्चय सेव्यं प्रणतोस्म्यहं रामं। भव

एवं मधु-वैरी ने सानन्द बताया कि (जटायु) सारूप्य मुक्ति प्राप्त करे। तभी भास्वर विमान नीचे उतरा और दिव्य रूप को अपनाया हुआ जटायु शंख, चक्र, गदा और पद्म (हाथ में लिये) एवं पीताम्बरधारी विष्णु के पार्षद लोगों से पूजित एवं मुनियों से स्तुत्य हो अपने अतीव तेज से सारी दिशाओं में व्याप्त दिखाई देने लगा। ४० —सन्नत गात्र (नमित शरीर) जटायु अत्यधिक भक्ति से प्रेरित हो हाथ जोड़कर उच्च स्वर में राम की स्तुति करने लगा। ४१

जटायु की स्तुति

अगणित गुण-गणों से युक्त आद्यस्वरूप, अव्यय, अप्रमेय, अखिल जगत् की सृष्टि, स्थिति, संहार के लिए कारणस्वरूप, परम, परात्पर, परमात्मा एवं वरद राम को मैं निरंतर प्रणाम करता हूँ। (अपने भक्तों पर) कटाक्ष करनेवाले, पूज्य, शुद्ध देवतास्वरूप, आद्यन्तरहित, इन्दिरा मनोहरी को सुख प्रदान करनेवाले, श्यामल रंगवाले, उज्ज्वल जटा-मुकुटधारी, कोमल करों में चाप-शरधारी राम को मैं नमन करता हूँ। भुवन मनोहर रूप से समुज्ज्वल, शत रवितुल्य भासुर, अभीष्ट प्रदायक,

कानन दव दहन नामधेयं भवपङ्कज भवमुख दैवतं देवं, दनुजपति कोटि सहस्र विनाशनं मनुजाकारं हरिं प्रणतो-स्म्यहं रामं। भव भावनाहरं भगवल् स्वरूपिणं भवभीति रहितं मुनिसेवितं परं, भवसागर तरणाङ्घ्रि पोतकं नित्यं भवनाशायनिशं प्रणतोस्म्यहं रामं। १० गिरिश गिरि सुत हृद-यांबुजावासं गिरिनायक धरं गिरिपक्षारि सेव्यं, सुर सञ्चय दनुजेन्द्र सेवितपादं सुरपमणिनिभं प्रणतोस्म्यहं रामं। पर-दारात्थं रति वर्ज्जित मनीषिणां परपूरुष गुण भूरि सन्तुष्टात्मनां, परलोकैकहित निरतात्मनां सेव्यं परमानन्दमयं प्रणतोस्म्यहं रामं। स्मित सुन्दर विकसित वक्त्रांभोरुहं स्मृति गोचर-मसितांबुद कळेबरं, सित पङ्कज चारु नयनं रघुवरं क्षिति-नन्दिनी वरं प्रणतोस्म्यहं रामं। जल पात्रौघ स्थित रवि मण्डलं पोले सकल चराचर जन्तुक्कळुळ्ळिल् वाळुं परि-पूर्णात्मानमद्वयमव्ययमेकं परमं परापरं प्रणतोस्म्यहं रामं। विधि माधव शंभु रूप भेद्रेन गुण त्रितयविराजितं केवलं विराजन्तं,

---

शरणदाता, सुरपादप मूल से रचित निलय में निवास करनेवाले, सुरसंचय से सेव्य राम को मैं प्रणाम करता हूँ। जिनका नाम ही संसाररूपी कानन को जलाने के लिए दावाग्नि के समान है, जो कमलभव के मुख से आराध्यदेव हैं, जो कोटि सहस्र दनुजपति के विनाशक, मनुष्य का अवतार लिये हुए विष्णु हैं, उन राम को मैं प्रणाम करता हूँ। सांसारिक आसक्ति का हरण करनेवाले, भगवद्स्वरूप, भवभीति से रहित, असंख्य मुनियों से सेवित, जिनके चरण संसार-सागर को पार करने के लिए पोत सम हैं, जो भवनाशक हैं, ऐसे राम को सदा पल-पल मैं प्रणाम करता हूँ। १० —गिरीश और गिरिसुता के हृदय-कमल में वास करने-वाले, गिरिनायक से पूज्य, गिरिपक्षारि (इन्द्र) से सेव्य, सुर समूह तथा दनुजेन्द्र सेवित पादवाले, सुरपमणि सदृश (आभावाले) राम को मैं प्रणाम करता हूँ। परदारार्थ रति भावना को वर्जित मनीषियों, पर-पुरुषों के गुणों को देखकर भूरि संतुष्ट होनेवालों (सज्जनों) तथा परलोक के हितार्थ निरत लोगों से सेवित परमानंद मूर्ति राम को मैं प्रणाम करता हूँ। जिनका सुस्मित मुख विकसित अंभोरुह के समान है, जिनका असितांबुद (नीलमेघ) कलेवर स्मृति गोचर है, जिनके सितपंकज सदृश नेत्र हैं तथा जो क्षितिनन्दिनी के वर हैं, ऐसे रघुवर राम को मैं अपनी प्रणति अर्पित करता हूँ। जल-पात्रों में प्रतिबिंबित रवि के समान

त्रिदश मुनिजनस्तुतमव्यक्तमजं क्षितिजामनोहरं प्रणतोस्म्यहं रामं । २० मन्मथ शतकोटि सुन्दर कळेबरं जन्मनाशादिहीनं चिन्मयं जगन्मयं निर्म्मलं धर्म्मकर्म्माधारमप्यनाधारं निर्म्मम-मात्मारामं प्रणतोस्म्यहं रामं । इस्तुति केट्टु रामचन्द्रनुं प्रसन्ननाय् पत्रीन्द्रन् तन्नोटरुळिच्चेय्तु मधुरमाय्— अस्तुते भद्रं गच्छपदंमेविष्णोः परमिस्तोत्र मेळुतियुं पठिच्चुं केट्टुं कोण्टाल् भक्तनायुळ्ळवनु वन्नीटुं मल् सारूप्यं पक्षीन्द्र ! तिन्नेप्पोले मत्प-रायणनायाल् । इङ्ङने रामवाक्यं केट्टोरु पक्षिश्रेष्ठनङ्ङने तन्ने विष्णु सारूप्यं प्रापिच्चु पोय्, ब्रह्म पूजितमाय पदवुं प्रापिच्चुते निर्म्मल राम नामं चोल्लुन्न जनं पोले । २७

कबन्ध गति

पिन्ने श्रीरामन् सुमित्रात्मजनोटुं कूटि खिन्ननाय् वनान्तरं प्रापिच्चु दुःखत्तोटुं; अन्वेषिच्चोरोदिशि सीतयेक्काणाय्कयाल्

समस्त चराचर जगत में अधिवास करनेवाले परिपूर्णात्मा, अद्वय, अव्यय, परापर, परम एवं एक राम को मैं प्रणति अर्पित करता हूँ। जो केवल-स्वरूप हैं और त्रिगुणों को आधार बनाकर विधि, माधव और रुद्र रूप में विराजमान होते हैं, त्रिदश मुनियों से आराध्य अव्यक्त, अज, क्षितिजा-मनोहर राम को मैं प्रणाम करता हूँ। २० —शतकोटि मन्मथ तुल्य सुन्दर शरीरवाले, जन्मनाशों से रहित, चिन्मय स्वरूपी, जगन्मय निर्मल, धर्म-कर्मों के लिए आधार रूप होते हुए भी स्वयं आधाररहित, निर्मम आत्माराम राम को मेरी प्रणति है। यह स्तुति सुनकर प्रसन्नचित्त रामचन्द्र ने पक्षीन्द्र से मधुर वाणी में कहा कि तुम मेरे विष्णुपद को स्वच्छन्द पहुँच जाओ। हे पक्षीन्द्र ! जो भक्त यह स्तुति लिखता-पढ़ता या सुनता है, उसे मेरा सारूप्य प्राप्त होगा तथा तुम्हारे समान वह मेरा प्रिय बनेगा। राम का यह वचन सुनकर पक्षीन्द्र ने जाकर विष्णु का सारूप्य प्राप्त किया। निर्मल राम-नाम का जप करनेवाले जनों के समान उसने ब्रह्मपूजित पद प्राप्त किया। २७

कबंध-गति

तदनन्तर खिन्न एवं दुखी राम सौमित्र के साथ वनान्तर में पहुँच प्रत्येक दिशा में सीता की खोज करते गये; कहीं सीता को न पाकर

सन्न धैर्येण वनमार्ग्गे सञ्चरिक्कुम्पोळ् रक्षोरूपत्तोटॊरु सत्व-त्तॆक्काणाय् वन्नु तल्क्षणमेवं रामचन्द्रनुमरुळ् चॆय्तान्– वक्षसि वदनवुं योजन बाहुक्कळुं चक्षुरादिकळुमिल्लॆन्तॊरु सत्वमिदं। लक्ष्मण! कण्टायो नी कण्टोळं भयमुण्टां भक्षिक्कुमिप्पोळिवन् नम्मॆयॆन्नरिञ्ञालुं; पक्षियुं मृगवुमल्लॆवयुं चित्रं चित्रं वक्षसि वक्त्रवुं कालुं तलयुमिल्ल तानुं; रक्षस्सु पिटिच्चुटन् भक्षिक्कुं मुम्पे नम्मॆ रक्षिक्कुं प्रकारवुं कण्टील निरूपिच्चाल्। तत्भुज मद्ध्यस्थन्मारायितु कुमारा! नां कल्पितं धाताविनालॆन्तॆन्नालतु वरुं। राघवनेवं परञ्ञीटिनोरन्तरमाकुलमकन्नॊरु लक्ष्मणनुर चॆय्तान्— पोरुं व्याकुल भावमॆन्तिनि विचारिप्पानोरोरो करं छेदिक्केणं नामिरुवरुं। १० तल्क्षणं छेदिच्चितु दक्षिण भुजं रामन् लक्ष्मणन् वाम करं छेदिच्चानतु नेरं। रक्षोवीरनुमति विस्मयं पूण्टु राम लक्ष्मणन्मारॆक्कण्टु चोदिच्चान् भयत्तोटॆ— मत्भु-जङ्ङळॆ छेदिच्चीटुवन् शक्तन्मारायिब्भुवनत्तिलारु मुण्टायीलि-तिन् कीळिल्; अत्भुताकारन्मारां निङ्ङळारिरुवरुं? सत्पुर-षन्मारॆन्नु कल्पिच्चीटुन्नेन् ञानुं। घोर कानन प्रदेशत्तिङ्कल्

हताश हो वनमार्ग से चलते समय राक्षसाकार एक सत्व दिखाई पड़ा, जिसे देख रामचन्द्र ने कहा कि वक्ष पर वदन, योजन भुजाएँ तथा चक्षु-रहित यह कौन सा प्राणी है? हे लक्ष्मण! तुम क्या (उसे) देख रहे हो, देखने से भय लगता है। यह जान लो कि वह अब हमें खा लेगा। वह न पशु है, न पक्षी ही; उसका रूप विचित्र है, विचित्र है! वक्ष पर मुख और पैर तथा सिरविहीन यह राक्षस हमें पकड़कर खा ले, उसके पहले प्राण-रक्षा के लिए उपाय नहीं दिखाई दे रहा है। हे कुमार! हम उसकी बाहुओं में फँस गये! विधि की जो इच्छा है, वही होकर रहेगी। राम के इस प्रकार कहने के उपरान्त निर्भीक भाव से लक्ष्मण बोले—अब व्याकुल होने की क्या बात है; हम दोनों मिलकर एक-एक हाथ काटते जाएँगे। १० —तुरन्त ही राम ने (उसका) दक्षिण कर काट लिया तो लक्ष्मण ने वाम कर छेद डाला। अत्यन्त विस्मय एवं भयसहित राम-लक्ष्मण को देख राक्षस ने पूछा—इसके पहले मेरी बाहुओं को काट डालने की सामर्थ्य रखनेवाला कोई संसार में पैदा नहीं हुआ। अद्भुत स्वरूपवाले तुम दोनों कौन हो? मैं (तुम लोगों को) सत्पुरुष मानता हूं। तुम लोग सत्य बोलो कि किस कारण घोर कानन प्रदेश में आये हो? कबन्ध के ये वचन सुनकर तुरन्त ही हँसते हुए पुरुषोत्तम

वरुवानुं कारणमॆन्तु निङ्ङळ् सत्यं चॊल्लुक वेणं। इत्तरं कबन्ध वाक्यङ्ङळ् केट्टीरु पुरुषोत्तमन् चिरिच्चुटनुत्तरमरुळ् चॆय्तु; केट्टालुं दशरथ नामयोद्ध्यापति ज्येष्ठ नन्दननहं रामनॆन्नल्लो नामं; सोदरनिवन् मम लक्ष्मणनॆन्नु नामं सीतयॆन्नुण्टु मम भार्य्ययायॊरु नारि। पोयितु ञङ्ङळ् नायाट्टिन्नतु नेरमतिमायावि निशाचरन् कट्टुकॊण्टङ्ङु पोयान्। काननं तोरुं ञङ्ङळ् तिरञ्ञु नटक्कुम्पोळ् काणायि निन्नॆयति भीषण वेषत्तोटुं। २० पाणिकळ् कॊण्टु तव वेष्टितन्मारायकयाल् प्राणरक्षार्थं छेदिच्चीटिनेन् करङ्ङळुं। आरॆटो! विकृत रूपं धरिच्चोरुभवान् नेरोटॆ परकॆन्नु राघवन् चोदिच्चप्पोळ् सन्तुष्टात्मना परञ्ञीटिनान् कबन्धनुं निन्तिरुवटितन्नॆ श्रीरामदेवनॆङ्किल् धन्यनाय् वन्नेनहं निन्तिरुवटि तन्नॆ मुन्निलाम्मारु काणाय् वन्नॊरु निमित्तमाय्। दिव्यनायिरिप्पॊरु गन्धर्वनहं रूप यौव्वन दर्प्पितनाय् सञ्चरिच्चीटुं कालं, सुन्दरीजन मनोधैर्यवुं हरिच्चति सुन्दरनायोरु ञान् क्रीडिच्चु नटक्कुम्पोळ् अष्टावक्रनॆक्कण्टु ञानपहसिच्चितु रुष्टनाय् महामुनि शापवुं नल्कीटिनान्—दुष्टनायुळ्ळोरु नी राक्षसनाय् पोकॆन्नु तुष्टनाय्पिन्नॆशशापानुग्रहं नल्कीटिनान्। साक्षाल् श्रीनारायणन् तन् तिरुवटि तन्नॆ मोक्ष-

---

ने उत्तर दिया—"सुनो, अयोध्यापति दशरथ का मैं ज्येष्ठ पुत्र हूँ और मेरा नाम राम है। लक्ष्मण नाम से अभिहित यह मेरा सहोदर है और सीता नाम से मेरी पत्नी है, जिसे हमारे मृगया पर जाते समय कोई मायावी राक्षस चुरा ले गया। कानन में उसकी खोज में घूमते हुए भयंकर रूपवाले तुम्हें देखा। २० —तुम्हारी भुजाओं में आबद्ध हो जाने से हमने प्राणरक्षार्थ तुम्हारी भुजाएँ काट डालीं। राम के यह पूछने पर कि विकृत रूप को धारण किये तुम कौन हो, यह सत्य बताओ, तब सन्तुष्टचित्त हो कबन्ध ने कहा—अगर आप ही भगवान राम हैं तो आपको प्रत्यक्ष देख पाने के कारण मैं आज धन्य बना। मैं एक दिव्य गन्धर्व हूँ। अपने रूप-यौवन के दर्प में सुन्दरी नारियों के मन को हरण करते, क्रीड़ारत घूमते समय अष्टावक्र को देख मैंने उसका उपहास किया, जिससे रुष्ट हो महामुनि ने मुझे शाप दिया कि तुम दुष्ट राक्षस रूप धारण कर लो और फिर सन्तुष्ट हो शापनिवृत्ति के लिए अनुग्रह दिया कि साक्षात् भगवान् श्रीनारायण जो मोक्षप्रदाता हैं, त्रेतायुग में दशरथ-पुत्र के रूप में अवतार लेकर जब तुम्हारे हाथ काट डालेंगे तब तुम

दन् दशरथपुत्रनाय् त्रेतायुगे वन्नवतरिच्चु निन् बाहुक्कळ-रुक्कुन्नाळ् वन्नीटुमल्लो शापमोक्षवुं निनक्कोटो। ३० तापस शापं कोण्टु राक्षसनायोरु ञान् तापेन नटन्नीटुं कालमङ्ङोरु-दिनं शतमन्युविनॆप्पाञ्ञटुत्तेनतिरुषा शतकोटियाल् तलयरुत्तु शतमखन् वज्रमेट्टिट्टुं मम वन्नील मरणमतब्ज संभवन् मम तन्नोरु वरत्तिनाल्। वध्यनल्लाय्कमूलं वृत्तिक्कु महेन्द्रनु-मुत्तमांगत्ते मम कुक्षियिलाक्कीटिनान्। वक्त्रपादङ्ङळ् मम कुक्षियिलायशेषं हस्तयुग्मवुमोरु योजनायतङ्ङळाय्। वर्त्तिच्ची-टुन्नेनत्र वृत्तिक्कु शक्राज्ञया सत्वसञ्चयं मम हस्तमद्ध्यस्थ-मायाल् वक्त्रेण भक्षिच्चु ञान् वर्त्तिच्चेनित्र नाळुमुत्तमोत्तम! रघुनायक! दयानिधे! वह्नियुं ज्वलिप्पिच्चु देहवुं दहिप्पिच्चाल् पिन्ने ञान् भार्यामार्ग्गमोक्कवेचोल्लीटुवन्। मेदिनि कुळिच्च-तिलिन्धनङ्ङळुमिट्टु वीतिहोत्रनॆज्ज्वलिप्पिच्चितु सौमित्रियुं; तत्रैव कबन्ध देहं दहिप्पिच्च नेरं तद्देहत्तिङ्कल्निन्नङ्ङुत्थि-तनाय्क्काणायि। ४० दिव्य विग्रहत्तोटु मन्मथ समाननाय् सर्वभूषण परिभूषितनायन्नेरं, रामदेवने प्रदक्षिणवुं चेय्तु भक्त्या भूमियिल् साष्टांगमाय्वीणटन् नमस्कारं मून्नुरु चेय्तु कूप्पित्तोळ्तु

शापविमुक्त हो जाओगे। ३० —तापस के शापवश राक्षस बना मैं खिन्न हो घूम रहा था तो एक दिन शतमन्यु (इन्द्र) को देख उन पर झपट पड़ा तो अत्यन्त रोषाकुल हो शतमख (इन्द्र) ने शतकोटि (वज्रायुध) से मेरा सिर काट डाला, लेकिन वज्राघात लगने पर भी अब्जसंभव के द्वारा प्रदत्त वर-प्रसाद के कारण मेरी मृत्यु नहीं हुई। मुझे वध्य न जानकर महेन्द्र ने जीवनयापन के लिए मेरा सिर कुक्षि में समाविष्ट कर दिया। वक्त्र-पाद के कुक्षि में समाविष्ट हो जाने पर मेरी दो भुजाओं के स्थान पर योजन भुजाएँ हुईं और इस प्रकार मैं जिन्दा आ रहा हूँ। शक्र की आज्ञा से अपनी भुजाओं के मध्य आ फँसे जीवों को वक्त्र से खा मैं अब तक जीवनयापन करता आ रहा हूँ। हे उत्तमोत्तम!, हे रघुनायक! हे दयानिधि! वह्निप्रज्वलित कर देह को जला देने के उपरान्त मैं (आपकी) पत्नी को (राक्षस द्वारा) ले चलने का मार्ग सब बता दूँगा। यह सुनकर सुमित्रात्मज ने मेदिनी खोदकर उसमें ईंधन रखकर वीतिहोत्र (अग्नि) प्रज्वलित की और उसमें कूद कबंध के देह जला डालने पर उस शरीर से ऊपर उठता हुआ दिखाई दिया। ४० —मन्मथ तुल्य दिव्य रूप, जो दिव्य वस्त्रों से आभूषित था। तुरन्त मान्य गन्धर्व ने आनन्द-

निन्नु पिन्ने मान्यनां गन्धर्व्वनुमानन्द विवशनाय्, कोळ्मयिक्कोण्टु गद्गदाक्षर वाणिकळां कोमळ पदङ्ङळाल् स्तुतिच्चु तुटङ्ङि-नान् : निन्तिरुवटियुटे तत्त्वमितोरुवक्कुं चिन्तिच्चालरिञ्ञु कूटावतल्लेन्नाकिलुं, निन्तिरुवटि तन्ने स्तुतिप्पान् तोन्नीटुन्नु सन्ततमन्धत्वं कोण्टेन्तोरु महामोहं । अन्तवुमादियुमिल्लातोरु परब्रह्मं अन्तरात्मनि तेळिञ्ञुणर्न्नु वसिक्कणं । अन्धकारङ्ङळ-कन्नानन्दमुदिक्कणं बन्धवुमट्टु मोक्षप्राप्तियुमरुळणं । अव्यक्त-मति सूक्ष्ममायोरु भवद्रूपं सुव्यक्त भावेन देह द्वय विलक्षणं; दृग्रूपमेकमन्यत्सकलं दृश्यं जडं दुर्ग्राह्यमनात्मकमाक याल-ज्ञानिकळ् । ५० ऐङ्ङनेयरियुन्नु मानस व्यतिरिक्तं मङ्ङीटातोरु परमात्मानं ब्रह्मानन्दं । बुद्ध्यात्माभासङ्ङळ्क्कुळ्ळैक्यमायतु जीवन् बुद्ध्यादि साक्षिभूतं ब्रह्ममेन्नतु नूनं । निर्विकार ब्रह्मणि निखिलात्मनि नित्ये निर्विषयाख्ये लोकमज्ञान मोह-वशाल् आरोपिक्कप्पेट्टोरु तैजसं सूक्ष्मदेहं हैरण्यमतु विराट् पुरुषनति स्थूलं । भावना विषय मायोन्नतु योगीन्द्राणां केवलं तव्र काणायीटुन्नु जगत्तेल्लां । भूतमायतुं भव्यमायतुं भविष्यत्तुं

विमुग्ध हो भक्तिपूर्वक रामचन्द्र की प्रदक्षिणा ली और भूमि पर पड़ तीन बार साष्टांग प्रणाम करके वह हाथ जोड़कर खड़ा हो गया तथा पुलकावली भरता हुआ एवं कोमल पदों से युक्त गद्गदवाणी में (राम की) स्तुति करने लगा—हे भगवान्, भले ही आपका तत्व कोई चिन्तन-मनन के उपरान्त भी जान नहीं सकता, तो भी अपने अज्ञानरूपी अन्धत्व और महामोह के कारण आपकी स्तुति करते रहने की इच्छा होती है। आदि और अन्तरहित परब्रह्म अन्तरात्मा में सदा प्रकाशित होते रहें। अन्धकार मिटकर आनन्द प्राप्त हो तथा (संसार) का बन्धन शिथिल कर मोक्ष प्रदान करें। आपका अव्यक्त एवं अतिसूक्ष्म विलक्षण अद्वय रूप आज स्पष्ट शरीर के साथ मेरे सामने सुव्यक्त हो गया। यह प्रत्यक्ष आपका रूप ही सत्य है, शेष सब दृश्य जड़ है अज्ञानियों के लिए आपका यह रूप अग्राह्य है। ५० —मानस व्यतिरेकवाले (अज्ञानी लोग) सदा जाग्रत परमात्मा तथा ब्रह्मानन्द का पता कैसे प्राप्त कर सकेंगे! बुद्धि को भासित होनेवाले ऐक्यमय जीवन, बुद्धि आदि के लिए साक्षी स्वरूप जो है वह निश्चित ही ब्रह्म है। यह ब्रह्म निर्विकार, निखिलात्मा, नित्य एवं विकाररहित है। अज्ञान से उत्पन्न मोह के वश में पड़कर लोक तेजोमय सूक्ष्मदेही हिरण्मय विराट पुरुष में स्थूल की कल्पना

हेतु नामहत्तत्त्वाद्यावृतस्थूल देहे ब्रह्माण्ड कोशे विराट् पुरुषे काणाकुन्नु सन्मयमेन्न पोले लोकङ्ङळ् पतिन्नालुं। तुंगनां विराट पुमानाकिय भगवान् तन्नंगङ्ङळल्लो पतिन्नालु लोकवुं नून। पाताळं पादमूलं पार्ष्णिकळ् महातलं नाथ ! तेगुल्फं रसातलवुं तलातलं चटरुजानुक्कळल्लो सुतलं रघुपते ! ऊरु-काण्डङ्ङळ् तव वितलमतलवु। ६० जघनं महीतलं नाभिते-नभः स्थलं रघुनाथोरः स्थल मायतु सुरलोकं; कण्ठदेशं ते महर्ल्लोकमेन्नरियणं तुण्डमायतु जनलोकमेन्नतु नूनं। शंख-देश ते तपोलोकमङ्ङतिन्मीते पङ्कजयोनिवासमाकिय सत्यलोकं; उत्तमांगं ते पुरुषोत्तम ! जगल्प्रभो ! सत्तामात्रक ! मेघ-जालङ्ङळ् केशङ्ङळुं; शक्रादिलोक पालन्मारेल्लां भुजङ्ङळ् ते दिक्कुकळ् कर्णङ्ङळुमश्विकळ् नासिकयुं; वक्त्रमायतु वह्नि नेत्र मादित्यन् तन्ने चित्रमेत्रयुं मनस्सायतु चन्द्रनल्लो; भ्रूभंग-मल्लो कालं बुद्धि वाक्पतियल्लो कोपकारणमहङ्कारमायतु-रुद्रन्; वाक्केल्लां छन्दस्सुकळ् दंष्ट्रकळ् यमनल्लो नक्षत्र पंक्तियल्लो द्विज पंक्तिकळेल्लां; हासमायतु मोहकारिणि

करता है। यह (विराट पुरुष) योगीन्द्र लोगों के लिए अपनी भावना का विषय है और केवल स्वरूप में वे (योगी लोग) सारे जगत को देखते हैं। विराट पुरुष के ब्रह्माण्ड कोश में भूत, भविष्य, वर्तमान, हेतु, नाम, अहन्ता आदि तत्वों से आवृत्त स्थूल देहयुक्त चौदहों भुवन सत् रूप में प्रतिबिंबित हैं। उन्नत विराट् पुरुष भगवान के अंग ही ये चौदह लोक हैं। हे नाथ ! पाताल आपके पादमूल हैं, महातल तलवे हैं, आपका गुल्फ ही रसातल है। हे रघुपति ! तलातल और सुतल ही आपकी जानुएँ हैं। वितल और अतल ऊरु हैं। ६० —महीतल आपका जघन और आपकी नाभी ही नभस्थल है, सुरलोक ही नीचे का तल है, महर्लोक ही कंठदेश समझना चाहिए और तुण्ड ही जनलोक है। शंखदेश ही तपोलोक है और उसके ऊपर का पंकजयोनि (ब्रह्मा) का वासस्थान सत्यलोक आपका उत्तमांग है। हे पुरुषोत्तम !, हे जगत के स्वामी ! हे सत्तामात्र ! मेघजाल ही आपके केशजाल हैं। शक्र आदि लोक-पालक आपकी भुजाएं हैं, दिशाएँ ही आपके कान हैं; अश्विनीकुमार नासिका हैं। वह्नि ही मुख, आदित्य ही नेत्र हैं। विचित्र ही विचित्र है ! चंद्रमा तो मन है, आपका भ्रूभंग ही काल है और आपकी बुद्धि ही वाक्पति है। कोप के लिए कारणभूत अहंकार ही रुद्र हैं। आपके

महामाया वासनासृष्टिस्तवापांगमोक्षणमल्लो। धर्म्मं निन् पुरोभागमधर्म्मं पृष्ठभागं उन्मेषनिमेषङ्ङळ् दिनरात्रिकळल्लो; ७० सप्तसागरङ्ङळ् त्रिन् कुक्षिदेशङ्ङळल्लो सप्तमारुतन्मारुं निश्वासगणमल्लो; नदिकळेल्लां तव नाडिकळाकुन्नतुं पृथिवीधरङ्ङळ् पोलस्थिकळाकुन्नुतुं; वृष्टियायतुं तव रेतस्सेन्नरियणं पुष्टमां महीपते ! केवलज्ञानशक्ति स्थूल मायुळ्ळ विराट् पुरुष रूपं तव काले नित्यवुं ध्यानिक्कुन्नवनुण्टां मुक्ति। त्रिन्तिरुवटियोळिञ्ञिल्ल किञ्चन वस्तु सन्ततमीदृग्रूपं चिन्तिच्चु वणङ्ङुन्नेन्। इक्काल मतिल्क्काळुं मुख्यमायिरिप्पोन्निति-क्काणाकिय रूपमेप्पोळुं तोन्नीटणं: तापस वेषं धरावल्लभं शान्ताकारं चापेषुकरं जटा वल्कल विभूषणं; कानने विचिन्वन्तं जानकीं सलक्ष्मणं मानव श्रेष्ठं मनोज्ञं मनोभव समं। मानसे वसिप्पतिन्नालयं चिन्तिक्कुन्नेन् भानुवंशोद्भूतनां भगवन् नमोनमः। सर्वज्ञन् महेश्वरनीश्वरन् महादेवन् शर्वनव्ययन् परमेश्वरियोटुं कूटि। ८० त्रिन्तिरुवटियेयुं ध्यानिच्चु कोण्टु काश्यां सन्ततमिरुन्नरुळीटुन्नु मुक्त्यार्थमाय्। तत्रैव मुमुक्षु-

---

शब्द ही छन्दस् हैं। आपकी दंष्ट्रा ही यमधर्म है। नक्षत्रपंक्ति ही द्विज (दाँत) पंक्ति हैं। आपका हास ही मोहकारिणी महामाया है। आपके अपांग वीक्षण ही जीवों के पुनर्जन्म सस्कार हैं। धर्म आपका पुरोभाग और अधर्म पृष्ठभाग हैं; उन्मेष-निमेष ही दिन-रात हैं। ७० —सप्त सागर ही आपके कुक्षि प्रदेश हैं और सप्त मारुत आपके निश्वास हैं। नदियाँ तो आपकी नाड़ियाँ हैं और पर्वत आपकी अस्थियाँ हैं। आपका रेतस ही वृष्टि समझनी चाहिए। हे पुष्ट स्वामी ! आप केवल ज्ञानशक्ति हैं। आपके इस स्थूल विराट रूप का अनुचिंतन करनेवाले को मुक्ति प्राप्त होती है। आपको छोड़ कोई किंचित् वस्तु कहीं नहीं है। मैं सदा आपके इस रूप का ध्यानपूर्वक प्रणाम करता हूँ। इस समय उस रूप से भी मुख्य जो रूप प्रत्यक्ष दिखाई दिया, वह सदा मेरे ध्यान में आये। हे सूर्यवंश में उद्भूत भगवान ! तापस-वेष, शान्त-स्वरूप, हाथ में धनुष, जटा-वल्कल विभूषित शरीर—इस प्रकार जानकी-लक्ष्मण समन्वित हो वन में भ्रमण करते मानव श्रेष्ठ, मनोभव (काम) सम आपका मनोज्ञ रूप सदा मेरे मनरूपी आलय में वास करे, यही मेरी प्रार्थना है और आपको मेरा नमस्कार है, नमस्कार है। सर्वज्ञ, महेश्वर, ईश्वर, महादेव, शर्व, अव्यय अपनी परमेश्वरी सहित। ८० —सन्तत आपके

वक्कळायुळ्ळ जनङ्ङळ्क्कु तत्त्व बोधार्त्थं नित्यं तारक ब्रह्म-वाक्यं राम रामेति कनिञ्ञुपदेशवुं नल्कि सोमनां नाथन् वसिच्चीटुन्नु सदा कालं। परमात्मावु परब्रह्मं निन्तिरुवटि परमेश्वरनायतल्लिञ्ञु वळिपोलें। मूढन्मार् भवत्तत्त्वमेंङ्ङने-यरियुन्नु मूटिप्पोकयाल् महामाया मोहान्धकारे। रामभद्राय परमात्मने नमो नमो रामचन्द्राय जगल्साक्षिणे नमोनमः। पाहिमां जगन्नाथ! परमानंद रूप! पाहि सौमित्रि सेव्य! पाहिमां दयानिधे! निन्महामाया देवियेन्ने मोहिप्पिच्चीटाय्कंबुज विलोचन! सन्ततं नमस्कारं। इत्थमर्त्थिच्चु भक्त्या स्तु-तिच्च गन्धर्वनोटुत्तम पुरुषनां देवनुमरुळ् चेय्तु : सन्तुष्टनायेन् तव स्तुत्या निश्चल भक्त्या गन्धर्व श्रेष्ठ! भवान्मल् पदं प्राप्पिच्चयालुं। ९० स्थानं मे सनातनं योगीन्द्र गम्यं परमानन्दं प्रापिक्क नी मल् प्रसादत्तालेंटो! अत्रयुमल्ल पुन-रीन्ननुग्रहिप्पन् ञानि स्तोत्रं भक्त्या जपिच्चीटुन्न जनङ्ङळ्क्कुं मुक्तिसंभविच्चीटु मिल्लसंशयमेतुं भक्तनां निनक्कधःपतन मिनिवरा। ९३

ध्यान में निरत हो मुक्तिलाभ के लिए काशी में निवास करते हैं। लोगों को तत्वबोधार्थ 'राम राम' के तारक ब्रह्मवाक्य का नित्य कृपापूर्वक उपदेश देते हुए सोमनाथ सदाकाल वहाँ वास करते हैं। मूढ़ लोग महामायारूपी अंधकार से आवृत्त होने से आप परमात्मा, परब्रह्म एवं परमेश्वर को ठीक प्रकार से कैसे पहचान सकेंगे? श्रीरामचन्द्ररूपी परमात्मा को (मेरा) नमस्कार है, जगत् के लिए साक्षी स्वरूप रामचन्द्र को नमस्कार है, नमस्कार है। हे जगन्नाथ! मेरी रक्षा करें, हे परमानंद रूप! हे सौमित्र सेव्य! रक्षा करें। हे दयानिधि! मेरी रक्षा करें! (दयानिधि! मेरी रक्षा करें।) हे अंब्रुजलोचन! आपकी महामायादेवी मुझे मोहित न करने पाए! इसके लिए निरंतर (आपको) प्रणाम करता हूँ। इस प्रकार की अभ्यर्थना करते हुए भक्तिपूर्वक स्तुति-गान करते गन्धर्व से उत्तम पुरुष भगवान ने कहा—हे गन्धर्व श्रेष्ठ! आपकी स्तुति तथा निश्चल भक्ति से मैं सन्तुष्ट हुआ हूँ। आप मेरे धाम को प्राप्त करें। ९० —मेरा धाम सनातन है और योगीन्द्रों के लिए गम्य है, मेरी कृपा से आप उसे प्राप्त कीजिए। यही नहीं मैं आपको एक और वर देता हूँ कि जो जन यह स्तोत्र निरंतर जपते हैं वे भी निस्संदेह मुक्ति सिद्ध करेंगे और आप भक्त का आगे कभी पतन नहीं होगा। ९३

शबर्य्याश्रम प्रवेशं

इङ्ङने वरं वाङ्ङिक्कौण्टु गन्धर्वश्रेष्ठन् मंगलं वरुवानाय् तौळुतु चौल्लीटिनान्— मुम्पिलामारु काणां मतंगाश्रमं तत्र सम्प्रति वसिक्कुन्नु शबरी तपस्विनि। त्वल्पादांबुज भक्ति कौण्टेट्टं पवित्रयायेप्पोळुं भवानेयुं ध्यानिच्चु विमुक्तयाय्। अवळेच्चेन्नु कण्टाल् वृत्तान्तं चौल्लुमवळवनीसुततन्ने लभिक्कुं निङ्ङळक्केन्नाल्। गन्धर्वनेवं चौल्लि मरञ्ञोरनन्तरं सन्तुष्टन्मारायोरु रामलक्ष्मणन्मारुं घोरमा वनत्तूटे मन्द मन्दं पोय् चेन्नु चारुतपूण्ट शबर्य्याश्रममकं पुक्कार्। संभ्रमत्तोटुं प्रत्युत्थाय तापसि भक्त्या सम्पदिच्चितु पादांभोरुह युगत्तिङ्कल्। सन्तोष पूर्णाश्रु नेत्रङ्ङळोटवळुमानन्दमुळ्क्कौण्टु पादार्घ्यासनादिकळाले पूजिच्चु तत्पाद तीर्त्थाभिषेकवुं चैय्तु भोजनत्तिन्नु फलमूलङ्ङळ् नल्कीटिनाळ्। पूजयुं परिग्रहिच्चानन्दिच्चिरुन्नितु राजीव नेत्रन्मारां राजनन्दनन्मारुं। १० अन्नेरं भक्ति पूण्टु तौळुतु चौन्नाळवळ् धन्यया्यवन्नेनहमिन्नु पुण्यातिरेकाल्।

शबरी के आश्रम में प्रवेश

यह वर प्राप्त करने के उपरान्त गन्धर्व श्रेष्ठ ने मंगलकामना से प्रेरित हो हाथ जोड़कर कहा कि आगे मातंग आश्रम दिखाई देगा जहाँ अब तपस्विनी शबरी निवास करती है। आपके श्रीचरणों पर असीम भक्ति के कारण वह अत्यन्त पवित्र बनी हुई है और संसार से विमुक्त वह आपके ध्यान में तल्लीन है। उससे मिलने पर वह (सीता सम्बन्धी) सारा हाल कह सुनायेगी और आपको सीता लभ्य होगी। यह कह गन्धर्व के अदृश्य हो जाने पर सन्तुष्ट चित्त राम-लक्ष्मण घोर कानन मार्ग से मंद-मंद चलते हुए शबरी के आश्रम में पहुँचे। आश्चर्यचकित तापसी तुरन्त खड़ी हो गयी और भक्ति से (राम के) युगल चरण-कमलों पर गिर पडी। आनन्दाश्रु से पूर्ण नेत्रवाली उसने आनन्द से अर्घ्य, आसन आदि देकर उनका स्वागत किया और (राम के) पादतीर्थ से अपने को अभिषिक्त करके उन्हें खाने के लिए फल-मूल दिये। राजीव-नेत्र राजकुमार उसका सत्कार स्वीकार करके प्रसन्नतापूर्वक बैठे रहे। १० तब उसने भक्ति से परिप्लावित हो हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए कहा— अपने अत्यधिक पुण्य से आज मैं धन्य हो गयी हूँ। मेरे गुरुवर मुनि-

अॅन्नुटे गुरुभूतन्माराय मुनिजनं निन्नॆयुं पूजिच्चनेकायिरत्ताण्टु वाणार्। अन्नु ञानवरॆयुं शुश्रूषिच्चिरुन्नितु पिन्नॆप्पोय् ब्रह्मपदं प्रापिच्चारवर्कळुं। अॅन्नोटु चॊन्नारवरेतु मे खेदियातॆ धन्ये ! नी वसिच्चालुमिविटॆत्तन्नॆ नित्यं। पन्नगशायि परन् पुरुषन् परमात्मा वन्नवतरिच्चितु राक्षसवधार्त्थमाय्। नम्मॆयुं धर्म्मत्तॆयुं रक्षिच्चु कोळ्वानिप्पोळ् निर्म्मलन् चित्रकूटत्तिल् वन्निरिक्कुन्नु। वन्नीटुमिविटेक्कु राघवनॆन्नालवन् तन्नॆयुं कण्टु देहत्यागवुं चॆय्तालुं नी। वन्निटुमॆन्नाल् मोक्षं निनक्कुमॆन्नु नूनं वन्नितव्वण्णं गुरुभाषितं सत्यमल्लो। निन्तिरुवटियुटॆ वरवुं पार्त्तु पार्त्तु निन्तिरुवटियॆयुं ध्यानिच्चु वसिच्चु ञान्। श्रीपादं कण्टु कॊळ्वान् मद्गुरुभूतन्मारां तापसन्मार्क्कुं पोलुं योगं वन्नीलयल्लो। २० ज्ञानमिल्लात्त हीन जातियिलुळ्ळ मूढ ञानतिनॊट्टुमधिकारिणियल्लयल्लो। वाङ्मनो विषयमल्लातॊरु भवद्रूपं काण्मानुमवकाशं वन्नतु महाभाग्यं। तृक्कळलिण कूप्पिस्तुतिच्चु कॊळ्वानु मिङ्ङुळ्ळक्कमलत्तिलरियप्पोका दयानिधे ! राघवनतु केट्टु शबरियोटु चॊन्नानाकुलं कूटातॆ ञान् पऱयुन्नतु केळ् नी : पूरुष

जन आपकी पूजा करते हुए हजारों वर्ष तक यहीं रहे, तब मैं उनकी सेवा करती रही। फिर उन लोगों ने जाकर ब्रह्मपद को प्राप्त किया। उन्होंने मुझसे कहा था—हे धन्ये ! तुम किसी भी प्रकार की खिन्नता त्यागकर सदा यहीं रहो। पन्नगशायी अलौकिक पुरुष परमात्मा ने हमारी तथा धर्म की रक्षा करने हेतु राक्षसों का वध करने के लिए अवतार ले लिया है। वे निर्मल (पुरुष) इस समय चित्रकूट में पहुँच गये हैं। वे राम यहाँ भी आ जाएँगे और तब उनका दर्शन करके तुम प्राण-त्याग कर लो। तब तुम्हें मोक्ष सुलभ होगा। इस प्रकार के गुरुजनों के वचन आज सत्य निकले। मैं (तब से) आपके आगमन की प्रतीक्षा करती हुई तथा आपका ध्यान करती हुई आ रही हूँ। आपके श्रीचरणों के दर्शन का सौभाग्य मेरे गुरुजनों तक को प्राप्त नहीं हुआ। २० —मैं हीनजन्मा तथा अज्ञानी मूर्खा उसके लिए बिलकुल अधिकारिणी नहीं हूँ। मन एवं वचन के लिए अगोचर एवं अप्राप्य आपका रूप-दर्शन करने का अवसर मिला, जो महाभाग्य ही है। हे दयानिधि ! आपके श्रीचरणों पर प्रणाम एवं स्तुति करने का तरीका भी मुझे ज्ञात नहीं है। यह सुनकर राम ने कहा कि निराकुल भाव से तुम मेरा कथन सुनो। इस त्रिलोक में पुरुष, स्त्री आदि जातियाँ तथा विविध आश्रम

स्त्री जाति नामाश्रमादिकळल्ल कारणं मम भजनत्तिनु जगत्-त्रये। भक्तियोऩ्ऩोळिञ्ञु मट्टिल्ल कारणमेतुं मुक्ति वन्नीटुवानु-मिल्ल मट्टेतुमोऩ्ऩु। तीर्त्थ स्नानादि तपोदानवेदाद्ध्ययन क्षेत्रोपवास यागाद्यखिल कर्म्मङ्ङळाल् ओन्निनालोरुत्तनुं कण्टु किट्टुकयिल्ल एन्नेमद्भक्तियोळिञ्ञोन्नु कोण्टोरुन्नाळुं। भक्तिं साधनं संक्षेपिच्चु ञान् चोल्लीटुवनुत्तमे! केट्टु कोळ्क मुक्तिवन्नीटुवानाय्। मुख्य साधनमल्लो सज्जन संगं पिन्ने मत्कथालापं रण्टां साधनं मून्नामतुं। ३० मद्गुणेरणं पिन्ने मद्वचोव्याख्यातृत्वं मत्कलाजाताचार्योपासनमञ्चामतुं। पुण्य-शीलत्वं यम नियमादिकळोटुमेन्ने मुट्टाते पूजिक्कोन्तुळ्ळतारामतुं; मन्मन्त्रोपासकत्वमेळामतेट्टामतुं मंगलशीले! केट्टु धरिच्चु कोळ्ळेणं नी। सर्वभूतङ्ङळिलुं मन्मतियुण्टाकयुं सर्वदा मत्भक्तन्मारिल् परमास्तिक्यवुं, सर्वबाह्यार्त्थङ्ङळिल् वैराग्यं भविक्कयुं सर्वलोकात्मा ञानेन्नेप्पोळुमुऱ्य्क्कयुं, मत्तत्त्व विचारं केळीम्पतामतुं भद्रे! चित्तशुद्धियुक्कु मूलमादि साधनं नूनं। उक्तमायितु भक्ति साधनं नवविधं उत्तमे! भक्तिर्नित्यमाक्कुळ्ळु

मेरे भजन के साधन नहीं हैं। भक्ति के अतिरिक्त उसके लिए कोई दूसरा साधन नहीं है और मुक्ति के लिए भी दूसरा कोई साधन नहीं है। भक्ति को छोड़ अन्य तीर्थ-स्नान, तप, दान, वेदाध्ययन, मंदिर में उप-वास, याग आदि नाना कर्मों में से किसी भी साधन से कोई मुझे प्राप्त नहीं कर पायेगा। (इसलिए) तुम्हारी मुक्ति के लिए मैं भक्ति के भेद संक्षेप में समझाता हूँ, तुम ध्यान से सुनो। मुख्य साधन सज्जन-संगति है, फिर दूसरा साधन मेरा कथालाप है और तीसरा। ३० —मेरे गुणों पर आस्था, फिर मेरे वचनों की व्याख्या करना और पाँचवाँ मेरे ज्ञानी आचार्यों की उपासना है। पुण्यशील बन यम-नियम आदि से निर्विघ्न मेरी पूजा करना छठा साधन है। सातवाँ मेरा नाम स्मरण है और आठवाँ हे मंगलशीले! तुम ध्यानपूर्वक सुन लो। सर्वभूतों में अनुराग, सर्वदा मेरे भक्तों के प्रति पूज्य भाव, सब बाहरी वस्तुओं के प्रति वैराग्य भावना, सर्वलोक में मेरी आत्मा का निवास मानकर सबके प्रति ममत्व भावना (आठवाँ है) और नवाँ सबका मूल एवं आदि साधन स्वरूप चित्तशुद्धि ही है। हे उत्तमशीले! मैंने नवधा भक्ति तुम्हें बतायी है और विचारपूर्वक देखा जाए तो यह नित्यभक्ति किसे प्राप्त है? हे वामलोचने! चाहे तिर्यक् योनिज हो, चाहे मूढात्मा नारी हो, चाहे पुरुष हो, प्रेमलक्षणा

विचारिच्चाल् । तिर्य्यग्योनिजङ्ङळक्कॆन्नाकिलुं मूढमारां नारिकळक्कॆन्नाकिलुं पुरुषनॆन्नाकिलु प्रेमलक्षणयाय भक्ति संभविक्कुम्पोळ् वामलोचने ! मम तत्त्वानुभूतियुण्टां । तत्त्वानुभव सिद्धनायाल् मुक्तियुं वरुं तत्र जन्मनि मर्त्यनुत्तम तपोधने ! ४० आकयाल् मोक्षत्तिनु कारणं भक्ति तन्नॆ भागवताढ्ये ! भगवल् प्रिये ! मुनिप्रिये ! भक्तियुण्टाक कॊण्टु काणाय्वन्नितु तव मुक्तियुमटुत्तितु निनक्कु तपोधने ! जानकी मार्ग्गमऱिञ्ञीटिल् नी पऱयणं कॆनवानीता सीतामल् प्रिया मनोहरि । राघव वाक्यमेवं केट्टॊरु शबरियुमाकुलमकलुवानादरालरुळ् चॆय्ताळ्— सर्व्वुमऱिञ्ञिरिक्कुन्न निन्तिरुवटि सर्वज्ञनॆन्नाकिलुं लोकानुसरणात्थं चोदिच्चमूलं पऱञ्ञीटुवन् सीतादेवि खेदिच्चु लङ्कापुरि तन्निल् वाळुन्नु नूनं । कॊण्टु पोयतु दशकण्ठनॆन्नऱिञ्ञालुं कण्टितु दिव्यदृशातण्डलर्मकळॆ ञान् । मुम्पिलाम्मारु कुऱञ्ञॊन्नु तॆक्कोट्टु चॆन्नाल् पम्पयां सरसिनॆक्काणां तल् पुरोभागे पश्य पर्वतवरमृश्यमूकाख्यं तत्र विश्वसिच्चिरिक्कुन्नु सुग्रीवन् कपिश्रेष्ठन् बालियॆप्पेटिच्चु सङ्केतमायनुदिनं बालिक्कु मुनिशापं पेटिच्चु चॆन्नुकूटा । ५० नालु मन्त्रिकळोटुं कूटॆ

भक्ति के उद्भूत होने पर उसमें मेरे तत्वों की अनुभूति उत्पन्न होगी और तत्वानुभूति के सिद्ध होने पर हे उत्तम तपोधने ! मर्त्य को इस जन्म में ही मुक्ति प्राप्त होगी । ४० –हे भगवती ! हे भगवद्प्रिये ! हे मुनिप्रिये ! इसलिए मोक्ष का साधन भक्ति है । हे तपोधने ! भक्तियुक्त होने से तुम (मेरा) दर्शन कर सकी और तुम्हारी मुक्ति भी निकट आ गयी है । तुम्हें अगर ज्ञात है तो कृपया बता दो, मेरी प्रिया मनोहरी सीता को कौन किस मार्ग से ले गया है । राम का वचन सुनकर उनकी आकुलता दूर करने के विचार से शबरी ने कहा—सर्वज्ञ भगवान ने सर्वज्ञ होते हुए भी लोकानुसरणार्थ यह प्रश्न किया, इसलिए उत्तर देती हूँ । सीता निश्चय ही विरहार्ता हो लंकापुरी में वास कर रही हैं और उन्हें ले जानेवाला दशकंठ ही है, यह जान लीजिए । मैंने दिव्य दृष्टि से साक्षात् लक्ष्मी को देखा है । थोड़ा आगे दक्षिण दिशा की ओर चलने पर पम्पा सरोवर देख सकेंगे और उसके आगे ऋष्यमूक नाम से प्रसिद्ध पर्वतराज को आप देख पाएँगे, जिसे वालि से भयभीत कपिश्रेष्ठ सुग्रीव ने विश्वासपूर्वक अपने चार मन्त्रियों सहित अपना निवास-स्थान बना रखा है क्योंकि मुनिशापवश वालि वहाँ नहीं पहुँच सकेगा । ५० –हे सूर्यवंशी भगवान !

मार्त्ताण्डात्मजन् पालनं चेय्कभवानवने वळ्ळिपोले। सख्यवुं चेय्तु कोळ्क सुग्रीवन् तन्नोटेत्तालुदुःखङ्ङळेल्लां तीर्न्नुकार्य्यवुं साधिच्चीटुं। ॲङ्किल् आनग्नि प्रवेशं चेय्तु भवल् पाद पङ्कजत्तोटु चेर्न्नु कोळ्ळुवान् तुटङ्ङुन्नु। पार्क्कणं मुहूर्त्तं मात्रं भवान-त्रैवमे तीर्क्कणं मायाकृत बन्धनं दयानिधे! भक्ति पूण्टित्थ-मुक्त्वा देहत्यागवुं चेय्तु मुक्तियुं सिद्धिच्चितु शबरिक्कतु कालं। भक्तवत्सलन् प्रसादिक्किलिन्नवर्क्केन्निल्लेत्तीटुं मुक्ति नीच जाति-कळ्क्केन्नाकिलुं। पुष्करनेत्रन् प्रसादिक्किलो जन्तुक्कळ्क्कु दुष्करमायिट्टोन्नुमिल्लेन्नु धरिक्कणं। श्रीरामभक्ति तन्ने मुक्तियें सिद्धिप्पिक्कुं श्रीराम पादांभोजं सेविच्चु कोळ्क नित्यं। ओरोरो मन्त्र तन्त्र ध्यानकर्म्मादिकळुं दूरेस्सन्त्यजिच्चु तन् गुरुनाथो-पदेशाल् श्रीरामचन्द्रन् तन्ने ध्यानिच्चु कोळ्क नित्यं श्रीराम मन्त्रं जपिच्चीटुक सदाकालं। ६० श्रीरामचन्द्र कथकेळ्क्कयुं चोल्लुकयुं श्रीरामभक्तन्मारेप्पूजिच्चु कोळ्ळुकवुं श्रीराममयं जगत्सर्वमेन्नुरय्क्कुम्पोळ् श्रीरामचन्द्रन् तन्नोटैक्ययुं प्रापिच्चीटां। राम रामेति जपिच्चीटुक सदाकालं भामिनी भद्रे! परमेश्वरी!

आप यथायोग्य उसकी रक्षा करें। आप सुग्रीव से सख्य कर लें तो सारे दुःख दूर हो जाएंगे और कार्य भी सिद्ध होगा। तो फिर मैं अग्नि-प्रवेश करके आपके पाद-पंकजों में विलीन होने का उपक्रम करती हूँ। आप पल भर के लिए वहाँ विराजमान हो देखते रहिये। हे दयानिधि! आप (मेरे) मायाकृत बंधन तोड़ लीजिए। भक्तिपूर्वक इस प्रकार कहकर शबरी ने देह-त्याग किया और उसे तुरन्त ही मुक्ति प्राप्त हुई। भक्तवत्सल के प्रसाद से किसी भी जाति के व्यक्ति को मुक्ति लभ्य हो सकती है, चाहे वह व्यक्ति नीच जाति का ही क्यों न हो। पुष्कर नेत्र की कृपा हो तो प्राणियों के लिए दुष्कर कोई भी कार्य नहीं, यह समझना चाहिए। श्रीरामके प्रति भक्ति ही मुक्ति प्रदायिनी है, इसलिए (हे मनुष्य) तुम नित्य श्रीराम जी के चरण-कमलों की सेवा करो। नाना प्रकार के मन्त्र, तन्त्र, ध्यान, कर्म तथा एकान्त संन्यास सबको दूरकर अपने गुरुनाथ के उपदेशानुसार नित्य श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करो और नित्य श्रीरामचन्द्रजी का मन्त्र जपते जाओ। ६० —श्रीराम कथा-श्रवण, पारायण, श्रीराम-भक्तों की पूजा और सारे जगत को श्रीराममय समझने पर श्रीरामचन्द्र के प्रति ऐक्य भाव बढ़ता जाएगा। (शिवजी पार्वती को बता रहे हैं) हे भामिनी! हे भद्रे! हे परमेश्वरी! हे पद्मविलोचने! तुम सदाकाल 'राम-राम'

पत्मेक्षणे ! इत्थमीश्वरन् परमेश्वरियोटु रामभद्र वृत्तान्तमरुळ् चेय्ततु केट्टनेरं भक्तिकौण्टेटं परवशयाय् श्रीरामङ्कल् चित्तवुमुऱप्पिच्चु लयिच्चु रुद्राणियुं। पैङ्किळिप्पैतल् तानुं परमानन्दं पूण्टु शङ्करा ! जयिच्चरुळेन्तिरुन्तरुळिनाळ् । ६६

इत्यद्ध्यात्म रामायणे उमा महेश्वर संवादे

॥ आरण्यकाण्डं समाप्तं ॥

जपती रहो। इस प्रकार जब परमेश्वर ने परमेश्वरी से राम की कथा कही तब उसे सुनकर भक्ति परवश हो रुद्राणी का मन श्रीराम पर केन्द्रित एवं तल्लीन हो उठा। शुकी ने परमानन्दपूर्वक कहा—'शंकर की जय हो।' ६६

॥ अरण्यकाण्ड समाप्त ॥

किष्किंधा काण्डम्

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

हनुमल् संगमम्

शारिकप्पैतले ! चारुशीले ! वरिकारोमले ! कथाशेषवुं चोल्लु नी । चोल्लुवनेङ्किलनंगारि शङ्करन् वल्लभयोटरुळ् चेय्त प्रकारङ्ङळ् । कल्याणशीलन् दशरथ सूनु कौसल्यातनयनवरजन् तन्नोटुं पम्पासरस्तटं लोक मनोहरं संप्राप्य विस्मयं पूण्टरुळीटिनान् । क्रोशमात्रं विशालं विशदामृतं क्लेशविनाशनं जन्तु पूर्ण स्थलं, उल्फुल्ल पत्मकल् हार कुमुद नीलोत्पल मण्डितं हंसकारण्डव षट्पद कोकिल कुक्कुट कोयष्टि सर्प्प सिंह व्याघ्र सूकर सेवितं; पुष्पलता परिवेष्टित पादप सल्फल सेवितं सन्तुष्ट जन्तुकं, कण्टु

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

(कवि शुकी से आग्रह करता है) हे सुशील एवं प्रिय शुक बालिके ! आओ और (रामायण की) आगे की कथा बोलो । (शुकी का कथन है) ऐसी बात है तो सुनिये, अनंगारि शिव ने अपनी प्रिया को जो कथा सुनायी, वह उसी प्रकार मैं कहती हूँ । कल्याणप्रद दाशरथी एवं कौसल्यापुत्र राम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ चलते हुए पम्पा सरोवर के तट पर पहुँचे और वहाँ की मनोहर प्राकृतिक सुषमा देख विस्मय विमुग्ध हो उठे । लगभग क्रोशमात्र विशाल, थकान दूर करनेवाला, स्फटिक सम स्वच्छ जल से परिपूर्ण सरोवर और उसमें विकसित पद्म, कलहार, कुमुद, नीलोत्पल (जैसे पुष्पविशेष) हंस, कारण्डव, षड्पद, कोकिल, कुक्कुट (जैसे पक्षियों का संचय) तथा आसपास के प्रदेश में सर्प, सिंह, व्याघ्र, सूकर आदि पशु, पुष्प-लताओं से परिवेष्टित एवं स्वादिष्ट फलों से युक्त वृक्ष आदि देखकर वे प्रसन्न हुए तथा जल-पान करके दाह बुझाकर

कौतूहलं पूण्टु तण्णीर कुटिच्चिण्टलुं तीर्त्तु मन्दं ऩटन्नीटिनान् । काले वसन्ते सुशीतळे भूतले भूलोक बालन्मारिरुवरुं । १० ऋश्यमूकाद्रि पार्श्वस्थले सन्ततं निश्वासमुळ्क्कोण्टु विप्रलापत्तोटुं, सीताविरहं पोऱाञ्ञु करकयुं चूतायुधार्त्ति मुळुत्तु पऱकयुं, आधि-कलर्न्नु ऩटन्नटुक्कुं विधौ भीतनाय्वन्नु दिनकर पुत्रनुं । सत्वरं मंत्रिकळोटुं कुतिच्चु पाञ्ञुत्तुंगमाय शैलाग्रमेऱीटिनान् । मारुति-योटु भयेन चोल्लीटिनानारी वरुन्नतिरुवर् सन्नद्धराय् । ऩेरे धरिच्चु वरिक ऩी वेगेन धीरन्मारेत्रयुमेन्नु तोन्नुं कण्टाल् । अग्रजन् चोल्कयालेन्नेब्बलालिन्नु निग्रहिप्पानाय्वरुन्नवरल्लल्ली ? विक्रममुळ्ळवरेत्रयुं तेजसा दिक्कुकळोक्के विळङ्ङुन्नु काण्क ऩी । तापस वेषं धरिच्चिरिक्कुन्नितु चापबाणासिशस्त्रङ्ङळु-मुण्टल्लो; ऩीयोरु विप्रवेषं पूण्टवरोटु वायुसुताचेन्नु चोदिच्च-ऱियणं । २० वक्त्रनेत्रालाप भावङ्ङळ्कोण्टवर् चित्तमेन्तेन्न-तऱिञ्ञाल् विरविल् ऩी, हस्तङ्ङळ् कोण्टऱियिच्चीटु ऩम्मुटे शत्रुक्कळेङ्किलतल्लङ्किल् ऩिन्नुटे वक्त्रप्रसाद मन्दस्मेर संज्ञया

मन्द-मन्द आगे बढ़े। भूतल पर सुशीतल वसन्तकाल था । दोनों राजकुमार। १० —ऋष्यमूक पर्वत के पार्श्व स्थल पर पहुँच गये। (पुष्पों की सुगंधि तथा शीतल समीर से प्रभावित हो) सीता-विरह न सह सकने के कारण अश्रुजल प्रवाहित करते हुए तथा निरंतर दीर्घश्वास भरते हुए, लक्ष्मण से प्रलाप करते हुए तथा कामज्वर से पीड़ित राम को (पर्वत की ओर) अग्रसर होते देख दिनकर-पुत्र (सुग्रीव) भयभीत हो उठे। वे तुरन्त ही अपने मंत्रियों के साथ भागते हुए उत्तुंग शैलाग्र पर पहुँच गये और फिर मारुति से भयविह्वल हो पूछा कि शस्त्रों से सन्नद्ध हो वे आनेवाले कौन होंगे ? वे देखने में बड़े ही धीर-वीर जान पड़ते हैं। तुम तुरन्त ठीक पता लगाकर आओ। ज्येष्ठ भ्राता के आदेशा-नुसार बलपूर्वक मेरा निग्रह करने के लिए आनेवाले तो नहीं हैं ? जरा देखो तो सही, उनकी तेजोमय कांति से सारी दिशाएँ प्रकाशित हो रही हैं। तापस वेषधारी होते हुए भी वे चाप, बाण, असि आदि शस्त्रों से युक्त हैं। हे वायुसुत, तुम विप्रवेष में उनके पास पहुँचकर पूछताछ कर लो। २० —मुख-भाव, दृष्टि एवं वचनों पर ध्यान देते हुए उनके मनो-गत को भाँपकर अगर हमारे शत्रु हों तो हस्त संकेतों से मुझे सूचित कर लो। अगर हमारे मित्र हैं तो मन्द मुस्कान के द्वारा मुझे उसकी सूचना दी जानी चाहिये। कर्मसाक्षीसुत (सूर्यपुत्र सुग्रीव) के वचनों को सुनकर

मित्रमेन्नुळ्ळतुमेन्नोटु चोल्लणं । कर्म्मसाक्षीसुतन् वाक्कुकळ् केट्टवन् ब्रह्मचारी वेषमालंब्य सादरं अञ्जसा चेन्नु नमस्करिच्चीटिनानञ्जनापुत्रनुं भर्त्तृपादांबुजं । कञ्जविलोचनन्माराय मानव कुञ्जरन्मारेत्तोळुतु विनीतनाय् । अंगजन् तन्नेज्जयिच्चोरु कान्तिपूण्टिङ्ङने काणाय निङ्ङळिरुवरुं आरेन्नरिकयिलाग्रहमुण्टतु नेरे परयणमेन्नोटु सादरं । दिक्कुकळात्मभासैव शोभिप्पिक्कुमर्क्क निशाकरन्मारेन्नु तोन्नुन्नु । त्रैलोक्य कर्त्तृभूतन्मार् भवान्मारेन्नालोक्य चेतसि भाति सदैवमे । ३० विश्वैक वीरन्माराय युवाक्कळामश्विनी देवकळोमट्टेन्नियें, विश्वैक कारण भूतन्मारायोरु विश्वरूपन्मारामीश्वरन्मार् निङ्ङळ् । नूनं प्रधानपुरुषन्मार् मायया मानुषाकारेण सञ्चरिक्कुन्नितु; लीलया भूभारनाशनार्त्थं परिपालनत्तिन्नु भक्तानां महीतले । वन्नु राजन्य वेषेणपिरन्नोरु पुण्यपुरुषन्मार् पूर्ण्णगुणवान्मार् । कर्त्तुं जगल् स्थिति संहार सर्ग्गङ्ङळुद्यतौलीलया नित्य स्वतन्त्रन्मार् । मुक्ति नल्कुं नरनारायणन्मारेन्नुळ्ळारिलिन्नु तोन्नुन्नु निरन्तरं । इत्थं परञ्ञुतोळुतु निन्नीटुन्न भक्तनेक्कण्टु परञ्ञु रघूत्तमन्—

एक ब्रह्मचारी का-सा वेष धारणकर अञ्जनापुत्र (हनुमान) अञ्जसा (तुरन्त) स्वामी के चरणकमलों पर प्रणत हुए और कंजविलोचन मानव श्रेष्ठों के सामने हाथ जोड़कर विनीत भाव से पूछा—"हे कामदेव को भी लज्जित करने योग्य कांतिवाले पुरुषरत्न ! यह जानने की अभिलाषा है कि आप दोनों कौन हैं । और कृपापूर्वक मुझे बता दें । अपनी ही कांति से दिशाओं को तेजोमय बनानेवाले आप लोग सूर्य-चन्द्र से लगते हैं । आप लोगों को देखकर मुझे लगता है कि आप लोग तीनों लोकों के कर्त्ता ईश्वर स्वरूप ही हैं । ३० —अथवा विश्व-वीर तरुण अश्विनीदेव तो नहीं हैं ? आप लोग विश्व के लिए कारणभूत ईश्वर के मनुष्यावतार तो नहीं हैं ? निश्चय ही मायामय आदिपुरुष ही मनुष्य के आकार में घूम रहे हैं । हे लोकनाथ ! आप लीलाधारी बन भू-भार का नाश करके भक्तों की रक्षा करने के लिए क्षत्रियरूप में अवतीर्ण पुण्यपुरुष ही हैं । और आप सर्वगुणों से सम्पन्न महापुरुष हैं । आज मेरे मन में यह विचार रूढ़मूल हो रहा है कि आप नित्य स्वतन्त्र (परमात्मा) हैं जो सृष्टि स्थिति एवं संहार की लीलाएँ करने के लिए कटिबद्ध मुक्तिदाता नर-नारायण ही हैं ।" इस प्रकार के कथन के साथ हाथ जोड़ प्रणाम निरत हो खड़े भक्त को देखकर श्रीरामचन्द्रजी ने बड़े कुतूहल के साथ कहा—

पश्य सखे ! वटु रूपिणं लक्ष्मणा ! निश्शेष शब्दशास्त्रमनेन श्रुतं; इल्लोरपशब्दमेङ्ङुमे वाक्किङ्कल् नल्ल वैयाकरणन् वटु निर्णयं । ४० मानववीरनुमप्पोळरुळ् चेय्तु वानरश्रेष्ठने नोक्कि लघुतरं— रामनेन्नेन्नुटे नामं दशरथ भूमिपालेन्द्र तनयनिवन् मम सोदरनाकिय लक्ष्मणन् केळ्क्क नी जातमोदं परमार्थं महामते ! जानकियाकिय सीतयेन्नुण्टोरु मानिनियेन्नुटे भामिनि कूटवे; तात नियोगेन कानन सीमनियातन्मारायित्तपस्सु चेय्तीटुवान् दण्डकारण्ये वसिक्कुन्न नाळति चण्डनायोरु निशाचरन् वन्नुटन्, जानकी देवियेक्कट्टु कोण्टीटिनान् कानने अङ्ङळ् तिरञ्ञु नटक्कुन्नु । कण्टीलवळेयोरेटत्तुमिन्निह कण्टुकिट्टि निन्ने नीयारेटो सखे ! चोल्लीटुकेन्नतु केट्टोरु मारुति चोल्लिनान् कूप्पित्तोळुतु कुतूहलाल्— सुग्रीवनाकिय वानरेन्द्रन् पर्वताग्रेवसिक्कुन्नितत्वरघुपते ! ५० मन्त्रिकळाय् अङ्ङळ् नालुपेरुण्टल्लो सन्ततं कूटेप्पिरियाते वाळुन्नु; अग्रजनाकिय बालि कपीश्वरनुग्रनाट्टिक्कळञ्ञीटिनान् तम्पियै । सुग्रीवनुळ्ळ परिग्रहं तन्नेयुमग्रजन् तन्ने परिग्रहिच्चीटिनान् । ऋश्यमूकाचलं सङ्केतमाय्वन्नु विश्वासमोटिरिक्कुन्नितर्क्कात्मजन् । आनवन् तन्नुटे

"हे लक्ष्मण ! इस ब्रह्मचारी को देखो। इसने अनेक शब्द-शास्त्रों का खूब अभ्यास किया है। यह निश्चय ही श्रेष्ठ वैयाकरण है। इसके वचनों में कहीं किसी प्रकार का अपशब्द नहीं आया है।" ४० —फिर मानवश्रेष्ठ राम ने वानरश्रेष्ठ को देखकर कहा—"हे महात्मा ! तुम सानंद सुनो। मैं राम हूँ और महाराज दशरथ का पुत्र हूँ। यह मेरा अनुज लक्ष्मण है। जनक महाराज की पुत्री सीता नाम की मेरी पत्नी भी हमारे साथ थी। पिता का आदेश पाकर तपस्या के लिए दण्डकारण्य में आ हमारे ठहरते समय एक दुष्ट राक्षस जानकी को चुरा ले गया। हम उसकी खोज में वन-वन भटक रहे हैं। वह कहीं दिखाई नहीं दे रही है। अब भाग्यवश आपसे भेंट हो सकी। हे मित्र ! जरा बता दें कि आप कौन हैं।" राम का प्रश्न सुनकर हाथ जोड़कर कुतूहलपूर्वक मारुति ने कहा—"हे रघुपति ! सुग्रीव नाम के वानर श्रेष्ठ उस पर्वत की चोटी पर रहते हैं। ५० —हम चार मन्त्री लोग सदा उनके साथ हैं। वानरराजा दुष्ट बालि ने अपने अनुज (सुग्रीव) को अकारण देश से निकाल दिया है। उसने अपने भाई की परिणीता पत्नी का बलात् परिग्रहण कर लिया। आज अर्कात्मज (सुग्रीव) ऋष्यमूकाचल को

भृत्यनायुळ्ळोरु वानरन् वायुतनयन् महामते ! नामधेयं हनु-
मानञ्जनात्मजनामयं तीर्त्तु रक्षिच्चु कोळ्ळेणमे । सुग्रीवनोटु
सख्यं भवानुण्टङ्किल् निग्रहिक्कामिरुवर्क्कुमरिकळे । वेलचेय्या-
मतिनावोळमाशु आनालंबनं मट्टेनिक्किल्ल दैवमे ! इत्थं तिरुमन-
स्सेङ्किलेन्तुळ्ळ्कुळ्ळ्तापमेल्लामकलुं दयानिधे ! अन्तुणर्त्तिच्चु
निजाकृति कैक्कोण्टुनिन्नु तिरुमुम्पिलाम्मारु मारुति । ६० पोक
मम स्कन्धमेरीटुविन् निङ्ङळाकुल भावमकलेक्कळञ्ञालुं ।
अप्पोळ् शबरितन् वाक्कुकळोर्त्तु कण्टुल्पलनेत्रननुवादवुं चेय्तु । ६२

सुग्रीव सख्यम्

श्रीरामलक्ष्मणन्मारेक्कळुत्तिलाम्माऽङ्ङेट्टु नटन्नितु
मारुति । सुग्रीव सन्निधौ कोण्टुचेन्नीटिनान् व्यग्रं कळक नी
भास्करनन्दन ! भाग्यमहोभाग्यमोर्त्तोळमेत्रयुं भास्करवंश
समुत्भवन्माराय रामनुं लक्ष्मणनाकुमनुजनुं कामदारार्थमिवि-

अपना वास-स्थान बना वहीं विश्वासपूर्वक बैठे हुए हैं। हे महामति ! मैं उनका दास एक वानर हूं। मैं वायुतनय तथा अंजनात्मक हनुमान हूँ। सुग्रीव से सख्य करने की आपकी इच्छा है तो दोनों परस्पर के सहयोग से अपने शत्रु का संहार कर सकेंगे। (आपकी इच्छा हो तो) मैं अभी सख्य के लिए प्रयत्न करूँगा। हे भगवान ! मेरा और कोई अवलम्ब नहीं है। हे दयानिधि ! अगर आपको मेरा प्रस्ताव उचित लगा तो आप कृपापूर्वक वहाँ तक (सुग्रीव के पास) पधारें। (उनसे मिलकर) आपका सन्ताप दूर होगा।" यह कहकर अपना वास्तविक रूप धारण करके हनुमान राम के सम्मुख खड़े हो गये। ६० —और आग्रह किया कि आप लोग मेरे कंधों पर चढ़िए और थकान दूर कीजिए। शबरी के वचनों का अनुस्मरण करते हुए उत्पल नेत्र (कमल-लोचन राम) ने तब (हनुमान की उन्हें उठा ले चलने की) प्रार्थना स्वीकार की। ६२

सुग्रीव की मित्रता

हनुमान श्रीरामजी तथा लक्ष्मणजी को कंधों पर बिठाकर चल पड़े और सुग्रीव के पास ले आये। उन्होंने सुग्रीव से कहा—"हे भास्कर नन्दन ! अब भयभीत होने की बात नहीं रही। सोचें तो बड़ा

टेय्कॊळ्ळुन्नतिल्ळ । सुग्रीवनोटिवण्णं परञ्ञद्रीश्वराग्रे महा-
तरुच्छायातले तदा, विश्वैकनायकन्मारां कुमारन्मार् विश्रान्त
चेतसान्निरुन्नरुळीटिनार् । वातात्मजन् परमानन्दमुळ्क्कॊण्टु
नीतियोटर्क्कात्मजनोटु चॊल्लिनान्— भीतिकळक नी मित्रगोत्रे
वन्नु जातन्मारायॊरु योगेश्वरन्मारी श्रीरामलक्ष्मणन्मा-
रॆळुन्नळ्ळियतारॆयुं पेटिक्क वेण्ट भवानिनि । वेगेन चॆन्नु वन्दिच्चु
सख्यं चॆय्तु भागवत प्रियनाय् वसिच्चीटुक । १० प्रीतनायोरु
सुग्रीवनु मन्नेरमादर पूर्वमुत्थाय ससंभ्रमं, विष्टप नाथनिरुन्न-
रुळीटुवान् विष्टरार्त्थं नल्ल पल्लव जालङ्ङळ् पॊट्टिच्च-
वनियिलिट्टानतु· नेरमिष्टनां मारुति लक्ष्मणनुमॊटिच्चिट्टतु
कण्टु सौमित्रि सुग्रीवनुं पुष्ट मोदालॊटिच्चिट्टरुळीटिनान् ।
तुष्टि पूण्टॆल्लावरुमिरुन्नीटिनान् नष्टमाय् वन्नितु सन्ताप
संघवुं । मित्रात्मजनोटु लक्ष्मणन् श्रीराम वृत्तान्तमॆल्लामऱि
यिच्चतु नेरं । धीरनामादित्य नन्दनन् मोदेन श्रीरामचन्द्र-
नोटाशु चॊल्लीटिनान्—नारी मणियाय जानकी देवियॆ

सौभाग्य ही है कि ये राम और उनके अनुज लक्ष्मण सूर्यवंश जात हैं। (राम की पत्नी सीता का अपहरण होने से) ये अपनी प्रिय पत्नी की खोज में जाते हुए यहाँ आ पधारे हुए हैं।" इस समय संसार के लिए नायक दोनों कुमार (राम तथा लक्ष्मण) पर्वत श्रेष्ठ की चोटी पर एक विशाल वृक्ष की शीतल छाया में बैठकर विश्राम ले रहे थे। उसके बाद वातात्मज (हनुमान) ने बड़े प्रसन्न हो अर्कात्मज (सुग्रीव) को अपने मन्त्रीधर्म के अनुरूप उपदेश दिया—"आप अपना भय दूर कर लीजिएगा। सूर्यवंश में जात योगेश्वर राम तथा लक्ष्मण ही आपके सहायक बनकर यहाँ पधारे हुए हैं। अब आपको किसी से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। तुरन्त जाकर नमस्कार करके मित्रता बनाकर आप भगवान के प्रिय दास बनकर रहिएगा।" १० —(हनुमान का उपदेश पाकर)- सुग्रीव सानन्द उठे और तुरन्त भगवद्‌चरणों में पहुँच गये। विष्टपनाथ (भुवनेश्वर) भगवान राम को बैठने के लिए उन्होंने पृथ्वी पर सुन्दर एवं कोमल लता-पल्लव बिछा दिये। यह देखकर प्रिय हनुमान ने लक्ष्मण के लिए तथा लक्ष्मण ने प्रसन्न हो सुग्रीव के बैठने के लिए पल्लव जाल बिछा दिये और सब लोग परस्पर उपचारपूर्वक सानन्द बैठ गये। इस समय सब अपना-अपना भारी दुःख भूल गये। तब लक्ष्मण ने सूर्यपुत्र सुग्रीव को श्रीरामजी का समग्र चरित कह सुनाया। धीर

आराञ्ञरिञ्ञु तरुन्नुण्टु निर्णयं। शत्रु विनाशनत्तिन्नटियनोरु मित्रमाय्वेल चेय्यां तवज्ञावशाल्। एतुमितु निरूपिच्चु खेदिक्करुताधिकळोक्के यकटुवान् निर्णयं। २० रावणन् तन्नेस्सकुलं वधं चेय्तु देवियेयुं कोण्टु पोरुन्नतुण्टु ञान्। ञानोरवस्थ कण्टेनोरुन्नाळतु मानववीर! तेळिञ्ञु केट्टीटणं: मन्त्रिकळ् नालुपेरुं ञानुमायचलान्ते वसिक्कुन्न कालमोरु दिनं, पुष्कर नेत्रयायोरु तरुणियै पुष्कर मार्ग्गेण कोण्टु पोयानोरु रक्षोवरनतु नेरमस्सुन्दरि रक्षिप्पतिन्नारुमिल्लाञ्ञु दीनयाय् राम रामेति मुरयिट्टुन्नोळ् तव भामिनितन्नेयव- ळेन्नते वरू। उत्तमयायवळ् ञङ्ङळेप्पर्वतेन्द्रोत्तमांगे कण्टन्नेरं परवशाल् उत्तरीयत्तिल्प्पोतिञ्ञाभरणङ्ङळद्रीश्वरोपरि निक्षेपणं चेय्ताळ्। ञानतु कण्टिङ्ङेटुत्तु सूक्षिच्चु वच्चेनतु काणण- मेङ्किलो कण्टालुं; जानकीदेवितन्नाभरणङ्ङळो मानववीरा! भवानरियामल्लो। ३० एन्नु परञ्ञतोटुत्तु कोण्टु वन्नु मन्नवन्

साहसी आदित्यनन्दन (सुग्रीव) ने सानन्द श्रीरामचन्द्रजी को बताया— "मैं निश्चय ही नारीरत्न सीताजी को खोज लाकर आपके सुपुर्द कर दूंगा। अगर आपकी अनुमति हो तो (आपके) शत्रुनाश के लिए यह दास आपका मित्र बनकर आवश्यक कार्य करेगा। मैं निश्चय ही आपकी व्यथा दूर कर लूंगा इसलिए आप इसके सम्बन्ध में निश्चिन्त रहियेगा। २० (अगर रावण ने ही आपकी पत्नी को चुरा लिया तो) वंश समेत रावण का निग्रह करके देवी को मैं उठा ले आऊंगा। हे मानववीर! आप सानन्द मेरी बात सुनें। इस घटना से सम्बन्धित एक बात कुछ दिन पहले यहाँ हुई। एक दिन मैं अपने चारों मंत्रियों के साथ यहाँ पर्वत शिखर पर बैठा हुआ था। उस समय एक राक्षस एक पुष्कर- नेत्रा (कमल जैसी नेत्रवाली) को पुष्कर (आकाश) मार्ग से उठा ले जा रहा था। तब उस अनाथा सुन्दरी ने दीन स्वर में राम-राम की पुकार मचायी। यह पुकार मचाती हुई और राक्षस से उठा ले गयी सुन्दरी आपकी ही पत्नी हो सकती है। इसमें सन्देह के लिए अब जरा भी अवकाश नहीं रह गया। हमें पर्वतश्रेष्ठ के शिखर पर बैठे देखकर उस परवशा साध्वी ने अपने आभूषणों को उत्तरीय में लपेटकर हमारी ओर नीचे पर्वतशिखर पर डाल दिया। यह देख मैंने उसे उठाकर संभालकर रखा है। उसे आप देख लेना चाहें तो देख लीजिएगा। हे मानववीर! जानकीदेवी के आभूषण आप तोपहचान लेंगे ही।" ३० —यह

तन् तिरुमुम्पिल् वच्चीटिनान्। अण्णॊंजनेत्रनॆंट्टु त्तॊक्कुन्नेरं कण्णुनीर् तन्नॆंकुशलं विचारिच्चु। ऒन्नॆंक्कणक्के पिरिञ्ञितो न्निङ्ङळुं तन्वंगियाकिय वैदेहियोटय्यो ! सीते जनकात्मजे ! मम वल्लभे ! नाथे ! नळिनदलायतलोचने ! रोदनं चॆय्तु विभूषण सञ्चयमाधि पूर्वं तिरुमारिलमुळ्त्तियुं प्राकृतन्मारां पुरुषन्मारॆप्पोलॆ लोकैकनाथन् करञ्ञु तुटङ्ङिनान्। शोकेन मोहं कलर्न्नु किटक्कुन्न राघवनोटु पऱञ्ञितु लक्ष्मणन्— दुःखियाय्केतुमे रावणन् तन्नॆयुं मर्क्कट श्रेष्ठसहायेन वैकातॆ निग्रहिच्चम्बुज नेत्रयां सीतयॆ कैक्कॊण्टु कॊळ्ळां प्रसीद प्रभो ! हरे ! सुग्रीवनुं पऱञ्ञानतु केट्टुटन् व्यग्रियाय्केतुमे रावणन् तन्नॆयुं ४० निग्रहिच्चाशु नल्कीटुवन् सीतयॆ कैक्कॊळ्क धैर्य्यं धरित्रीपते ! विभो ! लक्ष्मण सुग्रीव वाक्कुकळिङ्ङने तल्क्षणं केट्टु दशरथपुत्रनुं दुःखवुमॊट्टु चुरुक्कि मरुविनान् मर्क्कट श्रेष्ठनां मारुतियन्नेरं, अग्नियेयुं ज्वलिप्पिच्चु शुभमाय लग्नवुं पार्त्तु चॆय्यिप्पिच्चु सख्यवुं, सुग्रीवराघवन्मारग्नि

कहकर उसे उठा ले आकर सुग्रीव ने महाराज राम के श्रीसम्मुख रख दिया। उसे उठाकर देखते समय अर्णोज नेत्र श्रीराम के नयनों से अश्रुधारा प्रवाहित हो उठी। रामजी आभूषण हाथ में लिये पूछने लगे—"क्या मेरे जैसे तुम लोगों ने भी तन्वंगी वैदेही को छोड़ दिया ?" फिर प्रिये ! जानकी ! सीते ! मेरी प्राणप्यारी ! कमललोचने ! की पुकार मचाते हुए तथा आभूषणों को छाती से लगाते हुए प्राकृत मानव के समान लोकेश भगवान विलाप करने लगे। विरह ताप से पीड़ित भगवान राम से लक्ष्मण ने कहा—"हे नाथ ! हे प्रभु ! आप दुखी न बनें; आप शान्त हों। मैं वानरश्रेष्ठों की सहायता से अविलम्ब रावण का निग्रह करके कमललोचना सीताजी को उठा ले आऊँगा।" यह सुनकर सुग्रीव ने भी (राम से) कहा—"आप व्यथित न हों रावण को—। ४० —मारकर मैं जल्दी ही सीता को ला दूंगा। हे पृथ्वी-पति ! हे विभु ! आप सीता को प्राप्त कर लेंगे।" लक्ष्मण तथा सुग्रीव के इस प्रकार के (सांत्वना के) वचन सुनकर दशरथपुत्र राम ज़रा समाश्वसित हुए। वानरश्रेष्ठ हनुमान ने उस समय शुभ लग्न देखकर और अग्नि को प्रज्ज्वलित कर राम और सुग्रीव के बीच परस्पर मित्रता करवायी। राम तथा सुग्रीव, अग्नि को साक्षी बनाकर परस्पर की गयी मित्रता से कार्यसिद्धि होगी, यह समझकर आश्वस्थ हो पर्वत

साक्षियाय् सख्यवुं चेय्तु परस्परं कार्य्यंवुं सिद्धिक्कुमेन्नुरच्चात्म-खेदं कळञ्ञुत्तुंगमाय शेलाग्रे मरुविनार्। बालियुं तानुं पिणक्कमुण्टायतिन् मूलमेल्लामुणर्त्तिच्चरुळीटिनान्–पण्टु माया-वियेन्नोर सुरेश्वरनुण्टायितु मयन् तन्नुटे पुत्रनाय्; युद्धत्तिनारु-मिल्लाञ्ञु मदिच्चवनुद्धतनाय् नटन्नीटुं दशान्तरे; किष्किन्धयां पुरि पुक्कु विळिच्चितु मर्क्कटाधीश्वरनाकिय बालिये। ५० युद्धत्तिनाय् विळिक्कुन्नतु केट्टति क्रुद्धनां बालि पुरप्पेट्टु चेन्नुटन् मुष्टिकळ् कोण्टु ताडिच्चतु कोण्टतिदुष्टनां दैत्यनुं पेटिच्चु मण्टिनान्। वानर श्रेष्ठनुमोटियेत्तीटिनान् ञानुमतु कण्टु चेन्नितु पिन्नाले; दानवन् चेन्नु गुहयिलुळ्प्पुक्कितु वानरश्रेष्ठनुमेन्नोटु चोल्लिनान्ः ञानितिल् पुक्किवन् तन्ने योटुक्कुवन् नूनं विलद्वारि निल्क नी निर्भयं। क्षीरं वरि-किलसुरन् मरिच्चीटुं चोरवरिकिलटच्चु पोय्वाळ्क नी। इत्थं परञ्ञतिल् पुक्कितु बालियुं तत्रविलद्वारि निन्नेनटियनुं। पोयितु कालमोरुमासमेन्निट्टुमागत नायतुमिल्ल कपीश्वरन्। वन्नितु चोर विलमुखं तन्निल् निन्नेन्नुळ्ळिल् निन्नु वन्नू

शिखर पर विराजमान हुए। तब सुग्रीव ने (भगवान राम से) अपने तथा बालि में शत्रुता होने का कारण सविस्तार कह सुनाया—"पहले मय के पुत्र मायावी नामक असुर ने अपने से युद्ध करने के लिए किसी को न पाकर घूमते हुए किष्किन्धा में आ वानर-राजा बालि को युद्ध के लिए चुनौती दी। ५० (मायावी को) युद्ध की चुनौती देते सुन क्रुद्ध बालि बाहर आया और खूब मुष्टि-प्रहार किया जिससे भयभीत दुष्ट दैत्य भाग खड़ा हुआ। वानरश्रेष्ठ ने उसका पीछा किया और यह देख मैं भी उसके (बालि के) पीछे गया। वह दैत्य जाकर एक बड़ी गुफा में प्रविष्ट हुआ। तब वानरश्रेष्ठ बालि ने मुझे बताया कि मैं इस गुफा में प्रविष्ट हो उसको मार डालूंगा और तुम इस गुहा-द्वार पर निश्चिन्त मेरी प्रतीक्षा करते रहो। अगर गुहा से क्षीर बह आया तो समझ लेना कि दैत्य मर गया और रक्त आने पर गुहाद्वार बन्द करके तुम जाकर राज्य-शासन कर लो। यह कहकर बालि गुहा-द्वार के भीतर चला गया और मैं (उसकी प्रतीक्षा में) गुहा-द्वार पर खड़ा रहा। एक मास व्यतीत हो जाने पर भी कपीश्वर (बालि) वापस नहीं आया। (शंकाकुल हो खड़े-खड़े देखते समय) गुहा से रक्त-प्रवाह हुआ और (यह देख) मैं व्याकुलचित्त हो उठा। तब मैंने यह निश्चय कर लिया

परितापवुं; अग्रजन् तन्ने मायाविमहासुरन् निग्रहिच्चानेन्नुरच्चु ञानुं तदा। ६० दुःखङ्ङळक्कोण्टु किष्किन्ध पुक्कीटिनान् मर्क्कटवीररुं दुःखिच्चतु कालं। वानराधीश्वरनायभिषेकवुं वानरन्मारेनिक्कु चेय्तीटिनार्। चेन्नितु कालं कुरुञ्ञोन्नु पिन्नेयुं वन्नितु बालि महाबलवान् तदा। कल्लिट्टु ञान् बिलद्वारमटच्चतु कोल्लुवानेन्नोर्त्तु कोपिच्चु बालियुं; कोल्लु-वानेन्नोटट्टु भयेन ञानेल्लाटवुं पाञ्ञरिक्करुताञ्ञेङ्ङुं तीळ नटन्नुळ्ळतीटुं दशान्तरे बालि वरिकयिल्लत्र शापत्तिनाल्। ऋश्यमूकाचले वन्निरुन्नीटिनेन् विश्वासमोटु ञान् विश्वनाथा! विभो! मूढनां बालि परिग्रहिच्चीटिनानूढ रागं मम वल्लभ तन्नेयुं; नाटुं नगरवुं पत्नियुमेन्नुटे वीटुं पिरिञ्ञु दुःखिच्चि-रिक्कुन्नु ञान्। त्वत्पाद पङ्केरुह स्पर्शं कारणालिप्पोळतीव सुखवुमुण्टाय् वन्नु। ७० मित्रात्मजोक्तिकळ् केट्टोरनन्तरं मित्र दुःखेन सन्तप्तनां राघवन् चित्त कारुण्यं कलर्न्नु चोन्नान् तव शत्रुविनेक्कोन्नु पत्नियुं राज्यवुं वित्तवुमेल्लांमटविक्कत्तरुवन् ञान् सत्यमितु राम भाषितं केवलं। मानवेन्द्रोक्तिकळ् केट्टु

कि दुष्ट दैत्य मायावी ने मेरे अग्रज को मार डाला है। ६० —मैं दुखी हो किष्किन्धा लौटा। (बालि की मृत्यु का समाचार पाकर) सारे वानरश्रेष्ठ अत्यन्त व्याकुल हुए। (फिर देश को शासकरहित पाकर) वानरों ने वानराधीश के रूप में मेरा अभिषेक किया। फिर थोड़े दिन व्यतीत हुए। तब महाबलशाली बालि (किष्किन्धा में) आ गया। मैंने उसे मारने के लिए गुहा द्वार पत्थर से ढक लिया, यह सोचकर क्रुद्ध हुआ बालि मुझे मारने आया। प्राणभय से मैं सब कहीं भागता रहा। कहीं रहने का स्थान न पाकर, हे विश्वनाथ! हे भगवान! मैं इस ऋश्यमूकाचल पर इस विश्वास से आ बैठा कि शापवश बालि यहाँ नहीं आ सकेगा। कामातुर एवं मूढ़ बालि ने मेरी परिणीता पत्नी का अपहरण किया। इस प्रकार देश, नगर, पत्नी, घर-बार सबसे दूर मैं यहाँ खिन्न बैठा हूँ। आपके चरण-पंकज का स्पर्श पाने से अब मुझे सुख एवं शान्ति प्राप्त हुई।" ७० मित्रात्मज (सुग्रीव) के वचन सुनकर मित्र दुःख से स्वयं संतप्त राघव ने सहानुभूतिजन्य कारुण्य से कहा— "तुम्हारे शत्रु का वध करके मैं तुम्हें पत्नी, राज्य, धन सब कुछ वापस दिलाऊँगा। राम का यह वचन कभी असत्य नहीं होगा।" मानवेन्द्र (राम) की यह उक्ति सुनकर प्रसन्न हुए सुग्रीव ने इस प्रकार कहा—

तेळिञ्ञोरु भानुतनयनुमिङ्ङने चोल्लिनान्—स्वर्ल्लोकनाथजनाकिय बालियेक्कोल्लुवानेट्टं पणियुण्टु निर्ण्णयं। इल्लवनोळं बलं मट्टोरुवनुं चोल्लुवन् बालितन् बाहु पराक्रमं : दुन्दुभियाकुं महासुरन् वन्नु किष्किन्धापुरद्वारि माहिषवेषमाय् युद्धत्तिनाय्विळिच्चोरु नेरत्तति क्रुद्धनां बालि पुरप्पेट्टु चेन्नुटन्; उत्तमांगत्तेच्चुळट्टियेरिञ्ञितु रक्तवुं वीणु मतंगाश्रम स्थले। आश्रम दोषं वरुत्तिय बालि पोन्नृश्यमूकाचलत्तिङ्कल् वरुन्नाकिल् ८० बालियुटे तल पोट्टित्तेरिच्चुटन् कालपुरिपूकमद्वाक्य गौरवाल्। एन्नु शपिच्चतु केट्टु कपीन्द्रनुमन्नु तुटङ्ङियिविटे वरुवील। ञानुमतु कण्टिविटे वसिक्कुन्नु मानसे भीति कूटाते निरन्तरं। दुन्दुभितन्टे तलयितु काण्कोरु मन्दरं पोले किटक्कुन्नतु भवान्। इन्निते टुत्तेरिञ्ञीटुन्न शक्तनु कोन्नु कूटुं कपि वीरने निर्ण्णयं। एन्नतु केट्टु चिरिच्चु रघूत्तमन् तन्नुटे तृक्काल्पेरुविरल् कोण्टतु तन्नेयेटुत्तु मेल्पोट्टेरिञ्ञीटिनान् चेन्नु वीणु दशयोजन पर्यन्तं। एन्नतु कण्टु तेळिञ्ञ सुग्रीवनुं तन्नुटे मन्त्रिकळुं विस्मयप्पेट्टु।

"स्वर्गाधिपति (इन्द्र) के पुत्र बालि का वध करना सहज कार्य नहीं है। उसका सा बल और किसी में नहीं है। मैं उसके भुजबल का परिचय देता हूँ। एक बार अत्यन्त बलशाली दुन्दुभी नामक दैत्य महिष के रूप में किष्किन्धा के द्वार पर आया। उसके द्वारा युद्ध के लिए आमन्त्रित किये जाने पर क्रुद्ध हो बालि बाहर आ उसके सींग पकड़कर उसका मस्तक अलग करके उसे पटक दिया कि मतंग मुनि के आश्रम स्थान पर रक्त गिर गया। रक्त से आश्रम को अपवित्र करनेवाला बालि अगर ऋश्यमूकाचल पर कभी आ जाये तो। ८० —बालि का मस्तक फटकर उसकी मृत्यु होगी, यह मतंग ने शाप दिया। यह शाप वचन सुनकर तब से कपीन्द्र (बालि) यहाँ नहीं आ रहा है। यह जानकर मैं यहाँ निर्भय वास करता आ रहा हूँ। हे प्रभु ! दुन्दुभी के मस्तक को यहाँ एक भारी पर्वत जैसा पड़ा देखिये। इस मस्तक को जो उठाकर फेंक सकेगा, वही बालि का वध कर सकेगा।" यह सुन हँसते हुए भगवान ने अपने पैर के अँगूठे से उस मस्तक को उठाकर ऊपर फेंका कि वह दशयोजन दूर पर जा गिरा। यह देख (राम की शक्ति से आश्वस्त) सुग्रीव का मुख खिल उठा और उनके मंत्रियों ने भी विस्मय प्रकट किया। 'आप धन्य हैं धन्य हैं' का जयकार करते हुए तथा विनीत

तन्नु तन्नेन्नु पुकळ्न्नु पुकळ्न्नवर् तन्नायत्तोळुतु निन्नीटिनार्। पिन्नेयुमर्कात्मजन् परञ्ञीटिनान् मन्नव! सप्तसालङ्ङळिव-यल्लो ९० बालिक्कुमल्पिटिच्चीट्टुवानायुळ्ळ सालङ्ङळेळु-मिवयेन्नरिञ्ञालुं। वृत्रारि पुत्रन् पिटिच्चिळक्कुन्नेरं पत्रङ्ङ-ळेल्लां कोळिञ्ञुपोमेळिनुं। वट्टत्तिल् निल्क्कुमिवट्टयोरम्पेय्तु पोट्टिक्किल् बालियेक्कोल्लायवरुं दृढं। सूर्य्यात्मजोक्तिकळीदृशं केट्टोरु सूर्य्यान्वयोद्भवनाकिय रामनुं चापं कुळियेक्कुलच्चोरु सायकं शोभयोटे तोटुत्तेय्तरुळीटिनान्। सालङ्ङळेळुं पिळर्न्नु पुरप्पेट्टु शैलवुं भूमियुं भेदिच्चु पिन्नेयुं बाणं ज्वलिच्चु-तिरिञ्ञु वन्नाशुतन् तूणीरमन्पोटु पुक्कोरनन्तरं। विस्मित-नायोरु भानु तनयनुं सस्मितं कूप्पित्तोळुतु चोल्लीटिनान्— साक्षाल् जगन्नाथनां परमात्मावु साक्षिभूतन् निन्तिरुवटि निर्णयं। पण्टु ञान् चेय्तोरु पुण्य फलोदयं कोण्टु काण्मा-नुमेनिक्कु योगं वन्नु। १०० जन्म मरण निवृत्ति वरुत्तुवान् निर्म्मलन्मार् भजिक्कुन्नु भवल् पदं। मोक्षदनाय भवान लभिक्कयाल् मोक्षमोळिञ्ञपेक्षिक्कुन्नतिल्ल ञान्। पुत्रदारार्त्थ

भाव से हाथ जोड़कर वे रह गये। फिर अर्कात्मज (सुग्रीव) ने कहा— "हे प्रभु! ये जो सप्त साल हैं। ९० —इन्हें बालि की बल-परीक्षा के सात साल वृक्ष जान लीजिए। जब वृत्रारिपुत्र (इन्द्रपुत्र बालि) इन्हें पकड़कर हिला देता है तब इसके सारे के सारे पत्ते झड़कर गिर जाते हैं। चक्राकार खड़े इन सातों सालवृक्षों को जो एक ही बाण से धराशायी कर सकेगा, वह निश्चय ही बालि को मार सकेगा।" सूर्यात्मज (सुग्रीव) का यह कथन सुनते ही सूर्यवंशोद्भव राम ने धन्वा खींचकर ज़ोर से एक बाण चलाया जो सातों वृक्षों को गिराने पर भी संतृप्त न हो भूमि तथा शैल को भेद डाला। फिर वह प्रज्ज्वलित बाण वापस राम के तूणीर में आ प्रविष्ट हुआ, जिसे देख विस्मित भानुपुत्र (सुग्रीव) ने सस्मित हाथ जोड़कर (राम से) कहा—"निश्चय ही आप जगत के नाथ एवं साक्षीभूत परमात्मा हैं। मुझे अपने पूर्व के पुण्यसंचय के फलस्वरूप आपको सम्मुख देख लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। १०० जन्म-मरण से निवृत्त होने के लिए पुण्यात्मा लोग आपके चरणों का भजन करते हैं। मोक्षप्रद आपको देख लेने के उपरान्त अब मोक्ष के अतिरिक्त और किसी वस्तु की मैं अपेक्षा नहीं करता। (मैंने जान लिया है कि) आपकी माया से विरचित पुत्र, पत्नी,

राज्यादि समस्तवुं व्यर्त्थमत्रे तव माया विरचितं। आक-
याल् मे महादेव देवेश ! मट्टाकांक्षयिल्ल लोकेश ! प्रसीदमे।
व्याप्तमानन्दानुभूतिकरं परं प्राप्तोहमाहन्त भाग्य फलोदयाल्।
मण्णिनायूळ्ळि कुळिच्च नेरं निधितन्न लभिच्चतु पोले रघुपते।
धर्म्म दान व्रत तीर्त्थ तपः क्रतु कर्म्मपूर्त्तेष्टादिकळ् कोण्टो-
रुत्तनुं वन्नु कूटा बहु संसार नाशनं निर्ण्णयं त्वल्पाद
भक्ति कोण्टेन्निये। त्वल्पाद पत्मावलोकनं केवलमिप्पोळकप्पे-
ट्टतुं त्वल् कृपा बलं। यातोरुत्तनु चित्तं त्रिन्तिरुवटि
पादांबुजत्तिलिळकातुऱय्क्कुन्नु ११० काल्क्षणं पोलुमेन्नाकिलवन्
तनिक्कोक्के त्रीङ्ङीटुमज्ञानमनर्त्थदं। चित्तं भवाङ्कलु-
ऱय्कायिकिलुमति भक्तियोटे राम रामेति सादरं चोल्लुन्नवनु
दुरितङ्ङळ् वेरट्टु नल्लनायेट्टं विशुद्धनां निर्ण्णयं। मद्यपने-
ङ्किलुं ब्रह्मघ्ननेङ्किलुं साद्योविमुक्तनां राम जपत्तिनाल्। शत्रु
जयत्तिलुं दारसुखत्तिलुं चित्तेयोराग्रहमिल्लेनिक्केतुमे। भक्ति-
योळिञ्ञुमट्टोन्नुमे वेण्टील मुक्ति वरुवान् मुकुन्द ! दयानिधे !
त्वल्पाद भक्ति मार्ग्गोपदेशं कोण्टु मल्पापमुल्पाटयत्रिलोकीपते !

धन-सम्पत्ति, राज्य सब कुछ व्यर्थ हैं। इसलिए हे देवेश ! हे महादेव ! हे लोकेश ! मेरी और कोई कामना नहीं है। आप मुझ पर कृपा कीजिये। मिट्टी खोदते समय प्राप्त अविचारित निधि-कुंभ के समान शत्रु के विनाश के लिए सहायक की खोज करते हुए भाग्यवश मुझे नित्यानन्दस्वरूप भगवान मिल गये। हे प्रभु ! आपकी भक्ति को छोड़ अन्य याग, दान, तीर्थ, व्रत, सद्कर्म आदि संसार बंधन को तोड़ने में असमर्थ हैं। अब केवल आपकी कृपा से ही आपके श्रीचरणों का दर्शन प्राप्त कर सका। जिस मनुष्य की आपके चरण-कमलों पर अटल भक्ति है—११० —उसका विनाशकारक अज्ञान पल भर में मिट जायेगा। चाहे चित्त आप पर स्थिर न रहे फिर भी यदि कोई भक्तिपूर्वक राम-राम का जप करता जाये तो उसकी सांसारिक यातनाएँ दूर हो जाएंगी और वह विशुद्ध, निर्मल और पवित्र हो जायेगा। चाहे कोई मद्यप या ब्रह्मघ्न ही क्यों न हो, अगर वह राम-नाम जप ले तो सद्यः विमुक्ति का अधिकारी बनेगा। अब मुझे शत्रु-विजय या दारा-सुख की चित्त में अभिलाषा नहीं रही है। हे दयानिधि ! हे मुकुन्द ! मोक्षप्राप्ति के लिए मुझे आपकी भक्ति को छोड़ और किसी साधन की आवश्यकता नहीं है। हे प्रभु ! आपके चरण-कमलों के प्रति भक्ति का उपदेश देकर मेरे पापों

शत्रु मद्ध्यस्थ मित्रादि भेद भ्रमं चित्तत्तिल् नष्टमाय् वन्नितु भूपते ! त्वत्पाद पद्मावलोकनं कौण्टेनिक्कुत्पन्नमायितु केवल ज्ञानवुं पुत्र दारादि संबन्धमेल्लां तव शक्तियां माया-प्रभावं जगत्पते ! १२० त्वत्पाद पङ्कजत्तिङ्कलुऱय्क्कणमेप्पो-ऴुमुळ्क्काम्पेनिक्कु रमापते ! त्वन्नाम सङ्कीर्त्तनप्रिययाकण-मेन्नुटे जिह्व सदा ऩाणमेन्निये; त्वच्चरणांभोरुहङ्ङळिलेप्पो-ऴुमर्च्चनं चेय्यायवरिक करङ्ङळाल् । ऩिन्नुटे चारु रूपङ्ङळ् काणायवरिकेन्नुटे कण्णुकळ् कौण्टु निरन्तरं; कर्ण्णङ्ङळ् कौण्टु केळ्क्कायवरेणं सदा ऩिन्नुटे चारु चरितं धरापते ! त्वत्पाद पांसु तीर्त्थङ्ङळेल्काकणमेप्पोऴुमंगङ्ङळ् कौण्टु जगत्पते ! भक्त्या नमस्करिय्क्कायवरेणं मुहुरुत्तमांगं कौण्टु नित्यं भवत्पदं । इत्थं पुकऴ्न्न सुग्रीवने राघवन् चित्तं कुळिर्त्तु पिटिच्चु पुल्कीटिनान् । अंग संगं कौण्टु कल्मषं वेरट् मंगलात्मावाय सुग्रीवनेत्तदा मायया तत्र मोहिप्पिच्चतन्नेरं कार्य्य सिद्धिक्कु करुणाजलनिधि । १३० सत्यस्वरूपन् चिरि-च्चरुळिच्चेय्तु सत्यमत्रे ऩी पऱञ्ञतेटो ! सखे ! १३१

का निराकरण कर दीजिए । हे भूपति ! मेरे मन से शत्रु तथा मित्र का भेदभाव भी दूर हुआ । आपके चरण-पद्मों के अवलोकन के फल-स्वरूप मेरे मन में केवल ज्ञान का उदय हुआ । संसार में दिखाई देनेवाला, पुत्र, पत्नी आदि का सम्बन्ध आपकी मायाशक्ति का ही प्रभाव है । १२० हे रमापति ! मेरा हृदय सदा आपके पाद-पद्मों पर तल्लीन रहे । मेरी जिह्वा सदा निस्संकोच भाव से आपके नाम संकीर्त्तन में लगी रहे । मेरे हाथ आपके चरणांबुजों की सदा अर्चना करते रहें । सदा मेरे नेत्र आपकी सुन्दर मूर्त्ति का अवलोकन करते रहें । हे धरापति ! मेरे दोनों कान आपके पुण्यचरित ही सुनने में तल्लीन रहें । मेरे शरीर के समस्त अंग आपके पाद-तीर्थ में अवगाहन करते रहें । मेरा मस्तक आपके श्रीचरणों पर सदा प्रणत रहे ।" इस प्रकार की विनय करते सुग्रीव को भगवान राम ने सानंद हृदय से लगाया । भगवान के देह-स्पर्श से सारे कल्मषों से रहित हो पुण्यात्मा बने सुग्रीव को अपनी कार्यसिद्धि के अनुकूल बनाने के उद्देश्य से ज्ञानमार्ग से ज़रा विचलित कर अपने मायागुण से अत्यल्प मात्रा में मोहित कर लिया । १३० सत्यस्वरूप भगवान ने हँसते हुए (सुग्रीव से) कहा—"तुमने सत्य ही कहा है ।" १३१

बालि सुग्रीव युद्धम्

बालियेच्चेन्नु विळिक्क युद्धत्तिनु कालं कळयरुतेतुमिनियेंटो ! बालियेक्कोन्नु राज्याभिषेकं चेय्तु पालनं चेय्तु कोळ्वन् तिन्ने निर्णयं। अक्कात्मजनतु केट्टु नटन्नितु किष्किन्धयांपुरि नोक्कि निराकुलं। अक्कंकुलोत्भवन्माराय रामनुं लक्ष्मण वीरनुं मंत्रिकळ् नाल्वरुं। मित्रजन् चेन्नु किष्किन्धापुर द्वारि युद्धत्तिनाय् विळिच्चीटिनान् बालियें। पृथ्वीरुहवुं मरञ्ञु निन्नीटिनार् मित्र भावेन रामादिकळन्नेरं। क्रुद्धनां बालियलरिवन्नीटिनान् मित्र तनयनुं वक्षसि कुत्तिनान्। वृत्रारिपुत्रनुं मित्र तनयनें पत्तु नूराशु वलिच्चु कुत्तीटिनान्। बद्धरोषेण परस्परं तम्मिलें युद्धमतीव भयङ्करमायितु। रक्तमणिञ्ञेकरूपधरन्मारायू शक्ति कलर्न्नवरोंप्पं पोरुन्नेरं १० मित्रात्मजनेतु वृत्रारिपुत्रनेतित्थं तिरिच्चरियावल्लोरुत्तनुं। मित्र विनाशन शङ्कया राघवनस्त्र प्रयोगवुं चेय्तीलतुन्नेरं।

बालि-सुग्रीव का युद्ध

(भगवान राम ने सुग्रीव से कहा) "अब अविलम्ब बालि को युद्ध के लिए बुला लो। मैं बालि का वध करके निश्चय ही तुम्हें सिंहासन पर बिठा दूँगा।" भगवान के भरोसे पर अर्कात्मज (सुग्रीव) निराकुल भाव से (बालि को चुनौती देने के लिए) किष्किन्धापुरी की ओर चल पड़े। अर्कंकुलोद्भव (सूर्यवंश में जात) राम तथा लक्ष्मण और चारों मन्त्री लोग उनके पीछे-पीछे चले। किष्किन्धापुरी के राजद्वार पर आकर अर्कात्मज ने बालि को युद्ध के लिए बुलाया। मित्रभाव से प्रेरित राम आदि वृक्ष की आड़ में खड़े हो गये। क्रुद्ध बालि घोर गर्जना करता हुआ दौड़ आया और अर्कात्मज ने उसकी छाती पर प्रहार किया। तो वृत्रारिपुत्र (बालि) ने अर्कात्मज पर खूब ज़ोर लगाकर सैकड़ों मुष्टि प्रहार किये। बद्धरोष से प्रेरित दोनों के बीच भयंकर युद्ध छिड़ा। जब रक्त से सने दोनों समान आकृति धारणकर लड़ रहे थे—१० —तब कोई यह नहीं पहचान पा रहा था कि मित्रात्मज कौन है और वृत्रारिपुत्र कौन है। इस कारण उस समय मित्रविनाश की आशंका से राम ने अस्त्र का प्रयोग नहीं किया। तब वृत्रारिपुत्र के भयंकर मुष्टि प्रहार से रक्त का वमन करते हुए तथा आर्तभाव से मित्रात्मज वहां से भाग निकले। (विजयभाव लेकर) बालि अपने राजभवन को चला

वृत्रारि पुत्र मुष्टि प्रयोगं कॊण्टु रक्तवुं छर्द्दिच्चु भीतनायो-
टिनान्; मित्र तनयनुं सत्वरमार्त्तनाय् वृत्रारिपुत्रनुमालयं
पुक्किनु। वित्रस्तनाय्वन्नु मित्र तनयनुं पृथ्वीरुहान्तिके निन्न-
रुळीटुन्न मित्रान्वयोद्भूतनाकिय रामनोटेत्रयुमार्त्त्या परुषङ्ङळ्
चॊल्लिनान्— शत्रुविनेक्कॊण्टु कॊल्लिक्कयो तव चित्तत्तिलोर्त्त-
तङ्ङील ञानय्यो! वध्यनेन्नाकिल् वधिच्चु कळञ्ञालु-
मस्त्रेणमां निन्तिरुवटि तान् तन्ने। सत्यं प्रमाणमेन्नोर्त्तेनतुं
पुनरेत्रयुं पारं पिळच्चु दयानिधे! सत्य सन्धन् भवानेन्नु
ञानोर्त्ततुं व्यर्थमत्रे शरणागत वत्सल! २० मित्रात्मजोक्ति-
कळित्तरमाकुलाल् श्रुत्वा रघूत्तमनुत्तरं चॊल्लिनान्— बद्धाश्रु
नेत्रनायालिंगनं चैय्तु चित्ते भयप्पॆटाय्केतुं मम सखे! अत्यन्त
रोष वेगङ्ङळ् कलर्न्नॊरु युद्ध मद्ध्ये भवान्मारेत्तिरियाञ्ञु
मित्रघातित्वमाशङ्कय ञानन्नेरं मुक्तवानायतिल्लस्त्रं धरिक्क
नी। चित्त भ्रमं वराय्वानॊरटयाळं मित्रात्मज! निन-
क्कुण्टाक्कुवनिनि; शत्रुवायुळ्ळॊरु बालियेस्सत्वरं युद्धत्तिनाय्

गया। वित्रस्त (भयभीत) हो मित्रतनय (सुग्रीव) ने पृथ्वीरुह (वृक्ष) की आड़ में खड़े मित्रान्वय (सूर्यवंश) में उद्भूत राम के समीप आकर अत्यन्त आर्त्तभाव से खूब परुष वचन कहे—"हाय! मैंने यह नहीं समझा था कि शत्रु के द्वारा मेरा वध कराना ही आपका उद्देश्य था। अगर मैं वध्य हूँ तो हे भगवान! आप ही बाण से मेरा वध कर लीजिए। मैंने आपके सत्य वचन को प्रमाण मान लिया था, किन्तु हे दयानिधि! वह भी निरर्थक सिद्ध हुआ। मैंने (आपके ऐसे आचरण के लिए) क्या अपराध किया है? हे शरणागत-वत्सल! आपको सत्यवादी मानकर मैंने भारी भूल की।" २० मित्रात्मज की इस प्रकार की कारुणिक उक्ति सुनकर साश्रुनयन भगवान ने उनका गाढ़ाश्लेष करते हुए कहा—"हे मेरे मित्र! तुम भयभीत मत बनो। अत्यन्त रोषभाव से दोनों के मध्य भयंकर मुष्टि प्रहार के समय रक्त एवं धूल से लिपटे आप दोनों के समान से दिखाई देने के कारण या आप दोनों को अलग पहचान न सकने के कारण (शत्रुनाश के स्थान पर) मित्रघात की आशंका से मैंने बाण का प्रयोग नहीं किया। हे मित्रात्मज! आगे इस प्रकार का चित्तभ्रम होने न पाये, इस उद्देश्य से मैं तुम्हारे लिए एक पृथक् निशान का प्रबन्ध कर देता हूँ। अब तुम निश्शंक भाव से शत्रु बालि को जा चुनौती दो। वृत्रारिपुत्र अपने अग्रज को अब मृत्युगत समझ लो।

विळिच्चालुं मटियातॆ। वृत्र विनाशन पुत्रनामग्रजन् मृत्यु-वशगतनॆन्नुरच्चीटु ती। सत्यमिदमहं रामनॆन्नाकिलो मिथ्यया-युवन्नु कूटा राम भाषितं। इत्थं समाश्वास्य मित्रात्मजं रामभद्रन् सुमित्रात्मजनोटु चॊल्लिनान्— मित्रात्मज गळे पुष्प माल्यत्तॆ ती बद्ध्वा विरवोटयय्क्क युद्धत्तिनाय्। ३० शत्रुघ्न पूर्वजन् माल्यवुं बंद्धिच्चु मित्रात्मजनॆ मोदालयच्चीटिनान्। ३१

बालि वधम्

वृत्रारिपुत्रनॆ युद्धत्तिनाय्वकॊण्टु मित्रात्मजन् विळिच्चीटिनान् पिन्नॆयुं। क्रुद्धनाय् निन्नु किष्किन्धापुरद्वारि कृत्वा महासिंह-नादं रवि सुतन् बद्धरोषं विळिक्कुन्न नादं तदा श्रुत्वाति विस्मितनायॊरु बालियुं, बद्ध्वा परिकरं युद्धाय सत्वरं बद्धवैरं पुरप्पॆट्टोरु नेरत्तु, भर्त्तुरग्रेचॆन्नु बद्धाश्रु नेत्रनाय् मद्ध्ये तटुत्तु चॊल्लीटिनाळ् तारयुं— शङ्का विहीनं पुरप्पॆट्टतॆन्तॊरु शङ्कयुण्टुळ्ळिलॆनिक्कतु केळ्क्क ती। विग्रहत्तिङ्कल् पराजित-

---

अगर मैं राम हूँ तो मेरा यह कथन सत्य है और राम का वचन कभी मिथ्या नहीं हो सकता।" इस प्रकार मित्रात्मज को आश्वस्त करने के उपरान्त रामचन्द्रजी ने सुमित्रात्मज से कहा—"मित्रात्मज के गले में एक पुष्पमाला पहनाकर उन्हें युद्ध के लिए भेजो।" ३० (राम के आज्ञानुसार) शत्रुघ्न पूर्वज (लक्ष्मण) ने मित्रात्मज के गले में माला पहनाकर भेज दिया। ३१

बालि-वध

सुग्रीव ने दूसरी बार भी वृत्रारिपुत्र को युद्ध के लिए बुलाया। रविसुत (सुग्रीव) ने क्रुद्ध भाव से किष्किन्धा के सिंहद्वार पर खड़े होकर सिंह गर्जना की। तब रोषपूर्ण स्वर सुनकर विस्मित हुआ बालि परिकर कसकर और शत्रुता मन में लिये युद्ध के लिए निकल पड़ा तो अश्रुस्निग्ध नयनों से युक्त तारा ने बीच रास्ते में उसे रोक दिया और पूछा कि "हे नाथ! आप बिना सोचे-विचारे कैसे निकल पड़े? मेरे मन में बड़ी आशंका उत्पन्न हो रही है। सुग्रीव तो अभी-अभी युद्ध में पराजित हो भाग खड़े हुए थे। अब दुबारा जब वे आये हैं तो उन्हें किसी शूर पराक्रमी का सहारा प्राप्त हुआ है। यह मेरा निश्चित विचार है।" (तारा का

नाय्पोय सुग्रीवनाशु वन्नीटुवान् कारणं ऐन्त्रयुं पारं पराक्रम-
मुळ्ळोरु मित्रमवनुण्टु पिन्तुण निर्णयं। बालियुं तारयोटाशु
चौल्लीटिनान् बाले! बलालोरु शङ्कयुण्टाकोला। कय्य-
यच्चीटु नी वैकरुतेतुमे नीयोरु कार्य्यं धरिक्केणमोमले! १०
बन्धुवायारुळ्ळ तोक्कं सुग्रीवनु बन्धमिल्लेन्नोटु वैरत्तिनार्क्कुमे।
बन्धुवायुण्टवनेकनेन्नाकिलो हन्तव्यनेन्नालवनुमङ्कि नी। शत्रु-
वायुळ्ळवन् वन्नु गृहान्तिके युद्धत्तिनाय् विळिक्कुन्नतुं केट्टुटन्
शूरनायुळ्ळ पुरुषनिरिक्कुमो भीरुवायुळ्ळिळलटच्चतु चौल्लु नी।
वैरियेक्कोन्नु विरविल् वरुवन् ञान् धीरतकैक्कोण्टिरिक्क नी
वल्लभे! तारयुं चौन्नाळतु केट्टवनोटु वीरशिखामणे!
केट्टालुमेङ्किल नी– काननत्तिङ्कल् नायाट्टिनु पोयितु ताने
मम सुतनंगदनन्नेरं केट्टोरु दन्तमेन्नोटु चौन्नानतु केट्टिट्टु शेषं
यथोचितं पोक नी। श्रीमान् दशरथनामयोद्ध्याधिपन् राम-
नेन्नुण्टवन् तन्नुटे नन्दनन्; लक्ष्मणनाकुमनुजनोटुं निज लक्ष्मी-
समयाय सीतयोटुमवन् २० वन्निरुन्नीटिनान् दण्डक कानने
वन्याशननायत्तपस्सु चेय्तीटुवान्। दुष्टनायुळ्ळोरु रावण

कथन सुनकर) बालि ने तारा को उत्तर में बताया—"हे भद्रे! भय का कोई कारण नहीं है। तुम मेरा हाथ छोड़ दो और मुझे अविलम्ब जाने दो। अरी प्रिये! तुम एक बात सोच लो—। १० —कि सुग्रीव का कौन मित्र है? और मेरे प्रति किसी के वैर का भी कोई कारण नहीं है। अगर उसकी सहायता के लिए कोई मित्र है, ऐसा समझ जाए तो यह भी सोचना चाहिये कि वह भी मेरे हाथ मृत्यु को प्राप्त होगा। विशेष-कर जब कोई शत्रु गृहद्वार पर आकर युद्ध की चुनौती देता है तब उसे सुनकर क्या कोई शूर योद्धा कायर के समान दरवाजा बन्द करके भीतर बैठ सकता है? यह तुम्हीं सोच लो। हे प्रिये! तुम साहसपूर्वक बैठो। मैं शत्रु का वध करके तुरन्त आ जाऊँगा।" यह सुनकर तारा ने कहा—"हे वीरों के सिरमौर! आप मेरी बात सुनिए। हे प्रिय! मृगया के लिए वन में गये पुत्र अंगद ने वहाँ जो खबर सुनी, उसने मुझे आकर बतायी। वह खबर सुनने के बाद आप यथोचित कीजिए। कोशलेश दशरथ के पुत्र राम अपने भ्राता लक्ष्मण तथा अपनी भार्या सीता के साथ—। २० —दण्डकवन में तपस्या के लिए आये हुए थे और दुष्ट राक्षस रावण ने उनकी पत्नी का अपहरण कर लिया जिससे वे अपने अनुज के साथ अपनी पत्नी की खोज में ऋश्यमूक पर्वत पर आये।

राक्षसन् कट्टु कोण्टानवन् तन्नुटे पत्निय। लक्ष्मणनोटुमव-ळेयन्वेषिच्चु तल्क्षणमृश्यमूकाचले वन्नितु, मित्रात्मजनेयुं तत्र कण्टीटिनान् मित्रमाय् वाळ्कयेन्नन्योन्यमोन्निच्चु सख्यवुं चेय्तु कोण्टारग्नि साक्षियाय् दुःखशान्तिक्कुण्टिरुवरुमायुटन्। वृत्रारि-पुत्रनेक्कोन्नु किष्किन्धयिल् मित्रात्मज! निन्ने वाळिप्पनेन्नोरु सत्यवुं चेय्तु कोटुत्तितु राघवन् सत्वरमर्क्कतनयनुमन्नेरं, अन्वेषणं चेय्तरिञ्ञु सीतादेवितन्नेयुं काट्टित्तरुवनेन्नुं तम्मिल् अन्योन्यमेवं प्रतिज्ञयुं चेय्तितु वन्नतिप्पोळतु कोण्टु तन्नेयवन्। वैरमेल्लां कळञ्ञाशु सुग्रीवने स्वैरमाय् वाळिच्चु कोळ्क-यिळमयाय्। ३० याहिरामं नी शरणमाय् वेगेन पाहिमामं-गदं राज्यं कुलञ्चते। इङ्ङने चोल्लि करञ्ञु कालुं पिटिच्चङ्ङने तार नमस्करिक्कुं विधौ व्याकुलहीनं पुणर्न्नु पुणर्न्ननुरागवशेन पऱञ्ञितु बालियुं। स्त्री स्वभावं कोण्टु पेटियाय्केतुमे नास्तिभयं मम वल्लभे! केळ्क्क नी– श्रीराम-लक्ष्मणन्मार् वन्नितेङ्किलो चेरुमेन्नोटुमवरेन्नु निर्णयं। रामने स्नेहमेन्नोळमिल्लार्क्कुमे रामनाकुन्नतु साक्षाल् महाविष्णु;

वहाँ उनकी भेंट मित्रात्मज (सुग्रीव) से हुई जिसके फलस्वरूप दोनों ने अपने दुःख-नाश के लिए परस्पर मित्रता बनाये रखने की अग्नि को साक्षी बनाकर प्रतिज्ञा कर ली। राम ने सुग्रीव से प्रतिज्ञा की कि वे वृत्रारि-पुत्र का वध करके किष्किन्धा का राज्य सुग्रीव को देंगे तो तुरन्त ही प्रत्युपकार के रूप में सुग्रीव ने सीता का अन्वेषण करके उन्हें राम को ला देने का सत्य वचन दिया। इस प्रकार परस्पर प्रतिज्ञाबद्ध होने के कारण ही आज सुग्रीव फिर आये। ऐसी हालत में शत्रुता भूलकर सुग्रीव को अपने अनुकूल बनाकर उनका युवराज के रूप में अभिषेक कर देना ही उचित होगा। ३० —रामचन्द्रजी से टक्कर लेने की सामर्थ्य आप में नहीं है। इसलिए उनकी शरण में जाकर मुझे, अंगद को और राज्य को आप बचा लें। इस प्रकार की प्रार्थना करती हुई और चरण पकड़कर विलाप करती हुई तारा को बड़े प्रेम से बार-बार छाती से लगाते हुए बालि ने कहा—"हे प्रिये! तुम नारी-सुलभ दौर्बल्य के कारण भयविह्वल हो रही हो। तुम्हें भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। मुझे बिल्कुल भय नहीं है। तुम मेरी बात सुनो। अगर राम-लक्ष्मण ही आये हुए हैं तो निश्चय ही वे मुझसे मिलेंगे। मेरा जैसा राम के प्रति अपार प्रेम अन्य किसी को नहीं। मैंने सुन रखा है कि

नारायणन् तानवतरिच्चु भूमि भार हरणार्त्थमेन्नु केळ्प्पुण्टु ञान्। पक्षभेदं भगवानिल्ल निर्ण्णयं निर्ग्गुणनेकनात्मारामनीश्वरन्। तच्चरणांबुजे वीणु नमस्करिच्चिच्छया ञान् कूट्टिक्कोण्टिङ्ङु पोरुवन्। मद्गृहत्तिङ्कलुपकारवुमेरु सुग्रीवनेक्काळुमेन्नेक्कोण्टोर्क्क नी। ४० तन्नेब्भजिक्कुन्नवरेब्भजिच्चीटुमन्यभावं परमात्माविनिल्लल्लो। भक्तिगम्यन् परमेश्वरन् वल्लभे! भक्तियो पार्क्किलेन्नोळमिल्लार्क्कुमे। दुःखवुं नीक्कि वसिक्क नी वेश्मनि पुष्करलोचने! पूर्ण्णगुणांबुधे! इत्थमाश्वास्य वृत्रारातिपुत्रनुं क्रुद्धनाय् सत्वरं बद्ध्वा परिकरं, निर्ग्गमिच्चीटिनान् युद्धाय सत्वरं निग्रहिच्चीटुवान् सुग्रीवने क्रुधा। तारयुमश्रुकणङ्ङळुं वार्त्तुवार्त्तारूढखेदमकत्तु पुक्कीटिनाळ्। पल्लुं कटिच्चलरिक्कोण्टु बालियुं निल्लुनिल्लेन्नणञ्ञोरु नेरं तदा मुष्टिकळ्कोण्टु ताडिच्चितु बालिये रुष्टनां बालि सुग्रीवनेयुं तदा; मुष्टिचूरुट्टि प्रहरिच्चिरिक्कवे कैट्टियुं कालुकै परस्परं ताडनं तट्टियुं मुट्टुकोण्टुं तल तङ्ङळिल् कोट्टियुमेटं पिटिच्चु कटिच्चुम—५० ङ्ङूट्टिल् वीणुं पुरण्टुमुकण्टुमुळ्च्चीटं कलन्नुं

राम साक्षात् महाविष्णु नारायण ही हैं जो भूमि-भार को दूर करने के लिए अवतीर्ण हुए हैं। राम, निर्गुण, एकमेवाद्वैत, आत्मा, परमेश्वर हैं और निश्चय ही उनमें भेदभाव नहीं है। मैं भगवद्चरणों पर प्रणाम करके उन्हें यहाँ सादर लिवा लाऊँगा। दूसरे मुझसे मित्रता रखने से जो लाभ हो सकता है, वह सुग्रीव की मित्रता से उन्हें प्राप्त नहीं हो सकता। ४० —भगवान भक्तवत्सल हैं। जो उनके प्रति अपार प्रेम रखता है, उसके प्रति भगवान का बड़ा ममत्व है। विपरीत भाव परमात्मा में नहीं है। परमेश्वर केवल भक्ति से प्राप्य हैं और सोचें तो मेरी जैसी भक्ति अन्य किसी के हृदय में नहीं है। अतः हे कमललोचने! पूर्ण गुणशीले! तुम निश्चिन्त एवं सानन्द घर पर बैठो।" इस प्रकार तारा को शान्त करने के उपरान्त वृत्रारिपुत्र क्रुद्ध हो कमर कसकर युद्ध में शत्रु सुग्रीव को मारने का दृढ़ संकल्प किये घर से बाहर निकल आया। तारा अश्रुधारा बहाती-बहाती अत्यन्त दुखी हो घर के भीतर चली गयी। 'ठहर-ठहर' की घोर गर्जना करते हुए तथा दाँत पीसते हुए बालि सुग्रीव के निकट आ पहुँचा। दोनों के बीच मुष्टि प्रहार, हाथ-पाँव से ताड़न, उछल-कूद, परस्पर मस्तक से टकराना, नोच-घसीट, दबाना, दन्तप्रहार। ५० —धक्का-मुक्की, लात-मार, लोट-

नखं कौण्टु मान्तियुं; चाटिप्पतिक्कयुं कूटॆक्कुतिक्कयुं माटित्तटुक्कयुं कूटॆक्कौटुक्कयुं; ओटिक्कळिक्कयुं वाटिवियर्क्कयुं माटि विळिक्कयुं कोपिच्चटुक्कयुं; ऊटॆ वियर्क्कयुं नाडिकळ् चीर्क्कयुं मुष्टियुद्ध प्रयोगं कण्टु तिल्पवर्दृष्टिकुळिर्क्कयुं वाळ्त स्तुतिक्कयुं; कालनुं कालकालन्तानुमुळ्ळ पोर् बालि सुग्रीव युद्धत्तिनौव्व दृढं। रण्टु समुद्रङ्ङळ् तम्मिल्प्पौरुं पोलॆ रण्टु शैलङ्ङळ् तम्मिलप्पौरुं पोलॆयुं; कण्टवरार्त्त कौण्टाटिप्पुकळ्तयुं कण्टीलवाट्टमौरुत्तनुमेतुमे। अच्छन् कौटुत्तौरुमाल बालिक्कुमुण्टच्युतन् तल्किय मालसुग्रीवनुं; भेदमिल्लौन्नुकौण्टुं तम्मिलॆङ्किलुं भेदिच्चितर्क्क तनयनु विग्रहं। सादवुमेटं कलर्न्नु सुग्रीवनुं खेदमोटे रघुनाथनॆ नोक्कियुं; ६० अग्रज मुष्टि प्रहारङ्ङळेल्कयाल् सुग्रीवनेटं तळर्च्चयुण्टॆन्नतु कण्टु कारुण्यं कलर्न्नु वेगेन वैकुण्ठन् दशरथनन्दनन् बालितन् वक्षः प्रदेशत्तॆ लक्ष्यमाक्किक्कौण्टु वृक्षषण्डं मरञ्ञाशु माहेन्द्रमामस्त्रं तौटुत्तु

पोट, नखों से खुरेदना आदि द्वन्द्वयुद्ध के नाना प्रकार के दाँव-पेंच भयंकर रूप में होते रहे। दोनों उछल पड़ते थे, साथ-साथ धराशायी होते थे, मुष्टिप्रहार रोकते और प्रहार करते थे। कभी एक-दूसरे से डरकर भागते, म्लान एवं उदास होते, परस्पर चुनौती देते और कोपाकुल हो आमने-सामने आते। दोनों पसीने से तर होते थे, दोनों की नाड़ियाँ उभर आ रही थीं। मुष्टिप्रयोग देख प्रेक्षक लोग विस्मित होते तथा प्रशंसा करते जा रहे थे। यमराज तथा शिव के बीच का युद्ध भी बालि-सुग्रीव के युद्ध के समान भयंकर नहीं था। उनका युद्ध ऐसा था मानो दो समुद्र परस्पर टकरा रहे हैं अथवा दो शैल परस्पर भिड़ गये हैं। दर्शक लोग उनके युद्ध की सराहना करते रहे। दोनों में से कोई भी परिश्रान्त नहीं हुआ। बालि के गले में उसके पिता की दी हुई माला थी तो सुग्रीव के गले में अच्युत (राम) की दी हुई माला थी। दोनों में किसी प्रकार की भिन्नता नहीं जान पड़ती थी। हाँ अर्कतनय (सूर्यपुत्र सुग्रीव) का शरीर मुष्टि प्रहारों से अधिक विदीर्ण था। अन्त में (बालि के प्रहार सह-सहकर) सुग्रीव परिश्रान्त हो उठे और वे कारुणिक दृष्टि से राम की ओर देखने लगे। ६० अग्रज के मुष्टि प्रहारों से आलस्ययुक्त होते हुए सुग्रीव को देखकर करुणामूर्त्ति, विष्णु के अवतार दशरथनन्दन राम ने बालि के वक्षःस्थल को लक्ष्य बनाकर वृक्षों की आड़ से इन्द्रास्त्र का प्रयोग किया, जो बालि

वलिच्चु तिरुच्चुटन् विद्रुतमाम्मारुयच्चरुळीटिनान्। चेत्ततु बालितन् मारिल्त्तरुच्चळमोत्तङ्ङलरि वीणीटिनान् बालियुं। भूमियुमोत्तु विरुच्चितत्तेरत्तु रामनेक्कूप्पिस्तुतिच्चु मरुल् सुतन्- मोहं कलर्न्नु मुहूर्त्त मात्रं पिन्ने मोहवुं तीर्न्नु नोक्कीटिनान् बालियुं। काणायितग्रे रघूत्तमनेत्तदा बाणवुं दक्षिण हस्ते धरिच्चन्य पाणियिल चापवुं चीरवसनवुं तूणीरवुं मृदु स्मेर वदनवुं; चारु जटा मकुटं पूण्टिटम्पेट्ट मारिटत्तिङ्कल् वन- मालयुं पूण्टु; ७० चार्वायतङ्ङळायुळ्ळ भुजङ्ङळुं दूर्वाद- ळच्छवि पूण्ट शरीरवुं; पक्ष भागे परिसेवितन्माराय लक्ष्मण सुग्रीवन्मारेयुमञ्जसा कण्टु गर्हिच्चु पऱञ्ञितु बालि- युमुण्टाय खेद कोपाकुल चेतसा— अेन्तु ञानोन्नु निन्नोटु पिळ्ळच्चतुमेन्तिनेन्नेक्कोल चेय्तु वेन्नुते नी? व्याजेन चोर धर्म्मत्तेयुं कैक्कोण्टु राजधर्म्मत्ते वेटिञ्ञतेन्तिङ्ङने? अेन्तोरु कीर्त्ति लभिचितितु कोण्टु? चिन्तिक्क राजकुलोत्भवनल्लो नी? वीर धर्म्मं निरूपिच्चु कीर्त्तिक्केङ्किल् नेरे पोरुतु जयिक्केणमेवनुं। अेन्तोन्नु सुग्रीवनाल् कृतमायतुं अेन्तु

की छाती को जा लगा। (उसके लगते ही) गर्जना करता हुआ बालि भूमि पर आ गिर पड़ा जिसके भार से भूमि एक बार कम्पित हो उठी। हनुमान ने हाथ जोड़कर राम की स्तुति की। क्षण भर के लिए बालि मूच्छित हुआ और मूर्च्छना हटने पर बालि को अपने सामने दक्षिण हस्त में बाण, वाम हस्त में चाप, चीरवसन एवं तूणीर, सुन्दर जटा-मुकुट एवं वक्षःस्थल पर वनमाला धारण किये स्मितवदन रामजी दिखायी दिये। ७० —उनकी सुन्दर सुदीर्घ भुजाएँ थीं, दूर्वादल के समान कोमल छवि थी और लक्ष्मण-सुग्रीव से परिसेवित थे। राम को देखकर अत्य- धिक व्याकुलता एवं क्रोध के साथ निन्दासूचक शब्दों में बालि ने कहा— "हे राम! मैंने आपका क्या अपकार किया? आपने मुझ निरपराधी पर क्यों बाण चलाया? चोर-धर्म का आश्रय लेकर आपने राजधर्म को क्यों ठुकरा दिया? इस आचरण से आपको क्या यश प्राप्त होगा? आप ही सोचिये, आप तो राजवंश में जन्मे हैं। वीरधर्म की कीर्त्ति प्राप्त करने के लिए शत्रु के सम्मुख आकर युद्ध करके विजय पाने की आवश्यकता है। सुग्रीव की ओर से आपको क्या सहायता मिली? और मेरी ओर से आपका क्या अनिष्ट हुआ? रावण के द्वारा पत्नी का अपहरण होने पर सुग्रीव की सहायता लेना और मेरा वध करना

मट़्न्नाल् कृतमल्लयाञ्ञतुं ! रक्षोवरन् तव पत्नियॆक्कट्टतिनक्कात्मजनॆश्शरणमाय् प्रापिच्चु, निग्रहिच्चु भवानॆन्नॆयॆन्ता-किलो विक्रमं मामकं केट्टरियुन्नीले ? ८० आररियात्ततु मून्नु लोकत्तिलुं वीरनामॆन्नुटॆ बाहु पराक्रमं ? लङ्कापुरत्तॆ त्रिकूटमूलत्तोटुं शङ्काविहीनं दशास्यनोटुं कूटॆ बन्धिच्चु वानर ताळिक कॊण्टु तिन्नन्तिके वच्चु तॊऴुतेनुमादराल् । धर्म्मिष्ठनॆन्नु भवानॆ लोकत्तिङ्कल् निर्म्मलन्मार् पऱयुन्नु रघुपते ! धर्म्ममॆन्तॊन्नु लभिच्चतितु कॊण्टु निर्म्मूलमिङ्ङनॆ काट्टाळनॆप्पोलॆ वानरत्तॆच्चति चॆय्तु कॊन्निट्टॊरु मानमुण्टायतॆन्तॆन्नु पऱक नी । वानरमांसमभक्ष्यमत्रे बत मानसे तोन्नियतॆन्तितु भूपते ! इत्थं बहु भाषणं चॆय्त बालियोटुत्तरमायरुळ् चय्तु रघूत्तमन्— धर्म्मत्तॆ रक्षिप्पतिन्नायुधवुमाय् निर्म्मत्सरं नटक्कुन्नितु ञाॅनॆ वान् । पापियायोरधर्म्मिष्ठनां निन्नुटॆ पापं कळञ्ञु धर्म्मत्तॆ नटत्तुवान् ९० निन्नॆ वधिच्चतु वान् मोहबद्धनाय् निन्नॆ नीयेतुमऱियाञ्ञतुमॆटो ! पुत्रि भगिनि सहोदर भार्ययुं पुत्रकळत्रवुं मातावुमेतुमे भेदमिल्लन्नल्लो

मूर्खता का लक्षण है। आपने मेरे साहस एवं पराक्रम की बात सुनी भी नहीं है ? ८० —इस त्रिभुवन में मुझ वीर का भुजबल कौन नहीं जानता ? रावण को बाँधकर तथा लंका समेत त्रिकूटाचल को निस्संदेह उठा लाकर आधे पल के भीतर आपके सम्मुख रख आपके चरणों पर हाथ जोड़ सकता था। हे रघुपति ! आपको विश्व के निर्मल चेता लोग बड़े ही धार्मिक कहते हैं। खेद है, शिकारी के समान आड़ में छिपे खड़े होकर एक निरपराध वानर को छलपूर्वक मार डालने से आपका कौन-सा धर्म सिद्ध हुआ ? इससे आपकी क्या विशेष प्रतिष्ठा होगी ? आप ही मुझे बताइये। वानर-माँस तो अभक्ष्य है। हे राजा ! आपके मन में ऐसा (दुष्ट) विचार कैसे आ पाया ?" इस प्रकार के कटुवचन कहते बालि से भगवान ने उत्तर में कहा—"मैं धर्म की रक्षा के लिए निर्मम आयुधधारी बन चलता आ रहा हूँ। मेरा किसी के प्रति भेदभाव नहीं है। तुम अधार्मिक एवं पापी हो। तुम्हारा पाप दूर करके धर्म की रक्षा करने के लिए। ९० —मैंने तुम्हारा वध किया। मायामोहवश तुमने स्वयं को नहीं समझा। सहोदर भार्या, पुत्री, भगिनी, पुत्र की पत्नी और माता इन सबको समान मानकर चलना चाहिए, यही वेदोक्ति है। मोहवश इनमें से किसी का परिग्रह करनेवाला पापियों में भी

वेदवाक्यमतु चेतसि मोहाल् परिग्रहिक्कुन्नवन् पापिकळिल् वच्चुमेट्टं महापापि तापमवर्क्किकतिनाले वरुमल्लो। मर्य्याद-न्नीक्कि न्नटक्कुन्नवर्कळे शौर्यमेरुं नृपन्मार् निग्रहिच्चथ धर्म्मस्थिति वरुत्तुं धरणीतले निर्म्मलात्मा न्नी निरूपिक्क मानसे। लोक विशुद्धिवरुत्तुवानाय्क्कोण्टु लोकपालन्मार् न्नटक्कुमेल्लाटवुं। एन्नेप्परञ्ञु पोकाय्कवरोटितुं पापत्तिनाय् वरुं पापिकळ्क्केट्टवु। इत्थमरुळ् चेय्ततोक्कवे केट्टाशु चित्त-विशुद्धि भविच्चु कपीन्द्रनुं। रामने नारायणनेन्नरिञ्ञुटन् तामस भावमकन्नु ससंभ्रमं १०० भक्त्या नमस्कृत्य वन्दिच्चु चोल्लिनानित्थं ममापराधं क्षमिक्केणमे। श्रीराम ! राम ! महाभाग ! राघव ! नारायणन् निन्तिरुवटि निर्ण्णयं। ञानरियाते परञ्ञतेल्लां तव मानसे कारुण्यमोटु क्षमिक्कणं। निन्तिरुमेनियुं कण्टु कण्टाशु निन्नन्तिके तावकमाय शरमेट्टु देह-मुपेक्षिप्पतिन्नु योगं वन्नताहन्त ! भाग्यमेन्तोन्नु चोल्लावतुं ! साक्षाल् महायोगिनामपि दुर्ल्लभं मोक्षप्रदं तवदर्शनं श्रीपते ! निन्तिरुनामं मरिक्कान् तुटङ्ङुम्पोळ् सन्ताप-मुळ्ळकोण्टु चोल्लुं पुरुषनु मोक्षं लभिक्कुन्नताकयालिन्नुमे

महापापी होता है और इस आचरण का उसे दण्ड सहना होगा। तुम यह भलीभाँति जान लो कि मर्यादा का उल्लंघन करनेवाले पापियों का वधकर पृथ्वी पर धर्म की रक्षा करना पुण्यात्मा एवं साहसी राजाओं का धर्म है। लोकपालक लोग सदा लोकशुद्धि के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। ऐसे (धर्मात्मा) लोगों के सामने इस प्रकार के (बालि ने जो कहा वैसा) कटुवचन कहने से उनका पाप और भी बढ़ जाता है। (राम का) यह वचन सुनकर कपीश का मन पवित्र एवं शुद्ध हुआ और तामसी वृत्ति के निराकरण से राम को साक्षात् नारायण समझकर। १०० —भक्तिपूर्वक नमस्कार एवं वन्दना करते हुए उसने इस प्रकार भगवान से कहा—"हे राम ! हे राम ! हे महाभाग ! हे राघव ! आप निश्चय ही नारायण हैं। आप मेरा अपराध क्षमा कर दें। मैंने आपको बिना पहचाने जो कुछ कहा, उसे सहानुभूतिवश क्षमा की दृष्टि से देखें। आपके भगवद्करों में विराजित बाण लगकर शरीर को त्याग करने तथा अपने समक्ष आपके रूप को देखते हुए मृत्यु पाने का जो सुयोग प्राप्त हुआ, वह तो मेरा महाभाग्य ही कहा जा सकता है। हे श्रीपति ! मोक्षप्रद आपका दर्शन वास्तव में महायोगी ऋषियों के लिए भी दुर्लभ

साक्षाल् पुरःस्थितनाय भगवानै, कण्टु कण्टन्पोटु तिन्नुटे सायकं कोण्टु मरिक्कानवकाशमिक्कालं उण्टायतेन्नुटे भाग्यातिरेकमितुण्टो पलक्कुं लभिक्कुन्नतीश्वर ! ११० नारायणन् तिग्ग्तिरुवटि जानकि तारिल् मातावाय लक्ष्मीभगवति; पङ्क्ति कंठन् तन्नै निग्रहिप्पानाशु पङ्क्ति रथात्मजनाय् जनिच्चु भवान् । पत्मजन् मुन्नमर्त्थिक्कयालेन्नतुं पत्मविलोचन ! ञानरिञ्ञीटिनेन् । तिन्नुटे लोकं गमिप्पान् तुटङ्ङीट्टुमेन्नेयनुग्रहिक्केणं भगवाने ! ऍन्नोटु तुल्यबलनाकुमंगदन् तन्निल् तिरुवुळ्ळमुण्टायिरिक्कणं । अर्क तनयनुमंगद बालनु मौक्कुमेनिक्कोन्नु कैक्कोळ्क वेणमे । अम्पुं परिच्चु तृक्कैकोण्टटियनेयन्पोटुमेल्लेत्तलोटुकयुं वेणं । ऍन्नतु केट्टु रघूत्तमन् बाणवुं चेन्नु परिच्चु तलोटिनान् मेल्लवे । मानव वीरन् मुखांबुजवुं पार्त्तु वानर देहमुपेक्षिच्चु बालियुं । योगीन्द्रवृन्द दुरापमायुळ्ळोरु लोकं भगवल् पदं गमिच्चीटिनान् । १२० रामनायोरु परमात्मना बालि रामपादं प्रवेशिच्चोरनन्तरं मर्क्कटौघं भयत्तोटोटि वेगेन पुक्कितु

है । जब मृत्यु के अवसर पर आपके पावन नाम दीन स्वर में जपनेवाला भी मोक्ष प्राप्त करता है, तब अपने ही समक्ष भगवान का दर्शन करते हुए उन्हीं के सायक से मृत्यु पाने का यह जो महाभाग्य आज मुझे प्राप्त हुआ, वह अन्य किसे प्राप्त हो सकता है ? ११० हे कमललोचन ! मैंने यह जान लिया है कि पंक्तिकंठ (रावण) का वध करने के लिए श्रीनारायण ही पंक्तिरथ (दशरथ) के पुत्र रूप में अवतीर्ण हुए हैं और सीता साक्षात् लक्ष्मीदेवी ही हैं । आपके लोक में जाने के लिए प्रस्तुत मुझे अनुगृहीत करें । हे भगवान ! मेरे ही समान बलशाली बालक अंगद पर आपकीकृपादृष्टि हो तथा आप यह भाव अपनायें कि सुग्रीव और अंगद मेरे लिए समान हैं । हे भगवान्! अपने ही श्रीकरों से यह बाण निकाल लेकर इस मेरे शरीर पर अपना वरद हस्त फेर लें ।" यह सुनकर राम ने बालि के पास आकर अपने हाथ से बाण निकाला और कृपापूर्वक उसके शरीर पर अपना हाथ फिरा दिया । मानववीर रामजी के मुखांबुज का दर्शन करते हुए बालि ने अपना वानर शरीर त्याग दिया । योगीन्द्रों के भी अप्राप्य रामपद को बालि ने प्राप्त किया । १२० रामरूपी परमात्मा के द्वारा बालि के परम पद को प्राप्त होते ही । वानर समूह भयविह्वल हो किष्किन्धापुरी को दौड़ पड़ा और तारा को समाचार

किष्किन्धयाय पुराजिरे। चॊल्लिनार् तारयोटाशु कपिकळुं स्वर्लोकवासियाय् वन्नु कपीश्वरन् श्रीराम सायकमेट्टु रणाजिरे तारे! कुमारने वाळ्किक्क वैकाते। गोपुर वातिल् नालुं दृढं बन्धिच्चु गोपिच्चु कॊळ्क किष्किन्धा महापुरं। मन्त्रिकळोटु नियोगिक्क नी परिपन्थिकळ्ळ्कटक्कातिरिक्कणं। बालि मरिच्चतु केट्टोरु तारयुमालोलें वीळुन्न कण्णुनीरुं वार्त्तु; दुःखेन वक्षसि ताडिच्चु ताडिच्चु गद्गद वाचा परञ्ञु पलतरं— ऎन्तिनॆनिक्किनि पुत्रनुं राज्यवुमॆन्तिनु भूतल वासवुं मे वृथा! भर्त्तावु तन्नोटु कूटॆ मटियाते मृत्युलोकं प्रवेशिक्कुन्नतुण्टु ञान्। १३० इत्थं करञ्ञु करञ्ञु चॆन्नु तन् रक्तपांसुक्कळणिञ्ञु किटक्कुन्न भर्त्तृ कळेबरं कण्टु मोहं पूण्टु पुत्रनुं कूटॆयॆटं विवशयाय् वीणितु चॆन्नु पदान्तिके तारयुं केणु तुटङ्ङिनाळ् पिन्नॆप्पलतरं: बाणमॆय्तॆन्नॆयुं कॊन्नीटु नी मम प्राणनाथन्नु पॊरा पिरिञ्ञालॆटो! ऎन्नॆप्पतियोटु कूटॆययय्किलो कन्यका दानफलं निनक्कुं वरुं। आर्यनां निन्नालनुभूतमल्लयो भार्या वियोगज दुःखं रघुपते! व्यग्रवुं तीर्त्तुरुमयुमाय् वाळ्क नी सुग्रीव!

दिया कि "हे तारा! युद्ध प्रांगण में राम-सायक लगकर बालि स्वर्गवासी हो गया। अब कुमार (अंगद) का अभिषेक करा दो। किष्किन्धा राजधानी के चारों गोपुरद्वार को बन्द करने की मन्त्रियों को आज्ञा दो। कोई शत्रु गोपुर के भीतर प्रवेश न करने पाये, इसका बराबर ध्यान रखा जाए।" बालि के वध की सूचना पाकर अश्रुधारा प्रवाहित करती हुई तारा दुःख से छाती पीटती-पीटती गद्गद कण्ठ से कहने लगी—"अब मेरे लिए पुत्र या राज्य किस काम का है? मेरे लिए इस संसार का जीवन ही व्यर्थ है। मैं अपने पति के साथ मृत्युलोक में प्रवेश करूँगी।" १३० इस प्रकार विलाप करते-करते भागती हुई तारा रक्तधारा में निमग्न अपने पति के शव-शरीर को देखकर मोह-विह्वल हो अपने पुत्र सहित उसके चरणों पर जा गिरी और विलाप करती हुई तारा कई प्रकार के प्रलाप करने लगी—"हे राम! तुम अपने बाण से मुझे भी मार डालो। मेरा वियोग मेरा पति सह नहीं सकता। अगर तुम मुझे भी पति के साथ भेज सकोगे तो तुम्हें कन्यादान का पुण्यफल प्राप्त होगा। हे रघुपति! तुम आर्य हो और तुम्हें स्वयं भार्या-वियोगजन्य दुःख अनुभूत है। हे सुग्रीव! तुम रुमा (सुग्रीव की पत्नी) के साथ चिरकाल तक सुखपूर्वक

राज्यभोगङ्ङळोटुं चिरं। इत्थं परञ्ञु करयुन्न तारयोटुत्तर-मायरुळ् चेय्तु रघुवरन् तत्त्वज्ञानोपदेशेन कारुण्येन भर्तृ वियोग दुःखं कळञ्ञीटुवान्। १३९

तारयोटुळ्ळ उपदेशम्

ऒन्तिनु शोकं वृथा तव केळ्क्क नी बन्धमिल्लेतुमितिन्नु मनोहरे! निन्नुटे भर्त्तावु देहमो जीवनो? धन्ये! पर-मार्त्थमेन्नोटु चोल्लुनी। पञ्चभूतात्मकं देहमेटं जडं सञ्चितं त्वङ् मांस रक्तास्थि कोण्टेटो! निश्चेष्ट काष्ठ तुल्यं देहमोर्क्क नी निश्चयमात्मावु जीवन् निरामयन्। इल्ल जननं मरणवुमिल्ल केळ्ललुण्टाकायकतु निनच्चेतुमे। निल्कयुमिल्ल नटक्कयुमिल्ल केळ् दुःख विषयवुमल्लतु केवलं। स्त्री पुरुष क्लीब भेदङ्ङळुमिल्ल तापशीतादियुमिल्लेन्नरिक नी। सर्वगन् जीवनेकन् परनद्वयनव्ययनाकाश तुल्यनलेपकन्, शुद्ध-नाय् नित्यमाय् ज्ञानात्मकमाय तत्त्वमोर्त्तेन्तु दुःखत्तिनु कारणं? राम वाक्यामृतं केट्टोरु तारयुं रामनोटाशु चोदिच्चितु

राज्य करो।" इस प्रकार प्रलाप करते हुए बिलखती तारा के विरह दुःख को तत्वज्ञान के उपदेश द्वारा दूर करने के विचार से करुणामूर्ति राम ने तारा से कहा। १३९

तारा के प्रति उपदेश

"हे मनोहरी! सुनो। तुम्हारा यह दुःख व्यर्थ है। इस शोक के लिए कोई कारण नहीं है। हे धन्ये! तुम मुझे सच बताओ कि तुम्हारा पति शरीर है या जीवन है? (अगर तुम देह को पति मान बैठती हो तो) यह त्वक् मांस अस्थि एवं रक्त से बनी यह पंचभूतात्मक देह केवल जड़ है। तुम यह समझ लो कि यह चेतनरहित देह काष्ठतुल्य है। (अगर जीवन ही तुम्हारा पति है तो) जीवन तो आत्मा है जो निरामय, जन्म-मरण रहित है। उसके सम्बन्ध में सोचकर तुम्हें व्याकुल होने की आव-श्यकता नहीं है। जीवन का कभी अन्त नहीं होता। जन्म-मरण रहित आत्मचैतन्य ही जीवन है। स्त्री, पुरुष, नपुंसक नामक रूप भेद या उष्ण-शीत का अवस्था भेद उसमें नहीं है। आकाश के जैसे सब में व्याप्त, किन्तु किसी में न लिप्त यह आत्मा शुद्ध, अद्वैत, अव्यय एवं निर्मल है। वह शुद्ध, नित्य एवं ज्ञानमय है। ज्ञानस्वरूप इस आत्मतत्व को पहचान

पिन्नेयुं—१० निश्चेष्ट काष्ठ तुल्यं देहमायतुं सच्चिदात्मा नित्यनायतु जीवनुं; दुःख सुखादि सम्बन्धमार्क्कॆन्नुळ्ळतॆक्कॆ-यरुळ् चॆय्कवेणं दयानिधे ! ऎन्नतु केट्टरुळ् चॆय्तु रघुवरन् धन्ये ! रहस्यमायुळ्ळतु केळ्क्क नी । यातॊरळवु देहेन्द्रिया-हङ्कार भेदभावेन सम्बन्धमुण्टाय् वरुं अत्र नाळेय्क्कुमात्मा-विनुसंसारमॆत्तुमविवेक कारणाल् निर्णयं । ओर्क्किल् मिथ्या-भूतमाय संसारवुं पार्क्क ताने विनिवर्त्तिक्कयिल्लॆटो ! नाना विषयङ्ङळॆ ध्यायमाननां मानवन्नॆङ्ङनॆयॆन्नतुं केळ्क्क नी । मिथ्यागमं निज स्वप्ने यथातथा सत्यमायुळ्ळतु केट्टालुमॆङ्किलो । नूनमनाद्यविद्या बन्धु हेतुना तानामहंकृतिक्काशु तल्क्कार्यमाय् संसारमुण्टामपार्त्थकमायतुं संसारमो राग रोषादि संकुलं । २० मानसं संसार कारणमायतुं मानसत्तिन्नु बन्धं भविक्कुन्नतुं; आत्म-मनस्समानत्वं भविक्कयालात्मनस्तल्कृत बन्धं भविक्कुन्नु । रक्तादि सान्निद्ध्यमुण्टाक कारणं शुद्ध स्फटिकवुं तद्वर्ण्णमाय् वरुं । वस्तुतया पक्किलिल्लतद्रञ्जना चित्ते विचारिच्चु काण्क नी

लेने पर किस बात का दुःख रह जाता है ?" राम का यह वाक्यामृत सुनकर तारा ने फिर राम से प्रश्न किया । १० —हे स्वामी ! आपने बताया कि देह जड़ काष्ठतुल्य है और जीवन सत्चित् आत्मा है जो नित्य है । अगर ऐसी बात है तो हे दयानिधि ! यह समझाने की कृपा करें कि सुख-दुःख का अनुभव (जीवन और देह में) किसको होता है ।" यह सुनकर राम ने बताया–"हे धन्ये ! तुम इस रहस्य को मुझसे सुनो । जब तक आत्मा देह, इन्द्रिय, अहंकार आदि से उद्भूत भेदभाव के वशीभूत रहती है तब तक निश्चय ही अविवेक के कारण वह संसार से आबद्ध रहती है । गहराई से विचार करने पर (विदित होगा) मिथ्यात्मक इस संसार का कोई पृथक् अस्तित्व नहीं है । किन्तु नाना प्रकार के विषयों के प्रति चिन्तित मनुष्य इस संसार से मुक्त नहीं हो सकता । वास्तव में यह संसार स्वप्न के समान मिथ्या है । मायावश अहं की भावना और उसके फलस्वरूप यह अर्थहीन संसार बनता है । अहंकार से उत्पन्न यह संसार राग-द्वेष आदि विकारों से परिपूर्ण है । २० —मन ही इस संसार का कारण है । (राग-द्वेष आदि का) बन्धन मन को लगता है । अज्ञान-वश मन के अहंभाव आदि आत्मा से सम्बन्धित हो जाते हैं । मन तथा आत्मा के परस्पर एक दूसरे की छाया बनकर रहने से मन के राग आदि भाव आत्मा में प्रतीत होने लगते हैं, जैसे कि स्वच्छ काँच स्याही, रक्त

सूक्ष्ममाय् । बुद्धीन्द्रियादि सामीप्यमुण्टाकयालेत्तुमात्माविनु संसारवुं बलाल् । आत्मास्वलिंगमायोरु मनस्सिनै तात्पर्य्यमोटु परिग्रहिच्चिट्टल्लो तन्स्वभावङ्ङळायुळ्ळ कामङ्ङळेस्सत्वादिकळां गुणङ्ङळाल् बद्धनाय् सेविक्कयालवशत्वं कलर्न्नंतु भाविक्क कौण्टु संसारे वलयुन्नु । आदौमनोगुणान् सृष्टा ततस्तदा वेदं विधिक्कुं बहुविध कर्म्मङ्ङळ् । शुक्लरक्तासित भेद गतिकळाय् मिक्कतुं तत्समानप्रभावङ्ङळाय् । ३० इङ्ङनै कर्म्म-वशेन जीवन् बलालेङ्ङुमाभूतप्लवं भ्रमिच्चीटुन्नु । पिन्नेस्स-मस्त संहारकाले जीवनन्नुमनाद्यविद्यावशं प्रापिच्चु तिष्ठत्य-भिनिवेशत्ताल् पुनरथ सृष्टिकाले पूर्ववासनयासमं जायातभूयो घटीयन्त्रवत्सदा मायाबलत्तालताक्कौंळिक्कामेंटो ! यातोरिक्कल् निज पुण्यविशेषेण चेतसिसत्संगति लभिच्चीटुन्नु, मत्भक्तनाय-शान्तात्माविनु पुनरिप्पोळवन्मतिमद्विषया दृढं श्रद्धयुमुण्टां कथाश्रवणे ममशुद्धस्वरूप विज्ञानवुं जायते । सद्गुरुनाथ

या दूध के सान्निध्य मात्र से उसी रंग का प्रतीत होने लगता है । वास्तव में देखा जाय तो आत्मा का अपना कोई सम्बन्ध नहीं है । तुम गहराई से सोचोगी तो विदित होगा कि बुद्धि, इंद्रिय आदि के सामीप्य के कारण आत्मा बलात् संसार में बन्धित हो जाती है । अपने सूक्ष्मशरीरी मन को अपनाने के कारण उसके स्वभावज काम आदि के सम्बन्ध में आकर आत्मा उनके वश में पड़ जाती है । इस प्रकार मन की अधीनता स्वीकार करने के कारण आत्मा संसार के वशीभूत होती है । बन्धनस्वरूप काम-लोभ आदि तथा मोक्षस्वरूप शम-दम आदि इस प्रकार पहले दो तरह के मनोगुणों की सृष्टि करके सात्विक, राजस एवं तामस गुणों से युक्त कर्मों का वेदविधान करते हैं । ये कर्म अपना प्रभाव डालते हैं । ३० ऐसे कर्मों के वश में पड़कर जीवन प्रलयपर्यन्त संसार बन्धन में भटकता है । प्रलयकाल में अनादि अविद्या में तल्लीन हो निर्विकार रूप में वह रहती है । फिर सृष्टि रचना के समय अपनी पूर्ववासना के अनुरूप शरीर धारण करती है । इस प्रकार माया के वशीभूत आत्मा पानी भरने के घट के समान जन्म-मृत्यु रूपी चक्र में ऊपर-नीचे घूमती रहती है । उसके इस जन्म-मरण को कौन दूर कर सकता है ? मेरे भक्त पुण्यात्मा लोगों को जब सत्संगति का अवसर प्राप्त होता है तब उनकी बुद्धि का विकास होता है और वे निरंतर मुझ पर ध्यान केन्द्रित करते हैं । मेरी कथा-श्रवण में उनका मन तल्लीन हो जाता है और उनके मन में

प्रसादेन मानसे मुख्य वाक्यार्त्थं विज्ञानमुण्टाय्वरुं। देहे-
न्द्रिय मनःप्राणादिकळिल् निन्नाहन्त वेरॊन्नुनूनमात्मावितु।
सत्यमानन्दमेकं परमद्वयं नित्यं निरुपमं निष्कळं निर्ग्गुणं। ४०
इत्थमरियुम्पोळ् मुक्तनामप्पोळे सत्यं मयोदितं सत्यं मयोदितं।
यातॊरुत्तन् विचारिक्कुन्नतिङ्ङने चेतसि संसारदुःखमवनिल्ल।
नीयुं मयाप्रोक्तमोर्त्तु विशुद्धयाय् माया विमोहं कळकमनोहरे!
कर्म्मबन्धत्तिङ्कल् निन्नुटन् वेर्पॆट्टु निर्म्मल ब्रह्मणितन्नॆ
लयिक्कनी। चित्ते निनक्कु कळिञ्ञ जन्मत्तिङ्कलॆन्नयुं भक्ति-
युण्टॆङ्कलतु कॊण्टु रूपवुमेवं निनक्कु काट्टित्तन्नु तापमिनि
कळञ्ञालुमशेषं नी। मद्रूपमीदृशं ध्यानिच्चु कॊळ्कयुं
मद्वचनत्तॆ विचारिच्चु कॊळ्कयुं चॆय्ताल् निनक्कु मोक्षं वरुं
निर्ण्णयं कैतवमल्ल परञ्ञतु केवलं। श्रीरामवाक्यमानन्देन
केट्टॊरु तारयुं विस्मयं पूण्टु वणङ्ङिनाळ्। मोहमकन्नु
तॆळिञ्ञतु चित्तवुं देहाभिमानज दुःखवुं पोक्किनाळ्। ५०
आत्मानुभूतिकॊण्टाशु सन्तुष्टयायात्मबोधेन जीवन्मुक्तयायिनाळ्।
मोक्षप्रदनाय राघवन् तन्नोटु कालक्षणं संगममात्रेण तारयुं

परमात्मज्ञान का उदय होता है। सद्गुरु के प्रसाद से तत्वमसि जैसे वाक्यों का ठीक अर्थ समझ पाएँगे। देह, इन्द्रिय, मन, प्राण, अहंकार आदि आत्मा नहीं, आत्मा उनसे भिन्न है। वह सत्य स्वरूप, आनन्द-स्वरूप, अद्वय, निरुपम, निष्कल, निर्गुण है। ४० —(आत्मा के स्वरूप का) यह ज्ञान पाते ही वे मुक्त हो जाएँगे। हे सुन्दरी! मेरा यह कथन सत्य है। जिसमें इस ज्ञान का उदय होता है, वह संसारबन्धन से विमुक्त होता है! इसलिए तुम भी मेरा यह उपदेश सुनकर माया-मोह को त्यागकर विशुद्धात्मा बन जाओ। तुम कर्म-बन्धन से छुटकारा पाकर शुद्ध ब्रह्म में विलीन हो जाओ। हे भद्रे! पूर्व जन्म में तुम्हारे मन में मेरे प्रति अटल भक्ति रही, इस कारण मैंने तुम्हें अपना दर्शन कराया। तुम अपना सारा दुःख त्याग दो। मेरे इस स्वरूप का ध्यान करने तथा मेरे वचनों का मनन करने से तुम सत्य ही परम कैवल्य पद को प्राप्त कर सकोगी। यह सत्य है।" श्रीरामजी का उपदेश सानन्द सुनकर तारा ने विस्मयपूर्वक रामजी को हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उसका मोह दूर हुआ और मन तत्वज्ञान से प्रकाशित हो उठा। देहा-भिमान से उत्पन्न दुःख भी दूर हुआ। ५० —आत्मबोध को ग्रहण कर अद्वैतानन्द रस में तल्लीन हो तारा जीवनमुक्तावस्था को प्राप्त हो

भक्तिमुळ्ळुत्तिट्टनादि बन्धं तीर्न्नु मुक्तयायाळीरु नारियेन्नाकिलुं।
व्यग्रमेल्लामकलप्पोयुत्तेळिञ्ञितु सुग्रीवनुमिव केट्टोरनन्तरं।
अज्ञानमेल्लामकन्नु सौख्यं पूण्टु विज्ञानमोटतिस्वस्थनायान्
तुलों। ५५

सुग्रीव राज्याभिषेकम्

सुग्रीवनोटरुळ् चेय्ताननन्तरमग्रज पुत्रनामंगदन् तन्नेयुं मुन्निट्टु
संस्कारमादि कर्म्मङ्ङळेप्पुण्याह पर्य्यन्तमाहन्त चेय्क नी।
रामाज्ञया तेळिञ्ञाशु सुग्रीवनुमामोद पूर्वमोरुक्कित्तुटङ्ङिनान्।
साम्ययायुळ्ळोरु तारयुं पुत्रनुं ब्राह्मणरुममात्य प्रधानन्मारुं
पौरजनङ्ङळुमाय् नृपेन्द्रोचितं भेरीमृदंगादि वाद्यघोषत्तोटुं,
शास्त्रोक्त मार्ग्गेण कर्म्मं कळिच्चथ स्नात्वाजगाम रघूत्तम
सन्निधौ। मन्त्रिकळोटुं प्रणम्य पादांबुजमन्तर्म्मुदा परञ्ञान्
कपिपुंगवन्— राज्यत्ते रक्षिच्चु कोळ्क वेणमिनित्तव शासनयुं

गयी। विस्मय की बात है कि मोक्षप्रद भगवान के अल्प समय के सत्संग से नारी होकर भी तारा मायाबन्धन से विमुक्त हो परमभक्त बनकर मुक्ति की अधिकारिणी बन गयी। तारा के निकट खड़े होकर यह उपदेश सुननेवाले सुग्रीव की आकुलता भी दूर हुई, वे संतुष्ट चित्त हुए। मन के माया-मोह से विमुक्त हो आत्मबोध की समरस स्थिति पाकर सुखी हो गये। ५५

सुग्रीव का राज्याभिषेक

(तारा को उपदेश देने के उपरान्त) राम ने सुग्रीव से कहा कि हे वानरराज! पिण्डकर्ता भ्रातृपुत्र अंगद को समक्ष खड़ा करके बालि के संस्कार कर्म पुण्याह पर्यन्त विधिवत् करो। राम की आज्ञा पाकर प्रसन्नचित्त हो सुग्रीव ने संस्कार कर्मों के साधन इकट्ठा किये। सौम्यशीला तारा, पुत्र अंगद, ब्राह्मण, अमात्य वर्ग और पुरवासी सबको साथ लेकर राजयोग्य वाद्यों सहित शास्त्रोक्त विधि के अनुसार बालि के अन्त्येष्टि संस्कार से निवृत्त होकर और स्नान के उपरान्त सुग्रीव ने मन्त्रियों के साथ राम के समीप आ उनके चरण-कमलों पर प्रणाम किया तथा कपिश्रेष्ठ ने मन ही मन प्रसन्न होकर राम से आग्रह किया— "हे देवदेवेश! अब आप ही राजपद पर आसीन हो शासन भार संभालें।

परिपालिच्चु सन्ततं देव देवेश ! ते पादपत्मद्वयं सेविच्चु कॊळ्ळुवन् लक्ष्मणनॆप्पोलॆ। सुग्रीव वाक्कुकळित्तरं केट्टुटनग्रे-चिरिच्चरुळ् चॆय्तु रघूत्तमन्—१० नी तन्नॆ ञानतिनिल्लॊरु संशयं प्रीतनाय् पोयालुमाशु ममाज्ञया। राज्याधिपत्यं निनक्कु तन्नॆनिनिप्पूज्यनाय्च्चॆन्नभिषेकं कळिक्क नी। नूनमॊरु नगरं पूकयुमिल्ल ञानो पतिन्नालु संवत्सरत्तोळं। सौमित्रि चॆय्युमभिषेकमादराल् सामर्थ्यमुळ्ळकुमारनॆप्पिन्नॆ नी यौव-राज्यार्त्थमभिषेचय प्रभो ! सर्वमधीनं निनक्कु राज्यं सखे ! बालियॆप्पोलॆ परिपालनं चॆय्तु बालनेयुं परिपालिच्चु कॊळ्क नी। अद्रिशिखरे वसिक्कुन्नतुण्टु ञानद्यप्रभृति चातुर्म्मास्य-माकुलाल्। पिन्नॆ वरिषं कळिञ्ञालनन्तरमन्वेषणार्त्थं प्रयत्न-ङ्ङळ् चॆय्क नी। तन्वंगितानिरिप्पेटमऱिञ्ञुवन्नॆन्नोटु चॊल्कयुं वेणं मम सखे ! अत्र नाळुं पुरत्तिङ्कल् वसिक्क नी नित्य सुखत्तोटुदारात्मजैस्समं। २० राघवन् तन्नोटनुज्ञयुं कैक्कॊण्टु वेगन सौमित्रियोटु सुग्रीवनुं चॆन्नु पुरिपुक्कभिषेकवुं चॆय्तु वन्नितु रामान्तिके सुमित्रात्मजन्। सोदरनोटुं प्रवर्षणाख्ये

मैं आपकी आज्ञा का पालन करता हुआ लक्ष्मण के समान ही पादपद्मों में सेवारत रहूँगा।" सुग्रीव का यह वचन सुनकर राम ने मुस्कराते हुए कहा। १० —"तुममें और मुझमें कोई भेद नहीं। इसमें कोई सन्देह नहीं है। तुम मेरी आज्ञा लेकर ससंतुष्ट (राजधानी) चले जाओ। मैं तुमको राज्य का अधिकार देता हूँ। तुम जाकर सानन्द राज्या-भिषेक करा लो। मैं चौदह वर्ष तक किसी भी राजधानी में प्रवेश नहीं करूँगा। सौमित्र तुम्हारा राज्याभिषेक करेंगे। अंगद का युवराज के रूप में अभिषेक करो। तुम बालि के समान क्षेमपूर्वक प्रजा का परि-पालन करो और बालक (अंगद) की भी खूब देखभाल करते जाओ। मैं अब चार मास तक अर्थात् वर्षाऋतु की समाप्ति तक अद्रि शिखर पर विरहताप सहता हुआ जीवन बिताऊँगा। फिर वर्षा ऋतु के बीत जाने पर (शरद्काल के आगमन पर) (सीता के) अन्वेषण के लिए आवश्यक प्रबन्ध कर लो। हे मेरे मित्र ! तन्वंगी (सीता के) बैठने का स्थान खोज निकालकर उसका पता मुझे ला देना चाहिए। तब तक तुम राजधानी में पत्नी तथा सन्तान के साथ नित्यसुख का भोग करो।" २० —राम से अनुमति लेकर सुग्रीव सौमित्रको साथ लेकर तुरन्त ही राजधानी में पहुँच गये और राज्याभिषेक का कर्म भी पूरा किया।

गिरौ सादरं चेन्नु करेरि रघूत्तमन्; उन्नतमूर्द्ध्व शिखरं प्रवेशिच्चु निन्न नेरमोरु गह्वरं काणायि। स्फाटिक दीप्ति कलर्न्नु विळङ्ङिन हाटकदेश मणिप्रवरोज्ज्वलं; वात वरिष हिमातपवारणं पादपवृन्द फल मूल सञ्चितं; तत्रैव वासाय रोचयामास सौमित्रिणाश्रीरामभद्रन् मनोहरन्। सिद्ध योगीन्द्रादि भक्तजनं तदा मर्त्यवेषं पूण्ट नारायणन् तन्नै पक्षिमृगादि रूपं धरिच्चन्वहं पक्षिद्ध्वजनेब्भजिच्चु तुटङ्ङिनार्। राघवन् तत्र समाधिविरतनायेकान्त देशे मरुवं दशान्तरे ३० एकदा वन्दिच्चु सौमित्रिसस्पृहं राघवनोटु चोदिच्चरुळीटिनान्– केळक्कयिलाग्रहं पारं क्रियामार्ग्गमाख्याहि मोक्षप्रदं त्रिलोकीपते! वर्णाश्रमिकळ्क्कु मोक्षदं पोलतु वर्णिचरुळ् चेय्क वेणं दयानिधे! नारद व्यास विरिञ्चादिकळ् सदा नारायण पूजकोण्टु साधिक्कुन्नु। नित्यं पुरुषार्त्थमेन्नु योगीन्द्रन्मार् भक्त्या पऽयुन्नतेन्नु केळ्प्पुण्टु ञान्, भक्तनाय्

(फिर) राम के समीप सुमित्रात्मज लौट आये। (वर्षा ऋतु बिताने के लिए) रामजी सहोदर लक्ष्मण के साथ प्रवर्षण नामक पर्वत पर पहुँचे। उसके उन्नत शिखर पर खड़े हो देखने पर उन्हें एक गह्वर (गुफा) दिखायी दिया। वह गह्वर रत्नप्रभा से प्रकाशित, स्फटिक दीप्ति से युक्त होने के कारण सुवर्णमय था। उसे वात, वर्षा, हिम, आतप आदि से सुरक्षित तथा फल-फूलों से युक्त पादप समूहों से संकुल पाकर मनोहर श्रीरामजी ने भ्राता सहित वहीं वास करने का निश्चय किया। वहीं वास करते समय सिद्ध योगियों रूपी भक्तजनों ने पशु-पक्षियों का रूप धारण कर वहीं आकर रहने तथा मर्त्यवेषधारी साक्षात् पक्षिध्वज नारायण की स्तुति करने का उपक्रम किया। जब राम एकान्त समाधि से विरत हो बैठे थे। ३० —तब एक दिन राम के श्रीचरणों की वन्दना करते हुए आकांक्षाभरित वाणी में लक्ष्मण ने आग्रह किया—"हे त्रिलोकपति! मैं चाहता हूँ कि वर्णाश्रम धर्मों का पालन करनेवालों को मोक्ष प्रदान करनेवाली भगवान की पूजा-विधियाँ सविस्तार सुनूँ। हे दयानिधे! मुझे पूजाविधियाँ सविस्तार कह सुनाने की कृपा करें। मैंने योगियों को भक्तिपूर्वक कहते सुना है कि नारद, व्यास, विरिञ्च (ब्रह्मा) आदि नारायण की पूजा करके नित्य पुरुषार्थ को सिद्ध कर चुके हैं। हे त्रिलोकनाथ! आपके इस भक्त एवं दास को मुक्ति के उपायों का उपदेश देने की कृपा करें। आपका उपदेश (केवल मेरे लिए नहीं) लोकोपकारी सिद्ध

दासनायुळ्ळोरटियतु मुक्तिप्रदमुपदेशिच्चरुळणं। लोकैकनाथ ! भवानरुळ् चैय्किलो लोकोपकारकमाकयुमुण्टल्लो। लक्ष्मण-नेवमुणर्त्तिच्च नेरत्तु तल्क्षणे श्रीरामदेवनरुळ् चेय्तु। ३८

क्रिया मार्ग्गोपदेशम्

केळक्क नीयेङ्किल मल् पूजा विधानत्तिनोर्विकलवसान-मिल्लेन्तरिक नी। ॲङ्किलुं चोल्लुवनोट्टु संक्षेपिच्चु निङ्ङ-लुळ्ळोरु वात्सल्यं मुळ्ळुक्कयाल्। तन्नुटे तन्नुटे गृह्योक्त मार्ग्गेण मन्निटत्तिङ्कल् द्विजत्वमुण्टाय् वन्नाल् आचार्य्यनोट्टु मन्त्रं केट्टु सादरमाचारपूर्वमाराधिक्कमामेंटो ! हृल्क्कमलत्तिङ्कलाकिलुमां पुनरग्नि भगवाङ्कलाकिलुमामेंटो। मुख्य प्रतिमादिकळि-लोन्नाकिलुमर्क्कङ्कलाकिलुमप्पिङ्कलाकिलुं स्थण्डिलत्तिङ्कलुं नल्ल साळग्रासमुण्डङ्किलो पुनरुत्तममेत्रयुं। वेद तन्त्रोक्तङ्ङळाय मन्त्रङ्ङळ् कोण्टादराल् मृल्लेपनादि विधि वळि काले कुळिक्क वेणं देहशुद्धये मूलमरिञ्ञु सन्ध्यावन्दनादियुं नित्य कर्म्मं चेय्तु पिन्ने स्वकर्म्मणा शुद्ध्यर्त्थमाय्च्चेय्क सङ्कल्प-मादिये। १० आचार्य्यनायतु ञानेन्नु कल्पिच्चु पूजिक्क

होगा।" इस प्रकार लक्ष्मण के आग्रह करते ही श्रीरामदेव ने कहा। ३८

क्रिया मार्ग का उपदेश

(राम ने कहा कि) "हे भाई ! तुम सुनो। तुम यह जान लो कि मेरी पूजा-विधियों का कहीं कोई पार नहीं है। फिर भी तुम्हारे प्रति असीम वात्सल्य के कारण मैं तुम्हें संक्षेप में बता दूँगा। अपने-अपने गृह्योक्त मार्गों का अनुसरण करते हुए जो इस पृथ्वी पर द्विजत्व को प्राप्त कर लेता है, वह आचार्यों से मन्त्र सुनकर, विधिपूर्वक मेरी आराधना कर सकता है। आराधना-मूर्त्ति को मन में, जल में, सूर्य में, श्रेष्ठ प्रतिमाओं में, स्थण्डिल (बुहारी हुई भूमि) में, या अन्य ऐसे पदार्थ में कल्पित कर सकते हैं। अगर अच्छा सालिग्राम मिले तो उत्तम ही होगा। देहशुद्धि के लिए वेदों-तन्त्रों में बताये गये मन्त्रों का उच्चारण करते हुए मिट्टी या अन्य किसी वस्तु का लेपन करते हुए यथा-समय स्नान करना चाहिये। उसके उपरान्त मूलमन्त्र का तात्पर्य समझते हुए सन्ध्या-वन्दन आदि

भक्तियोटॆ दिवसं प्रति। स्नापनं चॆय्क शिलायां प्रतिमासु शोभनार्थं चॆय्कवेणं प्रमार्ज्जनं। गन्धपुष्पाद्यङ्ङळ् कॊण्टु पूजिप्पवन् चिन्तिच्चतॊक्कॆ लभिक्कुमत्रिक ती। अग्नीय-जिक्कहविस्सु कॊण्टादरालर्क्कनॆ स्थण्डिलत्तिलॆन्नाकिलो मुम्पिले सर्वपूजाद्रव्यमायव सम्पादनं चॆय्तु वेणं तुटङ्ङुवान्। श्रद्ध-योटुं कूटॆ वारियॆन्नाकिलुं भक्तनायुळ्ळवन् तन्नालतिप्रियं। गन्धपुष्पाक्षत भक्ष्य भोज्यादिकळॆल्लु पिन्नॆप्परयेणमो ञानॆटो! वस्त्राजिन कुशाद्यङ्ङळालासनमुत्तममायतु कल्पिच्चु कॊळ्ळणं। देवस्य सम्मुखे शान्तनाय् चॆन्निरुन्नाविर्म्मुदालिपिन्यासं कळिक्कणं। चॆय्क तत्वन्यासवुं केश वाद्येन चॆय्क मम मूर्त्तिपञ्जरन्यासवुं। २० पिन्नॆ मन्त्रन्यासवुं चॆय्तु सादरं तन्नटॆ मुम्पिल् वामे कलशं वच्चु, दक्षिण भागे कुसुमादि-कळॆल्लामक्षत भक्त्यैव संभरिच्चीटणं। अर्घ्यं पाद्यप्रदानार्थ-मायुं मधुपर्क्कार्थमाचमनार्थमॆन्निङ्ङनॆ पात्र चतुष्टयवुं वच्चु कॊळ्ळणं पेर्त्तुमटॊन्नु निरूपणं कूटातॆ। मल्क्कलां जीव संज्ञां

नित्यकर्म करना चाहिये। फिर पूजा में बैठते समय कर्मों की शुद्धि के लिए आराध्य-मूर्त्ति की मन में कल्पना करनी चाहिये। १० मुझे ही आचार्य समझकर प्रतिदिन मेरी पूजा की जानी चाहिये। अगर पूजा के लिए प्रतिमा को स्वीकार किया जा रहा है तो पत्थर पर रख पानी से स्नान कराकर फिर यथाविधि अलंकारों से सुसज्जित करके ही उसकी पूजा की जानी चाहिए। जो गन्ध-पुष्प आदि से पूजा करता है उसकी सभी अभिलाषाएँ पूर्ण होंगी। अगर अग्नि की पूजा हो रही है तो हविस् से होम तथा स्थण्डिल पर उसकी पूजा होनी चाहिए। पूजा के लिए आवश्यक सभी द्रव्यों को एकत्रित रखने के उपरान्त ही पूजा आरम्भ करें। सच्चे भक्त का श्रद्धापूर्वक दिया जल पाकर भी मैं अत्यन्त प्रसन्न हो जाता हूँ। फिर सुगन्ध-पुष्प, अक्षत, भोज्य पदार्थ आदि की बात क्या कहने की है! वस्त्र, अजिन या कुश आदि से उत्तम आसन का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। देव के सम्मुख शान्तचित्त बैठकर यथासंभव लिपिन्यास, तत्वन्यास, केशव आदि नामों से मूर्त्तिन्यास। २० —और फिर मन्त्र-न्यास करना चाहिए। फिर अपने सामने ही वाम भाग में कलश तथा दक्षिण भाग में भक्तिपूर्वक कुसुम, अक्षत आदि संचित रखें। साथ ही अर्घ्य, पाद्य, मधुपर्क और आचमन के पात्र चतुष्टय भी रख दिये जाने चाहिए। उपरान्त उसके, मन को कहीं भटकने न देकर पूर्ण एकाग्रता

तटिदुज्ज्वलां हृल्क्कमले दृढं ध्यानिच्चु कॊळ्ळणं। पिन्ने स्वदेहमखिलं तयाव्याप्तमॊन्नुऱय्क्केणमिळक्कवुं कूटातॆ। आवाहयेल् प्रतिमादिषुमल्क्कलां देवस्वरूपमाय् ध्यानिक्क केवलं। पाद्यवुमर्घ्यं तथा मधुपर्क्कमित्याद्यै: पुन: स्नान वस्त्र विभूषणै: ऎन्नयुण्टुळ्ळतुपचारमॆन्नालतवयुं कॊळ्ळामॆ-निक्कॆन्नतेयुळ्ळु। आगमोक्त प्रकारेण नीराजनैर् धूपदीपैन्नि-वेद्यैर् बहुविस्तरै: ३० श्रद्धया नित्यमार्य्च्चिच्चु कॊळ्ळुकिल् श्रद्धया ञानुं भुजिक्कुमऱिक न्नी। होममगस्त्योक्त मार्ग्ग-कुण्डानले मूलमन्त्रं कॊण्टु चॆय्यामतॆन्नियॆ भक्त्या पुरुष सूक्तं कॊण्टुमामॆटो! चित्ततारिङ्कल् न्निनय्क्क कुमारा! न्नी। औपासनाग्नौ चरुणाह विषाथसोपाधिना चॆय्क होमं महामते! तप्तजांबूनदप्रख्यं महाप्रभं दीप्ताभरण विभूषितं केवलं, मामेववह्नि मद्धयस्थितं ध्यानिक्क होमकाले हृदिभक्त्या बुधोत्तमन्। पारिषदानां बलिदानवुं चय्तु होमशेषत्तॆस्समाप-येन्मन्त्रविल् भक्त्या जपिच्चुमांध्यानिच्चु मौनियाय् वक्त्रवासं नागवल्लीदलादियुं; दत्वामदग्रे महाप्रीतिपूर्वकं नृत्तगीत स्तुति

के साथ बिजली-सम तेजोमय मेरी जीवकला पर ध्यान केन्द्रित करके उसी कला को अपनी देह में व्याप्त समझ लेना चाहिए। फिर उसी मेरी जीवकला का प्रतिमाओं में आवाहन कर उसका देवरूप में ध्यान लगाना आवश्यक है। पाद्य, अर्घ्य, मधुपर्क आदि तथा स्नान, वस्त्र अलंकार आदि जितनी उपचार की वस्तुएँ हों, उतना मुझे प्रिय है। आगमों में उक्त प्रकार से धूप, दीप, नैवेद्य आदि लेकर। ३० —श्रद्धा-पूर्वक नित्य अर्चना करने पर मैं उन्हें सन्तोष से ग्रहण करूँगा। हे कुमार (लक्ष्मण)! तुम यह भलीभाँति समझ लो कि अगस्त्य मुनि से निर्धारित ढंग से होमकुण्ड तैयार करके उसमें अग्नि को प्रज्ज्वलित कर मूलमन्त्र या पुरुष सूक्त का उच्चारण करते हुए होम के लिए तैयार किये गये अन्न या चरु की आहुति चढ़ा दें। तब अग्नि में तप्त स्वर्ण के समान कांतिमय एवं उज्ज्वल आभूषणों से विभूषित वह्निमध्य में स्थित मेरा ध्यान किया जाना चाहिए। हे बुधोत्तम! होमकाल में हृदय में मेरी भक्ति परिपूर्ण रहे। अन्त में पार्श्वद देवों को बलि अर्पित कर तथा मंत्रोच्चारण सहित होम को समाप्त कर देना चाहिए। फिर भक्ति से मेरा जप और ध्यान करते हुए, मुँह को सुवासित करने के लिए मौनपूर्वक नागवल्ली (पान) अर्पित करके मेरे सामने ही नृत्य, गीत,

पाठादियुं चेय्तु पादांबुजे नमस्कारवुं चेय्तुटन् चेतसिमामु-
ऱप्पिच्चु विनीतनाय्, ४० मद्दत्तमाकुं प्रसादत्तेयुं पुनरुत्तमांगे-
निधायानन्दपूर्वकं रक्षमां घोर संसारादिति मुहुरुक्त्वा नम-
स्कारवुं चेय्तनन्तरं उद्वसिप्पिच्चुटन् प्रत्यङ् महस्सिङ्कलित्थं
दिनमनुपूजिक्क मत्सखे ! भक्ति संयुक्तनायुळ्ळ मर्त्यन् मुदा
नित्यमेवं क्रियायोगमनुष्ठिक्किल् देहनाशे मम सारूप्यवुं
वरुमैहिक सौख्यङ्ङळेन्तु चोल्लेणमो । इत्थं मयोक्तं क्रिया-
योगमुत्तमं भक्त्या पठिक्कतान् केळ्क्कतान् चेय्किलो नित्य
पूजाफलमुण्टवनेन्नतुं भक्तप्रियनरुळ् चेय्तानतु नेरं । शेषांश-
जातनां लक्ष्मणन् तन्नोटशेषमिदमरुळ् चेय्तोरनन्तरं मायामय-
नाय नारायणन् परन् मायामवलंब्य दुःखं तुटङ्ङिनान् ।
हा ! जनकात्मजे ! सीते ! मनोहरे ! हा ! जगन्मोहनी
नाथे ! ममप्रिये ! ५० एवमादि प्रलापं चेय्तु निद्रयुं
देवदेवन्नु वरातॆ चमञ्ञितु । सौमित्रि तन्नोटु वाक्यामृतं
कोण्टु सौमुख्यमोटुं मरुवुं चिलन्नेरं । ५२

स्तुति, पारायण आदि करके मेरे चरणों पर प्रणाम और नमस्कार करना चाहिए । इसके उपरान्त मन में मुझे बसाते हुए विनीत भाव से । ४० —मेरे प्रदत्त प्रसाद को उत्तमांग पर सानन्द धारण करते हुए 'भगवान ! घोर संसार-सागर से मेरी रक्षा करें" की बार-बार प्रार्थना सहित मुझे नमस्कार करना चाहिए । हे मेरे सखा ! इस प्रकार प्रतिदिन अन्तरात्मा में मुझे प्रतिष्ठित करते हुए पूजा करते जाना चाहिए । जो भक्तियुक्त मनुष्य सन्तोषपूर्वक नित्य इस क्रियायोग का अनुष्ठान करता है, वह देहनाश पर सारूप्य मुक्ति प्राप्त करता है । इहलोक में प्राप्त सुखों के सम्बन्ध में विशेष क्या कहना है ! भक्तप्रिय भगवान ने (लक्ष्मण से) कहा कि मेरे द्वारा बताये गये इस उत्तम क्रियायोग का जो भक्तिपूर्वक पठन-पाठन, श्रवण या कथन करेगा उसे नित्य पूजा का फल सिद्ध होगा ।" साक्षात् अनन्त के अंश से जन्मे लक्ष्मण को इस प्रकार सविस्तार कह सुनाने के उपरान्त मायामय भगवान नारायण अपनी माया का अवलम्ब लेकर दुःख प्रकट करने लगे । वे चिल्ला उठे—"हा जनकात्मजे ! सीता ! हे मनोहरी ! हा जगत को मोहित करनेवाली प्रिये ! मेरी प्रियतमे !" ५० —भगवान जो देवों के देव हैं, इस प्रकार प्रलाप करते गये और इस विरह ताप से वे नींद से भी वंचित हो उठे । सौमित्र के वाक्यामृत सुनकर वे कभी-कभी प्रसन्नचित्त भी हुआ करते थे । ५२

हनुमल् सुग्रीव संभाषणम्

इङ्ङने वाळुन्न कालमौरुदिनमङ्ङु किष्किन्धापुरत्तिङ्कल् वाळुन्न सुग्रीवनोटु परञ्ञु पवनजनग्रे वणङ्ङि निन्नेकान्तमां वण्णं— केळ्क्क कपीन्द्र ! निनक्कु हितङ्ङळां वाक्कुकळ् ञान् परयुन्नव सादरं; निन्नुटे कार्य्यं वरुत्ति रघूत्तमन् मुन्नमे सत्यव्रतन् पुरुषोत्तमन्। पिन्ने नीयो निरूपिप्पीलतेतु-मेन्नेन्नुटे मानसे तोन्नुन्नतिन्नहो ! बालि बलवान् कपि-कुलपुंगवन् त्रैलोक्य सम्मतन् देवराजात्मजन् निन्नुटे मूलं मरिच्चु बलालवन् मुन्नमे कार्य्यं वरुत्तिक्कोटुत्तितु। राज्या-भिषेकवुं चेय्तु महाजन पूज्यनाय्त्तारयुमायिरुन्नीटुं नी; अत्र नाळुण्टिरिप्पिङ्ङनेयेन्नतुं चित्तत्तिलुण्टु तोन्नुन्नु धरिक्क नी। अद्यवाश्वोवापरश्वोथवातवमृत्यु भविक्कुमतिनिल्ल संशयं। १० प्रत्युपकारं मरक्कुन्न पुरुषन् चत्ततिनोक्कुमे जीविच्चिरिक्किलुं। पर्वताग्रे निज सोदरन् तन्नोटुमुर्वीश्वरन् परितापेन वाळुन्नु। निन्नेयुं पार्त्तु परञ्ञ समयवुं वन्नतुं

हनुमान और सुग्रीव का संवाद

इस प्रकार (भगवान रामके विरह-पीड़ित) रहते समय किष्किन्धापुर में (सुखपूर्वक) रहते सुग्रीव से एकान्त में पवनसुत ने हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए कहा—"हे कपीन्द्र ! सुनो ! तुम्हारे हित की बात मैं कहने जा रहा हूँ। सत्यव्रत भगवान पुरुषोत्तम ने पहले ही तुम्हारा कार्य (राज्याभिषेक) पूरा कर दिया। किन्तु आज मुझे लगता है कि तुम्हें उसका स्मरण नहीं रहा। कपिकुल पुंगव बलवान एवं त्रैलोक्य सम्मत देवराज का पुत्र बालि तुम्हारे कारण मारा गया। (उसको मारकर) राम ने पहले ही तुम्हारी अभिलाषा पूरी की। राज्याभिषिक्त हो महा-जनों से पूजित तुम तारा के साथ भोगों में तल्लीन बैठे हो। क्या तुम यह सोचते हो कि तुम इस प्रकार (निर्द्वन्द्व भाव से) कब तक रह सकोगे ? आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों राम-बाण से तुमको भी भ्राता के मार्ग से जाना पड़ेगा। इसमें संदेह नहीं रह गया। १० किसी के उपकार को विस्मृत कर जीवित रहनेवाला वास्तव में मरे हुए के बराबर है। पर्वताग्र पर अपने भ्राता सहित पृथ्वीपति (राम) अत्यन्त व्याकुल हो बैठे हैं। वे तुम्हारी प्रतीक्षा में हैं। इस समय

तीयोधरिच्चतिल्लेतुमे। वानर भावेन मानिनी सक्तनाय् पानवुं चेय्तु मतिमङ्ङन्नहं; राप्पकलुमङ्ियातॆ वसिक्कुन्न कोप्पुकळॆन्नयुं नन्नु नन्निङ्ङने अग्रजनाय शक्रात्मजनॆप्पोलॆ निग्रहिच्चीटुं भवानॆयुं निर्णयं। अञ्जनानन्दनन् तन्नुटॆ वाक्कुकेट्टञ्जसाभीतनायोरु सुग्रीवनुं उत्तरमायवन् तन्नोटु चॊल्लिनान् सत्यमत्रे नी पऱञ्ञतुनिर्णयं। इत्तरं चॊल्लुम-मात्यनुण्टङ्किलो पृथ्वीशनापत्तुमॆत्तुकयिल्लल्लो। सत्वरमॆन्नुटॆयाज्ञ-योटुं भवान् पत्तुदिक्किङ्कलेय्क्कुमयच्चीटणं २० सप्तद्वीप स्थितन्माराय वानरसत्तमन्मारॆ वरुत्तुवानाय् द्रुतं; नेरे पतिनायिरं कपिवीररॆ पारातयय्क्क सन्देश पत्रत्तोटुं। पक्षत्तिनुळ्ळिल् वरेणं कपिकुलं पक्षं कळिञ्ञु वरुन्नुवॆन्नाकिलो वध्यनवनतिनिल्लोरु संशयं सत्यं पऱञ्ञालिळक्कमिल्लेतुमे। अञ्जना पुत्रनोटित्थं नियोगिच्चु मञ्जुळमन्दिरं पुक्किरुन्नी-टिनान्। भर्तृनियोगं पुरस्कृत्य वानरपुत्रनुं वानर सत्तमन्मारॆयुं पत्तु दिक्किनुमयच्चानभिमतदत्तपूर्वं कपीन्द्रन्मारुमन्नेरं, वायु वेग प्रचारेण कपिकुल नायकन्मारॆ वरुत्तुवानाय् मुदा।

निर्धारित समय (सीतान्वेषण का शरद्काल) आ गया है। किन्तु तुम उस बात को भूल बैठे हो। वानर के स्वभाव के अनुसार मद्यपान एवं कामासक्ति से बुद्धिभ्रष्ट दिन-रात का अन्तर समझे बिना तुम बैठे हो। यह जो रास्ता अपनाया गया है ठीक ही है! ठीक ही है! जैसे शक्रात्मज (बालि) को मारा है वैसे राम निश्चय ही तुम्हें भी मार डालेंगे।" अंजनापुत्र (हनुमान) के वचन सुनकर अकस्मात् सुग्रीव भयविह्वल हो उठे और (पश्चात्ताप के स्वर में) उन्होंने हनुमान से कहा—"तुमने ठीक ही कहा है। इस प्रकार का सदुपदेश देनेवाले अमात्य के रहने पर पृथ्वीश (राजा) कभी किसी प्रकार की विपत्ति में नहीं फँसता। आप तुरन्त मेरी आज्ञा से दशों दिशाओं में आदमी भेजें। २० जो सप्तद्वीपों में स्थित वानर श्रेष्ठों को तुरन्त बुला लाएँ। आप सन्देशपत्र के साथ ठीक दस हज़ार कपिवरों को भेजिए, जो एक पक्ष के भीतर लौट आएँगे और जो उसके बाद आएंगे वे वध्य होंगे। मेरे इस सत्य वचन में कुछ अन्तर नहीं पड़ेगा।" इस प्रकार की आज्ञा हनुमान को देकर मणिमन्दिर में सुग्रीव चले गये। स्वामी की आज्ञा के अनुसार कपिवरों को बुलाकर हनुमान ने उनके हाथ में सन्देशपत्र दे दिये और सबको इच्छानुसार पुरस्कृत करके दसों दिशाओं में भेज दिया। तब दान-मान से संतृप्त

पोयितु दानमानादि तृप्तात्मना माया मनुष्य कार्य्यार्त्थ-
मतिद्रुतं । २९

श्रीरामन्ट़े विरहतापम्

रामनुं पर्वतमूर्द्धनि दुःखिच्चु भामिनियोटुं पिरिञ्ञु वाळुंविधौ तापेन लक्ष्मणन् तन्नोटु चॊल्लिनान् पापमय्यो विधिकाण्कु कुमार ! ती । जानकी देवि मरिच्चितो कुत्रचिल् मानस तापेन जीविच्चिरिक्कयो ? निश्चयिच्चेतुमरिञ्ञतु-मिल्लल्लो कश्चिल् पुरुषनॆन्नोटु संप्रीतनाय् जीविच्चिरिक्कुन्नितॆन्नु चॊल्लीटुकिल् केवल मॆत्रयुमिष्टनवन् मम । ऎङ्ङानुमुण्टिरिक्कु-न्नतॆन्नाकिल् आनिङ्ङु बलाल् कॊण्टुपोरुवन् निर्णयं । जानकी देवियॆक्कट्ट कळ्ळन् तन्नॆ मानस कोपेन नष्टमाक्कीटुवन् । वंशवुं कूटॆयॊटुक्कुन्नतुण्टॊरु संशयमेतुमतिनिल्ल निर्णयं । ऎन्नेयुं काणाञ्ञु दुःखिच्चिरिक्कुन्न निन्नॆ आनॆन्निनिक्काणुन्नु वल्लभे ! चन्द्रानने ती ! पिरिञ्ञतु कारणं चन्द्रनुमादित्यनॆ-प्पोलॆयायितु । १० चन्द्रशीतांशुक्कळालवळॆच्चॆन्नु मन्दमन्दं तलोटित्तलोटित्तदा वन्नु तटवीटुकॆन्नॆयुं सादरं निन्नुटॆ गोत्रजयल्लो

कपिवर माया मनुष्य (राम) के कार्य के लिये कपिकुल नायकों को आमंत्रित करने वायुवेग से चले गये । २९

श्रीराम का बिरह ताप

भामिनी से वियुक्त हो, विरह ताप से पीड़ित हो पर्वतशिखर पर रहते समय भगवान ने लक्ष्मण से कहा—"हे कुमार ! भाग्य प्रतिकूल दिखाई दे रहा है। सीता का कोई समाचार प्राप्त नहीं है । क्या पता है कि वह मर गयी या दुखी हो जीवित कहीं बैठी है। इसकी कुछ निश्चित जानकारी नहीं है। अगर कोई आकर यह सुखद समाचार दे कि सीता जीवित है तो वह मेरा उदार मित्र है। अगर कहीं वह जीवित बैठी है तो मैं निश्चय ही बलपूर्वक उसे ले आऊँगा। जिस चोर ने जानकीदेवी को चुरा लिया है, उसको मैं उसके बंश के साथ समूल अपने क्रोध से नष्ट कर दूंगा । मेरा यह कथन निस्सन्देह ही सत्य है। हे प्रियतमे ! तुम मुझे न देख पाने से दुखिनी हो और पता नहीं मैं तुम्हें कब देख पाऊँगा। हे चन्द्रानने ! तुम्हारे वियोग से पीड़ित मेरे लिये चन्द्र भी आदित्य के समान (दग्ध करनेवाला) है। १० हे चन्द्र ! तुम अपनी शीतल किरणों से उसका

जनकज । सुग्रीवनुं दयाहीननत्रे तुलों दुःखितनामेन्नेयुं मऱन्नानल्लो। निष्क्कण्टकं राज्यमाशु लभिच्चवन् मऴक्कण्णि- मारोटु कूटि दिवानिशं मद्यपानासक्तचित्तनां कामुकन् व्यक्तं कृतघ्ननत्रे सुमित्रात्मज ! वन्नु शरक्कालमेन्नतु कण्टवन् वन्नीलयल्लो पऱञ्ञ वण्णं सखे ! अन्वेषणं चेय्तु सीताधिवासवु- मिन्नेटमेन्नऱिञ्ञीटुवानायवन् पूर्वोपकारियामेन्ने मऱक्कयाल् पूर्वनवन् कृतघ्नन्मारिल् निर्णयं । इष्टरायुळ्ळ जनत्ते मऱक्कुन्न दुष्टरिल् मुम्पुण्टु सुग्रीवनोर्क्क नी। किष्किन्धयोटुं बन्धुक्कळोटुं कूटे मर्क्कट श्रेष्ठने निग्रहिच्चीटुवन् । २० अग्रज मार्ग्गं गमिक्केणमिन्निनि सुग्रीवनुमतिनिल्लोरु संशयं । इत्थ- मरुळ् चेय्त राघवनोटति क्रुद्धनायोरु सौमित्रि चोल्लीटिनान्- वध्यनायोरु सुग्रीवनेस्सत्वरं हत्वा विटकोळ्वनद्यतवाज्ञितकं आज्ञापयाशुमामेन्नु पऱञ्ञतिप्राज्ञनायोरु सुमित्रा तनयनुं, आदाय चाप तूणीर खड्गङ्ङळुं क्रोधेन गन्तुमभ्युद्यतं सोदरं कण्टु रघुपति चोल्लिनान् पिन्नेयुमुण्टोन्नुतिन्नोटिनियुं पऱयुन्नु; हन्तव्यनल्ल सुग्रीवन् मम सखि किन्तु भयप्पेटुत्तीटुकेन्ने वरू।

धीरे-धीरे आश्लेष करके उन्हीं किरणों से मेरा भी आश्लेष करो। सीता तो तुम्हारी गोत्रजा (चन्द्रवंशी) है। हे लक्ष्मण ! सुग्रीव तो बिलकुल निर्दय है। उसने मुझ दुखी को विस्मृत कर दिया। निष्कण्टक राज्य पाते ही दिन-रात वह मद्यपान करता हुआ चंचल नयनियों में आसक्त एवं कामान्ध हो गया है। वह अवश्य ही कृतघ्न है। शरद्काल में आने के लिये वचनबद्ध वह शरद्काल के आगमन पर भी नहीं आ मिला। सीता की खोज करके उसके रहने का स्थान मुझे सूचित करने के लिये बाध्य सुग्रीव (यहाँ न आने के कारण) अपने उपकारी मुझे भूल गया। अतः वह कृतघ्नों में सबसे आगे है। हे भ्राता ! सुग्रीव को इष्टजनों को विस्मृत कर बैठनेवाले दुष्टों में भी दुष्ट जान लो। मैं किष्किन्धा तथा सगे-सम्बन्धियों सहित उसका नाश कर डालूँगा। २० अब इस बात में सन्देह नहीं रह गया कि सुग्रीव को अपने अग्रज का अनुसरण करना होगा (बालि के जैसे ही बाण से मरना होगा)।" इस प्रकार कहते राम से अत्यन्त रोषाकुल लक्ष्मण ने कहा—"वध्य सुग्रीव का वध करने के लिये मैं अभी निकलूँगा। हे स्वामी ! आपकी आज्ञा भर की देर है।" यह कहकर चाप, तूणीर, खड्ग आदि आयुधों से लैस हो निकलने के लिये व्यग्र खड़े भ्राता को देखकर राम ने कहा—"तुमसे एक बात और कहने की

बालियेप्पोले निनक्कुं विरवोटु कालपुरत्तिनु पोकामरिक नी ।
इत्थमवनोटु चेन्नु चोन्नालतिनुत्तरं चोल्लुन्नतुं केट्टु कोण्टु नी
वेगेन वन्नालतिननुरूपमामाकूतमोर्त्तु कर्त्तव्यमनन्तरं । ३०

लक्ष्मणन् सुग्रीवनेक्काण्मान् पोकुन्नतु

अग्रजन्माज्ञया सौमित्रि सत्वरं सुग्रीव राज्यं प्रति नटन्नी-टिनान् । किष्किन्धयोटुं दहिच्चु पोमिप्पोळ् मर्क्कट जातिकळेन्नु तोन्नुंवण्णं । विज्ञानमूर्त्ति सर्वज्ञननाकुलन् अज्ञानियायुळ्ळ मानुषनेप्पोले दुःख सुखादिकळ् कैक्कोण्टु वर्त्तिच्चु दुष्कृत शान्ति लोकत्तिनुण्टाक्कुवान् । मुन्नंदशरथन् चेय्त तपोबलं तन्नुटे सिद्धि वरुत्तिक्कोटुप्पानुं, पङ्कज संभवनादिकळ्क्कुण्टाय सङ्कटं तीर्त्तु रक्षिच्चुकोटुप्पानुं, मानुषवेषं धरिच्च परापरनानन्दमूर्त्ति जगन्मयनीश्वरन् । नानाजनङ्ङळुं माययामोहिच्चु मानसमज्ञान संवृतमाकयाल् मोक्षं वरुत्तुन्नतेङ्ङने जानेन्नु साक्षाल् महाविष्णु चिन्तिच्चु कल्पिच्चु । सर्वजगन्मोहनाशिनियाकिय दिव्य कथयें प्रसिद्धयाक्कूयथा । १० रामनाय् मानुष व्यापार जातयां

है । मेरा बन्धु सुग्रीव हन्तव्य (वध्य) नहीं है, उसे मात्र डराना है । बालि के पीछे जाने की तुम्हारी बारी निकट आ गयी है, इतना मात्र कहकर उसका जो उत्तर सुग्रीव देता है, वह तुम सुनकर आओ । उसका उत्तर पाकर उसकी मन की गति समझकर फिर अपना कर्तव्य निश्चित करेंगे ।" ३०

सुग्रीव से मिलने के लिए लक्ष्मण का गमन

अपने अग्रज राम की आज्ञा लेकर सौमित्र सुग्रीव के राज्य की ओर चल पड़े । किष्किन्धा सहित सारे वानर दग्ध होंगे, ऐसी प्रतीति कराने-वाली वह यात्रा थी । सर्वान्तर्यामी एवं सर्वज्ञ, अनाकुल भगवान ने लोक-वासियों की पाप-शान्ति के लिए अज्ञानी मनुष्य के समान सुख-दुःख स्वीकार किया । पूर्व में दशरथ से किये गये तप का फल उन्हें प्रदान करने, कमल-सम्भव आदि के दुःख को दूर करके उनकी रक्षा करने हेतु मानव रूप में अवतरित परात्पर, आनन्दमूर्ति, जगन्मय, साक्षात् महाविष्णु भगवान, अज्ञानवश नाना लोगों को माया से मोहित हो भटकते देख यह चिन्तित हो उठे कि इन लोगों को कैसे मोक्ष-साधन उपलब्ध कराऊँ ? (इस विचार से प्रेरित हो) सर्व जगत के लोगों के मोह को दूर करनेवाली दिव्यकथा का

रामायणाभिधामानन्द दायिनीं सत्क्कथामिप्रपञ्चत्तिलोक्कवे विख्यातयाक्कुवानानन्द पूरुषन् क्रोधवु मोहवु कामवु रागवु खेदादियु व्यवहारार्त्थं सिद्धये तत्तल् क्रिया काल देशोचितं निज चित्ते परिग्रहिच्चीटिनानीश्वरन् । सत्वादिकळां गुणङ्ङळिल्त्तान-नुरक्तनेंप्पोलें भविक्कुन्नु निर्ग्गुणन् । विज्ञान मूर्त्तियां साक्षि सुखात्मकन् विज्ञानशक्तिमानव्ययनद्वयन् । कामादिकळाल-विलिप्तनव्ययन् व्योमवद्व्याप्तननन्तननामयन् । दिव्य मुनीश्वर-न्मार् सनकादिकळ् सर्वात्मकनेंच्चिलररिञ्ञीटुवोर् । निर्म्मला-त्माक्कळायुळ्ळ भक्तन्माक्कुं सम्यक् प्रबोधमुण्टामेन्नु चोल्लुन्नु । भक्तचित्तानुसारेण सञ्जायते मुक्ति प्रदन् मुनिवृन्द निषेवितन् । २० किष्किन्धयां नगरान्तिकं प्रापिच्च लक्ष्मणनुं चेरु ञाणोलियिट्टितु । मर्क्कटन्मारवनेवकण्टु पेटिच्च् चक्रुः किलुकिल शब्दं परवशाल् वप्रोपरि पाञ्ञु कल्लुं मरङ्ङळुं विभ्रमत्तोटु कय्यिल्प्पिटिच्चेवरुं । पेटिच्चु मूत्रमलङ्ङळ् विसर्ज्जिच्चु चाटित्तुटङ्ङिनारङ्ङुमिङ्ङुं द्रुतं । मर्क्कटक्कूट्ट-

---

प्रचार करने का निश्चय किया । १० फिर रामायण के नाम से प्रसिद्ध सद्कथा का समस्त विश्व में प्रचार करने के लिये मनुष्य व्यापार दिखाते हुए राम के रूप में अवतीर्ण हुए और आनन्दपुरुष भगवान ने काल एवं देश के अनुकूल काम, क्रोध, मोह, राग, दुःख आदि को लौकिक रीति से अपने मन में अपना लिया । इस प्रकार निर्गुण, विज्ञानमूर्त्ति, जगत् के लिये साक्षीभूत, सुखात्मा, विज्ञान शक्ति स्वरूप, अव्यय एवं अद्वैत भगवान सत्व आदि गुणों से आबद्ध मनुष्य के समान आचरण करते हैं । वे वास्तव में काम आदि से निर्लिप्त हैं, व्योम के समान सब कहीं व्याप्त हैं, अव्यक्त एवं अद्वय हैं, अनन्त एवं अनामय हैं । सर्वात्म-स्वरूप भगवान को सनक जैसे थोड़े से दिव्य मुनिश्रेष्ठ मात्र जानते हैं । केवल निर्मलात्मा भक्त लोगों को ही उनका सम्यक् परमार्थ बोध प्राप्त होता है । मुक्तिदाता एवं मुनि वृन्दों से सेवित भगवान अपने भक्तों की अभिलाषा के अनुरूप विश्व में अवतार लेकर अपनी लीलाएँ दिखाते हैं । २० किष्किन्धा नगरी के सम्मुख आ लक्ष्मण ने अपनी प्रत्यंचा से झंकारनाद मुखरित किया । मर्कट (वानर) लोग उन्हें देखकर अत्यन्त भयविह्वल हो किलकार करते इधर-उधर भागने लगे । अपनी प्राणरक्षा के निमित्त हाथ में पत्थर एवं लकड़ी लिये वे दुर्ग के ऊपर चढ़कर इधर-उधर भागने लगे । भयभीत हो मल-मूत्र का विसर्जन करते हुए वे इधर-उधर जल्दी-जल्दी भाग रहे थे । मर्कट

त्तेयोक्कैयोट्टुक्कुवानुळ्ळकाम्पिलभ्युद्यतनाय सौमित्रि विल्लुं कुळियेक्कुलच्चु वलिच्चितु भल्लूक वृन्दवुं वल्लातेयायितु। लक्ष्मणनागतनायतङ्ङिन्नथ तलूक्षणमंगदनोटि वन्नीटिनान्। शाखामृगङ्ङळेयाट्टिक्कळञ्ञु तानेकनाय्च्चेन्नु नमस्करिच्चीटिनान्। प्रीतनायाश्लेषवुं चेय्तवनोटु जातमोदं सुमित्रात्मजन् चोल्लिनान्गच्छ वत्सत्वं पितृव्यनेक्कण्टु चोल्लिच्चेय्त कार्य्यं पिळच्चुक्कुमेन्नाशु नी। ३० इच्छयायुळ्ळतु चेय्तमित्रतें वञ्चिच्चालनर्त्थमविळंबितं वरुं। उग्रनामग्रजनेन्नोटरुळ् चेय्तु निग्रहिच्चीटुवान् सुग्रीवनें क्षणाल्; अग्रज मार्ग्गं गमिक्केणमेन्नुण्टु सुग्रीवनुळ्ळकाम्पिलेङ्किलते वरू। अन्नरुळ् चेय्ततु चेन्नु परकेन्नु चोन्नतु केट्टोरु बालि तनयनुं तन्नुळिल्लुण्टाय भीतियोटुमवन् चेन्नु सुग्रीवनें वन्दिच्चु चोल्लिनान्--कोपेन लक्ष्मणन् वन्नितात्तिल्वकुन्नु गोपुरद्वारि पुरत्तुभागत्तिनि; कापेय भावं कळञ्ञु वन्दिक्क चेन्नापत्ततल्लाय्किलुण्टाय् वरुं दृढं। तन्त्रस्तनाय सुग्रीवनतु केट्टु मन्त्रिप्रवरनां मारुति तन्नोटु चिन्तिच्चु

समूह का समूल नाश करने के लिये मन में दृढ़ निश्चय किये लक्ष्मण धनुष की डोरी खींच और उसपर बाण का संधान किये खड़े हो गये। सारे वानर इतिकर्तव्यविमूढ़-से हो गये। लक्ष्मण के आगमन का समाचार पाकर तुरन्त ही अंगद दौड़ आये। सारे शाखामृगों (वानरों) को दूर भगाकर उसने अकेला आकर लक्ष्मण को प्रणाम किया। अत्यन्त प्रीति से उसका आश्लेष करते हुए तथा अत्यन्त प्रसन्न हो सुमित्रात्मज ने कहा—"हे वत्स! तुम पितृव्य (पिता के अनुज) से जाकर बोलो कि उसने यह जो छल किया उसका कुपरिणाम निकलेगा। ३० उपकारी मित्र को धोखा देने पर अविलम्ब विपत्ति आ पड़ेगी। मेरे उग्र भ्राता ने सुग्रीव को क्षणभर में समाप्त कर डालने की आज्ञा देकर मुझे यहाँ भेजा है। अगर सुग्रीव के मन में अपने अग्रज के मार्ग का अनुसरण करने (मरने की) की इच्छा है तो वह होकर ही रहेगी।" यह समाचार सूचित करने का आदेश पाकर बालिपुत्र ने अत्यन्त भयाकुल भाव से राजधानी में पहुँच सुग्रीव को प्रणाम किया और कहा—"गोपुर द्वार के बाहर क्रोधाकुल लक्ष्मण आ खड़े हैं। वानर स्वभाव (चापल्य) त्यागकर, तुरन्त जाकर उनके चरणों पर नमस्कार कीजिए, अन्यथा निश्चय ही भारी संकट में पड़ जाएँगे।" यह सुनकर अत्यन्त सभीत सुग्रीव ने खूब सोच-विचार करके अपने मन्त्रिप्रवर हनुमान से प्रार्थना की कि "वे अंगद को साथ लेकर उन्हें प्रणामकर शान्तचित्त लक्ष्मण

चौल्लिनानंगदनोट्ु कूटन्तिके चेन्नु वन्दिक्क सौमित्रियै । सान्त्वनं चेय्तु कूट्टिक्कोण्टु पोरिक शान्तनायोरु सुमित्रा तनयनै । ४० मारुतियेप्परञ्ञेवमयच्चथ तारयोटक्कात्मजन् परञ्ञीटिनान्- ताराधिपानने ! पोकेणमाशु नी तारे ! मनोहरे ! लक्ष्मणन् तन्नुटे चारत्तु चेन्नु कोपत्ते शमिप्पिक्क सारस्यसार वाक्यङ्ङळाल् पिन्ने नी । कूट्टिक्कोण्टिङ्ङु पोन्नेन्नेयुं वेगेन काट्टिक्कलुष भावत्तेयुं नीक्कणं । इत्थमक्कात्मजन् वाक्कुकळ् केट्टवळ् मद्ध्य- कक्ष्यां प्रवेशिच्चु निन्नीटिनाळ् । तारातनयनुं मारुतियुं कूटि श्रीराम सोदरन् तन्ने वणङ्ङिनान् । भक्त्या कुशल प्रश्नङ्ङळुं चेय्तु सौमित्रियोटञ्जनानन्दनन् चौल्लिनान्—ऎन्तु पुरत्तु भागे निन्नरुळुवान् ? अन्तःपुरत्तिलाम्माऱॆळुन्नळ्ळणं । राजद्वारङ्ङ- ळेयुं नगराभयुं राजावुसुग्रीवनेयुं कनिवोटु कण्टु परञ्ञालनन्तरं नाथनेक्कण्टु वणङ्ङियाल् साध्यमेल्लां द्रुतं । ५० इत्थं परञ्ञु कैयुं पिटिच्चाशु सौमित्रियोटुं मन्दमन्दं नटन्नितु । यूथपन्मार् मरुवीटुं मणिमय सौधङ्ङळुं पुरीशोभयुं कण्टु कण्टानन्दमुळ्क्कोण्टु मध्य कक्ष्ये चेन्नु मानिच्चु निन्न नेरत्तु

को स्वागतपूर्वक लिवा लाएँ।" ४० यह कह हनुमान को भेजने के उपरान्त सुग्रीव ने तारा के पास आकर कहा—"ताराधिप (चन्द्र) सम मुखवाली (चन्द्रमुखी) ! हे मनोहरी तारे ! तुम तुरन्त लक्ष्मण के पास जाकर सरस वचनों से उनके क्रोध को शान्त कर लो और उन्हें लिवा लाकर मुझसे उनकी भेंट कराकर उनके मन के मैल को दूर करा दो। अर्कात्मज के इस कथन से प्रेरित हो वह भीतर के गोपुर द्वार पर जा उनकी (लक्ष्मण) प्रतीक्षा करती रही। तारातनय तथा मारुति ने जाकर श्रीराम के अनुज को सादर प्रणाम किया और भक्ति से कुशलान्वेषण करने के उपरान्त सौमित्र से अंजनातनय (हनुमान) ने कहा—"हे प्रभु ! क्यों बाहर खड़े- खड़े बात कर रहे हैं ? कृपया भीतर पधारें। राजद्वार तथा नगराभा का दर्शन करते हुए (भीतर पहुँच) राजपत्नी (तारा) तथा राजा (सुग्रीव) को अनुगृहीत करें तथा (सुग्रीव सहित) प्रभु (श्रीराम) से मिलकर प्रणाम करने पर सारा कार्य तुरन्त ही सिद्ध होगा।" ५० यह कहते हुए सौमित्र का हाथ पकड़कर मन्द-मन्द वे (अन्दर) चले। यूपथों (सेनानायक) के रहने के मणिमय सौध तथा नगरी की शोभा देखते-देखते पुलकित हो भीतरी गोपुर कक्ष में पहुँचने पर देखा कि तारेश (चन्द्र) तुल्य मुखवाली और लक्ष्मीदेवी के समान कान्तिमयी जगन्मोहिनी तारा स्वागत करने के

काणायूवन्नु तारेशतुल्य मुखियाय मानिनि तारा जगन्मनो मोहिनी सुन्दरी; लक्ष्मी समानयाय् न्निल्वकुन्नतन्नेरं लक्ष्मणन् तन्ने वणङ्ङि विनीतयाय् मन्दस्मितं पूण्टु चोन्नाळहो ! तव मन्दिर मायतितोन्नरिञ्ञीलयो ? भक्तनायेन्नयुमुत्तमनाय् तव भृत्यनायोरु कपीन्द्रनोटिङ्ङने कोपमुण्टायालवनेन्तोरु गति चापल्यमेरुमिज्जातिकळ्क्कोर्क्कणं। मर्क्कटवीरन् बहुकाल मुण्टल्लो दुःखमनुभविच्चीटुन्नु दीननाय्; इक्कालमाशु कृपया परिरक्षितनाकयाल् सौख्यं कलर्न्नवन् ६० वाणानतु विपरीत-माक्कीटाय्क वेणं दयानिधे ! भक्त परायण ! नानादिगन्तरं तोरुं मरुवुन्न वानरन्मारे वरुत्तुवानायवन् पत्तु सहस्रं दूतन्मारे विट्टितु पत्तु दिक्कीन्नुं कपिकुल प्रौढरुं वन्नु न्निरञ्ञितु काणिविट्टे-प्पुनरोन्निनुं दण्डमिनियिल्ल निर्णयं। नक्तञ्चर कुलमोक्के-योटुक्कुवान् शक्तरत्रे कपिसत्तमन्मारेल्लां। पुत्र कळत्र मित्रान्वितनाकिय भृत्यनां सुग्रीवनेक्कण्टवनुमाय् श्रीरामदेव पादांबुजं वन्दिच्चु कार्य्यवुमाशु साधिक्कामरुिञ्ञालुं। तारा वचनमेवं केट्टु लक्ष्मणन् पारातें चेन्नु सुग्रीवनेयुं कण्टु। सत्रपं

लिये (प्रतीक्षा में) खड़ी है। उसने आगे बढ़ लक्ष्मण को विनीत भाव से प्रणाम किया। उसने मन्दस्मिति के साथ (लक्ष्मण से) कहा—"हे स्वामी! आप इसे अपना ही भवन जानिएगा। अपने ही भक्त एवं उत्तम स्वभाव वाले दास कपीन्द्र के प्रति ऐसा क्रोध करें तो फिर उसके लिये कौन-सा अवलम्ब है ? इस जाति (वानर) में ज़रा चापल्य अधिक है, यह तो आपको विदित ही है। मर्कटवीर (सुग्रीव) ने बहुत समय तक दीन हो बड़ा दुःख भोग लिया था। किन्तु आपकी कृपा से इस काल आपके संरक्षण में उसको खूब सुख भोगने का सौभाग्य मिला। ६० हे दयानिधि! हे भक्त परायण! इसमें कुछ अन्तर होने न दीजिएगा। नाना दिगन्तरों में रहनेवाले वानरों को बुला लाने के लिये दस हज़ार दूत भेजे गये थे और दसों दिशाओं से कपिवर आ चुके हैं। आप देखिएगा, नगरी उनसे भर गयी है। अब किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं रह गयी है। (हमारे) कपिश्रेष्ठ सबके सब, नक्तंचरों (राक्षसों) के वंशनाश में अतीव समर्थ हैं। पुत्र, पत्नी एवं मित्रों से युक्त अपने दास सुग्रीव से मिलकर, उन्हें साथ ले जाकर श्रीरामजी के पाद-पंकजों पर प्रणाम करने पर सारे कार्य सिद्ध हो जाएँगे।" तारा का यह वचन सुनते ही लक्ष्मण अविलम्ब सुग्रीव से जा मिले। तुरन्त ही संत्रस्त सुग्रीव ने उठकर

वित्रस्तनाय सुग्रीवनुं सत्वरमुत्थानवुं चेय्तु वन्दिच्चु। मत्तनाय्
विह्वलितेक्षणनां कपि सत्तमनेक्कण्टु कोपेन लक्ष्मणन् ७०
मित्रात्मजनोटु चोल्लिनान् नी रघुसत्तमन्तन्ने मरन्नतेन्तिङ्ङने ?
वृत्रारि पुत्रनेक्कोन्न शरमार्य्यपुत्रन् करस्थितमेन्नुमरिक नी।
अग्रज मार्ग्गं गमिक्कयिलाग्रहं सुग्रीवनुण्टन्नु नाथनरुळ् चेय्तु।
इत्तरं सौमित्रि चोन्नतु केट्टतिनुत्तरं मारुतिपुत्रनुं चोल्लिनान्-
इत्थमरुळ् चेय्वतिनेन्तु कारणं भक्तनेटं पुरुषोत्तमङ्कळ् कपि
सत्तमनोक्किकल् सुमित्रात्मजनिलुं सत्यवुं लंघिक्कयिल्ल कपीश्वरन्।
राम कार्य्यार्त्थमुणर्न्निरिक्कुन्नितु तामसमेन्नियै वानरपुंगवन्।
त्रिस्मृतनायिरुन्नीटुकयल्लेतुं विस्मयमाम्मारु कण्टीलयो भवान्
वेगेन नाना दिगन्तरत्तिङ्कल् निन्नागतन्मारायं वानर वीररे।
श्रीराम कार्य्यमशेषेण साधिक्कुमाभयमेन्नियै वानर नायकन्। ८०
मारुति चोन्नतु केट्टु सौमित्रियुमारूढ लज्जनाय् निल्कुं दशान्तरे
सुग्रीवनर्घ्य पाद्याद्येन पूज चेय्तग्रभागे वीणु वीण्टुं वणङ्ङिनान्।
श्रीरामदासोहमाहन्त राघव कारुण्य लेशेन रक्षितनद्य ञान्।
लोक त्रयत्ते क्षणार्द्धमात्रं कोण्टु राघवन् तन्ने जयिक्कुमल्लो बलाल्

(लक्ष्मण को) प्रणाम किया। नशे में चूर एवं विह्वलितेक्षण (विह्वल नेत्रों वाले) सुग्रीव को देखकर क्रुद्ध हो लक्ष्मण ने- ७० उससे पूछा— "तुमने रामचन्द्रजी को विस्मृत करने की भूल क्यों की ? जिस बाण से बालि का वध हुआ, वह बाण आज भी आर्यपुत्र (राम) के हाथ में है, यह तुम जान लो। स्वामी (राम) ने कहा कि सुग्रीव अपने भ्राता के मार्ग पर चलना चाहता है।" लक्ष्मण का यह कथन सुनकर उत्तर में हनुमान ने कहा—"आपके इस प्रकार कहने का क्या कारण है ? कपिसत्तम (सुग्रीव) के मन में पुरुषोत्तम (राम) के प्रति इतनी अपार भक्ति है जितनी सम्भवत: राम के प्रति आपके मन में भी नहीं होगी। कपीश्वर कभी सत्य का उल्लंघन नहीं करेंगे। वे अपनी तामसीवृत्ति को त्यागकर राम के कार्यार्थ सजग हैं। वे राम के कार्य को विस्मृत कर नहीं बैठे हैं। नाना दिशाओं से आये वानरश्रेष्ठों को आपने तो देखा ही होगा। वानर नायक (सुग्रीव) अनायास ही श्रीराम जी का कार्य पूरा करेंगे।" ८० मारुति का वचन सुनकर जब लक्ष्मण सलज्ज खड़े थे, तब अर्घ्य पाद्य आदि से पूजा करते हुए सुग्रीव ने लक्ष्मणजी को प्रणाम किया और कहा— "हे स्वामी ! मैं रामचन्द्र जी का नम्रदास हूँ। मैं उन्हीं की कृपा से सुरक्षित हूँ। (मुझे मालूम है कि) रामजी (चाहें तो) लोकत्रय को

सेवार्त्थमोर्क्किकल् सहायमात्रं ञङ्ङळेवरुं तन्नियोगत्तॆ वहिक्कुन्नु। अर्क्कात्मजन् मॊऴि केट्टु सौमित्रियुमुळ्ळकाम्पऴिञ्ञवनोटु चॊल्लीटिनान्—दुःखेन ञान् परुषङ्ङळ् परञ्ञतुमॊक्क क्षमिक्क महाभागनल्लो नी। निङ्कल् प्रणयमधिकमुण्टाकयाल् सङ्कटं कॊण्टु परञ्ञितु ञानॆटो! वैकाते पोक वनत्तिनु नामिनि राघवन् ताने वसिक्कुन्नतुमॆटो! ८९

लक्ष्मण सुग्रीवन्मार् श्रीराम सन्निधियिल् प्रवेशिक्कुन्नतु

अङ्ङनॆतन्नॆ पुरप्पॆट्टुकॊङ्किल् नामिङ्ङिनिप्पावकॆन्नुरुतॆन्नु सुग्रीवनुं। तेरिल्क्करेरि सुमित्रात्मजनुमाय् भेरी मृदंग शंखादि नादत्तोटुं अञ्जनापुत्र नीलांगदाद्यैरलमञ्जसा वानर सेनयोटुं तदा। चामर श्वेतातपत्र व्यजनवान् सामर सैन्यनाखण्डलनॆप्पोलॆ रामन् तिरुवटियॆच्चॆन्नु काण्मतिन्नामोदमोटु नटन्नु कपिवरन्। गह्वर द्वारि शिलातले वाऴुन्न विह्वळ मानसं चीराजिनधरं, श्याम जटा मकुटोज्ज्वलं मानवं रामं विशाल विलोल विलोचनं, शान्तं मृदुस्मित चारुमुखांबुजं कान्ता विरह सन्तप्तं मनोहरं,

अर्धक्षण में ही जीतने की क्षमता रखते हैं। हम सब उनकी सेवा करने के लिये केवल दास बनकर उनकी आज्ञा का अनुसरण करते हैं।" भगवान् के प्रति असीम भक्तिवश विनीत सुग्रीव के शब्द सुनकर स्निग्ध हृदय हो लक्ष्मण ने बताया—"हे महाभाग! अत्यधिक दुःख के वश में पड़कर मैंने जो परुषवचन कहे उन्हें तुम क्षमा करो। तुम्हारे प्रति असीम प्रेम के कारण मैंने अत्यन्त खिन्न हो यह वचन कह डाले। अब हम जल्दी ही एकान्त बैठे भगवान से मिलने बन को जाएँगे।" ८९

लक्ष्मण तथा सुग्रीव का राम के समीप आगमन

(लक्ष्मण का प्रस्ताव सुनकर) सुग्रीव ने लक्ष्मण से कहा—"ठीक है। अब अविलम्ब हम (राम के पास) जाएँगे। अब देर करना ठीक नहीं है।" सुमित्रात्मज सहित रथ पर सवार हो भेरी, मृदंग आदि वाद्यों, हनुमान, अंगद, नील आदि वानर-सेना, तथा चामर, श्वेतातपत्र, आदि व्यंजनों के साथ, देवसेना सहित पधारते इन्द्र के समान सानन्द सुग्रीव भगवान का दर्शन करने निकल पड़े। थोड़ी दूर चलने पर सुग्रीव ने गह्वर द्वार पर शिला तल पर (सीता के वियोग में) विह्वल मानस एवं जटा-अजिन, उज्ज्वल मुकुट पहने विशाल लोल विलोचनवाले राम, जो कान्ता विरह-सन्तप्त दशा में भी मनोहर एवं मन्दस्मित थे, को देखा।

कान्तं मृगपक्षि सञ्चय सेवितं दान्तं मुदा कण्टु दूराल् कपिवरन् । तेरिल् त्तिन्नाशु ताळत्तिऴङ्ङीटिनान् वीरनायोरु सौमित्रियोटुं तदा; १० श्रीराम पादारविन्दान्तिके वीणु पूरिच्च भक्त्या नमस्करिच्चीटिनान् । श्रीरामदेवनुं वानर वीरनेक्कारुण्यमोटु गाढं पुणर्न्नीटिनान् । सौख्यमल्ली भवानेन्नुरचेय्तुटनैक्य भावेन पिटिच्चिरुत्तीटिनान् । आतिथ्यमायुळ्ळ पूजयुं चैय्तळवादित्य पुत्रनुं प्रीति पूण्टान् तुलों । १४

सीतान्वेषणोद्योगम्

भक्ति परवशनाय सुग्रीवनुं भक्त प्रियनोटुणर्त्तिच्चितन्नेरं—वन्नु निल्क्कुन्न कपि कुलत्तेक्कनिञ्ञोन्नु तृक्कण् पार्त्तरुळेण-मादराल् । तृक्काल्क्कल् वेल चेय्तीटुवान् तक्कोरु मर्क्कट वीररिक्काणायतोक्कवे । नाना कुलाचल संभवन्मारिवर् नाना सरिद्द्वीप शैल निवासिकळ्; पर्वत तुल्य शरीरिकळेवरुमुर्वीपते ! कामरूपिकळेवयुं । गर्वं कलर्न्न निशाचरन्मारुटे दुर्वीर्य्यमेल्ला-मटक्कुवान् पोन्नवर् । देवांश संभवन्मारिवराकयाल्

सुन्दर पशु-पक्षियों से सेवित गम्भीर आकृतिवाले राम को दूर से देखकर वीर सौमित्र के साथ कपिवर (सुग्रीव) रथ से नीचे उतर पड़े । १० —और श्रीराम जी के पादारविन्दों पर गिर पड़े, भक्तिपूर्वक नमस्कार किया । श्रीराम जी ने वानरवीर को करुणापूर्ण हो गाढ़ भाव से आश्लेष किया और 'सुखी तो हैं ?' का कुशलान्वेषण करते हुए मित्र-भाव से उन्हें भगवान ने अपने निकट बिठाया । भगवान की अतिथि-सेवा एवं पूजा पाकर आदित्य पुत्र (सुग्रीव) बहुत ही प्रसन्न हुए ! १४

सीतान्वेषण की चेष्टा

भक्तिरस से पूरित सुग्रीव ने भक्तप्रिय (राम) से प्रार्थना की—"आपकी सेवा में खड़े कपिकुल को एक बार कृपापूर्वक देख लें । ये सारे मर्कटवीर आपके श्रीचरणों की सेवा करने योग्य हैं । हे महीपति ! ये सब नाना कुलपर्वतों में जन्मे तथा नाना द्वीपों में बसे हुए हैं । ये पर्वत-तुल्य शरीरवाले हैं । ये कामरूपी (मन पसन्द रूप धारण करनेवाले) हैं और वीर्य-पराक्रम से युक्त हैं । गर्वीले निशाचरों के गर्व को चूर करने के लिये ये बिलकुल समर्थ हैं । देवांश से उत्पन्न होने के कारण देवारियों (राक्षसों) को ये समूल नाश कर देंगे । इनमें से कुछ लोग हाथी-सम

देवारिकळॆयॊट्टक्कुमिवरिनि। केचिल् गज बलन्मारितिलुण्टु तान् केचिद्दशगजशक्तियुळ्ळोरुण्टु; केचिदमित पराक्रममुळ्ळवर् केचिन्मृगेन्द्र समन्मारङ्ङिनालुं; केचिन्महेन्द्र नीलोपल रूपिकळ् केचिल् कनक समान शरीरिकळ्। १० केचन रक्तान्त नेत्रं धरिच्चवर् केचन दीर्घवालन्मारथापरे; शुद्ध स्फटिक सङ्काश शरीरिकळ् युद्ध वैदग्ध्यमिवरोळमिल्लाक्कुं। त्विन् कळल्-पङ्कजत्तिलुरच्चवर् संख्ययिल्लातोळमुण्टु कपिबलं। मूल फल जल प्पक्वाशनन्माराय् शीलगुणमुळ्ळ वानरन्मारिवर्; तावकाज्ञाकारि-कळॆन्नु निर्णयं देवदेवेश! रघुकुलपुंगव! ऋक्षकुलाधिपनायुळ्ळ जांबवान् पुष्करपुत्र संभवनिवनल्लो; कोटि भल्लूक वृन्दाधिपति महाप्रौढपति हनूमानिवनॆन्नुटॆ मन्त्रिवरन् महासत्व पराक्रमन् गन्धवाहात्मजनीशांश संभवन्; नीलन् गजन् गवयन् गवाक्षन् दीर्घवालधिपूण्टवन् मैन्दन् विविदनुं, केसरि मारुति तातन् महाबलिवीरन् प्रमाथिशरभन् सुषेणनुं; २० शूरन् सुमुखन् दधिमुखन् दुर्म्मुखन् श्वेतन् वलीमुखनुं गन्धमादनन् तारन् वृषभन् नळन् विनतन् मम तारातनयनंगदनिङ्ङनॆ

शक्तिशाली हैं तो अन्य कई ऐसे हैं जो दस हाथियों का बल रखते हैं। इनमें से कई अमित पराक्रमी हैं तो अन्य कुछ को मृगेन्द्र (सिंह) सम विक्रमी समझ लीजिए। इनके रंग भी नाना प्रकार के हैं। कुछ (वानर) इन्द्रनील-सम काले हैं तो कुछ कनक-समान आभावाले हैं। १० कुछ वानर रक्तनेत्र वाले हैं और अन्य कुछ वानर बड़ी लम्बी पूँछवाले हैं। कुछ तो स्फटिक-सम श्वेत रंग के हैं। इनका जैसा युद्ध-वैदग्ध्य अन्य किसी को प्राप्त नहीं है। ये आपके चरण-पंकजों पर अमित भक्ति रखते हैं। इन वानरों की संख्या अपार है। मूल, फल, जल, पक्व पर जीवन बितानेवाले ये वानर शील-गुण सम्पन्न हैं। हे देवदेवेश! हे रघुकुलनाथ! ये निश्चय ही आपके आज्ञाकारी हैं। यह जो ऋक्षकुलाधिप (वानर नायक) जाम्बवान् है, पुष्कर पुत्र (ब्रह्मा का पुत्र) है। ये हनुमान करोड़ों वानरों के अधिपति हैं और प्रौढ़मति (अत्यन्त बुद्धिशाली) हैं। ये (हनुमान) परमेशांशजात तथा वायुपुत्र हैं। ये मेरे प्रधान सचिव हैं और अतीव बलशाली एवं पराक्रमशाली हैं। इनके अतिरिक्त नील, गज, गवय, मैन्द, विविद, नल, अंगद, केशरी, महाबलिवीर, प्रमाथि, शरभ, सुषेण, २० —शूर, सुमुख, दधिमुख, दुर्मुख, श्वेत, वलीमुख, गन्धमादन, तार, वृषभ, विनत, मेरे तारातनय अंगद आदि असंख्य सेनानायक हैं। इस प्रकार के

चौल्लुळ्ळ वानरवंश राजाक्कन्मार् चौल्लुवानावतल्लोळमुण्टल्लो। वेणुन्नतेन्तेन्निवरोटरुळ् चेय्क वेणमेन्नालिवर् साधिक्कुमोक्कवे। सुग्रीववाक्यमित्थं केट्टु राघवन् सुग्रीवनेप्पिटिच्चालिंगनं चेय्तु। सन्तोषपूर्णाश्रु नेत्रांबुजत्तोटु मन्तर्ग्गतमरुळ् चेय्तितु सादरं— मत्क्कार्य्यं गौरवं निङ्कले निर्ण्णयं उळ्क्काम्पिलोर्त्तु कर्त्तव्यं कुरुष्वनी। जानकी मार्ग्गणार्त्थं नियोगिक्क नी वानर वीररे नानादिशि सखे! श्रीराम वाक्यामृतं केट्टु वानरवीरनयच्चितु नालु दिक्किङ्कलुं नूरायिरं कपिवीरन्मार् पोकण मोरोदिशि पटनायकन्मारोटुं; ३० पिन्ने विशेषिच्चु दक्षिण दिक्किनत्युन्नतन्मार् पलरुं पोय्त्तिरयणं। अंगदन् जांबवान् मैन्दन् विविदनुं तुंगन् नळनुं शरभन् सुषेणनुं वातात्मजन् श्रीहनूमानुमाय्चचेन्नु बाधयोळिञ्ञुटन् कण्टु वन्नीटणं। अत्भुतगात्रियेनीळेत्तिरञ्ञिङ्ङु मुप्पतु नाळिनकत्तु वन्नीटणं; उत्पलपत्राक्षि तन्नेयुं काणाते मुप्पतु नाळ् कळिञ्ञिङ्ङु वरुन्नवन् प्राणान्तिकं दण्डमाशु भुजिक्कणमेणाङ्कशेखरन् तन्नाण निर्ण्णयं। नालु कूट्टत्तोटुमित्थं नियोगिच्चु कालमे पोयालुमेन्नयच्चीटिनान्।

प्रसिद्ध वानर नायकों की संख्या गिनना असम्भव है। जो करने का हैं, आप इनसे बोल दें, ये सब कुछ पूरा कर देंगे।" सुग्रीव की उक्ति सुनकर राम ने बलात् उनको गले से लगा लिया तथा आनन्दाश्रु भरे नेत्र-कमलवाले राम ने अपना मनोभाव इस प्रकार प्रकट किया—"हे सुग्रीव! मेरा कार्य सिद्ध करने का पूरा भार तुम्हीं पर छोड़ दिया है। खूब सोच-विचार करके तुम उचित कार्य कर लो। जानकी की खोज में नाना दिशाओं में वानरवीरों को भेज दो।" भगवान की आज्ञा पाकर कपीश्वर (सुग्रीव) ने कपिवरों को आदेश दिया—"हे कपिवर! तुम एक-एक लाख वानर अपने नायकों के साथ प्रत्येक दिशा में (सीता की खोज में) जाओ। ३० फिर विशेषकर दक्षिण दिशा को अंगद, जाम्बवान्, मैन्द, विविद, तुंग, नल, शरभ, सुषेण वातात्मज श्री हनुमान जैसे अत्यन्त साहसी तथा वीर पराक्रमी लोग अद्भुत गात्री (सुन्दरी सीता) की खोज में जाकर, उनका पता लगाकर तीस दिन के अन्दर वापस आ जाएं। चन्द्रमौलि शिव का सौगन्ध है, जो उत्पल-पत्राक्षि (कमल दल जैसे नेत्रवाली सीता) का पता लगाये बिना तीस दिन के उपरान्त उपस्थित होगा, उसे मृत्यु-दण्ड भोगना होगा। यह मेरा वचन अचल अटल है।" इस प्रकार कहकर कपियों को चारों दिशाओं की ओर भेज देने के उपरान्त हनुमान भगवान के समीप आकर हाथ जोड़

इत्थं कपिकळ् पुऱप्पॆट्टु नेरत्तु भक्त्या तॊऴुतितु वायुतनयनुं अप्पोळवनॆ विळिच्चादरालत्भुत विक्रमन् तानुमरुळ् चॆय्तु— मानसे विश्वासमुण्टावतिन्नु नी जानकि कैयिल्क्कॊटुत्तीटितु सखे ! ४० राम नामाङ्कितमामंगुलीयकं भामिनिक्कुळ्ळल् विकल्पं कळवानाय् ॲन्नुटॆ कार्य्यत्तिनोर्क्किकल् प्रमाणं नीयॆन्नियॆ-मट्टारुमिल्लॆन्नु निर्णयं । पिन्नॆयटयाळ वाक्कुमरुळ् चॆय्तु मन्नवन् पोयालुमॆन्नयच्चीटिनान् । लक्ष्मी भगवतियाकिय सीतयां पुष्कर पत्राक्षियॆक्कॊण्टुपोयोरु रक्षोवरनाय रावणन् वाऴुन्न दक्षिणदिक्कु नोक्किक्कपि सञ्चयं, लक्षवुं वृत्रारिपुत्रतनयनुं पुष्करसंभव पुत्रनुं नीलनुं पुष्करबान्धव शिष्यनुं मट्टुळ्ळ मर्क्कट सेनापतिकळुमाय् द्रुतं नाना नग नगर ग्रामदेशङ्ङळ् कानन राज्य पुरङ्ङळिलुं तथा तत्र तत्रैव निरञ्ञु तिरञ्ञति सत्वरं नीळॆ नटक्कुं दशान्तरे; गन्धवाहात्मजनादिकळॊक्कवे विन्ध्या-चलाटवि पुक्कु तिरियुम्पोळ् ५० घोर मृगङ्ङळॆयुं कॊन्नु तिन्नति क्रूरनायोरु निशाचरवीरनॆ कण्टुवेगत्तोटटुत्तारितु दशकण्ठनॆन्नोर्त्तु कपिवरन्मारॆल्लां । निष्ठुरमायुळ्ळ मुष्टिप्रहारेण

प्रणाम करके एक तरफ खड़े हो गये। तब उन्हें अपने समीप बुलाकर अद्भुत विक्रमी (राम) ने कहा कि मन में विश्वास दिलाने के लिये तुम यह (अंगुलीय) जानकी के हाथ में दे दो। ४० रामनामांकित यह अंगुलीय भामिनी के मन की शंका दूर करने के लिये उपयुक्त होगा। यह निर्विवाद सत्य है कि मेरे कार्य की सिद्धि के लिये तुम्हें छोड़ अन्य कोई मुझे दिखाई नहीं दे रहा है। फिर पहचान के लिये (आवश्यक) वचन कह सुनाकर मन्नव (राम) ने आज्ञा दी—"अब तुम जा सकते हो।" (राम का आदेश पाकर) लक्ष्मी भगवती स्वरूप पुष्कर पत्राक्षि (कमल दल के समान नेत्रवाली) सीता को चुरा ले गये राक्षसराज रावण के वास-स्थान दक्षिण दिशा को लक्ष्य करके एक लाख वानर, वृत्रारिपुत्र तनय (सुग्रीव), पुष्कर सम्भव पुत्र (जाम्बवान्), नील, पुष्कर बांधव शिष्य (हनुमान) तथा अन्य वानर सेनापति लोग जल्दी ही चल पड़े। नाना नग (पर्वत), नगर, ग्रामप्रदेश, कानन, राज्य, पुर, आदि स्थानों में सीता की खोज में सत्वर घूमते भटकते समय गन्धवहात्मज (वायुपुत्र हनुमान) आदि विन्ध्याचल के घोर कानन में पहुँचे। ५० वहाँ भयंकर जानवरों को मारकर खाता फिरता एक क्रूर निशाचर दिखाई पड़ा। उसे ही दशकण्ठ समझकर सारे के सारे वानर दौड़-दौड़कर उसके समीप आ गये और कठोर

दुष्टनेप्पेट्टन्नु नष्टमाक्कीटिनार्। पंक्तिमुखनल्लिवनेन्नु मानसे चिन्तिच्चु पिन्नेयुं वेगेन पोयवर्। ५४

स्वयंप्रभागति

अन्धकारारण्यमाशु पुक्कीटिनारन्तरादाहवुं वर्द्धिच्चितेट्वुं। शुष्क कण्ठोष्ठतालु प्रदेशत्तोटुं मर्क्कटवीररुणङ्ङि वरण्टोरु जिह्वयोटुं नटक्कुन्न नेरत्तोरु गह्वरं तत्र काणायि विधिवशाल्। वल्ली तृण गणच्छन्न मायोन्निनतिलिल्लयल्ली जलमेन्नोर्त्तु निल्क्कुम्पोळ् आर्द्र पक्ष क्रौञ्च हंसादि पक्षिकळूद्‌र्ध्व देशे परन्नारतिल् निन्नुटन्। पक्षङ्ङळिल् निन्नु वीणु जलगणं मर्क्कटन्मारुमतु कण्टु कल्पिच्चार्—नल्लजलमितिलुण्टेन्नु निर्णयमेल्लावरुं नामितिलिरङ्ङीटुक। अन्नु परञ्ञोरु नेरत्तु मारुति मुन्निलिरङ्ङिनान् मट्टुळ्ळवर्कळुं पिन्नाले तन्निलिरङ्ङि नटक्कुम्पोळ् कण्णुकाणाञ्ञितिरिट्टु कोण्टन्नेरं। अन्योन्यमोत्तु कैयुं पिटिच्चाकुलाल् खिन्नतयोटुं नटन्नु नटन्नुपोय् १० चेन्नारतीव दूरं तत्र कण्टितु मुन्निलाम्मारुति धन्य देशस्थलं; स्वर्ण्णमयं मनोमोहनं काण्मवर् कण्णिनुमेट्मानन्दकरं

मुष्टि प्रहार से उस दुष्ट का तुरन्त अन्त कर डाला। फिर यह पता चलने पर कि वह राक्षस रावण नहीं था, वे फिर तुरन्त ही आगे बढ़े। ५४

स्वयंप्रभा की चरमगति

(सीता की खोज करते हुए) वानर लोग एक अन्धकारमय वन में पहुँचे। उन्हें अत्यधिक प्यास लग रही थी। कठिन प्यास से उनके कण्ठ, ओष्ठ (अधर), तालु, जिह्वा सब सूख रहे थे और पानी की खोज में भटकते समय उन्हें वहाँ सौभाग्य से एक गह्वर (गुफा) दिखाई पड़ा। लता-पल्लवों, तृणों से उसका मुख लगभग ढका हुआ था। उसमें पानी के अस्तित्व पर शंका करते रहते समय उसी में से उड़ते हुए बाहर निकले कुछ क्रौंचों तथा हंसों के स्निग्ध पंख और उनसे छनते जलकण दिखाई दिये। यह देखकर वानरों ने अनुमान किया कि भीतर जल है। उन्होंने भीतर जाने का निश्चय किया। मारुति पहले उसमें उतरे और शेष वानर उनके पीछे-पीछे चले। तब अन्धकार के कारण रास्ता दिखाई न पड़ने से वे परस्पर हाथ पकड़कर टटोहते-टटोहते चलने लगे। १० इस प्रकार चलते-चलते काफी दूर पहुँचने पर सामने ही प्रकाशमय एवं सुवर्णमय वह

परं; वापिकळुण्टु मणिमय वारियालापूर्णकळायतीव विशद-माय्। पक्वफलङ्ङळाल् नम्रङ्ङळायुळ्ळ वृक्षङ्ङळुण्टु कल्पद्रुम तुल्यमाय्। पीयूष साम्य मधुद्रोणि संयुत पेय भक्ष्यान्न सहि-तङ्ङळायुळ्ळ वस्त्यङ्ङळुण्टु पलतरं तत्रैव वस्त्र रत्नादि परिभूषितङ्ङळाय् मानस मोहनमाय दिव्यस्थलं मानुषवर्ज्जितं देवगेहोपमं। तत्र गेहे मणि काञ्चन विष्टरे चित्राकृतिपूण्टु कण्टारोरुत्तियॆ। पावक ज्वाला समाभ कलर्न्नति पावनयाय् महाभागयॆक्कण्टु। तल्क्षणे सन्तोषपूर्ण्णं मनस्सोटु भक्तियुं भीतियुं पूण्टु वणङ्ङिनार्। २० शाखामृगङ्ङळॆक्कण्टु मोदं पूण्टु योगिनि तानुमवरोटु चोल्लिनाळ्—निङ्ङळाराकुन्नतॆन्नु परयणमिङ्ङु वन्नीटुवान् मूलवुं चोल्लणं; ऎङ्ङने मार्ग्गं-मरिञ्ञवारॆन्नतुमॆङ्ङिनिप्पोकुन्नतॆन्नुं परयणं; ऎन्निव केट्टोरु वायुतनयनुं तन्नाय्वणङ्ङि विनीतनाय्च्चोल्लिनान्वृत्तान्तमॊक्कवे केट्टालुमॆङ्किलो सत्यमॊळिञ्ञु परयुमारिल्ल ञान्; उत्तर कोसलत्तिङ्कलयोद्ध्ययॆन्नुत्तमयायुण्टोरुपुरि भूतले। तत्रैव वाणु-दशरथनां नृपन् पुत्ररुमुण्टाय्च्चमञ्ञतु नालुपेर्। नारायण

मनोहर एवं धन्य स्थल दिखाई पड़ा, जो देखने पर नेत्रों को सुखदायी एवं आनन्ददायी था। वहाँ मणियों के समान चमकते जल से परिपूर्ण एवं विस्तृत बापियाँ तथा पके हुए घने फलों से झुके कल्पवृक्ष तुल्य कई पेड़ थे। अमृत-सम मधु द्रोणि से युक्त पेय पदार्थों और भोजनों से भरे कई भवन, वस्त्रों, रत्नों से अलंकृत तथा मन को मोहित करनेवाले पावन स्थल वहीं थे। वह स्थान मनुष्य रहित, देवों के भवन के समान था। वहाँ एक गृह में मणि-कांचन निर्मित पीठ पर उतारे गये चित्र के समान एक स्त्री बैठी हुई दिखाई दी, जो पावक ज्वाला के समान आभायुक्त एवं पावन नारी थी। उसे देखते ही सन्तोष एवं भक्ति तथा भीति संयुत मन से वानरों ने उसे नमस्कार किया। २० शाखामृगों (वानरों) को देखकर प्रसन्न मन से उस तपस्विनी ने उनसे पूछा—"तुम लोग कौन हो? तुम्हारे यहाँ आने का क्या कारण है? इधर आने का मार्ग कैसे मालूम पड़ा? और अब इधर से कहाँ जा रहे हो?" यह सुनकर वायुतनय ने अत्यन्त विनीत भाव से प्रणाम करते हुए उसे बताया—"आपको सुनने की इच्छा है तो सारा वृत्तान्त सुनिए। मुझे कभी असत्य कहने की आदत नहीं है। पृथ्वी पर उत्तर कोशल देश में अयोध्या नाम की एक उत्तम और पावन नगरी है। वहाँ राजा दशरथ राज्य करते थे और उनके चार पुत्र हुए। उनमें से

समन् ज्येष्ठनवर्कळिल् श्रीरामनाकुन्नतेन्नरिञ्ञालुं। ताताज्ञया वनवासार्त्थमायवन् भ्राताविनोटुं जनकात्मजयाय सीतयां पत्नि-योटुं विपिनस्थले मोदेन वाळुन्न कालमोरुदिनं ३० दुष्ट-नायुळ्ळदशास्य निशाचरन् कट्टु कोण्टाशुपोयीटिनान् पत्नियें। रामनुं लक्ष्मणनाकुमनुजनुं भामिनितन्नेत्तिरञ्ञु नटक्कुम्पोळ् अर्क्कात्मजनाय सुग्रीवनेक्कण्टु सख्यवुं चेय्तितु तम्मिलन्योन्य-माय्। अन्नतिनग्रजनाकिय बालियेक्कोन्नु सुग्रीवनु राज्यवुं नल्किनान्। श्रीरामनुमतिन् प्रत्युपकारमायाराञ्ञु सीतयेक्कण्टु वरिकेन्नु। वानरनायकनाय सुग्रीवनुं वानरन्मारेययच्चितेल्ला-टवुं। दक्षिण दिक्किलन्वेषिप्पतिन्नोरु लक्षं कपिवरन्मारुण्टु ञङ्ङळुं; दाहं पोराञ्ञू जलकांक्षया वन्नु मोहेन गह्वरं पुक्कितरियाते; दैववशालिविटेप्पोन्नु वन्तिह देवियेक्काणायतुं भाग्यमेत्रयुं। आरेन्नतुं ञङ्ङळेतुमरिञ्ञील नेरेयरुळ चेय्क-वेणमतुं शुभे! ४० योगिनितानुमतुकेट्टवरोटु वेगेन मन्दस्मितं पूण्टु चोल्लिनाळ्—पक्व फल मूल जालङ्ङळोक्कवे भक्षिच्चमृत पानं चेय्तु तृप्तराय् बुद्धितेळिञ्ञू वरुविनेन्नाल् मम वृत्तान्त-मादियेच्चोल्लित्तरुवन् ञान्। अन्नतु केट्टवर् मूलफलङ्ङळुं

नारायण-सम ज्येष्ठ पुत्र श्रीराम जी हैं। पिता की आज्ञा से वनवास के लिये अपने भ्राता तथा पत्नी जनकसुता सीता के साथ विपिन (वन) में सानन्द रहते समय एक दिन, ३० —दुष्ट दशास्य नामक राक्षस उनकी पत्नी को चुरा ले गया। अपने अनुज लक्ष्मण के साथ सीता की खोज में चलते हुए अर्कात्मज सुग्रीव से मिले और दोनों ने परस्पर मित्रता की प्रतिज्ञा की। उस प्रतिज्ञा के अनुसार (राम ने) (सुग्रीव के) अग्रज बालि का वध करके सुग्रीव को (किष्किन्धा का) राज्य दिया और प्रत्युपकार के लिये वानर नायक सुग्रीव ने सीता की खोज करने के लिये चारों दिशाओं में वानर सेना भेजी। दक्षिण दिशा में (सीता की) खोज करने के लिये हम एक लाख वानर निकल पड़े हैं। अत्यधिक दाह पीड़ित हो जल की आशा लेकर हम इस गह्वर में प्रविष्ट हुए और भाग्यवश यहाँ पहुँचकर आपकी भेंट हुई। हे भद्रे! हमें यह नहीं मालूम है कि आप कौन हैं? आप कृपया अपना सही परिचय दें।" ४० यह सुनते ही तपस्विनी ने मन्द मुस्कान भरते हुए उनसे कहा—"पक्व फल मूल सब खा तथा अमृतपान कर सन्तृप्त हो सानन्द यहाँ आ जाओ। फिर मैं अपना परिचय दूँगी।" यह सुनकर वे खूब फल-मूल खाकर तथा मधुपान कर

तऽत्ताय् भुजिच्चु मधु पानवुं चेय्तु; चित्तं तेॅळिञ्ञु देवी समीपं पुक्कु बद्धाञ्जलि पूण्टु निन्नोरनन्तरं; चारुस्मित पूर्वमञ्जसा योगिनि मारुतियोटु पऽञ्ञु तुटङ्ङिनाळ्–विश्व विमोहन रूपिणियाकिय विश्वकर्म्मात्मजा हेमा मनोहरि नृत्त-भेदं कोण्टु सन्तुष्टनाक्किनाळ् मुग्धेन्दुशेखरन् तन्नेयतुमूलं दिव्यपुरमिदं नल्किनानीश्वरन् दिव्य संवत्सराणामयुतायुतं उत्सवं पूण्टु वसिच्चाळिह पुरा तत्सखि ञानिह नाम्ना स्वयंप्रभा। ५० सन्ततं मोक्षमपेक्षिच्चिरिप्पोरु गन्धर्वपुत्रि सदा विष्णु तत्परा; ब्रह्मलोकं प्रवेशिच्चितु हेमयुं निर्म्मल गात्रियुमेन्नोटु चोल्लिनाळ्: सन्ततं नी तपस्सुं चेय्तिरिक्केटो ! जन्तुक्कळत्र वरिकयुमिल्लल्लो; त्रेतायुगे विष्णु नारायणन् भुवि जातनायीटुं दशरथपुत्रनाय्; भूभार नाशनात्थं विपिन-स्थले भूपति सञ्चरिच्चीटुं दशान्तरे, श्रीरामपत्नियेक्कट्टु कोॅळ्ळुमति क्रूरनायीटुं दशाननक्कालं। जानकी देवियेयन्वे-षणत्तिनाय् वानरन्मार् वरुं निन् गुहामन्दिरे; सल्करिच्ची-टवरे प्रीतिपूण्टु नी मर्क्कटम्मार्क्कुपकारवुं चेय्तुपोय् श्रीराम-देवनेक्कण्टु वणङ्ङक नारायणस्वामितन्ने रघूत्तमन्।

संतृप्त चित्त हो देवी के समीप आ गये और अंजलि जोड़कर खड़े हो गये। तब सुन्दर मुस्कान लेकर अविलम्ब तपस्विनी मारुति से कहने लगी·— "विश्वकर्मा की विश्व विमोहिनी सुन्दरी हेमा नाम की एक पुत्री थी। उसने अपने नृत्यलावण्य से मुग्धेन्दुशेखर (शिव) को सन्तुष्ट कर लिया, जिस कारण शिव ने उसे रहने के लिये यह दिव्य स्थान दे दिया। दस करोड़ दिव्य वर्षों तक वह यहाँ सुखपूर्वक रही। मैं उसकी सहेली स्वयंप्रभा हूँ। ५० विष्णु के प्रति अपार भक्ति लेकर मुक्ति की कामना में सदा प्रार्थना करती मैं गन्धर्व कन्या हूँ। हेमा ने ब्रह्मपद प्राप्त किया। (ब्रह्मपद को प्राप्त करते समय) उसने मुझसे कहा था— "तुम सदा तपस्या करती रहो। यहाँ (तुम्हें भयभीत होने के लिए कारण नही क्योंकि) कोई जानवर नहीं आ सकेगा। त्रेतायुग में विष्णु नारायण पृथ्वी पर दशरथ के पुत्र रूप में जन्म लेंगे। भू-भार को दूर करने के लिए जब भूपति (राम) वनस्थल में आएँगे तब उनकी पत्नी को क्रू दशानन चुरा ले जाएगा। जानकी की खोज करते हुए तुम्हारे प्रांगण में वानर लोग आएँगे। तब तुम प्रीति से उनका सत्कार करो औ वानरों को उपकार करने के बाद तुम जाकर भगवान राम से मिलो

भक्त्यापरनें स्तुतिच्चाल् वरुं तव मुक्तिपदं योगी गम्यं सनातनम् । ६० आकयाल् ञानिनि श्रीरामदेवनें वेगेन काण्मतिन्नायक्कौण्टु पोकुन्नु । निङ्ङळ् नेरे पेरुवळ्ि कूट्टुवान् निङ्ङळेल्लावरुं कण्णटच्चीटुविन् । चित्तं तेळिञ्ञवर् कण्णटच्चीटिनान् सत्वरं पूर्वस्थिताटवि पुक्कितु । चित्रं विचित्रं विचित्रमेन्नोर्त्तवर् पद्धतियूटे नटन्नु तुटङ्ङिनार् । योगिनियुं गुहावासमुपेक्षिच्चु योगेश सन्निधि पुक्काळतिद्रुतं । लक्ष्मण सुग्रीव सेवितनाकिय लक्ष्मीशनेक्कण्टु कृत्वा प्रदक्षिणं भक्त्या सगद्गदं रोमाञ्च संयुतं नत्वा मुहुर्म्मुहुः स्तुत्वा बहुविधं । दासीतवाहं रघुपते ! राजेन्द्र ! वासुदेव प्रभो ! राम ! दयानिधे ! काण्मतिनायक्कौण्टु वन्नेनिविटे ञान् साम्यमिल्लात जगत्पते ! श्रीपते ! ञाननेकायिरं संवत्सरं तव ध्यानेन नित्यं तपस्सु चैय्तीटिनेन् । ७० त्वद्रूप सन्दर्शनार्त्थं तपोबलमद्यैव नूनं फलितं रघुपते ! आद्यनायोरु भवन्तं नमस्यामि वेद्यनल्लारालुं भवान् निर्णयं । अन्तर् बहिः स्थितं सर्वभूतेष्वपि सन्तमलक्ष्यमाद्यन्तहीनं परं । माया

राम नारायण ही हैं। भक्ति से उन परात्पर की स्तुति एवं वंदना करने से केवल योगियों के लिए प्राप्य सनातन मोक्षपद तुम्हें प्राप्त होगा। ६० इसलिये अब मैं श्रीरामदेव से मिलने जा रही हूँ। तुम सब को मैं सीधे मार्ग पर पहुँचा दूँगी। तुम सब आँख मूँद लो।" प्रसन्न हो उन्होंने आँखें मूँद लीं तो वे पहले के वन में आ पहुँचे। 'आश्चर्य है आश्चर्य है' कहते हुए वे मार्ग पर आगे चलते गये। तपस्विनी भी अपने गुहा-वास को छोड़कर योगेश राम के समीप तुरन्त चली गयी। वहाँ लक्ष्मण और सुग्रीव से सेवित लक्ष्मीश को देखकर, आनंद-पुलक भरती हुई, भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा और बार-बार नमस्कार करके गद्गद वाणी में वह स्तुति करने लगी— "हे रघुपति, हे राजेन्द्र ! हे प्रभु वासुदेव ! हे राम ! हे दयानिधि ! मैं आपके चरणों की दासी हूँ। हे अतुलनीय जगन्नाथ ! हे श्रीपति ! मैं यहाँ आपके दर्शन के लिये आयी हूँ। मैं कई हजार वर्ष तक निरन्तर आपका ध्यान करती रही। ७० —आपके इस रूप के दर्शन के लिए मैंने जो तप किया था, हे रघुपति ! वह आज फलवत् हुआ। हे प्रभु ! संसार के लिए आदि कारण स्वरूप आपको मैं प्रणाम करती हूँ। आपका तत्व कोई नहीं जान सकता। आप सर्वभूतों के अन्दर-बाहर स्थित हैं। आप आद्यन्त रहित एवं अदृश्य हैं। मायारूपी पर्दे में अपने को छिपाये रहनेवाले मायामय आप मनुष्य रूप में अवतीर्ण

यवनिकाच्छन्ननाय् वाळुन्न मायामयनाय मानुष विग्रहन् ।
अज्ञानिकळालरिञ्ञु कूटातोरु विज्ञानमूर्त्तियल्लो भवान् केवलं ।
भागवतन्मार्क्कु भक्तियोगार्त्थमाय् लोकेशमुख्यामरौघमर्त्थिक्कयाल्
भूमियिल वन्नवतीर्ण्णनां नाथने तामसियाय ञानेन्तरियुन्नतु;
सच्चिन्मयं तव तत्त्वं जगत्रये कश्चिल् पुरुषनरियुं
सुकृतिनां । रूपन्तवेदं सदाभातुमानसे तापसान्तः स्थितं ताप-
त्रयावहं नारायणा तव श्रीपाददर्शनं श्रीराम ! मोक्षैकदर्शनं केवलं । ८०
जन्ममरण भीतानामदर्शनं सन्मार्ग्गदर्शनं वेदान्तदर्शनं पुत्र-
कळत्र मित्रार्त्थविभूति कोण्टेत्रयुं दर्प्पितराय मानुषर् रामरामेति
जपिक्कयिल्लेन्तुमे राम नामं मे जपिक्काय्वरेणमे । नित्यं
निवृत्त गुणत्रयमार्ग्गाय नित्याय निष्किञ्चनार्त्थाय ते नमः ।
स्वात्माभिरामाय निर्ग्गुणाय त्रिगुणात्मने सीताभिरामाय ते नमः ।
वेदात्मकं कामरूपिणमीशानमादिमध्यान्त विवर्ज्जितं सर्वत्र मन्ये
समञ्चरन्तं पुरुषं परं त्रिन्ने त्रिनक्कोळिञ्ञार्क्करिञ्ञीटाव् ?
मर्त्त्यं विडंबनं देव ! ते चेष्टितं चित्ते निरूपिक्किलेन्तरियावतुं;

हैं । अज्ञानियों के लिये अज्ञेय आप विज्ञानमूर्ति हैं । विश्व के भक्तों के भक्तियोगार्थं लोकेश (ब्रह्मा) आदि प्रमुखों के प्रार्थना करने पर भूमि में अवतीर्ण आप स्वामी को तामस वृत्ति वाली मैं कैसे जान सकूँगी ! तीनों लोकों में अत्यन्त पुण्यात्मा लोग ही सच्चिन्मय आपका तत्व जान पाते हैं । मुनियों के मानस में विराजमान, और तापत्रय का नाश करने वाला आपका यह रूप सदा मेरे मन में वास करे । हे भगवान विष्णु ! आपके श्रीचरणों का दर्शन मोक्ष प्राप्ति का एक मात्र साधन है । ८० आपका यह रूप जन्म-मरण से भयाक्रान्त लोगों के लिये अगोचर है । यह रूप सन्मार्ग का दर्शक तथा वेदान्त दर्शन है । पुत्र, कलत्र, मित्र आदि विभूति को लेकर दर्पित मनुष्य राम-राम का जप नहीं करते । यह पावन नाम सदा जपते रहने का मुझे अवसर मिले । गुणत्रय से नित्य निवृत्त, एवं निस्संग आपको मैं अकिंचना नमस्कार करती हूँ । स्वयं अपने आप में रमण करनेवाले निर्गुण-सगुण स्वरूप हे सीताभिराम ! आपको प्रणाम है । आपको वेदस्वरूप, स्वेच्छया रूपधारी, आद्यन्त रहित हो सर्वव्यापी बन परिशोभित चैतन्य स्वरूप मैं मानती हूँ । हे भगवान ! आपको छोड़ और कौन है जो आपको जानता है ? मनुष्य के बहाने आप जो लीलाएँ दिखाते हैं, उनका रहस्य कौन समझ पाता है ? आपकी माया से विमोहित लोग आपको बहुविध रूपों में देख पाते हैं ।

त्वन्माययापिहितात्मावकळ् काणुन्नु चिन्मयनाय भवानेंब्बहुविधं । जन्मवुं कर्तृत्ववुं चेरुतिल्लात निर्म्मलात्मावां भवानवस्थान्तरे ९० देवतिर्यङ्मनुजादिकळिल् जनिच्चेवमाद्यङ्ङळां कर्म्मङ्ङळ-चेय्वतुं; निन् महामाया विडंबनं निर्णयं कल्मषहीन ! करुणानिधे ! विभो ! मेदिनितन्निल् विचित्र वेषत्तोटुं जातनाय्क्कर्म्मङ्ङळ् चेय्युन्नतुं भवान् । भक्तरायुळ्ळ जनङ्ङळ्क्कु नित्यवुं तत्क्कथा पीयूषपानसिद्धिक्केन्नु चोल्लुन्नितु चिलर् मट्टु चिलरिह चोल्लुन्नितु भुवि कोसलभूपति तन्नुटे घोर तपःफल सिद्धये निर्णयमेन्नु चिलर् परयुन्नितु । कौसल्ययाल् प्रात्थ्यमानानायिट्टिह मैथिली भाग्यसिद्धिक्केन्नितु चिलर्; स्रष्टावु तानपेक्षिक्कयाल् वन्निह दुष्ट निशाचर वंशमोटुक्कुवान् मर्त्यनाय् वन्नु पिरन्नतु निर्णयं पृथ्वियिलेन्नु चिलर् परयुन्नितु । भूपाल पुत्रनाय्वन्नु पिरन्नितु भूभार नाशत्तिनेन्नितु चिलर् । १०० धर्म्मत्ते रक्षिच्चधर्म्मत्ते नीक्कुवान् कर्म्म साक्षी कुलत्तिङ्कल्प्पिर-न्नितु । देवशत्रुक्कळे निग्रहिच्चम्पोटु देवकळेप्परिपालिच्चु कोळ्ळुवान् ॲन्नु चोल्लुन्नितु दिव्यमुनिजनमोन्नुं तिरिच्चरियावतु-मल्लमे । यातोरुत्तन् त्वत्क्कथकळ् चोल्लुन्नतुमादरवोटु केळ्क्कु-

---

जन्म, कर्तृत्व आदि से रहित निर्मलात्मा आप अवस्था भेद के अनुरूप । ९० —देव, तिर्यक, मनुष्य आदि योनियों में जन्म लेकर ये जो कर्म करते हैं, हे कल्मषहीन ! हे करुणानिधि ! हे विभु ! वे सब आपकी माया की विडंबना हैं । आप ही मेदिनी (भूमि) पर विचित्र रूप धारण करके नाना कर्म करते हैं । कुछ लोग कहते हैं कि भक्तों के कथामृत पान के लिए आप राम के रूप में अवतार लेकर लीलाएँ करते हैं । अन्य कुछ लोग मानते हैं कि पृथ्वी पर कोशल भूपति दशरथ के घोर तप की सिद्धि के लिए आपने अवतार लिया । अन्य कुछ लोग कहते हैं कि कौसल्याजी की प्रार्थना पर सीताजी की भाग्य-प्राप्ति के लिए आप अवतरित हुए तो दूसरे कुछ लोगों का मत है कि ब्रह्मा की प्रार्थना पर दुष्ट निशाचरों का समूल नाश करने के लिए पृथ्वी पर आप मनुष्य रूप में जन्मे हैं । अन्य लोग मानते हैं कि भूपाल (राजा) पुत्र के रूप में भू भार नाश के लिए आपका अवतार हुआ । १०० कुछ लोगों का कथन है कि अधर्म का नाश करके धर्म की रक्षा के लिए भगवान ने अवतार लिया है । मुनिजनों का विचार है कि देवों के शत्रुओं (राक्षसों) का वध करके देवों का परिपालन करने के लिए जन्म लिया । इनमें से

न्नतुं नित्यमाय् नूनं भवार्णवत्तॆक्कटन्नीटुवोन् काणामवनु निन् पाद पङ्केरुहं। त्वन्महामायागुण बद्धयाकयाल् चिन्मयमाय भवत्स्वरूपत्तॆ ञान् ऎङ्ङनॆयुळ्ळवण्णमरिञ्ञीटुन्नतॆङ्ङनॆ चॊल्लि-स्तुतिक्कुन्नतुमहं। श्यामळं कोमळं बाणधनुर्द्धरं रामं सहोदर सेवितं राघवं; सुग्रीव मुख्य कपिकुलसेवितमग्रे भवन्तं नमस्यामि साम्प्रतं। रामाय रामभद्राय नमो नमो रामचन्द्राय नमस्ते नमोनमः। ११० इङ्ङनॆ चॊल्लिस्वयंप्रभयुं वीणु मंगलवाच नमस्करिच्चीटिनाळ्। मुक्तिप्रदनाय रामन् प्रसन्ननाय् भवतयां योगिनियोटरुळिच्चॆय्तु—सन्तुष्टनायेनहं तव भक्ति कॊण्टॆन्तॊन्नु मानसे कांक्षितं चॊल्लु नी। ऎन्नतु केट्टवळुं परञ्ञीटिनाळिन्नु वन्नू मम कांक्षितमॊक्कॆवे। यत्र कुत्रापि वसिक्किलुं त्वत्पाद भक्तिक्किळक्कमुण्टाकातिरिक्कणं। त्वत्पाद भक्त भृत्येषु संगं पुनरुळ्प्पूविलॆप्पोळुमुण्टाकयुं वेणं। प्राकृतन्मारां जनङ्ङळिल् संगममेकदा संभविच्चीटाय्कमानसे। राम रामेति जपिक्काय्-वरेणमे राम पादे रमिक्केणमॆन्मानसं। सीता सुमित्रात्मजान्वितं

कौन सा मत ठीक है, यह मैं नहीं जानती। हे भगवान ! जो मनुष्य नित्य आपकी कथा कहता है या सादर सुनता है, वह निश्चय ही संसार-सागर को पार करता है और वह आपके चरण-कमलों का दर्शन कर पाता है। तुम्हारी महामाया में आबद्ध मैं चिन्मय स्वरूप आपके वास्तविक स्वरूप को कैसे जान सकती हूँ और उसकी कैसे स्तुतिगान करूँ ? श्यामल-कोमल, धनुष-बाणधारी, अपने भ्राता लक्ष्मण तथा सुग्रीव जैसे मुख्य कपिनायकों से सेवित राम को मैं नमस्कार करती हूँ। हे राम ! हे रामभद्र ! हे रामचन्द्र ! आपको नमस्कार है, नमस्कार है।" ११० इस प्रकार के मंगल वचन कहती हुई स्वयंप्रभा ने भगवान के चरणों पर पड़कर नमस्कार किया। मुक्ति-दायक राम ने प्रसन्न हो भक्ति से ओतप्रोत योगिनी से कहा— "मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूँ। तुम अपनी मनोकामना प्रकट करो।" यह सुनकर उसने कहा कि आज मेरी सारी आकांक्षाएँ पूर्ण हुईं। अब मैं जहाँ कहीं भी रहूँ, आपके चरण कमलों पर मेरी अटल भक्ति हो। आपके चरण कमलों के प्रति श्रद्धावान सज्जनों की संगति का अवसर मिलता रहे। कभी अज्ञानियों से मिलने-जुलने का अवसर प्राप्त न हो। सदा राम नाम का जप करने तथा राम के चरणों का निरंतर ध्यान लगाने का अवसर मिलता रहे। हे प्रभु ! सीता-लक्षमण समेत, धनुष-बाण-तूणीर

राघवं पीतवस्त्रं चाप बाणासनधरं, चारु मकुट कटक कटि सूत्र हार मकर मणिमय कुण्डल १२० नूपुर हेमांगदादि विभूषण शोभित रूपं वसिक्क मेमानसे। मट्टेनिक्केतुमे वेण्टा वरं विभो! पट्टाय्कदुस्सङ्गमुळ्ळोरिक्कलुं। श्रीरामदेवनतु केट्टवळोटु चारु मन्दस्मितं पूण्टरुळिच्चेय्तु—एवं भविक्क निनक्कु महाभागे! देवि! नी पोक बदर्य्याश्रमस्थले। तत्रैव नित्यमेन्ने ध्यानवुं चेय्तु मुक्ता कळेबरं पञ्चभूतात्मकं चेरुमेङ्कल् परमात्मनि केवले तीरुं जननमरण दुःखङ्ङळुं। श्रुत्वा रघूत्तमवाक्यामृतं मुदा गत्वा तदैव बदर्य्याश्रमस्थले। श्रीरामदेवने ध्यानिच्चिरुन्नुटन् नारायणपदं प्रापिच्चितव्ययं। १२८

अंगदादिकळुटे संशयम्

मर्क्कट सञ्चयं देवियेयाराञ्ञु वृक्षषण्डेषु वसिक्कुं दशान्तरे अत्र दिवसं कळिञ्ञतेन्नुं धरापुत्रियेयेङ्ङुमे कण्टु किट्टाय्कयुं, चिन्तिच्चु खेदिच्चु तारासुतन् निज बन्धुक्कळायुळ्ळवरोटु

तथा पीतवस्त्रधारी, उज्ज्वल मुकुट, कमर में करधनी, हार, मणिमय मकर कुण्डल—। १२० —नूपुर, हेमांगद आदि आभूषणों से विलसित राम जी का सुन्दर रूप सदा मेरे मन में बस जाए। हे प्रभु! मुझे अन्य किसी वर की अभिलाषा नहीं है। कभी कुसंगति में पड़ने का मौका न आए।" यह सुनकर श्रीराम जी ने मन्द मुस्कान लेकर उससे कहा— "हे धन्ये! तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध हो। हे देवी! तुम बदरिकाश्रम में जाकर नित्य मेरे ध्यान में निरत हो जाओ। तब पंचभूतात्मक इस शरीर से मुक्त हो मुझ परमात्मा में विलीन हो सकोगी। साथ ही जन्म-मरण का दुःख भी दूर हो जाएगा।" श्रीराम जी के ये शब्द सुनकर संतुष्टचित्त हो वह तभी बदरिकाश्रम में चली गयी। वहाँ श्रीरामदेव का ध्यान करते हुए उसने चिरन्तन नारायण पद को प्राप्त किया। १२८

अंगद आदि का सन्देह

वानर समूह वन में वृक्षों के झुंड में देवी सीता की खोज कर रहा था। कहीं धरापुत्री (सीता) दिखाई नहीं पड़ी। यह भी पता नहीं चला कि कितने दिन व्यतीत हुए। इससे खिन्न हो उठे तारातनय ने अपने मित्रों से कहा— "इस गुहा के भीतर भटकते रहने के कारण यह

चौल्लिनान्—पाताळ मुळ्प्पुक्कुळ्ळ्न्नु ञटन्नु नामेतुमरिञ्ञील वासरं पोयतुं। मासमतीतमाय् वन्नितु निर्णयं भूसुतयेक्कण्टरिञ्ञ-तुमिल्ल ञां। राजनियोगमनुष्ठियाते वृथा राजधानिक्कु ञां चैल्लुकिलेन्नुमे निग्रहिच्चीटुमतिनिल्ल संशयं सुग्रीवशासनं निष्फलमाय्वरा। पिन्ने विशेषिच्चु शत्रु तनयनामेन्ने वधिक्कु-मतिनिल्लौरन्तरं। ऐन्निलवनोरु सम्मोदमेन्तुळ्ळ तेन्ने रक्षिच्चतु रामन् तिरुवटि। राम कार्य्यत्तेयुं साधियाते चैल्किल् मामकं जीवनं रक्षिक्कयिल्लवन्। १० मातावितोटु समानयाकुं निज भ्राताबु तन्नुटे भार्य्ययै निस्त्रपं प्रापिच्चु वाळुन्न वानर पुंगवन् पापि दुरात्माविनेन्तरुताततुं; तल्पार्श्व देशे गमिक्कुन्नतिल्ल ञान् इप्पोळिविटे मरिक्कुन्नतेयुळ्ळु। वल्लप्रकारवुं निङ्ङळ् पोय्क्कोळ्कैन्नु चौल्लिक्करयुन्न नेरं कपिकळुं तुल्यदु:खेन वाष्पं तुटच्चन्पोटु चौल्लिनार् मित्र भावन्तोटु सत्वरं—दु:खिक्करुतोरु जातियुमिङ्ङनै रक्षिप्पतिनुण्टु ञङ्ङळरिक नी। इन्नु नां पोन्न गुहयिलकं पुक्कु नन्नाय् सुखिच्चु वसिक्कां वयं चिरं।

पता नहीं चला कि कितने दिन बीत गये हैं। निर्धारित एक मास की अवधि बीत गयी होगी। कहीं भूसुता (सीता) का हम पता नहीं लगा सके। राजाज्ञा का ठीक पालन किये बिना यदि हम राजधानी में लौटेंगे तो निश्चय ही हम मारे जाएँगे क्यों कि सुग्रीव की आज्ञा कभी व्यर्थ नहीं जाएगी। विशेषकर शत्रु-तनय मेरा वध वे करेंगे, इसमें संदेह नहीं है। उनकी मेरे प्रति क्या ममता हो सकती है? रामदेव ने ही मुझे बचाया है। ऐसी हालत में राम का कार्य सिद्ध किये बिना वहाँ पहुँचने पर वे मुझे जीवित रहने नहीं देंगे। १० माता तुल्य मानने योग्य ज्येष्ठ पत्नी के साथ निर्लज्ज हो भोग विलास में डूबे रहनेवाले पापी दुरात्मा कपिपुंगव क्या नहीं कर सकते? अत: मैं उनके पास कभी भूलकर भी नहीं जाऊँगा, मैं अभी यहीं अपना अन्त कर डालूँगा। आप लोग किसी तरह वापस चले जाइये।" इस प्रकार कहते हुए विलाप निरत अंगद पर सहानुभूतिवश आँसू बहाते हुए तथा मित्र भाव से कपियों ने कहा—"हे नाथ! ऐसा दुखी होना शोभा की बात नहीं है। तुम्हारी रक्षा के लिए हम जीवित हैं। भूमि के अन्दर जो गुहा हमने देखी थी, उसमें प्रवेश कर हम लम्बे समय तक सुखपूर्वक सुरक्षित रह सकेंगे। सब प्रकार के सौभाग्यों से युक्त वह दिव्य स्थान देवलोक के समान (सुखद) है। हे तारेय! (वहाँ रहने पर) कहीं किसी का भय नहीं रहेगा। अत: हमें

सर्वसौभाग्य समन्वितमायीरु दिव्य पुरमतु देवलोकोपमं।
आरालुमिल्लीरु ञाळुं भयं सखे! तारेय! पोकनां वैकरुतेतुमे।
अंगदन् तन्नोटिवण्णं कपिकुल पुंगवन्मार् पऱयुन्नतु केळ्क्कयाल् २०
इङ्गितज्ञन् नयकोविदन् वादजनंगदनेत्तळ्ळुकिप्पऱञ्ञीटिनान्--एन्तीरु
दुर्विचारं? योग्यमल्लिदमन्धकारङ्ङळ् निनयाय्किनारुमे;
श्रीरामनेट्ं प्रियन् भवानेन्नुटे तारासुतनेन्नु तन्मानसे सदा।
पारं वळर्न्नीरु वात्सल्यमुण्टतु ञेरे धरिच्चील ञानोळिञ्ञारुमे।
सौमित्रियेक्काळति प्रियन्नी तव सामर्थ्यवुं तिरुवुळ्ळत्तिलुण्टेटो!
प्रेमत्तिनेतुमिळक्कमुण्टाय्वरा हेमत्तिनुण्टो निरक्केटकप्पेटू!
आकयाल् भीतिभवानोरुत्ताळुमे राघवन् पोक्कल् निन्नुण्टाय्वरा
सखे! शाखा मृगाधिपनाय सुग्रीवनुं भागवतोत्तमन् वैर-
मिल्लारिलुं; व्याकुलमुळ्ळिलुण्टाकरुतेतुमे नाकाधिपात्मज नन्दन!
केळिदं। ञानुं तव हितत्तिङ्कल् प्रसक्तनज्ञानिकळ् वाक्कु
केट्टेतुं भ्रमिक्कीला। ३० हानि वराय्वान् गुहयिल् वसिक्केन्नु
वानरौघं पऱञ्ञीलयो चौल्लु नी? राघवास्त्रत्तिन्नभेद्यमायीन्नुमे
लोकत्रयत्तिङ्कलिल्लेन्नरिक नी। अल्पमतिकळ् पऱञ्ञु

वहीं पहुँच जाना चाहिए।" वानरों के द्वारा इस प्रकार का उपदेश दिये जाने पर २०। —दूसरों का विचार समझने में पटु, नीतिज्ञ वायुपुत्र (हनुमान) ने अंगद की देह पर प्रेमपूर्वक हाथ फेरते हुए कहा—"यह क्या दुश्चिन्ता है? इस प्रकार के दुर्विचार के लिए मौका नहीं देना चाहिए। श्रीराम के मन में हे तारासुत! तुम्हारे प्रति विशेष वात्सल्य है। इस बात को मेरे सिवाय और किसी ने नहीं पहचाना है। भगवान के मन में तुम्हारे प्रति लक्ष्मण से भी अधिक स्नेह है। वे तुम्हारी सामर्थ्य से अवगत हैं। उनका वह स्नेह कभी मन्द नहीं पड़ सकता। क्या स्वर्ण की चमक फीकी पड़ सकती है? हे मित्र! इसलिए राम के प्रति कभी आशंका नहीं होनी चाहिए। शाखा मृगाधिप (वानरराज) सुग्रीव भी सात्विक स्वभाव के हैं। उनके मन में किसी के प्रति वैर-भाव नहीं आ पाया है। हे तारेय! तुम मेरी बात सुनो। तुम्हें कभी भयविह्वल नहीं होना चाहिए। मैं भी तुम्हारा शुभाकांक्षी हूँ। तुम मूर्खों की बातें सुनकर स्वयं भ्रम में मत पड़ो। ३० तुम्हीं बताओ कि सुरक्षा के लिए गुहा में प्रविष्ट होने का उपदेश क्या वानरों ने नहीं दिया था? तुम यह भलीभाँति समझ लो कि राम के अस्त्र के लिए अभेद्य त्रिलोक में कोई स्थान नहीं है। अल्प बुद्धि लोगों का उपदेश मानकर

बोधिप्पिच्चु दुर्बोधमुण्टाय्च्चमयरुतेतुमे। आपत्तु वन्नट्टुत्तीट्टुन्न कालत्तु शोभिक्कयिल्लेंटो सज्जन भाषितं। दुर्ज्जनत्तेक्कुरिच्चुळ्ळ विश्वासवुं सज्जनत्तोटु विपरीत भाववुं, देव द्विज कुल धर्म्म विद्वेषवुं पूर्वं बन्धुक्कळिल् वाच्चोरु वैरवुं, वर्द्धिच्चु वर्द्धिच्चु वंश नाशत्तिनु कर्त्तृत्ववुं तनिक्काय् वन्नु कूटुमे। अत्यन्त गुह्यं रहस्यमायुळ्ळोरु वृत्तान्तमन्पोटु चोल्लुवन् केळ्क्क नी—श्रीराम-देवन् मनुष्यनल्लोक्कोर्टो ! नारायणन् परमात्मा जगन्मयन्; माया भगवति साक्षाल् महाविष्णु जाया सकल जगन्मोह कारिणि ४० सीतयाकुन्नतु, लक्ष्मणनुं जगदाधारभूतनायुळ्ळ फणीश्वरन् शेषन् जगत्स्वरूपन् भुवि मानुष वेषमाय्वन्नु पिरन्नित-योद्धययिल्। रक्षोगणत्तेयोटुक्किज्जगत्त्रय रक्ष वरुत्तुवान् पण्टु विरिञ्चनाल् प्रार्त्थितनाकयाल् पार्त्थिवपुत्रनाय् मार्त्ताण्ड गोत्रत्ति-लार्त्त परायणन्, श्रीकण्ठ सेव्यन् जनार्द्दनन् माधवन् वैकुण्ठवासि मुकुन्दन् दयापरन्, मर्त्त्यनाय् वन्निङ्ङवतरिच्चीटिनान् भृत्य-वर्ग्गं नां परिचरिच्चीटुवान्। भर्त्तृ नियोगेन वानर वेषमाय् पृथ्वियिल् वन्नु पिरन्निरिक्कुन्नतुं। पण्टु नामेटं तपस्सु

अपनी बुद्धि को भ्रमित मत करो। विपत्ति के समय सज्जनों के वचन शोभा नहीं देते। दुर्जनों की बातों पर विश्वास, और सज्जनों के वचनों के प्रति अवज्ञा स्वाभाविक हो जाती है। देवों, ब्राह्मणों और स्वधर्म एवं कुल के प्रति विद्वेष बढ़ने लगता है। पूर्व बन्धुओं को परमशत्रु समझने लगता है। यह भाव बढ़ता-बढ़ता स्वयं कुलनाश के लिए मनुष्य कारण-भूत बन जाता है। मैं अब तुमसे अत्यन्त गूढ़ एवं रहस्यमय एक बात कहूँगा, जिसे तुम ध्यान से सुनो। तुम यह स्मरण रखो कि रामदेव मानव नहीं हैं। वे जगन्मय नारायण एवं परमात्मा हैं। भगवान महाविष्णु की जगन्मोहिनी जाया साक्षात् भगवती माया ही—४० —सीता है। जगत् के लिए आधार-भूत फणीश्वर (अनंत) ही लक्ष्मण हैं। जगत् स्वरूप भगवान ने मानव रूप लेकर भूमि पर अयोध्या में जन्म लिया। राक्षसों का निग्रह करके त्रिलोक की रक्षा करने के लिए पहले ब्रह्मा ने प्रार्थना की थी जिस कारण आर्तपरायण, श्रीकंठ से सेव्य, जनार्दन, माधव, वैकुंठवासी दयामय मुकुन्द पार्थिव-पुत्र के रूप में मर्त्य वेष धारण कर मार्तण्ड गोत्र में अवतीर्ण हुए और उनके आदेश पर उन्हीं की परिचर्या के लिए पृथ्वी पर वानर वेष में जन्मे हुए हम देव ही हैं। पहले हम तपस्या करके भगवान से मिले और प्रणाम किया। माधव ने प्रसन्न

चेय्तीशनेक्कण्टु वणङ्ङि प्रसादिच्चु माधवन्; तन्नुटे पारिषदन्मारुटे पदं तन्नतिप्पोळुं परिचरिच्चिन्नियुं वैकुण्ठलोकं गमिच्चु वाणीटुवान् वैकेण्टतेतुमिल्लेन्तरिञ्ञीटु नी। ५० अंगदनोटिवण्णं पवनात्मजन् मंगल वाक्कुकळ् चोल्लिप्पलतरं आश्वसिप्पिच्चुटन् विन्ध्याचलं पुक्कु काश्यपी पुत्रियें तोक्कि तोक्कि द्रुतं; दक्षिण वारिधि तीरं मनोहरं पुक्कु महेन्द्राचलेन्द्रपदं मुदा दुस्तरमेट्मगाधं भयङ्करं दुष्प्रापमालोक्य मर्क्कट सञ्चयं वृत्रारिपुत्रात्मजादि कळोक्कयुं त्रस्तरायत्याकुलं पूण्टिरुन्नुटन्; चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु मन्त्रिच्चितन्योन्यमेन्तिनिच्चेय्वतु सन्ततमोर्क्क नां। गह्वरं पुक्कु परिभ्रमिच्चेत्रयुं विह्वलन्माराय् क्कळिञ्ञितु मासवुं; तण्टारिल मातिनेक्कण्टील नां दशकण्ठनेयुं कण्टु किट्टील कुत्रचिल्। सुग्रीवनुं तीक्ष्णदण्डनत्रे तुलों निग्रहिच्चीटुमवन् तम्मे निर्ण्णयं। क्रुद्धनायुळ्ळ सुग्रीवन् वधिक्कयिल् नित्योपवासेन मृत्यु भविप्पतु ६० मुक्तिक्कु नल्लू तमुक्कु पार्त्तोळमेन्नित्थं निरूपिच्चुरच्चु कपिकुलं। दर्भविरिच्चु किटन्नितेल्लावरुं कल्पिच्चतिङ्ङने नम्मेयेन्नोर्त्तवर्। ६२

हो उन्हीं के पार्षदों का स्थान हमें दिया। अब भी उन्हीं की सेवा करके प्रसन्न करने पर जल्दी ही हमें वैकुंठलोक की प्राप्ति होगी। अब उनकी सेवा करने में विलंब नहीं किया जाना चाहिए। यह तुम जान लो।" ५० इस प्रकार पवनपुत्र (हनुमान) ने अंगद से कई मंगलकारक वचन कहे और उन्हें आश्वस्त कर दिया। तदुपरान्त काश्यपी पुत्री (सीता) को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते सब वानर विन्ध्याचल पर आये। (वहाँ भी सीता दिखाई नहीं पड़ी तो) चलते हुए दक्षिण के सागर के तट पर मनोहर महेन्द्राचल में सानन्द पहुँचे। विशाल एवं दुस्तर सागर को अलंघ्य देखकर निराश वानर तथा वृत्रारिपुत्रात्मज (अंगद) जैसे वानरनायक अत्यन्त व्याकुल, भयभीत, त्रस्त एवं कम्पित हो उठे। खूब चिन्तन-विचिन्तन करने के उपरान्त वानरों ने परस्पर कई मन्त्रणाएँ दीं। उन्होंने भावी कार्यों के सम्बन्ध में विचार किया। वे कहने लगे—"गुहा में प्रवेश कर व्याकुल भाव से घूमते-भटकते रहने के कारण महीना अनायास ही बीत गया। न सीताजी दिखाई दी न रावण ही। सुग्रीव तो दण्ड देने में अत्यन्त कठोर हैं। वे तो हमें निश्चय ही समाप्त करेंगे। क्रुद्ध सुग्रीव के हाथों मरने से कहीं अच्छा है नित्य उपवास करते हुए मर जाना। ६० यह मोक्ष प्राप्ति के लिए उचित उपाय है, ऐसा सोच समझकर और (ऐसा ही

सम्पाति वाक्यं

अप्पोळ् महेन्द्राचलेन्द्र गुहान्तराल् क्षिप्रं पुरत्तु पतुक्कॆप्पुरप्पॆट्टु वृद्धनायुळ्ळॊरु गृद्ध्रप्रवरनुं पृथ्वीधरप्रवरोत्तुंग रूपनाय्; दृष्ट्वा परक्कॆ्किटक्कुं कपिकळॆ तुष्ट्या परञ्ञितु गृद्ध्रकुलाधिपन्— पक्षमिल्लातॊरॆनिक्कु दैवं बहुभक्षणं तन्नतु भाग्यमल्लो बलाल् । मुम्पिल् मुम्पिल् प्राणहानि वरुन्नतुं संप्रीति पूण्टु भक्षिक्कामनुदिनं । गृद्ध्र वाक्यं केट्टु मर्क्कटौघं परित्रस्तरायन्योन्यमाशु चॊल्लीटिनार्— अद्रीन्द्र तुल्यनायोरु गृद्ध्राधिपन् सत्वरं कॊत्तिविळुङ्ङुमॆल्लारॆयुं; निष्फलं नां मरिच्चीटुमाऱायितु कल्पितमार्क्कुं तट्टुक्करुतेतुमे । नम्मालॊरु कार्य्यंवुं कृतमायील कर्म्मदोषङ्ङळ् पऱयावतॆन्तहो ! राम कार्य्यंत्तॆयुं साधिच्चतिल्ल नां स्वामियुटॆ हितवुं वन्नतिल्लल्लो । १० व्यर्त्थमिवनाल् मरिक्कॆन्नु वन्नतुमॆत्रयुं पापिकळाकतन्नेवयं । निर्म्मलनाय धर्म्मात्मा जटायुतन् नन्मयोत्तॊळं पऱयावतल्लल्लो । वर्णिप्पतिन्नु पणियुण्टवनुटॆ पुण्यमोर्त्ताल् मट्टॊरुत्तक्कुं किट्टुमो ?

करने का) निर्णय लेकर और यही मृत्यु भाग्य में बदा है, ऐसा सोचकर वानरदल दर्भ बिछाकर उसपर लेट गया। ६२

सम्पाती-वचन

(कपियों के इस प्रकार लेटते समय) तुरन्त ही महेन्द्राचल की गुफा से पर्वत-सम भीमाकार और पर्वतश्रेणी के समान उन्नत रूपवाला एक बूढ़ा गिद्ध बाहर प्रकट हो आया। वहाँ कतारों में लेटे हुए वानरों को देख बहुत ही सन्तुष्ट हो गिद्ध कुलाधिप (गिद्ध श्रेष्ठ) ने कहा—"मेरा सौभाग्य ही है कि पक्षहीन मुझे भगवान ने भूरि भोजन दे दिया है। अब जो-जो वानर पहले मरते हैं उन्हें प्रतिदिन सानन्द खा सकूँगा।" वानरों ने गिद्ध का यह कथन सुनकर परस्पर अत्यन्त भयाकुल हो कहा—"पर्वतराज के समान भयानक शरीरवाला यह गिद्ध (हम) सबको तुरन्त ही निगल जाएगा। हम सबके मरने का समय निकट आ गया है। दैव कल्पित को कोई रोक नहीं सकता। हमसे कुछ कार्य नहीं बन पड़ा। हाय ! कर्मदोष के बारे में क्या कहा जाए ! न हमसे भगवान राम का कार्य सिद्ध हुआ न स्वामी (सुग्रीव) का ही कुछ हित बन पड़ा। १० जघन्य पापी होने के कारण व्यर्थ इस (गिद्ध) के द्वारा मर जाना पड़ रहा है निर्मल एवं धर्मात्मा जटायु का भाग्य देखो ! उसके बारे में क्या कह

श्रीराम कार्य्यार्त्थमाशु मरिच्चवन् चेरुमाऱायितु राम पादांबुजे। पक्षियेन्नाकिलुं मोक्षं लभिच्चितु पक्षीन्द्रवाहनानुग्रहं विस्मयं! वानरभाषितं केट्टु सम्पातियुं मानसानन्दं कलर्न्नु चोदिच्चितु-- कर्ण्ण पीयूष समानमां वाक्कुकळ् चोन्नतारिन्नु जटायुवेन्निङ्ङने? निङ्ङळारेन्तु पऱयुन्नितन्योन्यमिङ्ङु वरुविन् भयप्पेटाय्केतुमे। उम्पर्कोन् पौत्रनुमम्पोटतु केट्टु सम्पाति तन्नुटे मुम्पिलाम्मारु चेन्तंभोजलोचनन् तम्पादपङ्कजं संभाव्य सम्मोदमुळ्क्कोण्टु चोल्लिनान्-- २० सूर्य्यकुल जातनाय दशरथनार्य्यपुत्रन् महाविष्णु नारायणन् पुष्कर नेत्रनां रामन् तिरुवटि लक्ष्मणनाय सहोदरनुं निज लक्ष्मियां जानकियोटुं तपस्सिनाय् पुक्कितु काननं ताताज्ञया पुरा। कट्टु कोण्टीटिनान् तत्कालमेत्रयुं दुष्टनायुळ्ळ दशमुखन् रावणन्; लक्ष्मणनुं कमलेक्षणनुं पिरिञ्ञ क्षोणिपुत्रिमुऱयिट्टतु केट्टु तल्क्षणं चेन्नु तटुत्तु युद्धं चेय्तानक्षणदाचरनोटु जटायुवां। पक्षिप्रवर-

---

जाए! उसका-सा पुण्य क्या और किसी को प्राप्त हो सकता है? उसका पुण्य अवर्णनीय है! श्रीराम के कार्यवश मरकर वह श्रीरामजी के चरण-कमलों में विलीन हो गया। पक्षीन्द्रवाहनानुग्रह (महाविष्णु की कृपा) ही आश्चर्यजनक है कि पक्षी होता हुआ भी वह मोक्ष का अधिकारी बना।" वानरों को इस प्रकार बातें करते सुनकर सम्पाती ने मन ही मन प्रसन्न हो उनसे पूछा—"कानों के लिए अमृत समान सुखद 'जटायु' शब्द किसने उच्चरित किया? तुम लोग मेरे समीप आ जाओ। कुछ भी भयभीत मत हो। तुम कौन हो? और आपस में क्या बातें कर रहे हो?" यह सुनकर तुरन्त ही वानर श्रेष्ठ अंगद ने अंभोजलोचन (भगवान राम) के पाद-पंकजों का स्मरण एवं ध्यान करते हुए उठकर सम्पाती के सामने आकर शान्तचित्त हो बताया। २० —(अंगद ने बताया) "हे पक्षीन्द्र! सूर्यवंश में जात राजा दशरथ के पुत्र के रूप में अवतीर्ण नारायण महाविष्णु स्वरूप राम, जो कमल जैसे नेत्रवाले हैं, पहले अपने पिता की आज्ञा मानकर तपस्या करने के लिए अपने भ्राता लक्ष्मण तथा अपनी लक्ष्मी समान सीता के साथ कानन में आये थे। उस समय बड़ा ही दुष्ट राक्षस दशमुख रावण (सीता को) चुरा ले गया। लक्ष्मण और कमललोचन (राम) से बिछुड़ी सीता को बिलखते सुनकर तुरन्त ही दौड़ आ जटायु नामक पक्षिश्रेष्ठ ने उस क्षणदाचर (राक्षस) को मार्ग में रोक दिया और उस पर झपट पड़ा। पक्षिश्रेष्ठ के चंगुल में फँसकर खिन्न हो उठे राक्षस

नतिनाल् वलञ्ञोरु रक्षोवरन् निज चन्द्रहासं कोण्टु पक्षवुं वेट्टियरुत्तानतु नेरं पक्षीन्द्रनुं पतिच्चान् धरणीतले। भर्त्ता-विनेक्कण्टु वृत्तान्तमोक्कवे सत्यं परञ्ञोळिञ्ञेन्नुमे निन्नुटे मृत्यु वराय्केन्ननुग्रहिच्चाळ् धरापुत्रियुं तल्प्रसादेन पक्षीन्द्रनुं, ३० रामनेक्कण्टु वृत्तान्तमरियिच्चु रामसायुज्यं लभिच्चितु भाग्यवान्। अक्कंकुलोत्भवनाकिय रामनुमक्कंजनोटग्नि साक्षिकमां वण्णं सख्यवुं चेय्तुटन् कोन्नितु बालिये सुग्रीवना-य्क्कोण्टु राज्यवुं नल्किनान्। वानराधीश्वरनाय सुग्रीवनुं जानकियेत्तिरञ्ञाशु कण्टीटुवान् दिक्कुकळ् नालिलुं पोके-न्नयच्चितु लक्षं कपिवरन्मारेयोरो दिशि। दक्षिण दिक्किनु पोन्नितु ञङ्ङळुं रक्षोवरनेयुं कण्टतिल्लेङ्ङुमे। मुप्पतु नाळिनकत्तु चेन्नीटाय्किलप्पोळवरे वधिक्कुं कपिवरन्। पाताळ मुळ्प्पुक्कु वासरं पोयतु मेतुमरिञ्ञील ञङ्ङळतु कोण्टु। दर्भं विरिच्चु किटन्नु मरिप्पतिनप्पोळ् भवानेयुं कण्टु किट्टी बलाल्। एतानुमुण्टरिञ्ञिट्टु नीयेङ्किलो सीताविशेषं परञ्ञु तरेणमे। ४० ञङ्ङळुटे परमार्त्थवृत्तान्तङ्ङळिङ्ङनेयुळ्ळोन्नु

रावण ने अपने चन्द्रहास से उसके पंख काट डाले और तुरन्त ही पक्षीन्द्र पृथ्वी पर जा गिरा। पति से मिलकर सारा वृत्तान्त कह सुनाने तक तुम्हारी मृत्यु न होगी, यह वरदान उसे धरापुत्री (सीता) ने दिया। उस अनुग्रह के प्रसाद से पक्षीन्द्र ने—३० —भाग्यवश राम से मिलकर सारा वृत्तान्त बताने के उपरान्त राम के चरणों में सायुज्य मुक्ति प्राप्त की। अर्ककुलोत्पन्न (सूर्यकुल में उत्पन्न) राम ने (फिर) अर्कज (सुग्रीव) से अग्नि को साक्षी बनाकर सख्य स्थापित किया, (जिस कारण) बालि को मारकर सुग्रीव को (किष्किन्धा) राज्य दे दिया। वानराधीश सुग्रीव ने जानकी की खोज करने के लिए चारों दिशाओं में एक-एक लाख वानर-सेना भेजी। हम लोग (सीतान्वेषण के लिए) दक्षिण दिशा की ओर निकले, किन्तु (खोजने पर भी) राक्षस रावण कहीं दिखाई नहीं दिया। तीस दिन के भीतर (सीता का पता लगाकर) न पहुँचने पर कपिवर सब को मार डालेंगे। गुहा में प्रविष्ट होने के कारण दिवस के व्यतीत होने का हमें कुछ स्मरण नहीं रहा। तब मरने के विचार से हम दर्भ बिछाकर लेट ही रहे थे कि अकस्मात् आप मिले। अगर आपको सीता के बारे में कुछ ज्ञात है तो कृपापूर्वक हमें बता दें। ४० हमारा वास्तविक परिचय यही है, जो आपकी जानकारी के लिए हमने बता दिया। तारेय के वचन

ऩीयरिञ्ञीटेंटो ! तारेय वाक्कुकळ् केट्टु सम्पातियुमारूढ़मोदम-
वनोटु चौल्लिनान्-- इष्टनां भ्रातावेनिक्कु जटायु ञानोट्टु ऩाळुण्ट-
वनोटु पिरिञ्ञतुं; इऩ्ऩनेकायिरं वत्सरं कूटि ञानेन्नुटे सोदरन् वार्त्त
केट्टीटिनान् । ऎन्नुटे सोदरनायुदक क्रियय्क्कायॆन्नॆयॆटुत्तु जलान्तिके
कौण्टुपोय् ऩिङ्ङळ् चेय्यिप्पिनुदक कर्म्मादिकळ् ऩिङ्ङळ्क्कु
वाक्सहायं चेय्वनाशु ञान् । अप्पोळवनेयॆटुत्तु कपिकळुम-
ब्धितीरत्तु वच्चीटिनारादराल् । तत्सलिले कुळिच्चञ्जलियुं
ऩल्कि वत्सलां भ्राताविनाय्क्कौण्टु सादरं । स्वस्थान देश-
त्तिरुत्तिऩार् पिन्नेयुमुत्तमन्माराय वानर सञ्चयं । स्वस्थनाय्
सम्पाति जानकि तन्नुटे वृत्तान्तमाशु परञ्ञु तुटङ्ङिनान्-- ५०
तुंगमायीटुं त्रिकूटाचलोपरि लङ्कापुरियुण्टु मद्ध्ये समुद्रमाय् ।
तत्र महाशोक कानने जानकि नक्तञ्चरी जनमद्ध्ये वसिक्कुन्नु ।
दूरमोरु ऩूरु योजनयुण्टतु ऩेरे ऩमुक्कु काणां गृद्ध्रमाकयाल् ।
सामर्थ्यमार्क्कतुलंघिप्पतिन्नवन् भूमि तनूजयेक्कण्टु वरुं ध्रुवं ।
सोदरनेक्कौऩ्ऩदुष्टनेक्कौल्लणमेतोरु जातियुं पक्षवुमिल्लमे;
यत्नेन ऩिङ्ङळ् कटक्कणमाशु पोय् रत्नाकरं पिन्ने वन्नु

सुनकर सम्पाती ने सन्तुष्ट एवं प्रसन्न हो उससे कहा—"जटायु मेरा प्रिय भाई है और कई दिन हुए मैं उससे बिछुड़ गया था। आज हज़ारों वर्षों के बाद मैं अपने भाई का समाचार सुन रहा हूँ। अब आप लोग मुझे उठा ले जाकर समुद्र तट पर रखिए ताकि मैं अपने भाई की उदक क्रियाएँ पूरी कर लूँ। मैं बचनों से आप लोगों को सहायता पहुँचाऊँगा।" तब वानरों ने उसे उठाकर सागर तट पर ला रखा। उसके पानी में स्नान करके सम्पाती ने अपने प्रिय भाई के लिए अंजलि दी। तब उत्तम स्वभाव के उन वानरों ने उसे फिर से उठाकर पूर्व स्थान में पहुँचा दिया। स्वस्थ एवं सानन्द हो सम्पाती अविलम्ब जानकी का वृत्तान्त कह सुनाने लगा—५० समुद्र के बीच में स्थित त्रिकूट नामक उत्तुंग पर्वत पर लंका नामक नगरी है। वहाँ विशाल अशोक वन में जानकी राक्षस नारियों से परिवृत्त हो बैठी हैं। यह लंकापुरी यहाँ से सौ योजन दूर पर है, किन्तु गिद्ध होने के कारण वह (लंकापुरी) मुझे आँखों के आगे दिखाई दे रही है। आप में से जो इस समुद्र को लाँघ सकेगा, वह सीता को निश्चय ही देख आ सकेगा। जिस दुष्ट ने मेरे भाई को मार डाला है, मैं उसे मारना चाहता हूँ। किन्तु मैं पंखहीन हूँ। आप अभी जाकर प्रयत्नपूर्वक रत्नाकर (सागर) को पार कीजिए। फिर आकर वहाँ की खबर देने पर राम

रघूत्तमन् रावणन् तन्नेयुं निग्रहिक्कुं क्षणालेवमतिन्नु वळियेन्तु निर्णयं। रत्नाकरं शतयोजन बिस्तृतं यत्नेन चाटिक्कटन्नु लङ्कापुरं पुक्कु वैदेहियेक्कण्टु परञ्ञुटनिक्करेच्चाटिक्कटन्नु वरुन्नतु तम्मिल् निरूपिक्क नामेन्नोरुमिच्चु तम्मिलन्योन्यं परञ्ञु तुटङ्ङिनार्। ६० सम्पाति तन्नुटे पूर्व वृत्तान्तङ्ङ-ळम्पोटु वानरन्मारोटु चौल्लिनान्- ञानुं जटायुवां भ्रातावुमाय् पुरा मानेन दर्प्पित मानसन्मारुमाय् वेगबलङ्ङळ् परीक्षिप्प-तिन्नति वेगं पऱन्नितु मेल्पोट्टु ञङ्ङळुं; मार्त्तण्ड मण्डल पर्य्यन्त मुल्प्पतिच्चार्त्तराय्वन्नु दिनकर रश्मियाल्। तल्क्षणे तीयुं पिटिच्चितनुजनु पक्षपुटङ्ङळिलप्पोळवने ञान् रक्षिप्प-तिन्नुटन् पिन्निलाक्कीटिनेन् पक्षं करिञ्ञु ञान् वीणितु भूमियिल्। पक्षद्वयत्तोटु वीणाननुजनुं पक्षिकळ्क्काश्रयं पक्षमल्लो निजं। विन्ध्याचलेन्द्र शिरसि वीणीटिनेनन्धनाय् मून्नु दिनं किटन्नीटिनेन्। प्राण शेषत्तालुणर्न्नोरु नेरत्तु काणायितु चिऱकुं करिञ्ञिङ्ङने। दिग्भ्रमं पूण्टु देशङ्ङ-ळऱियाञ्ञु विभ्रान्त मानसनायुळन्नङ्ङने ७० चेन्नेन् निशाकर तापसन् तन्नुटे पुण्याश्रमत्तिन्नु पूर्ण्ण भाग्योदयाल्; कण्टु महामुनि

क्षण भर में रावण की हत्या कर देंगे। उसके लिए यही उपाय है। शत योजन विस्तृत रत्नाकर को लाँघने और लंकापुर में प्रविष्ट हो, सीता से मिलने के उपरान्त वापस इस पार आ जाने के जो उपाय हैं उन पर विचार करते हुए वानर लोग अपना-अपना मत परस्पर प्रकट करने लगे। ६० तब सम्पाती ने अपना पूर्व वृत्तान्त वानरों को इस प्रकार सुनाया—"मैं तथा भ्राता जटायु गर्व से प्रेरित हो अपने वेगबल की परीक्षा के लिए जल्दी-जल्दी ऊपर आकाश की ओर उड़ते गये। मार्तण्ड मण्डल पर्यन्त आते-आते दिनकर रश्मियों से (सूर्य की किरण) तप्त हो परेशान हो उठे। अकस्मात् भाई के पंखों को जलते हुए देखकर उसको बचाने के विचार से मैं उसके ऊपर से उड़ने लगा। दोनों पंख जलकर मैं नीचे भूमि पर जा गिर पड़ा। सपक्ष अनुज भी नीचे गिरा। पक्षियों के लिए बिना पंख के क्या आसरा है? विन्ध्याचल पर गिरा मैं तीन दिन तक मूर्च्छित पड़ा रहा। प्राण शेष था, इसलिए जागने पर मैंने पाया कि दोनों पंख जल गये हैं। दिग्भ्रम के कारण भ्रान्तचित्त होकर वह कौन सा देश है, यह बिना जाने मैं इधर-उधर भटकता रहा। ७० अन्त में भाग्यवश मैं निशाकर मुनि के आश्रम में पहुँचा। पूर्व परिचय के कारण महामुनि ने

चोल्लिनानेन्नोटु पण्टु कण्टुळ्ळोररिवु निमित्तमाय् । ऎन्तु सम्पाते ! विरूपनाय् वन्नतिनेन्तु मूलमितारालकप्पेट्टतुं ? ऎन्नयुं शक्तनायोरु निनक्किन्नु दग्धमावानेन्तु पक्षं परकत्ती ? ऎन्नतु केट्टु ञानेन्नुटे वृत्तान्तमोन्नोळियाते मुनियोटु चोल्लिनेन् । पिन्नेयुं कूप्पित्तोळुतु चोदिच्चितु सन्नमाय्वन्नु चिरकुं दयानिधे ! जीवनत्ते धरिक्केण्टुमुपायमिन्नेवमेन्नोन्नोटु चोल्लित्तरेणमे । ऎन्नतु केट्टु चिरिच्चु महामुनि पिन्ने दयावशनायरुळिच्चेय्तु—सत्यमायुळ्ळतु चोल्लुन्नतुण्टु ञान् कृत्यं निनक्कोत्तवण्णं कुरुष्व नी । देहं निमित्तमीदुःखमङ्ङिक नी देहमोर्क्किल् कर्म्मसंभवं निर्ण्णयं । ८० देहत्तिलुळ्ळोरहं बुद्धि कैक्कोण्टु मोहादहंकृति कर्म्मङ्ङळ् चेय्युन्नु । नित्य मायुळ्ळोरविद्या समुत्भव वस्तु-वायुळ्ळोन्नहङ्कारमोर्क्क नी । चिच्छाययोटु संयुक्तमाय् वर्त्तते तप्तमायुळ्ळोरयः पिण्डवत्सदा; तेन देहत्तिनु तादात्म्ययोगेन तानोरु चेतनवानाय् भविक्कुन्नु । देहोहमेन्नुळ्ळ बुद्धियुण्टाय्-वरुमाहन्त ! नूनमात्माविनु मायया; देहोहमद्यैव कर्म्म कर्त्ता-हमित्याहन्त सङ्कल्प्य सर्वदा जीवनुं; कर्म्मङ्ङळ् चेय्तु फलङ्ङळाल् बद्धनाय् सम्मोहमार्न्नु जननमरणमां संसार

मुझे देखकर पूछा—"हे सम्पाती ! इस प्रकार विरूप होने का क्या कारण है ? अत्यन्त शक्तिशाली तुम्हारे पंखों के इस प्रकार जल जाने का क्या कारण है ?" यह सुनकर मैंने मुनि से अपना सारा वृत्तान्त कहा और हाथ जोड़कर प्रार्थना की—"हे दयानिधि ! मेरे पंख नष्ट हो गये । मुझ पंखहीन को जीवनोपार्जन का उपाय सुझा दें ।" यह सुनकर पहले मुनि हँस पड़े और बाद में कारुण्यवश उन्होंने बताया—"हे सम्पाती ! मैं तुम्हें सच्चा मार्ग बताऊँगा । फिर तुम्हें जो उचित कार्य करना है वह करो । यह सारा दुःख देह को लेकर है । और यह देह क्या है ? यह तो कर्मों के फल से उत्पन्न दुःख का भण्डार है । ८० 'मैं देह हूँ' इस अभिमान या अहंभाव से मोहित हो कर्म किये जाते हैं । यह अहंकार, वास्तव में विचार करने पर निरन्तर की अविद्या से उद्भूत है । तप्त अयः पिण्ड (लोहे का टुकड़ा) के समान आत्म चैतन्य के कारण यह देह सजीव और चेतन दिखाई देती है । इस प्रकार आत्म चैतन्य युक्त देह के कारण हमें वह चैतन्ययुक्त सी जान पड़ती है । माया सम्बन्ध के कारण ही आत्मा को यह प्रतीत होता है कि मैं देह हूँ । 'मैं देह हूँ' और 'मैं ही सब कर्मों का कर्ता हूँ' इस भावना से प्रेरित हो जीव जीवन भर कर्म करता हुआ

सौख्य दुःखादिकळ् साधिच्चु हंसपदङ्ङळ् मऱन्नु चमयुन्नु। मेल्पोट्टुमाशु कीळ्प्पोट्टुं भ्रमिच्चति तात्पर्य्यवान् पुण्य पापात्मकैस्स्वयं अेत्रयुं पुण्यङ्ङळ् चेय्तेन् वळरे ञान् वित्तानु-रूपेणयज्ञ दानादिकळ्। ९० दुर्गति नीक्किस्सुखिच्चु वसिक्कणं स्वर्ग्गं गमिच्चेन्नु कल्पिच्चिरिक्कवे मृत्यु भविच्चु सुखिच्चिरिक्कुं विधौ उत्तमांगं कीळ्ळवीळुमधो भुवि; पुण्यमीटुङ्ङियालिन्दु तन् मण्डले चेन्नु पतिच्चु नीहार समेतनाय् भूमौ पतिच्चु शाल्यादिकळाय् भविच्चामोदमुळ्क्कोण्टु वाळुं चिरतरं। पिन्ने-प्पुरुषन् भुजिक्कुन्न भोज्यङ्ङळ् तन्ने चतुर्विधमाय् भविक्कुं बलाल् अेन्नतिलोन्नु रेतस्साय्च्चमञ्ञतु चेन्नु सीमन्तिनीयो-नियिलाय्वरुं; योनि रक्तत्तोटुं संयुतमाय्वन्नु ताने जरायुपरि-वेष्टितवुमां; एक दिनेन कलर्न्नु कललमामेकी भविच्चालतुं पिन्नमेल्लवे; पञ्चरात्रं कोण्टु बुद्बुदाकारमां पञ्चदिनं कोण्टु पिन्ने यथाक्रमं मांसपेशित्वं भविक्कुमतिन्नतु मासार्द्ध कालेन पिन्नेयुं मेल्लवे; १०० पेशिरुधिर परिप्ळुतमाय्वरुमाशु

उसके फलों से आबद्ध हो जन्म-मरण रूपी सांसारिक सुख-दुःखों का शिकार बनता है और परमपद को विस्मृत कर बैठता है। चाहे पुण्य हो चाहे पाप, कर्म करने से देह बोध होता है। पाप और पुण्य के वशीभूत मनुष्य नीचे-ऊपर भटकता ही रहता है। कुछ लोग साधारणतया पुण्य समझे जानेवाले याग आदि कर्म करके यह सोच बैठते हैं कि मैंने अपने धन के अनुरूप बहुत ही पुण्य-कर्म किये,—९० —इसलिए दुर्गति से मुक्त हो स्वर्ग में पहुँचकर खूब सुख लूटना चाहिए। इस प्रकार सोचते बैठते समय मृत्यु आ जाती है और मृत्यु के उपरान्त स्वर्ग पहुँचने पर भी वहाँ अपने पुण्य के अनुरूप समय तक ही सुख पा सकते हैं। वह सुख भोग चुकने के उपरान्त पछाड़ खाकर चन्द्रमण्डल में गिर पड़ते हैं और वहाँ नीहार पिण्डों से मिलकर भूमि पर गिर पड़ते हैं। भूमि पर धान आदि के रूप में परिवर्तित हो कुछ काल तक सुख से रहते हैं। फिर पुरुष जो अन्न खाता है, वही चार रूपों में बदल जाता है। उनमें से एक रक्त बनकर और रक्त से शुक्ल रूप में परिवर्तित हो स्त्री के गर्भ में प्रवेश पाता है। स्त्री के गर्भ रक्त से संयुत हो वह धीरे से आकार धारण करने लगता है। उसका क्रम यही है। एक ही दिन में शुक्ल रक्त परस्पर मिलकर कलल में परिवर्तित हो जाता है। फिर पाँच दिन में वह एक छोटा-सा माँसपिण्ड बन जाता है। वही माँसपिण्ड और पन्द्रह दिन के उपरान्त—१०० —छोटे-छोटे रक्त

तस्याङ्कुरोल्पत्तियुं वरुं पिन्नेयौरु पंचविंशति रात्रियाल् पिन्नेयौरु-मून्नु मासेन संधिकळ्; अंगङ्ङळतोरुं क्रमेण भविच्चीटु-मंगुलीजालवुं नालु मासत्तिनाल्; दन्तङ्ङळुं नखपंक्तियुं गुह्यवुं सन्धिक्कुं नासिका कर्ण्ण नेत्रङ्ङळुं पञ्चमासं कोण्टु षष्ठमासे पुनः किञ्चनपोलुं पिळयातें देहिनां, कर्ण्णयोः छिद्रं भविक्कुमतिस्फुटं पिन्ने मेढ्रोपस्थनाभिपायुक्कुळुं सप्तमे मासि भविक्कुं पुनरुटन् गुप्तमायौरु शिरः केशरोमङ्ङळ्, अष्टमेमासि भविक्कुं पुनरपि पुष्टमायीटुं जठरस्थलान्तरे, औन्पतां मासे वळरुं दिनं प्रति कम्पं कर चरणादिकळक्कु वरुं। पञ्चमे मासि चैतन्य वानाय्वरुमञ्जसा क्रमेण जीवन् दिने दिने, ११० नाभि सूत्राल्परन्ध्रेण माताविनाल् संक्षेपमाय भुक्तान्न रसत्तिनाल् वर्द्धते गर्भगमाय पिण्डं मुहुर् मृत्यु वरानिज कर्म्म बलत्तिनाल्; पूर्व-जन्मङ्ङळुं कर्म्मङ्ङळुं निजं सर्वकालं निरूपिच्चु निरूपिच्चु दुःखिच्चु जाठरवह्नि प्रतप्तनाय तल्क्कारणङ्ङळ् पऱञ्ञु तुटङ्ङिन्नान्। पत्तु नूऱायिरं योनिकळिल्ज्जनिच्चेंत्र कर्म्मङ्ङळनुभविच्चेनहं। पुत्रदारादिबन्धुक्कळ् सम्बन्धवुमेंत्र नूऱायिरं कोटि कळिञ्ञतु। नित्यं कुटुंब भरणैक सक्तनाय् वित्तमन्यायमायार्ज्जिच्चितन्वहं। विष्णु स्मरणयुं चेय्तु कोण्टील ञान् कृष्ण कृष्णेति जपिच्ची-

---

बिन्दुओं से ढक जाता है। फिर पच्चीस दिन गुजर जाने पर उसमें पृथक्-पृथक् अंग रूप पाते हैं। तीन मास व्यतीत होने पर अंगों में सन्धियाँ तथा चार मास होने पर उँगलियाँ प्रत्यक्ष होने लगती हैं। पाँचवें मास में दन्त, नखपंक्तियाँ, गुह्यस्थान, नासिका, कर्ण और नेत्र बनते हैं। छठे मास में श्रवण का द्वार प्रकट होता है। फिर गुह्यांग, नाभि, गुदा, मुँह सब सातवें महीने में स्फुटित होते हैं। आठवें महीने में रोम और बाल उग आने लगते हैं। नवें मास से शिशु गर्भ में अपना पूर्ण विकास पाने लगता है। हाथ-पैर हिलने-डुलने लगते हैं। पाँचवें महीने से दिन-ब-दिन शिशु में चैतन्य का दर्शन होता है। ११० नाभि सूत्र के रंध्र के मार्ग से माता के खाये अन्न का रस गर्भस्थ पिण्ड पाता है और उससे वह पुष्ट होता जाता है। शरीर के पुष्ट होने तथा चैतन्य के दृढ़ होने पर पूर्व जन्म का स्मरण करता हुआ वह शिशु जठराग्नि के ताप से तप्त होता रहता है। वह अपने दुष्कर्मों को गिनता है। वह सोचने लगता है कि मैंने कितनी ही योनियों में जन्म लिये और कितने ही कुकर्म किये! कुटुम्ब के भरण-पोषण के लिए अधर्म से कितना धन कमाया! पुत्र, दारा आदि के सम्बन्ध में

लोरिक्कलुं । तल्फलमेल्लामनुभविच्चीटुन्तितिप्पोळिविटेक्किटन्नु ञानिङ्ङने । गर्भपात्तिल् तिन्नेन्नु बाह्यस्थले कोल्पोटेतिक्कु पुऱप्पेट्टु कोळ्ळावू । १२० दुष्कर्म्ममोन्नुमे चेय्युन्नतिल्ल ञान् सल्क्कर्म्मं जालङ्ङळ् चेय्युन्नतेयुळ्ळू । नारायण स्वामि तन्नेयोळिञ्ञु मट्टारेयुं पूजिक्कयिल्ल ञानेन्नुमे । इत्यादि चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु जीवनुं भक्त्या भगवल्स्तुति तुटङ्ङीटिनान् । पत्तुमासं तिकयुं विधौ भूतले चित्ततापेन पिऱक्कुं विधिवशाल् । सूति वातत्तिन् बलत्तिनाल् जीवनुं जातनां योनि रन्ध्रेण पीडान्वितं यौवनदुःखवुं वार्द्धक्य दुःखवुं सर्ववुमोर्त्तोळमेतुं पोऱा सखे ! तिन्नालनुभूतमायुळ्ळतेन्तिनु वर्णिच्चु ञान् पऱयुन्नु वृथा बलाल् । देहोहमेन्नुळ्ळ भावनयामहामोहेन सौख्य दुःखङ्ङळुण्टाकुन्नु । गर्भवासादि दुःखङ्ङळुं जन्तु वर्ग्गोत्भव नाशवुं देहमूलं सखे ! स्थूल सूक्ष्मात्मक देहद्वयाल् परं मेलेयिरिप्पतात्मा परन् केवलन् । १३० देहादिकळिल् ममत्वमुपेक्षिच्चु मोहमकन्नात्मज्ञानियाय्वाळ्कनी । शुद्धं सदा शान्तमात्मानमव्ययं

फँसकर कितने ही जन्म लिये ! मुझे कभी विष्णु का स्मरण करने का अवसर नहीं मिला । कृष्ण-कृष्ण का जप भी नहीं हो सका । उन्हीं सब कुकर्मों का ही फल है कि मैं यहाँ (गर्भ में) पड़े सब यातनाएँ भोग रहा हूँ । पता नहीं इस गर्भ से कब मैं बाहर जाने में समर्थ बनूँगा ! १२० अब जन्म के बाद मैं कभी कुकर्म नहीं करूँगा । मैं सत्कर्म ही करूँगा । मैं भगवान नारायण को छोड़ और किसी की कभी पूजा नहीं करूँगा । इस प्रकार सोचता-सोचता जीव भक्ति से भगवद् भजन करने लग जाता है । इस प्रकार स्तुति करता हुआ दस मास गुज़ार देने पर स्तुति-वायु के दबाव से वह योनिरंध्र से होकर बाहर संसार में जन्म लेता है । माता-पिता कितना ही लाड़-प्यार दिखावें फिर भी बाल्यकाल की पीड़ाएँ असह्य होती हैं । वैसे ही हे मित्र ! यौवन और वार्द्धक्य का दुःख भी अचिन्त्य है । तुमसे अनुभूत इस दुःख का मैं क्यों व्यर्थ वर्णन करूँ । (संक्षेप में) 'देहोहं' की भावना से उत्पन्न महामोह के फलस्वरूप ही सुख-दुःख उत्पन्न होते हैं । हे मित्र ! सभी जीवों के गर्भवास के दुःख, उद्भव और नाश सब का एकमात्र कारण यह देह है । आत्मा स्थूल-सूक्ष्म देह से परे नित्य, केवल स्वरूप है । १३० (हे सम्पाती !) देह आदि के प्रति अपनी ममता त्यागकर, मोह छोड़कर तुम आत्मज्ञानी बनो । शुद्ध, नित्यशान्त, नाशरहित, सदाजाग्रत, परब्रह्मस्वरूप, निर्गुण, निर्भेद, सकलात्मा, सर्वजगन्मय,

बुद्धं परब्रह्ममानन्दमद्वयं, सत्यं सनातनं नित्यं निरुपमं तत्त्वमेकं परं निर्ग्गुणं निष्कळं, सच्चिन्मयं सकलात्मकमीश्वरमच्युतं सर्वं जगन्मयं शाश्वतं; माया विनिर्मुक्तमेन्नरियुन्नेरं माया विमोहमकलुमेल्लावनुं। प्रारब्ध कर्म्म वेगानुरूपं भुवि पारमार्त्थ्यात्मना वाळुक नी सखे ! मट्टोरुपदेशवुं पऱयां तव चेट्टु दुःखं मनक्काम्पिलुण्टाकोला। त्रेतायुगे विष्णु नारायणन् भुवि जातनायीटुं दशरथ पुत्रनाय्, नक्तञ्चरेन्द्रने निग्रहिच्चन्पोटु भक्तजनत्तिनु मुक्ति वरुत्तुवान्। दण्डकारण्यत्तिल् वाळुं विधौ बलाल् चण्डनायुळ्ळ दशास्यनां रावणन्, १४० पुण्डरीकोद्भूतयाकिय सीतये पण्डितन्माराया राम सौमित्रिकळ् वेर्पेट्टिरिक्कुन्न नेरत्तु वन्नु तन्नापत्तिनाय्क्कट्टु कोण्टुपों मायया। लङ्कयिल्क्कोण्टु वच्चीटुं दशान्तरे पङ्कज लोचनयेत्तिरञ्ञीटुवान् मर्क्कटराज नियोगाल् कपिकुलं दक्षिण वारिधि तीरदेशेवरुं। तत्र समागमं निन्नोटु वानरक्कें त्तुमोरु निमित्तेन निस्संशयं। अन्नालवरोटु चोल्लिक्कोटुक्क नी तन्वंगि वाळुन्न देशं दयावशाल्। अप्पोळ् निनक्कु पक्षङ्ङळ् नवङ्ङळायुत्भविच्चीटुमतिनिल्ल संशयं। एन्नेप्परञ्ञु बोधिप्पिच्चतिङ्ङने मुन्नं निशाकरनाय महामुनि। वन्नतु काण्मिन् चिरक्कुकळ्

अद्वय, सत्य, सनातन, सच्चिन्मय, अच्युत, शाश्वत ईश्वर-रूप आत्मा को सभी मायामोह-बन्धन से परे जान लेने पर सभी अज्ञान दूर हो जाएँगे। इस तत्वज्ञान को ग्रहणकर प्रारब्ध के समाप्त होने तक तुम भूमि पर वास करो। तुम्हारे लिए मैं एक अन्य उपदेश भी देता हूँ। तुम मन से समस्त दुःख दूर करो। त्रेतायुग में नारायण विष्णु ही नक्तंचरेन्द्र (रावण) का बध करके भक्तजनों को मुक्ति दिलाने के लिए भूमि पर दशरथ पुत्र के रूप में जन्म लेंगे। उनके दण्डकारण्य में निवास करते समय दुष्ट दशमुख रावण—१४० —पुण्डरीकोद्भूता सीता को राम तथा लक्ष्मण के दूर रहते समय, अपनी विपत्ति स्वयं मोल लेने के लिए मायाबल से चुरा ले जाएगा और लंका में ले जा रखेगा। तब मर्कट राजा (सुग्रीव) के आदेशानुसार पंकजलोचना (सीता) की खोज में वानर लोग दक्षिण वारिधि के तट पर आ जाएँगे। तब तुम निस्संदेह उनसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त करोगे। उदारतापूर्वक तत्वंगी (सीता) के रहने का स्थान तुम उन्हें बता दो। तब तुम्हें नूतन पंख प्राप्त होंगे। यह निश्चित जान लो। इस प्रकार पहले निशाकर मुनि ने मुझे प्रबोध दिया था। (हे वानर !) तुम

पुत्तनायेन्त्तेविचित्रमे नन्नु नन्नेवयुं। उत्तम तापसन्मारुटे वाक्यवुं सत्यमल्लाते वरिकयिल्लेन्नुमे । १५० श्रीरामदेव कथामृतमाहात्म्यमारालुमोर्त्तालड्रियावतल्लेतुं । रामनामामृतत्तिन्नु समानमाय् मामके मानसे मट्टु तोन्नीलहो ! नल्लतु मेन्मेल् वरेणमे निङ्ङळ्क्कु कल्याणगात्रियेक्कण्टु किट्टेणमे । नन्नायतिप्रयत्नं चेय्किलर्ण्णवमिन्नु तन्ने कटक्कायवरुं निर्ण्णयं । श्रीराम नाम स्तुति कोण्टु संसार वारान्निधियेक्कटक्कुन्नितेवरुं । राम भार्य्यालोकनार्त्थमाय् पोकुन्न राम भक्तन्मारां निङ्ङळ्क्कोरिक्कलुं सागरत्तेक्कटन्नीटुवानेतुमोराकुलमुण्टाकयिल्लोरु जातियुं । अेन्नु परञ्ञु परन्नु मऱञ्ञितत्युन्नतनाय सम्पाति विहायसा। १५८

समुद्र लंघनत्तिनु कपिकळुटे आलोचन

पिन्नेक्कपिवरन्मार् कौतुकत्तोटु मन्योन्यमाशु परञ्ञु तुटङ्ङिनार्-उग्रं महानक्रचक्र भयङ्करमग्रे समुद्रमालोक्य कपिकुलं अेङ्ङिने नामितिनेक्कटक्कुन्न वारेङ्ङु मरुकर काण्मानुमिल्लल्लो; आवतल्लात्ततुं चिन्तिच्चु खेदिच्चु चावतिनेन्त-

---

लोग ध्यान से देखो। मेरे नये पंख आ गये हैं। यह कितनी ही विचित्र बात है ! यह कितना अच्छा हुआ ! यह कितना अच्छा हुआ ! उत्तम तपस्वियों के वचन कभी असत्य नहीं होंगे । १५० श्रीरामदेव के कथामृत का माहात्म्य कौन जान सकता है ? श्रीराम के नामामृत के समान (सुखद) दूसरा कुछ नहीं है, यही मेरा अभिमत है। हे पुण्यात्मा लोग ! तुम्हारा भला हो और कल्याणगात्री (मंगलस्वरूपा सीता) का पता तुम प्राप्त करो। श्रीराम के नाम की स्तुति करते हुए सब लोग संसार-रूपी भयंकर सागर के पार पहुँच पाते हैं। अगर तुम चेष्टा करोगे, तो मुझे सन्देह नहीं, तुम लोग आज ही सागर को लाँघ सकोगे। (मुझे विश्वास है कि) राम की पत्नी के अवलोकन के हेतु जानेवाले तुम राम-भक्तों के सामने सागर पार करते हुए कोई बाधा उपस्थित नहीं हो सकती।" यह कहता हुआ सम्पाती विहायस (आकाश) में ऊपर उठता हुआ अदृश्य हो गया। १५८

वानरों का समुद्र-तरण का उपाय सोचना

उसके बाद वानर परस्पर समुद्र-तरण के उपाय के लिए विचार-विनिमय करने लगे। अत्यन्त गम्भीर तथा भयंकर नक्रों (मगरों) से युक्त महासमुद्र को देखकर वानरों के मन में भय उत्पन्न हुआ और (वे कहने

वकाशं कपिकळे ! शक्रतनयतनूजनामंगदन् मक्कंट नायकन्मा-रोट्टु चौल्लिनान्— अेत्रयुं वेगबलमुळ्ळ शूरन्मार् शक्तियुं विक्रमवुं पारमुण्टल्लो ऩिङ्ङळेल्लावर्क्कुमेन्ऩालिवरिल्वच्चिङ्ङु वन्नोन्नोटोरुत्तन् पऱयणं; ञानितिनाळेन्ऩवनल्लो ऩम्मुटे प्राणने रक्षिच्चु कोळ्ळुन्ऩतुं दृढं । सुग्रीव राम सौमित्रिकळ्क्कुं बहु व्यग्रं कळञ्ञु रक्षिक्कुन्ऩतुमवन् । अंगदनिङ्ङने चोन्ऩतु केट्टवर् तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिल् ऩोक्किनारेवरुं । १० ओन्ऩुं पऱञ्ञीलोरु-त्तरुमंगदन् पिन्नेयुं वानरन्मारोट्टु चौल्लिनान्— चित्ते निरुपिच्चु ऩिङ्ङळुटे बलं प्रत्येकमुच्यतामुद्योग पूर्वकं । चाटामेनिक्कु-दशयोजन वऴि चाटामिरुपतेनिक्कोन्ऩोरु कपि; मुप्पतु चाटा-मेनिक्कोन्ऩपरनुमप्पटि ऩाल्पतामेन्ऩु मट्टेवनुं; अन्पतरुपतेऴुपतुमा-मेन्ऩुमेण्पतु चाटामेनिक्कोन्ऩोरुवनुं; तोण्णूरु चाट्टुवान् दण्डमिल्ले-कनेन्ऩण्णवमो नूरुयोजनयुण्टल्लो । इक्कण्ट ऩम्मिलाक्कु कटक्कावतिल्लिक्कटल् मक्कंट वीररे ! निर्ण्णयं । मुन्नं

लगे) "हम कैसे इस सागर को पार करेंगे ? कहीं उसका पार दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। हे वानर ! अपनी पहुँच के बाहर की बात पर सोच-सोचकर दुखित होने से क्या लाभ होगा ?" वानरों की इस प्रकार परस्पर कहते सुनकर शक्रतनय के तनूज (इन्द्र के पौत्र) अंगद ने मर्कट नायकों से कहा—"हे कपिवर ! आप सब तेजस्वी, वेगबलशाली शूर, शक्ति-विक्रम सम्पन्न अपार वीर तो हैं। लेकिन आप में से जो कोई वानर आकर मुझसे यह कहेगा कि मैं इसके लिए (सागर पार जाने के लिए) समर्थ हूँ, वही मेरा प्राण-रक्षक मित्र है। वही सुग्रीव तथा राम-लक्ष्मण को भी संकट से मुक्त करनेवाला है।" अंगद का यह कथन सुनकर वे परस्पर देखने लगे। १० किन्तु किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा, तो अंगद ने फिर कहा—"हे कपिवर ! आप में से प्रत्येक वानर आगे बढ़कर समझ-बूझकर अपना बेगबल मुझे बता दें।" अंगद का यह आदेश पाकर एक ने कहा कि मैं दस योजन समुद्र लाँघ सकूँगा। दूसरे ने कहा कि मैं बीस योजन रास्ता लाँघ पाऊँगा। तीसरे ने तीस, चौथे ने चालीस योजन लाँघने की अपनी सामर्थ्य प्रकट की। इस प्रकार पचास, साठ, सत्तर से आगे बढ़कर एक वानर ने बताया कि मैं अस्सी योजन सागर लाँघ सकूँगा। एक ने कहा कि मैं सहज ही नब्बे योजन रास्ता लाँघ सकता हूँ, किन्तु सागर तो सौ योजन का है। कपिवरों की बातें सुनकर अजात्मज (ब्रह्मपुत्र जाम्बवान्) ने कहा—"हे कपिवर ! यह स्पष्ट हो गया कि हम वानरों में

त्रिविक्रमन् मून्नु लोकङ्ङळुं छन्नमाय् मून्नटियायळक्कुं विधौ
यौव्वनकाले पेरुम्पऱयुं कोट्टि मूवेळु वट्टं वलत्तु वच्चीटिनेन् ।
वार्द्धकग्रस्तनायेनिदानीं लवणाब्धि कटप्पानुमिल्ल वेगं मम । २०
ञानिरुपत्तोन्नु वट्टं प्रदक्षिणं दानवारिक्कु चेय्तेन् दशमात्रया;
कालस्वरूपनामीश्वरन् तन्नुटे लीलकळोर्त्तोळमत्भुतमेत्रयुं । इत्थ-
मजात्मजन् चोन्नतु केट्टतिनुत्तरं वृत्रारिपौत्रनुं चोल्लिनान्—
अङ्ङोट्टु चाटामेनिक्केन्नु निर्णयमिङ्ङोट्टु पोरुवान् दण्ड-
मुण्टाकिलां; सामर्त्थ्यमिल्लमट्टार्क्कुमेन्नाकिलुं सामर्थ्यमुण्टु भवा-
नितिनेन्नाकिलुं; भृत्यजनङ्ङळयय्क्कयिल्लेन्नुमे भृत्यरिलेक-
नुण्टामेन्नते वरु । आर्क्कुमेयिल्ल सामर्त्थ्यमनशनं दीक्षिच्चु
तन्ने मरिक्क नल्लू वयं । तारेयनेवं पऱञ्ञोरनन्तरं सारस-
संभवनन्दनन् चोल्लिनान्— ऎन्तु जगल्प्राणनन्दननिङ्ङने
चिन्तिच्चिरिक्कुन्नतेतुं पऱयाते ? कुण्ठनाय्त्तन्नेयिरुन्नु कळ-
कयो ? कण्टील निन्नेयोळिञ्ञु मट्टारेयुं । ३० दाक्षायणी-

से कोई भी समुद्र लाँघ नहीं सकेगा। पहले जब महाविष्णु ने वामनावतार में तीन कदमों में तीनों लोक नाप लिये थे तब मेरा यौवनकाल था और इस कारण मैंने उन विश्वरूप भगवान की दस क्षण में नगाड़ा बजाते हुए इक्कीस बार परिक्रमा की थी। किन्तु आज वार्द्धक्य से ग्रस्त होने से लवण समुद्र लाँघने की सामर्थ्य मुझमें नहीं रही। २० —दस क्षण में इक्कीस बार दानवारि (महाविष्णु) की प्रदक्षिणा करनेवाला आज इस लवण समुद्र तक को पार नहीं कर सकता ! क्या ही आश्चर्य है ! काल-स्वरूप भगवान की लीलाएँ आश्चर्यजनक हैं ! जाम्बवान् की यह बात सुनकर उसके उत्तर में वृत्रारिपौत्र (अंगद) ने कहा—"मैं समुद्र लाँघकर वहाँ (लंका में) जा सकता हूँ, किन्तु वापस आने की बात पर मुझे सन्देह है।" "चाहे दूसरा कोई समुद्र-लाँघने में समर्थ न हो और चाहे आप अकेले ही उसमें समर्थ हों, तो भी आपके हम दास, आपको नहीं भेजेंगे। मेरा विश्वास है कि हममें से कोई उसमें (समुद्र-तरण में) समर्थ निकलेगा।" (इस प्रकार अंगद से जाम्बवान् ने कहा।) तब अंगद ने फिर कहा—"कोई भी समर्थ नहीं दिखाई दे रहा है, इसलिए हमारे लिए उचित होगा कि अनशन करके हम मर जाएं।" तारेय को इस प्रकार कहते हुए पाकर सारससम्भव नन्दन (जाम्बवान्) ने कहा—"वाह ! जगत्प्राण नन्दन (हनुमान) ! बिना कुछ बोले इस प्रकार चिन्तित क्यों बैठे हो ? क्या तुम कुंठित बैठे ही रहोगे। मेरी दृष्टि में तुम्हें छोड़कर कोई दूसरा इस कार्य में समर्थ नहीं है। ३० तुम तो पार्वतीजी के गर्भ में स्थित

गर्भपात्रस्थनायोरु साक्षाल् महादेव बीजमल्लो भवान् । पिन्ने वातात्मजनाकयुमुण्टवन् तन्नोटु तुल्यन् बलवेगमोर्किकलो, केसरियेक्कोन्नु तापं कळञ्ञोरु केसरियाकिय वानरनाथनु पुत्रनायञ्जन पेट्टुळवायोरु सत्वगुणप्रधानन् भवान् केवलं । अञ्जनागर्भच्युतनायवनियिलञ्जसा जातनाय् वीण नेरं भवान्, अञ्जूरुयोजन मेल्पोट्टु चाटियतुं ञानरिञ्ञिरिक्कुन्नु मानसे । चण्डकिरणनुदिच्चु पोङ्ङुन्नेरं मण्डलं तन्नेत्तुट्टुटेक्कण्टु नी, पक्वमेन्नोर्त्तु भक्षिप्पानटुक्कयाल् शक्रनुटे वज्रमेट्टु पतिच्चतुं; दुःखिच्चु मारुतन् निन्नेयुं कोण्टुपोय् पुक्कितु पाताळमप्पोळ् त्रिमूर्त्तिकळ् मुप्पत्तु मुक्कोटि वानवर तम्मोटुमुल्पलसंभव पुत्र- वर्गत्तोटुं, ४० प्रत्यक्षराय् वन्ननुग्रहिच्चीटिनार् मृत्युवरा- लोकनाशं वरुम्पोळुं । कल्पान्तकालत्तुमिल्ल मृतियेन्नु कल्पिच्च- तिन्निळक्कं वरा निर्णयं । आम्नाय सारार्त्थमूर्त्तिकळ् चोल्लिनार् नाम्ना हनूमानिवनेन्नु सादरं । वज्रं हनुविङ्कलेट्टु मुरिकयालच्चरित्रङ्ङळ् मरन्नितो मानसे ! निङ्कय्यिलल्लयो

साक्षात् महादेव के ही बीज हो । इसके अतिरिक्त वायुदेव के पुत्र तो ठहरे । वायुसम तुम्हारा वेगबल है । केसरी (सिंह) को मारकर दुःखनाश किये । केसरी नामक वानर श्रेष्ठ के पुत्र रूप में अंजना के गर्भ से उत्पन्न तुम सत्वगुण से ओतप्रोत हो । अंजना के गर्भ से च्युत हो भूमि पर पड़ते ही तुम जो पाँच सौ योजन ऊपर कूद पड़े थे, वह मैं जान चुका हूँ । उदय सूर्य की चमक-दमक देख उसे पक्व समझ खाने के लिए उसकी ओर बढ़ते समय शक्र (इन्द्र) के वज्रघात से तुम नीचे गिर पड़े थे । दुखी हो वायुदेव तुम्हें लेकर पाताल लोक में चले गये । तेंतीस करोड़ देवताओं सहित त्रिमूर्ति लोग उत्पलसम्भव (ब्रह्मा) के पुत्र (दक्ष प्रजापति) आदि के साथ—४० —प्रत्यक्ष पाताल में आकर वायु से मिले और इच्छित वर प्रदान किये कि लोकनाश के समय या कल्पान्त काल में भी इनकी (हनुमान की) मृत्यु नहीं होगी । त्रिमूर्तियों का यह वरदान निश्चय ही अटल है, उसमें कुछ अन्तर नहीं आ सकता । इन्द्र के वज्र के आघात से हनु को चोट लगने के कारण त्रिमूर्तियों ने कहा था कि इनका हनुमान नाम होगा । हे हनुमान ! क्या तुम अपना यह पूर्व चरित विस्मृत बैठे हो ? यही नहीं भगवान ने केवल तुम्हारे हाथ में अंगुलीय दिया था । उसका भी कारण तुम्हें सोचना चाहिए । तुम्हारे बल-वीर्य-वेग का वर्णन इस प्रपंच में कोई नहीं कर सकता ।" विधिसुत (जाम्बवान्) को इस प्रकार

तन्नतु राघवनंगुलीयमतुमेन्तिनेन्नोक्कं नी। त्वद्बल वीर्य्य
वेगङ्ङळ् वर्ण्णिप्पतिनिप्रपञ्चत्तिङ्कलार्क्कुमामेल्लेटो ! इत्थं
विधिसुतन् चोन्न नेरं वायुपुत्रनुमुत्थाय सत्वरं प्रीतनाय्।
ब्रह्माण्डमोन्नु कुलुङ्ङुमारोन्नवन् सम्मदाल् सिंहनादं चेय्तरु-
ळिनान्। वामन मूर्त्तियेप्पोले वळर्न्नवन् भूमिधराकारनाय्
निन्नु चोल्लिनान्— लंघनं चेय्तु समुद्रत्तेयुं पिन्ने लङ्कापुरत्तेयुं
भस्ममाक्कि क्षणाल् ५० रावणनेक्कुलत्तोटु मोट्टुक्कि ञान्
देवियेयुं कोण्टु पोरुवनेन्नुमे; अल्लायकिलो दशकण्ठने बन्धिच्चु
मेल्लवे वामकरत्तिलेट्टुटन् कूटत्रयत्तोटु लङ्कापुरत्तेयुं कूटे
वलत्तु करत्तिलाक्किक्कोण्टु रामान्तिके वच्चु कैतोळुतीटुवन्
रामांगुलीयमेन् कैयिलुण्टाकयाल्। मारुतिवाक्कु केट्टोरु विधि-
सुतनारूढ कौतुकं चोल्लिनान् पिन्नेयुं— देवियेक्कण्टु विरविल्
वरिक नी रावणनोटेतिर्त्तीट्टुवान् पिन्नेयां; निग्रहिच्चीटुं
दशास्यने राघवन् विक्रमं काट्टुवानन्नेरमावल्लो। पुष्कर
मार्ग्गेण पोकुं निनक्कोरु विघ्नं वरायक कल्याणं भविक्कते।
मारुतदेवनुमुण्टरिके तव श्रीराम कार्य्यार्त्थमायल्लो पोकुन्नु;
आशीर्वचनवुं चेय्तु कपिकुलमाशु पोकेन्नु विधिच्चोरनन्तरं ६०

कहते सुनकर वायुपुत्र तुरन्त सन्तुष्ट हो अपने स्थान से उठे और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को कम्पित करनेवाला सिंहनाद किया। जैसे वामन ने विश्वरूप धारण किया था, वैसे ही क्षण भर में बढ़ते हुए हनुमान ने पर्वताकार शरीर धारण करते हुए कहा—"समुद्र लंघन करके, फिर क्षण भर में लंकापुरी को भस्मसात् कर—५० —और वंश समेत रावण को नष्ट कर मैं देवी को उठा लाऊँगा। अन्यथा रावण को बाँधकर वाम कर में लेकर तथा त्रिकूटाचल सहित लंका को दक्षिण कर में उठा लाकर राम के चरणों में रख हाथ जोड़ूँगा। हाथ में राम के अंगुलीय के रहने से सब कुछ करना मेरे लिए सम्भव होगा।" मारुति के वचन सुन अत्यन्त प्रसन्न हो उठे जाम्बवान् ने फिर कहा—"इस बार सीता को केवल देख आओ। रावण से मुकाबला बाद में होगा। राम दशानन को निश्चय ही मारेंगे। तब तुम्हें भी अपना बल और साहस दिखाने का अवसर मिलेगा। आकाश मार्ग से जाते हुए तुम्हें कोई बाधा न पहुँचे तथा तुम्हारा मंगल हो। वायुदेव सदा तुम्हारे साथ हैं और दूसरे, तुम भगवान राम के कार्यार्थ जा रहे हो। अतः किसी विघ्न के लिए अवकाश नहीं है।" जाम्बवान् के आशीर्वाद तथा कपिकुल की जाने की अनुमति पाकर—६० —तुरन्त ही हनुमान

वेगेन पोय् महेन्द्रत्तिन् मुकळेऱि नागारियेप्पोलें तिऩ्ऩु
विळङ्ङिनान्। इत्थं पऱञ्ञऱियिच्चोरु तत्तयुं बद्धमोदत्तोटि-
रुऩ्ऩितक्कालमे । ६२

॥ किष्किन्धाकाण्डं समाप्तं ॥

महेन्द्र पर्वत पर चढ़ साक्षात् नागारि (गरुड़) के समान शोभित हुए। इस प्रकार रामायण की कथा का एक अंश कह सुनाने के उपरान्त शुकी ने अल्प समय के लिए सानन्द विश्राम लिया। ६२

॥ किष्किन्धाकाण्ड समाप्त ॥

सुन्दरकाण्डम्

।। हरिः श्री गणपतये नमः ।।

अविघ्नमस्तु

सकल शुक कुल विमल तिलकित कळेबरे ! सारस्य पीयूष सार सर्वस्वमे ! कथयमम कथयमम कथकळति सादरं काकुत्स्य लीलकळ् केट्टाल् मतिवरा। किळि मकळोटति सरसमिति रघुकुलाधिपन् कीर्त्ति केट्टीटुवान् चोदिच्चनन्तरं, कळमोळियुमळकिनोटु तोळुतु चोल्लीटिनाळ् कारुण्यमूर्त्तियेच्चिन्तिच्चु मानसे—हिम शिखरि सुतयोटु चिरिच्चु गंगाधरनेङ्किलो केट्टु कोळ्केन्नरुळिच्चेय्तु : लवण जलनिधि शतकयोजनाविस्तृतं लंघिच्चु लङ्कयिल्च्चेल्लुवान् मारुति मनुजपरिवृढ चरणनळिन युगळं मुदा मानसे चिन्तिच्चुरप्पिच्चु निश्चलं। कपिवररोटमित बलसहितमुर चेय्तितु कण्टु कोळ्विन् तिङ्ङ्ङेङ्किलेल्लावरुं। मम जनक सदृशनहमति चपलमंबरे मानेन

।। हरिः श्री गणपतये नमः ।।

अविघ्नमस्तु

समस्त शुकवर्ग में निर्मल एवं श्रेष्ठ शरीर युक्त हे शुक बालिके ! तुम सरस अमृत रस से भी मधुर एवं रसपूर्ण मधुरभाषी हो। रामचरित जो तुमसे अब तक कहा जा रहा था, उसका आगे का भाग तुम मुझे बताओ, तुम मुझे बताओ। (क्योंकि) श्रीरामचन्द्र जी की लीलाएँ कितनी भी सुनें, संतृप्ति नहीं होती। इस प्रकार राम का यशगान सुनने की अभिलाषा सुनकर मधुरभाषी शुकशावक ने कारण्यमूर्ति श्रीरामजी का मन ही मन ध्यान करते हुए और प्रणाम करते हुए (आगे) कहा—गंगाधर (शिव) ने हेमवती से मन्दहास भरते हुए कहा कि तुम (रामकथा आगे) सुन लो। शत योजन विस्तृत समुद्र को लाँघकर लंका में पहुँचने के प्रयास में सानन्द हनुमान ने (पहले-पहल) अपने निश्चल मन में मनुज श्रेष्ठ (राम) के युगल चरण-कमलों का ध्यान लगाया और अमित बल का संवरण करते हुए वानरवीरों से कहा—"तुम सब देखते रहो। मैं अपने

पोकुन्निताशरेशालये । अजतनयतनय शरसममधिक साहसालद्यैव पश्यामि रामपत्नीमहं । १० अखिल जगदधिपनोटु विरवोट-ट्टियिप्पनिङ्ङ्घ कृतार्त्थनायेन् कृतार्त्थोस्म्यहं । प्रणतजन बहुजननमरणहरनामकं प्राण प्रयाणकाले निरूपिप्पवन् जनि मरण जलनिधियें विरवोटु कटक्कुमज्जन्मना किं पुनस्तस्य दूतोस्म्यहं । तदनुमम हृदि सपदि रघुपतिरनारतं तस्यांगुलीयवुमुण्टु शिरसिमे । किमपि नहिभयमुदधि सपदितरितुं तिङ्ङ्ळ् कीश प्रवररे ! खेदियाय्केतुमे ! इति पवनतनयनुरचेय्तु वालुं निजमेट्मुयर्त्तिप्परत्तिक्करङ्ङळुं अति विपुल गळतलवु-मार्ज्जवमाक्कि तिन्नाकुञ्चितांघ्रियायूर्द्ध्वनयननाय्, दशवदन पुरियिल् निज हृदयवुमुरप्पिच्चु दक्षिण दिक्कुमालोक्य चाटीटिनान् । १८

मार्ग्गविघ्नं

पतगपतिरिव पवनसुतनथ विहायसा भानु बिंबाभया

पिता (वायुदेव) के समान तीव्रगति से अज पौत्र के बाण (रामबाण) जैसे आकाश में उड़ता हुआ राक्षसेन्द्र के भवन में अनायास पहुँच जाऊंगा और साहसपूर्वक आज ही रामपत्नी को मैं देख लूँगा । १० और आज ही समस्त जगत् के अधिप (राम) से सारा वृत्तान्त कह दूँगा । मैं आज बहुत ही कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ । उनका पावन नाम भक्तों के जन्म-मरण की रस्सी काट देनेवाला है । प्राण के प्रयाण काल में (मृत्यु के समय) जो उनका स्मरण करता है, वह इस जन्म में ही संसार-जलनिधि को पार करता है । ऐसी हालत में उनके दूत मुझे डरने की क्या पड़ी है ? इसके अतिरिक्त मेरे तो हृदय में सदा श्रीरामजी बसे हुए हैं और उनका अंगुलीय तो मेरे सिर पर ही है (मेरे जिम्मे है) । फिर मुझे यह उदधि पार करते हुए क्या भय हो सकता है ? हे कपिवर ! आप अपनी चिन्ता छोड़ दीजिए, मुझे यह सागर पार करने में कुछ भी भय नहीं अनुभव हो रहा है ।" यह कहकर पवनतनय ने अपनी पूँछ ऊपर को उठायी, हाथों को खूब फैलाया, अपने गले को खूब सीधा किया और पादों को ज़रा झुकाया । दृष्टि ऊपर करते हुए और मन में दशवदन की राजधानी लंका को लक्ष्य बनाकर और दक्षिण दिशा की ओर देखते हुए हनुमान ने छलाँग भर दिया । १८

मार्ग में बाधा

पतगपति (गरुड) के समान अत्यन्त तीव्रगति से, भानुबिंब की सी

पोकुं दशान्तरे, अमर समुदयमनिल तनय बलवेगङ्ङळालोक्य चोन्नार् परीक्षणात्थं तदा, सुरसयोटु पवनसुत सुखगति मुटक्कुवान् तूर्णं नटन्नितु नागजननियुं त्वरितमनिलजमति-बलङ्ङळरिञ्ञति सूक्ष्मदशा वरिकेन्नतु केट्टवळ्; गगनपथि पवनसुत जवगतिमुटक्कुवान् गर्वेण चेन्नु तत्सन्निधौमेविनाळ्। कठिनतरमलरियवळवनोटुरचेय्तितु कण्टीलयो भवानेन्नेक्कपिवर ! भयरहितमितुवऴि नटक्कुन्नवर्कळे भक्षिप्पतिन्नुमां कल्पिच्चतीश्वरन्। विधिविहितमशनमितु नूनमद्यत्वया वीरा ! विशप्पेनिक्केट्टमुण्टोर्क्क नी। ममवदनकुहरमतिल् विरविनोटु पोक नी मट्टोन्नुमोर्त्तु कालं कळयाय्केटो ! सरसमितिरभसतरमतनु-सुरसागिरं साहसाल्क्केट्टनिलात्मजन् चोल्लिनान्—१० अहमखिल जगदधिपनमरगुरु शासनालाशु सीतान्वेषणत्तिन्नु पोकुन्नु। अवळेनिशिचरपुरियिल् विरविनोटु चेन्नु कण्टद्यवाश्वोवावरुन्नतु-मुण्टु ञान्। जनकनरपति दुहितृ चरितमखिलंद्रुतं चेन्नु रघुपतियोटरियिच्चु ञान् तव वदनकुहरमतिलपगत भयाकुलं

आभा फैलाते हुए पवनसुत (हनुमान) के आकाश मार्ग से जाते समय, हनुमान के वेगबल को देखकर अमरों ने नागजननी सुरसा से उनकी परीक्षा लेने का आग्रह किया। पवनसुत की निर्विघ्न गति रोकने के लिए सुरसा जल्दी निकल पड़ी। देवों ने हनुमान का बल खूब जान लेने का सुरसा से आग्रह किया था। अत्यन्त गर्व के साथ पवनसुत की गति रोकने के विचार से सुरसा आकाश मार्ग पर उनके समीप ही जाकर खड़ी हो गयी। घोर गर्जना करते हुए उसने उनसे पूछा—"हे कपिवर ! क्या तुमने मुझे नहीं देखा ? भगवान ने मुझे आदेश दे रखा है कि इस मार्ग से निर्भय जानेवालों को मैं पकड़कर खा लूँ। ईश्वर की कृपा से अब तुम मुझे भोजन के लिए प्राप्त हुए। हे वीर ! तुम यह जान लो कि मैं अत्यन्त भूखी हूँ। और कुछ व्यर्थ सोचकर समय गँवाये बिना अब तुम सीधे मेरे वदनविवर (मुँह) में प्रवेश करो।" स्थूलकाय सुरसा के विचित्र, किन्तु क्रूर एवं कठोर वचन सुनकर साहसपूर्वक अनिलात्मज (हनुमान) ने कहा—१० हे देवी ! मैं अखिल जगत के स्वामी तथा अमरगुरु (देवेश) भगवान के आदेश से अभी सीतान्वेषण के लिए जा रहा हूँ। निशिचरपुरी (लंका) में पहुँच उनसे मिलकर मैं आज या कल इधर वापस आ जाऊँगा। जनकनृपति की पुत्री (सीता) का सारा हाल जल्दी जाकर रघुपति को सुनाने के उपरान्त यहाँ आकर बिना किसी भय या व्याकुलता के आपके

तात्पर्य्यमुळ्क्कोण्टु वन्नुपुक्कीटुवन् । अनृतमकतळिरिलोरु पोळ्ळुतुमरिवीलहमाशु मार्ग्गं देहिदेवी नमोस्तुते । तदनु कपिकुलवरनोटवळुमुर चेय्तितु दाहवुं क्षुत्तुं पोरुक्करुतेतुमे । मनसितव सुदृढमितियदिसपदि सादरं वापिळन्नींटेन्नु मारुति चोल्लिनान् । अतिविपुलमुटलुमोरु योजनायाममायाशुगनन्दनन् तिन्नतु कण्टवळ् अतिलधिकतर वदनविवरमोटनाकुलमत्भुतमायञ्चु योजना विस्तृतं । पवन तनयनुमतिनु झटिति दशयोजना परिमिति कलर्न्नु काणायोरनन्तरं, २० निज मनसि गुरु कुतुकमोटु सुरसयुं तदा तिन्नाळिरुपतु योजन वायुमाय् । मुख कुहरमति विपुलमिति करुति मारुति मुप्पतुयोजन वण्णमाय् मेविनान् । अलमलमितयममलनरुतु जयमाक्कुमेन्नन्पतु योजन वापिळन्नींटिनाळ् । अतु पोळ्ळुतु पवनसुतनति कृशशरीरनायंगुष्ठ तुल्यनायुळ्प्पुक्करुळिनान् । तदनुलघुतरमवनुमुरतर तपोबलाल् तत्र पुरत्तुपुरप्पेट्टु चोल्लिनान् शृणु सुमुखि ! सुरसुखपुरे ! सुरसे ! शुभे ! शुद्धे ! भुजंगमातावे ! नमोस्तुते ! शरणमिह चरणसरसिज युगळमेवते शान्ते शरण्ये ! नमस्ते

मुँह में प्रविष्ट हो जाऊँगा। मैं छलरहित हूँ और कपट बोलना मुझे नहीं आता। हे देवी ! आप मुझे जाने दीजिए। आपको नमस्कार है।" तुरन्त ही उसने कपिकुलवर (वानरश्रेष्ठ हनुमान) से कहा—"मैं भूख और प्यास बिलकुल सह नहीं पा रही हूँ।" मारुति ने कहा—"यदि आपकी यही जिद है, तो आप तुरन्त ही अपना मुँह खोल दीजिए।" यह कहकर एक योजन विस्तृत अपना स्थूल शरीर धारण किये वायुपुत्र वहीं खड़े हो गये। यह देखकर सुरसा बिना किसी परिश्रम के अत्यन्त विस्मयकारी पाँच योजन विस्तृत अपना मुख विवर बढ़ा लिया। झट पवनतनय ने अपना दस योजन का स्थूल शरीर अपनाया। २० (यह देख) मन में आश्चर्यान्वित हो सुरसा ने बीस योजन अपना मुँह बढ़ाया। बड़े मुखविवर को देखकर मारुति ने तीस योजन का शरीर धारण किया। 'बस-बस' यह कोई बड़ा दिव्य पुरुष है, इसे कोई जीत नहीं सकता; यह सोच आश्चर्यचकित हो सुरसा ने अपना मुखविवर पचास योजन बड़ा किया तो यह देख पवनसुत अपना अंगुष्ठमात्र सूक्ष्म शरीर धारण करके उसके मुँह में प्रविष्ट हुए और शीघ्र ही तपःशक्ति से बाहर आ उन्होंने (सुरसा से) कहा—"देवों को सुख प्रदान करनेवाली हे सुन्दरी ! तुम सुनो। हे सुरसे ! हे शुभशीले ! हे शुद्धाचरणवाली ! हे भुजंगमाता ! तुमको प्रणाम है।

नमोस्तुते। प्लवगपरिवृढ वचननिशमन दशान्तरे पेत्तु चिरिच्चु परञ्ञु सुरसयु वरिक तव जयमतिसुखेन पोय्च्चेन्नु नी वल्लभा वृत्तान्तमुळ्ळ वण्णं मुदा रघुपतियोटखिलमरियिक्क तल् कोपेन रक्षोगणत्तैयुमोक्कयोटुक्कणं; ३० अरिवतिनु तव बलविवेक वेगादिकळादितेयन्मारयच्चु वन्तेनहं। निज चरित-मखिलमवळवनोटरियिच्चु पोय् निर्ज्जरलोकं गमिच्चाळ् सुरसयु। पवनसुतनथ गगनपथिगरुड तुल्यनाय्पाञ्ञु पारावार मीते गमिक्कुम्पोळ् जलनिधियुमचलवरनोटु चॊल्लीटिनान् चॆन्नु नी सल्करिक्केणं कपीन्द्रनॆ। सगरनरपति तनयरॆन्ने वळक्कयाल् सागरमॆन्नु चॊल्लुन्नितॆल्लावरुं। तदभिजनभवनरिक रामन् तिरुवटि तस्य कार्य्यार्त्थमाय्पोकुन्नतुमिवन्; इटयिलॊरु पतनमवनिल्ल तल्क्कारणालिच्छयापॊङ्ङित्तळर्च्चतीर्त्तीटणं। मणिकनकमयनमलनाय मैनाकवुं मानुष वेषं धरिच्चु चॊल्ली-टिनान्—हिमशिखरि तनयनहमरिक कपिवीर! नीयॆन्मेलिरुन्नु

हे शान्तचित्ते! हे अशरणशरण! मेरे लिए तुम्हारे युगल चरण-सरसिज की ही शरण है। तुम्हें प्रणाम है, तुम्हें मेरा प्रणाम है।" कपिश्रेष्ठ का यह वचन सुनकर उन्हें देखते हुए सहास सुरसा ने बताया—"हे वायुपुत्र! तुम (लंका में) सुखपूर्वक जाओ। तुम्हारी विजय सुनिश्चित है। तुम निर्विघ्न लंका में पहुँच (देवी से भेंटकर) और लौटकर देवी का यथावत् हाल रघुपति से कह दो ताकि क्रोध में आकर वे राक्षस वर्ग को समूल समाप्त कर देंगे। ३० तुम्हारा बल, वेग, बुद्धि, सामर्थ्य आदि की परीक्षा करने के लिए देवों के आदेश पर मैं आयी हूँ।" अपना पूरा हाल उनसे कहकर वह निर्जरलोक (स्वर्गलोक) को चली गयी। (फिर) समुद्र के ऊपर आकाश मार्ग से गरुड़ तुल्य गति से हनुमान के जाते समय जलनिधि (सागर) ने अचलवर (पर्वतश्रेष्ठ मैनाक) से आग्रह किया कि तुम जाकर कपीन्द्र का स्वागत-सत्कार करो। सगरराजा के पुत्रों ने ही मुझे इतना विस्तार प्रदान किया है और इसी कारण मेरा नाम सागर पड़ा है। भगवान राम को उसी वंश में उत्पन्न समझ लो और उन्हीं के कार्यार्थ ये (हनुमान) जा रहे हैं। (सागर के) बीच में कहीं ठहर कर विश्राम करने के लिए उसे जगह नहीं है, इसलिए तुम स्वेच्छा से ऊपर उठकर उनके विश्राम का प्रबन्ध कर लो। मणियों, कनक को अपने में धारण किये अमल मैनाक ने मानव रूप धारण करके (हनुमान से) कहा—"हे वानरश्रेष्ठ! मुझे हिमवान का पुत्र मैनाक जान लो। तुम मेरे ऊपर

तळर्न्नुयुं तीर्क्कटो ! सलिलनिधि सरभसमयय्क्कयाल् वन्नु ञान् सादवुं दाहवुं तीर्त्तुपोय्क्कोळ्कटो ! ४० अमृतसमजलवुमति मधुर मधुपूरवुमार्द्र पक्वङ्ङळुं भक्षिच्चु कोळ्क नी । अलमलमितरुतरुतु रामकार्य्यार्त्थमायाशु पोकुं विधौ पाक्करुतेङ्ङुमे; पेरुवळियिलशन शयनङ्ङळ् चेय्कन्नतुं पेर्त्तु मट्टोन्नु भाविक्कयेन्नुळ्ळतुं अनुचितमितरिक रघुकुलतिलक कार्य्यङ्ङळन्पोटु साधिच्चोळिञ्ञरुतोन्नुमे । विगत भयमिनि विरवोटिन्नु ञान् पोकुन्नु बन्धु सत्कारं परिग्रहिच्चेनहं । पवनसुतनिवयुमुर चेय्तु तन् कैकळाल् पर्वताधीश्वरनेत्तलोटीटिनान् । पुनरवनुमनिलसममुळ्ळरिनटकोण्टितु पुण्यजनेन्द्रपुरं प्रतिसंभ्रमाल् । तदनु जलनिधियिलतिगंभीर देशालये सन्ततं वाणोळुं छायाग्रहणियुं सरिदधिपनुपरि परिचोटु पोकुन्नवन् तन् निळलाशु पिटिच्चु नित्तीटिनाळ् । अतुपोळुतुममगति मुटक्कियतारेन्नतन्तरा पार्त्तु कीळ्पोट्टु नोक्कीटिनान् । ५० अतिविपुलतर भयकरांगियेक्कण्टळवंघ्रिपातेन कोन्नीटिनान् तल्क्षणे । निळलतु पिटिच्चु

ठहरकर विश्राम लो। सलिलनिधि (सागरराजा) के भिजवाने पर मैं (आपके पास) आया हूँ। आप अपनी थकान और दाह शान्त करके फिर जाइये। ४० —अतिमधुर एवं मधुतुल्य सलिल पानकर तथा आर्द्र पक्व (खूब पक्का हुआ फल) खाकर अपनी भूख-प्यास आप शान्त कर लें।" हनुमान ने मैनाक से कहा—"नहीं, नहीं, ऐसा मत कहो, ऐसा मत कहो। राम के कार्य के लिए जाते हुए कहीं विश्राम लेना अनुचित है। रघुकुलतिलक राम के कार्य को पूरा करने तक बीच रास्ते में भोजन करना या शयन करना या अन्य किसी वस्तु को देखकर मन को फेर लेना अनुचित समझ लो। अतः विश्राम की बात छोड़कर तथा निर्भय एवं निर्विघ्न मैं तुरन्त अभी जा रहा हूँ। मैंने तुम्हारा आतिथ्य ग्रहण किया है।" यह कहकर पवनसुत ने पर्वताधीश्वर पर अपना हाथ फेर लिया और फिर तुरन्त ही पुण्यजनेन्द्रपुर (रावण की राजधानी) को लक्ष्य बनाकर वायुसम गति लेकर आगे चल पड़े। फिर जलनिधि की अत्यन्त गहराई में सदा वास करनेवाली छायाग्रहिणी राक्षसी ने समुद्र के ऊपर से जानेवाले (हनुमान) की छाया ग्रहणकर उनकी गति रोक दी। तब 'मेरी गति कौन रोक रहा है' ऐसा मन में सोचते हुए जब हनुमान ने नीचे की ओर देखा—५० —तो अत्यन्त विपुल एवं भयंकर शरीरवाली (सिंहिका) को देखा, जिसे उन्होंने लात मारकर उसी समय खतम कर दिया। छाया को रोककर

ऩिर्त्तिक्कोऩ्ऩु तिन्नुन्न नीचयां सिंहिकयेक्कोऩ्ऩनन्तरं दशवदन-
पुरियिल् विरवोटु पोयीटुवान् दक्षिणदिक्कुऩोक्किक्कुतिच्ची-
टिनान् । चरमगिरिशिरसिरवियुं प्रवेशिच्चितु चारु लङ्कागोपुराग्रे
कपीन्द्रनुं । दशवदन नगरमति विमल विपुल स्थलं दक्षिण
वारिधि मद्ध्ये मनोहरं; बहुल फलकुसुम दलयुत विटपि सङ्कुल
वल्लीकुलावृतं पक्षि मृगान्वितं, मणिकनक मयममरपुर
सदृशमंबुधि मद्ध्ये त्रिकूटाचलोपरि मारुति कमलमकळ् चरित-
मऱिवतिनु चेन्ऩप्पोटु कण्टितु लङ्का नगरं निरुपमं । कनक
विरचितमतिल्किटङ्ङुं पलतरं कण्टु कटप्पान् पणियेन्नु मानसे
परवशतयोटु झटिति पलवळि निरूपिच्चु पत्मनाभन् तन्ने
ध्यानिच्चु मेविनान् । ६० निशितमसि निशिचरपुरे कृश
रूपमाय् निर्ज्जनदेशे कटप्पनेन्ऩोर्त्तवन् निज मनसि निशिचर
कुलारियें ध्यानिच्चु निर्ज्जरवैरिपुरं गमिच्चीटिनान् । प्रकृति
चपलनुमधिक चपलमचलं महल् प्रकारवुं मुऱिच्चाकारवुं मऱ-
च्चवनि मकळटिमलरुमकतळिरिलोर्त्तु कोण्टञ्जनानन्दनञ्जस
निर्भयं । ६४

जन्तुओं को पकड़ खाने की आदतवाली नीच सिंहिका को मारने के उपरान्त
दशवदनपुरी (रावण की राजधानी) जाने के लिए दक्षिण दिशा को देख
हनुमान कूद पड़े । रवि चरमगिरि (अस्ताचल) के ऊपर पहुँच गया और
कपीन्द्र सुन्दर लंकापुरी के गोपुर पर पहुँच गये । दक्षिण वारिधि के मध्य
भाग में स्थित दशवदन की नगरी विमल, विपुल (विशाल), और मनोहर
थी । नाना फलों, कुसुमों को धारण करनेवाली विटपियों (वृक्षों) से
संकुल, लता-वल्लियों से आवृत्त, पशु-पक्षियों से परिपूर्ण, रत्नों, मणियों
कनकों से शोभित तथा अमरपुर (देवलोक) सदृश, समुद्र के मध्य त्रिकूटा-
चल पर बसी--अनुपम लंकापुरी को, हनुमान ने सीतान्वेषण के लिए जाते
हुए, सहसा देख लिया । कनक निर्मित दुर्गों और उसके चारों ओर की
खाइयों को देख, इसके भीतर जाना अत्यन्त कठिन है, यह बार-बार सोचते
हुए एवं खिन्न हो हनुमान पद्मनाभ (राम) का स्मरण करने लगे । ६०
फिर रात की अँधियारी में निशिचरपुर के भीतर कृशशरीरी बन जाने का
ठान लिया । तदनुसार प्रकृति से चंचल अपने को स्थिरचित्त बनाकर और
अपने आकार को छिपाकर, अपने मन में निशिचर कुलारि (राक्षसवंश के
शत्रु राम) तथा भूमिसुता के चरण-सरोजों पर ध्यान लगाये, हनुमान बृहत्
दुर्ग को पार करने का उपक्रम करने लगे । ६४

लङ्कालक्ष्मी मोक्षम्

उटल् कट्टुकिनोट्टु सममिटत्तु काल् मुम्पिल् वच्चुळ्ळिल् कटप्पान्तुटङ्ङुं दशान्तरे, कठिनतरमलर्च्चयोरु रजनिचरि वेषमाय्क्काणायिताशु लङ्का श्रीयेयुं तदा। इविटे वरुवतिनु पऱकेन्तुमूलं भवानेकनाय् चोरनो चोल्लु निन् वाञ्छितं। असुरसुर नर पशु मृगादि जन्तुक्कळ् मट्टाक्कुमे वन्नु कूटा ञानऱियाते; इति परुष वचन मोटणञ्ञु ताडिच्चितोन्नेरे रोषेण ताडिच्चु कपीन्द्रनुं। रघुकुलज वरसचिववाममुष्टि प्रहारेण पतिच्चु वमिच्चितु चोरयुं; कपिवरनोटवळुमेळ्ळन्नेट्टु चोल्लीटिनाळ् कण्टेनेटो तव बाहुबलं सखे! विधिविहितमितु मम पुरेवधाताव् तान् वीरा! पऱञ्ञितेन्नोटितु मुन्नमे। सकल जगदधिपति सनातनन् माधवन् साक्षाल् महाविष्णु मूर्त्ति नारायणन् कमलदलनयननवनियिलवतरिक्कुमुळ्क्कारुण्य मोटष्ट विंशतिपर्य्ययये। १० दशरथ नृपति तनयनाय् मम प्रार्त्थनाल् त्रेतायुगे धर्म्मं देव रक्षार्त्थमाय्; जनक नृपवरनु मकळाय्

लंका-लक्ष्मी को मुक्ति

राई-सम सूक्ष्म आकार बनाये हनुमान दुर्ग पर चढ़कर बायां चरण रख अन्दर प्रवेश करने ही जा रहे थे कि तुरन्त ही घोर गर्जना करती हुई राक्षसी-वेश में लंका-लक्ष्मी ने आकर उन्हें रोक दिया। उसने क्रोध में आकर पूछा—"इधर आने का तुम्हारा क्या उद्देश्य है? अकेले आनेवाले तुम क्या चोर हो? तुम्हारी क्या वांछा है? मेरी जानकारी के बिना असुर, सुर, नर, पशु-पक्षी या अन्य कोई भी यहाँ प्रवेश नहीं कर सकता।" ऐसा कठोर वचन कहते हुए उसने क्रुद्ध हो हनुमान पर एक प्रहार किया तो हनुमान ने भी उस पर प्रहार किया। रघुकुल में जन्मे राम के उत्तम सचिव (हनुमान) के बाएँ हाथ की मुष्टि का प्रहार लगकर वह धराशायी बनी और मुख से रक्त का वमन किया। फिर वहाँ से उठकर उसने कपिवर से कहा—"हे सखे! मैंने तुम्हारा बाहुबल देख लिया। हे वीर! यह विधाता की इच्छा है। पहले ही विधाता ने यह बात मुझे बतायी थी (इस नगरी की देख-रेख के कार्य से विमुक्त करने की प्रार्थना करने पर) कि अष्टविंशति पर्यये (अट्ठाईसवें चतुर्युग में) साक्षात् महाविष्णु जो नारायण-स्वरूप, सारे जगत के अधिपति, माधव, सनातन एवं कमलदल-लोचन हैं, करुणावश अवनि में अवतीर्ण होंगे। १० —मेरी प्रार्थना पर धर्म एवं

निजमाययुं जातयां पंक्तिमुख विनाशत्तिनाय्; सरसिरुह नयनन-
टवियिलथ तपस्सिनाय् सभ्रातृ भार्य्यनाय्वाळुं दशान्तरे दशवदन-
नवनि मकळेयुमपहरिच्चुटन् दक्षिण वारिधि पुक्किरिक्कुन्न-
न्नाळ्; सदपि रघुवरनोटरुणजनु साचिव्यवुं संभविक्कु
पुनस्सुग्रीवशासनाल् सकलदिशि कपिकळ् तिरवान् नटक्कु-
न्नतिल् सन्नद्धनाय्वरुमेकन् तवान्तिके। कलहमवनोटु झटिति
तुटरुमळवेन्नयुं कातरयाय्वरुं नीयेन्नु निर्णयं रणनिपुणनो
भवति ताडनवुं कोण्टु रामदूतन्नु नल्केणमनुज्ञयुं; ओरु कपियो
टोरुदिवसमटि झटिति कोळ्किल् नीयोटिवाङ्ङक्कोळ्ळुकेन्न
विरिञ्चनुं करुणयोटुगत कपटमाय् नियोगिक्कयाल् कात्तिरुन्न
निविटेप्पलकालवुं। २० रघुपतियोटिनियोरिटरोळ्किके नट कोळ्व
नी लङ्कयुं निन्नाल् जितयायितिन्नेटो! निखिल निशिच
कुलपतिक्कु मरणवुं निश्चयमेटमटुत्तु चमञ्ञतु। भगवदनुचर
भवतु भाग्यं भवानिनिप्पाराते चेन्नु कण्टीटुक देविये

देवों के रक्षार्थ त्रेतायुग में दशरथ के तनयरूप में (अवतीर्ण होंगे) औ
उनकी माया-शक्ति पंक्तिमुख (रावण) के नाश के लिये महाराजा जन
की पुत्री के रूप में जन्म लेगी। अपने पिता की आज्ञा से ससीरुह-नय
(कमल-लोचन राम) के अपने भ्राता एवं भार्या समेत कानन में तपस
हेतु निवास करते समय दशवदन (रावण) अवनिपुत्री का अपहरण क
दक्षिण वारिधि (दक्षिणी सागर) पार ले जायेगा। तब रघुवर अ
अरुणज (सूर्यपुत्र सुग्रीव) में सख्य होगा। पुनः सुग्रीव के आदेश
सीतान्वेषण के लिए सारी दिशाओं में भेजे गये कपियों में से एक लंकापु
में प्रवेश करने के लिये उद्यत हो तुम्हारे पास आयेगा। झट तुम उ
रोकोगी और तुम दोनों में संघर्ष पैदा होगा, जिस समय तुम्हें निश्चय
अत्यन्त कातर होना पड़ेगा। रणनिपुण रामदूत का प्रहार पाते ही
उसे (लंका में प्रवेश करने की) अनुमति प्रदान करो। ब्रह्मा ने
कहा था कि जिस दिन तुम्हें एक कपि का प्रहार लगेगा उस दिन
यहीं तुरन्त वापस आ जाओ। इस प्रकार ब्रह्मा की आज्ञा से अत्य
खिन्न हो लम्बे समय तक (तुम्हारे प्रहार की) प्रतीक्षा में बैठी रही।
अब रघुपति का कार्य तुम निर्विघ्न पूरा करो, तुम निर्भय एवं निब
लंकापुरी के अन्दर प्रवेश करो। यह लंकापुरी तुम्हारे लिए विजित
निखिल राक्षस कुलपति रावण की मृत्यु निश्चय ही निकट आ गयी
हे भगवदनुचर! तुम पर भगवद्कृपा बनी रहे। अब तुम अविल

त्रिदशकुलरिपुदशमुखान्तःपुरवरे दिव्यलीलावने पादप संकुले, नव कुसुम फल सहित विटपियुत शिंशपा नाम वृक्षत्तिन्च्चुवट्टिलति शुचा निशिचरिकळ् न्नटुविलळ्ळोटु मरुविट्टुन्नोटो ! निर्म्मल गात्रियां जानकि सन्ततं। त्वरितमवळ् चरितमुटनवनीटरियिक्क पोयंबुधियुं कटन्नंबरान्ते भवान्। अखिल जगदधिपति रघूत्तमन् पातुमामस्तुते स्वस्तिरत्युत्तमोत्तंसमे ! लघुमधुरवचनमिति चोल्लि मरञ्ञितु लङ्कयिल् निन्नु वाङ्ङी मलर् मङ्कयुं। २९

सीतादर्शनम्

उदकनिधि नटुविल् मरुवुं त्रिकूटाद्रिमेलुल्लंघिताब्धौ पवनात्मजन्मना, जनक नरपतिवर मकळ्क्कुं दशास्यनुं चेम्मे विरञ्चितु वामभागं तुलों। जनक नरपति दुहितृवरनु दक्षांगवुं जातनेन्नाकिल् वरुं सुख दुःखवुं। तदनु कपिकुलपति कटन्नितु लङ्कयिल् तानति सूक्ष्मशरीरनाय् रात्रियिल्।

जाकर देवी (सीता) से मिलो। त्रिदशकुल-रिपु (देवताओं के शत्रु) दशमुख (रावण) के अन्तःपुर में पादप संकुल (वृक्षों से परिपूर्ण) दिव्य लीलावन में नव कुसुम, फल संयुत विटपों से शिंशपा नामक वृक्ष के नीचे निर्मलगात्री देवी जानकी अत्यन्त दुखार्ता हो, निशाचरियों के बीच बैठी हुई हैं (उनसे मिलकर) त्वरित गति से जाकर आकाश मार्ग से समुद्र को लांघकर तुम उनका (सीता का) पूरा समाचार राम को सुना दो। अखिल जगत के स्वामी, पुरुषोत्तम राम मेरी रक्षा करें। उत्तमोत्तम पुरुषों के चूड़ारत्न ! तुम्हारा कल्याण हो।" इस प्रकार सुन्दर एवं मधुर वचन कहकर लंका से महालक्ष्मी अदृश्य हो गयी। २९

सीता-दर्शन

पवन-सुत (हनुमान) द्वारा समुद्रोल्लंघन किये जाते ही समुद्र के मध्य स्थित त्रिकूटाचल पर रहनेवाली जनक-पुत्री सीता और दशास्य (रावण) दोनों का वाम भाग कम्पित हो उठा। जनक नृपति की दुहिता (सीता) के पति (राम) का दक्षांग (दायाँ अंग) शुभ सूचनार्थ कंपित हो उठा। जन्म लेने पर ईश्वर को भी सुख-दुःख भोगना ही पड़ता है। फिर (लंका-महालक्ष्मी के अदृश्य होते ही) कपि कुलपति (हनुमान) सूक्ष्म शरीरी बन रात के समय लंका में प्रविष्ट हुए। उदित बालार्क-सम दीप्तिमय समस्त

उदितरविकिरण रुचि पूण्डोरु लङ्कयिलोक्कॅत्तिरञ्ञानोरेटमो
ळियातें। दशवदनमणिनिलयमायिरिक्कुं मम देवियिरिप्पेट
मॅन्नोर्त्तु मारुति। कनकमणि निकरविरचित पुरियिलॅङ्ङु
काणाञ्ञु लङ्कावचनमोर्त्तीटिनान्। उटमयोटुमसुर पुरिकनि
विनोटु चोल्लियोरुद्यान देशे तिरञ्ञु तुटङ्ङिनान्। उपवन
वुममृत सम सलिलयुत वापियुमुत्तुंग सौधङ्ङळुं गोपुरङ्ङळु
सहज सुत सचिव बलपतिकळ् भवनङ्ङळुं सौवर्ण्ण सालध्वज
पताकङ्ङळुं, १० दशवदनमणि भवन शोभकाणुं विध
दिक्पालमन्दिरं धिक्कृतमायवरुं कनकमणि रचित भवनङ्ङ
ळिलॅङ्ङुमे काणाञ्ञु पिन्नेयुं नीळे नोक्कुं विधौ, कुसुमचय
सुरभियोटु पवननतिगूढमाय् कूटॅत्तटञ्ञु कूट्टिक्कोण्टु पोयुट
उपवनवुमुरुतर तरु प्रवरङ्ङळुमुन्नतमायुळ्ळ शिशपावृक्षवु
अतिनिकटमखिल जगदीश्वरि तन्नेयुमाशुगनाशु काट्टिक्कोटु
त्तीटिनान्। मलिनतर चिकुर वसनं पूण्टु दीनयाय् मैथिलि
तान् कृशगात्रियायॅन्नयुं भयविवशमवनियिलुरुण्टुं सदा हृदि भर्त्ता
तन्नें निनच्चु निनच्चलं; नयनजलमनवरतमोळुकियोळुकिप्पॅ

लंकानगरी में, कहीं किसी कोने को छोड़े बिना, (सीता की) खोज की
दशवदन (रावण) के मणिमय निलय में संभवतः मेरी देवी बैठी हैं, ऐ
सोचकर मारुति ने कनक तथा रत्नों से विरचित लंकापुरी में (इधर
उधर तक) सीता को ढूँढ़ा, किन्तु कहीं न पाने पर उन्हें लंका-लक्ष्मी
वचन (सीता शिशपा वृक्ष के नीचे बैठी हैं) स्मरण हो आया। फि
उस असुरपुरी को छोड़कर लंका-लक्ष्मी के बताये गये उद्यानप्रदेश में (सीत
की) खोज करने लगे। उपवन, अमृतोपम सलिल (जल) युक्त सरोव
उत्तुंग सौध, गोपुर, रावण के अनुजों, पुत्रों, मन्त्रियों, सेनापतियों के ना
भवन, सुवर्णमय दुर्ग, ध्वज पताकाएँ—१० —और दशवदन (रावण)
मणिमय भवन की शोभा के सामने दिग्पालों के भव्य मन्दिर तुच्छ जा
पड़ते हैं। कनक-मणि विरचित किसी भवन में सीता को न पाकर फि
इधर-उधर सब कहीं खोजते फिरते समय कुसुमों का सुवास लेकर पवन
(पुत्र वात्सल्य से प्रेरित हो) अत्यन्त गूढ़ संकेतों से हनुमान का आश्ले
किया और साथ ले जाकर उपवन, उत्तमोत्तम वृक्ष, उन्नत शिशपा वृक्ष औ
उसके नीचे निकट ही बैठी अखिल जगदीश्वरी (सीता) को दिखला दिया
वहाँ मलिन वसन एवं चिकुर (बाल) से युक्त कृशगात्री दीना मैथिली
भयातुर हो पृथ्वी पर, लोटते बिलखते, सदा अपने हृदय में भर्ता का स्मर

नामत्तें रामरामेति जपिक्कयुं; निशिचरिकळ् नटुविलळ्लॊट्टु-मरुवुमीश्वरि नित्यस्वरूपिणियॆक्कण्टु मारुति विटपिवरशिरसि निबिडच्छदान्तर्ग्गतन् विस्मयं पूण्टु मरुञ्ञिरुन्नीटिनान् । २०
दिवसकर कुलपति रघूत्तमन् तन्नुटॆ देवियां सीतयॆक्कण्टु कपिवरन् । कमलमकळखिल जगदीश्वरि तन्नुटल् कण्टेन् कृतार्त्थोस्म्यहं कृतार्त्थोस्म्यहं । दिवसकर कुलपति रघूत्तमन् कार्य्यवुं दीनतयॆन्निये साधिच्चितिन्नु ञान् । २३

रावणन्टॆ पुरप्पाटु

इति पलवुमकतळिरिलोर्त्तु कपिवरनित्तिरि नेरमिरिक्कुं दशान्तरे; असुरकुलवर निलयनत्तिन् पुरत्तु तिन्नाशु चिल घोषशब्दङ्ङळ्केळ्क्कायि । किमिदमिति सपदिकिसलय चयनि-लीननायक्कीटवद्देहं मरुच्चु मरुविनान् । विबुधकुलरिपु दश-मुखन् वरवॆन्नयुं विस्मयत्तोटु कण्टु कपिकुञ्जरन् । असुर सुर निशिचर वरांगनावृन्दवुमत्भुतमायुळ्ळ श्रृंगारवेषवुं दशवदन-ननवरतमकतळिरिलुण्टु तन् देहनाशं भविक्कुन्नतॆन्नीश्वरा !

करते हुए सन्तप्त हो निरन्तर अश्रुधारा प्रवाहित करते हुए तथा अपने प्रिय का प्रिय राम-नाम जपते हुए देखा। निशाचरियों के मध्य दुखी हो बैठी नित्य स्वरूपिणी भगवती को देखकर विस्मित मारुति एक ऊँचे विटप के घने अग्रभाग में छिपे बैठ गये। २० दिनकर कुल में उत्पन्न पुरुषोत्तम राम की धर्मपत्नी देवी (सीता) को देखकर कपिश्रेष्ठ हनुमान सोचने लगे कि अखिलेश्वरी साक्षात् महालक्ष्मी के पावन स्वरूप को देखकर मैं आज कृतार्थ हुआ, मैं आज कृतार्थ हुआ और दिनकर कुल के स्वामी पुरुषोत्तम का कार्य मैं आज सहज ही सिद्ध कर सका। २३

रावण का आगमन

इस प्रकार मन में कई प्रकार के विचार लिये कपिश्रेष्ठ थोड़ी देर वहीं बैठे रहे। तब असुर कुलवर (रावण) के महल के फाटक के बाहर कुछ घोष सुनाई पड़े। 'यह क्या घोष है ?' के कुतूहलवश तुरन्त ही किसलयों के समूह में अपने कृमितुल्य शरीर को छिपाये वे (उस तरफ) देखने लगे। विबुधकुलरिपु (देवताओं के शत्रु) दशवदन (रावण) का आगमन कपिश्रेष्ठ ने विस्मयपूर्वक देखा। असुर, सुर एवं राक्षस वर्ग की वरांगनाओं से परिवृत्त एवं विचित्र श्रृंगारात्मक वेष धारण किये हुए रावण

सकल जगदधिपति सनातनन् सन्मयन् साक्षाल् मुकुन्दनेयुं कण्टु कण्टु ञान् निशिततर शर शकलितांगनाय्क्केवले निर्म्मल-माय भगवल् पदांबुजे वरदनजनमखममृतानन्दपूर्ण्णमां वैकुण्ठ राज्यमेनिक्केन्तु किट्टुन्नु; अतिनुबत ! समयमिदमिति मनसि करुति ञानंभोजपुत्रियेक्कोण्टु पोन्नीटिनेन् । १० अतिनुमोरु परिभवमोट्टुळ्ळि वन्नीलवनायुविनाशकालं न्नमुक्कागतं । शिरसि मम लिखितमिह मरण समयं दृढं चिन्तिच्चु कण्टालतिनिल्ल चञ्चलं । कमलजनुमद्रियरुतु करुतुमळवेतुमे कालस्वरूप-नामीश्वरन् तन्मतं । सततमक तळिरिलिव करुति रघुनाथने स्वात्मना चिन्तिच्चु चिन्तिच्चिरिक्कवे कपिकळ् कुलवरन-विटेयाशु चेल्लुं मुम्पे कण्टितु रात्रियिल् स्वप्नं दशानन्– रघु-जननतिलक वचनेन रात्रौ वरुं कश्चिल् कपिवरन् कामरूपा-न्वितन् । कृपयोटोरु कृमि सदृश सूक्ष्म शरीरनाय् कृत्स्नं पुरवरमन्विष्य निश्चलं, तरुनिकर वरशिरसि वन्निरुन्ना-

---

आ रहा था। रावण के मन में भगवान के प्रति भक्ति का अभाव नहीं था। रावण निरन्तर मन ही मन यही सोच रहा था—'हे भगवान ! मेरा यह शरीर कब मिट जायगा ? समस्त जगत के स्वामी सनातन, सन्मय मुकुन्द को नेत्रों के सम्मुख देख-देख, उन्हीं के तीक्ष्ण बाणों से आहत हो, निर्मल भगवान के चरण-सरोजों पर निपतित हो, वरदाता, अजन्मा के निवास स्थान अमृतानन्ददायक वैकुण्ठ का राज्य मुझे कब प्राप्त होगा ! उसके लिए यही अनुकूल सुअवसर है, ऐसा समझकर मैं अंभोजनेत्रा (कमललोचना सीता) को उठा ले आया था। १० तिसपर भी क्रोधातुर हो वह (भगवान) नहीं आया। कुछ भी हो अब मेरे जीवन का अन्त समीप आ गया है। मेरा शिरोलेख तो यही है। मेरा अन्त निश्चित एवं अडिग है। चाहे कितना भी सोच-विचार करूँ, मृत्यु अचंचल है। पता नहीं—क्योंकि कालस्वरूप भगवान का मनोगत कौन जान सकता है ! स्वयं ब्रह्मा भी उसे समझ नहीं पाते।' इस प्रकार जब कई विचारों से आक्रान्त हो रावण दिन बिता रहा था, तभी कपिश्रेष्ठ हनुमान लंका में पहुँचे थे। हनुमान के लंका पहुँचने से कुछ पूर्व रात को दशानन ने एक स्वप्न देखा था कि रघुकुलतिलक राम की आज्ञा लेकर एक कपिवर रात में वहाँ आएगा और स्वेच्छापूर्वक शरीर धारण करने की क्षमता रखनेवाला होने से वह अत्यन्त सूक्ष्म शरीरी बनकर सम्पूर्ण नगरी में सीता का अन्वेषण करने के उपरान्त शिशपा वृक्ष के ऊप

दराल् तार्मकळ् तन्नेयुं कण्टु रामोदन्तं अखिलमवळोटु बत ! पऽञ्ञटयाळवुमाशु कोट्टुत्तुटनाश्वसिप्पिच्चु पों; अतु पोळुतिल-वनऽिवतिन्नु तान् चेन्नु कण्टाधिवळर्त्तुवन् वाङ्मयास्त्र-ङ्ङळाल् । २० रघुपतियोटतुमवनशेषमऽियिच्चु रामनुमिङ्ङु कोपिच्चुटने वरुं । रणशिरसि सुख मरणमति निशितमायुळ्ळ रामशरमेट्टेनिक्कु वरुं दृढं । परमगति वरुवतिनु परमोरुपदेशमां पन्थावितु मम पाक्कयिल्लेतुमे । सुरनिवहमति बलवशाल् सत्यमाय्वरुं स्वप्नं चिलक्कुं चिलकालमोक्कणं । निज मनसि पलवुमिति विरवोटु निरूपिच्चु निश्चित्य निर्गमिच्ची-टिनान् रावणन् । कनक मणि वलय कटकांगद नूपुर काञ्ची-मुखाभरणारावमन्तिके विवशतर हृदयमोटु केट्टु तोक्कुंविधौ विस्मयमाम्मारु कण्टु पुरो भुवि; विबुधरिपुनिशिचर कुलाधिपन् तन् वरवेत्वयुं भीतयाय् वन्नितु सीतयुं । उरसि-जवु मुरुतुटकळाल् मऽच्चाधिपूण्टुत्तमांगं ताळ्त्ति वेपथु गात्रियाय् निज रमण निरुपम शरीरं निराकुलं निम्मलं ध्यानिच्चिरिक्कुं

आ बैठकर सीता का दर्शन करेगा तथा राम का पूरा वृत्तान्त सुनाकर, पहचान-चिह्न दे एवं उसे सब प्रकार से आश्वस्त करके चला जायेगा। फिर राम की जानकारी के लिए वह उनके निकट पहुँचकर शब्द-बाणों से उनकी मानसिक व्यथा उत्तेजित करेगा। २० "—अतः अभी सीता के समीप जा दुर्वचनों से उसे दुखी बना दूँ तो वृक्ष पर बैठा वानर सुन लेगा और कपि से यह समाचार सुनकर राम अत्यन्त क्रोधाकुल हो यहाँ आ जाएँगे और युद्ध में राम के तीक्ष्ण बाणों के प्रहार से मेरी सुखात्मक मृत्यु निश्चित है। परमगति पाने के लिए यह मेरे लिए एक अनुकूल मार्ग है। इस अवसर का दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए। देवों के मत से स्वप्न में देखी बात कभी-कभी किसी-किसी के जीवन में सत्य ही घटित होती है।" अपने मन में इस प्रकार कई बातें सोचता हुआ तथा अपने कर्तव्य निश्चित करता हुआ रावण (शिंशपा वृक्ष की ओर) निकल पड़ा। सोने के कड़े, अंगद, नूपुर, कांची, मुखाभरण आदि का रव अपने समीप सुनकर अत्यन्त विवश एवं आशंका-जनित हृदय से सीता ने उस तरफ देखा तो अपने विस्मय के लिए उन्होंने रावण को आते हुए पाया। विबुधरिपु (देवताओं के शत्रु) एवं निशिचरों के राजा रावण का आगमन देखकर सीता अत्यन्त भयविह्वल हो उठी। आधि से विह्वल एवं कम्पित हो तथा अपने उरोजों को जघनों में सडाये, एवं नतमस्तक हो अपने प्रियतम के

दशान्तरे, ३० दशवदननयुगशर परवशतया समं देवी समीपे तॊऴुतिरुन्नीटिनान् । ३१

रावणन्टे इच्छाभंगम्

अनुसरण मधुर रस वचन विभवङ्ङळालानन्द रूपिणियोटु चॊल्लीटिनान् श्रुणु सुमुखि ! तव चरण नळिन दासोस्म्यहं शोभनशीले ! प्रसीद प्रसीदमे । निखिल जगदधि-पमसुरेशमालोक्यमां निन्निले नी मरञ्ञॆन्तिरुन्नीटुवान् ? त्वरितमति कुतुकमॊटुमॊन्नु नोक्कीटुमां त्वद् गत मानसनॆन्नरिकॆन्नी । भवति तव रमणमपि दशरथ तनूजनॆ प्पार्त्ताल् चिलर्क्कु काणां चिलप्पोऴॆटो ! पल समयमखिल दिशि तन्नाय् त्तिरकिलुं भाग्यवतामपि कण्टु किट्टा परं; सुमुखि ! दशरथ तनयनाल् निनक्केतुमे सुन्दरी ! कार्यमिल्लॆन्नु धरिक्क नी । ऒरु पोऴुतुमवनु पुनरोन्निलुमाशयिल्लोर्त्तालोरु गुणमिल्लवनोमले ! सुदृढमनवरतमुपगूहनं चॆय्किलुं सुश्रुसु चिरमरिके वसिक्किलुं

निर्मल एवं निराकुल स्वरूप पर ध्यान लगाये जब सीता बैठ गयी—३० —तब कामातुर दशवदन हाथ जोड़कर देवी के समीप आ बैठा । ३१

रावण का इच्छा-भंग

(सीता के समीप बैठकर रावण ने) विनयपूर्वक मधुरस पूरित वाणी में आनन्दस्वरूपिणी (सीता) से कहा—"हे सुमुखी ! सुनो । हे सुन्दरी ! मैं तुम्हारे चरण-सरोजों का दास हूँ । तुम मुझपर कृपा करो, कृपा करो । अखिल जगत के स्वामी एवं असुरेश मुझे देखकर तुम स्वयं अपने को छिपाये (जघनों में उरोज सडाये हुए संकुचित) क्यों बैठ गयी हो ? तुम तुरन्त ही अतीव सानन्द एवं कुतूहलपूर्वक मेरी तरफ देखने की कृपा करो । तुम मुझे अनुरक्त दास समझ लो । क्या तुम वन में भटकते अपने पति दशरथ पुत्र राम की स्मृति लिये बैठी हो ? ऐसी बात है तो यह तुम्हारी भूल है क्योंकि बहुत खोजने पर सम्भव है कोई कभी उसे देख पाता हो । कभी-कभी बड़ा सम्पन्न व्यक्ति भी बहुत श्रमपूर्वक खोज करने पर भी उसे नहीं पाता । हे सुमुखी ! हे सुन्दरी ! तुम यह जान लो कि दशरथनन्दन से तुम्हारा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा । वह न किसी पर अनुरक्त है, न किसी गुण के अधीन है । चाहे तुम सदा सुदृढ़ उसका आलिंगन करती रहो, चाहे बिल्कुल निकट रहकर उसकी परिचर्या करो और चाहे तुम अपने

तव गुण समुदयमलिवोंटु भुजिक्किलुं तात्परियं तन्निलिल्लवने-तुमे । १० शरणमवनोरुवरुमोरिक्कलुमिल्लिनि शक्ति विहीनन् वरिकयुमिल्लल्लो; किमपिनहि भवति करणीयं भवतियाल् कीर्त्तिहीनन् कृतघ्नन् तुलों निर्म्ममन्; मदरहित-नऌियरुतु करुतुमळवाक्कुमे मानहीनन् प्रिये ! पण्डित मानवन् । निखिल वनचर निवहमद्ध्यस्थितन् भृशं निष्किञ्चन प्रियन् भेदहीनात्ममन् । श्वपचनुमोरवनि सुरवरनुमवनोक्कुमि श्वाक्कळुं गोक्कळुं भेदमिल्लेतुमे। भवतियेयुमोरु शबर तरुणियेयुमात्मना पार्त्तु कण्टालवनिल्ल भेदं प्रिये ! भवतियेयुमकतळिरिलवनिह मऌन्नितु भर्त्ताविनेप्पार्त्तिरुन्नतिनि मति; त्वयि विमुखनवननिशमतिनु नहि संशयं त्वद्दास दासोहमद्य भजस्वमां । करगतमोरमल मणिवरमुटनुपेक्षिच्चु काचत्तेयेन्तु कांक्षिक्कुन्नितोमले ! सुरदितिज दनुज भुजगाप्सरो गन्धर्व सुन्दरी वर्ग्गं परिचरिक्कुं मुदा । २० नियतमति भय सहितममित बहुमानेन नी मल्परिग्रहमाय

समस्त गुण उसके उपभोगार्थ अर्पित करती रहो, इतना निश्चित है कि उसके मन में तुम्हारे प्रति बिलकुल अनुराग नहीं है । १० हे सीते ! यह समझ लो कि उसका कभी कोई सहायक नहीं होता । वह इतना दुर्बल है कि (समुद्र पार कर) वह यहाँ नहीं आ पाएगा । अब उसकी स्मृति में तुम्हें कुछ करने का नहीं है । वह मर्यादाहीन, कृतघ्न और निरा निर्भय व्यक्ति है । वह मदरहित, किसी के प्रति ममताहीन, स्वयं मानहीन पण्डित मानव है । वह निखिल वनचरों के मध्य रहनेवाला, बिलकुल निस्पृह एवं सर्वसंग परित्यागी है । उसके मन में किसी के प्रति भेदभाव नहीं है । उसकी दृष्टि में श्वपच (चण्डाल) एवं अवनि सुरवर (उत्तम ब्राह्मण) समान हैं । वह श्वान (कुत्ता) और गाय में अन्तर नहीं समझता । तुममें और शबर तरुणी में वह कोई भेद नहीं ढूंढ़ पाता, उसकी दृष्टि में दोनों समान हैं । क्या तुम ऐसे पति की प्रतीक्षा में अब भी बैठी हो ? तुम उसकी प्रतीक्षा करना छोड़ दो । इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह तुम्हें भूल चुका है या वह तुमसे विमुख हो गया है । मैं तुम्हारे सेवक का सेवक हूँ । तुम आज से मेरा भजन करो । हस्तगत अमलरत्न को ठुकराकर हे प्रिये ! तुम काँच की क्यों काँक्षा रखती हो ? (मेरी स्वामिनी बनने पर) सुर, असुर, नग, अप्सरस् एवं नाग जाति की सुन्दरियाँ सदा तुम्हारी परिचर्या करती रहेंगी । २० अगर तुम मेरी परिग्रहीता बनोगी तो निश्चित है, तुम्हें बहुत ही मान-सम्मान प्राप्त होगा

मरुवीटुकिल् । कळयरुतु समयमिह चेरुतु वेरुते मम कान्ते !
कळत्रमाय् वाऴ्क नी सन्ततं । कळमोऴिकळ् पलरुमिह विटु
पणिकळ् चेय्युमक्कालनुं पेटियुण्टेन्ने मनोहरे ! पुरुष गुणमिह
मनसि करुतु पुरुहूतनाल् पूज्यनां पुण्यपुमानेन्नरिक मां ।
सरसमनुसर सदय मयि तव वशानुगं सौजन्य सौभाग्य सार
सर्वस्वमे ! सरसिरुहमुखि ! चरणकमल पतितोस्म्यहं सन्ततं
पाहिमां पाहिमां पाहिमां । विविधमिति दशवदननुसरण पूर्वकं
वीणु तोऴुतपेक्षिच्चोरनन्तरं जनकजयुमवनोटतिनिटयिलोरु
पुल्कोटि जातरोषं नुळ्ळियिट्टु चोल्लीटिनाळ्—सवितृ कुल
तिलकनिलतीव भीत्या भवान् संन्यासियाय्वन्निरुवरुं काणाते
सभयमति विनयमोटाशु नी वह्विरद्धवरे साहसत्तोटुमां कट्टु
कोण्टीलयो ? ३० दशवदन ! सुदृढमनुचित मितु निनयक्क
नी तल्फलं नीताननुभविक्कुं द्रुतं । दशरथजनिशित
शरदलित वपुषा भवान् देहं विना यमलोकं प्रवेशिक्कुं
रघुजननतिलकनोरु मनुजनिति मानसे राक्षसराज ! निनक्कु

और लोग तुमसे भयभीत हो इच्छानुवर्त्ती रहेंगे । अब तुम यह सुअवस
हाथ से जाने मत दो । हे मेरी प्रिये ! तुम निरंतर मेरी भार्या बन सु
लूटती रहो । मृदुभाषिणियाँ घर-काज देखती रहेंगी । हे मनोहरी
स्वयं काल भी मुझसे डरते रहते हैं । तुम मेरी वीरता एवं पौरुष पर ध्या
दो । साक्षात् इन्द्र से भी पूजित मैं पुण्यात्मा हूँ । हे दयावती,
सौजन्यशीले ! हे सौभाग्यवती ! मुझे अपने में अनुरक्त सरसगुणशील व्यि
मान लो । हे सरसीरुह (कमल) मुखी ! मैं तुम्हारे चरण-सरसिजों प
प्रणाम करता हूँ । सदा मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो ।" इस प्रका
चरणों पर पड़कर रावण के द्वारा कई विनयपूर्ण मिन्नतें की जाने प
जनकजा (सीता) ने क्रोधातुर हो पास ही खड़े एक तिनके को नोचते हु
उस अधम से इस प्रकार कहा—"अगर तुम इतने शूरवीर साहसी थे
सूर्यकुल के लिए तिलक स्वरूप राम से भयभीत हो संन्यासी वेष में आक
दोनों (राम-लक्ष्मण) की अनुपस्थिति में मुझे क्यों चुरा ले आये ? इस
तुम्हारी वीरता स्पष्ट हो चुकी है । ३० हे दशवदन ! तुम अपनी इ
करनी को अनुचित जान लो और तुरन्त ही तुम उसका फल भोगोगे
दथरथात्मज के तीखे बाणों से तुम्हारा शरीर बिध होगा और तुम बि
शरीर के यमलोक में पहुँचोगे । हे मूर्ख राक्षसराज ! तुम सम्भव
समझते होगे कि रघुकुल के तिलक राम एक साधारण मानव हैं । इस

तोट़ं बलाल् । लवण जलनिधियैं रघुकुल तिलकनश्रमं लंघनं चैय्युमतिनिल्ल संशयं । लव समयमोट्टु निशित विशिख परिपातेन लङ्कयुं भस्ममाक्कीट्टुमरक्षणाल् । सहजसुत सचिव-बल पतिकळोटु कूटवे सन्नमां त्रिन्नुटे सैन्यवुं निर्णयं । अवनवन निपुण भरनवनिभरनाशनन् अद्यधातावपेक्षिच्चतु कारणं अवतरणमवनितलमतिलति दयापरनाशु चैय्तीटिनान् त्रिन्नेयोट्टुक्कुवान् । जनक नृपनु मकळाय्प्पिरन्नेनहं चेम्मेयतिनोरु कारण भूतयाय् । अद्रिक तव मनसि पुनरिनि विरविनोटु वन्नाशुमां कोण्टुपों त्रिन्नेयुं कोन्नवन् । ४० इति मिथिल नृपति मकळ् परुष वचनङ्ङळ् केट्टेट़वुं क्रुद्धनायोरु दशाननन् अति चपलकर भुवि कराळं करवाळुमाशु भूपुत्रियेक्कोल्लुवा-नोङ्ङिनान् । अतुपोळुतिलति करुणयोटुमयतनूजयुमात्म भर्त्तारं पिटिच्चटक्कीटिनाळ् । ओळिकोळिक दशवदन ! शृणु मम वचो भवानोल्लात कार्य्यमोरायक मूढ प्रभो ! त्यज मनुज तरुणियेयोरुटयवरुमेन्निये दीनयाय् दुःखिच्चतीव कृशांगियाय्, पति विरह परवशतयोटुमिहपरालये पार्त्तु पातिव्रत्यमालंब्य राघवं पकलिरवु निशिचरिकळ् परुष वचनं

कोई सन्देह नहीं है कि रघुकुल-भूषण लवण समुद्र को अनायास ही पार करेंगे। क्षणभर उनके चोखे बाणों से लंका भस्म हो जाएगी तथा सहोदर, सुत, बलाधिपति सब के साथ तुम्हारी सेना और तुम समाप्त हो जाओगे। रक्षा करने में समर्थ तथा अवनि के अधर्म का संहार करने में दक्ष दयापर साक्षात् महाविष्णु ही धाता की प्रार्थना पर तुम्हारा संहार करने के लिए पृथ्वी पर राम के रूप में अवतार लिये हुए हैं। इसके कारण बनकर मैं भी जनकराज की पुत्री के रूप में जन्म ले चुकी हूँ। तुम यह भली-भाँति समझ लो कि वे तुरन्त ही यहाँ आकर तुम्हारा वध करके मुझे ले चलेंगे।" ४० मैथिली के इस प्रकार के परुष वचन सुनकर क्रुद्ध दशानन ने भूसुता को मारने के लिए अपने चंचल करतल में कराल खड्ग उठा लिया और उनकी ओर लपक पड़ा। यह देख अतीव करुणा पूरित मय-तनूजा (मन्दोदरी) ने अपने पति का हाथ पकड़कर उसे रोक लिया और कहा—"हे दशवदन ! हे मूर्ख मेरे स्वामी ! तुम छोड़ दो, छोड़ दो। तुम मेरी बात सुनो। अविहित कार्य करना मूर्खता है। इस मानवी को छोड़ दो, जो अनाथ एवं दीन-दुखी हो अत्यन्त कृशांगी हो चुकी है। यह इस अपरालय (दूसरे के घर) में पति-विरह से पीड़ित हो अपने पातिव्रत्य

केट्टु पारं वशंकेट्टिटरिक्कुन्नतुमिवळ्। दुरितमतिलधिक
मिह नहि नहि सुदुर्म्मते ! दुष्कीर्त्ति चेरुमो वीर्य्यपुंसां विभो !
सुरदनुजदितिज भुजगाप्सरो गन्धर्व सुन्दरी वर्ग्गं निनक्कु वशगतं
दशमुखनुमधिक जळनाशु मण्डोदरी दाक्षिण्य वाक्कुकळ् केट्
सलज्जनाय्। ५० निशिचरिकळोटु सदयमवनुमुर चेय्ति
निङ्ङळ् परञ्ञु वशत्तु वरुत्तुविन्। भयजनन वच
मनुसरण वचनङ्ङळुं भाव विकारङ्ङळ् कोण्टुं बहुवि
अवनिमकळकतळिरळिच्चेङ्कलाक्कुविनन्पोटु रण्टुमासं पार्प्पनिनियुं
इति रजनिचरिकळोटु दशवदननुं परञ्ञीर्ष्ययोटन्तःपु
पुक्कुमेविनान्। अति कठिन परुषतर वचन शरमेल्क्कयालात्मा
भेदिच्चिरुन्नितु सीतयुं। अनुचितमितलमलमटङ्ङुवि
निङ्ङळेन्तप्पोळ् त्रिजटयुमाशु चोल्लिनाळ्। शृणु वच
मितु मम निशाचर स्त्रीकळे ! शीलवतियें नमस्करिच्चीटुविन्
सुखरहित हृदयमोटुरङ्ङिनेनोट्टु ञान् स्वप्नमाहन्त! कण्टेनिदान
दृढ़ं। अखिल जगदधिपनभिरामनां रामनुमैरावतोप

का पालन करती आ रही है। दिन भर यह निशाचरियों के परुष ए
कठोर वचन सुन-सुनकर तंग आ गयी है। हे दुर्बुद्धि ! नारीवध के समा
दूसरा पाप नहीं है। हे स्वामी ! वीर पुरुषों को अपकीर्ति से बचे रहन
चाहिए। आपके लिए स्त्रियों की क्या कमी है? सुर, दनुज, राक्ष
नाग, अप्सरस् एवं गन्धर्व जाति की कोमलांगी सुन्दरियाँ आपके वश
हैं।" मूढ़ दशानन मन्दोदरी की सहानुभूतिपूर्ण ये बातें सुनकर लज्जित
उठा। ५० और उसने निशाचरियों से कहा—"तुम लोग उदारतापूर्व
इसे समझा-बुझाकर मेरे अनुकूल में कर लो। नाना प्रकार के भय-जन
वचनों, सहानुभूतिपूर्ण वचनों तथा भावचेष्टाओं से भू-सुता का हृदय मे
ओर आकृष्ट करा लो, मैं और दो मास तक प्रतीक्षा करूँगा।" रजनी
चरियों को इस प्रकार समझाने के उपरान्त क्रोधातुर रावण अपने राजमह
में चला गया। अतीव कठोर परुषपूर्ण दुर्वचन रूपी बाणों से बिध हृद
लिये सीता वहीं बैठी रहीं। रावण के आदेश पर जब राक्षस-नारियों
परुषवचनों से सीता को तंग करना आरम्भ किया तब त्रिजटा ने उन
डाँटते हुए कहा—"हे राक्षस-नारियो ! तुम अपने दुर्वचन बस करो। तु
अपने इस कार्य से बाज आओ। हे नारियो ! तुम लोग इस शीलवती क
प्रणाम करो और मेरी बात सुनो। (रावण के परुषवचन सुनकर) दुख
हृदय लिये जब मैं सो रही थी तब मैंने एक स्वप्न देखा कि अखिल जग

लक्ष्मण वीरनुं शर निकर परिपतन दहनकण जालेन शङ्का विहीनं दहिप्पिच्चु लङ्कयुं; ६० रण शिरसि दशमुखनें निग्रहिच्चश्रमं राक्षस राज्यं विभीषणनुं नल्कि; महिषियेयुमळकि नोंटु मटियिल् वच्चादराल् मानिच्चु चेन्नयोद्धयापुरं मेविनान्। कुलिश धर रिपु दशमुखन् नग्नरूपियाय् गोमयमाय महाह्रदं तन्निले तिल रसवुमुटल् मुळुवनलिविनोंटणञ्ञुटन् धृत्वा नळद माल्यं निज मूर्द्धनि निज सहज सचिव सुत सैन्य समेतनाय निम्मग्ननाय्क्कण्टु विस्मयं तेटिनेन्। रजनिचर कुलपति विभीषणन् भक्तनाय् राम पादाब्जवुं सेविच्चु मेविनान्। कलुषतकळ् कळविनिह राक्षस स्त्रीकळे! कण्टुकोळ्ळामितु सत्यमत्रे दृढं। करुणयोंटु वयमतिनु कतिपय दिनं मुदा कात्तु कोळ्ळेणमिवळे निरामयं। रजनिचर युवतिकळिति त्रिजटा वचोरीति केट्टत्भुतभीति पूण्टीटिनार्। मनसि परवशतयोंटुरङ्ङिनारेवरुं मानसे दुःखं कलर्न्नु वैदेहियुं। ७० उषसि निशिचरिकळिवरुटलु मम भक्षिक्कुमुट्वरा-यिट्टोरुत्तरुमिल्ल मे। मरणमिह वरुवतिनुमोरु कळिवु कण्टील मानव वीरनुमेन्नें मऽन्नितु; कळवनिह विरविनोंटु

के स्वामी सुकुमार राम और वीर लक्ष्मण ऐरावत पर चढ़कर यहाँ आये और बाणाग्नि में अनायास ही लंकापुरी जला दी—६० —और युद्धक्षेत्र में रावण को मारकर लंका का राज्य विभीषण को प्रदान किया। सीता को गोदी में बिठाकर और खूब आश्लेष करके सुखपूर्वक अयोध्या में ले चले। इन्द्र-शत्रु रावण अपने चोटों से आहत नग्न शरीर में खूब तेल लगाकर और गले में नलदमाल्य धारण किये, अपने भाई, मन्त्री, मित्र, पुत्र, सैन्य वर्ग सबके साथ गोमय महाह्रद में जा डूबे। मुझे यह देख बड़ा विस्मय हुआ। रामभक्त लंकाधीश विभीषण राम के चरण-कमलों की सेवा में लग गये। हे राक्षसियो! तुम अपना पाप कर्म त्याग दो। यह मेरा स्वप्न निश्चय ही सत्य निकलेगा। इसलिए हमें और थोड़े दिन तक सहानुभूति एवं करुणा सहित इसकी देखभाल करते रहना चाहिए।" त्रिजटा का कथन सुनकर राक्षस-युवतियाँ अतीव आश्चर्य एवं भय से ओतप्रोत हो गयीं और दुखी एवं खिन्न हो वे सब की सब सो गयीं। वैदेही (सीता) मन ही मन दुखी हो उठीं। ७० वे मन ही मन कहने लगीं—"हे भगवान! उषाकाल में ये राक्षसियाँ मुझे शरीर से खा लेंगी और मेरी रक्षा करने के लिए यहाँ अपना कोई सगे-सम्बन्धी भी नहीं हैं। किसी तरह मरना चाहूँ तो उसके

जीवनमद्य ञान् काकुल्स्थनुं करुणाहीननेत्रयुं; मनसि मुहुरिव पलतुमोर्त्तु सन्तापेन मन्दमन्दमेऴुन्नेट्टु तिन्नाकुलाल् तरळतर हृदयमोटु भर्त्तारमोर्त्तोर्त्तु ताणु किटन्नोरु शिंशपा शाखयुं सभय परवश तरळमालंब्य बाष्पवुं सन्ततं वार्त्तु विलापं तुटङ्ङिनाळ् । पवनसुतनिवपलवुमालोक्य मानसे पार्त्तु पतुक्के पऱञ्ञु तुटङ्ङिनान्–जगदमल नयनवर गोत्रे दशरथन् जातनायानवन् पुत्रराय् रतिरमण तुल्यराय् नालु पेरुण्टितु राम भरत सौमित्रि शत्रुघ्नन्मार्; रजनिचर कुल निधन हेतु भूतन् पितुराज्ञया काननं तन्निल् वाणीटिनान्; ८० जनक नृप सुतयुमवरजनुमाय् सादरं जानकी देवियेत्तत्र दशानन् कपटयति वेषमाय्क्कट्टु कोण्टीटिनान् काणाञ्ञु दुःखिच्चु रामनुं तम्पियुं विपिन भुवि विरवोटु तिरञ्ञु नटक्कुम्पोळ् वीणुकिटक्कुं जटायुविनेक्कण्टु । परमगति पुनरवनु नल्कियम्मात्यवल् पर्वत पार्श्वे नटक्कुं विधौ तदा तरणि सुतनोटु सपदि सख्यवुं चेय्तितु सत्वरं कोन्नितु शक्रसुतनेयुं ।

लिए भी कोई रास्ता नहीं सूझ रहा है। मानववीर (राम) मुझे विस्मृत कर बैठे हैं। ' उनके मन में मेरे प्रति करुणा नहीं रही। अब मैं क्यों जीवित रहूँ। अतः मैं अपने जीवन का अन्त कर दूँगी।" फिर मन में अत्यन्त विषाद के साथ मन्द-मन्द उठकर खड़ी हो गयी और करुणापूरित हृदय से अपने पति का स्मरण करती हुई, भूख-प्यास के कारण हाँथ-पाँव थर-थर काँपती हुई सीता ने शिंशपा वृक्ष की एक अवनत शाखा का अवलंब लिया तथा अश्रु की अजस्र धारा बहाती हुई विलाप करने लगीं। सीता के इस विरह-ताप को देख मन ही मन यह सोचकर कि अब मौन रहना उचित नहीं, पवनसुत कहने लगे—"संसार के लिए नेत्रस्वरूप श्रेष्ठ सूर्यवंश में दशरथ नाम के राजा पैदा हुए थे और उनके पुत्र रूप में रतिरमण (कामदेव) तुल्य राम, भरत, सौमित्र और शत्रुघ्न नाम के चार कुमार पैदा हुए। राक्षसवंश का नाश करने के लिए अवतीर्ण उनमें से प्रथम पुत्र राम पिता की आज्ञा से अपने भ्राता तथा भार्या सहित वन में आ बसे। ८० इस प्रकार जनकात्मजा तथा भ्राता के साथ राम के वन में रहते समय दशानन रावण कपट यतिवेष में आकर जनकात्मजा को चुरा ले गया। सीता को कहीं न पाकर उन्हीं की खोज में भ्राता-सहित वन-वन घूमते समय जटायु से राम की भेंट हुई। उसे चरमगति प्रदान करने के उपरान्त माल्यवान् पर्वत की घाटियों पर चलते समय उनकी सूर्यतनय (सुग्रीव)

तरणितनयनुमथ कपीन्द्रनाय्वन्नितु तल् प्रत्युपकारमाशु सुग्रीवनुं कपिवररें विरविनोंटु त्तालु दिक्किङ्कलुं कण्टु वरुवान-यच्चोरनन्तरं; पुनरवरिलोरुवनहमत्र वन्नीटिनेन् पुण्यवानाय सम्पातितन् वाक्किनाल् । जलनिधियुमोरु शतक योजना विस्तृतं चेम्मे कुतिच्चु चाटिक्कटन्नीटिनेन् । रजनिचर पुरियिल् मुळुवन् तिरञ्ञेनहं रात्रियिलत्र तातानुग्रहवशाल् । ९० तरु निकरवरनरिय शिंशपा वृक्षवुं तन्मूल देशे भवतियेयुं मुदा कनिविनोंटु कण्टु कृतार्त्थनायेनहं कामलाभाल् कृतकृत्यनायीटिनेन् । भगवदनुचररिलहमग्रेसरन् मम भाग्यमहो ! मम भाग्यं नमोस्तुते । प्लवगकुलवरनिति परञ्ञटङ्ङीटिनान् पिन्नेयिळकातिरुन्नान-रक्षणं । किमिति रघुकुलवर चरित्रं क्रमेणमे कीर्त्तिच्चिताकाश मार्ग्गे मनोहरं ? पवननुरुकृपयोटु परञ्ञु केळ्प्पिक्कयो ? पापियामेन्नुटे मानस भ्रान्तियो ? सुचिरतर मोरु पोळुतुरङ्ङातें ञानिह स्वप्नमो काण्मानवकाशमिल्लल्लो । सरसतरपति चरितमाशु कर्ण्णामृतं सत्यमाय्वन्नितावू मम दैवमे ! ओरु

भेंट और सख्य-स्थापना हुई । राम ने तुरन्त ही सुग्रीव की रक्षा के लिए शक्रसुत (बालि) की हत्या की तो सूर्यतनय सुग्रीव ने अपने कपिवरों सहित राम का प्रत्युपकार करना चाहा । उन्होंने कपिवरों को (सीतान्वेषण के लिए) चारों दिशाओं में भेज दिया, जिनमें से एक मैं पुण्यात्मा सम्पाती के उपदेशानुसार यहाँ आ पहुँचा हूँ । मैंने बीच के शत योजन समुद्र को कूद-कर लाँघ दिया । रात के समय रात्रिचरों की इस समस्त नगरी में मैं देवी को खोजता फिरता रहा । अन्त में अपने पिता (वायु) के अनुग्रह से—९० यह उपवन, यह उन्नत शिंशपा वृक्ष और उसके तले विराजमान देवी को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । अपने अभीष्ट की सिद्धि से मैं आज कृतार्थ हुआ, देवी का दर्शन पाकर मैं अपने को चरितार्थ मानता हूँ । भगवद् सेवकों में मैं अग्रेसर हूँ । मेरा बड़ा सौभाग्य है, मेरा बड़ा सौभाग्य है । देवी ! आपको नमस्कार करता हूँ ।" प्लवगकुलवर (वानरश्रेष्ठ) ने यह कह थोड़ी देर तक मौन साध लिया । हनुमान के मुँह से क्रमबद्ध राम-कथा सुनकर सीता मन में सोचने लगीं—"यह क्या है ? रघुकुल श्रेष्ठ राम का मनोहर चरित क्रम से आकाश मार्ग से सुना दिया गया । क्या पवनदेव कृपावश मुझे सुना रहे हैं ? या इस उन्मादिनी की यह भ्रान्ति है ? कई दिनों से जागरण करते मेरा स्वप्न देखना तो असम्भव है । हे भगवान ! मेरा सुना यह सरस एवं कर्णामृत तुल्य पति का चरित सत्य

पुरुषनितु मम पऱञ्ञुवेन्नाकिलत्युत्तमन् मुम्मिल् मे काणाय्-
वरेणमे। जनक नृप दुहिनृ वचनं केट्टु मारुति जातमोदं
मन्द मन्दमिऱङ्ङिनान्। १०० विनयमोटुमवनि मकळ्
चरण नळिनान्तिके वीणु नमस्करिच्चान् भक्ति पूर्वकं। तोळुतु
चेरुतकलेयवनाशु निन्नीटिनान् तुष्ट्याकलपिंग तुल्य शरीरनाय्।
इविटे निशिचरपति वलीमुख वेषमायेन्ने मोहिप्पिप्पतिन्नु
वरिकयो शिव शिव! किमिति करुति मिथिल नृपपुत्रियु
चेतसि भीति कलर्न्नु मरुविनाळ्। कुसृति दशमुखनु परुतेन्नु
निरूपिच्चु कुम्पिट्टिरुन्नतु कण्टु कपीन्द्रनुं शरणमिह चरण
सरसिजमखिल नायिके! शङ्किक्क वेण्टा कुऱञ्ञोन्नुमेन्ने न्नी।
तव सचिवनहमिह तथाविधनल्लहो! दासोस्मि कोसलेन्द्रस्य
रामस्य ञान्। सुमुखि कपि कुल तिलकनाय सूर्य्यात्मजन्
सुग्रीव भृत्यन् जगल् प्राण नन्दनन् कपटमोरुवरोटुमोरु
पोळुतु मऱियुन्नील कर्म्मणा वाचा मनसापि मातावे! पवनसुत
मधुरतर वचनमतु केट्टुटन् पत्मालयादेवि चोदिच्चि-
तादराल्—११० ऋतुमृजु मृदुस्फुट वर्ण्ण वाक्यं तेळिञ्ञिङ्ङने

निकले! अगर किसी उत्तम पुरुष ने यह चरित्र मुझे सुनाया हो तो मेरे नेत्रों के सम्मुख आ जाए। जनक नृप की दुहिता (सीता) का यह वचन सुनकर प्रसन्न चित्त मारुति धीरे-धीरे नीचे उतरे। १०० और विनय एवं भक्ति सहित भूसुता के चरण-कमल के आगे गिर पड़कर नमस्कार किया तथा हाथ जोड़ प्रणाम करके थोड़ी दूर हटकर सानन्द एवं कलपिंग तुल्य शरीरी हो खड़े हो गये। हनुमान को देखकर सीता ने सन्देह व्यक्त किया; "क्या निशाचर राजा ही मुझे छलने के लिए वानर-वेष में आया है? शिव! शिव! यह क्या हो रहा है?" यह सोच मैथिली मन में भयाकुल हो उठी। रावण का छल समझकर हाथ जोड़ आनतमुख बैठी सीता को देख कपिश्रेष्ठ ने बताया—"हे जगदीश्वरी! मेरे लिए आपके चरण-सरोजों की ही शरण है। आप मुझपर सन्देह न करें। मैं आपका सेवक मात्र हूँ, कोई कपटवेषधारी नहीं। मैं अयोध्याधिपति राम का दास हूँ। हे सुमुखी! मैं कपिकुल तिलक सूर्यात्मज सुग्रीव का दास हूँ और जगत्-प्राण (वायु) का पुत्र हूँ। हे माता! मैं मन, वचन या कर्म से छल करना नहीं जान पाया हूँ।" पवनसुत की सुमधुर वाणी सुनकर देवी पद्मालया ने सानन्द उनसे पूछा—११० "तुम्हारे समान सत्य, कपटरहित, मृदुल एवं स्पष्ट वर्णों से युक्त वाक्य कहनेवाले कम मिलते हैं। तुम मुझे यह बता दो

चोल्लुन्नवर् कुरयुं तुलों; सदयमिह वदमनुज वानर जातिकळ् तङ्ङळिल् संगति संभविच्चीटुवान् कलितरुचि गहनभुवि कारणमेन्तॆटो ! कारुण्य वारान्निधे ! कपिकुञ्जर ! तिरुमनसि भवति पेरिकॆ प्रेममुण्टॆन्नतॆन्नोटु चोन्नतिन् मूलवुं चोल्लु नी। शृणु सुमुखि ! निखिलमखिलेश वृत्तान्तवुं श्रीरामदेवनाण सत्यमोमले ! भवति पति वचनमवलंब्य रण्टंगमायाश्रयाशङ्कलु माश्रमत्तिङ्कलुं मरुविनतु पोळुतिलोरु कनकमृगमालोक्य मानिनु पिम्पे नटन्नु रघुपति; निशिततर विशिख गण चापवुमाय्च्चॆन्नु नीचनां मारीचनॆक्कॊन्नु राघवन्। उटनुटलु पुलयमुहुरुटज भुवि वन्नपोतुण्टाय वृत्तान्तमो परयावतो ? उटनविटॆयविटॆयटवियिलिटयॆ नोक्कियुमोट्टु करञ्ञु तिरञ्ञळलुं विधौ १२० गहनभुवि गगन चरपति गरुड सन्निभन् केणुकिटक्कुं जटायुविनॆक्कण्टु। अवनुमथ तव चरितमखिल-मरियिच्चळवाशु कॊटुत्तितु मुक्ति पक्षीन्द्रनुं। पुनरट विकळिलवरजेन साकं द्रुतं पुक्कु तिरञ्ञु कबन्धगति नल्कि;

कि घोर कानन प्रदेश में मानव (राम) तथा कपि (सुग्रीव) में मित्रता कैसे सम्भव हुई ? हे करुणानिधि ! हे कपिश्रेष्ठ ! तुमने यह जो सुनाया कि तुम भगवान् राम के अत्यन्त कृपापात्र हो, उसका भी कारण समझा दो।" सीता के ये प्रश्न सुनकर हनुमान ने बताया—"हे सुन्दरी ! सुनिये। मैं रामचरित आपको सविस्तार सुनाऊँगा। हे पावनांगी ! राम की सौगन्ध है, मेरा कथन पूर्णतया सत्य है, इसमें लेशमात्र भी छल नहीं है। पति के आदेश के अनुसार जब आप अग्निमण्डल में छिप गयीं और केवल माया सीता ही आश्रम में बैठी थी तब एक छली कनकमृग को सामने देख-कर उसे पकड़ लाने के लिए राम उसके पीछे-पीछे चले और नीच मारीच को राम ने अपने उग्र एवं तीक्ष्ण बाणों से मार गिराया, फिर तुरन्त ही उटज (आश्रम) में आने पर वहाँ शरीर को विकंपित करती जो घटना घटी, उसके बारे में क्या कहा जाए ! वहाँ सीता को न पाकर बिलखते, पुकारते इधर-उधर अन्धाधुन्ध खोजते, कानन प्रदेश में भटकते हुए—१२० —घोर कानन में एक जगह गरुड़ के समान भयंकर आकारवाले, पंखविहीन होने से दुखी जटायु को देखा। उसने आपका पूरा समाचार राम को कह सुनाया और राम ने पक्षीन्द्र को मुक्ति प्रदान की। फिर भ्राता सहित वन में आपका अन्वेषण करते जाते समय कबन्ध को चरमगति दी, शान्तचित्त भगवान ने शबरी के निवास-योग्य आश्रम में स्वयं पहुँचकर उसे मुक्ति दी।

शबरि मरुविन मुनिवराश्रमे चॆन्नुटन् शान्तात्मकन् मुक्तियुं कॊटुत्तीटिनान् । अथ शबरि विमल वचनेन पोन्नृश्यमूकाद्रि प्रवर पार्श्वे नटक्कुं विधौ तरणि सुतनिरुवरॆयुमळकिनॊटु कण्टति तात्पर्यमुळ्क्कॊण्टयच्चितॆन्नॆत्तदा; बत ! रविकुलोत्भवन्मारुटॆ सन्निधौ ब्रह्मचारी वेषमालंब्य चॆन्नु ञान्; नृपति कुलवर हृदयमखिलवुमरिञ्ञति निर्म्मलन्मारॆच्चुमलिलॆटुत्तुटन् तरणि सुत निकट भुवि कॊण्टु चॆन्नीटिनेन् सख्यं परस्परं चॆय्यिच्चिताशु ञान् । दहननॆयुमळकिनॊटु साक्षियाक्किक्कॊण्टु दण्डमिरुवक्कुं माशु तीर्त्तीटुवान् १३० तपनसुत गृहिणियॆ बलालटक्किक्कॊण्टु तारापतियॆ वधिच्चु रघुवरन् । दिवसकर तनयनु कॊटुत्तितु राज्यवुं देवियॆयाराञ्ञु काण्मान् कपीन्द्रनुं प्लवग कुल परिवृढरॆ नालुदिक्किङ्कलुं प्रत्येकमेकैक लक्षं नियोगिच्चान् । अतुपॊळुतु रघुपतियुमलिवॊटरिकॆ विळिच्चंगुलीयं मम कैय्यिल नल्कीटिनान् । इतु जनक नृपति मकळ् कैय्यिल् कॊटुक्क नी ऎन्नुटॆ नामाक्षरान्वितं पिन्नॆयुं सपदि तव मनसि गुरु विश्वास सिद्धये सादरं चॊन्नानटयाळ वाक्यवुं । अनु भवति कर तळिरिलिनि विरविल् नल्कुवनालोक यालोकयानन्द पूर्वकं । इति मधुरतर

शबरी का विमल उपदेश लेकर ऋष्यमूक पर्वत के पार्श्व भाग से चलते समय तरणी-तनूज (सूर्य-पुत्र सुग्रीव) को, उन्हें देख विशेष आकर्षण हुआ और उन्हें लिवा ले चलने के लिए मुझे भेजा । फिर मैं एक ब्रह्मचारी के वेष में सूर्यकुलोत्पन्न राम-लक्ष्मण के पास पहुँचा और राजकुमारों के मन को पहचान लिया । उन्हें अपने कन्धों पर बिठाकर सुग्रीव के पास ले चला और वहीं पर मैंने दोनों के दु:ख को दूर करने के उद्देश्य से अग्नि को साक्षी बनाकर उनमें परस्पर सख्य कराया । १३० तपनसुत (सुग्रीव) की गृहिणी को बलात् अपनी पत्नी बनाकर सुखपूर्वक रहनेवाले तारापति (बालि) को श्रीराम ने मारा और दिनकर-पुत्र (सुग्रीव) को राज्य दिया। (प्रत्युपकार के रूप में) कपीन्द्र (सुग्रीव) ने देवी का अन्वेषण करने के निमित्त प्रत्येक दिशा में एक-एक लाख वानरवीरों को भेज दिया । यह देखकर श्रीरामजी ने मुझे अपने पास बुलाकर अपना अंगुलीय मेरे हाथ में सौंप दिया और कहा कि मेरा नामांकित यह अंगुलीय तुम जनकात्मजा के हाथ में दे दो । फिर तुरन्त ही आपके मन में विश्वास दिलाने के लिए सानन्द सन्देश-वचन भी कह सुनाये । हे देवी ! मैं अब यह अंगुलीय आपके कर-सरोज में अर्पित करता हूँ, आप सानन्द इसे देख लें ।" इस

मनिल तनयनुर चेय्तुटनिन्दिरादेवि तन् कैय्यिल् नल्कीटिनान्। पुनरधिक विनयमोटु तोळुतु तोळुतादराल्पिन्नोक्किल् वाङ्ङि वणङ्ङिनिन्नीटिनान्। मिथिल नृप सुतयुमतु कण्टति प्रीतयाय् मेन्मेलोळुकुमानन्द बाष्पाकुलाल् १४० रमण मिवनिज शिरसि कनिविनोटु चेर्त्तितु रामनामाङ्कितांगुलीयं मुदा। प्लवग कुल परिवृढ महामतिमान् भवान् प्राणदाता मम प्रीतिकारी दृढं; भगवति परमात्मनि श्रीनिधौ राघवे भक्तनतीव विश्वास्यन् दयापरन्। पलगुणवुमुटयवरेयोळिके मट्टारेयुं भर्त्तावयय्कयुमिल्ल मत्सन्निधौ। मम सुखवुमनुदिन मिरिक्कुं प्रकारवुं मल्परितापवुं कण्टु वल्लो भवान्। कमल दल नयननकतळिरिलिनिमां प्रति कारुण्यमुण्टां परिचरियिक्क नी। रजनिचरवरनशनमाक्कुमेन्नेक्कोण्टु रण्टु मासं कळिञ्ञालेन्नु निर्णयं। अतिनिटयिल् वरुवतिनु वेल चेय्तीटु नी अत्र नाळुं प्राणनेद्धरिच्चीटुवन्। त्वरित मिह दशमुखने निग्रहिच्चेन्नुटे दुःखं कळञ्ञु रक्षिक्केन्नु चोल्लु नी। अनिल तनयनुमखिल जननि वचनङ्ङळ् केट्टाकुलं तीरुवानाशु

प्रकार के मधुर वचनों सहित पवनसुत ने (अंगुलीय) इन्दिरादेवी (सीता) के हाथ में रख दिया और बड़े आदर एवं विनय के साथ हाथ जोड़ते हुए पीछे हटकर नमस्कार करते हुए खड़े रह गये। मैथिली ने यह देख अत्यन्त प्रसन्न हो आनन्दाश्रु बहाते हुए,—१४० —राम के नामांकित अंगुलीय के प्रति राम का सा भाव रखते हुए, उसे प्रीतिपूर्वक एवं सविनय अपने मस्तक से लगाया, (और हनुमान से कहा कि) प्लवगकुल में श्रेष्ठ एवं अति बुद्धिमान् तुम निश्चय ही मेरे प्राणदाता एवं प्रियकारी हो। तुम भगवान परमात्मा लक्ष्मीवल्लभ राम के भक्त एवं विश्वासपात्र हो। सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी को वे मेरे पास नहीं भेजेंगे। तुमने मेरा सुख, नित्यप्रति जीवन, मेरा सन्ताप सब कुछ देख लिया है। तुम यह अपना देखा हुआ हाल कमललोचन को कह सुनाओ ताकि उनके हृदय में मेरे प्रति अनुकम्पा जाग्रत हो उठे। दो मास व्यतीत होने पर राक्षसराज मुझे अपना भोजन बना लेगा, यह निश्चित बात है। तुम ऐसी चेष्टा करो कि उसके पूर्व ही राम यहाँ आ जाएँ। मैं तब तक जीवन ढोती रहूँगी। रावण का वध करके जल्दी ही मेरा दुःख-विमोचन एवं रक्षा करने का तुम राम से आग्रह करो।" अनिल-पुत्र ने तुरन्त ही अखिल जननी सीता का दुःख दूर कर आश्वस्त करने के लिए यह

चोल्लीटिनान्—१५० अवनिपति सुतनोटटियन् भवद्-वार्त्तकळङ्ङुणर्त्तिच्चु कूटुन्नतिन् मुन्नमे अवरजनुमखिल कपिकुल बलवुमाय् मुतिर्न्नाशु वरुमतिनिल्लोरु संशयं। सुत सचिव सहज सहितं दशग्रीवने सूर्यात्मजालयत्तिनयक्कुं क्षणाल्। भवतियेयुमति करुणमळकिनोटु वीण्टुत्तिन् भर्त्तावयोद्ध्ययक्के-ळुन्नळ्ळुमादराल्। इति पवनसुत वचन मुटमयोटु केट्ट्-पोतिन्दिरा देवि चोदिच्चरुळिनाळ्। इह वितत जलनिधियें निखिल कपि सेनयोटेतोरु जाति कटन्नु वरुन्नतुं? मनुज परिवृढनितिविचारिच्च न्नेरत्तु मारुति मैथिलियोटु चोल्लीटिनान्—मनुज परिवृढनेयुमवरजनेयुमन्पोटु मट्टुळ्ळ वानर सैन्यत्तेयुं क्षणाल् मम चुमलिल् विरविन्नोटेट्टुत्तु कटत्तुवन् मैथिली! किं विषादं वृथा मानसे? लघुतरममित रजनिचर कुलमशेषेण लङ्कयुं भस्ममाक्कीटुमनाकुलं। १६० द्रुतमतिनु सुतनु! मम देह्यनुज्ञामिनि द्रोहं विना गमिच्चीटुवनोमले! विरह कलुषित मनसि रघुवरनुमां प्रति विश्वासमाशु वन्नीटुवानाय् मुदा तरिक सरभसमोरटयाळवुं वाक्यवुं तावकं चोल्लुवानायरुळ् चेय्यणं। इति पवनतनय वचनेन वैदेहियुमित्तिरि न्नेरं विचारिच्चु मानसे। चिकुर भरमतिल् मरुवुममल चूडामणि

कहा—१५० —"हे माता! अवनिपति (राजा) सुत (राम) से यह समाचार कह सुनाने के पहले ही वे अपने भ्राता एवं कपिकुल सहित यहाँ आएँगे और क्षण भर में दशग्रीव (रावण) को सुत, सचिव, सहोदर और सेना सहित सूर्यात्मजालय (यमपुरी) भेज देंगे, इसमें सन्देह के लिए गुंजाइश नहीं है। देवी को आपके पति फिर सानन्द अयोध्या ले चलेंगे।" इस प्रकार पवनसुत का वचन सुनकर इन्दिरादेवी (सीता) ने पूछा—"हे मारुति! राम कपिसेना सहित इस विशाल सागर को कैसे पार करके आ सकेंगे?" सीता के इस प्रकार प्रश्न करते ही मारुति ने उत्तर दिया—"हे मैथिली! आप व्यर्थ मन में क्यों सन्देह करती हैं? मैं उन्हें अपने कन्धों पर ले समुद्र पार कराऊँगा। हम लोग असंख्य राक्षस वीरों सहित समस्त लंका को अनायास भस्म कर देंगे। १६० यह कार्य सिद्ध करने के लिए हे माता! आप इस अपने पुत्र को जाने की अनुमति प्रदान कीजिए। विरहार्त राम के मन में मेरे यहाँ आगमन के सम्बन्ध में विश्वास दिलाने के लिए आप कोई संकेत वस्तु तथा अपना कोई सन्देश मुझे तुरन्त दीजिए।" मारुति का यह आग्रह सुनकर वैदेही थोड़ी देर मन

चिन्मयि मारुति कैयिल् तल्कीटिनाळ्। श्रृणु तनय ! पुनरीरटयाळ वाक्यं भवान् श्रुत्वाधरिच्चु कर्ण्णे परञ्ञीटु न्नी। सपदि पुनरतु पोळ्ळुतु विश्वास मेन्नुटे भर्त्ताविनुण्टाय् वरुमेन्नु निर्ण्णयं। चिरममित सुखमोटुरु तपसि बहुनिष्ठया चित्रकूटा चलत्तिङ्कल् वाळुं विधौ पललमतु परिचिनोटुणक्कुवान् च्चिक्कि ञान् पार्त्तुं कात्तिरुन्नीटुं दशान्तरे, तिरुमुटियुमळकिनोटु मटियिल् मम वच्चुटन् तीर्त्थपादन् विरवोटुरङ्ङीटिनान्। १७० अतुपोळ्ळुतिलति चपलनाय शक्रात्मजनाशु काकाकृति पूण्टु वन्नीटिनान्। पल पोळ्ळुतु पलल शकलङ्ङळ् कोत्तीटिनान् भक्षिच्चु कोळ्ळुवानेन्नोर्त्तु ञान् तदा परुषतरमुटनुटनेटुत्तेरिञ्ञीटिनेन् पाषाण जालङ्ङळ् कोण्टतु कोण्टवन् वपुषि मम शित चरण नखरतुण्डङ्ङळाल् वाय्पोटु कीरिनानेरेक्कुपितनाय्। परम पुरुषनुमुटनुणर्न्नु नोक्कुं विधौ पारमोलिक्कुन्न चोरकण्टाकुलाल् तृणशकलमति कुपितनायेटुत्तश्रमं दिव्यास्त्र मन्त्रं जपिच्चयच्चीटिनान्। सभयमवनखिल दिशि पाञ्ञु नटन्नितु सङ्कटं तीर्त्तु रक्षिच्चु कोण्टीटुवान्। अमरपति कमलज गिरीश

ही मन सोचती रही और तुरन्त चिन्मयी सीता ने अपने चिकुरभार से चूड़ारत्न निकालकर मारुति के हाथ में दिया और सन्देश-वचन कह सुनाया—"हे तनय ! तुम सुनो। मेरा यह सन्देश स्वयं ध्यान से सुन लो और फिर राम को सुना दो। यह सुनकर तुरन्त ही मेरे पति को तुम पर पूर्ण विश्वास आ जाएगा। जब हम तपस्वियों के जैसे सुखपूर्वक चित्रकूट में रहते आ रहे थे तब एक दिन मैं गजकन्द काटकर उसे धूप में सुखा रही थी। उसे कोई पशु-पक्षी न उठा ले चले, इसकी निगरानी करती बैठी थी। तब अपने सिर मेरी गोदी में रखे तीर्थपाद (राम) सुखपूर्वक सो रहे थे। १७० यह अवसर देख अत्यन्त चपल इन्द्रात्मज (जयन्त) कौए का रूप धारणकर वहाँ आया और कई बार गजकंद के टुकड़े चुग लिये जिसे देखकर मैंने कई कठोर पत्थर उसे मारे। पत्थर की मार से कुपित जयन्त ने मेरे शरीर पर आ बैठकर अपने तीक्ष्ण नखों, चोंचों से नोच-नोचकर मेरा शरीर क्षत-विक्षत कर दिया। परमपुरुष तब नींद से जाग उठे और मेरे शरीर से बहता रक्त देखकर अत्यन्त कुपित हो उठे। दिव्यास्त्र-मंत्र जपकर उन्होंने एक तृण उसकी तरफ फेंक दिया। भयभीत हो वह (जयन्त) अखिल दिशाओं में भागता गया, किन्तु अमरपति (इन्द्र), कमलज (ब्रह्मा), तथा गिरीश (शिव) प्रभृति मुख्यों को भी संकट दूरकर

मुख्यन्माक्कुमावतल्लेन्नयच्चोरवस्थान्तरे रघुतिलकनटि मलरिलवशमोटु वीणितु रक्षिच्चु कोळ्ळेणमेन्नेक्कृपानिधे ! अपरमोरु शरणमिह नहि नहि नमोस्तुते आनन्द मूर्त्ते ! शरणं नमोस्तुते । १८० इति सभयमटिमलरिल् वीणु केणीटिनानिन्द्रात्मजनां जयन्तनुमन्नेरं । सवितृ कुल तिलकनथ सस्मितं चोल्लिनान् सायकं निष्फलमाकयिल्लेन्नुमे । अतिनु तव नयनमतिलोन्नु पोंनिश्चय पन्तरमिल्ल नी पोय्क्कोळ्क निर्भयं । इति सदयमनुदिवसमेन्ने रक्षिच्चवनिन्नुपेक्षिच्चतेन्तेन्नुटे दुष्कृतं ? ओरु पिळ्युमोरु पोळुतिलवनोटु चेय्तील ञानोर्त्तालितेन्नुटे पापमे कारणं । विविधमिति जनक नृप दुहितृ वचनं केट्टु वीरनां मारुतपुत्रनुं चोल्लिनान्—भवति पुनरिविटे मरुवीटुन्नतेतुमे भर्त्ताविरियाय्क कोण्टु वरान्ञतुं; झटिति वरुमिनि निशिचरौघवुं लङ्कयुं शाखामृगावलि भस्ममाक्कुं दृढं । पवनसुत वचनमिति केट्टु वैदेहियुं पारिच्च मोदेन चोदिच्चरुळिनाळ्—अधिक कृश तनुरिह भवान् कपिवीररुमीवण्णमुळ्ळवरल्लयो चोल्लु नी । १९० निखिल

उसकी रक्षा करने में असमर्थ पाकर अत्यन्त विवश हो उसने रघुकुलतिलक राम के चरणकमलों में शरण ली और प्रार्थना की—"हे कृपानिधि, आप मेरी रक्षा करें। हे आनन्दमूर्त्ति ! आप मुझे शरण दीजिए। आपके अतिरिक्त अन्य कहीं मेरे लिए शरण नहीं है। मैं आपको प्रणाम करता हूँ।" १८० इस प्रकार की प्रार्थना करते हुए जब जयन्त सभय भगवान के चरणों पर पड़ रोने-बिलखने लगा तब सूर्यकुल के लिए तिलक सम राम ने सस्मित हो इस प्रकार उसे बताया—"मेरा सायक (बाण) कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। इसलिए तुम्हारा एक नयन नष्ट होगा। अब तुम निर्भय जा सकते हो। इस प्रकार प्रतिदिन मुझे विपत्तियों से बचानेवाले मेरे दयानिधि प्रियतम आज मुझे छोड़ बैठे। हाय! यह मेरा दुष्कृत ही है। मैंने कभी जान-बूझकर उनसे कोई अपराध नहीं किया। इसलिए मेरा पापकर्म ही सम्भवतः इसका कारण होगा।" जनकात्मजा को इस प्रकार दीनवाणी में प्रलाप करते सुन मारुति-पुत्र ने कहा—"हे देवी ! आपके इधर रहने का पता न लगने के कारण ही आपके पति अब तक यहाँ नहीं आए और अब वे शाखामृगों की सेना लेकर यहाँ झट आ जायेंगे तथा समस्त राक्षसों के साथ लंका भस्मीभूत कर देंगे।" पवनसुत के ये वचन सुनकर असीम आनन्द से पुलकित हो उन्होंने पूछा—"तुम तो अत्यन्त कृश शरीर

निशिचररचलनिभ विपुल मूर्त्तिकळ् त्तिङ्ङळवरोटेंतिक्कुंन्त-तेङ्ङने ? पवनजनुमवनि मकळ् वचनमतु केट्टुटन् पर्वत तुल्यनाय् त्तिन्नानतिद्रुतं। अथ मिथिल नृपति सुतयोट्टु चोल्लीटिनानञ्जना पुत्रन् प्रभञ्जन नन्दनन्--इतु करुतुककमल-रिलिङ्ङ्नेयुळ्ळ वरिङ्ङि रूपत्तोन्तु वेळ्ळं पटवरुं। पवनसुत मृदु वचनमिङ्ङने केट्टुटन् पत्मपत्राक्षियुं पार्त्तु चोल्लीटिनाळ्--अति विमलनमितबलनाशरवंशत्तिनन्तकन् त्तीयतिनन्तरमिल्लेटो ! रजनि विरवोटु कळियुमिनि युळरुकेङ्किल् त्ती राक्षस स्त्रीकळ् काणाते निराकुलं जलनिधियुमति चपलमिन्ने कटन्नङ्ङु चेन्तु रघुवरनेक्काण्क नन्दन ! मम चरितमखिल मरियिच्चु चूडारत्नमाशुक्कय्यिल्क्कोटुक्कविरयें त्ती। विर-विनोटु वरिक रविसुतनुमुरु सैन्यवुं वीरपुमान्मारिरुवरुमाय् भवान्। २०० वळियिलोरु पिळयु मुपरोधवुमेन्नियेे वायुसुता ! पोक त्तल्लवण्णं ध्रुवं। विनय भय कुतुक भक्ति प्रमोदान्वितं वीरन् नमस्करिच्चीटिनानन्तिके। प्रियवचन सहितनथ लोक मातावितेप्पिन्नेयुं मून्नु वलत्तु वच्चीटिनान्। विटतरिक

हो। क्या तुम्हारे साथी कपिवीर भी इसी आकार के हैं ? १९० सारे के सारे राक्षस अचल (पर्वत) सम विपुल गात्र वाले हैं और तुम लोग उनसे कैसे टक्कर ले सकोगे ?" भूसुता का वचन सुनकर पवनसुत ने तुरन्त पर्वताकार रूप धारण कर लिया और अंजनापुत्र तथा वायुपुत्र ने मैथिली से कहा—"हे माता ! यही मेरा साक्षात् रूप जान लीजिए। ऐसे पर्वता-कार शरीरवाले एक लाख सैनिक यहाँ आएँगे।" पवनसुत के मृदुल मनोहर वचन सुनकर पद्मपत्राक्षि सीता ने उन्हें ध्यान से देखकर कहा—"तुम निश्चय ही अत्यन्त विमल, अति बलशाली और राक्षसवंश के लिए कालस्वरूप हो। अब रजनी (रात्रि) बीतने जा रही है। हे पुत्र ! राक्षस-नारियों के जाग उठने के पूर्व आज ही समुद्र पार करके तुम रघुवर से मिलो और मेरा पूरा वृत्तान्त सुनाकर यह चूड़ारत्न भी उनके हाथ में सौंप दो। फिर दोनों पुरुषोत्तम (राम-लक्ष्मण), रविसुत (सुग्रीव) और सेना सहित तुम जल्दी ही सुखपूर्वक यहाँ आ जाओ। २०० हे वायुपुत्र ! तुम्हें मार्ग में कोई बाधा नहीं आ पाएगी। तुम सुखपूर्वक लौटो।" अत्यन्त नम्रता, भय, कुतूहल, भक्ति एवं प्रमोद समन्वित वीर वायुसुत ने देवी के सामने नमस्कार किया। उससे भी तृप्त न होकर प्रिय वचनों सहित उन्होंने जगज्जननी की तीन बार परिक्रमा ली और कहा—"हे

जननि ! विटकौळ् वानटियनु वेगेन खेदं विना वाळ्क सन्ततं
भवतु शुभमयि तनय ! पथि तव निरन्तरं भर्त्तारमाशु
वरुत्तीटुकव नी। सुखमौटिह गति सुचिरं जीव जीवनि
स्वस्त्यस्तु पुत्र ! ते सुस्थिरशक्तियुं अनिल तनयनुमखिल
जननियौटु सादरं आशीर्वचनमादाय पिन्वाङ्ङिनान् । २०७

लङ्का मद्र्दनम्

चेरुतकलेयौरु विटपि शिखरवुममर्न्नवन् चिन्तिच्चु कण्टान् मनसि
जितश्रमं—परपुरियिलौरु नृपति कार्य्यार्त्थमायति पाटवमुळ्ळौ
दूतं नियोगिक्किल् स्वयमतिनौरळि न्निलयौळिञ्ञु साधिच्च
स्वस्वामि कार्य्यत्तिनन्तरमेन्निये, निज हृदय चतुरतयौटपरमौ
कार्य्यवुं नीतियोटे चेय्तु पोमवनुत्तमन् । अतिनु मुहुरहमखि
निशिचर कुलेशनेयन्पोटु कण्टु परञ्ञु पोयीटणं । अति
पेरुवळियुमितु सुदृढमिति चिन्तचेय्ताराम मौक्केप्पौटिच्च
तुटङ्ङिनान् । मिथिल नृप मकळ् मरुवुमति विमल शिशप
वृक्षमौळिञ्ञुळ्ळत्तौक्कौत्तकर्त्तवन् । कुसुमदल फल सहि

जननी ! इस दास को जाने की अनुमति दें और फिर अपना पूरा सन्त
भूलकर सुख से रहें ।" सीता ने आशीर्वचन दिये—"हे मेरे पुत्र ! तुम्हा
मार्ग शुभ हो। तुम मेरे स्वामी को शीघ्र लिवा लाओ। तुम्हारा ग
सुखमय हो। तुम चिरकाल तक जीवित रहो। हे पुत्र ! तुम्हा
कल्याण हो। तुम्हारी शक्ति सुस्थिर रहे।" अनिल-तनय ने जगज्जन
से आशीर्वचन ले विदा ली। २०७

लंका मर्दन

वहाँ से थोड़ी दूर पर एक तरु-शिखर पर बैठकर हनुमान ने सहज
अपने मन में सोचा—"राज-कार्य के लिए शत्रु की नगरी में किसी च
दूत को राजा के द्वारा भेजा जाने पर, उस कार्य को निर्विघ्न पूरा क
फिर अपने स्वामी के कार्य में बाधक न रहनेवाला दूसरा कोई कार्य
अपने मन की सामर्थ्य के अनुसार नीतिपूर्वक करके जानेवाला ही उत्तम
है। ऐसी हालत में मुझे भी यहाँ आने के कारण, समस्त राक्षसों के
से भेंटकर तथा उन्हें कुछ समझाकर जाना उचित होगा। उसके लिए
एक उपाय है।" ऐसा सोचकर उन्होंने (रावण का) उपवन तहस-
करना आरम्भ किया। मैथिली के रहने के विमल शिंशपा वृक्ष को
शेष पूरा उपवन उन्होंने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। कुसुमदल फल स

गुल्मवल्ली तरुक्कूट्टङ्ङळ् पौट्टियलऱि वीळ्ंु विधौ जननिवह भय जनन नाद भेदङ्ङळुं जंगम जातिकळाय पतत्रिकळ्। अति भयमौटखिल दिशिदिविखलु पऱन्नुटन् आकाश मौक्कॅप्परन्नौरु शब्दवुं; १० रजनिचरपुरि झटिति कीळ्मेल् मऱिच्चितु रामदूतन् महावीर्य्यं पराक्रमन्। भयमौटतु पौळ्तु निशिचरिकळुमुणर्न्निनु पार्त्त नेरं कपि वीरनेक्काणायि। इमनमित बल सहितनिटिनिनादमौच्चयुमेन्तौरु जन्तुवितेन्तिनु वन्नतुं? सुमुखि! तव निकट भुवि निन्नु विशेषङ्ङळ् सुन्दरगात्रि! चौल्लीलयो चौल्लॅटो! मनसि भयमधिकमिवनेक्कण्टु अङ्ङळ्क्कु मर्क्कटाकारं धरिच्चिरिक्कुन्नतुं निशि तमसि वरुवतिनु कारणमेन्तु चौल् नीयऱिञ्ञीलयो चौल्लिवनारॅटो! रजनिचर कुल रचितमायकळौक्कवे रात्रिञ्चरन्माक्कौळ्िञ्ञऱियावतो? भयमिवने निकट भुवि कण्टुमन्मानसे पारं वळरुन्नितेन्तावतीश्वरा! अवनि मकळवरौटितु चौन्न नेरत्तवराशु लङ्केश्वरनोटु चौल्लीटिनार्—औरु विपिन चरनमित बलनचल सन्निभनुद्यानमौक्कॅप्पौटिच्चु कळञ्ञितु। २०

गुल्मवल्ली, पेड़-पौधे सब तोड़-फोड़कर और स्वयं अट्टहास भरते हुए समस्त राक्षसों के मन में भय उत्पन्न करनेवाले शब्द-घोष किये। वृक्षों के टूटने, हनुमान के चिल्लाने तथा भयभीत हो पंख फड़फड़ाकर उड़ते पक्षियों का रव सब मिलकर पूरा आकाश ही मुखरित हो उठा। १० महावीर पराक्रमी रामदूत ने राक्षसपुरी को पलभर में ऊपर-नीचे कर दिया। बहुत ही भयभीत राक्षसियों ने जागकर देखा तो वानरवीर दिखाई पड़े। उन्होंने सीताजी से कहा—"हे सुमुखी! यह कौन सा जानवर है? यह देखने में अतीव बलवान जान पड़ता है; मेघ-गर्जना सी उसकी आवाज़ है। यहाँ यह क्यों आया है? हे सुन्दरी! तुम्हारे निकट आकर इसने क्या-क्या कुशल पूछे थे? इसको देख हमारे मन में बड़ा भय हो रहा है। यह मर्कट का सा रूप धारण किये हुए है। रात की अँधियारी में इसके आने का क्या उद्देश्य है? तुमने तो जान लिया ही होगा। ज़रा बता दो कि यह कौन है?" राक्षसी-नारियों के प्रश्न पर सीताजी ने उत्तर दिया—राक्षसों की माया उन्हीं को छोड़ अन्य कौन जान सकता है? हे भगवान! क्या बताऊँ, इसे अपने समीप पाकर मन में बड़ा भय उत्पन्न होता है।" भूसुता के इस प्रकार कहने पर उन्होंने (राक्षसियों ने) जाकर लंकेश से कहा—"अचल (पर्वत) सम रूपवाला, बड़ा ही बलशाली कोई वनचर

पौरुवतिनु करुतियवनपगत भयाकुलं पौट्टिच्चितु चैत्य प्रासाद मौक्कवे। मुसलधरननिशमतु काक्कुन्नवरेयुं मुल्पेट्टु तच्चु कौन्नीटिनानश्रमं। भुवनमतिलौरुवरेयुमवनु भयमिल्लहो पोयीलवनविटत्तिनियुं प्रभो! दशवदननितिरजनिचरकळ् वचनं केट्टु दन्दशू कोपमक्रोध विवशनाय् इवनविटे निशितमसि भयमौळिये वन्नवनेतुमेळियवनल्लेन्नु निर्णयं। निशितशर कुलिशमुसलाद्यङ्ङळ् कैक्कौण्टु तिङ्ङळ् पोकाशुनूरायिरं वीरन्मार्। निशिचर कुलाधिपाज्ञाकरन्मारति निर्भयं चेल्लुन्नतु कण्टु मारुति शिखरि कुलमौटुमवनि मुळुवनुमिळकुं वण्णं सिंहनादं चेय्ततु केट्टु राक्षसर् सभयता हृदयमथ मोहिच्चु वीणितु संभ्रमत्तोटट्टुत्तीटिनार् पिन्नेयुं। शित विशिख मुख निखिल शस्त्र जालङ्ङळे शीघ्रं प्रयोगिच्च नेरं कपीन्द्रनुं ३० मुहुरुपरि विरविनौटुयर्न्नु जितश्रमं मुद्गरं कौण्टु ताडिच्चौटु-क्कीटिनान्। नियुत निशिचर निधन निशमन दशान्तरे निर्भरं क्रुद्धिच्चु नक्तञ्चरेन्द्रनुं; अखिल बलपतिवररिलैवरेच्चेल्लु-केन्नत्यन्त रोषाल् नियोगिच्चनन्तरं। परमरण निपुण नौटेतिर्त्तु पञ्चतत्ववुं पञ्च सेनाधिपन्माक्कुं भविच्चितु। तदनु दशवदननुदित क्रुधा चौल्लिनान् तद्बलमत्भुतं मद्भयोद्

आकर पूरा उद्यान नष्ट कर रहा है। २० भय और आकुलता रहित वह लड़ने के लिए तैयार हो आया हुआ है। उसने चैत्य, प्रासाद आदि तोड़-फोड़ डाले हैं। मुसलधारी उसने क्षणभर में पहरेदारों को मार गिराया है। संसार में किसी का उसे भय नहीं है। वह अभी तक वहाँ से गया नहीं है। निशाचरियों का यह कथन सुनकर दशवदन साँप के समान क्रोधाकुल हो उठा और कहा—"इधर इस रात के अँधेरे में भयरहित हो आया हुआ वह निश्चय ही कोई सामान्य जन्तु नहीं है। इसलिए तुम सौ हज़ार (एक लाख) वीर लोग तीखे तीर, कुलिश, मुसल आदि हथियारों से सम्बद्ध हो जाओ।" निशिचराधिप (रावण) के आज्ञावर्त्ती लोगों को निर्भय आते देख मारुति ने पर्वत समेत भूमि कम्पित करते हुए सिंहनाद किया तो भयवश वे मूर्छित गिर पड़े। मूर्छना हटने पर फिर आगे बढ़े और तीखे बाण सरीखे विविध शस्त्रों का प्रयोग किया। तब कपीन्द्र ने—३० ऊपर कूद पड़कर उन्हें अनायास ही मार-मारकर समाप्त किया। सौ हज़ार निशिचरों के काल कवलित होने का समाचार पाकर नक्तंचरेन्द्र (रावण) की क्रोधाग्नि और फड़क उठी। तुरन्त ही समर्थ सेनापतियों में से

भूतिदं। परिभवमोटमित बल सहितमपि चेन्नोरु पञ्च सेनाधिपन्मार् मरिच्चीटिनार्। इवने मम निकट भुवि झटिति सहजीवनोटिङ्ङु बन्धिच्चु कोण्टन्नु वच्चीटुवान् महितमति-बल सहितमेळुवरोरुमिच्चुटन् मन्त्रिपुत्रन्मार् पुरप्पेटुविन् भृशं। दशवदन वचन निशमन बल समन्वितं दण्ड मुसल खड्गेषु चापादिकळ् कठिनतरमलङ्ङि निज करमतिलेटुत्तुटन् कर्बुरेन्द्रन्मारटुत्तार् कपीन्द्रनुं ४० भुवनतलमुलये मुहुरलङ्ङि मरुवुं विधौ भूरिशस्त्रं प्रयोगिच्चारनुक्षणं। अनिलजनुमवरे विरवोटु कोन्नीटिनानाशु लोहस्तंभ ताडनत्तालहो! निज सचिव तनयरेळुवरुममित सैन्यवुं निर्ज्जरलोकं गमिच्चतु केळ्क्कयाल् मनसि दशमुखनुमुरु तापवुं भीतियुं मानवुं खेदवुं त्राणवुं तेटिनान्। इनियोरुवनिवनोटु जयिप्पतिनिल्ल मट्टिङ्ङने कण्टील मट्टु आनारेयुं; इवरोरुवरेतिरिट्टुकिलसुरासुर जाति-कळेङ्ङुमे निल्क्कुमारिल्ल जगत्त्रये। अवर् पलरुमोरु कपियोटेट्टु मरिच्चितङ्ङय्यो! सुकृतं नशिच्चितु मामकं।

पाँच लोगों को उसे मारकर आने की आज्ञा दी और वे भी हथियारों से लैस हो हनुमान के पास पहुँचे तथा बहुत ही युद्धनिपुण रामदूत से भिड़कर वे पाँचों सेनापति मृत्युवश हो गये। इसपर अधिक क्रोधविह्वल हो उठे रावण ने कहा—"उसका बल आश्चर्यजनक है और उसका वर्णन सुनकर मेरे मन में भी भय उत्पन्न होता है। असीम सैनिकों सहित युद्ध के लिए गये, पंच सेनापतियों तक को उसने मार डाला। अब उसको जिन्दा पकड़कर मेरे सम्मुख ला रखने के लिए पृथ्वी के अमित बलशाली एवं लोकविजयी मन्त्रि-पुत्रों में सात लोग सेना सहित तुरन्त जाएँ।" दशवदन की यह आज्ञा सुनते मात्र ही मन्त्रिपुत्र अपनी सेना सहित तथा घोर भयंकर रव के साथ दण्ड, मुसल, खड्ग, चाप आदि हथियार हाथ में लिये आगे बढ़े। राक्षस-प्रवरों को इस प्रकार बढ़ते देख वानरश्रेष्ठ ने भी—४० सम्पूर्ण प्रपंच को कम्पित करते हुए घोर गर्जना की। तुरन्त ही राक्षसों ने आकर भूरि शस्त्र-प्रयोग किये तो अनिलसुत (हनुमान) ने लौहस्तम्भ से मार-मारकर उनका भी काम तमाम किया। अपार सेना सहित सचिवपुत्रों के मर जाने की सूचना पाकर दशवदन के मन में एक साथ दुःख, भय, अपमान, खेद और लज्जा भावनाएँ उदित हुईं। वह कहने लगा—"अब उसका सामना करने के लिए कोई दिखाई नहीं दे रहा है। इनमें (मन्त्रिपुत्रों) से एक भी आक्रमण करने के लिए अगर कटिबद्ध हो तो देवासुर वर्ग भी टिक नहीं

पलवुमिति करुतियोरु परवशत कैक्कोण्टु पारं तळर्न्नोरु ताततनोटादराल् विनयमोटु तोळुतिळयमकनुमुर चेय्तितु वीरपुंसामिदं योग्यमल्लेतुमे; अलमलमितङ्किलनुचितमखिल भूभृतामात्मखेदं धैर्य्यं शौर्य्यं तेजोहरं। ५० अरिवरने निमिष मिह कोण्टु वरुवनेन्नक्षकुमारनुं निर्ग्गमिच्चीटिनान्। कपिवरनुमतु पोळुतु तोरणमेरिनान् काणायितक्षकुमारनेस्सन्निधौ; शरनिकर शकलित शरीरनाय्वन्नितु शाखामृगाधिपन् तानुमतुनेरं। मुनिविनोटु गगन भुवि निन्नु ताणाशु तन्मूर्द्धनि मुद्गरं कोण्टेङ्ङिञ्ञीटिनान्। शमनपुरि विरविनोटु चेन्नु पुक्कीटिनान् शक्तनामक्षकुमारन् मनोहरन्। विबुधकुलरिपु निशिचराधिपन् रावणन् वृत्तान्तमाहन्त केट्टु दुःखार्त्तनाय् अमरपति जित ममित बल सहितमात्मजमात्मखेदत्तोटणच्चु चोल्लीटिनान्—प्रिय तनय! शृणु वचनमिह तव सहोदरन् प्रेताधिपालयं पुक्कतु केट्टीले? मम सुतने रण शिरसि कोन्न कपीन्द्रने मार्त्ताण्ड जालयत्तिन्नयच्चीटुवान् त्वरितमहमतुल बलमोटु पोयीटुवन् त्वल्क्कनिष्ठोदकं पिन्ने नल्कीटुवन्। ६० इति

पाते। ऐसे वीर भी एक निरे वानर से लड़कर मर गये, यह बड़े खेद की बात है! मेरा पुण्य समाप्त हुआ!" इस प्रकार की नाना चिन्ताओं से परवश एवं आलस्ययुक्त अपने पिता से छोटे पुत्र अक्षयकुमार ने हाथ जोड़ प्रणाम करके कहा—"वीर पुरुषों का ऐसा भयभीत हो जाना अनुचित है। राजधर्म के लिए भी यह अनुचित है। मानसिक दुःख धैर्य, शौर्य और तेज का नाशक होता है। ५० मैं शत्रु को आधे क्षण में इधर ला दूँगा।" यह कह अक्षयकुमार (हनुमान का सामना करने के लिए) चल पड़ा। उसे आते देख हनुमान कूदकर तोरण पर चढ़ गये। तब अक्षयकुमार निकट दिखाई दिया। अक्षयकुमार ने शाखामृगाधिप (हनुमान) का शरीर तीक्ष्ण शरों से शकलित कर दिया तो उन्होंने ऊपर से कूदकर उसके सिर पर काँटेदार लकड़ी दे मारी और सुकुमार सशक्त अक्षयकुमार ने सीधे यमपुरी की राह ली। यह समाचार सुनकर विबुधरिपु निशिचराधिप रावण दुखार्त हो उठा। उसने लोकविश्रुत एवं इन्द्रविजयी अपने बड़े पुत्र मेघनाद को गले से लगाते हुए करुणार्त स्वर में कहा—"हे मेरे प्रिय तनय! सुनो। तुम्हारा भाई यमलोक चला गया है। जिस वानर ने तुम्हारे भाई को रणक्षेत्र में मारा, उसे यमपुरी भेजने, मैं अभी विशाल सेना सहित निकल रहा हूँ। तुम्हारे भाई की उदक क्रियाएँ सब बाद में होंगी।" ६० पिता

जनक वचनमलिवोट्टु केट्टादरालिन्द्रजित्तुं परञ्ञीटिनान् तल्क्षणे--त्यज मनसि जनक ! तव शोकं महामते ! तीर्त्तु कौळ्वन् ञान् परिभवमोक्कवे । मरण विरहितनवनतिनिल्ल संशयं मट्टौरुत्तन् बलालत्र वन्नीटुमो ? भयमिवनु मरणकृतमिल्लेन्नु काण्किल् ञान् ब्रह्मास्त्रमेय्तु बन्धिच्चु कोण्टीटुवन् । भुवनतल-मखिलमरविन्दोत्भवादियां पूर्वं देवारिकळ् तन्नवरत्तिनाल् वल-मथनमपि युधि जयिच्च नम्मोटौरु वानरन् वन्नेतिरिट्टतुमत्भुतं ! अतु करुतुमळविलिह त्राणमामेत्रयुं हन्तुमशोक्योपि ञानविळंबितं कृतिभिरपि निकृतिभिरपिछत्मनापिवा कृच्छ्रेण ञान् त्वल् समीपे वरुत्तुवन् । सपदि विपदुपगतमिह प्रमदाकृतं सम्पद्विनाशकरं परं निर्ण्णयं । ससुखमिहनिवसमयि जीवतित्वं वृथा सन्तापमुण्टाकरुतु करुतुमां । ७० इति जनकनोटु नयहितङ्ङळ् सूचिच्चुट-निन्द्रजित्तुं पुरप्पेट्टु सन्नद्धनाय् : रथ कवच विशिख धनुरादिकळ् कैक्कौण्टु रामदूतं जेतुमाशु चेन्नीटिनान् । गरुडनिभनथ गगन मुल्पतिच्चीटिनान् गर्ज्जन पूर्वकं मारुति वीर्य्यवान् । बहुमति-युमकतळिरिल्वन्नु परस्परं बाहुबल वीर्य्य वेगङ्ङळ् काण्कयाल् ।

के कारुणिक वचन सुनकर तुरन्त ही इन्द्रजीत ने कहा—"हे पिताजी ! हे महामति ! आप मन से शोक दूर कीजिए । मैं आपका सारा सन्ताप दूर करूँगा । इसमें सन्देह नहीं कि वह मरणरहित है, अन्यथा निस्संकोच ऐसा यहाँ नहीं आता था । युद्ध छिड़ने पर उसे मरणरहित देखने पर मैं ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर उसे यहाँ बाँध लाऊँगा । अरविन्दोद्भव (ब्रह्मा) आदि देवताओं से पूर्व में प्रदत्त वरप्रसाद से मैंने अखिल जगत पर विजय प्राप्त की है । इन्द्र तक को युद्ध में जीते मेरे सम्मुख एक वानर टिक पाएगा ! बड़े आश्चर्य की बात है ! यह सोचते ही लज्जा आती है । अगर उसे मारने के लिए अशक्त सा हो जाऊँ तो शस्त्रप्रयोग से या प्रतिक्रिया कौशल से या छल से किसी न किसी प्रकार मैं उसे क्षणभर में आपके पास ला दूंगा । हमारे लिए आयी हुई यह विपत्ति स्त्री के कारण है, इसलिए इस कारण ऐश्वर्य नाश होगा, यह निश्चय है । फिर भी मेरे जीवित रहते आपको दुखी होने की आवश्यकता नहीं है ।" ७० इस प्रकार अपने पिता को समझा-बुझाकर इंद्रजीत पूरी तैयारी के साथ (हनुमान को बन्धित करने) निकल पड़ा । रथ पर सवार हो, कवच, विशिख, धनुष आदि लिये रामदूत को जीतने के लिए आ पहुँचा । इन्द्रजीत को देखकर मारुति ने गर्जना करते हुए, गरुड़ के समान आकाश की ओर उछलते

पवनसुत शिरसि शरमञ्चु कौण्टेय्ततु पाकारि जित्ताय पञ्चास्य विक्रमन्। अथ सपदि हृदि विशिखमेट्टु कौण्टेय्तु मट्टारारु बाणं पदङ्ङळिलुं तथं। शित विशिखमधिकतरमोन्नु वाल्मेलेय्तु सिंहनादेन प्रपञ्चं कुलुक्किनान्। तदनु कपिकुल तिलकनम्पु कौण्टार्त्तनाय् स्तंभेन सूतनेक्कौन्नितु सत्वरं। तुरग-युत रथवुं अथ झटिति पौटियाक्किनान् दूरत्तु चाटिनान् मेघ निनादनुं। अपरमोरु रथमधिक विरुतौटुटनेरि वन्नस्त्र शस्त्रौघ वरिषं तुटङ्ङिनान्। ८० रुषितमति दशवदन तनय शरपातेन रोमङ्ङळ् नन्नालु कीरि कपीन्द्रनुं। अतिनुमोरु कैटुतियवनिल्लेन्नु काण्कयालंभोज संभव बाण मेय्तीटिनान्। अनिलजनुमतिने बहुमतियौटुटनादरिच्चाहन्त ! मोहिच्चु वीणितु भूतले। दशवदन सुतननिल तनयने निबन्धिच्चु तन् पिताविन् मुम्पिल् वच्चु वणङ्ङिनान्। पवनजनु मनसियोरु पीडयुण्टायील पण्टु देवन्मार् कौटुत्त वरत्तिनाल्। नळिन दल नेत्रनां रामन् तिरुवटि नामामृतं जपिच्चीटुं जनं सदा, अमल हृदि मधुमथन भक्ति विशुद्धरायज्ञान कर्म्म कृत बन्धनं क्षणाल्

हुए युद्ध आरम्भ किया। दोनों का भुजबल एवं सामर्थ्य ऐसी थी कि उसे देखकर दोनों के मन में परस्पर आदरभाव उत्पन्न हुआ। सिंहसम परा-क्रमी इन्द्रजीत ने हनुमान के मस्तक में पाँच बाण छोड़े, एक बाण हृदय पर छोड़ा और प्रत्येक पैर को छः छः बाणों से आहत किया। उसने एक तीक्ष्ण बाण पूँछ को मारा तो हनुमान ने सिंहनाद करते हुए पृथ्वी ही कम्पित कर डाली। उन्होंने लौहदण्ड से पहले (इन्द्रजीत के) सारथी को मार गिराया, फिर रथ को तहस-नहस कर डाला और घोड़ों को मारा। तुरन्त ही इन्द्रजीत नीचे कूद पड़ा। एक दूसरे रथ पर सवार हो उसने हनुमान पर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा की। ८० क्रुद्ध रावण-पुत्र की बाणवर्षा से हनुमान के केवल चार-चार रोएँ मात्र उखड़ गये। हनुमान को इतनी बाणवर्षा के उपरान्त भी अनाकुल देखकर उसने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। उस अस्त्र के प्रति आदरभाव रखने के लिए अनिलसुत तुरन्त ही मूर्छित-से नीचे गिर पड़े। दशवदन के पुत्र ने अनिलतनय को आबद्ध कर पिता के सामने ला रखा और प्रणाम किया। देवों के द्वारा पूर्व में दिये गये वर-प्रसाद से पवनतनय को किसी प्रकार की मानसिक पीड़ा अनुभव नहीं हुई, इसमें विस्मय की बात नहीं है। श्रीराम का पावन नाम मात्र लेने से जब मन पवित्र हो सांसारिक बन्धन से मुक्त हो मोक्षपद की सिद्धि होती है

सुचिर विरचितमपि विमुच्य हरिपदं सुस्थिरं प्रापिक्कुमिल्लोरु संशयं। रघुतिलक चरण युगमकतळिरिल् वच्चोरु रामदूतन्नु बन्धं भविच्चीटुमो? मरण जनिमय विकृति बन्धमिल्लातोक्कु मट्टुळ्ळ बन्धनं कोण्टेन्तु सङ्कटं? ९० कपटमति कलितकर चरण विवशत्ववुं काट्टिक्किटन्नु कोट्टुत्तोरनन्तरं, पलरुमति कुतुकमोटु निशिचररणञ्ञुटन् पाशखण्डेन बन्धिच्चतु कारणं बलमियलुममर रिपु केट्टिक्किटन्नेळुं ब्रह्मास्त्र बन्धनं वेर्पेट्टितप्पोळे। व्यथयुमवनकतळिरिलिल्लेयेन्नाकिलुं बन्ध-नेन्नुळ्ळ भावंकळञ्ञीलवन्। निशिचररेट्टुत्तु कोण्टार्त्तु पोकुंविधौ निश्चलनाय् किटन्नान् कार्य्यं गौरवाल्। अनिलजने निशिचरा-धिपन् मुम्पिल् वच्चादितेयाधिपाराति चोल्लीटिनान्—अमित निशिचररे रणशिरसि कोन्नवनाशु विरिञ्चास्त्र बद्धनायीटिनान्। जनक! तव मनसि सचिवन्मारुमायिनिच्चेम्मे विचार्य कार्य्यं न्नी विधीयतां। प्लवगकुलवरनरिक सामान्यनल्लिवन् प्रत्यर्त्थि-वर्ग्गत्तिनेल्लामोरन्तकन्। निज तनय वचनमितु केट्टु दशानन् न्निल्क्कुं प्रहस्तनोटोर्त्तु चोल्लीटिनान्—१०० इवनिविटे

तब रघुपति के श्रीचरणों का हृदय में सदा ध्यान करनेवाले रामदूत को क्या बन्धन अनुभव हो सकता है? जन्म-मृत्यु रूपी साँसारिक बन्धन से विमुक्त (हनुमान) को अन्य कौन-सा बन्धन दुखदायी हो सकता है? ९० अस्त्र से आबद्ध हनुमान ने अपने हाथ-पाँव तक हिलाये बिना बन्धित सा बहाना किया और चुपचाप पड़े रहे। कौतूहलवश आये कई राक्षसों ने रज्जू खण्डों से उन्हें बाँध लिया। इससे ब्रह्मास्त्र के बन्धन से विमुक्त हो हनुमान ने चैन की साँस ली। मन में भले ही किसी प्रकार की व्यथा नहीं रही, तो भी उन्होंने बन्धित का सा भाव नहीं छोड़ा। इसलिए होहल्ला मचाते हुए जब राक्षस उन्हें उठा ले चले तब भी कार्यसिद्धि के लिए वे निश्चल पड़े रहे। अनिलसुत को निशिचराधिप के सम्मुख रखते हुए इन्द्रजीत ने कहा—"युद्धक्षेत्र में असंख्य निशिचरों का घातक यह आज विरिञ्चास्त्र (ब्रह्मास्त्र) से आबद्ध पड़ा है। हे पिताजी! अब सचिवों से परामर्श करके आप अनुयोज्य कार्य बता दीजिए। यह प्लवग कुलवर (वानरवीर) कोई सामान्य नहीं, यह समस्त राक्षस-जाति का अन्तक समझ लिया जाए।" अपने प्रिय पुत्र का यह कथन सुनकर दशानन ने अपने निकट खड़े मन्त्री प्रहस्त से कहा—१०० "हे मन्त्रिवर प्रहस्त! इससे यह पूछा जाए कि यह बलात् क्यों आया है, कहाँ से आया है, उपवन को

वरुवतिनु कारणमेन्तेन्तुमेङ्ङु निन्नव वरुन्नुवेन्नुळ्ळतुं, उपवन-
वुमनिशमतु काक्कुन्नवरेयुमूक्कोटे मट्टुळ्ळ नक्तञ्चररेयुं,
त्वरित मति बलमोटु तकर्त्तु पोटिच्चतुं तूमयोटारुटे दूतनेन्नुळ्ळतुं,
इवनोटिनि विरवोटु चोदिक्क नीयेन्तुमिन्द्रारि चोन्नतु केट्टु
प्रहस्तनुं पवन सुतनोटु विनयनय सहितमादराल् पप्रच्छ
नीयारयच्चु वन्नू कपे ! नृप सद्रसि कथयमम सत्यं महामते !
निन्नेयळिच्चु विट्टुन्नुण्टु निर्ण्णयं। भय मखिल मकतळिरिल्
निन्नु कळञ्ञालुं ब्रह्मसभय्क्कोक्कुमिस्सभ पार्क्क नी। अनृत
वचनवुमलमधर्म्मकर्म्मङ्ङळुमत्र लङ्केश राज्यत्तिङ्कलिल्लेटो !
निखिल निशिचर कुल बलाधिपन् चोद्यङ्ङळ् नीतियोटे केट्टु
वायुतनयनुं मनसि रघुकुल वरने मुहुरपि निरूपिच्चु मन्दहासेन
मन्देतरं चोल्लिनान्--११० स्फुट वचनमति विशदमिति शृणु
जळप्रभो ! पूज्यनां रामदूतन् ञानरिक नी। भुवनपति
ममपति पुरन्दर पूजितन् पुण्य पुरुषन् पुरुषोत्तमन् परन्; भुजग
कुलपति शयननमलनखिलेश्वरन् पूर्वं देवाराति भुक्ति मुक्ति प्रदन्।
पुर मथन हृदयमणिनिलयननिवासियां भूतेश सेवितन् भूत

विदीर्ण करने तथा उसके पहरेदारों तथा अन्य बलशाली राक्षसों को अत्यन्त निष्ठुरतापूर्वक मार डालने के पीछे क्या उद्देश्य निहित है और यह किसका दूत बनकर यहाँ आया है।" इन्द्रारि की बात सुनकर प्रहस्त ने विनय, नीति एवं नम्रता सहित पवनसुत से प्रश्न किया—"हे वानर ! तुम किसके भेजे जाने पर यहाँ आये हो ? राजसभा में सत्य बताओ। हे महाबुद्धिशाली! तुम्हें विमुक्त कर दिया जाएगा। तुम अपने मन से समस्त भय निकाल दो। इस राजसभा को ब्रह्मसभा के समान जान लो। नीतिनिष्ठ लंकेश के राज्य में असत्य कथन या अधार्मिक कर्म कभी होने नहीं पाएगा। यह तुम विश्वासपूर्वक मन में समझो। समस्त राक्षस-सेना के अधिप के नीति-युक्त प्रश्न सुनकर वायुतनय ने तुरन्त ही मन में रामचन्द्रजी को स्मरण किया और फिर मन्दहास के साथ धीरे से कहा—११० —हे मूर्खाधिराज ! तुम सुनो। मैं सब कुछ स्पष्टतया सविस्तार बता दूंगा। मुझे लोकेश्वर राम का दूत समझ लो। मेरे स्वामी संसार के नाथ, पुरन्दर (इन्द्र) से पूजित, पुण्य पुरुष साक्षात् पुरुषोत्तम विष्णु हैं, जो भुजग कुलपति (अनन्त नाग) पर शयन करते हैं, जो अमल अखिलेश्वर हैं। वे ही देवों के भुक्ति-मुक्ति प्रदाता, परमशिव के हृदय रूपी मणिमन्दिर में सदा निवास करने-वाले, भूतेश (शिव) से सदा पूजित, पंचभूतात्मक, गरुड़ध्वज से युक्त मणि

पञ्चात्मकन् । भुजग कुलरिपु मणि रथद्ध्वजन् माधवन् भूपति भूति विभूषण सम्मितन् । निज जनक वचनमतु सत्यमाक्कीट्टुवान् निर्म्मलन् काननत्तिन्नु पुरप्पेट्टु; जनकजयुमवरजनुमाय् मरुवुन्न नाळ् चेन्नु नी जानकियेक्कट्टु कोण्टीले ? तव मरणमिह वरुवतिन्नोरु कारणं तामर सोत्भव कल्पितं केवलं । तदनु दशरथ तनयनुं मतंगाश्रमे तापेन तम्पियुमाय् गमिच्चीटिनान् । तपन तनयनोटनल साक्षियाय् सख्यवुं तात्पर्य्यमुळ्ळकोण्टु चेय्तोरनन्तरं १२० अमरपति सुतनेयोरु बाणेन कोन्नुटनक्कत्मिजन्नु किष्किन्धयुं नल्किनान् । अटिमलरिलवनमनमळकिनोटु चेय्तवन्नाधिपत्यं कोटुत्ताधि तीर्त्तीटिनान् । अतिनवनुमवनि तनयान्वेषणत्तिनायाशकळ् तोरुमेकंक नूरायिरं प्लवग कुल परिवृढरे लघुतरमयच्चतिलेकनहमिह वन्नु कण्टीटिनेन् । वनज विटपिकळेयुटनुटनिह तकर्त्ततुं वानरवंश प्रकृति शीलं विभो ! इकलिल् निशिचर वररेयोक्केमुटिच्चतुमेन्ने वधिप्पतिनाय् वन्न कारणं । मरण भय मकतळिरिलिल्लयाते भुवि मट्टोरु जन्तुक्कळिल्लेन्नु निर्ण्णयं । दशवदन ! समर भुवि देहरक्षात्र्थमाय् त्वद् भृत्य वर्ग्गत्ते निग्रहिच्चेनहं ।

रथ पर सवार करनेवाले, परमशिव तुल्य माधव महाविष्णु हैं। अपने पिता के वचन को सत्य सिद्ध करने के लिए वे पुण्यात्मा वनवास के लिए निकले। अपने भ्राता तथा पत्नी जनकजा सहित वनवास करते समय क्या तुम जनकजा को चुरा नहीं ले गये थे ? यह तुम्हारे नाश का एकमात्र कारण सिद्ध होगा। यह ब्रह्मा की प्रार्थना का ही फल है। फिर (भार्या विरह से) खिन्न राम अपने भ्राता के साथ मतंगाश्रम में पहुँचे। तपनतनय (सुग्रीव) के साथ सहृदयतापूर्वक अग्नि को साक्षी बनाकर सख्य स्थापित करने के उपरान्त—१२० —अमरपति-सुत (देवराज इन्द्र का पुत्र) बालि को एक ही बाण से मारकर उन्होंने अर्कात्मज (सुग्रीव) को किष्किन्धा का राज्य दे दिया तथा उन्हें अपने चरण-कमलों की शरण में रख उनका दुःख मिटा दिया। इसके प्रत्युपकार के लिए उन्होंने सीतान्वेषण के लिए सभी दिशाओं में एक-एक लाख वीर वानरों को भेज दिया, जिनमें से एक मैंने यहाँ आकर सीताजी को देख लिया। अब वन के वृक्षों को उजाड़ने का कारण पूछा जाए तो यह वानरों का स्वभाव समझा जाए। मुझे मारने आने के कारण मुझे इतने राक्षसों का वध करना पड़ा। हे राक्षसराज ! पृथ्वी पर ऐसी कौन सी जाति है जिसे मृत्यु-भय नहीं होता ? हे दशवदन !

दशनियुत शत वयसि जीर्ण्णमेन्नाकिलुं देहिकळ्क्केट्टं प्रियं देहमोक्कं न्नी। तव तनय कर गळित विधि विशिख पाशेन तत्र ञान् बद्धनायेनोरु काल्क्षणं। १३० कमलभव मुख सुरवर प्रभावेनमे कायत्तिनेतुमे पीडयुण्टाय्वरा परिभववुमोरु पोळुतु मरणवुमकप्पेटा बद्धभावेन वन्नीटिनेनत्र ञान्। अतिनुमोरु पोळुतिलोरु कारणमुण्टु केळ्ळहितं तव वक्तुमुद्युक्तनाय् अकतळिरिलरिवु कुरयुन्नवर्क्केट्टमुळ्ळज्ञानमोक्के न्नीक्केणं बुधजनं। अतु जगति करुतु करुणात्मनां धर्म्ममेन्नात्मोपदेशमज्ञानिनां मोक्षदं। मनसि करुतुक भुवन गतिये वळिये भवान् मग्ननायीटोला मोह महांबुधौ। त्यज मनसि दशवदन! राक्षसीं बुद्धिये दैवीं गतियेस्समाश्रयिच्चीटु न्नी। अनु जनन मरण भय नाशिनि निर्णयमन्यमायुळ्ळतु संसार कारिणि। अमृत घन विमल परमात्म बोधोचित नत्युत्तमान्वयोद् भूतनल्लो भवान्। कळक तव हृदि सपदि तत्त्वबोधेन न्नी काम कोप द्वेष लोभ मोहादिकळ्। १४० कमल भव सुत तनयनन्दननाकयाल् कर्बुर भाव

युद्धक्षेत्र में अपनी देह-रक्षा के लिए आपके सेवकों को मैंने मारा। भले ही यह देह कौमार, यौवन और वार्द्धक्य में कभी भी नष्ट हो सकती है, तो भी सभी प्राणियों में इस देह के प्रति विशेष ममता है। अनन्तर उसके, तुम्हारे पुत्र के ब्रह्मास्त्र-प्रयोग से मैं थोड़ी देर के लिए आबद्ध-सा हो गया। १३० ब्रह्मा आदि देवताओं से प्रदत्त वर के प्रभाव से मैं देह-पीड़ा एवं मरण-पीड़ा से विमुक्त हूँ। फिर भी बद्धभाव लेकर मैं यहाँ आया हूँ। मेरे इधर आने का एक कारण है। सुनो, मैं तुम्हें समझा-बुझाकर जाना चाहता था क्योंकि बुद्धिमान लोगों का कर्तव्य है कि अज्ञानी लोगों के मन के अज्ञान को सदुपदेश देकर दूर कर दें। दयावान लोगों द्वारा दिया गया धर्मपरक आत्मोपदेश अज्ञानियों का अज्ञान दूर कर उन्हें मोक्ष का मार्ग भी दिखा देता है। हे रावण! तुम संसार की गति पहचानो और दुर्बुद्धिवालों के जैसे सांसारिक मोह रूपी सागर में मत पड़ो। हे दशवदन! तुम अपनी राक्षसी बुद्धि (तामसी वृत्ति) छोड़ दो और दैविक गुण का अवलम्ब लो। वही जन्म-मरण के दुःख का नाश करता है और दूसरा राक्षसी गुण जीव को संसार के मोहपाश में डालता है। अमृतघन एवं विमल परमात्मबोध को प्राप्त करने के लिए अनुयोज्य अत्युत्तम वंश में तुम्हारा जन्म हुआ। तुम तुरन्त ही काम, क्रोध, द्वेष, लोभ, मोह आदि हृदय से निकाल दो और तत्वबोध ग्रहण करो। १४० तुम कमलसम्भव (ब्रह्मा) सुत (पुलस्त्य)

परिग्रहियाय्क्क ण्णी। दनुज सुर मनुज खगमृग भुजग भेदेन देहात्म बुद्धियेंस्सन्त्यजिच्चीटु ण्णी। प्रकृति गुण परवशतया बद्धनाय्वरुं प्राण देहङ्ङळात्मावल्लरिकेंटो! अमृतमय नजनमलनद्वयनव्ययनानन्द पूर्ण्णनेकन् परन् केवलन् निरुपमनमेयनव्यक्तन् निराकुलन् निर्ग्गुणन् निष्कळन् निर्म्ममन् निर्म्मलन् निगमवर निलयनननन्तनाद्यन् विभु नित्यन् निराकारनात्मा परब्रह्मं। विधि हरि हरादिकळ्क्कुं तिरियातवन् वेदान्त वेद्यनवेद्यनज्ञानिनां, सकल जगदिदमरिक मायामयं प्रभो! सच्चिन्मयं सत्यबोधं सनातनं। जडमखिल जगदिदमनित्यमरिक ण्णी जन्म जरा मरणादि दुःखान्वितं, अरिवतिन् पणि परम पुरुष मरिमायङ्ङळात्मानमात्मना कण्टु तेळिक ण्णी। १५० परमगति वरुवतिनु परमोरुपदेशवुं पार्त्तु केट्टीटु चोल्लित्तरुन्नुण्टु ञान्—अनवरतमकतळिरिलमित हरि भक्ति कोण्टात्म विशुद्धि वरुमेन्नु निर्ण्णयं। अकमलरुमघमकलुमळवति विशुद्ध मायाशु तत्वज्ञानवुमुदिक्कुं दृढं; विमलतर मनसि भगवत्तत्त्व विज्ञान विश्वास केवलानन्दानुभूतियाल् रजनिचर वन दहन

के पुत्र (विश्रवस्) के पुत्र हो। तुम राक्षसी वृत्ति को मत अपनाओ। दनुज, सुर, मनुज, खग, मृग, भुजग आदि के जैसे देह को आत्मा समझने की अपनी बुद्धि तुम छोड़ दो। ऐसी बुद्धि से माया गुण से तुम बद्ध हो जाओगे। प्राण, मन, देह, बुद्धि ये आत्मा नहीं हैं। आत्मा शुद्ध, अमृतमय, अजन्मा, अमल, अद्वय, अव्यय, आनन्दस्वरूप, सर्वेश्वर, परमात्मा है। वह निरुपम, अव्यक्त, निराकुल, निर्गुण, निष्कल, निर्मम, निर्मल, वेदस्वरूप, अनन्त, अनाद्य, नित्य, निराकार परब्रह्म है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर के लिए भी वह अविदित है, वह केवल वेदान्तवेद्य है। अज्ञानियों के लिए वह अविदित है। हे प्रभु! तुम समस्त संसार को मायामय जान लो। आत्मा सच्चिन्मय, सनातन एवं सर्वेश्वर है। यह अखिल जड़ात्मक संसार अनित्य है तथा जन्म-मरण, जरा आदि से पीड़ित है। परमात्मा की, समझने में कठिन लीलाएँ आत्मना देख लो। १५० मैं तुम्हारे मुक्ति-लाभ के लिए उपयोगी एक उपदेश देता हूँ, जिसे तुम ध्यान से सुन लो। मन में निरन्तर भगवद्भक्ति होने से मन की शुद्धि होती है। मन से सारा कलुष दूर हो जाने पर आत्मा शुद्ध होती है और तब आत्मज्ञान का उदय भी होता है। परिशुद्ध एवं निर्मल मन में भगवद् तत्व का बोध हो जाने पर अद्वैतजन्य आनन्दानुभूति प्राप्त होती है। राक्षसवृत्ति रूपी वन को

मन्त्राक्षरद्वयं राम रामेति सदैव जपिक्कयुं, रति सपदि निज हृदि विहाय नित्यं मुदा राम पद ध्यानमुळ्ळुरय्क्कयुं, अरिवु चेरुतकतळिरिलोरु पुरुषनुण्टङ्किलाहन्त ! वेण्टुन्नताकयालाशु नी भजभव भयापह भक्तलोक प्रियं भानु कोटि प्रभं विष्णु पादांबुजं । मधु मथन चरण सरसिज युगळमाशु नी मौढ्यं कळञ्ञु भजिच्चु कोण्टीटेटो ! कुसृतिकळुमिनि मनसि कनिवोटु कळञ्ञु वैकुण्ठलोके गमिप्पान् वळि नोक्कु नी । १६० परधन कळत्र मोहेन नित्यं वृथा पापमार्ज्जिच्चु कीळ्प्पोट्टु वीणीटोला । नळिन दळ नयनमखिलेश्वरं माधवं नारायणं शरणागत वत्सलं, परम पुरुषं परमात्मानमद्वयं भक्ति विश्वासेन सेविक्क सन्ततं । शरणमिति चरणकमले पतिच्चीटेटो ! शत्रु भावत्ते त्यजिच्चु सन्तुष्टनाय्, कलुषमनवधि झटिति चेय्तितेन्नाकिलुं कारुण्यमीवण्णमिल्ल मट्टाक्कुमे । रघुपतिये मनसि करुतुकिलवनुभूतले रण्टामतुण्टाकयिल्ल जन्मं सखे ! सनक मुख मुनिकळ् वचनङ्ङळितोक्केटो सत्यं मयोक्तं विरिञ्चादि सम्मतं । अमृत सम वचनमिति पवन तनयोदितमत्यन्तरोषेण

दग्ध करनेवाला दो अक्षरों का मन्त्र 'राम' है। उस राम मन्त्र का निरन्तर जाप करने तथा मन की सांसारिक ममता छोड़कर सदा रामचरणों का ध्यान लगाने से मनुष्य का अन्तःकरण शुद्ध होगा और आत्मज्ञान का उदय होगा। इसलिए मन का मैल दूर करके, संसार दुःख को दूर करनेवाले भक्तजन के प्रिय तथा करोड़ों सूर्यसम तेजोमय विष्णु के चरणकमलों का निरन्तर ध्यान लगाओ और उन युगल चरण-कमलों का तुरन्त ही भजन-कीर्तन करो। इस प्रकार अपने मन के दुर्विकारों को दूर कर वैकुण्ठलोक पहुँचने का उपाय खोज लो। १६० दूसरों के धन तथा स्त्री पर आसक्त हो निरन्तर पापार्जन कर तुम अपने को पतित होने मत दो। तुम सदा कमललोचन, अखिलेश्वर, माधव, नारायण, शरणागत वत्सल, परमात्मा, अद्वय परब्रह्म की भक्ति-विश्वासपूर्वक सेवा करो। शरण माँगते हुए उन चरणों पर पड़ो और शत्रु-भाव को छोड़ दो। तुम भगवद् प्रीति पाकर स्वयं सन्तुष्ट हो जाओ। कई प्रकार के पापाचरणों से युक्त होने पर भी भगवान राम तुम्हें शरण देंगे। उनके जैसे कारुण्यमूर्त्ति दूसरा कोई नहीं है। रघुपति का भक्तिपूर्वक भजन करनेवाले को दुबारा जन्म लेने का अवसर नहीं आता। हे रावण ! मैंने ये जो उपदेश दिये, ये मेरे अपने विचार नहीं, सनक आदि मुनियों से कहे गये तथा ब्रह्मा से

केट्टु दशानन्; नयनमिरुपतिलुमथ कनल् चितरुमारुटन् तन्नायुरुट्टि मिळिच्चु चोल्लीटिनान्—तिल सदृशमिवनेयिनि वेट्टि नुरुक्कुविन् धिक्कारमित्र कण्टील मट्टाक्कुमे । १७० मम निकट भुवि वटिवोटोप्पमिरुन्नुमां मट्टोरु जन्तुक्कळिङ्ङने चोल्लुमो ? भयवुमोरु विनयवुमिवन्नु काण्मानिल्ल पापियायोरु दुष्टात्मा शठनिवन् । कथयमम कथयमम रामनेन्नारुचोल् ? कानन वासि सुग्रीवनेन्नारेटो ! अवरेयुमनन्तरं जानकि तन्नेयुमत्यन्त दुष्टनां निन्नेयुं कोल्लुवन् । दशवदन वचनमिति केट्टु कोपं पूण्टु दन्तं कटिच्चु कपीन्द्रनुं चोल्लिनान्--निनवु तव मनसि पेरुतेत्रयुं नन्नु नी निन्नोटेतिरोरु नूरु नूरायिरं रजनिचर कुलपति कळाय् चमञ्ञुळ्ळोरु रावणन्मारोरुमिच्चेतित्तीटिलु नियतमितु मम चेरु विरल्क्कु पोरा पिन्ने नीयेन्तु चेय्युन्नतेन्नोटु कश्मल ! पवनसुत वचनमितु केट्टु दशास्यनुं पार्श्वस्थितन्मारोटाशु चोल्लीटिनान्--इविटे निशिचररोरुवरायुध पाणियायिल्लयो कळ्ळनेक्कोल्लुवान् चोल्लुविन् । १८० अतु पोळुतिलोरुवन-वनोटटुत्तीटिनानप्पोळ् विभीषणन् चोल्लिनान् मेल्लवे--अरुतरुतु

अनुमोदित वचन हैं।" पवनसुत द्वारा उक्त ये बातें अत्यन्त रोष से सुनकर दशानन के बीसों नेत्र क्रोधाग्नि प्रज्वलित करने लगे और भौहें चढ़ाते हुए उसने कहा—"इसे तिल-तिल करके काट दो। ऐसा धिक्कार मैंने और किसी में नहीं देखा। १७० इसे ज़रा भी डर नहीं है। मेरे निकट ही मेरे समान बैठकर क्या कोई दूसरा जन्तु इस प्रकार उपदेश देने का दुस्साहस कर सकता है ? इसमें न भय है, न नम्रता ही। यह तो बड़ा पापी दुष्टात्मा और मूर्ख है। अरे बन्दर ! मुझे बताओ। तुम्हारा राम कौन है ? तुम्हारा काननवासी सुग्रीव कौन है ? उन्हें, जानकी को और तुमको मैं मार डालूंगा।" दशवदन का यह वचन सुनकर कोपाकुल हो दाँत पीसते हुए कपीन्द्र ने कहा—"अरे दुष्ट ! तुम्हारे मन की अभिलाषा तुम्हारी शक्ति की सीमा के बाहर है। तुम नहीं, तुम्हारे जैसे गर्वीले सौ करोड़ रजनीचराधिप का बहाना करनेवाले रावण लोग मेरे विरोध में खड़े हों, वे मेरी छोटी उँगली तक की टक्कर नहीं ले सकेंगे। हे दुष्ट ! फिर तुम अकेले मेरा क्या बिगाड़ सकोगे ?" पवनसुत का यह वचन सुनते ही दशास्य ने अपने पार्श्व में खड़े लोगों को आज्ञा दी—"क्या बात है ? क्या हथियारबन्द यहाँ कोई राक्षस नहीं है ? इस चोर को खतम कर डालो।" १८० यह सुनकर एक आदमी उनकी ओर बढ़ा तो विभीषण

दुरितमितु दूतनेक्कोल्लुकेन्ताक्कर्टुत्तु नृपन्माक्कुं चौल्लीटुविन् । इवनेवयमिविटे विरवोटु कौन्नीटिनालेङ्ङनेयरियुन्नितु राघवन् ? अतिनु पुनरिवनौरटयाळमुण्टाक्कि नामङ्ङयय्क्केणमतल्लो नृपोचितं । इति सदसि दशवदन सहज वचनेन तानेङ्किलतङ्ङने चेय्केन्नु चौल्लिनान् । १८५

लङ्का दहनम्

वदनमपि कर चरणमल्ल शौर्य्यास्पदं वानरन्माक्कुं वाल् मेल् शौर्य्यमाकुन्नु । वयमतिनु झटिति वसनेन वाल् वेष्टिच्चु वह्नि कौळुत्तिप्पुरत्तिलेल्लाटवुं रजनिचर परिवृढरेटुत्तु वाद्यं कौट्टि रात्रियिल् वन्नौरु कळ्ळनेन्निङ्ङने, निखिल दिशि पलरुमिह केळुक्कुमारुच्चत्तिल् नीळे विळिच्चु परञ्ञु नटत्तुकिल् कुलहतक निवनरिक निस्तेजनन्नु तन् कूट्टत्तिल् निन्नु नीक्कीटुं कपिकुलं । तिलरसघृतादि संसिक्त वस्त्रङ्ङळाल् तीव्रं तेरुतेरेच्चुटुं दशान्तरे अतुल बलनचलतरमविटे मरुवीटिनानत्यायत स्थूलमायितु वाल् तदा । वसन गणमखिलवुमोटुङ्ङिच्चमञ्ञितु वालुमतीव

ने धीरे से कहा—"ठहरो, ठहरो । ऐसा मत करो । यह तो अधर्म है । दूत का वध करना राजाओं के अनुकूल नहीं है । अगर इसे यहीं मार गिरा देंगे तो यह समाचार राम को कैसे विदित होगा ? अतः कोई दाग-चिह्न लगाकर और अपमानित करके इसे यहाँ से भेज देना चाहिए । यही कार्य राजधर्म के अनुकूल होगा ।" दशवदन को सभा में विभीषण द्वारा दिया गया यह उपदेश उचित लगा और इसलिए उसने आज्ञा दी कि "ऐसा ही हो ।" १८५

लंका-दहन

वानरों के लिए बदन, कर, चरण आदि की अपेक्षा अपनी पूँछ बहुत प्यारी होती है और वही उनके शौर्य का निकेतन है । इसलिए इसकी पूँछ में कपड़े लपेटकर, वह्नि जलाकर राक्षसवीर इसे उठा लें और बाजा बजाकर और 'रात में आया चोर' ऐसा, सारी दिशाओं में लोगों को सुनायी पड़ने योग्य उच्च स्वर में घोषित करते हुए इसे पूरी नगरी में घुमाएँ तो इसे कुलनाशक एवं निस्तेज समझकर वानर-समूह अपने बीच से हटा देगा ।" रावण की आज्ञा पाकर जब राक्षस तेल, घृत आदि से स्निग्ध कपड़े पूँछ को लपेट रहे थे, तब अतुलनीय बलशाली हनुमान अचल सम बैठे रहे

शेषिच्चितु पिन्नेयुं। निखिल निलयन निहित पट्टांबरङ्ङळुं नीळेत्तिरञ्ञु कोण्टन्नु चुट्टीटिनार्। अतुमुटनोटुङ्ङि वाल् शेषिच्चु कण्टळवङ्ङुमिङ्ङु चेन्नु कोण्टुवन्नीटिनार्। १० तिलजघृत सुस्नेह संसिक्त वस्त्रङ्ङळ् दिव्य पट्टांशुक जालवुं चुट्टिनार्। विकृति पेरुतिवनु वसनङ्ङळिल्लोन्निनि स्नेहवुं मेल्लामोटुङ्ङीतशेषवुं। अलमलमितमलनिवनेवयुं दिव्य-निताक्कुं तोन्नी विनाशत्तिनेन्नार् चिलर्; अनलमिह वसन-मितिननलमिनि वालधिक्काशु कोळुत्तुविन् वैकरुतेतुमे। पुनरवरुमतु पोळुतु ती कोळुत्तीटिनार् पुच्छाग्रदेशे पुरन्दरारा-तिकळ्। बल सहितमबलमिव रज्जुखण्डं कोण्टु बद्ध्वा दृढतरं धृत्वा कपिवरं कितवमतिकळुमितोरु कळ्ळनेन्निङ्ङने कृत्वा रवमरंगत्वा पुरवरं; पड्कळेयुमुटनुटनड्ञड्ञङ्ङने पश्चिम द्वारदेशे चेन्नननन्तरं, पवनजनुमतिकृश शरीरनायीटिनान् पाशवुमप्पोळ् शिथिलमांय् वन्नितु। बलमोटवनति चपल-मचलनिभगात्रनाय् बन्धवुं वेर्पेट्टु मेल्पोट्टु पोङ्ङिनान्। २० चरमगिरि गोपुराग्रे वायुवेगेन चाटिनान् वाहकन्मारेयुं कोन्नवन्।

और उनकी पूँछ स्थूल एवं लम्बी होती गयी। लाये गये पूरे कपड़े समाप्त हुए, फिर भी पूँछ शेष रह गयी। फिर पूरी नगरी में इधर-उधर घूमकर सारे दिव्यवस्त्र लाकर पूँछ पर लपेटे गये। वे कपड़े भी खतम हुए, तो भी पूँछ शेष थी। फिर इधर-उधर से जो कपड़े हाथ लगे, ले आये। १० इस प्रकार तिल-घृत में डुबाकर सारे दिव्यवस्त्र, रेशमी कपड़े सब पूँछ को लपेट दिये। वे कहने लगे—"यह कोई दिव्य है। यहाँ अब न कपड़े शेष हैं न तेल ही।" कोई-कोई कहने लगे कि यह कोई महात्मा है, पता नहीं किसे यह अनुचित विनाशकारी कार्य सूझा। कुछ भी हो अब यहाँ कपड़े शेष नहीं हैं, इसलिए अविलम्ब पूँछ को आग जलायी जाए। यह सुनकर पुरन्दरारातियों (इन्द्र के शत्रु राक्षसों) ने पुच्छाग्र पर आग लगायी। हनुमान को दुर्बल समझकर उन लोगों ने उन्हें रस्सियों से बलपूर्वक बाँध लिया और उन्हें अपने कन्धों पर उठा लिया। उन मायावियों ने उच्च स्वर में 'चोर' घोषित करते हुए नगरी के चारों ओर उन्हें घुमाया। ज़ोर-ज़ोर से बाजे बजाते हुए जब राक्षस हनुमान को उठाये पश्चिम द्वार-देश पर पहुँचे तब हनुमान ने कृश रूप धारण किया जिससे सारे पाश शिथिल हो गये। वे बन्धन से मुक्त हो अचल सम शरीरी बन पूरी शक्ति लगाकर ऊपर की ओर उछल पड़े। २० अपने वाहकों को मारकर वे वायुसम

उडुपतियोटुरसुमळवुयरमियलुन्न रत्नोत्तुंग सौधाग्रमेरिमेवीटिनान् । उदवसित निकरमुटनुटनुपरि वेगमोटुलुप्लुत्य पिन्नेयुमुलुप्लुत्य सत्वरं कनक मणिमय निलयमखिलमनिलात्मजन् कत्तिच्चु कत्तिच्चु वर्द्धिच्चितग्नियुं; प्रकृति चपलतयोटवनचलमोरोमणि प्रासाद जालङ्ङळ् चुट्टु तुटङ्ङिनान् । गजतुरग बल पदातिकळ् पंक्तियुं गम्यङ्ङळायुळ्ळ रम्य हर्म्म्यङ्ङळुं, अनल शिख कळु-मनिल सुत हृदयवुं तेळिञ्ञाहन्त ! विष्णुपदं गमिच्चू तदा । विबुध पतियोटु निशिचरालयं वेन्तोरु वृत्तान्तमेल्लामरियिच्चु कोळ्ळुवान् अहमहमिकाधिया पावक ज्वालकळंबरत्तोळमुयर्न्नु चेन्नू तदा । भुवनतलगत विमल दिव्यरत्नङ्ङळाल् भूति परिपूर्णमायुळ्ळ लङ्कयुं ३० पुनरनिल सुतनिति दहिप्पिच्चि-तेङ्ङिकलुं भूति परिपूर्णमाय् वन्नितत्भुतं । दशवदन सहज गृहमेन्नियेमट्टुळ्ळ देवारि गेहङ्ङळ् वेन्तु कूटी जव । रघुकुल पतिप्रिय भृत्यनां मारुति रक्षिच्चु कोण्टान् विभीषण मन्दिरं । कनक मणिमय निलय निकरमतु वेन्तोरो कामिनी वर्ग्गं विलापं तुटङ्ङिनार् । चिकुर भर वसन चरणादिकळ् वेन्ताशु जीवनुं

वेग से कूदकर ऊँचे गोपुराग्र पर चढ़ गये और उडुपति (चन्द्र) के स्पर्श करनेवाले उत्तुंग रत्नसौधाग्र पर आ बैठे । फिर ऊँचे भवन-भवन पर कूद-कूदकर अनिलात्मज (पवनपुत्र हनुमान) ने कनकमणि निर्मित सारे भवनों को आग लगायी । अग्नि-ज्वाला बहुत बढ़ गयी । स्वभाव से चपल हनुमान ने उत्तुंग सौध, गोपुर, प्रासाद सब के सब जला दिये । गज, तुरग (घोड़े), पैदल-सेना के समूहों सहित सारे रम्यहर्म्य (सुन्दर मकान) अग्नि को स्वाहा हो गये । इससे आग की ज्वाला प्रज्वलित हो आकाश की ओर उठी तो अनिलसुत का हृदय सानन्द रामपदों में तल्लीन हुआ । आकाश की ओर एक से बढ़कर एक वह्नि ज्वाला को उठते देख ऐसा जान पड़ता था मानो विबुधपति (इन्द्र) से निशिचरालय (राक्षसों के भवन) के जल जाने की सूचना देने 'मैं पहले मैं पहले' की स्पर्धा लिये जा रही हों । सुवर्ण रत्नादियों की विभूति (ऐश्वर्य) से परिपूर्ण लंका नगरी—३० —अनिलसुत के द्वारा जलायी जाने पर विभूति (राख) से भर गयी । विस्मय की बात है ! दशवदन के सहज (विभीषण) के भवन को छोड़ शेष सब के सब भवन जलकर भस्म हो गये । रघुकुलपति (राम) के प्रिय दास ने विभीषण का भवन जलने से बचा दिया । इस प्रकार कनक-मणिमय भवनों को जल उठते देख राक्षस-नारियाँ चिल्ला उठीं । कोई

वेर्पेट्टु भूमौ पतिक्कयुं, उटलुरुकियुरुकियुटनुळ्ळियलय्प्पाञ्ञु मुन्नतमाय सौधङ्ङळिलेय्युं, दहननुटनविटेयुमट्टु दहिप्पिच्चु ताळत्तु वीणु पिटञ्ञु मरिक्कयुं, मम तनय ! रमण ! जनक ! प्राणनाथ ! हा मामकं कर्म्ममय्यो ! विधिदैवमे ! मरणमुटनुटलुरुकि मरुकि वरिकॆन्नतु माट्टु वानारुमिल्लय्यो ! शिवशिव ! दुरितमितु रजनिचरवर विरचितं दृढं मट्टोरु कारणमिल्लितिनेतुमे । ४० परधनवुममित परदारङ्ङळुं बलाल् पापि दशास्यन् परिग्रहिच्चान् तुलों । अय्किलनुचितमतु मदेन चेय्तीटाय्किनारुमतिन्टे फलमितु निर्णयं । मनुज तरुणियेयोरु महापापि कामिच्चु मट्टुळ्ळवर्क्कुमापत्तायितिङ्ङने । सुकृत दुरितङ्ङळुं कार्य्यमकार्य्यवुं सूक्षिच्चु चेय्तु कोळ्ळणं बुधजनं । मदनशरपरवशतयोटु चपलनायिवन् माहात्म्यमुळ्ळ पतिव्रतमारेयुं करबलमोटनुदिनमणञ्ञु पिटिच्चति कामि चारित्र भंगं वरुत्तीटिनान् । अवर् मनसि मरुविन तपोमय पावकनद्य राज्ये पिटिपॆट्टितु केवलं । निशिचरिकळ् बहुविधिमोरोन्ने पऱकयुं निल्वकुं निलयिले वॆन्तु मरिक्कयुं; शरणमिहकिमिति पल वळियुमुटनोटियुं

चिकुर जाल, वसन, हाथ-पैर जल मरकर धराशायी होती है। कई स्त्रियाँ देह गलकर भाग-भागकर उन्नत सौधों पर चढ़ती हैं तो अग्नि वहीं पहुँच जाती है और वे जल-जलकर नीचे गिर पड़ती हैं। इधर-उधर से जल मरती अनाथ स्त्रियों की पुकारें सुनायी पड़ती हैं—"हे पुत्र !, हे स्वामी !, हे पिता !, हे प्राणनाथ ! हाय मेरा दुष्कर्म ! हाव दैव ! दैव ! इस प्रकार जल मरती हमें बचानेवाला कोई नहीं है। हे शिव ! हे शिव ! निश्चय ही यह रावण के दुष्कर्म का फल है, इसका और कोई कारण नहीं जान पड़ता । ४० इस दुष्ट रावण ने दूसरों का धन और असंख्य पर-नारियों का बलात् अपहरण कर लिया। किसी को ऐसा अविहित कर्म नहीं करना चाहिए। अविहित कर्म का यही फल होता है। एक मानवी को यह कामातुर पापी उठा लाया, जिसका दुष्फल दूसरों को भोगना पड़ रहा है। बुद्धिमानों को चाहिए कि पाप-पुण्य, कार्य-अकार्य को परखकर ही कोई काम करें। मदनबाण से पीड़ित एवं चंचल बना यह कई सती-साध्वियों को भुजबल से प्रतिदिन उठा लाकर उनका चारित्र्य भंग करता आया। उन्हीं नारियों के तपःबल की अग्नि ने ही सारी नगरी जला डाली है। राक्षस स्त्रियाँ इस प्रकार नाना प्रकार से प्रलाप करती हुई पछाड़ खा गिर रही हैं। 'कहाँ शरण मिलेगी' इस चिन्ता से वे चारों ओर भागती जा रही हैं,

शाखिकळ् वेन्तु मुरिञ्ञुटन् वीळ्कयुं; रघुकुलवरेष्ट दूतन् त्रियामाचर राज्यमेळुतूरु योजनयुं क्षणाल् ५० सरस बहुविभव-युत भोजनं तल्किनान् सन्तुष्टनायितु पावक देवनुं। लघुतर-मनिल तनयनमृत निधितन्निले लांगूलवुं वच्चु तीपोलिच्चीटिनान्। पवनजनु दहननपि चुट्टतिल्लेतुमे पावकनिष्ट सखियाक कारणं। पतिनिरतयाकिय जानकी देवियाल् प्रार्त्थितनाकयालुं करुणावशाल् अवनितनया कृपा वैभवमत्भुतमत्यन्त शीतळनायितु वह्नियुं। रजनिचर कुल विपिन पावकनाकिन रामनामस्मृति कोण्टु महाजनं तनयदारमोहार्त्तरेन्नाकिलुं तापत्रयानलनेक्कटन्नीटुन्नु। तदभिमत-कारियायुळ्ळ दूतन्नु सन्तापं प्रकृतानलेन भविक्कुमो? भवतियदि-मनुज जननं भुवि सांप्रतं पङ्कज लोचननेब्भजिच्चीटुविन्। भुवनपति भुजगपति शयन भजनं भुवि भूतदैवात्मसंभूत तापापहं ६० तदनु कपिकुल वरनुमवनितनयापदं ताणु तोळुतु नमस्कृत्य चोल्लिनान्—अहमिनियुमुळ्ळि न्नटकोळ्ळुवनक्करयक्का-ज्ञापयाशु गच्छामि रामान्तिकं। रघुवरनुमवरजनुमरुणजनुभाय्

तो कहीं वृक्षों की शाखाएँ जलकर टूट रही हैं और नीचे पड़ती जा रही हैं। रघुकुल-श्रेष्ठ के प्रिय दूत ने सात सौ योजन विस्तार का राक्षस-राज्य क्षणभर में—५० —पावक (अग्निदेव) को मिष्ठान्न भोजन के लिए अर्पित कर दिया, जिससे पावकदेव खूब सन्तुष्ट हो उठे। फिर अनिलपुत्र ने सागर में कूदकर अपनी पूँछ की आग बुझायी। अपने प्रिय मित्र के पुत्र के प्रति वात्सल्य भाव तथा पतिव्रतारत्न जानकी की प्रार्थना को मानकर अग्निदेव ने पवनपुत्र को अग्निज्वाला का ज़रा भी अनुभव नहीं करने दिया। भू-सुता का कृपा-वैभव आश्चर्यजनक है कि उसके कारण अग्नि भी पवनसुत के लिए शीतल सी लगी। चाहे कोई पुत्र-दारा के प्रति कितना ही आसक्त जीवन व्यतीत करे, किन्तु राक्षस रूपी वन के लिए पावक (अग्नि) सम राम-नाम का स्मरण करके वह संसार के तापत्रय को पार कर लेता है। ऐसी हालत में राम के अभीष्टकारी दूत पर साधारण आग का कुछ प्रभाव पड़ सकता है? अतः यदि इस पृथ्वी पर किसी ने जन्म लिया तो उसे चाहिए कि पंकजलोचन (राम) का भक्तिपूर्वक भजन करे। शेषनाग पर शयित लोकेश्वर का भजन करने से संसार के सारे ताप और सारे पाप स्वयं नष्ट हो जाते हैं। ६० (लंका जलाने के) उपरान्त कपिश्रेष्ठ ने भू-सुता के चरणों पर हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए कहा—"हे देवी! अब मैं रामचन्द्रजी के पास वापस लौटना चाहता हूँ,

द्रुतमागमिच्चीटुमनन्त सेनासमं। मनसि तव चेरुतु परिताप-मुण्टाकोलामद्भरं कार्य्यमिनिज्जनकात्मजे! तोळुतमित विनयमिति चोन्नवन्तन्नोटु दुःखमुळ्ळकोण्टु पऱञ्ञितु सीतयुं—मम रमण चरितमुर चेय्त निन्नेक्कण्टु मानस तापमकन्नितु मामकं; कथ मिनियुमहमिह वसामि शोकेनमल् कान्त वृत्तान्त श्रवण सौख्यं विना। जनक नृप दुहितृ गिरमिङ्ङने केट्टवन् जातानु कम्पं तोळुतु चोल्लीटिनान्—कळक शुचमिनि विरह मलमतिनुटन् मम स्कन्धमारोह्क्षणेन ञान् कोण्टु पोय् तव रमण सविधमुपगम्य योजिप्पिच्चु तापमशेषमद्यैव तीर्त्तीटुवन्। ७० पवनसुत वचन मितु केट्टु वैदेहियुं पारं प्रसादिच्चु पार्त्तु चोल्लीटिनाळ्—अतिनु तव करुतुमळविल्लोरु दण्डमेन्नात्मनि वन्नितु विश्वासमद्यमे। शुभचरितनति बलमोटाशु दिव्यास्त्रेण शोषण बन्धनाद्यैरपि सागरं कपिकुल बलेन कटन्नु जगत्त्रय कण्टकनेक्कोन्नु कोण्टु पोमाशुमां। मरिवोटोरु निशि रहसि कोण्टु पोयालतु मल् प्राणनाथ कीर्त्तिक्कु पोरा दृढं। रघुकुलज वरनिविटे वन्नु युद्धं चेय्तु रावणनेक्कोन्नु

जिसके लिए आप मुझे आज्ञा दीजिए। रघुवर, अनुज लक्ष्मण और अरुणज (सूर्यपुत्र सुग्रीव) असंख्य सेना लेकर तुरन्त ही यहाँ आ पहुँचेंगे। हे जनकात्मजे! अब आगे का कार्य मैं देख लूँगा। उसके सम्बन्ध में सोचकर आपको दुखी होने की आवश्यकता नहीं है।" इस प्रकार हाथ जोड़कर अत्यधिक विनयपूर्वक बात करनेवाले (हनुमान) से सीताजी ने कहा—"मेरे प्रिय के समाचार सुनानेवाले तुम्हें देखकर मेरा मानसिक सन्ताप दूर हुआ था, किन्तु अब तुम विदा ले रहे हो। आगे उनका चरित सुनने का अवसर न पाकर मैं दुखी हो कैसे दिन गुजारूँ?" जनकात्मजा की यह वाणी सुनकर हनुमान ने अनुकम्पा पूर्वक कहा—"हे माता! आप अपना दुःख त्याग दीजिए। अब पति-विरह सहने की आवश्यकता नहीं है। अभी आपको कन्धे पर उठा ले जाकर क्षण में पति के समीप पहुँचा दूँगा और इस प्रकार पति से मिलाकर आपका विरह-ताप दूर कर दूँगा।" ७० पवनसुत का यह वचन सुनकर सानन्द वैदेही ने विचारपूर्वक कहा—"मुझे मन में पूरा विश्वास हो चुका है कि इसमें तुम्हें कोई कठिनाई नहीं है। किन्तु रात में इस प्रकार रहस्यपूर्ण ढंग से उठा ले जाना मेरे स्वामी की कीर्ति के अनुकूल नहीं होगा। इसलिए तुम यह प्रयास करो कि शुभ चरित (श्रीराम) आग्नेयास्त्र से सागर का जल सोखकर या फिर सेतु बाँधकर वानरसेना सहित उसे पारकर इधर आएँ और जल्दी ही त्रिलोक

कौण्टु पोय्क्कोळ्ळुवान् अतिरमसमयि तनय ! वेल चेय्तीटु
न्नी यत्र नाळुं धरिच्चीटुवन् जीवने। इति सदयमवनोटरुळ्
चेय्तयच्चीटिनाळिन्दिरादेवियुं पिन्ने वातात्मजन् तोळुतखिल
जननियोटु यात्र वळङ्ङिच्चु तूर्ण्णं महार्ण्णवं कण्टु
चाटीटिनान्। ७९

हनुमान्ड्रे प्रत्यागमनम्

त्रिभुवनवुमुलये मुहुरोन्नलरीटिनान् तीव्रनादं केट्टु वानर
संघवुं करुतुविनितोरु निनदमाशु केळ्क्कायतुं कार्य्यमाहन्त
साधिच्चु वरुन्नितु पवनसुतनतिनु नहि संशयं मानसे पार्त्तु
काणकोच्च केट्टालऱियामतुं; कपि निवहमिति बहुविधं पऱयुं
विधौ काणायितद्रि शिरसि वातात्मजं। कपि निवह वीररे !
कण्टितु सीतये काकुत्स्थ वीरननुग्रहत्तालहं। निशिचर वरालय-
माकिय लङ्कयुं निश्शेषमुद्यानवुं दहिप्पिच्चितु; विबुधकुल
वैरियाकुं दशग्रीवने विस्मयमाम्मारु कण्टु पऱञ्ञितु, झटिति
दशरथसुतनोटिक्कथ चोल्लुवान् जांबवदादिकळे न्नटन्नीटुविन्।

के लिए कंटक-सम रावण का वध करके मुझे ले जाएँ। तब तक मैं
जीवित रहूँगी।" यह कह इन्दिरादेवी (सीता) ने उन्हें सदय विदा किया
और लोकजननी को प्रणाम करके, (हनुमान) अनुमति लेकर समुद्र को
देख कूद पड़े। ७९

हनुमान का प्रत्यागमन

महावीर पराक्रमी हनुमान ने अपने आगमन की सूचना देने के लिए
त्रिभुवनों को कम्पित करते हुए उच्च स्वर में गर्जना की। हनुमान की
प्रतीक्षा में बैठे कपिश्रेष्ठों ने परस्पर कहा—"हे वानरवीरो ! उच्च स्वर
सुनो, निश्चय ही पवनसुत अपना कार्य सिद्ध करके लौट रहे हैं। इसमें
सन्देह नहीं है, शब्द से ही वे पहचाने जा रहे हैं।" जब वानर लोग इस
प्रकार परस्पर बातचीत कर रहे थे तब अकस्मात् महेन्द्र पर्वत-शिखर पर
वातात्मज (हनुमान) दिखाई दिये। वहीं से हनुमान ने वानरों को सूचित
किया—"हे कपीश्वर ! श्रीरामचन्द्रजी की कृपा से मैंने सीताजी को देख
लिया है। यही नहीं, राक्षसराज की लंका और उसके चारों ओर के
उद्यान सब जला दिये और देवताओं के शत्रु रावण से आमने-सामने ही
बात भी हुई। हे जाम्बवान् प्रभृति वीरो ! अब यह सूचना पहुँचाने के
लिए हम सब दशरथपुत्र के समीप चलें।" यह सुनकर कपियों ने

अतु पोळ्तु पवनतनयनेयुमवरादरिच्चालिंग्य गाढमाचुंब्य बालाञ्चलं; कुतुकमोटु कपि निचयमनिलजने मुन्निट्टु कूट्ट मिट्टार्त्तु विळिच्चु पोयीटिनार् । १० प्लवग कुल परिवृढरु मुळरि तट कोण्टु पोय् प्रस्रवणाचलं कण्टु मेवीटिनार् । कुसुमदल फल मधुलता तरु पूर्णमां गुल्म समावृतं सुग्रीव पालितं क्षुधित परिपीडितराय कपिकुलं क्षुद्विनाशार्त्थमार्त्त्या पऋञ्ञीटिनार्— फल निकर सहितमिह मधुर मधुपूरवुं भक्षिच्चु दाहवुं तीर्त्तु नामोक्कवे तरणिसुत सविधमुपगम्य वृत्तान्तङ्ङळ् तामसं कैविट्टु-णर्त्तिक्क सादरं । अतिननुवदिच्चरुळेणमेन्नाश पूण्टंगदनोट-पेक्षिच्चोरनन्तरं अतिनवनुमवरोटुटनाज्ञयेच्चेय्कयालाशु मधुवनं पुक्कितेल्लावरुं । परिचोटति मधुर मधुपानवुं चेय्तवर् पक्व-फलङ्ङळ् भक्षिक्कुं दशान्तरे, दधिमुखनुमनिशमतु पालनं चेय्वितु दानमानेन सुग्रीवस्य शासनाल्; दधिवदन वचनमोटु नियतमतु काक्कुन्न दण्डधरन्मारटुत्तु तटुक्कयाल् २० पवनसुतमुख कपिकळ् मुष्टि प्रहारेण पाञ्ञार्भयप्पेट्टवरुमति द्रुतं । त्वरितमथ दधिमुखनु-माशु सुग्रीवने तूर्णमालोक्य वृत्तान्तङ्ङळ् चोल्लिनान्—तव मधुवनत्तिनु भंगं वरुत्तिनार् तारेयनादिकळाय कपिबलं;

निस्सीम आनन्द के कारण पवनसुत को सादर गले से लगाया और उनकी पूँछ चूम ली। सानन्द वानर हनुमान को आगे करके पीछे-पीछे कोलाहल-पूर्वक आगे बढ़े। १० चलते-चलते मार्ग में वानरों ने प्रस्रवण पर्वत देखा। वहाँ समीप पहुँचते ही कुसुमों, दलों, फलों, मधुरलताओं, वृक्षों से परिपूर्ण एवं सुग्रीव से पालित मधुवन दिखाई पड़ा। क्षुधा से पीड़ित वानरों ने अपनी क्षुधा मिटाने के लिए अंगद से कहा—"हम लोग मधुर मधुपूरित फल खाकर और जल-पानकर क्षुधा-तृषा बुझाकर फिर सूर्यपुत्र सुग्रीव के समीप अविलम्ब पहुँचकर सारे समाचार सुना देंगे। इसके लिए आप अनुमति प्रदान करें।" इस प्रकार आशा-भरे शब्दों में प्रार्थना करनेवाले वानरों को अंगद ने मधुवन में प्रवेश कर फल आदि तोड़ने की अनुमति दी। वे सब मधुवन में प्रविष्ट हुए। उन्हें पक्व फलों और मधुर मधु का सानन्द उपभोग करते देख, सुग्रीव की आज्ञा से मधुवन की देखभाल करनेवाले क्रुद्ध दधिमुख ने वानरों को रोकने तथा मना करने के लिए अपने भृत्यों को भेज दिया। २० हनुमान आदि वानरों के मुष्टिप्रहार से भयाकुल हो भाग आते अपने भृत्यों को देखकर दधिमुख ने सुग्रीव के सामने प्रणाम करके कहा—"हे स्वामी! तारेय (अंगद) आदि कपिवरों ने आपके मधुवन को

सुचिरमतु तव करुणया परि पालिच्चु सुस्थिरमाधिपत्येन वाणेनहं ।
वलमथन सुत तनयादिकळीक्कवे वन्नु मल्भृत्य जनत्तेयुं वेन्नुटन्
मधुवनवुमितु पोळुतळिच्चितेन्निङ्ङने मातुल वाक्यमाकर्ण्य
सुग्रीवनुं, निज मनसि मुहुरपि वळर्न्न सन्तोषेण निर्म्मलात्मा
रामनोटु चोल्लीटिनान्—पवनतनयादिकळ् कार्य्यवुं साधिच्चु पारं
तेळिञ्ञु वरुन्नितु निर्ण्णयं; मधुवनमतल्लयेन्नाकिलेन्ने बहुमानि-
याते चेन्नु काण्कयिल्लारुमे । अवरे विरवोटु वरुवतिन्नु
चोल्लङ्ङु चेन्नात्मनि खेदिक्क वेण्टा वृथा भवान् । ३०
अवनुमतु केट्टुळरिच्चेन्नु चोल्लिनानञ्जनापुत्रादिकळोटु सादरं ।
अनिल तनयांगद जांबवदादि कळञ्जसा सुग्रीव भाषितं केळ्क्कयाल्
पुनरवरुमतु पोळुतु वाच्च सन्तोषेण पूर्ण्ण वेगं नटन्नाशु चेन्नी-
टिनार् । पुकळ् पेरिय पुरुष मणि रामन् तिरुवटि पुण्य पुरुषन्
पुरुषोत्तमन् परन् पुरमथन हृदि मरुवुमखिल जगदीश्वरन्
पुष्करनेत्रन् पुरन्दर सेवितन्; भुजगपति शयननमलन् त्रिजगल्
परिपूर्ण्णन् पुरुहूत सोदरन् माधवन्; भुजग निवहाशन वाहनन्
केशवन् पुष्करपुत्री रमणन् पुरातनन्; भुजगकुल भूषणाराधितांघ्रि-

उजाड़ डाला है । आपकी आज्ञा से मैं उसकी खूब देखभाल करता आ रहा था । पर अंगद आदि कपिवरों ने मेरे भृत्यों को मार भगाकर मधुवन को अरक्षित कर डाला है ।" मातुल (मामा) का यह कथन सुनकर अपने मन में उमड़ पड़े आनन्द को लिये सुग्रीव ने निर्मलात्मा राम से कहा—"पवनसुत आदि कार्यसिद्धि पर प्रसन्न हो आ रहे हैं । अन्यथा मेरी अनुमति लिये बिना कोई मधुवन में प्रवेश करने का साहस नहीं करता ।" फिर दधिमुख को आज्ञा दी—"आप व्यर्थ दुखी न हों । आप जाकर उन्हें यहाँ तुरन्त भेज दीजिए ।" ३० यह सुन उसने सादर अंजना-पुत्र आदि को बताया (कि सुग्रीव आप लोगों को बुला रहे हैं ।) । सुग्रीव की सूचना पाकर हनुमान, अंगद, जाम्बवान् आदि अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक तुरन्त ही चल पड़े और सुग्रीव के पास पहुंचे तो वहाँ पुण्य पुरुष, परमात्मा, पुरुषोत्तम, पुरमथन (शिव) के हृदय में सदा वास करनेवाले, जगदीश्वर, कमल जैसे नेत्रवाले, पुरन्दर (इन्द्र) से पूजित, भुजगपति (शेषनाग) को अपनी शैया बनाये हुए, त्रिभुवन में परिपूर्ण, पुरुहूत सोदर (इन्द्रानुज—वामन रूप में अवतार लेने के कारण इन्द्र का अनुजत्व), माधव, गरुडवाहन, केशव, पुष्करपुत्री रमण (लक्ष्मीवल्लभ), आदिस्वरूप, शिव से पूजित युगल चरणोंवाले, पुष्करसम्भव (ब्रह्मा) से सेवित, निर्गुण, भुवनपति, मखपति,

द्वयन् पुष्कर संभवपूजितन् निर्ग्गुणन्; भुवनपति मखपति सतां-पति मल्पति पुष्कर बांधव पुत्रप्रिय सखि भुजबलवतांवरन् पुण्य जनान्तकन् भूपति नन्दनन् भूमिजा वल्लभन्। ४० भुवनतल पालकन् भूत पञ्चात्मकन् भूरिभूतिप्रदन् पुण्यजनार्च्चितन्, भुजभव कुलाधिपन् पुण्डरीकाननन् पुष्पबाणोपमन् भूरि कारुण्यवान्, दिवसकर पुत्रनुं सौमित्रियुं मुदा दिष्ट पूर्ण्णं भजिच्चन्तिके सन्ततं। विपिन भुवि सुखतरमिरिक्कुन्नतु कण्टु वीणु वणङ्ङिनान् वायुपुत्रादिकळ्। पुनरथ हरीश्वरन् तन्नेयुं वन्दिच्चु पूर्ण्णमोदं पङ्क्जाननञ्जनात्मजन्—कनिविनोटु कण्टेनहं देवियेत्तत्र कर्बुरेन्द्रालये सङ्कटमेन्नियये; कुशलवुमुटन् विचारिच्चितु तावकं कूटेस्सुमित्रातनयनुं सादरं। शिथिलतर चिकुरमोटशोक-वनिकयिल् शिंशपामूलदेशे वसिच्चीटिनाळ्। अनशनमोटति कृशशरीरयायन्वहमाशरनारी परिवृतयाय् शुचा, अळल् पेरुकि मरुकि बहुबाष्पवुं वार्त्तु वार्त्तय्यो! सदा राम रामेति मन्त्रवुं; ५० मुहुरपि जपिच्चु जपिच्चु विलापिच्चु मुग्धांगिमेवुन्न नेरत्तु ञान् तदा अतिकृश शरीरनाय् वृक्षशाखान्तरे आनन्दमुळ्क्कोण्टिरुन्नेन-नाकुलं। तव चरितममृतसममखिलमरिियिच्चथ तम्पियोटुं

सतांपति तथा पुष्कर बांधव पुत्र (सूर्यपुत्र सुग्रीव) के सखा, भुजबल की दृष्टि से बेजोड़, राक्षसों के लिए यमराज सम, भूपतिनन्दन (दशरथ-पुत्र), भूमिजा वल्लभ (सीताजी के स्वामी)—४० —भुवनों के संरक्षक, पंचभूतात्मक, भूरि सम्पत्ति के दाता, पुण्यजनों से आराध्य, भुजभव कुलाधिप (क्षत्रिय श्रेष्ठ), कमल-सम दीप्त मुखवाले, पुष्पबाण (कामदेव) सम तेजोमय, भूरि करुणा से युक्त तथा सूर्यात्मज एवं सुमित्रात्मज से सेवित हो बैठे पुरुषरत्न राम को देखकर वायुपुत्र आदि ने उनके चरणों पर पड़कर नमस्कार किया। बाद में हरीश्वर (वानरराज सुग्रीव) को प्रणाम करके सहर्ष हनुमान ने राम से कहा—"हे स्वामी! आपकी कृपा से मैंने कर्बुरेन्द्रालय (रावण के भवन) में बैठी देवी का दर्शन किया। उन्होंने पहले प्रभु (राम) का और साथ ही सुमित्रात्मज का कुशल पूछा। वे खुले बाल और मलिन वस्त्र पहने अशोक वाटिका में शिंशपा वृक्ष के तले बैठी हैं। अनशन के कारण कृशकाया देवी राक्षस-स्त्रियों से घिरी रहती हैं। दुखार्ता देवी अश्रुधारा बहाती हुई 'राम राम' का मन्त्र करती रहती हैं। ५० राम-मन्त्र का जाप और विलाप करती सीताजी को देखकर मैं अत्यन्त कृश-शरीरी बन थोड़ी देर तक वृक्ष की शाखा पर बैठा रहा।

ऩिन्तिरुवटि तन्नोटुं चॆरुतुटज भुवि रहितयाय् मरुवुं विधौ चॆन्नु दशाननन् कॊण्टङ्ङु पोयतुं; सवितृ सुतनोटु झटिति सख्यमुण्टायतुं संक्रन्दनात्मजन् तन्नॆ वधिच्चतुं; क्षितिदुहितुरन्वेषणार्थं कपीन्द्रनाल् कीशौघमाशु नियुक्तमायीटिनार्। अहमवरिलॊरुवनिविटेय्क्कु वन्नीटिनेनर्णवं चाटि कटन्नति विद्रुतं; रवितनय सचिवनहमाशुगनन्दनन् रामदूतन् हनुमानॆन्नु नामवुं; भवतियॆयुमिह झटिति कण्टु कॊण्टेनहोभाग्यमाहन्त भाग्यं कृतार्थोस्म्यहं। फलितमखिलं ममाद्य प्रयासं भृशं पत्मजालोकनं पाप विनाशनं। ६० मम वचनमिति निखिलमाकर्ण्य जानकि मन्द मन्दं विचारिच्चितु मानसे—श्रवणयुगळामृतं केनमेश्रावितं श्रीमतामग्रेसरनवन् निर्णयं। मम नयन युगळ पथमायातु पुण्यवान् मानववीर प्रसादेन दैवमे। वचनमिति मिथिल तनयोदितं केट्टु ञान् वानराकारेण सूक्ष्मशरीरनाय् विनयमोटु तॊऴुतटियिल् वीणु वणङ्ङिनेन् विस्मयत्तोटु चोदिच्चितु देवियं—अऱिवतिनु पऱक नीयारॆन्नतॆन्नोटित्यादि वृत्तान्तं विवरिच्चनन्तरं कथितमखिलं मया देव वृत्तान्तङ्ङळ् कञ्जदळाक्षियुं विश्वसिच्चीटिनाळ्। अतु पॊऴुतिलकतळिरिलळ्ल् कळवतिन्नु ञानंगुलीयं

फिर अनाकुल भाव से आपका पावन चरित सविस्तार कह सुनाया। एकान्त कानन प्रदेश में अकेली आश्रम में उनके रहते समय रावण का आगमन और देवी को चुरा ले जाना, सूर्यात्मज के साथ आपकी मैत्री, इन्द्रपुत्र बालि का वध, भूसुता के अन्वेषणार्थ कपियों का भेजा जाना आदि कथाएँ विस्तारपूर्वक सुनायीं और कहा कि उन वानरों में से एक मैं विशाल सागर लाँघकर यहाँ आ गया हूँ। मैं सूर्यात्मज का सचिव, रामदूत तथा वायुतनय हनुमान हूँ। देवी को यहाँ देखने का सौभाग्य पाकर मैं अपने को कृतार्थ समझता हूँ। पापविनाशिनी कमललोचना को खोज निकालने का मेरा यह पहला प्रयास सफल हुआ।" ६० मेरा यह कथन पूरा सुनने के उपरान्त जानकी ने धीरे-धीरे मन में सोचा कि "मेरे युगल श्रवणों को अमृतोपम यह कथा कौन सुना रहा है! जो भी सुना रहा हो वह भगवद्-भक्तों में अग्रेसर अवश्य है। हे दैव! वह पुण्यशाली मेरे नेत्रों के लिए विषयीभूत हो जाए!" मैथिली का यह आग्रह सुनकर कृशशरीर वानराकार में मैंने उनके चरणों पर पड़ विनीत भाव से प्रणाम किया तो विस्मयपूर्वक देवी ने पूछा—"तुम कौन हो?" विश्वास दिलाने के लिए तुम अपना पूरा वृत्तान्त मुझे बताओ।" मुझसे देव सम्बन्धी पूरा वृत्तान्त सुनने पर

कोट्टुत्तीटिनेनादराल् । करतळिरिलतिने विरवोट्टु वाङ्ङित्तदा कण्णुनीर कोण्टु कळुकिक्कळञ्ञुटन् शिरसि दृशि गळ भुवि मुलत्तटत्तिङ्कलुं शीघ्रमणच्चु विलापिच्चितेट्वुं । ७० पवनसुत ! कथयमम दुःखमेल्लां भवान् पत्माक्षनोट्टु नी कण्टिटल्लो सखे ! निशिचरिकळनुदिनमुपद्रविक्कुन्नतुं नीयङ्ङु चेन्नु चोल्केन्नु चोल्लीटिनाळ् । तव चरितमखिलमलिवोट्टुणत्तिच्चु ञान् तम्पियोटुं कपि सेनयोटुं द्रुतं, वयमवनिपतिये विरवोट्टु कूट्टिक्कोण्टु वन्नु दशास्यकुलवुं मुटिच्चुटन्, सकुतुकमयोद्ध्या पुरिक्काशु कोण्टु पों सन्तापमुळ्ळलुण्टाकरुतेतुमे । दशरथ सुतन्नु विश्वासार्त्थ-मायिनिद्देहिमे देवि चिह्नं धन्यमादराल् । पुनरीरटयाळ वाक्कुं पऱञ्ञीटुक पुण्यपुरुषनु विश्वास सिद्धये । अतुमवनि सुतयोटह-मिङ्ङने चोन्नळवाशु चूडारत्नमादराल् नल्किनाळ् । कमल मुखि कनिविनोट्टु चित्रकूटाचले कान्तनुमाय् वसिक्कुन्नाळोरु दिनं कठिनतर नखरनिकरेण पीडिच्चोरु काक वृत्तान्तवुं चोल्कन्नु चोल्लिनाळ् । ८० तदनु पलतरमिव पऱञ्ञुं करञ्ञुमुळ्त्तापं कलर्न्नु मरुवुं दशान्तरे बहुविध वचोविभवेन दुःखं तीर्त्तु

देवी के मन में पूरा विश्वास हुआ। उसके बाद मन की शंका दूर करने के विचार से मैंने सादर अंगुलीय हाथ में रख दिया। उसे हाथ में लेकर देवी ने अश्रुजल से धो दिया और उसे मस्तक, नेत्र, गला तथा स्तनों के बीच के तटस्थल से लगाती हुई खूब विलाप करने लगीं। ७० फिर देवी ने कहा—"हे पवनसुत ! तुम अपनी आँखों से देखा मेरा विरह-दुःख पद्माक्ष राम को बता दो। यही नहीं, निशिचरों की स्त्रियों के द्वारा सताये जाने की बात भी तुम उन्हें समझा दो।" देवी के इस प्रकार के कथन पर मैंने उन्हें आपका पूरा समाचार सुनाया तथा आश्वासन दिलाया कि आपको अनुज लक्ष्मण तथा कपिसेना सहित यहाँ ले आऊँगा तथा आप निशिचर कुल को समाप्त करके उन्हें सानन्द एवं सुखपूर्वक अयोध्यापुरी ले जाएँगे। अतः यह सोचकर दुखी होना व्यर्थ है। मैंने दशरथ-पुत्र राम के विश्वास के लिए चिह्न माँगा तथा पुण्यपुरुष को विश्वास दिलाने के लिए संकेत रूप में सन्देश भी माँग लिया। मेरे द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर भूसुता ने सादर अपना चूड़ारत्न मेरे हाथ में दिया तथा चित्रकूट में पति के साथ रहते समय एक दिन एक काक के द्वारा अपने नखों तथा चोचों से उनके सताये जाने की घटना की याद दिलाने का आग्रह किया। ८० फिर इस प्रकार की कई बातें कहते हुए, विलाप एवं सन्ताप पीड़ित होते रहते समय

बिम्बाधरियेयुमाश्वसिप्पिच्चु ञान् । विटयुमुटनळकोट्टु वाङ्ङिच्चु पोन्नितु वेगेन पिन्ने मट्टोन्नु चेय्तेनहं : अखिल निशिचर कुलपतिक्कभीष्टास्पदमाराममोक्केत्तकर्त्तेनतिन्नुटन् । परिभवमोटटल् करुति वन्न निशाचर पापिकळेक्कोल चेय्तेनसंख्यकं। दशवदन सुतने मुहुरक्षकुमारनेद्दण्डधरालयत्तिन्नयच्चीटिनेन् । अथ दशमुखात्मज ब्रह्मास्त्र बद्धनायाशराधीशनेक्कण्टु पऱञ्ञु ञान्। लघुतरमशेषं दहिप्पिच्चितु बत ! लङ्कापुरं पिन्नेयुं भवति तन् पदं विगतभयमटियिण वणङ्ङि वाङ्ङिप्पोन्नु वीण्टुं समुद्रवुं चाटिक्कटन्नु ञान्। तव चरणनळिनमधुनेव वन्दिच्चितु दासन् दयानिधे ! पाहिमां पाहिमां। ९० इति पवनसुत वचनमाहन्त ! केट्टळविन्दिराकान्तनुं प्रीतिपूण्टीटिनान् । सुरजन सुदुष्करं कार्यं कृतं त्वया सुग्रीवनुं प्रसादिच्चितु केवलं । सदयमुपकार-मिच्चेय्ततिन्नादराल् सर्वस्ववुं मम तन्नेन् निनक्कु ञान् । प्रणय मनसा भवानाल् कृतमायतिन् प्रत्युपकारं जगत्तिङ्कलिल्लेटो ! पुनरपि रमावरन् मारुतपुत्रने पूर्ण्णमोदं पुणर्न्नीटिनानादराल् ।

मैंने अपने नाना प्रकार के वचनों से बिम्बाधरी (बिम्बफल के समान लाल-लाल अधरों वाली सीता) को समाश्वस्त कर दिया। फिर उनसे विदा लेने के उपरान्त मैंने और एक कार्य भी किया। समस्त राक्षसों के अधिपति रावण का प्रिय उद्यान मैंने तहस-नहस कर दिया और यह देख क्रुद्ध हो युद्ध के लिए आये असंख्य पापी राक्षसों का भी वध कर डाला। फिर दशवदन के पुत्र अक्षयकुमार को भी दण्डधरालय (यमपुरी) भेज दिया। उसके उपरान्त रावण के पुत्र (मेघनाद) से प्रयुक्त ब्रह्मास्त्र से आबद्ध हो राक्षसराज रावण से मिलकर मैंने उसे उपदेश दिया। उसके उपरान्त समस्त लंकापुरी को जला डालकर, दुबारा देवी के चरण-कुसुमों पर प्रणत हो तथा विदा लेकर फिर मैंने समुद्र पार किया। अपने दौत्य कार्य की समाप्ति पर हे दयानिधि ! इस दास ने आकर आपके चरण-कमलों पर अब नमस्कार किया। आप इस दास पर कृपा करें, कृपा करें।" ९० पवनसुत का यह निवेदन सुन इन्दिरापति (राम) अत्यन्त प्रसन्न हुए। सुग्रीव भी प्रसन्न हो उठे। भगवान ने उनका अनुमोदन करते हुए कहा—"हे वायुपुत्र ! सुरजनों के लिए भी दुष्कर कार्य तुमने आज पूरा किया। उदारतापूर्वक किये गये इस उपकार के बदले में मैं आज अपना सर्वस्व तुम्हें दे चुका हूँ। प्रेमपूर्वक तुम्हारे द्वारा किये गये इस उपकार के लिए देने लायक कोई प्रतिफल इस संसार में नहीं है।"

उरसि मुहुरपि मुहुरणच्चु पुल्कीटिनानोक्कंटो ! मारुतपुत्र भाग्योदयं । भुवनतल मतिलोरुवनिङ्ङनेयिल्लहो ! पूर्ण्ण पुण्यौघ सौभाग्यमुण्टायेंटो !

परम शिवनिति रघुकुलाधिपन् तन्नुटे पावनयाय कथयरुळ् चेय्ततु भगवति भवानि परमेश्वरि केट्टु भक्ति परवशयाय् वणङ्ङीटिनाळ् । किळिमकळुमति सरसमिङ्ङने चोन्नतु केट्टु महालोकरुं तेळियेणमे । १००

॥ सुन्दरकाण्डं समाप्तं ॥

फिर रमापति (राम) ने सहर्ष मारुति का गाढाश्लेष किया, उन्होंने बार-बार मारुति को अपनी छाती से लगाया । हनुमान का भाग्योदय आश्चर्य-जनक है ! समस्त लोक में इतना पुण्यात्मा एवं सौभाग्यशाली कोई दूसरा पैदा नहीं हुआ है । इस प्रकार महादेव से सुनायी गयी रघुकुलाधिप (राम) की पावन कथा सुनकर भगवती भवानी परमेश्वरी भक्ति-गंगा में निमज्जित हो गयी । शुक-शावक द्वारा परोपकारार्थ कहे गये उमा-महेश्वर सम्वाद को सज्जन लोग सानन्द एवं सादर सुनें । १००

॥ सुन्दरकाण्ड समाप्त ॥

युद्ध काण्डम्

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

नारायण ! हरे ! नारायण हरे ! नारायण हरे ! नारायण हरे ! नारायण ! राम नारायण ! राम ! नारायण ! राम ! नारायण ! राम ! रमारमण ! त्रिलोकीपते ! राम ! सीताभिराम ! त्रिदश प्रभो ! राम ! लोकाभिराम ! प्रणवात्मक ! राम ! नारायणात्माराम ! भूपते ! राम कथामृत पान पूर्णानन्द सारानुभूतिक्कु साम्यमिल्लेतुमे; शारिकप्पैतले ! चौल्लु चौल्लिनियुं चारु रामायणयुद्धं मनोहरं। इत्थमाकर्ण्य किळिमकळ् चौल्लिनाळ् चित्तं तेळिञ्ञु केट्टीटुवनें-ङ्किलो--चन्द्रचूडन् परमेश्वरनीश्वरन् चन्द्रिका मन्दस्मितं पूण्टरु-ळिनान्--चन्द्रानने ! चेवितन्तु मुदा रामचन्द्र चरितं पवित्रं श्रृणुप्रिये ! १

॥ हरि श्री गणपतये नमः ॥

अविघ्नमस्तु

(कवि भगवान की प्रार्थना करता हुआ कहता है) हे नारायण ! हे हरि ! आपकी जय हो। हे नारायण, हे हरि ! आपकी जय हो। हे नारायण, हे राम, हे नारायण, हे राम, हे नारायण, हे राम ! (आपको प्रणाम है)। हे रमारमण (लक्ष्मीदेवी के पति), हे त्रिलोकपति (तीनों लोकों के स्वामी), हे राम, हे सीताभिराम, हे त्रिदशप्रभु (देवताओं के देव), हे राम, हे लोकाभिराम, हे प्रणवात्मक (ओंकार स्वरूप), हे राम, हे नारायण, हे आत्माराम, हे भूपति ! (आपकी जय हो)। राम कथामृत का पान करने से परमानन्द की प्राप्ति होती है और उस परमानन्द की समता करनेवाला दूसरा कोई तत्त्व (इस संसार में) नहीं है। (आगे कवि शुकी से कहता है) हे शुक बालिके ! तुम अब सुन्दर रामायण में वर्णित (राम-रावण) युद्ध सविस्तार सुना दो। कवि का आग्रह सुनकर शुक बालिका ने कहा—अगर आगे की कथा सुनने की अभिलाषा है तो हृदय लगाकर सानन्द सुनो। चन्द्रचूड परमेश्वर ने प्रसन्न हो, चन्द्रिका-सम मन्द स्मिति लेकर पार्वती को देखते हुए कहा—'हे चन्द्रानने (चन्द्र-सम मुखवाली) ! हे प्रिये ! तुम पवित्र रामचरित ध्यान से सुनो। १

श्रीरामादिकळुटे निश्चयम्

श्रीरामचन्द्रन् भुवनैक नायकन् तारकब्रह्मात्मकन् करुणाकरन् मारुति वन्नु पऱञ्ञतु केट्टुळ्ळिलारूढ मोदालरुळ् चेय्तितादराल्—देवकळालुमसाद्ध्यमायुळ्ळोन्नु केवलं मारुति चेय्ततोर्क्कुं विधौ चित्ते निरूपिक्क पोलुमशक्यमामब्धि शत योजनायतमश्रमं लंघिच्चु राक्षस वीररेयुं कोन्नु लङ्कयुं चुट्टु पोटिच्चितु विस्मयं; इङ्ङनेयुळ्ळ भृत्यन्मारोरुत्तनुमेङ्ङुमोरुत्ता-ळुमिल्लेन्नु निर्णयं। ऎन्नेयुं भानुवंशत्तेयुं लक्ष्मणन् तन्नेयुं मित्रात्मजनेयुं केवलं मैथिलियेक्कण्टु वन्नतु कारणं वातात्मजन् परिपालिच्चितु दृढं। अङ्ङनेयायतेल्लामिनियुमुटनेङ्ङने वारिधियेक्कटन्नीटुन्नु? नक्र मकर चक्रादि परिपूर्णमुग्रमायुळ्ळ समुद्रं कटन्नु पोय् १० रावणनेप्पटयोटुमोटुक्कि ञान् देवियेयेन्नु काणुन्नितु दैवमे! राम वाक्यं केट्टु सुग्रीवनुं पुनरामयं तीरुमाऱाशु चोल्लीटिनान्—लंघनं चेय्तु समुद्रत्तेयुं बत! लङ्कयुं भस्मी करिच्चविळंबितं रावणन् तन्नेस्सकुलं कोल चेय्तु देवियेयुं

राम आदि का निर्णय

चौदहों भुवनों के स्वामी, तारक ब्रह्मस्वरूप (सर्वाश्रय भूत परब्रह्म-स्वरूप) एवं करुणाकर श्रीरामचन्द्रजी ने, हनुमान के द्वारा बतायी गयी बातों से मन-ही-मन अत्यन्त प्रसन्न होकर इस प्रकार कहा—"मारुति ने देवताओं के लिए भी दुस्साध्य कार्य किया है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। उन्होंने शतयोजन विस्तार युक्त समुद्र को लाँघकर, राक्षसों का वधकर तथा लंका जलाकर जो साहस के कार्य किये, वे आश्चर्यजनक हैं। अचिन्त्य साहस के द्योतक हैं। ऐसे (वीर एवं उत्साही) दास अब तक किसी ने नहीं पाये और न आगे भी कोई पा सकेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। मैथिली को देख आने के कारण उन्होंने मेरी, भानुवंश (सूर्यवंश) की, लक्ष्मण की और मित्रात्मज (सुग्रीव) की निश्चय ही रक्षा की। यह कथा ऐसी ही रहे। अब इस वारिधि को कैसे हम पार करेंगे? नक्र (मगर), मकरमत्स्य आदि से परिपूर्ण इस विशाल एवं गहरे समुद्र को पार कर—१० —तथा रावण को सेना समेत समाप्त करके हे भगवान! मैं सीतादेवी को कब देख पाऊँगा!" राम का वचन सुनकर उनको आश्वस्त करने के विचार से सुग्रीव ने तुरंत कहा—"अविलम्ब समुद्र पार करके, तुरन्त ही लंकापुरी को भस्मीभूत कर तथा रावण को उसके वंश सहित समाप्त कर

कौण्टु पोरुन्नतुण्टु ञान्। चिन्तयुण्टाकरुतेतुमे मानसे चिन्तया-कुन्नतु कार्य्यं विनाशिनि; आरालुमोर्त्तालु् जयिच्चु कूटातोरु शूररिक्काणाय वानर सञ्चयं; वह्नियिल्च्चाटणमेन्नु चोल्लीटिलुं पिन्नेयामेन्नु चोल्लुन्नवरल्लिवर्। वारिधियेक्कटप्पानुपायं पार्क्क नेरमिनिक्कळयाते रघुपते! लङ्कयिल्च्चेन्नु नां पुक्कितेन्नाकिलो लङ्केशनुं मरिच्चानेन्नु निर्ण्णयं। लोकत्रयत्तिङ्कलारेतिर्क्कुन्नतु राघव! निन् मुम्पिल् महारणे। २० अस्त्रेण शोषणं चेय्क जलधियेे सत्वरं सेतुबन्धिक्किलुमा दृढं। वल्ल कणक्किलुमुण्टां जयं तव नल्ल निमित्तङ्ङळ् काण्क रघुपते! भक्ति शक्त्यन्वितं मित्र पुत्रोक्तिकळित्थमाकर्ण्य काकुल्स्थनुं तल्क्षणे मुम्पिलाम्मारु तोळुतु निल्क्कुं वायुसंभवनोटु चोदिच्चरुळीटिनान्--२४

लङ्काविवरणं

लङ्कापुरत्तिङ्कलुळ्ळ वृत्तान्तङ्ङळ् शङ्का विहीनमेन्नोट-रियिक्क नी। कोट्ट मतिल् किटङ्ङेन्निवयोक्कवे काट्टित्तरिक

मैं देवी (सीता) को ले आऊँगा। इसलिए आप यह चिन्ता छोड़ दीजिए। आप मन में चिन्तित न हों क्योंकि चिन्ता नाशकारी होती है। यह दिखाई देनेवाला वीर वानर-समूह ऐसा है जिसे कोई भी जीत नहीं सकता। चाहे इससे वह्नि में कूद पड़ने के लिए ही कहा जाए तो भी यह आगे-पीछे देखनेवाला नहीं है। हे रघुपति! अब तुरन्त ही वारिधि पार करने के लिए उपाय सोच लिया जाए। अगर हम लोग लंका में पहुँच पाए तो निश्चित समझ लीजिए कि रावण की मृत्यु हो गयी। हे राम! त्रिलोक में कौन ऐसा है, जो युद्ध में आपका सामना करने की शक्ति रखता है? २० आप या तो अपने बाणों से सागर का जल सोख दें या फिर तुरन्त ही सागर पार करने के लिए सेतु बाँध लें। हे रघुपति! आपके लिए शकुन अच्छे हैं, हम किसी न किसी प्रकार विजय प्राप्त कर सकेंगे।" भक्ति एवं शक्ति समन्वित मित्र-पुत्र (सुग्रीव) का कथन सुनकर तुरन्त ही दशरथ-पुत्र राम ने सामने हाथ जोड़ खड़े वायुपुत्र (हनुमान) से प्रश्न किया—२४

लंका का विवरण

(राम ने हनुमान से आग्रह किया कि) "तुम लंकापुरी का सविस्तार वर्णन करके मुझे सुना दो। दुर्ग, दीवार, गढ़ आदि का अच्छा शाब्दिक

वेणं वचसा भवान् । अन्नतु केट्टु तोळुतु वातात्मजन् तन्नाय् तेळिञ्ञुणर्त्तिच्चरुळीटिनान्--मद्ध्ये समुद्रं त्रिकूटाचलं वळन्नंत्युन्नतमतिन् मूर्द्धनि लङ्कापुरं; प्राणभयमिल्लयात जनङ्ङळ्क्कु काणां कनक विमान समानमाय् । विस्तारमुण्टङ्ङेळु नूरु योजन पुत्तन् कनक मतिलतिन् चुट्टुमे, गोपुरं नालु दिक्किङ्कलुमुण्टति शोभितमायतिनेळु निलकळुं; अङ्ङने तन्नैयतिनुळ्ळिलुळ्ळिलाय्पौङ्ङुमतिलुकळेळुण्टोरु पोले । एळिनुं नन्नालु गोपुर पंक्तियुं चूळवुमायिरुपत्तेट्टु गोपुरं; अंल्लाट्टिनुं किटङ्ङुण्टत्यगाधमाय् चोल्लुवान् वेलयन्त्रप्पाल पंक्तियुं । १० अण्टर्कोन् दिक्किलेग्गोपुरं काप्पतिनुण्टु निशाचरन्मार् पतिनायिरं, दक्षिण गोपुरं रक्षिच्चु निल्क्कुन्न रक्षोवररुण्टु नूरायिरं सदा; शक्तराय् पश्चिम गोपुरं काक्कुन्न नक्तञ्चररुण्टु पत्तुनूरायिरं; उत्तर गोपुरं कात्तुनिल्पानति शक्तरायुण्टोरु कोटि निशाचरर्; दिक्कुकळ् नालिलुमुळ्ळतिलर्द्धमुण्टुग्रतयोटु नट्टुवु कात्तीटुवान्; अन्तःपुरं काप्पतिन्नुमुण्टन्न पेर् मन्त्र शालय्क्कुण्टतिलिरट्टिज्जनं । हाटक निर्म्मित

परिचय दो।" यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हो हाथ जोड़ वायुपुत्र ने कहा—समुद्र के मध्य में अत्यन्त उन्नत त्रिकूटाचल पर लंकापुरी है। जिन्हें अपने प्राणों का भय नहीं है, वे लोग (वहाँ पहुँचने पर) स्वर्ण विमान तुल्य उस लंकापुरी को देख सकेंगे। उसका विस्तार सात सौ योजन का है। उसके चारों ओर स्वर्णिम दीवारें खड़ी कर दी गयी हैं। चारों दिशाओं में सात मंजिलों के सुन्दर गोपुर हैं। फिर उन्हीं के भीतर एक के बाद एक कुल सात समान चहारदीवारें खड़ी हैं। सातों चहारदीवारों के चार-चार गोपुरों के हिसाब से कुल अट्ठाईस गोपुर हैं। सबके चारों ओर गहरी खाइयाँ हैं और ज़रूरत पड़ने मात्र पर काम में लाने के लिए पुल बनाये हुए हैं, जिस कारण शत्रुओं का वहाँ पहुँच पाना दुष्कर है। १० पूर्वी दिशा के गोपुर का पहरा करते हुए दस हजार राक्षस तैनात हैं। दक्षिण गोपुर की रक्षा करने के लिए सौ हज़ार (एक लाख) राक्षस नियुक्त हैं। अत्यन्त शक्तिशाली दस लाख रात्रिचर पश्चिम गोपुर को पहरा देते रहते हैं। उत्तर गोपुर की रक्षा करने के लिए सदा जागरूक एक करोड़ राक्षस वहाँ खड़े हैं। चारों ओर की रक्षा में सचेत जितने राक्षस हैं, उसका आधा भाग मध्य भाग की रक्षा में नियुक्त राक्षसों का है। उतने ही राक्षस अन्तःपुर की रक्षा में खड़े हैं, उसके दुगुने राक्षस मन्त्रशाला का पहरा करते रहते हैं। सुवर्ण निर्मित भोजनशालाएँ, नाटकशालाएँ,

भोजन शालयुं नाटकशाल तटप्पन्तल् पिन्नेयुं; मज्जनशालयुं
मद्यपानत्तिन्नु निर्ज्जनमायुळ्ळ निर्म्मलशालयुं; लङ्का विरचिता-
लङ्कार भेदमातङ्कापहं पऽयावल्लनन्तनुं। तत्पुरं तन्निल्
तीळेत्तिरञ्ञेनहं मत्पिताविन् नियोगेन चेन्नेन् बलाल् २०
पुष्पितोद्यान देशे मनोमोहने पद्मजादेवियेयुं कण्टु कूप्पिनेन्।
अंगुलीयं कोटुत्ताशु चूडारत्नमिङ्ङु वाङ्ङिक्कोण्टटयाळ वाक्यवुं
केट्टु विटवळङ्ङिच्चु पुऽप्पेट्टु काट्टियेन् पिन्नेक्कुऽञ्ञोरविवेकं।
आराममेल्लां तकर्त्तुंतु काक्कुन्न वीररेयोक्के क्षणेन कोन्नीटिनेन्।
रक्षोवरात्मजनाकिय बालकनक्षकुमारनवनेयुं कोन्नु ञान्; अन्नु
वेण्टा चुरुक्किप्पऽञ्ञीटुवन् मन्नवा! लङ्कापुरत्तिङ्कलुळ्ळतिल्
नालोन्नु सैन्यमोटुक्कि वेगेन पोय् काले दशमुखनेक्कण्टु चोल्लियेन्।
नल्लतेल्लां पिन्ने रावणन् कोपेन चोल्लिनान् तन्नुटे भृत्यरोटिप्पोळ्
कोल्लुक वैकातिवनेयेन्नन्नेरं कोल्लुवान् वन्नवरोटु विभीषणन्
चोल्लिनानग्रजन् तन्नोटुमादराल् कोल्लुमाऽिल्ल दूतन्मारेयारुमे। ३०
चोल्लुळ्ळ राजधर्म्मङ्ङळऽिञ्ञवर् कोल्लातयय्क्कटयाळप्पेटुत्ततु

स्नानागार और मद्यपान के लिए निर्मित स्वच्छ शालाएँ सब देखने योग्य हैं। वहाँ लंकापुरी की साज-सज्जा एवं अलंकारों का वर्णन करना सामर्थ्य के बाहर है। अनन्तनाग भी (अपने सहस्र फणों से) उनका वर्णन करके पार नहीं पा सकता। उस पुरी भर में मैंने (सीता की) खोज की, फिर अपने पिता (वायु) के संकेत से मैं पहुँच पाया—२० —उस पुष्प वाटिका में, जो देखने में मनोमोहक है और वहाँ मैंने पद्मजादेवी (सीता) को देखा। मैंने (आपका) अंगुलीय (उन्हें) दिया तथा आपको देने के लिए (सीता का) चूड़ारत्न तथा कह सुनाने के लिए सन्देश लेकर वहाँ से निकल पड़ा। उसके उपरान्त मैंने थोड़ा-सा अविवेकपूर्ण कार्य कर लिया। पहरेदारों का क्षण भर में वध करके पुष्पवाटिका उजाड़ दी। राक्षसराज के पुत्र अक्षयकुमार को भी मैंने मार डाला। अधिक क्या बताऊँ, हे महाराज संक्षेप में कह सकता हूँ कि मैंने लंकापुरी के सैनिकों में से एक चौथाई भाग समाप्त कर दिया है, फिर अविलम्ब जाकर दशमुख से मिलकर उसे उसकी भलाई की बातें समझायीं। तब क्रुद्ध रावण ने अपने सेवकों को आज्ञा दी, मुझे तुरन्त ही मार डाला जाए। तब मुझे मारने आये सेवकों तथा अपने अग्रज रावण को विभीषण ने समझाया कि दूत की हत्या कोई नहीं करता। ३० राजधर्म में प्रवीण लोग दूतों की हत्या नहीं करते। इसलिए इसपर कोई दाग चिह्न लगाकर भेज दिया जाए। दशानन ने यह

ऩल्लताकुन्नतॆन्नप्पोळ् दशाननन् चॊल्लिनान् वालधिक्कग्नि कॊळुत्तुवान्। सस्नेह वाससा पुच्छं पॊतिञ्ञवरग्नि कॊळुत्तियारप्पोळटियनुं; चुट्टु पॊट्टिच्चॆनॆ्ळुनूरु योजन वट्टमायुळ्ळ लङ्कापुरं सत्वरं। मन्नव! लङ्कयिलुळ्ळ पटयिल् नालॊन्नुमॊट्टुक्कियेन् त्वल् प्रसादत्तिनाल्। ऒन्नु कॊण्टुमिनिक्काल विळंबनं नन्नल्ल पोकप्पुऱप्पॆट्टुकाशु नां। युद्ध सन्नद्धराय् बद्धरोषं महल् प्रस्थानमाशु कुरु गुरु विक्रमं। संख्ययिल्लातोळमुळ्ळ महाकपि संघेन लङ्कापुरिक्कु शङ्कापहं; लंघनं चॆय्तु नक्तञ्चर नायक किङ्करन्मारॆ क्षणेन पितृपति किङ्करन्मार्क्कु कॊटुत्तु दशानन हुंकृतियुं तीर्त्तु संगरान्ते बलाल्। ४० पङ्कज नेत्रयॆक्कॊण्टु पोरां विभो! पङ्कजनेत्र! परंपुरुष! प्रभो! ४१

युद्धयात्र

अञ्जनानन्दनन् वाक्कुकळ् केट्टथ सञ्जात कौतुकं संभाव्य सादरं, अञ्जसा सुग्रीवनोटरुळ् चॆय्तितु कञ्जविलोचननाकिय राघवन्—इप्पोळ् विजय मुहूर्त्तकालं पटय्क्कुलपन्न मोदं पुऱप्पॆट्टु-

---

उचित समझा और उसने पूँछ में आग लगाने की आज्ञा दी। तब उन लोगों ने तेल में डुबाये वस्त्रों को पूँछ पर लपेटकर आग लगायी। तुरन्त ही (आपके इस) दास ने सौ योजन विस्तृत लंकापुरी आग में जला दी। हे स्वामी! आपकी कृपा से मैंने लंका की एक चौथाई सेना नष्ट कर दी। अब किसी भी हालत में (लंका जाने में) विलम्ब करना ठीक नहीं है, हम तुरन्त ही (लंका के लिए) निकल पड़ें। युद्ध के लिए आवश्यक समस्त तैयारियों सहित, अत्यन्त पराक्रम तथा साहस के साथ हम अपनी असंख्य वानरसेना लेकर लंकापुर के लिए प्रस्थान करें। हम निस्संशय समुद्र का लंघन कर, निशिचरराज के सेवकों को क्षण भर में पितृपति (यमराज) के सेवकों को समर्पित कर (वध करके) तथा युद्ध-प्रांगण में दशानन का गर्व चूर करके—४० —हे प्रभु! हे पंकजनेत्र! हे पुरुषोत्तम! हे विभु! पंकजनेत्रा सीताजी को अवश्य ले आएँगे।" ४१

युद्ध-यात्रा

अंजनापुत्र (हनुमान) का वचन सुनकर और सदय उसको उचित मानकर तुरन्त ही कंजविलोचन (कमल-सम नेत्रवाले) राम ने सुग्रीव से कहा—"युद्ध-विजय के लिए कूच करने के लिए यह शुभ मुहूर्त्त है, इसलिए

केवरुं; नक्षत्रमुत्रमतुं विजयप्रदं रक्षोजनर्क्षमां मूलं हतिप्रदं। दक्षिणनेत्र स्फुरणवुमुण्टुमे लक्षणमेल्लां नमुक्कु जयप्रदं। सैन्य-मेल्लां परिपालिच्चु कोळ्ळणं सैन्याधिपनाय नीलन् महाबलन्। मुन्पुं नटुभागवुमिरु भागवुं पिन् पटयुं परिपालिच्चु कोळ्ळुवान् वम्परां वानरन्मारे नियोगिक्क रंभप्रमाथि प्रमुखरायुळ्ळवर्। मुन्पिल् ञान् मारुति कण्ठवुमेऱि मल् पिन्पे सुमित्रात्मजनंगदोपरि सुग्रीवनेन्नेप्पिरियातरिकवे निर्ग्गमिच्चीटुक मट्टुळ्ळ वीररुं। १० नीलन् गजन् गवयन् गवाक्षन् बलि शूलि समाननां मैन्दन् विविदनुं पङ्कज संभव सूनु सुषेणनुं तुंगन् नळनुं शतबलि तारनुं, चोल्लुळ्ळ वानर नायकन्मारोटु चोल्लुवानावतल्लातोरु सैन्यवुं, कूटिप्पुऱप्पेटु केतुमे वैकरुताटलुण्टाकरुताक्कुं वळिक्केटो! इत्थमरुळ् चेय्तु मर्क्कट सैनिक मद्ध्ये सहोदरनोटुं रघुपति नक्षत्रमण्डल मद्ध्ये विळङ्ङुन्न नक्षत्रनाथनुं भास्कर देवनुं आकाश मार्ग्गे विळङ्ङुन्नतु पोले लोकनाथन्मार् तेळिञ्ञु विळङ्ङिनार्। आर्त्तु विळिच्चु कळिच्चु पुळच्चु लोकार्त्ति

सबको सानन्द तुरन्त निकल जाना चाहिए। उत्तरा-फाल्गुनी नक्षत्र विजयप्रद है। राक्षसों के लिए आज मूल नक्षत्र होने से हानिकारक है। आज शुभसूचक मेरा दक्षिण नेत्र फड़कने लगा है। अतः सबके सब हमारी विजय के सूचक लक्षण हैं। सेनाधिपति अतुल बलशाली नील सारी सेना की देखरेख करें। आगे-पीछे, बीच में और आजू-बाजू सेना की रक्षा का भार रंभ तथा प्रमाथि जैसे बड़े ही शूर पराक्रमी एवं प्रमुख वानरवीरों को सौंप दिया जाए। मैं आगे-आगे मारुति के कन्धे पर और मेरे पीछे सुमित्रात्मज लक्ष्मण अंगद के कन्धे पर सवार हो चलेंगे। सुग्रीव मेरे निकट ही साथ रहेंगे। इस प्रकार व्यवस्थित ढंग से सारे वानर सैनिक अभी निकल पड़ें। १० नील, गज, गवय, गवाक्ष, बलशाली एवं शूली (शिव) तुल्य मैन्द, विविद, पंकज संभव (ब्रह्मा) के पुत्र सुषेण, उन्नत नल, सैकड़ों वीरों के समान पराक्रमी तार आदि वानरनायकों के साथ अपार वानरसेना तुरन्त चल पड़े। यह ध्यान रखा जाए कि रास्ते में किसी को किसी प्रकार की कठिनाई उठानी न पड़े।" राम ने यह आज्ञा सुना दी। फिर मर्कट-सेना के बीच में अपने भ्राता सहित रघुपति (राम) विराजमान हुए। संसार के लिए स्वामी दोनों (राम-लक्ष्मण) आकाश में नक्षत्र मण्डल के बीच शोभित नक्षत्रनाथ (चन्द्र) और भगवान भास्कर (सूर्य) के समान अपनी दीप्ति फैलाने लगे। संसार का दुःख दूर करने के

तीर्त्तीट्टुवान् मर्क्कट सञ्चयं रात्रिञ्चरेश्वर राज्यं प्रति परमास्थया वेगाल् नटन्नु तुटङ्ङिनार्। धात्रियिलीक्कु निरन्नु परन्नीरु वार्द्धि नटन्नङ्ङुट्टक्कुन्नतु पोले। २० चाटियुमोटियु-मोरो वनङ्ङळिल् तेटियुं पक्व फलङ्ङळ् भुजिक्कयुं, शैल वन नदी जालङ्ङळ् पिन्निट्टु शैल शरीरिकळाय कपिकुलं दक्षिण सिन्धु तन्नुत्तरतीरवुं पुक्कु महेन्द्राचलान्तिके मेविनार्। मारुति तन्नुटे कण्ठदेशे निन्नु पारिलिरङ्ङि रघुकुलनाथनुं, तारेय कण्ठममर्न्न सौमित्रियुं पारिलिळञ्ञु वणङ्ङिनानग्रजं। श्रीराम लक्ष्मणन्मारुं कपीन्द्ररुं वारिधितीरं प्रवेशिच्चनन्तरं, सूर्य्यनुं वारिधि तन्नुटे पश्चिमतीरं प्रवेशिच्चितप्पोळ् नृपाधिपन् सूर्य्यात्मज-नोटरुळ् चेय्तिताशु नां वारियुमूत्तु सन्ध्यावन्दनं चेय्तु वारान्निधियेक्कटप्पानुपायवुं वीररायुळ्ळवरीन्निच्चु मन्त्रिच्चु पाराते कल्पिक्क वेणमिनियुटन्। ३० वानर सैन्यत्ते रक्षिच्चु कोळ्ळणं सेनाधिपन्मार् कृशानुपुत्रादिकळ्। रात्रियिल् माया विशारदन्माराय रात्रिञ्चरन्मारुपद्रविच्चीट्टुवोर्। एवमरुळ् चेय्तु सन्ध्ययुं वन्दिच्चु मेविनान् पर्वताग्रे रघुनाथनुं, वानरवृन्दं मकरालयं कण्टु मानसे भीति कलर्न्नु मरुविनार्। नक्र चक्रौघ

निमित्त वानर-सेना रात्रिचरराज के राज्य (लंका) को अपना लक्ष्य बनाये बड़े कोलाहल के साथ हँसते-खेलते तीव्रगति से चल पड़ी मानो उत्ताल लहरों से पूरित कोई विशाल सागर चल पड़ा हो। २० दौड़ते-कूदते, उछलते, प्रत्येक वन में पक्वफल खोजते-खाते तथा कई शैलों (पर्वत), वनों, नदियों को पार करते हुए वानर-सैनिक दक्षिणी समुद्र के उत्तर तट पर महेन्द्राचल के समीप आ पहुँचे। रघुकुल के स्वामी (राम) मारुति (हनुमान) के कन्धे से नीचे पृथ्वी पर उतर पड़े। तारेय (अंगद) के कंठ पर बैठे सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) भी नीचे पृथ्वी पर उतरकर अपने अग्रज को प्रणाम करने लगे। बाद में श्रीराम-लक्ष्मण और वानरश्रेष्ठ वारिधि-तीर (समुद्र तट) पर आ पहुँचे, साथ ही सूर्य भी वारिधि के पश्चिमी तट पर तब पहुँच गया (सूर्यास्त हो गया)। तुरन्त ही नृपाधिप (राम) ने सूर्यात्मज (सुग्रीव) से कहा कि हम स्नान करके संध्यावन्दना में लग जाएँ। उसके उपरान्त आप वीरश्रेष्ठ लोग परस्पर मन्त्रणा करके सागर को पार करने का उपाय सुझा दें। इसमें विलम्ब होने न पाए। ३० (रात्रि का समय है) कृशानुपुत्र (नल) आदि सेनाधिपति लोग वानर-सेना की खूब देखभाल करते रहें क्योंकि माया-विशारद निशाचरों की रात में

भयङ्करमेत्रयुमुग्रं वरुणालयं भीम निस्वनं अत्युन्नततरं गाढ्यमगाधमितुत्तरणं चेय्वतिन्नरुताक्कुमे। इङ्ङनेयुळ्ळ समुद्रं कटन्नु चेन्नेङ्ङने रावणन् तन्ने वधिक्कुन्नु, चिन्ता परवशन्मारायक्कपिकळन्ध बुद्ध्या राम पार्श्वे मरुविनार्। चन्द्रनुमप्पोळुदिच्चु पोङ्ङीटिनान् चन्द्रमुखिये निरूपिच्चु रामनुं दुःखं कलर्न्नु विलापं तुटङ्ङिनानोक्के लोकर्त्तयनुकरिच्चीटुवान्। ४० दुःख हर्ष भय क्रोधलोभादिकळ् सौख्यमद मोह काम जन्मादिकळ् अज्ञान लिंगत्तिनुळ्ळवयेङ्ङने सुज्ञानरूपमायुळ्ळ चिदात्मनि संभविक्कुन्नु विचारिच्चु काण्किलो संभविक्कुन्नतु देहाभिमानिनां। किं परमात्मनि सौख्य दुःखादिकळ् संप्रसादत्तिङ्कलिल्ल रण्टेतुमे। संप्रति नित्यमानन्द मात्रं परं दुःखादि सर्ववुं बुद्धि संभूतङ्ङळ्। मुख्यनां रामन् परमात्मा परन् पुमान् मायागुणङ्ङळिल् संगतनाकयाल् माया विमोहितन्मार्क्कु तोन्नुं वृथा दुःखियेन्नुं सुखियेन्नुमेल्लामतु भोक्क योर्त्तालबुधन्मारुटे मतं। ४८

उपद्रव करने की आदत है। यह कहने के उपरान्त संध्या-वन्दन आदि से निवृत्त हो रघुनाथ पर्वताग्र पर बैठ गये। वानर-समूह मकरालय (समुद्र) देखकर मन ही मन भयभीत हो उठा। (वे सोचने लगे) मगर आदि क्रूर जन्तुओं से परिपूर्ण, अतीव भयंकर, उत्ताल लहरों के भीषण निस्वन (शब्द) से मुखरित वरुणालय (समुद्र) को पार करना दुष्कर है, उसकी सामर्थ्य (हममें से) किसी में नहीं है। ऐसे भीषण सागर को पारकर कैसे रावण का वध करेंगे? इस प्रकार की चिन्ताओं से परवश एवं अन्धाधुन्ध हो वानर राम के बगल में बैठ गये। तब चन्द्र उदित हो आकाश पर चढ़ने लगा। तब लोकानुसरण करनेवाले राम अपनी चन्द्रमुखी (सीता) की स्मृति में दुखी हो विलाप करने लगे। ४० दुःख, हर्ष, भय, क्रोध, लोभ, सुख, मद, मोह, काम आदि अज्ञानी सांसारिक लोगों से सम्बन्धित हैं। विचारपूर्वक देखा जाए तो देहाभिमान से युक्त लोग ही इनके वशीभूत हैं। वे ज्ञान-स्वरूप एवं सच्चिदानन्द-स्वरूप आत्मा को कैसे प्रभावित कर सकते हैं? परमात्मा को क्या सुख और दुःख प्रभावित कर सकेंगे? वे इन दोनों से मुक्त एवं स्वतन्त्र हैं। वे नित्यानन्दमूर्त्ति परब्रह्म हैं। दुःख आदि बुद्धि की उपज हैं। श्रीरामचन्द्र परमात्मा एवं परात्पर ब्रह्म हैं। अपनी लीला के लिए राम के द्वारा मायात्मक गुणों को अपनाने के कारण, माया में भ्रमित अज्ञानियों को लगता है कि राम इन (मानसिक विकारों) के वशीभूत हैं। अतः केवल अज्ञानी ही मानते हैं कि राम सुखी हैं या दुखी हैं। ४८

रावणादिकळुटे आलोचन

अक्कथ निल्कक; दशरथ पुत्ररुमर्क्कात्मजादिकळाय कपिकळुं वारान्निधिक्कु वटक्केक्कर वन्नु वारिधि पोले परन्नोरनन्तरं; शङ्का विहीनं जयिच्चु जगत्रयं लङ्कयिल् वाळुन्न लङ्केश्वरन् तदा मन्त्रिकळ् तम्मो वरुत्ति विरवोटु मन्त्र निकेतनं पुक्किरुन्नीटिनान् । आदितेयासुरेन्द्रादिकळ्क्कुमरुतातोरु कर्म्मङ्ङळ् मारुति चेय्ततु चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु नाणिच्चु रावणन् मन्त्रिकळोटु केळ्प्पिच्चानवस्थकळ् । मारुति वन्निविटेच्चेय्त कर्म्मङ्ङळारुमरियातिरिक्कयुमल्लल्लो; आर्क्कुं कटक्करुतायोरु लङ्कयिलूक्कोटु वन्नकं पुक्कोरु वानरन् जानकि तन्नेयुं कण्टु परञ्ञोरु दीनत कूटातळिच्चानुपवनं । नक्तञ्चरन्मारेयुं वधिच्चेन्नुटे पुत्रनामक्षकुमारनेयुं कोन्नु, १० लङ्कयुं चुट्टु पोट्टिच्चु समुद्रवुं लंघनं चेय्तोरु सङ्कटमेन्निये स्वस्थनाय् पोयत्तोर्त्तोळं नमुक्कुळ्ळिलेत्रयुं नाणमामिल्लोरु संशयं । इप्पोळ् कपिकुल सेनयुं रामनुमब्धि तन्नुत्तरतीरे मरुवुन्नार् । कर्त्तव्यमेन्तु नम्मालिनियेन्नतुं चित्ते

रावण आदि की चिन्ता

यह बात रहने दें; दशरथ-पुत्र (राम-लक्ष्मण) तथा अर्कात्मज (सुग्रीव) आदि वानर लोग सागर के उत्तरी तट पर आ विशाल सागर के समान फैल गये। तब तीनों लोकों को जीतकर निर्भय लंका में बैठनेवाला लंकेश्वर (रावण) अपने मन्त्रियों को साथ लेकर मन्त्रणा-गृह में प्रविष्ट हुआ। वहाँ बैठकर, देवों, असुरों में श्रेष्ठ लोगों के लिए भी दुस्साध्य जो कार्य मारुति ने वहाँ करके दिखाये, उनके सम्बन्ध में सोच-सोचकर स्वयं लज्जित हो रावण ने अपने मन्त्रियों को सुनाया—"मारुति ने यहाँ आकर जो अनिष्ट कर्म किये, वे आपसे छिपे हुए नहीं हैं। किसी भी व्यक्ति के लिए अगम्य लंका में निस्संकोच प्रविष्ट हो वानर ने जानकी को देखा और (राम के) सन्देश कह सुनाये। उसने अनायास ही पूरा उपवन नष्ट भ्रष्ट कर दिया। उसने निशाचरों की हत्या की और मेरे पुत्र अक्षयकुमार का भी वध किया। १० —लंका को तहस-नहस कर वह बिना किसी कठिनाई के समुद्र-लंघन कर वापस चला गया। वह सकुशल एवं स्वस्थ वापस गया, यह सोचकर मुझे स्वयं लज्जा अनुभव होती है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। अब (सुना है) वानरसेना और राम सागर के उत्तर तट पर आ डेरा डाले हुए हैं। तुम लोग मन में सोच-समझकर हमारे लि

निरूपिच्चु कल्पिक्क निङ्ङळ्ं। मन्त्र विशारदन्मार् निङ्ङळेन्नुटे मन्त्रिकळ् चौन्नतु केट्टतु मूलमाय् वन्नीलौरापत्तिनियुं ममहितं नन्नाय् विचारिच्चु चौल्लुविन् वैकाते। ऎन्नुटे कण्णुकळाकुन्नतुं निङ्ङळेन्निले स्नेहवुं निङ्ङळ्क्कचञ्चलं। उत्तमं मद्ध्यमं पिन्नेतधमवुमित्थं त्रिविधमायुळ्ळ विचारवुं; साध्यमिदमिदं दुस्साध्यमामिदं साध्यमल्लेन्नुळ्ळ मून्नु पक्षङ्ङळ्ं केट्टाल् पलर्क्कुमोरुपोले मानसे वाट्टमौळिञ्ञु तोन्नीटुन्नतुं मुदा। २० तम्मिलन्योन्यं परयुन्न नेरत्तु सम्मतं मामकं नन्नुनन्नीदृशं ऎन्नुरच्चौन्निच्चु कल्पिप्पतुत्तमं पिन्ने रण्टामतुमद्ध्यमं चौल्लुवन्। ओरो विधं परञ्ञूनङ्ङळुळ्ळतु तीरुवानाय् प्रतिपादिच्चनन्तरं, नल्लतितेन्नैकमत्यमायेवरुमुळ्ळिलुरच्चु कल्पिच्चु पिरिवतु मद्ध्यममायुळ्ळमन्त्रमतेन्नियें चित्ताभिमानेन तान् तान् परञ्ञतु, साधिप्पतिन्नु दुस्तर्क्कं परञ्ञतु बोधिच्चु मटेवनुं परञ्ञीर्ष्यया कालुष्य चेतसा कल्पिच्चु कूटाते कालवुं दीर्घमायिट्टु परस्परं निन्दयुं पूण्टु पिरियुन्न मन्त्रमो निन्द्यमायुळ्ळतधममतेत्रयुं। ऎन्नालिविटे नमुक्केन्तु नल्लतेन्नौन्निच्चु निङ्ङळ् विचारिच्चु चौल्लुविन्। इङ्ङने रावणन् चौन्नतु केट्टळविगितज्ञन्मार्

उचित कर्तव्य बता दो। मन्त्रणा में प्रवीण तुम जैसे मन्त्रियों का कथन मानकर चलने के कारण अब तक मेरा कुछ अहित नहीं हुआ। अब खूब विचार करके तुम लोग भावी कर्तव्य अविलम्ब समझाने की कृपा करो। तुम लोग मेरे नेत्र हो; और मुझे भलीभाँति विदित है कि तुम लोगों का मेरे ऊपर निश्चल अपार स्नेह है। विचारों के उत्तम, मध्यम एवं अधम ये तीन ही प्रकार माने गये हैं। यह साध्य है, यह दुस्साध्य है और यह असाध्य है, इस प्रकार के तीनों पक्षों पर विचार करने के बाद कई लोगों को समान रूप से उचित लगनेवाली बात—२० —परस्पर कहते समय, 'मेरा यही विचार है, मेरा यही विचार है' इस प्रकार मन्तव्य प्रकट करके सबके लिए समान रूप से उचित लगनेवाला विचार उत्तम है। अब मैं मध्यम विचार समझाऊँगा। परस्पर विविध प्रकार के तर्क प्रस्तुत करके उनकी न्यूनताओं पर बहस करने के बाद बिना परिहार मार्ग को खोजे, सबकी इच्छा पर चला जाना मध्यम मार्ग का विचार है। विचार वैविध्य के कारण परस्पर वाद-प्रतिवाद में लम्बा समय बिताकर भी किसी निर्णय पर पहुँचे बिना, परस्पर मत्सर एवं ईर्ष्या लिये चला जाना अधम मन्त्रणा के अन्तर्गत आता है। यह ध्यान में रखते हुए तुम लोग परस्पर विचार

निशाचरर् चोल्लिनार्—३० तन्नु तन्नेत्रयुमोर्त्तोळमुळ्ळ-
लितिन्नोरु कार्य्यविचारमुण्टायतुं; लोकङ्ङळेल्लां जयिच्च
भवानिन्नोराकुलमेन्तु भविच्चितु मानसे ! मर्त्यनां रामङ्कल्
निन्नु भयं तव चित्ते भविच्चतुमेत्रयुमत्भुतं ! वृत्रारियेप्पुरा
युद्धे जयिच्चुटन् बद्ध्वा विनिक्षिप्यपत्तने सत्वरं विश्रुतयायोरु
कीर्त्ति वळर्त्ततुं पुत्रनां मेघनिनादनतोर्क्क नी। वित्तेशनेप्पुरा युद्ध
मद्ध्ये भवान् जित्वाजितश्रमं पोरुं दशान्तरे पुष्पकमाय विमानं
ग्रहिच्चतुमत्भुतमेत्रयुमोर्त्तु कण्टोळवुं। कालनेप्पोरिल् जयिच्च
भवानुण्टो कालदण्डत्तालोरु भयमुण्टावू ? हुंकार मात्रेण तन्ने
वरुणनेस्संगरत्तिङ्कल् जयिच्चीलयो भवान् ? मट्टुळ्ळ देवकळेप्पऱ्-
येणमो पट्लरारुमट्टुळ्ळतु चोल्लु नी। ४० पिन्ने मयनां महासुरन्
पेटिच्चु कन्यकारत्नत्ते तन्नीलयो तव ? दानवन्मार् करं तन्नु
पोरुक्कुन्नु मन्नवन्मार् पिन्नेयेन्तु चोल्लेणमो ? कैलास शैल-
मिळक्कियेट्टुटनालोलमम्मानयाटिय कारणं कालारि चन्द्रहासत्ते
तन्नीलयो ? मूलमुण्टो विषादिप्पान् मनसिते ? त्रैलोक्य

करके मेरे लिए अब अनुकूल कार्य बता दो।" रावण का यह कथन सुनकर संकेतग्राही निशाचरों ने बताया—३० —इस मामूली बात के लिए भी विचार-विमर्श की आवश्यकता समझना बड़े विस्मय की बात है ! लोकविजेता आपके मन में आज कौन-सी व्याकुलता उत्पन्न हो सकती है ? बड़े आश्चर्य की बात है, कि मर्त्य राम के प्रति आपके मन में भय उत्पन्न हुआ ! क्या आप यह बात भूल गये कि पूर्व में वृत्रारि (इन्द्र) को जीतकर तथा उन्हें बाँध लाकर लंकापुरी के एक कोने में फेंककर आपके पुत्र मेघनाद ने विश्रुत कीर्ति प्राप्त की थी। वित्तेश को (वैश्रवण को) युद्ध में अनायास जीतकर लौटते समय आप ही ने तो विस्मयकारी पुष्पक विमान ग्रहण किया था। आपके इस पराक्रम पर जितना ही विचार करते हैं उतना ही विस्मय होता है। यमधर्मराज को युद्ध में जीते आप क्या कालदण्ड से भयभीत होंगे ? क्या आपने हुँकारमात्र से युद्ध में वरुण पर विजय नहीं पायी थी ? और देवताओं का क्या कहना है ? आप ही बोलिये, आपका कौन शत्रु रह गया है ? ४० क्या महासुर मय ने भयभीत हो आपको कन्यकारत्न नहीं दिया था ? दानव लोग कर देकर जब चैन से रह पाते हैं, ऐसी अवस्था में यह मनुष्य जाति किस कौड़ी की है ? कैलास पर्वत को हाथ में उठाकर जब उसे हिला-डुलाकर नचाया था तब क्या काल के काल (शिव) ने चन्द्रहास नहीं दान किया था ? ऐसी

वासिकळेल्लां भवद्बलमालोक्य भीति कलर्न्नु मरुवुन्नु । मारुति वन्निविटेच्चेय्त कर्म्मङ्ङळ् वीररायुळ्ळ नमुक्कोक्किकल् नाणमां । नामोन्नुपेक्षिक्क कारणालेतुमोरामयमेन्निये पोय्क्कोण्टतुमवन् । नङ्ङळारानुमरिञ्ञाकिलेन्नुमेयङ्ङवन् जीवनोटे पोकयिल्लल्लो । इत्थं दशमुखनोटरियिच्चुटन् प्रत्येकमोरोप्रतिज्ञयुं चोल्लिनार्— मानमोटिन्निनि नङ्ङळिलेकने मानसे कल्पिच्चयय्क्कुन्नता-किलो ५० मानुष जातिकळिल्ल लोकत्तिङ्कल् वानर जातियुमिल्लेन्नुतुं वरुं । इन्नोरु कार्य्यविचारमाक्किप्पलरोन्निच्चु कूटि निरूपिक्कयेन्नतु अेन्नयुं पारमिळप्पं नमुक्कतुमुळ्ळतारि लोर्त्तरुळेणं जगल् प्रभो ! नक्तञ्चरवररित्थं परञ्ञळवुळ्ळताप-मोट्टु कुरञ्ञु दशास्यनुं । ५४

रावण कुंभकर्ण्णन्मारुटे संभाषणम्

निद्रयुं कैविट्टु कुंभकर्ण्णन् तदा विद्रुतमग्रजन् तन्ने वणङ्ङिनान् । गाढ गाढं पुणर्न्नूढमोदं निज पीठमतिन्मेलि-रुत्तिद्दशास्यनुं; वृत्तान्तमेल्लामवरजन् तन्नोटु चित्तानुरागेण

हालत में मन के विषाद के लिए क्या कारण रह गया है? आपके भुजबल से परिचित त्रिभुवन के समस्त जीव भय-विकंपित रहते हैं। मारुति ने आकर यहाँ जो दुष्कृत्य करके दिखाये, वे सोचकर हम वीरों को अवश्य ही लज्जा अनुभव होती है। हमारी ज़रा असावधानी के कारण ही वह अनाकुल हो यहाँ से बचकर चला गया। उस समय हममें से किसी को इसकी सूचना मिली होती तो वह जिन्दा नहीं जा पाता था।" यह कहते हुए उन्होंने दशानन से प्रतिज्ञापूर्वक कहा कि अगर इस बार हममें से किसी एक को आज्ञा देकर आप भेज देंगे—५० —तो संसार में न कोई मनुष्य जाति शेष रह पाएगी, न वानर जाति ही। आज इसे (राम के आगमन को) विचार का विषय बनाकर परामर्श के लिए लोगों की सभा बुलाना ही हमारे लिए उपहास की बात है। हे संसार के स्वामी! आप यह मन में याद रखिये।" राक्षसश्रेष्ठों का यह उपदेश सुनकर दशानन के मन का ताप ज़रा शान्त हुआ। ५४

रावण-कुम्भकर्ण सम्वाद

इस समय कुम्भकर्ण ने निद्रा से जागकर अपने अग्रज (रावण) के पास आकर प्रणाम किया। (ठीक समय पर आने से) प्रसन्न हो रावण ने उसे बार-बार आश्लेष किया तथा आसन पर बिठा दिया। दशास्य

केळ्प्पिच्चनन्तरं उळ्त्तारिलुण्टाय भीतियोटुमवन् नक्तञ्च-राधीश्वरनोटु चौल्लिनान्—जीविच्चु भूमियिल् वाळ्कॆन्नतिल् मम देवत्वमाशु किट्टुन्नतु नल्लतुं; इप्पोळ् भवान् चॆय्त कर्म्मङ्ङ-ळॊक्कॆयुं त्वल् प्राणहानिक्कु तन्ने धरिक्क नी। रामन् भवानॆ क्षणं कण्टु किट्टुकिल् भूमियिल् वाळ्वानयय्क्कयिल्लॆन्नुमे। जीविच्चिरिक्कयिलाग्रहमुण्टॆङ्किल् सेविच्चु कौळ्ळुक रामनॆ नित्यमाय्। रामन् मनुष्यनल्लेक स्वरूपनां श्रीमान् महाविष्णु नारायणन् परन्; सीतयाकुन्नतु लक्ष्मी भगवति जातयायाळ् तव नाशं वरुत्तुवान्। १० मोहेन नाद भेदं केट्टु चॆन्नुटन् देहनाशं मृगङ्ङळ्क्कु वरुन्नितु, मीनङ्ङळॆल्लां रसत्तिङ्कल् मोहिच्चु ताने बळिशं विळुङ्ङि मरिक्कुन्नु, अग्नियॆक्कण्टु मोहिच्चु शलभङ्ङळ् मग्नमाय् मृत्यु भविक्कुन्नितव्वणं। जानकियॆक्कण्टु मोहिक्क कारणं प्राणविनाशं भवानुमकप्पॆट्टुं। नल्लतल्लेतु मॆनिक्कितॆन्नुळ्ळतुमुळ्ळिलरिञ्ञिरिक्कुन्नतॆन्ताकिलुं चॆल्लुमतिङ्कल् मनस्सतिन् कारणं चौल्लुवन् मुन्नं कळिञ्ञ

ने पूरा समाचार अपने छोटे भाई को प्रीतिपूर्वक कह सुनाया। (रावण का कथन सुनकर मन ही मन भयभीत) कुम्भकर्ण ने राक्षसराज से कहा—"इस प्रकार सोते हुए भूमि में जीवन बिताने की अपेक्षा (मृत्यु पाकर) देवत्व को प्राप्त करना मेरे लिए अधिक प्रिय लगता है। (उसके लिए तैयार हो मैं अभी निकलूँगा।) किन्तु मुझे लगता है कि आपने अब तक जो कुछ कार्य किये, वे सब के सब आपकी प्राण-हानि के कारण बन जाएँगे। भूमि पर अगर आप क्षणभर के लिए भी दिखाई पड़ें तो राम आपको यहाँ रहते नहीं छोड़ेंगे। अगर आपकी जीवित रहने की इच्छा है तो आप निरन्तर राम-पादों की सेवा कीजिए। राम को आप मनुष्य समझने की भूल न करें; वे अद्वैत-स्वरूप, परमात्मा, नारायण महाविष्णु हैं। आपके नाश के लिए कारणभूत बन भूमि पर जन्मी लक्ष्मी भगवती ही सीता हैं। १० हिरण विविध प्रकार के नादों से मोहित हो अपना देहनाश कर बैठता है। बलिश पर बँधे चारे के मोह में पड़कर मछली अपनी दुर्गति कर बैठती है तो आग को देख भ्रमित पतंग उसमें जलकर भस्मीभूत हो जाता है। वैसे ही जानकी को देख आसक्त होने के कारण आपका विनाश भी निकट आ गया। कोई चीज़ अपने लिए उचित नहीं है, यह जानते हुए भी, जीव अपने पूर्वजन्म के संस्कारवश उसी की ओर मोहित हो जाते हैं। जीव की यह प्रवृत्ति रोकना दुस्साध्य है। इस

जन्मत्तिले वासन कौण्टतु नीक्करुतार्क्कुमे शासनयालुमटङ्ङुक-यिल्लतु। विज्ञानमुळ्ळ दिव्यन्मार्क्कुं पोलुं मढ़ज्ञानिकळ्क्को पऱयेण्टतिल्लल्लो। काट्टियतेल्लामपनयं नीयितु नाट्टिलुळ्ळोर्क्कु-मापत्तिनाय् निर्णयं। ञानितिनिन्निनि रामनेयुं मट्ट वानरन्मा-रेयुमोक्केयोट्टुक्कुवन्। २० जानकि तन्नेयनुभविच्चीट्ट नी मानसे खेदमुण्टाकरुतेतुमे। देहत्तिनन्तरं वन्नुपों मुन्नमे मोहिच्चताहन्त! साधिच्चु कौळ्क नी। इन्द्रियङ्ङळ्क्कु वशनां पुरुषनु वन्नीट्टु-मापत्तु निर्णयमोर्त्तु काण्; इन्द्रिय निग्रहमुळ्ळ पुरुषनु वन्नु कूटुं निज सौख्यङ्ङळोक्कवे। इन्द्रारियां कुंभकर्णोक्तिकेट्टळ-विन्द्रजित्तुं पऱञ्ञीटिनानादराळ्—मानुषनाकिय रामनेयुं मट्ट वानरन्मारेयुमोक्केयोट्टुविक ञान् आशु वरुवननुज्ञयेच्चेयिकलेन्ना शराधीश्वरनोट्टु चौल्लीटिनान्। २७

रावण विभीषणन्मारुटे संभाषणम्

अन्नेरमागतनाय विभीषणन् धन्यन् निजाग्रजन्तन्ने वणङ्ङिनान्। तन्नरिकत्तङ्ङिरुत्तिद्दशानन् चौन्नानवनोट्टु पथ्यं

प्रवृत्ति का स्वयं शमित होना भी असम्भव है। जब ज्ञानी दिव्यात्मा लोग भी इसके वशीभूत हो जाते हैं तब अज्ञानियों की बात ही क्या पूछने की है! आपने जो कुछ भी कार्य किये, सब अन्यायपूर्ण ही किये। किन्तु आपके इन कार्यों के फलस्वरूप पूरे देशवासी भी विपत्ति में फंस जाएँगे। मैं तो आज ही जाकर राम-लक्ष्मण तथा अन्य वानर सैनिकों का वध करूँगा। २० आप यहाँ बैठकर खूब जानकी का उपभोग करते रहें! मेरी बातों पर आप क्रुद्ध न हों, शरीर नाश के पहले ही आप अपनी आसक्ति को (खूब उपभोग से) तृप्त करें। आप यह भलीभाँति समझिए कि जिसने इन्द्रियों को वशीभूत कर लिया, उसे सब प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।" इन्द्रारि कुम्भकर्ण की यह उक्ति सुनकर तुरन्त इन्द्रजीत ने निशाचरराज रावण से कहा—"मनुष्य राम तथा अन्य वानरों का वध करके तुरन्त लौट आने की आप मुझे आज्ञा दीजिए।" २७

रावण-विभीषण सम्वाद

उस समय धन्य विभीषण ने वहाँ आकर अपने बड़े भाई को प्रणाम किया तो दशानन ने उन्हें अपने निकट बिठा दिया। विभीषण ने (रावण को) युक्ति-युक्त बातें समझायीं—"हे राक्षसेश्वर!, हे वीर!, हे दशानन!

विभीषणन्—राक्षसाधीश्वर ! वीर ! दशानन् ! केळ्क्कणमेन्नुटे वाक्कुकळिन्नु नी। नल्लतु चॊल्लणमॆल्लावरुं तनिक्कुळ्ळवरोटु चॊल्लुळ्ळ बुधजनं; कल्याणमॆन्तु कुलत्तिनॆन्नुळ्ळतुमॆल्लावरुमोरु-मिच्चु चिन्तिक्कणं, युद्धत्तिनारुळ्ळतोर्क्क नी रामनोटि त्रिलोकत्तिङ्कल् नक्तञ्चराधिप ! मत्तनुत्तमन् प्रहस्तन् विकटनु सुप्तघ्नयज्ञान्तकादिकळुं तथा कुंभकर्ण्णन् जंबुमालीप्रजंघनु कुंभन् निकुंभनकम्पनन् कम्पनन् वम्पन् महोदरनुं महापार्श्वनुं कुंभहनु त्रिशिरस्सतिकायनुं देवान्तकनुं नरान्तकनुं मट्टु देवारिकळ् वज्र-दंष्ट्रादि वीररुं; १० यूपाक्षनुं शोणिताक्षनुं पिन्ने विरूपाक्ष धूम्राक्षनुं मकराक्षनुं इन्द्रनेस्संगरे बन्धिच्च वीरनामिन्द्रजित्तिन्नुमा-मल्लवनोर्टेटो ! नेरे पोरुतु जयिप्पतिन्नारुमे श्रीरामुनोटु करुतायक मानसे। श्रीरामनायतु मानुषनल्ल केळारॆन्नरिवानुमामल्लोरुवनुं। देवेन्द्रनुमल्ल वह्नियुमल्लवन् वैवस्वतनुं निरृतियुमल्लकेळ्। पाशियुमल्ल जगल् प्राणनुमल्ल वित्तेशनुमल्लवनीशाननुमल्ल, वेधावुमल्ल भुजंगाधिपनुमल्लादित्य रुद्र वसुक्कळुमल्लवन्, साक्षाल् महाविष्णु नारायणन् परन् मोक्षदन् सृष्टि स्थिति लय

आप आज मेरी बातों पर अवश्य ध्यान दें। बुद्धिमानों का अभिमत है कि अपने सगे-सम्बन्धियों को उचित परामर्श देना हर व्यक्ति का कर्तव्य है। सब मिलकर सोच-विचार करके कुल के कल्याण की बातें निश्चित करें। हे नक्तंचराधीश ! आप ही जरा सोचें कि इस त्रिभुवन में कौन ऐसा है जो राम से युद्ध कर सके। मदमत्त प्रहस्त, विकट, सुप्तघ्न, यज्ञान्तक, कुम्भकर्ण, जम्बुमाली, प्रजघ, अकंपित, कुंभ, कंप, बड़े साहसी महोदर, महापार्श्व, कुंभह, त्रिशिरस, अतिकाय, देवान्तक, नरकान्तक, वज्रदंष्ट्र आदि राक्षस वीर—१० —यूपाक्ष, शोणिताक्ष, धूम्राक्ष, मकराक्ष तथा युद्ध में इन्द्र को बन्धित करनेवाले वीर इन्द्रजीत भी उनके (राम के) सामने टिक नहीं सकेंगे। आप मन में यह समझ लें कि कोई भी राम के सामने खड़ा होकर सीधा युद्ध करके जीत नहीं सकेगा। आप मेरी बात सुनिये कि श्रीराम कोई मनुष्य नहीं हैं। उनको समझ पाने की क्षमता निश्चय ही किसी में नहीं है। वे न तो देवेन्द्र हैं न वह्नि ही। वे न वैवस्वत (विवस्वान् अर्थात् सूर्य के पुत्र यम) हैं, न निरृति ही। वे न पाशी (वरुण) हैं न जगत्प्राण (वायु) ही; वे न वित्तेश (कुबेर) हैं न ईशानन (शिव) हैं; वे न तो ब्रह्मा हैं न भुजंगाधिप (अनन्तनाग) ही। वे परमात्मा, मोक्षप्रद नारायण साक्षात् महाविष्णु हैं जो सृष्टि स्थिति

कारणन्। मुन्नं हिरण्याक्षनेक्कोल चेय्तवन् पन्नियाय् मन्निटं पालिच्चु कोळ्ळुवान्। पिन्ने नरसिंह रूपं धरिच्चिट्टु कोन्न हिरण्यकशिपुवां वीरने; २० लोकैकनायकन् वामन मूर्त्तियाय् लोकत्रयं बलियोटु वाङ्ङीटिनान्। कोन्नानिरुपत्तोरुनट रामनाय् मन्नवन्मारेयसुरांशमाकयाल्। अन्तन्तसुररेयोक्कॆयोटुक्कुवान् मन्निलवतरिच्चीटुं जगन्मयन्। इन्नु दशरथपुत्रनाय् वन्नितु निन्ने योटुक्कुवानेन्नरिञ्ञीटु नी। सत्य सङ्कल्पनामीश्वरन् तन्मतं मिथ्ययाय्वन्नु कूटायॆन्नु निर्णयं। ऎङ्किलॆन्तिन्नु परयुन्नतेन्नोरु शङ्कयुण्टाकिलतिन्नु चोल्लीटुवन्। सेविप्पवर्क्कभयत्तेक्कोटुप्पोरु देवनवन् करुणाकरन् केवलन्; भक्तप्रियन् परमन् परमेश्वरन् भुक्तियुं मुक्तियुं नल्कुं जनार्द्दनन्, आश्रित वत्सलनंबुज लोचनन् ईश्वरनिन्दिरा वल्लभन् केशवन्। भक्तियोटुं तन्तिरुवटि तम्पदं नित्यमाय् सेविच्चु कोळ्क मटियाते। ३० मैथिली देवियेक्कोण्टक्कोटुत्तु तत्पादांबुजत्तिल् नमस्करिच्चीटुक। कैतोळुताशु रक्षिक्कॆन्नु चोल्लियाल् चेय्तपराधङ्ङळेल्लां

संहारकारक हैं। पूर्व में हिरण्याक्ष से पृथ्वी की रक्षा करने के लिए उन्होंने वराह रूप में अवतार लिया था; फिर नृसिंह रूप धारण करके उन्होंने ही वीर हिरण्यकशिप का वध किया था। २० इन्हीं जगत के स्वामी ने बलि से त्रिलोक को प्राप्त किया था। असुरांश से युक्त होने के कारण उन्होंने परशुराम के रूप में अवतीर्ण हो इक्कीस बार क्षत्रियों का वध किया था। जब-जब संसार में आसुरी वृत्ति बढ़ती है तब-तब असुरों का निग्रह करने के लिए अवतार लेनेवाले जगन्मय भगवान ने आज आप ही को मारने के लिए पृथ्वी पर दशरथ-पुत्र के रूप में अवतार ग्रहण किया है, यह आप भली प्रकार से जान लीजिए। भगवान के संकल्प का कोई निराकरण नहीं कर सकता, निश्चय ही उनका संकल्प मिथ्या नहीं हो सकता। अगर आप यह सोचें कि विधि विहित को जब टाला नहीं जा सकता तब इस प्रकार मेरे उपदेश का क्या महत्व हो सकता है तो मैं आपके प्रबोध के लिए कहना चाहता हूँ कि करुणाकर भगवान अपने आश्रय में आनेवालों को शरण प्रदान करनेवाले हैं। परमात्मा परमेश्वर भक्तप्रिय एवं जनार्दन हैं। वे भुक्ति-मुक्ति प्रदाता हैं। कमल के समान लोचनवाले, इन्दिरावल्लभ (लक्ष्मीपति) केशव आश्रित-वत्सल हैं। इसलिए आप निस्संकोच प्रतिदिन उन भगवान के श्रीचरणों की भक्ति के साथ वन्दना करें। ३० आप देवी मैथिली को ले जाकर दे दें और उनके चरण-कमलों पर नमस्कार करें।

क्षमिच्चवन् तन्पदं तल्कीटुमेवनुं तम्मुटे तम्पुरानोळं कृपयिल्ल-मट्टाक्कुं । काटकं पुक्कतेरत्तति बालकन् ताटकयेक्कोल चेय्तानोरम्पिनाल् । कौशिकन् तन्नुटे याग रक्षात्थमाय् नाशं सुबाहु मुख्यन्मार्क्कुं तल्किनान्; तृक्कालटि वच्चु कल्लामहल्यक्कु दुष्कृतमेल्लामोटुक्कियतोक्कं नी । त्रैयंबकं विल्लु खण्डिच्चु सीतयां मय्यल् मिळियाळेयुं कोण्टु पोकुम्पोळ् मार्ग्गं मद्ध्ये कुठारायुधनाकिय भार्ग्गवन् तन्नेज्जयिच्चतुमत्भुतं । पिन्ने विराध-नेक्कोन्नु कळञ्ञतुं चेन्नु खरादिकळेक्कोलचेय्ततुं उन्नतनाकिय बालियेक्कोन्नतुं मन्नवनाकिय राघवनल्लयो । ४० अर्ण्णवं चाटिक्कटन्निविटेय्वकु वन्नर्ण्णोजनेत्रयेक्कण्टु परञ्ञुटन् वह्निक्कु लङ्कापुरत्तेस्समर्प्पिच्चु सन्नद्धनाय्पोय मारुति चेय्ततुं, ओन्नो-ळियातेयरिञ्ञिरिक्केत्तव नन्नु नन्नाहन्त ! तोन्नुन्नतिङ्ङने । नन्नल्ल सज्जनत्तोटु वैरं वृथा तन्वंगि तन्नेक्कोटुक्क मटियाते; नष्ट मतिकळायीटुममात्यन्मारिष्टं परञ्ञु कोल्लिक्कुमतोक्क नी । कालपुरं गमियातिरिक्केण्टुकिल् कालं वैकाते कोटुक्क वैदेहिये ।

जो हाथ जोड़कर रक्षा करने के लिए प्रार्थना करता है, उसके समस्त अपराधों को क्षमा करके वे भगवान उसे अपने चरणों की सद्गति प्रदान करते हैं । इस प्रकार हमारे भगवान के समान कृपालु दूसरा कोई देवता नहीं है । बाल्यकाल में वन में जाते हुए उन्होंने ताड़का को एक ही बाण से मार डाला था । कौशिक (विश्वामित्र) के यज्ञ की रक्षा करने के लिए (उन्होंने) सुबाहु जैसे बलवानों का निग्रह कर डाला । पत्थर बन पड़ी अहल्या को चरण-स्पर्श से सारे दुष्कृतों से विमुक्त कर दिया, यह आप स्मरण रखिए । त्र्यंबक धनुष को तोड़कर मृगाक्षी सीता को (वरणकर) ले जाते समय मार्ग में कुठारायुधधारी भार्गव को विस्मयपूर्वक (उन्होंने) जीत लिया । फिर विराध तथा खरादि का वध करनेवाले और अतीव पराक्रमी बालि को मारनेवाले ये ही महाराज राघव ही तो हैं । ४० अर्णव को लाँघ यहाँ आ अर्णोजनेत्रा (कमललोचना सीता) का दर्शन कर तथा (उन्हें) सन्देश सुनाकर और लंकापुरी को वह्नि के सुपुर्द कर सकुशल वापस गये मारुति के सारे कृत्य देख बैठे आपके मन में ऐसे दुर्विचार क्यों उत्पन्न हो रहे हैं, यही विस्मय की बात है ! सज्जन लोगों से व्यर्थ शत्रुता मोल लेना अनुचित है, इसलिए (आप) तन्वंगी (सीता) को वापस कर दीजिए । आप यह स्पष्ट जान लीजिए कि दुर्बुद्धिवाले अमात्य लोग प्रिय-वचन सुना-सुनाकर (आपको) मरवा डालेंगे । अगर यमपुरी जाने

दुर्बलनायुळ्ळवन् प्रबलन् तन्नोटुळ्ळ्पूविळ् मत्सरं वच्चु तुटङ्ङियाल् पिल्पाटु नाटुं नगरवुं सेनयुं तल्प्राणनुं नशिच्चीटुमरक्षणाल्। इष्टं परयुन्न बन्धुक्कळारुमे कष्टकालत्तिङ्कलिल्लेन्नु निर्ण्णयं। तन्नुटे दुर्न्नयं कोण्टु वरुन्नतिनिन्नुन्नामाळल्ल पोकेन्नु वेरपेट्टु ५० चेन्नु सेविक्कुं प्रबलने बन्धुक्कळन्नेरमोर्त्ताल् फलमिल्ल मन्नव! रामशरमेट्टु मृत्यु वरुन्नेरमामयमुळ्ळलेनिक्कुण्टतु कोण्टु नेरे परञ्ञु तरुन्नतु ञानिनित्तारार् मकळेक्कोटुक्क वैकीटाते। युद्धमेट्टुळ्ळ पटयुं नशिच्चुटनर्त्थवुमेल्लामोटुङ्ङियाल् मानसे मानिनियेक्कोटुक्कामेन्नु तोन्नियाल् स्थानवुमिल्ल कोटुप्पतिनोक्क न्नी। मुम्पिलेयुळ्ळल् विचारिच्चु कोळ्ळणं वन्पनोटेट्टाल् वरुं फलमेवनुं। श्रीरामनोटु कलहं तुटङ्ङियालारुं शरणमिल्लेन्न-तरियणं। पङ्कजनेत्रनेस्सेविच्चु वाळुन्नु शङ्करनादिकळेन्नतुमोक्क न्नी। राक्षसराज! जयिक्क जयिक्क न्नी साक्षाल् महेश्वरनोटु पिणङ्ङोला। कोण्टल्नेर्वर्ण्णनु जानकी देवियेक्कोण्टक्कोटुत्तु सुखिच्चु वसिक्क न्नी। ६० संशयमेन्निये तल्कुक देविये वंशं

से बचना है तो अविलम्ब वैदेही को ले जाकर राम को समर्पित कर दें। अगर दुर्बल व्यक्ति मन ही मन प्रबल व्यक्ति के प्रति स्पर्धा रखे तो (दुर्बल के) देश, नगर, सेना तथा उसके प्राण ही क्षणभर में नष्ट हो जाएँगे। यह निश्चित समझ लीजिए कि प्रिय वचन कहनेवाला कोई भी सम्बन्धी विपत्ति के दिनों में साथ नहीं देगा। अपने दुर्व्यवहार से आपके प्राणों के नष्ट होने पर—५० —सेवा करने योग्य प्रबल का उस समय बन्धुओं द्वारा स्मरण किये जाने से, हे महाराज! कुछ लाभ नहीं होगा। राम के बाण लगकर (आपके) मरने से मुझे मन में बड़ा दुःख होगा, इसलिए मैं आपको सीधा उपदेश दे रहा हूँ कि आप सीता को तुरन्त वापस दे दीजिए। युद्ध में सारी सेना तथा धन का नाश हो जाने पर, आप भले ही मन में सीता को वापस करने का विचार करें, तब उन्हें वापस करने का अवसर और स्थान नहीं मिलेगा। यह बात आप ध्यान में रखिए। आप पहले ही यह समझ लीजिए कि बलशाली से वैर मोल लेने का सबको (बुरा) फल मिलेगा। यह जान लीजिए कि श्रीराम से टक्कर लेने पर शरण देनेवाला कोई नहीं होगा। आप यह स्मरण रखिए कि शिव आदि (देवता) भी कमललोचन (राम) की सेवा में तत्पर रहते हैं। हे राक्षसराज! आपकी जय हो! आपकी जय हो! आप साक्षात् परमेश्वर से वैर न मोल लीजिएगा। घनश्याम राम के पास देवी जानकी को समर्पित करके आप

मुटिच्चु कळयाय्क वेणमे । इत्थं विभीषणन् पिन्नेयुं पिन्नेयुं पथ्यमायुळ्ळतु चौन्नतु केट्टोरु नक्तञ्चराधिपनाय दशास्यनु क्रुद्धनाय् सोदरनोटु चौल्लीटिनान्—शत्रुक्कळल्ल शत्रुक्कळाकुन्नतु मित्रभावत्तोटरिके मरुविन शत्रुक्कळ् शत्रुक्कळाकुन्नतेवनुं मृत्युवरुत्तुमवरेन्नु निर्णयं । इत्तरमिन्नोटु चौल्लुकिलाशु नी वध्यनामेन्नालतिनिल्ल संशयं । रात्रिञ्चराधिपनित्तरं चौन्नळ वोर्त्तान् विभीषणन् भागवतोत्तमन्—मृत्यु वशगतनाय पुरुषनु सिद्धौषधङ्ङळुमेल्कयिल्लेतुमे । पोरुमिवनोटिनि ञान् परञ्ञतु पौरुषं कौण्टु नीक्कामो विधिमतं ? श्रीरामदेव पादांभोजमेन्निमट्टारुं शरणमेनिक्किल्ल केवलं । ७० चेन्नु तृक्काल्क्कल् वीणन्तिके सन्ततं तिन्नु सेविच्चु कौळ्वन् जन्ममुळ्ळनाळ् । सत्वरं नालमात्यन्मारुमायवनित्थं निरूपिच्चुरच्चु पुरप्पेट्टु, दारधनालय मित्र भृत्यौघवुं दूरेप्परित्यज्य राम पादांबुजं मानसत्तिङ्कलुरप्पिच्चु तुष्टनाय्वीणु वणङ्ङिनानग्रजन् तन्पदं । कोपिच्चु रावणन् चौल्लिनानन्नेरमापत्तेनिक्कु वरुत्तुन्नतुं भवान्, रामनेच्चेन्नु सेविच्चु कौण्टालुमोरामयमिङ्ङतिनिल्लेन्नु निर्णयं ।

चैन से, सुख-पूर्वक रहिए । ६० आप देवी (सीता) को निस्संकोच वापस करके वंश को नष्ट होने से बचा दीजिए । इस प्रकार विभीषण को बार-बार उचित उपदेश देते सुनकर क्रुद्ध दशानन ने अपने भाई से कहा—"वास्तव में वे (हमारे) शत्रु नहीं जो शत्रु दिखते हैं, किन्तु मित्रभाव से निकट रहनेवाले शत्रु ही वास्तव में शत्रु हैं और निश्चय ही वे हमारी मृत्यु के कारण बनेंगे । अब आगे ऐसी बात तुम्हारे मुँह से निकली तो निस्सन्देह मैं तुम्हारी हत्या कर दूँगा ।" रात्रिचराधिप (रावण) के इस प्रकार कहने पर भागवतोत्तम विभीषण ने सोचा कि मृत्यु के वशगत पुरुष पर कोई दिव्यौषध भी अपना प्रभाव नहीं डाल सकता । इनको अब उपदेश देने से मुझे बाज आना चाहिए; विधिविहित को पौरुष से कौन मिटा सकता है ? अब श्रीरामचन्द्र के चरण-कमलों को छोड़ मेरे लिए अन्य कोई शरण नहीं है । ७० अब सीधे राम के निकट जाऊँगा और आजीवन उनके चरणों की सेवा करता रहूँगा । फिर तुरन्त ही चार अमात्यों से विचार करके निश्चयपूर्वक वे चल पड़े । पत्नी, धन, घर, मित्र, भृत्य-समूह सबको त्यागकर तथा राम के चरण-कमलों को मन में बसाये वे अपने अग्रज (रावण) के चरणों पर गिर पड़े । तब क्रोध से रावण ने कहा—"मुझे तुम ही विपत्ति में फँसाते हो । तुम जाकर राम की सेवा करो,

पोकाय्किलो मम चन्द्रहासत्तिनिन्नेकान्त भोजनमाय्वरुं नीयेंटो !
ऍन्नतु केट्टु विभीषणन् चोंल्लिनानेंन्नुटे तातनु तुल्यनल्लो भवान् ।
तावकमाय नियोगमनुष्ठिप्पनावतेंल्लामतु सौख्यमल्लो मम,
सङ्कटं ञान् मूल मुण्टाकरुतेतुमेंङ्किलो ञानिता वेगेन पोकुन्नु । ८०
पुत्रमित्रार्त्थ कळत्रादिकळोटुमत्र सुखिच्चु सुचिरं वसिक्क नी ।
मूल विनाशं निनक्कु वरुत्तुवान् कालन् दशरथ मन्दिरे रामनाय्
जातनायान् जनकालये कालियुं सीताभिधानेन जातयायीटिनाळ् ।
भूमिभारं कळञ्ञीटुवानाय् मुतिर्न्नामोदमोटिङ्ङु वन्नारिरुवरुं ।
ऍङ्ङनें पिन्नें ञान् चोंन्न हितोक्तिकळङ्ङु भवानुळ्ळिलेल्क्कुन्नितु
प्रभो ! रावणन् तन्नें वधिप्पानवनियिल् देवन् विधातावपेक्षिच्च
कारणं वन्नु पिऱन्नितु रामनाय् निर्णयं पिन्नेंयतिन्नन्यथात्वं
भविक्कुमो ? आशरवंश विनाशं वरुं मुम्पे दाशरथियेंश्शरणं
गतोस्मि ञान् । ८८

विभीषणन्ऱे शरण प्राप्ति

रावणन् तन् नियोगेन विभीषणन् देवदेवेश पादाब्ज
सेवार्त्थमाय् शोकं विना नालमात्यरुमायुटनाकाश मार्ग्गे

मुझे निश्चय ही उससे कुछ दुःख होने का नहीं है। यहाँ से तुरन्त न निकल पड़ने पर तुम मेरे चन्द्रहास का मात्र भोजन बन जाओगे।" यह सुनकर विभीषण ने कहा—"आप मेरे पितृतुल्य हैं; आपकी आज्ञा का यथाशक्ति पालन करूँगा। आपकी (इस) आज्ञा का पालन करना ही मेरे लिए सुखकारक है। आपको मेरे वियोग से दुःख होने न पाये, मैं अभी यहाँ से जा रहा हूँ। ८० आप पुत्र-मित्र, धन-सम्पत्ति, कलत्र आदि के साथ यहाँ सुखपूर्वक रहें। आपका समूल नाश करने के लिए यमराज ही दशरथ के मन्दिर में राम के रूप में जन्मे हैं और काली ही जनकालय में सीता के नाम से पैदा हुई है। भूमि-भार दूर करने के लिए दोनों सन्नद्ध हो यहाँ आये हुए हैं। ऐसी हालत में मेरे कहे हुए हितवचन आपको कैसे अच्छे लगेंगे? रावण का वध करने के निमित्त ही विधाता की प्रार्थना पर भगवान राम के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं। ऐसी हालत में देव-संकल्प का विपर्यय कैसे होगा? राक्षसवंश के विनाश के पहले ही मैं दाशरथी (राम) की शरण में जा रहा हूँ।" ८८

विभीषण की शरण-प्राप्ति

रावण की आज्ञा मानकर देवदेवेश (राम) के पादाब्ज (चरण-

गमिच्चानति द्रुतं। श्रीराम देवनिरुन्नरुळुन्नतिन् नेरे मुकळिल् निन्नुच्चैस्तरमवन् व्यक्त वर्ण्णेन चौल्लीटिनानेवयुं भक्ति विनय विशुद्धमति स्फुटं—राम ! रमारमण ! त्रिलोकीपते ! स्वामिन् जय जय नाथ ! जय जय। राजीवनेत्र मुकुन्द ! जय जय राजशिखामणे ! सीतापते ! जय। रावणन् तन्नुटे सोदरन् ञान् तव सेवार्त्थमाय् विटकौण्टेन् दयानिधे ! आम्नाय मूर्त्ते ! रघुपते ! श्रीपते ! नाम्ना विभीषणन् त्वद् भक्त सेवकन्। देवियेक्कट्टतनुचितं नीयेन्नु रावणनोटु ञान् नल्लतु चौल्लियेन्। देवियै श्रीरामनाय्क्कौण्टु नल्कुकेन्नावोळमेटं परञ्ञेन् पलतरं। १० विज्ञान मार्ग्गमेल्लामुपदेशिच्चतज्ञानियाकयाले-ट्टतिल्लेतुमे। पथ्यमायुळ्ळतु चौल्लियतेट्टमपथ्यमाय् वन्नितवन्नु विधिवशाल्। वाळुमायेन्ने वधिप्पानटुत्तितु काळभुजंग वेगेन लङ्केश्वरन्। मृत्यु भयत्तालटियनुमेवयुं चित्ताकुलतया पाञ्ञु पाञ्ञिङ्ङह नालमात्यन्मारुमाय् विट कौण्टेनोरालंबनं

कमल) की सेवा करने के उद्देश्य से विभीषण अपने चार अमात्यों सहित तुरन्त ही अपना सारा दुःख त्याग कर जल्दी-जल्दी आकाश-मार्ग से (राम की ओर) चल पड़े। श्रीराम जी के बैठने के स्थान के सीधे ऊपर आकर उन्होंने अतीव भक्ति, नम्रता एवं विशुद्ध भाव से प्रेरित हो उच्च एवं स्पष्ट शब्दों में प्रार्थना की—"हे राम !, हे रमारमण ! हे त्रिलोकपति ! हे स्वामी ! (आपकी) जय हो !, जय हो ! हे नाथ ! जय हो !, जय हो ! हे राजीव नेत्र ! हे मुकुन्द ! (आपकी) जय हो, जय हो ! हे राजाओं के सिरमौर ! हे सीतापते ! आपकी जय हो ! हे दयानिधि ! रावण का भ्राता मैं आपकी सेवा करने के लिए आगत हूँ। हे आम्नाय-मूर्त्ति (देवस्वरूप) ! हे रघुपति ! हे श्रीपति ! विभीषण के नाम से अभिहित मैं आपका दास हूं। मैंने रावण को बताया था कि सीता को चुरा ले आकर तुमने अनुचित कार्य किया है। मैंने कई बार उन्हें समझाया कि देवी को ले जाकर श्रीराम जी के चरणों पर अर्पित कर दो। १० (मैंने) कई प्रकार से ज्ञानोपदेश दिये, किन्तु अज्ञानी (रावण) पर उनका कुछ असर नहीं पड़ा। विधिवश् मेरे कहे सारे उचित वचन उनके लिए अनुचित लगे। (मेरे उपदेश सुनकर) लंकेश रावण काल-भुजंग के समान (फूत्कार करता हुआ) 'खड्ग लेकर मुझे मारने दौड़ पड़ा। मृत्यु-भय से पीड़ित हो यह दास चार अमात्यों के साथ भागता हुआ यहाँ (आप की शरण में) आ पहुँचा हूँ। मेरे लिए दूसरी शरण

मट्टेनिक्किल्ल दैवमे ! जन्म मरण मोक्षात्थं भवच्चरणांबुजं मे शरणं करुणांबुधे । इत्थं विभीषण वाक्यङ्ङळ् केट्टळवुत्थाय सुग्रीवनुं परञ्ञीटिनान्—विश्वेश ! राक्षसन् मायावियेन्नयुं विश्वासयोग्यनल्लेन्नु निर्णयं । पिन्ने विशेषिच्चु रावण राक्षसन् तन्नुटे सोदरन् विक्रममुळ्ळवन् आयुध पाणियाय् वन्नारमात्यरुं माया विशारदन्मारेन्नु निर्णयं । २० छिद्रं कुरञ्ञोन्नु काण्किलुं नम्मुटे निद्रयिलेङ्किलुं निग्रहिच्चीटुमे । चिन्तिच्चुटन् नियोगिक्क कपिकळे हन्तव्यनिन्निवनिल्लोरु संशयं । शत्रु पक्षत्तिङ्कलुळ्ळ जनङ्ङळे मित्रमेन्नोर्त्तुटन् विश्वसिक्कुन्नतिल् शत्रुक्कळेत्तन्ने विश्वसिच्चीटुन्नतुत्तममाकुन्नतेन्नतोक्केणमे । चिन्तिच्चु कण्टिनि निन्तिरुवुळ्ळत्तिलेन्तोन्नभिमतमेन्नरुळ् चेय्यणं । मट्टुळ्ळ वानर वीररुं चिन्तिच्चु कुट्टं वरायुवान् परञ्ञार् पलतरं । अन्नेर-मुत्थाय वन्दिच्चु मारुति चोन्नान् विभीषणनुत्तमनेन्नयुं । वन्नु शरणं गमिच्चवन् तन्ने नां नन्नु रक्षिक्केन्नतेन्नेन्नुटे मतं । नक्तञ्चरान्वयत्तिङ्कल् जनिच्चवर् शत्रुक्कळेवरुमेन्नु वन्नीटुमो ? नल्लवरुण्टामवरिलुमेन्नुळ्ळ तेल्लावरुं निरूपिच्चु कोळ्ळेणमे । ३०

कहीं नहीं है । हे करुणानिधि ! मेरे लिए जन्म-मरण से मुक्ति प्राप्त करने के लिए आपके चरण-सरोजों का ही अवलंब है ।" इस प्रकार के विभीषण के वचन सुनकर सुग्रीव ने उठकर (आवेश से) कहा —"हे विश्वेश ! राक्षस लोग मायावी होते हैं, वे विश्वास करने योग्य कभी नहीं होते । विशेष कर राक्षस रावण का भ्राता महा पराक्रमी है और वह हथियारबन्द अमात्यों सहित आया हुआ है । इन्हें माया-विशारद जान लीजिए । २० छल रहित दिखाई दें तो भी ये निन्द्र में ही सही, हमारी हत्या कर डालेंगे । विचार करके कपियों को भेजिए । ये निश्चय ही वध्य हैं । शत्रुपक्ष के लोगों पर मित्र समझकर विश्वास करने की अपेक्षा शत्रु पर ही विश्वास कर बैठना उत्तम है, यह समझ लें । अब आप मन में विचार करके जो उचित है, बता दें ।" दूसरे वानरों ने भी सोच-विचार करके कई प्रकार की बातें बतायीं । तब उठकर (राम की) वंदना करते हुए मारुति ने कहा —"विभीषण उत्तम व्यक्ति हैं । मेरा मत है कि हमारी शरण में आये व्यक्ति की हम रक्षा करें । क्या जरूरी है कि राक्षस वंश में जन्मे सभी शत्रु होंगे ? सब को यह समझ लेना चाहिए कि उनमें भी सज्जन निकलेंगे । ३० आदमी जाति या नाम से अच्छे-बुरे नहीं होते । विद्वानों का स्पष्ट मत

जाति नामादिकळ्क्कल्ल गुणगण भेदमेन्नत्रे बुधन्मारुटे मतं
शाश्वतमायुळ्ळ धर्म्मं नृपतिकळ्क्काश्रित रक्षणमेन्नु शास्त्रोक्तियुं ।
इत्थं पलरुं पलविधं चोन्नव चित्ते धरिच्चरुळ् चेय्तु रघुपति—
मारुति चोन्नतुपपन्नमेत्रयुं वीरा ! विभाकरपुत्र ! वरिकेटो !
श्रान् पऱयुन्नतु केळ्प्पिनेल्लावरुं जांबवदादि नीतिज्ञवरन्मारे !
उर्वीशनायालवनाश्रितन्मारेस्सर्वशो रक्षेच्छ्वनश्श्वपचानपि ।
रक्षियाञ्ञालवन् ब्रह्महा केवलं रक्षितावश्वमेधं चेय्त पुण्यवान् ।
अेन्नु चोल्लुन्नितु वेदशास्त्रङ्ङळिल् पुण्य-पापङ्ङळऱियरुतेतुमे ।
मुन्नमोरु कपोतं निज पेटयोटोन्निच्चोरु वनं तन्निल् मेवीटिनान्
उन्नतमानोरु पादपाग्रे तदा चेन्नोरु काट्टाळनेय्तु कोन्नीटिनान् । ४०
तन्नुटे पक्षिणियेस्सुरतान्तरे वन्नोरु दुःखं पोऱाञ्ञु करञ्ञवन्,
तन्ने मऱन्निरुन्नीटुं दशान्तरे वन्नितु काटुं मळयुं दिनेशनुं
चेन्नु चरमाब्धि तन्निल् मऱञ्ञितु खिन्ननाय् वन्नु विशन्नु
किरातनुं । तानिरिक्कुन्न वृक्षत्तिन्मुरटतिल् दीनतयोटु
निल्क्कुन्न काट्टाळने कण्टु करुण कलर्न्नु कपोतवुं कोण्टुवन्नाशु

है कि (मनुष्य) गुण-गणों से (अच्छे-बुरे) भिन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त शास्त्रोक्ति है कि शरण में आये की रक्षा करना नृपति (राजा) का शाश्वत धर्म है।" इस प्रकार कई लोगों के द्वारा कहे गये वचनों पर ध्यान देते हुए राम ने कहा —"हे वीर ! हे विभाकर-पुत्र (सुग्रीव) ! तुम सुनो। इस बात में मारुति का मत अत्यन्त योग्य जान पड़ता है। हे जांबवान् आदि नीतिज्ञो, आप लोग मेरी बात सुन लें। चाहे आश्रित श्वान हो चाहे चण्डाल, राजा को चाहिए कि उसकी रक्षा करे। रक्षा न करने पर ब्रह्महत्या का पाप लगता है और रक्षा करने से अश्वमेधयज्ञ का सा पुण्य प्राप्त होता है। यही वेदों-शास्त्रों की उक्ति है। ऐसी अवस्था में (आश्रित का) पुण्य-पाप देखा नहीं जाता है। (एक कथा सुनाऊंगा) पहले एक कपोत अपनी कपोती के साथ एक वन में एक ऊंचे वृक्ष पर बैठा हुआ था। एक चण्डाल ने बाण से मारा— ४० उस कपोती को, जो (अपने कपोत के साथ) क्रीड़ारत थी। उससे दुखी एवं शोकातुर हो जब कपोत अपने को विस्मृत किये बैठा था तब आंधी और पानी आया। दिनेश (सूर्य) सागर में जा अस्त हो चुका था। किरात भूख से परेशान हो उठा। वृक्ष के तले दीनता से खड़े किरात को देख करुणार्द्र कपोत ने उसे आग लाकर दी। (किरात ने) अपने हाथ में पड़ी कपोती को आग में भूनकर खा लिया। तिस पर भी भूख

कोट्टित्तु वह्नियुं । तन्नुटे कैय्यिलिरुन्न कपोतियें वह्नियिलिट्टु चुट्टाशु तिन्नीटिनान् । अन्नतु कोण्टुं विशप्पटङ्ङीटाञ्ञु पिन्नेयुं पीडिच्चिरिक्कुं किरातनु तन्नुटे देहवुं नल्किनानन्पोटु वह्नियिल् वीणु किराताशनार्त्थमाय् । अन्नपोलुं वेणमाश्रित रक्षणं मर्त्त्यनेन्नालो पऱयेण्टतिल्लल्लो । ऐन्नेशरणमेन्नोर्त्तिङ्ङु वन्नवनेन्नुमभयं कोटुक्कुमतेयुळ्ळु; ५० पिन्ने विशेषिच्चुमोन्नु केट्टीटुविनेन्नेच्चतिप्पतिन्नारुमिल्लेङ्ङुमे । लोकपालन्मारेयुं मट्टु काणाय लोकङ्ङळेयुं निमिषमात्रं कोण्टु सृष्टिच्चु रक्षिच्चु संहरिच्चीटुवानोट्टुमे दण्डमेनिक्किल्ल निश्चयं । पिन्ने ञानारेब्भयप्पेटुन्नू मुदा वन्नीटुवान् चोल्लवने मटियाते । व्यग्रियाय्क्केतु मितु चोल्लि मानसे सुग्रीव ! नी चेन्नवने वरुत्तुक । ऐन्नेशरणं गमिक्कुन्नवर्क्कु ञानेन्नुमभयं कोटुक्कुमतिद्रुतं । पिन्नेयवर्क्कोरु संसार दुःखवुं वन्नु कूटा नूनमेन्नमऱिक नी । श्रीराम वाक्यामृतं केट्टु वानर वीरन् विभीषणन् तन्ने वरुत्तिनान् । श्रीराम पादान्तिके वीणु साष्टांगमारूढ मोदं नमस्करिच्चीटिनान् । रामं विशालाक्षमिन्दीवर दळ श्यामळं कोमळं बाण धनुर्द्धरं; ६०

से पीड़ित हो खिन्न बैठे किरात को देखकर (करुणावश) कपोत स्वयं आग में कूद पड़ा और (उसने) अपना शरीर भी किरात को भोजनार्थ दे दिया। शरणार्थी के प्रति ऐसा भाव होना चाहिए। फिर मनुष्य का (आश्रय-रक्षण !) क्या कहना है ! मेरी शरण में आने वाले को सदा शरण मिलनी चाहिए, यही मेरा मत है। ५० —फिर विशेषकर आप सुनें, मुझे छलने की सामर्थ्य कहीं किसी में नहीं है। लोकपालों, तथा दृश्यमान लोकों की क्षण भर में सृष्टि, पालन तथा संहार करने में मुझे विशेष श्रम नहीं करना पड़ता। निश्चय ही क्षण भर में ये कार्य सम्पन्न होते हैं। फिर मैं किससे डरूँ ? आप निस्संकोच उन्हें अन्दर बुला लाइये। हे सुग्रीव ! तुम इस बात पर चिन्ता त्याग दो। तुम जाकर उन्हें लिवा लाओ। जो मेरी शरण में आता है मैं सदा उसे तुरन्त आश्रय देता हूँ। फिर उसे किसी प्रकार का सांसारिक दुख नहीं होना चाहिए। यह भी तुम समझ लो।" श्रीराम जी के अमृतोपम वचन सुनकर वानर-वीर (सुग्रीव) विभीषण को बुला लाये। श्रीराम जी के चरणों पर गिर पड़कर साष्टांग प्रणाम करते हुए विभीषण ने वंदना की —"इन्दीवर के दल के समान विशाल नेत्र वाले, श्यामल कोमल, धनुष-बाणधारी हे राम ! —६० —आपका मुख-कमल सोमबिंब के

सोम बिंबाभ प्रसन्न मुखांबुजं कामदं कामोपमं कमलावरं;
कान्तं करुणाकरं कमलेक्षणं शान्तं शरण्यं वरेण्यं वरप्रदं;
लक्ष्मण संयुतं सुग्रीव मारुति मुख्य कपिकुल सेवितं राघवं।
कण्टु कूप्पित्तोळ्तेटं विनीतनायुण्टाय सन्तोषमोटुं विभीषणन्
भक्त प्रियनाय लोकैकनाथनें भक्ति परवशनाय् स्तुतिच्चीटिनान्—
श्रीराम ! राक्षसवंश विनाशन ! श्रीराम पदांबुजं नमस्ते सदा;
चण्डांशु गोत्रोत्भवाय नमोनमः चण्ड कोदण्ड धराय नमोनमः।
पण्डित हृल् पुण्डरीक चण्डांशवे खण्ड परशुप्रियाय नमोनमः।
रामाय सुग्रीव मित्राय कान्ताय रामाय नित्यमनन्ताय शान्ताय
रामाय वेदान्तवेद्याय लोकाभिरामाय रामभद्राय नमोनमः। ७०
विश्वोत्भवस्थिति संहार हेतवे विश्वाय विश्वरूपाय नमोनमः।
नित्यमनादि गृहस्थाय ते नमो नित्याय सत्याय शुद्धाय ते नमः।
भक्त प्रियाय भगवते रामाय मुक्ति प्रदाय मुकुन्दाय ते नमः।
विश्वेशनां त्निन्तिरुवटि तानल्लो विश्वोत्भव स्थिति संहार कारणन्।

समान आभा वाला है एवं प्रकाशमय है। आप कामनाओं की पूर्ति करने वाले, कामदेव के समान (कांतिमय) हैं और लक्ष्मी देवी के पति हैं। (आप) द्युतिमय, करुणाकर, कमल-लोचन, शान्त, शरण देने वाले, सबके लिए वरेण्य एवं वरप्रदायक हैं। लक्ष्मण-सहित राम, जो सुग्रीव तथा मारुति जैसे कपि कुल से सेवित हैं, को देख, हाथ जोड़, प्रसन्नमुद्रा में उठकर बिभीषण ने भक्ति-परवश हो भक्तप्रिय त्रिलोकनाथ (राम) की स्तुति की —"हे श्रीराम !, हे राक्षसवंश के विनाशक ! हे श्रीराम ! मैं सदा आपके चरण-सरोजों को नमस्कार करता हूँ। हे सूर्यवंशसंभूत ! (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। हे उग्र कोदंड धनुष को धारण करने वाले ! (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। ज्ञानियों के हृदय-कमल के लिए सूर्य-स्वरूप तथा शिव के प्रिय हे राम ! (आपको) नमस्कार है, नमस्कार है। सुग्रीव मित्र राम को, मनोहर राम को, अनन्त, शान्त एवं नित्यस्वरूप राम को, वेदान्त-वेद्य राम को, लोकाभिराम रामभद्र को मेरा प्रणाम है, मेरा प्रणाम है। ७० विश्व के उद्भव, स्थिति तथा संहार के लिए कारण-स्वरूप तथा स्वयं विश्वरूप (भगवान को) मेरा नमस्कार है, नमस्कार है। नित्य अनादि, गृहस्थ हे राम ! (आपको) प्रणाम है। नित्यस्वरूप, सत्यस्वरूप एवं शुद्ध आपको मैं प्रणाम करता हूँ। हे विश्वेश्वर ! आप ही तो विश्व के उद्भव, स्थिति एवं संहार के कारण हैं। आप ही चर एवं अचर के

सन्ततं जंगमाजंगम भूतङ्ङळन्तर् बहिर्व्याप्तनाकुन्नतुं भवान् ।
निन्महामायया मूटिक्किटक्कुमा निर्म्मलमां परब्रह्ममज्ञानिनां;
तन्मूलमायुळ्ळ पुण्यपापङ्ङळाल् जन्म मरणङ्ङळुण्टाय् वरुन्नतु ।
अत्र ञाळेय्क्कु जगत्तोक्कवे बलाल् सत्यमाय्त्तोन्नुमतिनिल्ल संशयं ।
अेत्र ञाळेय्क्करियातेयिरिक्कुन्नितद्वयमां परब्रह्मं सनातनं
पुत्र दारादि विषयङ्ङळिलति सक्ति कलर्न्नु रमिक्कुन्नितन्वहं ।८०
आत्माविनेयरियाय्कयाल् निर्ण्णयमात्मनि काणेणमात्मानमात्मना
दुःखप्रदं विषयेन्द्रिय संयोगमोक्कॆयुमोर्त्तालोटुक्कमनात्मना ।
आदि काले सुखमॆन्नु तोन्निक्कुमतेतुं विवेकमिल्लातवर् मानसे ।
इन्द्राग्नि धर्म्मरक्षोवरुणानिल चन्द्ररुद्राशादि पालकरोक्कवे
चिन्तिक्किलो नित्तिरुवटि निर्ण्णयमन्तवुमादियुमिल्लात दैवमे !
कालस्वरूपनायीटुन्नतुं भवान् स्थूलङ्ङळिल् वच्चतिस्थूलनुं भवान्;
नूनमणुविङ्कल् निन्नणीयान् भवान् मानमिल्लात महत्तत्ववुं
भवान्; सर्व लोकानां पितावायतुं भवान् सर्वलोकेश ! मातावायतुं
भवान्; सर्वदा सर्वधातावायतुं भवान् दर्वीकरेन्द्र शयन दयानिधे!
आदि मद्ध्यान्त विहीनन् परिपूर्ण्णनाधारभूतन् प्रपञ्चत्तिनी-

अन्दर-बाहर सदा व्याप्त हैं। अज्ञानियों के लिए निर्मल परब्रह्म उन्हीं की माया से आवृत दिखाई देते हैं। जब तक यह भ्रम बना रहता है तब तक वे पाप-पुण्यों से आबद्ध हो संसार में जन्म-मृत्यु के वश में पड़ते जाते हैं तथा जगत को सत्य मानने लगते ही हैं। जब तक अद्वय एवं सनातन ब्रह्म को पहचान नहीं पाते तब तक पुत्र, पत्नी आदि विषयों में आसक्त हो भोग-विलास में डूबे रहते हैं। ८० यह सब आत्मा में आत्मा को न पहचानने का फल है। आत्मा (परमात्मा) को हृदय में ही पहचान लेना चाहिए। अज्ञानियों के लिए सारे विषयादि भोग अन्त में आकर दुखदायक लगते हैं। अविवेकी लोगों के लिए आदिकाल में ये सुखप्रद लगते हैं। हे आद्यन्तहीन भगवान ! विचार करके देखें तो इन्द्र, अग्नि, यम, निऋति, वरुण, वायु, चन्द्र, रुद्र, ब्रह्मा, अनन्त आदि सब देवता तो आप ही हैं। आप ही तो कालस्वरूप हैं। स्थूल से स्थूल पदार्थ तो आप हैं और निश्चय ही अणु से भी सूक्ष्म जो है वह भी आप हैं। परिमाण - रहित भी आप ही हैं। हे सर्वलोकेश ! समस्त लोकों के माता-पिता आप हैं। आप ही तो सर्वभूतों के सृष्टि-कर्ता हैं। हे दयानिधि ! आप तो अनन्तनाग की शय्या पर शयन करने वाले (साक्षात् महाविष्णु) हैं। आदि, मध्य और अन्त-रहित आप

श्वरन् । ९० अच्युतनव्ययनव्यक्तनद्वयन् सच्चित्पुरुषन् पुरुषोत्तमन् परन् । निश्चलन् निर्म्ममन् निष्कळन् निर्ग्गुणन् निश्चयिच्चार्क्कुमरिञ्ञु कूटातवन्; निर्विकारन् निराकारन् निरीश्वरन् निर्विकल्पन् निरुपाश्रयन् शाश्वतन्; षड्भावहीनन् प्रकृति परन् पुमान् सत्भावयुक्तन् सनातनन् सर्वगन् । माया मनुष्यन् मनोहरन् माधवन् मायाविहीनन् मधुकैटभान्तकन्; ञानिह त्वत्पाद भक्ति निःश्रेणियेंस्सानन्दमाशु संप्राप्य रघुपते ! ज्ञानयोगाख्य सौधं करेऱीटुवान् मानसे कामिच्चु वन्नेन् जगत्पते ! सीतापते ! राम ! कारुणिकोत्तम ! यातुधानान्तक रावणारे! हरे! पादांबुजं नमस्ते भवसागर भीतनामेन्नें रक्षिच्चु कोळ्ळेणमे । भक्ति परवशनाय् स्तुतिच्चीटिन भक्तनेक्कण्टु तेळिञ्ञु रघूत्तमन् । १०० भक्तप्रियन् परमानन्दमुळ्क्कोण्टु मुग्द्ध स्मित पूर्वमेवमरुळ् चेय्तु— इष्टमायुळ्ळ वरत्तें वरिक्क सन्तुष्टनां ञान् वरदानैक तत्परन् । ओट्टुमे तापमोरुत्तनेन्नेक्कण्टु किट्टियाल्

परिपूर्ण तथा प्रपंच के लिए आधारभूत ईश्वर हैं । ९० आप अच्युत, अव्यय, अव्यक्त, अद्वय, सत् चित् पुरुष, पुरुषोत्तम परमात्मा, निश्चल, निर्मम, निष्फल, निर्गुण और किसी भी व्यक्ति के लिए निश्चयपूर्वक अविदित हैं । आप निर्विकार, निराकार, निरीश्वर, निर्विकल्प (परिणाम-रहित), निरुपाश्रय (आलंबरहित), शाश्वत. षड्भावहीन (जन्म, मृत्यु, बाल्य, कौमार, यौवन और वार्द्धक्यरहित), प्रकृति से अनासक्त, सद्भाव-युक्त, सनातन, सवेग (सब कहीं गमन करने वाले), माया-मनुष्य, मनोहर, माधव, मायारहित, मधु एवं कैटभ के अन्तक, भक्त लोगों के लिए भक्ति-रूपी सीढ़ी के द्वारा प्राप्य हे रघुपति ! ज्ञानयोग-रूपी सौध पर चढ़ने की कामना लेकर मैं आपके निकट आया हूँ । हे जगन्नाथ !, हे सीतापति ! हे राम ! हे कारुण्यमूर्त्ति ! यातुधानान्तक (राक्षसों का अन्त करने वाले) ! हे रावणारि ! हे हरि ! आपके चरण-सरोजों पर प्रणाम करता हूँ । भवसागर से संत्रस्त मेरी रक्षा करें ।" भक्ति के वशीभूत हो स्तुति करने वाले भक्त (विभीषण) को देखकर राम प्रसन्न हो उठे । १०० भक्तों पर वात्सल्य दिखाने वाले तथा भक्तों के लिए प्रिय (राम) अत्यधिक आनन्दित हो मंदहास-पूर्वक इस प्रकार कहने लगे—"तुम मन-पसंद वर माँगो, मैं (तुम्हें) वर देने के लिए तत्पर हूँ । तुम यह जान लो कि जो कोई भी मेरा दर्शन कर पाता है, उसे फिर कोई सन्ताप नहीं रह पाता ।" राम का वचनामृत सुनकर

प्पिन्नेयुण्टाकयिल्लोर्क्क ती। राम वाक्यामृतं केट्टु विभीषण-नामोदमुळ्क्कोण्टुणर्त्तिच्चरुळिनान्— धन्यनायेन् कृतकृत्य-नायेनहं धन्याकृते कृत कामनायेनहं। त्वत्पाद पत्मावलोकनं कोण्टु ञानिप्पोळ् विमुक्तनायेनिल्ल संशयं। मत्समनायोरु धन्यनिल्लूळियिल् मत्समनायोरु शुद्धनुमिल्लहो! मत्समनाय मट्टोरुवनुमिल्लिह त्वत्स्वरूपं मम काणाय कारणाल्। कर्म्म-बन्धङ्ङळ् नशिप्पतिनायिनि निर्म्मलमां भवल् ज्ञानवुं भक्तियुं त्वद्ध्यान सूक्ष्मवुं देहिमे राघव! चित्ते विषय सुखाश-यिल्लेतुमे। ११० त्वत्पाद पङ्कज भक्तिरे वास्तुमे नित्यमिळक्क-मोळिञ्ञु कृपानिधे! इत्थमाकर्ण्य सम्प्रीतनां राघवन् नक्त-ञ्चराधिपन् तन्नोटरुळ् चेय्तु— नित्यं विषय विरक्तराय् शान्तराय् भक्तिवळर्न्नेति शुद्ध मतिकळाय् ज्ञानिकळायुळ्ळ योगिकळ् मानसे ञानिरिप्पू मम सीतयुमाय् मुदा। आक यालेन्नेयुं ध्यानिच्चु सन्ततं वाळ्क तीयेन्नाल् तिनक्कु मोक्षं वरुं; अत्रयुमल्ल तिन्नाल् कृतमायोरु भक्तिकर स्तोत्रमत्यन्त शुद्धनाय् नित्यवुं चोल्कयुं केळ्क्कयुं चेय्किलुं मुक्ति वरुमतिनिल्लोरु संशयं।

सानन्द विभीषण ने (भगवान को) समझाते हुए कहा—"मैं धन्य और कृतकृत्य हुआ हूँ। मेरी कामनाएँ आज पूर्ण हुईं। आपके चरण-कमलों के दर्शन से मैं (संसार से) विमुक्त हो गया हूँ, इसमें कोई सन्देह नहीं रहा। आज इस पृथ्वी पर मेरे समान कोई धन्य नहीं, कोई परिशुद्ध नहीं है। आपका स्वरूप देख लेने का सौभाग्य पाने से आज यहाँ मेरे समान (पुण्यात्मा) कोई नहीं है। हे राम! अब कर्मबन्धन से छुटकारा पाने के लिए आपके ज्ञान, भक्ति तथा सूक्ष्म ध्यान का मुझे वरदान दीजिए। अब मेरे मन में विषय-सुख की इच्छा नहीं रह गयी। ११० हे कृपानिधि! आपके चरण-कमलों के प्रति स्थायी एवं अचंचल भक्ति मेरे मन में उत्पन्न हो।" यह सुनकर सन्तुष्ट हो राक्षस-राज (विभीषण) से राम ने कहा—"नित्य की विषय-वासनाओं से विरक्त हो, शान्त एवं भक्ति से ओत-प्रोत शुद्धमति योगनिष्ठ ज्ञानियों के मानस में मैं अपनी (पत्नी) सीता-सहित निवास किया करता हूँ। इसलिए निरन्तर मेरे ध्यान में निरत रहो ताकि तुम्हें मुक्ति मिलेगी। यही नहीं, तुमने जो भक्तिपूर्वक स्तुति की, उसको अत्यन्त शुद्ध एवं पवित्र भाव से नित्य गानेवाले, सुननेवाले भी मुक्ति प्राप्त करेंगे; इस बात में कोई सन्देह नहीं रह गया है।" (विभीषण से) यह कहने के

इत्थमरुळ् चेय्तु लक्ष्मणन् तन्नोटु भक्त प्रियनरुळ् चेय्तितु सादरं—
अन्नेक्कनिवोटु कण्टतिन्टे फलमिन्नु तन्ने वरुत्तेणमतिन्नु नी
लङ्काधिपनिवनेत्तभिषेकवु शङ्का विहीनमन्पोटु चेय्तीटुक । १२०
सागर वारियुं कोण्टु वन्तीटुक शाखामृगाधिपन्मारुमाय् सत्वरं ।
अर्क्कचन्द्रन्मारुमाकाश भूमियुं मल्क्कथयुं जगत्तिङ्कलुळ्ळन्निवन्
वाळ्कलङ्का राज्यमेवं ममाज्ञया भागवतोत्तमनाय विभीषणन् ।
पङ्कजनेत्र वाक्यं केट्टु लक्ष्मणन् लङ्कापुराधिपत्यार्त्थमभिषेकं
अन्पोटु वाद्य घोषेण चेय्तीटिनान् वम्परां वानराधीश्वरन्मारुमाय् ।
साधुवादेन मुळङ्ङि जगत्त्रयं साधुजनङ्ङळुं प्रीति पूण्टीटिनार् ।
आदितेयोत्तमन्मार् पुष्पवृष्टियु माधिवेरिट्टु चेय्तीटिनारादराल् ।
अप्सरःस्त्रीकळुं नृत्तगीतङ्ङळालप्पुरुषोत्तमनेब् भजिच्चीटिनार् ।
गन्धर्व किन्नर किं पुरुषन्मारु मन्तरम्मुदा सिद्ध विद्याधरादियुं
श्रीरामचन्द्रने वाळ्त्ति स्तुतिच्चितु भेरी निनादं मुळक्किना-
रुम्परुं । १३० पुण्य जनेश्वरनाय विभीषणन् तन्नेप्पुणर्न्नु सुग्रीवनुं
चोल्लिनान्— पारेळु रण्टिनुं नाथनाय् वाळुमी श्रीरामकिङ्क-

उपरांत भक्तप्रिय (राम) सानंद लक्ष्मण से बोले—"कृपापूर्वक मेरा दर्शन करने का फल आज ही (विभीषण को) प्राप्त हो, उसके लिए तुम आज ही निस्संकोच भाव से (इनका) लंकेश्वर के रूप में अभिषेक करा दो। १२० तुम तुरन्त ही शाखामृगाधिपों (वानर वीरों) को साथ ले जाकर सागर-जल ले आओ। जब तक सूर्य-चन्द्र, आकाश और भूमि तथा जगत में मेरी कथा रहेगी, तब तक मेरी आज्ञा से भागवतोत्तम विभीषण लंका राज्य में मूर्द्धाभिषिक्त रहें।" पंकजनेत्र (राम का वचन सुनकर लक्ष्मण ने श्रेष्ठ वानरवीरों को साथ लेकर बड़े वाद्य-घोषों के साथ लंकापुर के अधिपति के रूप में विभीषण का अभिषेक कर दिया। जगतत्रय साधुवाद से गूँज उठे, साधुजन प्रसन्न हुए तथा देवता लोग अपना दुख भूलकर पुष्प-वृष्टि करने लगे। अप्सराएँ नृत्य-गीतों सहित पुरुषोत्तम (राम) का भजन-कीर्तन करने लगीं। गन्धर्व, किन्नर तथा किंपुरुषों ने तथा सिद्धों-विद्याधरों ने मन ही मन सन्तुष्ट हो श्रीरामचन्द्र जी की स्तुति एवं गुणगान किये, तो देवों ने भेरी-निनाद मुखरित किया। १३० पुण्यात्माओं में श्रेष्ठ विभीषण का गाढ़ाश्लेष करते हुए सुग्रीव बोले—"चौदहों भुवनों के स्वामी राम के सेवकों में आप प्रमुख हैं। रावण-वध के लिए आप शक्तिभर (हमारी) सहायता करें। हम आगे बढ़कर सारा काम करेंगे। भगवद्-सेवा से भगवद्-कृपा प्राप्त

रन्मारिल् मुख्यन् भवान् रावण निग्रहत्तिन्नु सहायवुमावोळ-
माशु चेय्येणं भवानिनि। केवलं ञङ्ङळुं मुन् नटक्कुन्नुण्टु सेवया
सिद्धिक्कुमेट्मनुग्रहं। सुग्रीव वाक्यमाकर्ण्य विभीषणनग्रे
चिरिच्चवनोटु चॊल्लीटिनान्— साक्षाल् जगन्मयनामखिलेश्वरन्
साक्षि भूतन् सकलत्तिनुमाकयाल् ऎन्तु सहायेन कार्य्यमविटेय्क्कु?
बन्धु शत्रुक्कळॆन्नुळ्ळतुमिल्ल केळ्। गूढस्थनानन्द पूर्णने-
कात्मकन् कूटस्थनाश्रयं मट्रारुमिल्लॆटो! मूढत्वमत्रे नमुक्कु
तोन्नुन्नतु गूढत्रिगुण भावेन माया बलाल्। तद्वशन्मारोक्के
नामॆन्नरिञ्ञु कॊण्टद्वय भावेन सेविच्चु कॊळ्कनां। १४०
नक्तञ्चर प्रवरोक्तिकळ् केट्टोरु भक्तनां भानुजनुं तॆळिञ्ञी-
टिनान्। १४१

दूतनाय शुकन्द्रे बन्धनम्

रक्षोवरनाय रावणन् चॊल्कयाल् तल्क्षणे वन्नु शुकनां
निशाचरन् पुष्करे निन्नु विळिच्चु चॊल्लीटिनान् मर्क्कट राजनां
सुग्रीवनोटिदं— राक्षसाधीश्वरन् वाक्कुकळ् केळ्क्क नी भास्कर
सूनो! पराक्रम वारिधे! भानु तनयनां भागधेयांबुधे!

होगी।" सुग्रीव का कथन सुनकर विभीषण हँस पड़े और वे सुग्रीव से
कहने लगे—"साक्षात् जगन्मय अखिलेश्वर सबके लिए साक्षी हैं। ऐसी
हालत में उन्हें किस बात की सहायता चाहिए? उनका न कोई शत्रु
है न कोई मित्र। गूढस्थ (सब में अगोचर हो रहनेवाले), पूर्णानन्द
स्वरूप, अद्वय परमात्मा जो सबके परे हैं, उनके लिए किसका आश्रय
चाहिए? त्रिगुणात्मिका माया शक्ति के वशीभूत हो हम उन्हें मनुष्य
मान बैठते हैं। यह हमारे अज्ञान का परिणाम है। हम उनके वशवर्ती
हैं। उनकी अद्वय भाव से सेवा करनी चाहिए। १४० राक्षसप्रवर
का कथन सुनकर भानुतनय (सुग्रीव) प्रसन्न हुए। १४१

दूत शुक का बन्धन

राक्षसराज रावण की आज्ञा से उस समय एक निशाचर शुक
आकाश मार्ग में आ-पहुँचकर वानरराज सुग्रीव को सम्बोधन करके कहने
लगा—"हे अत्यन्त पराक्रमी भास्करपुत्र (सूर्यपुत्र)! राक्षसराज
(रावण) की आप यह आज्ञा सुनिये। (राक्षसराज ने यह सन्देश भेजा
है कि) हे वानरराज! आप भानुतनय (सूर्यपुत्र) हैं, भाग्यनिधि हैं।

वानरराज महाकुल संभव ! आदितेयेन्द्र सुतानुजनाकयाल्
भ्रातृ समानन् भवान् मम निर्ण्णयं । ञिन्नोटु वैरमेनिक्केतुमिल्ल
मट्टेन्निल् विरोधं ञिनक्कुमिल्लेतुमे । राजकुमारनां रामभार्य्या-
महं व्याजेन कोण्टु पोन्नेनतिनेन्तु ते ? मर्क्कट सेनयोटुमति
विद्रुतं किष्किन्धयां नगरिय्क्कु पोय्क्कोळ्क नी । देवादि
कळालुमप्राप्यमायोन्नु केवलमेन्नुटे लङ्कापुरमेटो ! अल्प
सारन्मार् मनुष्यरुमेत्रयुं दुर्ब्बलन्माराय वानरयूथवुं १० एन्तोन्नु
काट्टुन्नतेन्नोटिविटेवन्नन्धकारं ञिनच्चीटाय्क नी वृथा ।
इत्थं शुकोक्तिकळ् केट्टु कपि कुलमुत्थाय चाटिप्पिटिच्चारतिद्रुतं ।
मुष्टि प्रहारङ्ङळेट्टु शुकनति क्लिष्टनायेटं करञ्ञु तुटङ्ङिनान्—
राम ! राम ! प्रभो ! कारुण्यवारिधे ! राम ! नाथ ! परि-
त्राहि रघुपते ! दूतरेक्कोल्लुमारिल्ल पण्टारुमे नाथ !
धर्म्मत्ते रक्षिच्चु कोळ्ळेणमे । वानरन्मारे निवारणं चेय्ताशु
मानव वीर ! हतोहं प्रपाहिमां । इत्थं शुक परिदेवनं केट्टोरु
भक्त प्रियन् वरदन् पुरुषोत्तमन् वानरन्मारे विलक्किनानन्तर-
मानन्द मुळ्क्कोण्टुयर्न्नु शुकन् तदा चोल्लिनान् सुग्रीवनोटु

आपका जन्म बड़े उच्च कुल में हुआ है। आदितेयेन्द्र (देवराज इन्द्र) के पुत्र (बालि) के अनुज के नाते आप मेरे लिए भी भ्राता तुल्य हैं। आपसे मेरी कोई शत्रुता नहीं है और आपका भी मुझसे अन्य कोई (रामपत्नी के अपहरण से उत्पन्न विरोध के अतिरिक्त) विरोध नहीं है। कोसलदेश के राजकुमार राम की पत्नी के मेरे द्वारा अपहरण से आपके वैमनस्य के लिए क्या कारण है ? आप अपनी वानरसेना लेकर किष्किन्धा नगरी वापस चले जाएँ। आप यह ध्यान रखें कि मेरी एक लंकापुरी ही देवों तक के लिए अगम्य एवं अप्राप्य है। दुर्बल मनुष्य तथा अत्यन्त बलहीन वानरसमूह—१० —यहाँ आकर मेरा क्या बिगाड़ सकेंगे। आप व्यर्थ मूर्खता मत दिखाइये।" शुक की यह वाणी सुनकर सारे वानर उठ दौड़ पड़े और उसे चारों ओर से घेर कर पकड़ लिया। उनके मुष्टि-प्रहार सह-सहकर अत्यन्त आतुर हो शुक विलाप करता हुआ चिल्लाने लगा—"हे राम ! हे राम ! हे प्रभु ! हे करुणावारिधि ! हे राम ! हे नाथ ! हे रघुपति ! मेरी रक्षा करें। अब तक किसी ने दूत को नहीं मारा है। हे स्वामी ! इन वानरों को हटा देकर आप धर्म की रक्षा करें। हे मानववीर ! मैं मर गया ! आप मेरी रक्षा करें।" शुक का यह विलाप सुनकर भक्तप्रिय वरदाता पुरुषोत्तम (राम)

आनॆन्तोन्नु चॊल्लेण्टतङ्ङु दशग्रीवनोटाशु चॊल्लीटुकॆन्नतु केट्टु सुग्रीवनुं चॊल्लिनानाशु शुकनोटु सत्वरं— २० चॊल्लुळ्ळ बालियॆप्पोलॆ भवानॆयुं कॊल्लणमाशु सपुत्र बलान्वितं। श्रीराम पत्नियॆक्कट्टु कॊण्टीटिन चोरनेयुं कॊन्नु जानकि तन्नॆयुं कॊण्टु पोकेणमॆनिक्कु किष्किन्धय्क्कु रण्टिल्लतिनॆन्नु चॆन्नु चॊल्लीटु नी। अक्कात्मजोक्तिकळ् केट्टु तॆळिञ्ञळवक्कान्वियोत्भवन् तानुमरुळ् चॆय्तु— वानरन्मारॆ! शुकनॆ बन्धिच्चु कॊण्टूनमॊळिञ्ञत्र कात्तु कॊण्टीटुविन्। आनुरचॆय्तेययय्कावितॆन्नतुमानन्दमोटरुळ् चॆय्तु रघुवरन्। वानरन्मारुं पिटिच्चु कॆट्टिक्कॊण्टु दीनत कैविट्टु कात्तु कॊण्टीटिनार्। शार्दूल विक्रमं पूण्ट कपि बलं शार्दूलनाय निशाचरन् वन्नुक— ण्टार्त्तनाय् रावणनोटु चॊल्लीटिनान् वार्त्तकळुळ्ळ वण्णमतु केट्टीरु रात्रिञ्चरेश्वरनाकिय रावणनार्त्ति पूण्टेट्वुं दीर्घ चिन्तान्वितं ३० चीर्त्त खेदत्तोटु दीर्घमायेट्वुं वीर्त्तुपायङ्ङळ् काणाञ्ञिरुन्नीटिनान्। ३१

ने तुरन्त वानरों को मना किया। शुक सानन्द भूमि से उठा और उसने सुग्रीव से पूछा कि मैं वहाँ जाकर दशग्रीव से क्या कहूँ? यह सुनकर तुरन्त सुग्रीव शुक से बोले—२० "तुम जाकर बोलो कि बालि के समान तुम्हें (रावण को) भी पुत्रों तथा सेना सहित मार डालेंगे। श्रीराम जी की धर्मपत्नी को चुरा ले जानेवाले चोर को मारकर तथा जानकी को छुड़ाकर मुझे किष्किन्धा को जाना है। इसमें दो पक्ष नहीं हो सकते। यह बात तुम जाकर बोलो।" अर्कात्मज (सुग्रीव) का कथन सुनकर हर्षित हो अर्ककुलोत्पन्न राम ने कहा—"हे वानरो! शुक को गिरफ़्तार करके उसकी निगरानी करते रहो। मेरी आज्ञा होने तक उसे जाने मत दो।" राम की आज्ञा पाकर वानरों ने उसे कैदी बनाया तथा सावधान हो उसे अपनी निगरानी में रखा। इस समय शार्दूल नामक राक्षस ने आकाश-मार्ग से आकर शार्दूल-विक्रम से युक्त कपि-बल (वानर-सेना) को देखकर वापस आ आर्तभाव से रावण को सारा हाल कह सुनाया। यह सुनकर रात्रिचरेश्वर रावण आर्तभाव को धारण कर चिन्ता-निमग्न हो गया। ३० अत्यधिक खिन्न हो दीर्घश्वास छोड़ता हुआ (बचने का) कोई उपाय न पाकर चिन्तित बैठ गया। ३१

सेतुबन्धनम

तल्क्कालमक्कं कुलोत्भवन् राघवनक्कत्मिजादि कपि वरन्मारोटुं रक्षोवरनां विभीषणन् तन्नोटुं लक्ष्मणनोटुं विचारं तुटङ्ङिनान्। ऐन्तुपायं समुद्रं कटप्पानेन्नु चिन्तिच्चु कल्पिक्क त्तिङ्ङळेल्लारुमाय्। अन्नरुळ् चेय्ततु केट्टवरेवरुमोन्निच्चु कूटि निरूपिच्चु चोल्लिनार्— देव प्रवरनायोरु वरुणनेस्सेविक्क वेणमेन्नाल् वळियुं तरुं। अन्नतु केट्टरुळ् चेय्तु रघुवरन् नन्नितु तोन्नियतङ्ङिन्ने तन्नेयें— न्नर्ण्णव तीरे किळक्कु नोक्कि त्तोळुतर्ण्णोज लोचननाकिय राघवन्; दर्भ विरिच्चु नमस्करिच्ची- टिनानत्भुतविक्रमन् भक्ति पूण्टेत्रयुं। मून्नहोरात्रमुपासिच्चि- तिङ्ङने मून्नु लोकत्तिनुं नाथनामीश्वरन्। एतुमिळकील वारिधियुमति क्रोधेन रक्तान्त नेत्रनां नाथनुं १० कोण्टुवा चाप बाणङ्ङळ् लक्ष्मणा! कण्टुकोण्टालुं मम शर विक्रमं। इन्नु पेरुवळि मीळुन्नतिल्लेङ्किलर्ण्णवं भस्ममाक्किच्चमच्चीटुवन्। मुन्नं मदीय पूर्वन्मार् वळर्त्ततुमिन्नु आनिल्लातेयाक्कुवन् निर्ण्णयं।

सेतु-बन्धन

तुरन्त ही अर्ककुलोत्पन्न (सूर्यवंश में जात) राम ने अर्कात्मज (सूर्यपुत्र सुग्रीव) आदि कपिवरों, रक्षोवर विभीषण तथा लक्ष्मण से मंत्रणा की। (राम ने आग्रह किया कि) तुम लोग सोच-विचार करके समुद्र पार करने का उपाय सुझा दो। (राम का आग्रह) सुनकर उन सबने परस्पर विचार-विनिमय के उपरान्त (राम को) बताया—"देवप्रवर वरुण की स्तुति की जाए। वे चाहें तो रास्ता देंगे।" यह सुनकर राम ने कहा—"आप लोगों ने ठीक ही बताया। ऐसा ही होगा।" यह कहकर अर्णव (समुद्र-) तीर पर खड़े होकर अर्णोजनेत्र (कमल-लोचन) राम ने पूर्व दिशा की ओर मुँह किये हाथ जोड़ दिये। दर्भ बिछाकर, अद्भुत पराक्रमशाली (राम) ने अत्यन्त भक्तिपूर्वक (वरुण की) उपासना की, फिर भी वारिधि (समुद्र) बिलकुल विचलित नहीं हुआ। इससे क्रुद्ध हो नाथ (राम) के नेत्र रक्तवर्ण के हुए। १० (वे बोले) "हे लक्ष्मण! धनुष-बाण ला दो, आज मेरे शरों का विक्रम देख लो। आज रास्ता न देने पर मैं अर्णव (सागर) को भस्मीभूत एवं धूलि-धूसरित कर दूंगा। पहले मेरे पूर्वजों ने इसे बड़ा किया, फिर भी आज इस धिक्कार के दंड स्वरूप मैं निश्चय ही इसे समाप्त करूँगा।

सागरमॆन्नुळ्ळ पेरुं मऱन्नुळ्ळिलाकुलमॆन्नियॆ वाळुकिलॆन्नुमॆ नष्टमाक्कीटुवन् वेळ्ळं कपिकुलं पुष्टमोदं पाद चारेण पोकणं। ऎन्नरुळ् चॆय्तु विल्लुं कुळियॆक्कुलच्चर्णवत्तोटरुळ् चॆय्तु, रघुवरन्— सर्वभूतङ्ङळुं कण्टु कॊळ्ळॆणमॆ दुर्वारमाय शिलीमुख विक्रमं। भस्ममाक्कीटुवन् वारानिधियॆ ञान् विस्मयमॆल्लावरुं कण्टु निल्क्कणं। इत्थं रघुवरन् वाक्कु केट्टन्नेरं पृथ्वीरुहङ्ङळुं कानन जालवुं पृथ्वियुं कूटॆ विऱच्चु चमञ्ञतु मित्रनुं मङ्ङि निऱञ्ञु तिमिरवुं; २० अब्धियुं क्षोभिच्चु मिट्टाल्क्कविञ्ञु वन्नुत्तुंगमाय तरंगावलियोटुं; त्रस्तङ्ङळाय् परितप्तङ्ङळाय् वन्नितत्युग्र-नक्रतिमिझषाद्यङ्ङळुं। अप्पोळ् भयप्पॆट्टु दिव्य रूपत्तोटुमप्पति दिव्याभरण सम्पन्ननाय् पत्तु दिक्कुं निऱञ्ञोरु कान्त्या निज हस्तङ्ङळिल् परिगृह्यरत्नङ्ङळुं वित्रस्तनाय् रामपादान्तिके वच्चु सत्रपं दण्डनमस्कारवुं चॆय्तु। रक्तान्त लोचननाकिय रामनॆ भक्त्या वणङ्ङिस्तुतिच्चान् पलतरं— त्राहिमां त्राहिमां त्र्यैलोक्य पालक! त्राहिमां त्राहिमां विष्णो! जगल्पते! त्राहिमां त्राहिमां पौलस्त्य नाशना! त्राहिमां त्राहिमां राम!

लगता है कि वरुण ने 'सागर' नाम पड़ने का कारण ही विस्मृत कर लिया और वह बिना भय के बैठ गया। आज मैं इसका जल सोख दूंगा ताकि वानर सानन्द पैदल ही चल सकें।" इतना कहने के उपरांत बाण का सीधा संधान करके राम ने सागर से कहा—"आज समस्त चराचर मेरे बाणों का पराक्रम देख लें। सब विस्मयपूर्वक देखते रहें, आज मैं सागर को भस्मीभूत कर छोड़ूंगा।" राम की (यह क्रोधपूर्ण) उक्ति सुनकर पृथ्वीरुहों (वृक्षों), वनों सहित पृथ्वी कंपित हो उठी, मित्र (आदित्य) का प्रकाश मन्द पड़ गया और सब कहीं अंधेरा छा गया। २० समुद्र क्षुब्ध हो उठा, वह बौखला उठा और उत्ताल तरंगों द्वारा राम के चरण पकड़े। भयंकर नक्र (मगर), तिमिंगल मत्स्य जैसे जल-जन्तु संत्रस्त एवं परितप्त हुए। तब भयभीत हो वरुण दिव्य वस्त्रों से समलंकृत दिव्य रूप धारण कर, दसों दिशाओं को दीप्त करनेवाली कांति से समन्वित हो तथा अपने हाथों में दिव्यरत्न लिये प्रकट हुए और भयातुर हो (उन्होंने) राम के चरणों पर रत्नों को समर्पित किया तथा विनीत भाव से दण्डवत् नमस्कार किया। (उन्होंने) रक्तनेत्र राम की भक्तिपूर्वक विविध प्रकार से स्तुति की—"त्रैलोक्यपालक! हे राम! मेरी रक्षा करें, मेरी रक्षा करें। हे जगन्नाथ! हे विष्णु! मेरी रक्षा करें, मेरी

रमापते ! आदिकाले तव माया गुणवशाल् भूतङ्ङळेब्भवान् सृष्टिच्चतु त्तेरं स्थूलङ्ङळायुळ्ळ पञ्चभूतङ्ङळेक्काल स्वरूपनाकुं त्तिन्तिरुवटि ३० सृष्टिच्चितेटं जडस्वभावङ्ङळाय् कष्टमिताक्कु त्तीक्काव् तव मतं ? पिन्ने विशेषिच्चतिलुं जडत्वमायत्तन्ने भवान् पुनरेन्ने निर्म्मिच्चतुं । मुन्ने भवन्नियोग स्वभावत्तेयिन्नन्यथा कर्त्तुमारुळ्ळतु शक्तराय् ? तामसोद्भूत-ङ्ङळायुळ्ळ भूतङ्ङळ् तामस शीलमायत्तन्ने वरू विभो ! तामसमल्लो जडत्वमाकुन्नतुं काम लोभादिकळुं तामस गुणं । माया रहितनाय् निर्ग्गुणनाय त्ती मायागुणङ्ङळेयंगीकरिच्चप्पोळ् वैराजनामवानाय्च्चमञ्ञू भवान् कारण पूरुषनाय् गुणात्मावुमाय् । अप्पोळ् विराट्टिङ्कल् त्तिन्नु गुणङ्ङळालुत्पन्नरायितु देवादिकळ् तदा । तत्र सत्वत्तिङ्कल् त्तिन्नल्लो देवकळ् तद्रजोभूतङ्ङळाय् प्रजेशादिकळ् । तत्तमोभूतनाय् भूतपति तानुमुत्तम पुरुष राम ! दयानिधे ! ४० माययाछन्ननाय् लीलामनुष्यनाय् माया-गुणङ्ङळे कैक्कोण्टनारतं निर्ग्गुणनाय् सदा चिद् घननायोरु निष्कळनाय् निराकारनायिङ्ङने मोक्षदनां त्तिन्तिरुवटि तन्नेयुं

रक्षा करें। हे पौलस्त्यनाशन (रावणान्तक) ! मेरी रक्षा करें, मेरी रक्षा करें। हे राम ! हे रमापति ! मेरी रक्षा करें, मेरी रक्षा करें। आदिकाल में निर्विकार, निर्गुण तथा सत्तामात्र आपने मायात्मक गुणों को अपनाकर भूतों की सृष्टि की। कालस्वरूप आपने स्थूल पंचभूतों को—३० —जड़ स्वभाव से युक्त बनाया। (उनमें भी विशेषकर मुझे जड़ (ल) अर्थात् जल रूप में ही कल्पित किया। आपके इस संकल्प को कौन अन्यथा कर सकता है ? तामसगुण जड़ प्रकृति का लक्षण है। हे प्रभू ! तामसगुण से उद्भूत पदार्थ तामसवृत्ति से संयुत ही रहेंगे। काम, लोभ आदि विकार तामसगुण ही हैं। मायारहित निगुण आपने जब मायागुणों को अपनाया तब (आप) विराट्स्वरूप बन गये। इस प्रकार गुणात्मा बनकर आप (विश्व के) कारणपुरुष बने। तब उन विराट्स्वरूप के गुणों से देवताओं की सृष्टि हुई। हे राम ! हे पुरुषोत्तम ! कहा जाता है कि सत्वगुण से देव, रजोगुण से ब्रह्मा आदि तथा तामसगुण से भूतपति (शिव) उत्पन्न हुए। ४० माया के वशीभूत हो तथा मायात्मक गुणों को अपनाकर मनुष्य-लीलाएं करनेवाले निर्गुण, सदा चिदात्मा, निष्कल, निराकार मोक्षप्रद आपको मैं अज्ञानी मूर्ख कैसे पहचान सकता हूँ ? स्वामी का दिया हुआ दण्ड मूर्ख लोगों को सन्मार्ग

मूरखनां ञानेङ्ङनेयरिञ्ञीटुन्नु ! मूर्ख जनङ्ङळ्क्कु सन्मार्गं प्रापकमोर्क्किल् प्रभूणांहितं दण्डमायतुं दुष्ट पशूनां यथा लकुटं तथा दुष्टानुशासनं धर्म्मं भवादृशां । श्रीरामदेवं परं भक्तवत्सलं कारणपूरुषं कारुण्य सागरं नारायणं शरण्यं पुरुषोत्तमं श्रीराम-मीशं शरणं गतोस्मि ञान् । रामचन्द्राभयं देहिमे सन्ततं राम ! लङ्कामार्ग्गमाशु ददामि ते । इत्थं वणङ्ङि स्तुतिच्च वरुण-नोटुत्तम पूरुषन् तानुमरुळ् चेय्तु— बाणं मदीयममोघमतिन्निह वेणमोरु लक्ष्यमेन्ततिनुळ्ळतुं; ५० वाट्टमिल्लातोरु लक्ष्यमतिन्नु नी काट्टित्तरेणमेनिक्कु वाराम्निधे ! अर्ण्णवनाथनुं चोल्लिना-नन्नेरमन्यून कारुण्यसिन्धो ! जगत्पते ! उत्तरस्यां दिशिमत्तीर भूतले चित्रद्रुम कुल्य देशं सुभिक्षदं; तत्र पापात्माक्कळुण्टु निशाचररेत्रयुं पारमुपद्रविच्चीटुवोर् । वेगालविटेक्कयक्क बाणं तव लोकोपकारकमतु निर्ण्णयं । रामनुं बाणमयच्चानतु नेरमामयं तेटीटुमाभीर मण्डलं ॲल्लामोटुक्कि वेगेन बाणं पोन्नु मेल्लवे तूणीरवुं पुक्कितादराल् । आभीर मण्डलमोक्के

की ओर चलने में सहायक होता है। दुष्ट एवं क्रूर जानवरों के गले में लकुट (लकड़ी) बाँधकर जैसे उन्हें पालतू बनाया जाता है, उसी प्रकार दुष्टजनों को दण्डित कर उन्हें सन्मार्ग पर ले चलने का कर्तव्य आप जैसे स्वामियों का है। हे श्रीरामदेव ! हे परमात्मा ! हे भक्तवत्सल, (विश्व के) कारण पुरुष, करुणानिधि, हे नारायण, हे शरण में रखने वाले ! हे पुरुषोत्तम ! हे भगवान राम ! मैं आपकी शरण में आ गया हूँ। हे राम ! आप मुझे सदा के लिए शरण प्रदान करें। मैं क्षण भर में आपको लंका के लिए मार्ग दिखा देता हूँ।" इस प्रकार नम्रता-पूर्वक प्रार्थना एवं स्तुति करनेवाले वरुण से उत्तमपुरुष (राम) ने कहा—"मेरा बाण अमोघ है, वह निष्फल नहीं जा सकता। उसके लिए कोई लक्ष्य होना ही चाहिए। ५० हे समुद्रपति ! तुम्हें कोई अचूक लक्ष्य अवश्य दिखा देना ही होगा।" यह सुनकर समुद्र के स्वामी ने कहा—"हे करुणासागर ! हे जगत् के स्वामी ! उत्तरदिशा में मेरे ही तीर पर सुख-समृद्धि से सम्पन्न चित्रद्रुम कुल्य नाम का प्रदेश है, जहाँ लोगों को सब प्रकार से सतानेवाले पापी राक्षस लोग रहा करते हैं। आप तुरन्त ही उस तरफ अपना बाण भेजें ताकि लोकोपकार भी होगा।" तब राम ने उस दिशा की ओर अपना बाण चलाया और आभीर-मण्डल को समाप्त कर जल्दी ही बाण वापस आकर धीरे से तूणीर के अन्दर

नशिक्कयाल् शोभनमाय् वन्नु तल् प्रदेशं तदा । तल्कूल देशवु मन्नु तोट्टेवयुं मुख्य जनपदमाय् वन्नितिप्पोळ्ळुं । सागरं चोल्लिनान् सादरमन्नेरमाकुलमेन्निये मज्जले सत्वरं ६० सेतु बन्धिक्क नळनां कपिवरनेतुमवनोरु दण्डवुमुण्टाय् वरा । विश्व कर्म्माविन् मकनवनाकयाल् विश्व शिल्प क्रिया तत्परनेवयुं । विश्व दुरितापकारिणियाय् तव विश्वमेल्लां निरञ्ञीटुन्न कीर्त्तियुं वर्द्धिक्कुमेन्नु परञ्ञु तोळ्ळुतुटनब्धियुं मेल्ले मरञ्ञरुळीटिनान् । सन्तुष्टनायोरु रामचन्द्रन् तदा चिन्तिच्चु सुग्रीव लक्ष्मणन्मारोटुं प्राज्ञनायीटुं नळने विळिच्चुटनाज्ञयेच्चेय्तितु सेतु संबन्धने । तल्क्षणे मर्क्कट मुख्यनाकुं नळन् पुष्करनेत्रने वन्दिच्चु सत्वरं । पर्वततुल्य शरीरिकळाकिन दुर्वार वीर्य्यमियन्न कपिकळुं सर्व दिक्किङ्कलुं निन्नु सरभसं पर्वत पाषाण पादप जालङ्ङळ् कोण्टु वरुन्नव वाङ्ङिङ्ङ्तोरुतेरे कुण्ठताहीनं पटुत्तु तुटङ्ङिङ्ङिनान् । ७० नेरे शतयोजनायतमायुटनोरञ्चु योजन विस्तारमां वण्णं । इत्थं पटुत्तु तुटङ्ङुं विधौ रामभद्रनां दाशरथि जगदीश्वरन् व्योमकेशं परमेश्वरं शङ्करं रामेश्वरमेन्न नाममरुळ् चेय्तु । मोहन-

---

प्रविष्ट हुआ। आभीर-मण्डल का नाश हो जाने से वह प्रदेश परिशोभित हुआ और सागर का वह तट तब से सुन्दर मुख्य जनपद बन गया। सागर ने तब कहा कि तुरन्त ही मेरे जल में बिना किसी कठिनाई के—६० —सेतु बाँध लें। (सेतुबन्धन में) नल नामक कपिवर को कुछ भी कठिनाई नहीं होगी। विश्वकर्मा का पुत्र होने के नाते वह विश्व-शिल्पक्रिया में अतीव तत्पर है। विश्व के दुख का निवारण करनेवाली आपकी विश्वव्यापी सुकीर्ति भी बढ़ेगी।" यह कह हाथ जोड़ प्रणाम करके सागर धीरे से अदृश्य हो गया। सन्तुष्ट हो रामचन्द्र ने तब सुग्रीव तथा लक्ष्मण के साथ विचार किया और जल्दी ही शिल्पविशारद नल को बुलाकर सेतुबन्धन के लिए आज्ञा दी। तत्काल ही वानर-प्रवर नल ने पुष्करनेत्र (राम) को प्रणाम किया। पर्वततुल्य स्थूलशरीरी तथा दुर्निवारवीर्य पराक्रमी वानर लोग सब दिशाओं से सत्वर ही पर्वत, पाषाण एवं पादप (वृक्ष) समूह उठा ले आने लगे और (नल) उन्हें क्रम से रख-रखकर बिना प्रयास के सेतु तैयार करने लगा। ७० शत-योजन लम्बा तथा दस योजन चौड़ा सेतु बनाना आरंभ किया। तब दाशरथी राम ने व्योमकेश, परमेश्वर शंकर के नाम पर उस सेतुमुख को रामेश्वर का नाम दिया तथा त्रिलोक के पापों की शांति

माय मुहूर्त्तेन संस्थाप्य पापहराय त्रिलोक हितार्त्थमाय् पूजिच्चु वन्दिच्चु भक्त्या नमस्कृत्य राजीवलोचननेवमरुळ् चेय्तु— यातोरु मर्त्त्यनिविटे वन्नादराल् सेतु बन्धं कण्टु रामेश्वरनेयुं भक्त्या भजिक्कुन्नतप्पोळवन् ब्रह्महत्यादि पापङ्ङळोटु वेर्पेट्टति शुद्धनाय् वन्तु कूटुं ममानुग्रहाल् मुक्तियुं वन्नीटुमिल्लोरु संशयं। सेतु बन्धत्तिङ्कल् मज्जनवुं चेय्तु भूतेशनाकिय रामेश्वरनेयुं कण्टु वणङ्ङि पुरप्पेट्टु शुद्धनाय् कुण्ठत कैविट्टु वाराणसिपुक्कु ८० गंगयिल् स्नानवुं चेय्तु जितश्रमं गंगा सलिलवुं कोण्टु पोन्नादराल् रामेश्वरन्नभिषेकवुं चेय्तथ श्रीमल् समुद्रे कळञ्ञु तद्भारवुं मज्जनं चेय्युन्न मर्त्त्यनेन्नोटु सायुज्यं वरुमतिनिल्लोरु संशयं। ऐन्नरुळ् चेय्तु रामन् तिरुवटि तन्नाय्त्तोळ्ळुतु सेविच्चितेल्लावरुं। विश्वकर्म्मात्मजनां नळनुं पिन्ने विश्वासमोटु पटुत्तु तुटङ्ङिनान् विद्रुतमद्रि पाषाण तरुक्कळालद्दिने तीर्न्नु पतिन्नालु योजन। तीर्न्नितिरुपतु योजन पिट्टेन्नाळ् मून्नां दिनमिरुपत्तोन्नु योजन। नालां दिनमिरुपत्ति रण्टायतुपोलेयिरुपत्ति मून्नुमञ्चां दिनं; अञ्चुनाळ् कोण्टु शत योजनायतं चञ्चलमेन्नियॆ तीर्न्नोरनन्तरं

एवं भलाई के लिए वहीं पर सुन्दर एवं मोहन शुभ मुहूर्त्त में एक शिवलिंग की प्रतिष्ठा की। उसकी पूजा-वंदना एवं भक्तिपूर्वक प्रणाम करके राजीवलोचन ने यों बताया—"जो मनुष्य यहाँ आकर श्रद्धायुक्त हो सेतुबन्धन देखता है तथा रामेश्वर का भक्ति से भजन करता है तब उसके ब्रह्महत्या आदि पाप भी दूर होंगे और वह शुद्ध एवं पवित्र बन मेरे प्रसाद से निश्चय ही मुक्ति भी प्राप्त करेगा। सेतुबन्ध में मज्जन (स्नान) कर तथा भूतेश रामेश्वर का दर्शन एवं प्रणाम कर शुद्ध एवं शान्तचित्त हो वहाँ से निकलकर वाराणसी में पहुँचकर—८० —सुख-पूर्वक गंगा में स्नान करके वहाँ से गंगाजल ले आकर उससे रामेश्वर का अभिषेक करके उस जल को सेतुबन्ध में डालकर वहीं स्नान करनेवाला मनुष्य मेरी सायुज्य मुक्ति का अधिकारी बनेगा; इसमें कोई संदेह नहीं है।" यह कह राम प्रसन्न एवं सन्तुष्टचित्त हो विराजित हुए तो सभी (वानर आदि) ने खूब (उस रामेश्वर की) सेवा की। विश्वकर्मा के पुत्र नल ने दृढ़विश्वास-संयुत हो सेतु-निर्माण का कार्य जारी रखा। शिलाओं, पत्थरों, पादपों आदि क्रम से रखकर जल्दी-जल्दी काम बनता गया और उस दिन चौदह योजन सेतु तैयार हुआ। दूसरे दिन बीस योजन, तीसरे दिन इक्कीस योजन, चौथे दिन बाईस योजन, पाँचवे दिन

सेतुविन्मेले नटन्नु कपिकळुमातङ्कहीनं कटन्नु तुटङ्ङिनार् । ९०
मारुति कण्ठे करेरि रघूत्तमन् तारेय कण्ठे सुमित्रा तनयनुं;
आरुह्य चेन्नु सुबेलाचल मुकळेरिनान् वानर सेनयोटुं द्रुतं ।
लङ्कापुरालोकनाशया राघवन् शङ्का विहीनं सुबेलाचलोपरि
संप्राप्य नोक्किय नेरत्तु कण्टितु जंभारितन् पुरिक्कौत्त लङ्कापुरं ।
स्वर्णमय ध्वज प्राकार तोरण पूर्ण्णं मनोहरं प्रासाद संकुलं
कैलास शैलेन्द्र सन्निभ गोपुर जाल परिघ शतघ्नी समन्वितं ।
प्रासाद मूर्द्धनि विस्तीर्ण्णदेशे मुदा वासव तुल्य प्रभावेन रावणन्
रत्नसिंहासने मन्त्रिभिस्सङ्कुले रत्न दण्डातपत्रैरुपशोभिते;
आलवट्टङ्ङळुं वेञ्चामरङ्ङळुं बालत्तरुणिमारेक्कोण्टु वीयिच्चु
नील शैलाभं दशकिरीटोज्ज्वलं नील मेघोपमं कण्टु रघूत्तमन् । १० ०
विस्मयं कैक्कोण्टु मानिच्चु मानसे सस्मितं वानरन्मारोटु
चौल्लिनान् १०१

रावण शुक संवादम्

मुन्ने निबद्धनायोरु शुकासुरन् तन्ने विरवोटयय्क्क मटियाते ।

तेईस योजन इस क्रम से पाँच दिनों में शतयोजन लम्बा सेतु सहज ही तैयार हुआ और वानर लोग सेतु पर से चलते हुए बिना किसी कठिनाई के, सागर पार करने लगे । ९० श्रीराम जी मारुति के कंठ पर तथा सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) तारेय (अंगद) के कंठ पर आरूढ़ हो वानरसेना सहित जल्दी ही सुबेलाचल पर पहुँच गये । लंकापुरी का दर्शन करने की इच्छा से जब राम ने सुबेलाचल के ऊपर खड़े होकर दूर दृष्टि फेरी तो जंभारि की पुरी (अमरावती-) तुल्य लंकापुरी दिखाई पड़ी । सुवर्णमय ध्वज-पताका, गढ़, तोरण आदि से युक्त एवं मनोहर प्रासादों से संकुल, उन्नत कैलास पर्वत-सम गोपुर समूहों, परिघ, शतघ्नी आदि से समन्वित लंकापुरी (दर्शनीय) थी । प्रासाद के ऊपर एक विस्तारयुक्त कमरे में रावण वासव (इन्द्र-) तुल्य प्रभाव से रत्नसिंहासन पर मंत्रियों से परिवृत हो रत्नदण्ड से शोभित आतपत्र के नीचे बैठा हुआ था । सुन्दरी कुमारियाँ चामर डुला रही थीं । नील शैल की सी आभावाले दसों किरीट नील मेघों के समान शोभित थे । यह देखकर राम ने—१०० विस्मयपूर्वक मन ही मन उसका आदर किया और मन्दस्मित हो वानरों से कहा—१०१

रावण-शुक संवाद

(राम ने वानरों से कहा कि) पहले कैदी बनाये गये शुकासुर को

चेन्नु दशग्रीवनोटु वृत्तान्तङ्ङळोन्नोळियातेयरियिक्क वैकाते
अेन्तरुळ् चेय्ततु केट्टु तोळुतवन् चेन्नु दशाननन् तन्ने वणङ्ङिनान् ।
पंक्तिमुखनुमवनोटु चोदिच्चानेन्तु नी वैकुवान् कारणं चोल्केटो !
वानरेन्द्रन्माररिञ्ञु पिटिच्चभिमान विरोधं वरुत्तियारो ? तव
क्षीणभावं कलर्न्नीटुवान् कारणं मानसे खेदं कळञ्ञु चोल्लीटेटो ।
रात्रिञ्चरोक्तिकेट्टु शुकन् परमार्त्थं दशाननोटु चोल्लीटिनान्—
राक्षस राजप्रवर ! जय जय मोक्षोपदेश मार्ग्गेण चोल्लीटुवन् ।
सिन्धु तन्नुत्तर तीरोपरि चेन्नोरन्तरमेन्निये ञान् तव वाक्यङ्ङळ्
चोन्ननेरत्तवरेन्ने प्पिटिच्चुटन् कोन्नु कळवान् तुटङ्ङुं दशान्तरे, १०
राम राम ! प्रभो ! पाहि पाहीति ञानामयं पूण्टु करञ्ञ नादं
केट्टु दूतनवध्यनयप्पिनयप्पिनेन्नादरवोटरुळ् चेय्तु दयापरन् ।
वानरन्मारुमयच्चारतु कोण्टु ञानुं भयं तीर्न्नु नीळे नटन्नुटन्
वानर सैन्यमेल्लां कण्टु पोन्नितु मानववीरमनुज्ञया सादरं ।
पिन्ने रघूत्तमनेन्नोटु चोल्लिनान् चेन्नु नी रावणन् तन्नोटु चोल्लुक
सीतये नल्कीटुकोन्नुकिलल्लायि्कलेतुमे वैकाते युद्धं तुटङ्ङुक ।

अब निस्संकोच मुक्त कर, जाने दो । (राम ने मुक्त हुए शुक से कहा—) तुम अविलंब जाकर दशग्रीव को पूरा हाल, बिना कुछ छोड़े, बता दो । यह सुनकर वह राम को प्रणाम करके चला गया तथा रावण के पास आकर स्तुति की । उसे देखकर पंक्तिमुख (रावण) ने उससे पूछा कि इतनी देर से आने का क्या कारण है ? क्या वानरों ने तुम्हें पहचानकर तुम्हें पकड़कर अपमानित किया ? तुम्हारी थकावट का क्या कारण है ? मन का संताप त्यागकर मुझे समझाओ । रात्रिचर रावण का कथन सुनकर शुक ने दशानन से सारा हाल कह दिया—"हे श्रेष्ठ राक्षसराज ! (आपकी) जय हो ! जय हो ! आपकी मुक्ति के लिए अनुकूल कुछ उपदेश मैं देना चाहता हूँ । जभी मैं सागर के उत्तर तीर पर पहुँचा तभी (मैंने सुग्रीव को) आपका सन्देश कह सुनाया । यह कहते ही वे (वानर) मुझे पकड़कर मारने लगे तो—१० 'राम राम ! हे प्रभु ! मेरी रक्षा करो, रक्षा करो' इस प्रकार खिन्न स्वर में मुझे रोते-चिल्लाते देखकर दयावान राम ने आज्ञा दी कि दूत अवध्य है, उसे छोड़ दो, छोड़ दो । (राम की आज्ञा मानकर) वानरों ने मुझे छोड़ दिया तो मैं निर्भय घूमकर पूरी वानरसेना देख मानववीर (राम) की आज्ञा से वापस आ पहुँचा हूँ । फिर लौटते समय रामजी ने मुझे बताया कि तुम जाकर रावण से कह दो कि या तो सीता को वापस दो या अविलम्ब युद्ध आरम्भ

रण्टिलुमोन्नुळरिच्चेय्तु कोळ्ळणं रण्टुं कणक्केन्नेनिक्कु पऱयणं। ऐन्तु बलं कोण्टु सीतयेक्कट्टु कोण्टन्धनाय् पोन्निङ्ङिरुन्नु कोण्टू भवान् ? पोरुमतिनु बलमेङ्किलेन्नोटु पोरिनाय्क्कोण्टु पुऱप्पेट्टुकाशु नी। लङ्कापुरवुं निशाचर सेनयुं शङ्का विहीनं शरङ्ङळेक्कोण्टु ञान् २० ओक्केप्पोटिपेट्टुत्तीर्न्नुळ्ळिल् वन्निङ्ङु पुक्कोरु रोषवुमाशु तीर्त्तीटुवन्। नक्तञ्चर कुल श्रेष्ठन् भवानोरु शक्त-नेन्नाकिल् पुऱप्पेटुकाशु नी। अन्नरुळिच्चेय्तिरुन्नरुळीटिनान् निन्नुटे सोदरन् तन्नोटु कूटवे सुग्रीव लक्षमणन्मारोटुमोन्निच्चु निग्रहिप्पानाय् भवन्तं रणाङ्कणे। कण्टु कोण्टालुमसंख्यं बलं दशकण्ठ प्रभो ! कपिपुंगव पालितं। पर्वत सन्निभन्माराय वानरर्वि कुलुङ्ङवे गर्ज्जनवुं चेय्तु सर्व लोकङ्ङळुं भस्ममाक्की-टुवान् गर्वं कलर्न्नु निल्कुन्नितु निर्भयं। संख्ययुमाक्कुं गणिक्का-वतल्लिह संख्यावतांवरनाय कुमारनुं। हुङ्कारमेऱिय वानर सेनयिल् संघ प्रधानन्मारेक्केट्टु कोळ्ळुक लङ्कापुरत्तेयुं नोक्कि नोक्कि द्रुतं शङ्काविहीनमलऱि निल्कुन्नवर्। ३० नूऱायिरं पटयोटुं रिपुक्कळे नीऱाक्कुवानुळ्ळोटु वाल् पोङ्ङिच्चु कालनुं

करो। सोच-समझकर दोनों में से एक निश्चित कर लो। तुम जाकर बोलो कि मेरे लिए दोनों बराबर हैं। तुम जिस बल-वीर्य के भरोसे पर अन्धे हो सीता को चुरा ले जा बैठे हो उसी बल के भरोसे पर मुझसे युद्ध करने के लिए तुम तुरन्त ही (महल से) बाहर निकलो। लंकापुरी तथा निशाचर सेना को मैं निस्सन्देह बाणों से—२० —चूर-चूर कर अपना बदला चुकाऊँगा और (रावण के प्रति) अपना रोष शान्त कर लूँगा। अगर राक्षसराज शक्तिसम्पन्न हैं तो तुरन्त युद्ध के लिए बाहर आ जाएँ। यह कहकर राम आपके (रावण के) भ्राता (विभी-षण), सुग्रीव तथा लक्ष्मण के साथ आपको युद्ध-प्रांगण में मारने के संबंध में मंत्रणा करने बैठ गये। हे प्रभु दशकंठ ! कपिपुगंवों से संचालित विशाल वानर-सेना को आप देख लीजिए। पृथ्वी को कंपित करते हुए घोर गर्जना करते तथा सर्वलोकों को भस्मीभूत करने का दर्प लिये निर्भय खड़े पर्वत-तुल्य वानरों को देख लीजिए। संख्यावतांवर (विद्वानों में श्रेष्ठ) कुमार (सुब्रह्मण्य) भी उनकी संख्या का अनुमान नहीं लगा सकते। हुंकार भरती वानर-सेना के यूथ प्रमुखों के नाम सुनिये, जो लंकापुरी को देखते हुए जोर-जोर से घोर गर्जना करते खड़े हैं। ३० सौ हजार (एक लाख) सेना-सहित शत्रुओं को पानी-पानी कर बहाने

पेटिच्चु मण्टुमवनोटु नीलनां सेनापति वह्निनन्दनन्। अंगदनाकुमिळयराजावतिनङ्ङेतु पत्मकिञ्जल्क समप्रभन् वाल् कोण्टु भूमियिल् त्तच्चुतच्चङ्ङने बालितन् नन्दननद्रि शृंगोपमन्। तल्पार्श्वे सिम्नि निल्क्कुन्नतु वातजन् त्वल्पुत्रघातकन् रामचन्द्र प्रियन्। सुग्रीवनोटु पऽञ्ञु निल्क्कुन्नवनुग्रनां श्वेतन् रजतसमप्रभन्। रंभनङ्ङेतवन् मुम्पिल् निल्क्कुन्नवन् वम्पनायुळ्ळ शरभन् महाबलन्। मैन्दनङ्ङेतवन् तम्पि विविदनुं वृन्दारक वैद्यनन्दनन्मारल्लो सेतुकर्त्तावां नळनतिनङ्ङेतु बोधमेरु विश्वकर्म्मावुतन् मकन्। तारन् पनसन् कुमुदन् विनतनुं वीरन् वृषभन् विकटन् विशालनुं; ४० मारुति तन् पितावाकिय केसरि शूरनायीटुं प्रमाथि शतबलि सारनां जांबवानुं वेगदर्शियुं वीरन् गजनुं गवयन् गवाक्षनुं; शूरन् दधिमुखन् ज्योतिर्म्मुखनतिघोरन् सुमुखनुं दुर्म्मुखन् गोमुखन्। इत्यादि वानर नायकन्मारे ञान् प्रत्येकमेङ्ङने चोल्लुन्नतुं प्रभो! इत्तरं वानर नायकन्मारुपत्तेळु कोटियुण्टुळ्ळतरिञ्ञालुं। उळ्ळं तेळिञ्ञु पोक्कायिरुप-

---

की सामर्थ्य लिये तथा पूँछ उठाये खड़े वह्निनंदन नील हैं जिन्हें देख यमराज भी भयभीत हो भाग खड़े होंगे। पद्मकिंजल्क (कमलदल) के समान आभावाले तथा बार-बार अपनी पूँछ भूमि पर मारते खड़े, अद्रिशृंग (पर्वत शिखर) के समान उन्नत (जो वानर दिखाई दे रहे हैं वे) बालिपुत्र युवराज अंगद हैं। उनके पार्श्व भाग में जो खड़े हैं वे आपके पुत्र (अक्षयकुमार) के घातक, श्रीराम के परमप्रिय वातात्मज (हनुमान) हैं। सुग्रीव से बातें करता हुआ जो श्वेत रंग का वानर खड़ा है वह बड़ा उग्र श्वेत है। उसके आगे रंभ है और उसके सामने जो है वह बड़ा वीर एवं महा बलशाली शरभ है। उसके आगे मैन्द तथा बाद में उसका छोटा भाई विविद है और वे दोनों देववैद्य (अश्विनी देव) के पुत्र हैं। उनके आगे सेतु का निर्माता नल खड़ा है जो विद्वान एवं शिल्पकुशल विश्वकर्मा का पुत्र है। फिर तार, पनस, कुमुद, विनत, वीर, वृषभ, विकट, विशाल—४० —मारुति का पिता केसरी, शूर एवं अत्यन्त बलशाली प्रमाथि, महान जांबवान्, वेगदर्शी एवं वीर गज, गवय, गवाक्ष, शूर दधिमुख, ज्योतिर्मुख, बलशाली सुमुख, दुर्मुख एवं गोमुख इत्यादि पूरे वानर-नायकों के नाम मैं पृथक्-पृथक् कैसे गिन सकता हूँ! ऐसे सड़सठ करोड़ वानर-नायक हैं, यह आप जान लीजिए। उनके अधीन में दिल खोलकर युद्ध करनेवाले असंख्य वानर हैं और ये सबके

त्तीन्तु वेळ्ळं पटयवक्कुळ्ळतवयेल्लां देवारिकळेयोटुक्कुवानाय् वन्न देवांश संभवन्मारिवरेवरुं। श्रीराम देवनुं मानुषनल्लादि नारायणनां परं पुरुषोत्तमन्। सीतयाकुन्नतु योगमाया देवि सोदरन् लक्ष्मणनायतनन्तनुं। लोकमातावुं पितावुं जनकजा राघवन्मारेन्नरिक वळि पोले। ५० वैरमवरोटु संभविच्चीटुवान् कारणमेन्तेन्नतोक्क त्ती मानसे। पञ्चभूतात्मकमाय शरीरवुं पञ्चत्वमाशु भविक्कुमेल्लावनुं। पञ्च पञ्चात्मक तत्त्वङ्ङ-ळेक्कोण्टु सञ्चितं पुण्य पापङ्ङळाल् बद्धमाय् त्वङ्मांस-मेदोस्थि मूत्र मलङ्ङळाल् सम्मेळितमति दुर्ग्गंधमेत्रयुं; ञानेन्न भावमतिङ्कलुण्टाय्वरुं ज्ञानमिल्लात जनङ्ङळ्क्कतोक्क त्ती। हन्त जडात्मकमाय कायत्तिङ्कलेन्तोरास्थ भविक्कुन्नतु धीमतां। यातोन्नु मूलमाय् ब्रह्महत्यादियां पातकौघङ्ङळ् कृतङ्ङळाकुन्नतुं भोग भोक्तावाय देहं क्षणं कोण्टु रोगादिमूलमाय् सम्पतिक्कुं दृढं। पुण्य पापङ्ङळोटुं चेर्न्नु जीवनुं वन्नु कूटुन्नु सुख दुःख बन्धनं। देहत्ते ञानेन्नु कल्पिच्चु कर्म्मङ्ङळ् मोहत्तिनालवशत्वेन

सब राक्षसों के वंशनाश के लिए अवतीर्ण देवलोग ही हैं। श्रीरामदेव भी कोई मानव नहीं हैं, वे परमात्मा, पुरुषोत्तम नारायण ही हैं। सीता उनकी योगमाया ही हैं और भ्राता लक्ष्मण शेषनाग के अवतार हैं। राघव एवं जनकजा को लोकपिता तथा लोकमाता समझिये। ५० उनसे शत्रुता मोल लेने का कौन सा कारण है, यह आप मन में विचार करके देखिए। पंचभूतात्मक यह शरीर (मिट्टी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से निर्मित शरीर) पंचत्व (पाँचों भूतों का पृथक्-पृथक् होना अर्थात् मृत्यु) को प्राप्त करेगा। पंच-पंचात्मक तत्वों (कपिल के अनुसार मनुष्य-शरीर पच्चीस तत्वों से बना है। ये पच्चीस तत्व हैं—पंचभूत, पंचेन्द्रियाँ, पाँच इन्द्रिय-विषय, पंच कर्मेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार–इस प्रकार २४ तत्वों के साक्षीभूत पुरुष जो पच्चीसवाँ तत्व है।) से संचित, पाप-पुण्य से आबद्ध, त्वक् मांस-मज्जा, अस्थि, मल-मूत्र के सम्मेलन से अत्यन्त दुर्गंधमय इस शरीर पर 'अहं' की भावना केवल अज्ञानियों में उत्पन्न होती है। बुद्धिमान ज्ञानियों के मन में इस जड़ात्मक काया के प्रति क्या आस्था हो सकती है! जिस क्षणभंगुर शरीर के कारण ब्रह्महत्या जैसे पाप किये जाते हैं, वही भोगों का भोक्ता शरीर एक ही क्षण में रोग आदि के वश में पड़कर धराशायी हो जाता है। पाप-पुण्यों से मिलकर जीवन दुख-सुखों के बन्धन में आबद्ध हो

चेय्युन्नु । ६० जन्म मरणङ्ङळुमतुमूलमाय् सम्मोहितन्मार्क्कु वन्नु भविक्कुन्नु । शोक जरा मरणादिकळ् नीक्कुवानाकयाल् देहाभिमानं कळक नी । आत्मावु निर्म्मलनव्ययनद्वयनात्मान मात्मना कण्टु तेळिक नी । आत्माविने स्मरिच्चीटुक सन्तत-मात्मनि तन्ने लयिक्क नी केवलं । पुत्र दारार्त्थ गृहादि वस्तु-क्कळिल् सक्ति कळञ्ञु विरक्तनाय् वाळुक । सूकरश्वादि देहङ्ङळिलाकिलुं भोगं नरकादिकळिलुमुण्टल्लो । देहं विवेका-ढ्यमायतुं प्रापिच्चिताहन्त ! पिन्ने द्विजत्ववुं वन्नितु; कर्म्म भूवामत्र भारत खण्डत्तिल् निर्म्मलं ब्रह्मजन्मं भविच्चीटिनाल् पिन्नेयुण्टाकुमो भोगत्तिलाग्रहं धन्यनायुळ्ळवनोर्क्कं महामते ! पौलस्त्य पुत्रनां ब्राह्मणाढ्यन् भवान् त्रैलोक्य सम्मतन् घोर तपोधनन् । ७० अन्तिरिक्कॆप्पुनरज्ञानियॆप्पोलॆ पिन्नेयुं भोगा-भिलाषमॆन्तिङ्ङने ? इन्नु तुटङ्ङिस्समस्त संगङ्ङळुं नन्नाय् परित्यजिच्चीटुक मानसे । रामनॆत्तन्ने समाश्रयिच्चीटुक राम-नाकुन्नतात्मा परमद्वयन् । सीतये रामनु कॊण्टक्कॊटुत्तुतल् पाद

जाता है । देह को 'मैं' समझकर मनुष्य मोह परवश्य के कारण कर्म करता जाता है । ६० ऐसे सम्मोहित लोग जन्म-मृत्यु के चक्र में पड़ते रहते हैं । इसलिए हे रावण ! शोक, जरामरण आदि से बचे रहने के लिए देहाभिमान को छोड़ दीजिए । आत्मा निर्मल, अव्यय और अद्वय है । उसे हृदय में देख लेने का प्रयास किया जाना चाहिए । निरन्तर आत्मा का स्मरण करते हुए आप आत्मा में विलीन हो जाइये । पुत्र, दारा (पत्नी), अर्थ (धन), गृह आदि वस्तुओं के प्रति अपनी आसक्ति त्यागकर आप विरक्त हो जीवनयापन कीजिए । यह तुच्छ भोग सूकर, कुत्ता आदि जीवियों, यहाँ तक कि नरक में भी प्राप्त होता है । विवेकशक्ति से युक्त देह तथा द्विजत्व को प्राप्त करने और कर्मभूमि भारतवर्ष में पवित्र जन्म लेने के उपरांत भी हे महामति ! क्या श्रेष्ठ व्यक्ति भोगासक्त जीवन बिता सकता है ? आप वास्तव में विश्रवस् के पुत्र तथा उत्तम ब्राह्मण हैं । आप तीनों लोकों में सम्मानित घोर तपस्वी हैं । ७० तिस पर भी घोर अज्ञानी के समान आप भोगासक्त क्यों बन बैठे हैं ? आज से आप अपने मन से समस्त संगति को पूर्णतया परित्याग कर दीजिए । राम का आप आश्रय लीजिए । राम साक्षात् अद्वय परमात्मा हैं । सीता को राम के पास पहुँचा देकर आप उनके पाद-पद्मों के अनुचर बन रहिए । तब समस्त पापों से विमुक्त हो दिव्य

पत्मानुचरनाय् भविक्क त्री । सर्व पापङ्ङळिल् निन्नु विमुक्तनाय् दिव्यमां विष्णुलोकं गमिक्कायवरुं । अल्लायकिलाशु कीळ्पोट्टु कीळ्पोट्टुपोय् चेल्लुं नरकत्तिलिल्लोरु संशयं । नल्लतत्रे ञान् निनक्कु परञ्ञतु नल्ल जनत्तोटु चोदिच्चु कोळ्केटो! राम रामेति रामेति जपिच्चु कोण्टामयं वेटिट्टु साधिक्क मोक्षवुं । सत्संगमत्तोटु रामचन्द्रं भक्तवत्सलं लोक शरण्यं शरणदं देवं मरतक कान्ति कान्तं रमा सेवितं चाप बाणायुधं राघवं; ८० सुग्रीव सेवितं लक्ष्मण संयुतं रक्षा निपुणं विभीषण सेवितं भक्त्या निरन्तरं ध्यानिच्चु कोळ्किलो मुक्ति वन्नीटुमतिनिल्ल संशयं । इत्थं शुक वाक्यमज्ञान नाशनं श्रुत्वा दशास्यनुं क्रोध ताम्राक्षनाय् दग्धनाय् पोकुं शुकनेन्नु तोन्नुमाटत्यन्त रोषेण नोक्कियुरचेय्तान्— भृत्यनायुळ्ळ नीयाचार्य्यनेप्पोले निस्त्रपं शिक्ष चोल्वानेन्तु कारणं । पण्टु नी चेय्तोरुपकारमोर्क्कयालुण्टु कारुण्यमेनिक्कतु कोण्टु ञान् इन्नु कोल्लुन्नतिल्लेन्नु कल्पिच्चितेन् मुन्निल् निन्नाशु मटयत्तु पोक नी । केट्टाल् पोरुक्करुतातोरु वाक्कुकळ् केट्टु पोरुक्कान्

विष्णुलोक जाने का (आपको) सौभाग्य प्राप्त होगा। अन्यथा जल्दी-जल्दी पतित होते-होते आप नरक में पड़ेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं है। मैंने आपको सदुपदेश दिये; मेरी बात पर विश्वास नहीं है तो आप सज्जनों से पूछ लीजिए। 'राम राम राम' का जाप करते हुए सारे दुखों से विमुक्त हो मोक्ष को प्राप्त कीजिए। सज्जनों की संगति करते हुए भक्तों पर वात्सल्य रखनेवाले, संसार के लिए शरण जाने योग्य यथा शरण प्रदान करनेवाले, मरकतमणि के समान दिव्य कान्तिवाले, रमा से पूजित, चाप-बाणधारी रामचन्द्र,—८० —जो सुग्रीव एवं विभीषण से सेवित तथा लक्ष्मण से संयुत हैं, जो रक्षा करने में अत्यन्त समर्थ हैं, ऐसे रामचन्द्र का निरन्तर भक्ति से ध्यान करने से निस्सन्देह मुक्ति की प्राप्ति होगी।" अज्ञान को नष्ट कर देने में समर्थ शुक का वचन सुनकर दशास्य के नेत्र तप्त ताम्र के समान लाल-लाल हो गये। शुक को दग्ध करने की प्रतीति पैदा करता हुआ अत्यन्त रोष से उसने शुक से कहा—"सेवक तुम किस बल-बूते पर आचार्य के समान निर्भय उपदेश देने लगे हो? तुम्हारे पहले किये उपकार को स्मरण करके मेरे मन में तुम्हारे प्रति दया है; इसलिए आज तुम्हारा वध नहीं करता हूँ। मेरी यह आज्ञा है कि तुम मेरे सामने से हट जाओ। (तुम्हारे) असह्य वचन सुनकर उन्हें सह लेने की मुझमें सामर्थ्य नहीं है, क्षमा भी नहीं है।

क्षमयुमेंनिक्किल्ल । अँन्नुटे मुन्निल् नी काल्क्षणं निल्क्किलो वन्नु कूटुं मरणं निनक्कॅन्नुमे । अँन्नतु केट्टु पेटिच्चु विरच्चवन् चॅन्नु तन् मन्दिरं पुक्किरुन्नीटिनान् । ९०

शुकन्टे पूववृत्तान्तम्

ब्राह्मण श्रेष्ठन् पुरा शुकन् निर्म्मलन् ब्राह्मण्यवुं परिपालिच्चु सन्ततं काननत्तिङ्कल् वानप्रस्थनाय् महाज्ञानिकळिल् प्रधानत्ववुं कैक्कोण्टु । देवकळ्क्कभ्युदयार्त्थमाय् नित्यवुं देवारिकळ्क्कु विनाशत्तिनाय्क्कोण्टुं यागादि कर्म्मङ्ङळ् चेय्तु मेवीटिनान् योगं धरिच्चु परब्रह्म निष्ठया, वृन्दारकाभ्युदयार्त्थियाय् राक्षस निन्दा परनाय् मरुवुं दशान्तरे; निर्ज्जर वैरिकुल श्रेष्ठ नाकिय वज्रदंष्ट्रन् महादुष्ट निशाचरन् अँन्तोन्नु तल्लू शुकापकारत्तिनेंन्नन्तरवुं पार्त्तु पार्त्तिरिक्कुं विधौ कुंभोल्भवनामगस्त्यन् शुकाश्रमे संप्राप्त-नायानोरु दिवसं बलाल् । सम्पूजितनामगस्त्य तपोधनन् संभोज-नार्त्थं निमंत्रितनाकयाल् स्नातुं गते मुनौ कुंभोल्भवे तदा यातु-धानाधिपन् वज्रदंष्ट्रासुरन् १० चेंन्नानगस्त्य रूपं धरिच्चन्तरा

अब पलभर के लिए भी तुम मेरे सामने ठहर गये तो याद रखो, तुम्हारी मृत्यु होगी।" यह सुनकर भयविह्वल एवं कम्पित शुक अपने भवन में जाकर बैठ गया । ९०

शुक का पूर्वचरित

प्राचीनकाल में शुक नाम का एक ब्राह्मण अपने ब्राह्मणधर्म का पालन करता आया । (गृहस्थाश्रम का पालन करने के उपरांत) वह कानन में वानप्रस्थ का पालन करने लगा । उसने महाज्ञानियों में भी प्रमुख स्थान प्राप्त किया । उसने देवों के अभ्युदय तथा देवों के शत्रुओं (दानवों) के विनाश के लिए कई प्रकार के यज्ञ किये । इस प्रकार योग-साधना के द्वारा परब्रह्म में अपने को तल्लीन किये देवों के अभ्युदय एवं राक्षसों की निन्दा के कार्य करता शुक बैठा था तब निर्जर-वैरी (राक्षस-) कुलश्रेष्ठ महादुष्ट राक्षस वज्रदंष्ट्र शुक के अपकार का मार्ग सोचता बैठा था । उन्हीं दिनों अचानक कुंभोद्भव अगस्त्य मुनि शुक के आश्रम में पहुँच गये । सम्पूज्य अगस्त्य तपोधन (शुक के द्वारा) भोजनार्थ निमंत्रित हुए । जब कुंभोद्भव अगस्त्य स्नान के लिए गये

चौन्नान् शुकनोटु मन्दहासान्वितं— ओट्टु नाळुण्टु मांसं कूट्टि-युण्टिट्टु मृष्टनायुण्णेणमिन्नु नमुक्कोटो ! छागमांसं वेणमल्लो कडि मम त्यागियल्लो भवान् ब्राह्मण सत्तमन् । अन्नळवे शुकन् पत्नियोटुं तथा चौन्नानतङ्ङनेयेन्नवळुं चौन्नाळ् । मद्ध्ये शुक पत्नि वेषं धरिच्चवन् चित्तमोहं वळर्त्तीटिनान् मायया । मर्त्य मांसं विळम्पिक्कोटुत्तम्पोटु तत्रैव वज्रदंष्ट्रन् मरञ्ञीटिनान् । मर्त्य मांसं कण्टु मैत्रा वरुणियुं क्रुद्धनाय् क्षिप्रं शुकनेश्शपिच्चितु— मर्त्यरेब्भक्षिच्चु राक्षसनायिनि पृथ्वियिल् वाळ्क मत्तपोवैभवाल् । इत्थं शपिच्चतु केट्टु शुकन् तानुमेत्रयुं चित्रमितेन्तोरु कारणं ? मांसोत्तरं भुजिक्केणमेन्निक्कोन्नु शासन चेय्ततुं मटारुमल्लल्लो । २० पिन्नेयतिन्नु कोपिच्चु शपिच्चतुमेन्नुटे दुष्कर्म्ममेन्ने परयावू । चोल्लु चोल्लेन्तु परञ्ञतु नी सखे! नल्ल वृत्तान्तमितेन्नोटु चोल्लणं। अन्नतु केट्टु शुकनुमगस्त्यनोटन्नेरमाशु सत्यं परञ्ञीटिनान्— मज्जनत्तिन्नेळुन्नळ्ळिय शेषमितिज्जनत्तोटु वीण्टुं वन्नरुळ् चेय्तुः व्यञ्जनं मांस समन्वितं वेणमेन्नञ्जसा ञानतु केट्टितु चेय्ततुं ।

तभी राक्षसवीर वज्रदंष्ट्र—१० —अगस्त्य का रूप धारण करके शुक के आश्रम के भीतर पहुँचा और शुक से मन्दहास के साथ कहा—"मांस के साथ भोजन किये कई दिन हुए, आज हमें मृष्टान्न भोजन करने की इच्छा है। उसके लिए बकरे का मांस मिलना चाहिए। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! आप तो बड़े त्यागी हैं।" अगस्त्य की इच्छा सुनते ही शुक ने अपनी पत्नी को सूचित किया और उसने हामी भर दी। बीच में (भोजन के समय) वज्रदंष्ट्र ने मुनिपत्नी का वेष धारण करके अपनी माया से (अगस्त्य के मन में) मोह बढ़ाया तथा (भोजनपत्र पर) मर्त्य मांस परोसकर वह अदृश्य हो गया। (भोजन में) मर्त्यमांस देखकर मैत्रा-वरुणी (अगस्त्य) ने क्रुद्ध हो शुक को शाप दिया—"मेरे तप के प्रभाववश तुम मनुष्यभोजी राक्षस बन पृथ्वी पर वास करो।" यह शाप सुनकर शुक विस्मित हो उठा और कहा "बड़ी विचित्र बात है ! शाप का क्या कारण है ? आपही ने तो आग्रह किया था कि मांस के साथ भोजन मिलना चाहिए। २० फिर अब क्रुद्ध हो क्यों मुझे शाप दिया ? यह तो मेरे दुष्कृत का ही फल होगा।" (अगस्त्य ने आश्चर्यान्वित हो पूछा—) "हे मेरे मित्र ! बोलो-बोलो, क्या कहा था ! यह तो विचित्र घटना हुई ! मुझे पूरा हाल समझाओ।" यह सुनकर शुक ने तब अगस्त्य को वास्तविक घटना सुनायी—"स्नान के लिए निकलने के उपरांत आप

इत्थं शुकोक्तिकळ् केट्टोरगस्त्यनुं चित्ते मुहूर्त्तं विचारिच्चरुळिनान् ।
वृत्तान्तमुळ्ळकाम्पु कॊण्टु कण्टोरळवुळ्ळताप मोटरुळ् चॆय्तानगस्त्यनु-
वञ्चितन्माराय् वयं बत ! यामिनि सञ्चारिकळितु चॆय्ततु
निर्ण्णयं । ञानुमति मूढनाय्च्चमञ्ञेन् बलालूनं वरा विधि-
तन्मतमॆन्नुमे । मिथ्ययाय् वन्नु कूटा मम भाषितं सत्य प्रधान-
नल्लो नीयुमाकयाल् ३० नल्लतु वन्नु कूटुं मेलिल् निर्ण्णयं
कल्याणमाय् शापमोक्षवुं नल्कुवन् । श्रीरामपत्नियॆ रावणन् कॊण्टु
पोयारामसीमनि वच्चु कॊळ्ळुं दृढं । रावण भृत्यनाय् नीयुं वरु
चिरं केवलं नीयवनिष्टनायुं वरुं । राघवन् वानर सेनयुमाय्
चॆन्नोराकुलमॆन्नियॆ लङ्कापुरान्तिके नालु पुरवुं वळञ्ञिरिक्कुन्नोरु
कालमवस्थयरिञ्ञू वन्नीटुवान् निन्नॆययय्क्कुं दशानननन्नु नी
चॆन्नु वणङ्ङुक रामनॆस्सादरं । पिन्नॆ विशेषङ्ङळोन्नॊळ्ळियातॆ
पोय् चॆन्नु दशमुखन् तन्नोटु चॊल्लुक । रावणनात्मतत्त्वोपदेशं
चॆय्तु देवप्रियनाय्वरुं पुनराशु नी । राक्षस भावमुपेक्षिच्चु

ही ने तो वापस आकर कहा था कि मांसयुक्त भोजन चाहिए । अतः आपका आग्रह सुनकर मैंने (यह प्रबन्ध) कर लिया ।'' शुक का यह कथन सुनकर मुनि थोड़ी देर तक मन में सोच-विचार करते बैठे । ज्ञान-दृष्टि से पूरा हाल देख लेने के उपरांत बड़ी ग्लानि के साथ अगस्त्य ने कहा—"खेद है, हम ठगे गये । निश्चय ही यह राक्षसों का कृत्य है । मैं भी बड़ा मूर्ख निकला (कि बिना सोचे-विचारे शाप दे दिया) । सब विधि-विहित है, जो टाला नहीं जा सकता । तुम तो निरपराध हो, लेकिन मेरा शाप कभी विफल नहीं हो सकता । ३० तुम निश्चिन्त रहो । भविष्य अच्छा ही होगा । मैं कल्याणप्रद शाप-मुक्ति दे रहा हूँ । श्रीराम-पत्नी को रावण उठा ले जाकर आराम (वाटिका) में रखेगा । इसमें कोई अन्तर नहीं आएगा । तुम चिरकाल तक रावण के भृत्य बनकर रहोगे और तुम उसका प्रिय भृत्य बनकर रहोगे । राम अनायास वानर-सेना सहित लंकापुर में पहुँचेंगे तथा लंका को चारों ओर से घेर लेंगे । तब (राम की सेना का) पूरा समाचार ले आने के लिए दशानन तुम्हें भेज देगा । तुम तब जाकर भक्तिपूर्वक राम को नमस्कार करो तथा वापस आकर सारा हाल रावण को कह सुनाओ । उसे आत्मतत्व का उपदेश देते हुए तुम देवों के प्रिय बनोगे । तब (शाप से मुक्त हो) राक्षस-भाव को त्यागकर तुम निश्चय ही अपने ब्राह्मणत्व

साक्षाल् द्विजत्ववुं वन्नु कूटुं दृढं । इत्थमनुग्रहिच्चू कलशोत्भवन् सत्यं तपोधन वाक्यं मनोहरं । ४०

माल्यवान्ड़े वाक्यम्

चारनायोरु शुकन् पोयनन्तरं घोरनां रावणन् वाळुन्न मन्दिरे वन्नितु रावण मातावु तन् पिता खिन्ननाय् रावणनेक्कण्टु चौल्लुवान् । सत्कारवुं कुशलप्रश्नवुं चैय्तु रक्षोवरनुमिरुत्ति यथोचितं । कैकसी तातन् मतिमान् विनीतिमान् कैकसी नन्दनन् तन्नोटु चौल्लिनान्— चोल्लुवन् ञान् तव नल्लतु पिन्नॆ नीयेल्लां निनक्कौत्तपोलॆयनुष्ठिक्क । दुर्निमित्तङ्ङळी जानकि लङ्कयिल् वन्नतिल्प्पिन्नॆप्पलतुण्टु काणुन्नु । कण्टीलयो नाश हेतुक्कळाय् दशकण्ठ प्रभो ! नी निरूपिक्क मानसे । दारुणमायिटि वेट्टुन्नितन्वहं चोरयुं पेय्युन्नितुष्णमेत्रयुं । देवलिगङ्ङळिळकि वियर्क्कुन्नु देवियां काळियुं घोर दंष्ट्रान्वितं नोक्कुन्न दिक्किल् च्चिरिच्चु काणाकुन्नु गोक्कळिल् निन्नु खरङ्ङळ् जनिक्कुन्नु ।१० मूषिकन् माज्जारनोटु पिणङ्ङुन्नु रोषाल् नकुलङ्ङळोटुमव्वण्णमे ।

को प्राप्त कर लोगे ।" कलशोद्भव (अगस्त्य) ने इस प्रकार के आशीर्वाद दिये और तपोधनों के मनोहर वाक्य सदा सत्य ही निकलते हैं । ४०

माल्यवान् के वचन

चार-वेषधारी (वेष-प्रच्छन्न दूत) शुक के चले जाने के उपरांत रावण-मन्दिर में रावण की माता के पिता (नाना) का आगमन हुआ । वह (माल्यवान्) अत्यन्त खिन्न एवं उदास हो (रावण को) समझाने के उद्देश्य से आया । रक्षोवर ने आदर-सत्कार सहित यथोचित उसे बिठाया । अत्यन्त बुद्धिमान एवं नीतिशाली कैकसी के पिता ने कैकसीनन्दन (रावण) से कहा—"मैं तुम्हारी भलाई की बातें समझाने आया हूँ, फिर तुम अपनी इच्छा के अनुसार जो चाहो करो । इस जानकी के यहाँ आने के बाद इस लंका में मैंने कई अपशकुन देखे । हे प्रभु दशकंठ ! क्या तुम नहीं देख रहे हो कि नाश-सूचक भयंकर मेघ-गर्जना हो रही है । मेघों से तप्त रक्त की वर्षा हो रही है । (मन्दिरों में प्रतिष्ठित) देवलिंग कम्पित हो उठते हैं और पसीनों से तर हो जाते हैं । जहाँ भी देखें वहाँ घोर दंष्ट्रा के साथ अट्टहास करती देवी काली ही दिखाई देती है । गौएँ खरों को जन्म दे रही हैं । १० मूषक (चूहे) मार्जार (बिल्ली)

पन्नगजालं गरुडनोटुं तथा तिर्त्तोतिर्त्तीटान् तुटङ्ङुन्नु निश्चयं।
मुण्डनायेट्टं कराळ विकटनाय् वर्णवुं पिंगल कृष्णनाय् सन्ततं
कालनैयुण्टु काणुन्नितल्लाटवुं कालमापत्तिनुळ्ळोन्नितु निर्णयं।
इत्तरं दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतिनल्लैव शान्तियेच्चेय्तु कोळ्ळेणमे।
वंशत्ते रक्षिच्चु कोळ्ळुवानेतुमे संशयमेन्निये सीतयेक्कोण्टुपोय्
राम पादे वच्चु वन्दिक्क वैकाते रामनाकुन्नतु विष्णु नारायणन्।
विद्वेषमेल्लां त्यजिच्चु भजिच्चु कोळ्कद्वयनां परमात्मानमव्ययं।
श्रीराम पाद पोतं कोण्टु संसार वारान्निधियेक्कटक्कुन्नु योगिकळ्।
भक्ति कोण्टन्तःकरणवुं शुद्धमाय् मुक्तियै ज्ञानिकळ् सिद्धिच्चु
कोळ्ळुन्नु। २० दुष्टनां नीयुं विशुद्धनां भक्ति कोण्टीट्टुमे
कालं कळयाते कण्टु नी राक्षस वंशत्ते रक्षिच्चु कोळ्ळुक साक्षाल्
मुकुन्दनेस्सेविच्चु कोळ्ळुक। सत्यमत्रे ञान् पऱञ्ञतु केवलं पथ्यं
निनक्कितु चिन्तिक्क मानसे। सान्त्वन पूर्वं दशमुखन् तन्नोटु
शान्तनां माल्यवान् वंश रक्षार्त्थमाय् चोन्नतु केट्टु पऱञ्ञु
दशमुखन् पिन्नेयम्माल्यवान् तन्नोटु चोल्लिनान्— मानवनाय

से भिड़ते हैं; वैसे ही साँप रोष से नकुल से झगड़ने को तैयार होते हैं। यही क्या, साँप गरुड़ का सामना करने के लिए कटिबद्ध दिखाई दे रहे हैं। सदा सब कहीं मुण्ड-रूप धारणकर तथा विकराल स्वरूप को अपनाये पिंगल-कृष्ण रंग में यमराज दिखाई दे रहा है। निश्चय ही यह विपत्ति का समय है। जब इतने अपशकुन एक साथ दिखाई दे रहे हैं तब तुरन्त ही शान्ति के उपाय सोच लेने चाहिए। वंश की रक्षा के लिए ही सही निस्संकोच सीता को ले जाकर तुरन्त ही श्रीराम के चरणों पर समर्पित कर (उन्हें) प्रणाम करो। श्रीराम साक्षात् महाविष्णु नारायण हैं। सारा विद्वेष भूलकर अद्वय एवं अव्यय परमात्मा का भजन कर लो। (तुम यह निश्चित जान लो कि) योगी लोग श्रीराम के चरण-रूपी पोत का सहारा लेकर संसार-सागर को पार करते हैं। (राम के प्रति) भक्ति लेकर अन्तःकरण को शुद्ध एवं पवित्र बनाकर ज्ञानी लोग मुक्ति प्राप्त करते हैं। २० नीच पापात्मा तुम भी अब व्यर्थ समय गंवाये बिना, विशुद्ध (राम की) भक्ति को अपनाकर राक्षसवंश की रक्षा कर लो। साक्षात् मुकुन्द की सेवा कर लो। मेरा यह कथन सत्य है। तुम अपने मन में इस (मेरे कथन) को अपने लिए उचित मान लो। वंश की रक्षा के निमित्त शान्तचित्त माल्यवान् ने रावण से जो सांत्वना के वचन कहे उन्हें सुनकर दशमुख ने उस माल्यवान् से कहा—"कृपण

कृपणनां रामनें मानसे मानिप्पतिनेन्तु कारणं ? मक्कटालंबनं तल्ल सामर्त्थ्यमेन्तुळ्ळकाम्पिलोक्कुन्नवन् जळनेत्रयुं । रामन् नियोगिक्कयाल् वन्नितेन्नोटु साम पूर्वं पऴञ्ञु भवान् निर्णयं । नेरत्ते पोयालुमिन्नि वेण्टुन्न नाळ् चारत्तु वोल्लि विट्टुन्नुण्टु निर्णयं । वृद्धन् भवानतिस्निग्धनां मित्रमित्युक्तिकळ् केट्टाल् पौरुत्तु कूटा दृढं । ३० इत्थं पऴञ्ञमात्यन्मारुमाय् दशवक्त्रनुं प्रासाद मूर्द्धनि करेऴिनान् ३१

युद्धारंभम्

वानर सेनयुं कण्टकमे बहुमानवुं कैक्कोण्टिरिक्कुं दशान्तरे युद्धत्तिनाय् रजनीचर वीररैस्सत्वरं तत्र वरुत्ति वाळुं विधौ रावणनेक्कण्टु कोपिच्चु राघव देवनुं सौमित्रियोटु विल् वाङ्ङिनान् । पत्तु किरीटवुं कैकळिरुपतुं वृत्रनोटौत्त शरीरवुं शौर्य्यवुं पत्तु किरीटङ्ङळुं कुटयुं निमिषार्द्धेन खण्डिच्च नेरत्तु रावणन् नाणिच्चु ताळत्तिऴङ्ङि भयं कोण्टु बाणत्ते नोक्कि नोक्किच्चरिच्चीटिनान् । मुख्य प्रहस्त प्रमुख प्रवरन्मारोक्कवे वन्नु

एवं मानव राम का गुणगान करने की तुम्हें कैसे सूझ पड़ी ? मर्कट को अवलंब मानकर चलनेवाला (वह) बड़ा मूढ़ है । राम का उपदेश मानकर आप मुझे यहाँ समझाने आये हैं, यह निश्चित बात है । अब तुरन्त ही वापस जाइये; जरूरत पड़ने पर आदमी भेजकर (आपको) बुला लेंगे । आप भले ही वृद्ध एवं मेरे गुरु हों तो भी (आपके मुँह से) ऐसी बातें मैं सुन नहीं सकता ।" ३० यह कह अमात्यों-सहित दशमुख अपने प्रासाद के ऊपर के कमरे में चला गया । ३१

युद्धारम्भ

रावण (राम की) वानर-सेना को देखकर मन ही मन उसकी प्रशंसा कर रहा था । तुरन्त ही युद्ध के लिए रजनीचर (राक्षस) वीरों को आमन्त्रित किया । इस समय रावण को देख कोपाकुल हो राम ने सौमित्र से धनुष ले लिया । दस किरीट, बीस भुजाओं तथा वृत्रासुर का सा शौर्य एवं वीर्य-युक्त रावण को देखकर राम ने एक बाण का प्रयोग किया, जिसने जाकर आधे पल में उसके दसों किरीट तथा आतपत्र काटकर नीचे गिरा दिये । इससे लज्जित हो रावण नीचे उतरा और रामबाण से भयभीत हो बार-बार पीछे मुड़ देखता हुआ भाग खड़ा

तोळुतोरनन्तरं युद्धमेट्टीटुविन् कोट्टयिलप्पुक्कुटनत्यन्त भीत्या वसिक्कयिल्लत्र ञां। भेरी मृदंगडक्कापण वानक दारुण गोमुखाद्यङ्ङळ् वाद्यङ्ङळुं वारणाश्वोष्ट्र खर हरि शार्दूल सैरिभ स्यन्दन मुख्ययानङ्ङळिल् १० खड्ग शूलेषु चाप प्रास तोमर मुद्गरयष्टि शक्तिच्छुरिकादिकळ् हस्ते धरिच्चु कौण्टस्त भीत्या जवं युद्ध सन्नद्धरायुद्धत बुद्धियो— टब्धिकळद्रिकळुर्वियुं तल्क्षणमुद्धूतमायितु सत्यलोकत्तोळं। वज्रहस्ताशयिल्प्पुक्कान् प्रहस्तनुं वज्रदंष्ट्रन् तथा दक्षिण दिक्किलुं; दुश्च्यवनारियां मेघनादन् तदा पश्चिम गोपुर द्वारि पुक्कीटिनान्। मित्र वर्ग्गामात्य भृत्य जनत्तोटुमुत्तर द्वारि पुक्कान् दशवक्त्रनुं। नीलनुं सेनयुं पूर्वदिग्गोपुरे बालितनयनुं दक्षिणगोपुरे; वायु-तनयनुं पश्चिम गोपुरे माया मनुष्यनामादि नारायणन् मित्र-तनय सौमित्रि विभीषण मित्र संयुक्तनायुत्तर दिक्किलुं। इत्थमुरप्पिच्चु राघव रावण युद्धं प्रवृत्तमाय् वन्तु विचित्रमाय्। २० आयिरं कोटि महाकोटिकळोटुमायिरमर्बुदमायिरं शंखङ्ङळ्,

---

हुआ। उस समय प्रहस्त जैसे मुख्य लोग आज्ञा लेने वहाँ आये तो (रावण ने आज्ञा दी कि) "युद्ध प्रारम्भ किया जाए। भयभीत हो दुर्ग के भीतर बैठनेवाला मैं नहीं हूँ।" तुरन्त ही नगाड़े, निषाण, पटह, मृदंग आदि बाजे बजाते हुए वारण (हाथी), अश्व, ऊँट, गधे, शार्दूल, सिंह, भैंसे, रथ आदि सवारियों पर चढ़कर—१० —तथा खड्ग, शूल, चाप, बाण, भाले, लकड़ी, छुरी आदि आयुध हाथ में लिये राक्षसवीर निर्भय जल्दी-जल्दी कोलाहल मचाते निकल पड़े। तुरन्त ही अब्धि (सागर), अद्रि (पर्वत), उर्वि (पृथ्वी) सब कम्पित हो सत्यलोक तक उद्धित हो उठे। प्रहस्त वज्रहस्ताशा (इन्द्र की दिशा अर्थात् पूर्व दिशा) की तरफ निकल पड़ा, तो वज्रदंष्ट्र ने दक्षिण की राह ली। दुश्च्यवनारि (इन्द्र का शत्रु) मेघनाद पश्चिम के गोपुरद्वार को निकल पड़ा। दशमुख रावण अपने मित्रों, अमात्यों, भृत्यजनों को लिये उत्तर गोपुरद्वार पर पहुँचा। (इधर राम-पक्ष में) सेना-सहित नील पूर्व दिशा के गोपुर में, बालितनय (अंगद) दक्षिण गोपुर के निकट, वायुतनय (हनुमान) पश्चिम द्वार पर तथा मायामनुष्य आदिनारायण मित्रतनय (सुग्रीव), सौमित्र एवं मित्र विभीषण के साथ उत्तर दिशा में (युद्ध के लिए सन्नद्ध हो खड़े हो गये)। इस प्रकार (दोनों ओर की सेनाओं के) खड़े होने पर राम-रावण-युद्ध अद्भुत रूप से चला। २० हजार करोड़, महा

आयिरं पुष्पङ्ङळायिरं कल्पङ्ङळायिरं तोयाकर प्रळयङ्ङ-ळेन्निङ्ङने संख्यकळोटु कलर्न्न कपिबलं लङ्कापुरत्ते वळञ्ञारति द्रुतं। पोट्टिच्चटर्त्त पाषाणङ्ङळेक्कोण्टु मुष्टिकळ् कोण्टु मुसलङ्ङळेक्कोण्टुं उर्वीरुहं कोण्टुमुर्वीधरं कोण्टुं सर्वतो लङ्कापुरं तकर्त्तीटिनार्। कोट्ट मतिलुं किटङ्ङुं तकर्त्तुहन् कूट्टमिट्टार्त्तु विळिच्चटुक्कुन्नेरं वृष्टिपोले शर जालं पोळिकयुं वेट्टुकोण्टट्टु पिळर्न्नु किटक्कयुं; अस्त्रङ्ङळ् शस्त्रङ्ङळ् चक्रङ्ङळ् शक्ति कळर्द्धचन्द्राकारमायुळ्ळ पत्रिकळ्, खड्गङ्ङळ् शूलङ्ङळ् कुन्तङ्ङळीट्टिकळ् मुद्गर पंक्तिकळ् भिण्डिपालङ्ङळुं तोमर मुण्ड मुसलङ्ङळ् मुष्टिकळ् चामीकर प्रभ पूण्ट शतघ्निकळ् ३० उग्रङ्ङळाय वज्रङ्ङळिव कोण्टु निग्रहिच्चीटिनार् नक्तञ्चरेन्द्ररुं। आर्त्तिमुळ्ळुत्तु दशास्यनवस्थकळ् पेर्त्तुमऱिवतिनाययच्चीटिनान् शार्द्दूलनादियाँ रात्रिञ्चरन्मारे रात्रियिल्च्चेन्नारवरुं कपिकळाय्। मर्क्कटेन्द्रन्मारऱिञ्ञु पिटिच्चटिच्चुल्ककट रोषेण कोल्वान् तुटङ्ङुम्पोळ् आर्त्तनादं केट्टु राघवनुं करुणार्द्र बुद्ध्या कोट्टु-त्तानभयं द्रुतं। चेन्नवरुं शुक सारणरेप्पोले चोन्नतु केट्टु

करोड़, हज़ार अर्बुद, हज़ार शंख, हज़ार पुष्प, हज़ार कल्प, हज़ार दण्ड, हज़ार धूलि, हज़ार प्रलय (कोटि, महाकोटि, अर्बुद, शंख, पुष्प, कल्प, दण्ड, धूलि और प्रलय ये संख्यासूचक शब्द हैं) आदि संख्याओं से युक्त कपिबल (वानर सेना) ने तुरन्त ही लंकापुरी को घेर लिया। तोड़ लाये पाषाणों, मुष्टियों, मुसलों, उर्वीरुह (वृक्षों) और उर्वीधर (पर्वतों) आदि के प्रहारों से (उन्होंने) लंकापुरी को तहस-नहस कर डाला। दुर्गों, खाइयों, गढ़ों को तोड़कर जब वानर अट्टहास भरते आगे बढ़ने लगे तब राक्षस लोग शरवृष्टि करने लगे। अस्त्र, शस्त्र, चक्र, शक्ति, अर्द्ध-चन्द्राकार बाण, खड्ग, शूल, भाले, मुद्गर आदि, तोमर, मुंड, मुसल, मृष्टि, चामीकर की शोभावाले शतघ्नी,—३० —उग्र एवं कठोर वज्र आदि आयुधों से रात्रिचर (वानरों को) धराशायी करने लगे। (वानरों के अपार बल से) भयातुर रावण ने युद्ध की हालत का पता लगाकर आने के लिए शार्दूल आदि राक्षसवीरों को (गुप्त रूप से) भेजा। वे कपिवेष में रात के समय आ पहुँचे तो वानर लोग उन्हें पहचान लेकर अत्यन्त क्रोधातुर हो मारने लगे। उनका आर्तनाद सुनकर करुणानिधि रामचन्द्र ने तुरन्त ही उन्हें अभय-दान दिया। जब वे भी वापस आकर शुक-सारण के जैसे ही (राम को ईश्वर आदि) कहने लगे तब रावण

विषादेन रावणन् मन्त्रिच्चुटन् विद्युज्जिह्वनुमाय् दशकन्धरन् मैथिलि वाळुमिटं पुक्कान्। राम शिरस्सुं धनुस्सुमितॆन्नुटन् वामाक्षि मुन्निलाम्मारु चेर्त्तीटिनान्। आयोधने कॊन्नु कॊण्टु पोन्नॆन्नु मायया निर्म्मिच्चुवच्चतु कण्टप्पोळ् सत्यमॆन्नोर्त्तु विलापिच्चु मोहिच्चु मुग्धांगि वीणु किटक्कुं दशान्तरे ४० वन्नोरु दूतन् विरवोटु रावणन् तन्नॆयुं कॊण्टु पोन्नीटिनानन्नेरं। वैदेहि तन्नोटु चॊन्नाळ् सरमयुं खेदमशेषमकलॆक्कळक नी। ऎल्लां चतियॆन्नु तेरीटितॊक्कवे नल्लवण्णं वरुं नालु नाळुळ्ळिलिङ्ङल्लोरु संशयं कल्याण देवते! वल्लभन् कॊल्लुं दशास्यनॆ निर्णयं। इत्थं सरमा सरस वाक्यं केट्टु चित्तं तॆळिञ्ञिरुन्नीटिनाळ् सीतयुं। मंगल देवता वल्लभाज्ञावशालंगदन् रावणन् तन्नोटु चॊल्लिनान्— ऒन्नुकिल् सीतयॆक्कॊण्टु वन्नॆन्नुटॆ मुन्निलाम्मारु वच्चीटुक वैकातॆ; युद्धत्तिनाय्प्पुरप्पॆट्टुकल्लाय्किलत्तल् पूण्टुळ्ळलटच्चङ्ङिरिक्किलुं राक्षस सेनयुं लङ्कानगरवुं राक्षस राजनां निन्नोटु कूटवे संहरिच्चीटुवन् बाणमॆय्तॆन्नुळ्ळ सिंहनादं केट्टतिल्लयो रावण! । ५० ज्यानाद घोषवुं केट्टतिल्ले भवान्

विषादमग्न हुआ। विद्युज्जिह्व से मंत्रणा करके दशानन सीताजी के निवास-स्थान की ओर गया। और सीता से कहा—"राम का मस्तक और राम का धनुष यहाँ देख लो।" मैं युद्ध में राम को मारकर ये दोनों ले आया हूँ। यह कहते हुए उसने माया से निर्मित दोनों (मस्तक और धनुष) सीता की ओर बढ़ाये। उन्हें देख सत्य-मान रो-रोकर वह सुन्दरी विमूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ी। ४० तब भाग्यवश एक दूत आकर रावण को वहाँ से ले चला। तब सरमा (विभीषण की पत्नी) ने वैदेही से कहा—"आप अपना सन्ताप छोड़ दीजिए। यह सब छल जान लीजिए। हे मंगल-स्वरूपिणी! चार दिन के भीतर आपका भाग्य चमकेगा। आपके पति दशास्य को निस्सन्देह मार डालेंगे।" सरमा के इस सरस वचन को सुनकर सीता का दुख दूर हुआ और उनका मन खिल उठा। बाद में मंगलमयी देवी के वल्लभ (राम) की आज्ञा से अंगद ने आकर रावण को बताया—"या तो सीता को मेरे सम्मुख ला रखो या युद्ध के लिए निकलो। इस प्रकार भयभीत हो कमरा बन्द करके बैठने पर भी राक्षसराज! तुम्हारे साथ राक्षस-सेना तथा लंकानगरी भस्मीभूत कर दूँगा। हे रावण! क्या तुमने (राम का) यह सिंहनाद नहीं सुना? ५० धनुष की टंकार नहीं सुनी? क्या तुम्हें मन में लज्जा

त्ताणं त्तिनक्केतुमिल्लयो मानसे । इत्थमधिक्षेप वाक्यङ्ङ्ळ् केट्टति क्रुद्धनायोरु रात्रिञ्चर वीरनुं वृत्रारि पुत्र तनयनेक्कोलूकेन्नु नक्तञ्चराधिपन्मारोटु चोल्लिनान् । चेन्नु पिटिच्चार् निशाचर वीररुं कोन्नु चुळट्टियेरिञ्ञान् कपीन्द्रनुं । पिन्नेयप्रासादवुं तकर्त्तीटिनानोन्नु कुतिच्चङ्ङुयर्न्नु वेगेन पोय् मन्नवन् तन्नेत्तोळुतु वृत्तान्तङ्ङ्ळोन्नोळियातेयुणर्त्तिनानंगदन् । पिन्ने सुषेणन् मुकुन्दन् नळन् गजन् धन्यन् गवयन् गवाक्षन् मरुल् सुतन् एन्निवरादियां वानर वीरन्मार् चेन्नु चुळन्नु किटङ्ङु त्तिरत्तिनार् । कल्लुं मलयुं मरवुं धरिच्चाशु निल्लु निल्लेन्नाशु पऱञ्ञटुक्कुन्नेरं बाण चापङ्ङ्ळुं वाळुं परिचयुं प्राणभयं वरुं वेण्मळु कुन्तवुं ६० दण्डङ्ङ्ळुं मुसलङ्ङ्ळ् गदकळुं भिण्डिपालङ्ङ्ळुं मुद्गर जालवुं चक्रङ्ङ्ळुं परिघङ्ङ्ळु मीट्टिकळ् सुक्र कवचङ्ङ्ळुं मट्टुमित्यादिकळ् आयुधमेल्लामेट्टु पिटिच्चु कोण्टायोधनत्तिन्नटुत्ताररक्करुं । वारणनादवुं वाजिकळ् नादवुं तेरुकळ् नादवुं ञाणोलि नादवुं राक्षसराक्कयुं सिहनादङ्ङ्ळुं रूक्षतयेरुं कपिकळ् निनादवुं तिङ्ङिमुळङ्ङिप्पुळङ्ङि प्रपञ्चवु मेङ्ङुमिट तूर्न्नु माट्टोलिक्कोण्टुते । जंभारि मुम्पां निलिम्परुं किन्नर किंपुरुषोरग गुह्यक

नहीं आ रही है ?" इस प्रकार के परुष वचन सुनकर अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे रात्रिचर वीर (रावण) ने वृत्रारि-पुत्र (बालि) के तनय (अंगद) को मारने की राक्षस वीरों को आज्ञा दी। निशाचर नायकों ने जाकर (अंगद को) घेर कर पकड़ा तो अंगद ने उन्हें दूर पटक दिया। फिर उस प्रासाद को भी नष्ट करके उछल कर जल्दी ही श्रीराम जी के निकट आकर अंगद ने प्रणाम किया और बिना कुछ छूटे, सारा हाल राम को सुना दिया। (फिर युद्ध आरंभ हुआ) सुषेण, मुकुन्द, नल, गज, धन्य, गवय, गवाक्ष, वायुपुत्र (हनुमान) जैसे वानर वीरों ने जाकर सारी खाइयाँ पाट दीं। फिर पत्थर, चट्टान, वृक्ष आदि हाथ में उठाये 'ठहर जा, ठहर जा' कहते हुए (उनके) आगे बढ़ने पर, धनुष-बाण, खड्ग, ढाल, प्राणघातक कुल्हाड़े, भाले, ६० —दण्ड, मुसल, गदाएँ, मुद्गर, चक्र, परिघ, सुक्रकच (तेज़ तलवार) आदि अन्य आयुध सब लिये युद्ध के लिए राक्षस भी आगे बढ़े। फिर हाथियों के चिंघाड़ने, घोड़ों के हिनहिनाने के निनाद, रथों की घरघर ध्वनि, धनुष की टंकार, राक्षसों की खलबली एवं सिंहनाद, वानरों के रुक्ष निनाद आदियों, प्रतिध्वनियों से पूरा प्रपंच ही गुंजित तथा कंपित हो उठा। इन्द्र आदि देव, किन्नर, किंपुरुष, उरग

संघवुं गन्धर्व सिद्ध विद्याधर चारणाद्यन्तरीक्षान्तरे सञ्चरिक्कुं जनं नारदनादिकळाय मुनिकळुं घोरमायुळ्ळ युद्धं कण्टु कोळ्ळुवान् नारिकलोटुं विमान यानङ्ङळिलारुह्य पुष्करान्ते तिरञ्ञी-टिनार्। ७० तुंगनामिन्द्रजित्तेट्टानतु नेरमंगदन् तन्नोटतिन्नु कपीन्द्रनुं सूतनेक्कोन्नु तेरुं तकर्त्तान् मेघनादनुं मट्टोरु तेरिलेट्टीटिनान्। मारुति तन्ने वेल्कोण्टु चाट्टीटिनान् धीरनाकुं जंबुमालि निशाचरन्। सारथि तन्नोटु कूटवे मारुति तेरुं तकर्त्तवनेक्कोन्नलरिनान्। मित्र तनयन् प्रहस्तनोटेट्टितु मित्रारियोटु विभीषण वीरनुं। नीलन् निकुंभनोटेट्टान् तपननेक्कालपुरत्तिनयच्चान् महागजन्। लक्ष्मणनेट्टान् विरूपाक्षनोटथ लक्ष्मीपतिया रघूत्तमन् तन्नोटुं रक्षध्वजाग्निध्वजादिकळ् पत्तु पेर् तल्क्षणे पोर् चेय्तु पुक्कार् सुरालयं। वानरन्मार्क्कु जयं वन्नितत्तेरं भानुवुं वारिधि तन्निल् वीणीटिनान्। इन्द्रात्मजात्मजनोटेट्टु तोटु पोयिन्द्रजित्तंबरान्ते मरञ्ञीटिनान्। ८० नागास्त्रमेय्तु मोहिप्पिच्चितु बत राघवन्मारेयुं वानरन्मारेयुं। वन्न कपिकळेयुं नरन्मारेयुमोन्नोळियाते जयिच्चे-नितेन्नवन् वेन्निप्पेरुम्परु कोट्टिच्चु मेळिच्चु चेन्नु लङ्कापुरं

(नाग), गुह्यक संघ (यक्ष जाति के लोग), गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर, चारण आदि आकाशगामी जन, नारद आदि मुनिश्रेष्ठ, घोर युद्ध देखने के लिए, अपनी-अपनी स्त्रियों सहित विमान आदि यानों में सवार हो आकाश मार्ग में आ पहुँचे। ७० युद्ध में अतीव समर्थ इन्द्रजीत ने आकर अंगद से टक्कर ली तो कपीन्द्र (अंगद) ने सूत की हत्या की और रथ नष्ट कर डाला। तुरन्त मेघनाद दूसरे रथ पर सवार हुआ और फिर युद्ध आरंभ किया। जंबुमाली नामक राक्षक ने आकर मारुति पर एक बाण मारा। सारथी एवं रथ के साथ उसका वध करके मारुति ने एक गर्जना की। मित्र-तनय (सुग्रीव) ने प्रहस्त का तथा विभीषण ने मित्रारि का, नील ने निकुंभ का सामना किया। महागज ने तपन नामक राक्षस को यमपुरी भेज दिया। लक्ष्मण ने विरूपाक्ष से टक्कर ली। लक्ष्मीपति राम का सामना करते हुए रक्षध्वज, अग्निध्वज आदि दस राक्षसों ने तुरन्त ही सुरालय की राह ली। जब भानु (सूर्य) समुद्र में गिर पड़ा (संध्या हुई) तब तक विजय वानरों के पक्ष में रही। इन्द्रात्मज (बालि) के आत्मज (अंगद) से युद्ध करके पराजित हो इन्द्रजीत ने आकाश में अदृश्य हो— ८० —नागास्त्र का प्रयोग करके राम-लक्ष्मण तथा वानरों को विमूर्छित कर दिया। सामने आये सभी मनुष्यों, वानरों को बिना किसी

तन्निल् मेवीटिनान् । तापसवृन्दवुं देव समूहवुं तापं कलर्न्नु विभीषण वीरनुं । हा हा! विषादेन दुःख विषण्णराय् मोहितन्माराय् मरुवुं दशान्तरे सप्तद्वीपङ्ङळुं सप्तार्ण्णवङ्ङळुं सप्ताचलङ्ङळुमुल्क्षोभमां वण्णं सप्ताश्व कोटि तेजोमयनाय् सुवर्ण्णाद्रिपोले पवनाशननाशनन् अब्धितोयं द्विधाभित्वा स्वपक्षयुग्मोद्धूत लोकत्रयत्तोटति द्रुतं नागारि रामपादं वणङ्ङीटिनान् नागास्त्र बन्धनं तीर्न्नितु तल्क्षणे । शाखा मृगङ्ङळुमस्त्र निर्म्मुक्तराय् शोकवुं तीर्न्नु तेळिञ्ञु विळङ्ङिनार् । ९० भक्तप्रियन् मुदा पक्षि प्रवरनु बद्ध सम्मोदमनुग्रहं नल्किनान् । कूप्पित्तोळुतनुवादवुं-क्कैक्कोण्टु मेल्पोट्टु पोय् मरञ्ञान् तार्क्ष्यनुं । मुन्नेतिलुं बल वीर्य्य वेगङ्ङळ् पूण्टुन्नतन्मारां कपिवरन्मारेल्लां मन्नवन् तन् नियोगेन मरङ्ङळुं कुन्नुं शिलयुमेंटुत्तेरिञ्ञीटिनार् । वन्न शत्रुवकळेक्कोन्नु ममात्मजन् मन्दिरं पुक्किरिक्कुन्नतिन् मुन्नमे वन्नारवरुमिङ्ङेन्तोरु विस्मयं नन्नु नन्नेत्रयुमेन्ने पऱयावू । चेन्नरिञ्ञीटुविनेन्तोरु घोषमितेन्नु दशाननन् चोन्नोरनन्तरं चेन्नु

अन्तर के मैंने जीत लिया, यह डींग हाँकता हुआ तथा दुंदुभी बजाकर घोषित करता हुआ वह लंका में आ बैठा । (राम-लक्ष्मण तथा वानरों को मूर्छित देखकर) तापसवृन्द, देववृन्द तथा विभीषण अत्यधिक उदास एवं खिन्न हुए । हाहाकार करके दुख-विषाद से उदासीन हो जब वे बैठे थे तब सप्तद्वीप, सप्तसमुद्र एवं सप्ताचल को कंपित करता हुआ, सप्ताश्व कोटि तेजोमय (कोटि सूर्यों की कांतिवाला) सुवर्णाद्रि (कनक पर्वत) के समान प्रभापूर्ण सर्पों का शत्रु गरुड़ अपने पंखों की गति से समस्त प्रपंच को कंपित करता सा तथा सागर-जल को द्विधारा में प्रवाहित करता हुआ आविर्भूत हुआ । उसने राम-पादों पर प्रणाम किया । तुरन्त ही (गरुड़ के प्रभाव से) नागास्त्र का बंधन छूट गया । शाखामृग (वानर) नागास्त्र के बंधन से विमुक्त हो प्रसन्न हो उठे । ९० भक्तप्रिय (राम) ने प्रसन्न हो तुरन्त ही पक्षिराज को अनुगृहीत किया और आशीर्वचन दिये । हाथ जोड़ प्रणाम करके राम की अनुमति लेकर गरुड़ आकाश की ओर उड़ता हुआ अदृश्य हो गया । उन्नत एवं भीमाकार कपिवर पहले से अधिक बल-वीर्य से युक्त हो, राजा राम की आज्ञा लेकर वृक्ष, चट्टानें, शिलाएँ आदि लेकर (लंका की ओर) मारने लगे । यह देखकर रावण कहने लगा कि "आये हुए वानरों को मारकर मेरा पुत्र (इन्द्रजीत) अभी महल में लौटा ही नहीं कि वे पुनः जीवित हो (आक्रमण करने) आ गये । यह

दूतन्मारङ्ङ्ङु दशाननन् तन्नोटु चौल्लिनार् वृत्तान्तमोक्कवे। वीर्य्यं बल विक्रमं कैक्कौण्टु सूर्य्यात्मादिकळाय कपिकुलं हस्तङ्ङळ् तोरुमलातवुं कैक्कोण्टु भित्तितन्नुत्तमांगत्तिन्मेल् निल्क्कुन्नोर् ।१०० ञाणमुण्टङ्किल् पुऱत्तु पुऱप्पेट्टु काणुङ्ङळेङ्किलेन्नार्त्तु पऱकयुं केट्टतिल्ले भवानेन्नवर् चौन्नतु केट्टु दशास्यनुं कोपेन चौल्लिनान्— मानवन्मारेयु मेट़मदमुळ्ळ वानरन्मारेयुं कौन्नीटुक्कीटुवान् पोक धूम्राक्षन् पटयोटु कूटवे वेगन युद्धं जयिच्चु वरिक नी। इत्थमनुग्रहं चैय्तयच्चानति क्रुद्धनां धूम्राक्षनुं नटन्नीटिनान्। उच्चैस्तरमाय वाद्य घोषत्तोटुं पश्चिम गोपुरत्तूटॆप्पुऱप्पेट्टान्। मारुति योटेतिर्त्तनिवनुं चैन्नु दारुणमायितु युद्धवुमेन्नयुं। वेलसिवेण्मेळ्कुन्तं शरासनं शूलं मुसलं परिघ गदादिकळ् कैक्कौण्टु वारण वाजिरथङ्ङळिलुळ्ळकरुत्तोटेऱि राक्षस वीररुं। कल्लुं मरवुं मलयुमाय्प्पर्वत तुल्य शरीरिकळाय कपिकळुं ११० तङ्ङळिलेट्टु पौरुतु मरिच्चितोट्टङ्ङुमिङ्ङुं महावीररायुळ्ळवर्। चोरयुमाऱायोळुक्किप्पलवळि शूर प्रवरनां मारुति तल्क्षणे उन्नत-

कौन सा आश्चर्य है! यह बड़ी ही विचित्र बात हुई! (हे दूत!) तुम जाकर पता लगाओ कि यह कौन सा घोष सुनाई दे रहा है।" दशानन के यह कहते ही जाकर पता लगाकर आये दूतों ने दशानन को सारा समाचार कह सुनाया— "वीर्य-बल-पराक्रमशाली सूर्यात्मज (सुग्रीव) आदि वानर अपने हाथ में अलात (अग्नि के शोले) लिये दीवारों के ऊपर आ खड़े हैं। वे कह रहे हैं— १०० —कि स्वाभिमानी हो तो बाहर निकल आओ। यह कहते हुए वे अट्टहास कर रहे हैं। क्या आप (उनकी बात) नहीं सुन रहे हैं?" यह सुनकर क्रुद्ध दशानन ने कहा— "हे धूम्राक्ष! मानवों (राम-लक्ष्मण) तथा गर्वीले वानरों का वध करने के लिए तुम सेना सहित तुरन्त निकल पड़ो। युद्ध में विजयी बन जाओ।" यह कहकर (रावण ने) धूम्राक्ष को भेज दिया। अत्यन्त क्रुद्ध हो धूम्राक्ष (युद्ध के लिए) चल पड़ा। उच्च वाद्य-घोषों के साथ (वह) पश्चिम-गोपुर-द्वार से निकला और मारुति का सामना किया। (दोनों में) भयंकर युद्ध हुआ। शर, असि, कुल्हाड़ी, भाले, धनुष, शूल, मुसल, परिघ, गदा आदि आयुधधारी राक्षस वारण (हाथी), घोड़े, रथ आदि पर सवार हो युद्ध करने लगे। पत्थर, वृक्ष, चट्टान, आदि उठा-उठाकर पर्वताकार वानरों ने भी— ११० —(राक्षसों पर) आक्रमण किया। दोनों पक्षों के अनेक वीर योद्धा मारे गये। खून की नदियाँ खूब बहीं।

मायौरु कुन्निन् कौटुमुटि तन्ने यटर्त्तुटुत्तोन्नेरिञ्ञीटिनान् ।
तेरिल निन्नाशु गदयुमेंटुत्तुटन् पारिलाम्मारु धूम्राक्षनुं चाटिनान् ।
तेरुं कुतिरकळुं पौटियायितु मारुतिक्कुळ्ळिल् वर्द्धिच्चितु कोपवुं ।
रात्रिञ्चररेयोटुक्किकत्तुटङ्ङिनार्त्ति मुळ्त्ततु कण्टु धूम्राक्षनुं
मारुतियेगदकौण्टटिच्चीटिनान् धीरतयोटतिनाकुलमेन्निये पारं
वळर्त्तोरु कोप विवशनाय् मारुति रण्टामतोन्नेरिञ्ञीटिनान् ।
धूम्राक्षनेरु कौण्टुम्पर् पुरत्तिङ्कलाम्मारु चेन्नु सुखिच्चु वाणीटिनान्।
शेषिच्च राक्षसर् कोट्टयिल् पुक्कितु घोषिच्चितंगनमार् विलाप-
ङ्ङळुं । १२० वृत्तान्तमाहन्त ! केट्टु दशास्यनुं चित्ततापत्तोटु
पिन्नेयुं चौल्लिनान्— वज्रहस्तारि प्रवरन् महाबलन् वज्रदंष्ट्रन्
तन्ने पोक युद्धत्तिनाय् । मानुष वानरम्मारेज्जयिच्चभिमान
कीर्त्या वरिकेन्नयच्चीटिनान् । दक्षिण गोपुरत्तूटेप्पुरप्पेट्टु
शक्रात्मजात्मनोटेतिर्त्तीटिनान् । दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतनादृत्य
चेन्न कपिकळोटेट्टु महाबलन् । वृक्षशिला शैल वृष्टि कौण्टेट्टवुं
रक्षोवरन्मार् मरिच्चु महारणे । खड्ग शस्त्रास्त्र शक्त्यादि-
कळेट्टु मर्क्कटन्मारुं मरिच्चारसंख्यमाय् । पत्तंग युक्तमायुळ्ळ

तुरन्त ही मारुति ने एक चट्टान का उन्नत शिखर तोड़कर उसे ज़ोर से फेंका तो धूम्राक्ष हाथ में गदा लिये रथ से नीचे भूमि पर कूद पड़ा। (धूम्राक्ष के) रथ, घोड़े सब के सब नष्ट हुए। मारुति के मन में क्रोध बढ़ गया और (वे) राक्षसों का खूब हनन करते गये। यह देखकर धूम्राक्ष के मन में भय उत्पन्न हुआ। (उसने) मारुति पर गदा दे मारी। (इस प्रहार से) अनाकुल मारुति ने अत्यधिक क्रोधातुर हो दूसरा एक शिखर भी तोड़कर (उस पर) मारा। उसके लगते ही धूम्राक्ष स्वर्ग-लोक में पहुँच गया (मर गया)। जो राक्षस बचे थे, वे दुर्ग के अन्दर भाग गये। सारी (राक्षस-) नारियाँ विलाप करने लगीं। १२० अत्यन्त दुख-समन्वित यह समाचार पाकर दुखी हो उठे रावण ने वज्रहस्तारि प्रवर (बड़े बलशाली इन्द्र-शत्रु) महाबली वज्रदंष्ट्र को युद्ध के लिए जाने की आज्ञा दी। मानवों (राम-लक्ष्मण) एवं वानरों को जीतकर आने का आशीर्वाद देकर उसे भेजा गया। दक्षिण गोपुर-द्वार से निकलकर वह शक्रात्मज (बालि) के पुत्र (अंगद) से भिड़ गया। रास्ते में जो-जो अपशकुन दिखाई दिये, उनपर ध्यान दिये बिना, महाबली (वह) कपिवरों से युद्ध करने लगा। वृक्ष, शिला, शैल आदि की वृष्टि से युद्ध में कई राक्षसवीर मर गये। (राक्षसों के) खड्ग, शस्त्रास्त्र, शक्ति आदि के

पॆरुम्पट नक्तञ्चरन्माक्कुं नष्टमाय् वन्नितु। रक्त नदि कळॊलिच्चु पलवऴि नृत्तं तुटङ्ङी कबन्धङ्ङळुं बलाल्। तारेयनुं वज्रदंष्ट्रनुं तङ्ङलिल् घोरमायेटं पिणङ्ङि निल्कुं विधौ १३० वाळुं पऱिच्चुटन् वज्रदंष्ट्रन् गळनाळं मुऱिच्चॆऱिञ्ञीटिनानंगदन्। अक्कथ केट्टाशु नक्तञ्चराधिपनुळ्क्करुत्तेरुमकम्पनन् तन्नॆयुं वन् पटयोटुमयच्चानतु नेरं कम्पमुण्टायितु मेदिनिक्कन्नेरं। दुश्च्यवनारि प्रवरनकम्पनन् पश्चिम गोपुरत्तूटॆ पुऱप्पॆट्टान्। वायुतनयनोटेट्टवनुं निज कायं वॆटिञ्ञु कालालंय मेविनान्। मारुतियॆस्तुतिच्चु महालोकरुं पारं भयं पॆरुत्तु दशकण्ठनुं। सञ्चरिच्चान् निज राक्षस सेनयिल् पञ्चद्वयास्यनुं कण्टानतु नेरं रामेश्वरत्तोटु सेतुविन्मेलुमारामदेशान्तं सुबेलाचलोपरि वानर सेन परन्नतुं कोट्टकळूनमाय् वन्नतुं कण्टोरनन्तरं क्षिप्रं प्रहस्तनॆ कोण्टु वरिकॆन्नु कल्पिच्च नेरमवन् वन्नु कूप्पिनान्। १४० नीयऱिञ्ञीलयो वृत्तान्तमॊक्कवे नायकन्मार् पटय्क्कारुमिल्लाय्कयो।

वार से असंख्य कपिवर भी मारे गये। दशांगयुक्त (मूलबन्धु सुहृद्राष्ट सामन्त वनवासिनां, रथाश्व गज पत्तीनां दशांग बलमुच्यते। अर्थात् मूलबल, बन्धुबल, सुहृद्बल, राज्यवासियों का बल, अधीनस्थ राजाओं का बल, वनवासियों का बल, रथ, घोड़े, हाथी और पैदल इनके बल) विशाल सेना राक्षसों की नष्ट हुई। रक्त की नदियाँ कई धाराओं में बह निकलीं; कबन्ध नाचने लगे। जब तारेय (अंगद) और वज्रदंष्ट्र परस्पर गाढ़ शत्रुता लिये लड़ रहे थे—१३० —तब अंगद ने उसके हाथ का खड्ग खींच लिया और उसी खड्ग से उसका गला काटकर दूर फेंक दिया। यह समाचार सुनकर दशानन ने अत्यधिक बलशाली अकंपन को विशाल सेना सहित तुरन्त युद्ध के लिए भेज दिया तो उस समय स्वयं पृथ्वी कम्पित हो उठी। दुश्चवनारि प्रवर (इन्द्र-शत्रुओं में प्रमुख) अकंपन पश्चिम गोपुर-द्वार से युद्ध के लिए बाहर निकल आया। वायु-तनय (हनुमान) का मुकाबला करता हुआ वह अपनी काया छोड़कर कालालय (यमपुरी) पहुँच गया। साधुजनों ने हनुमान की स्तुति की। दशानन के मन में भय बढ़ गया। दशानन अपनी सेना के बीच से चल पड़ा तो उसने रामेश्वर से लेकर अपने अशोकवन तक तथा सुबेलाचल और सेतुबंध पर परिव्याप्त विशाल वानर-सेना एवं अपने टूटे हुए दुर्गों को देखा तो तुरन्त ही प्रहस्त को बुला लाने की आज्ञा दी। आज्ञा पाकर प्रहस्त उपस्थित हुआ। १४० (रावण ने पूछा) तुमने सारा हाल सुन ही लिया होगा।

चेल्लुन्न चेल्लुन्न राक्षसवीररेक्कोल्लुन्नतुं कण्टिरिक्कयिल्लिङ्ङु ञां। ञानो भवानो कनिष्ठनो पोर् चेय्तु मानुष वानरन्मारे योट्टुक्कुवान् पोकुन्नतारेन्नु चोल्केन्नु केट्टवन् पोकुन्नतिन्नु ञानेन्नु कैकूप्पिनान्। तन्नुटे मन्त्रिकळ् नालु पेरुळ्ळवर् चेन्नु नालंगप्पटयुं वरुत्तिनार्। नालोन्नु लङ्कयिलुळ्ळ पटय्क्केल्लामालंबनमां प्रहस्तन् महारथन् कुंभहनुं महानादनुं दुर्म्मुखन् जंभारिवैरियां वीरन् समुन्नतन्, इङ्ङनेयुळ्ळोरु मन्त्रिकळ् नाल्वरुं तिङ्ङिङ्ङन वम्पटयोटुं नटन्नितु। दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतु कण्टवर् तन्नकतारिलुरच्चु सन्नद्धराय् पूर्वपुरद्वार देशे पुरप्पेट्टु पावकपुत्रनोटेटोरनन्तरं १५० मक्र्कटन्मार् शिला वृक्षाचलं कोण्टु रक्षोगणत्तेयोट्टुक्कित्तुटङ्ङिनार्। चक्र खड्ग प्रासशक्ति शस्त्रास्त्रङ्ङळ् मक्र्कटन्माक्कुंमेट्टोक्के मरिक्कुन्नु। हस्तिवरन्मारुमश्वङ्ङळुं चत्तु रक्तनदिकळायोक्केयोलिक्कुन्नु; अंभोज संभवनन्दनन् जांबवान् कुंभहनुविनेयुं दुर्म्मुखनेयुं कोन्नु महानादनेयुं समुन्नतन् तन्नेयुं पिन्ने प्रहस्तन् महारथन् नीलनोटेट्टुटन् द्वन्द्वयुद्धं चेय्तु कालपुरि

क्या हमारी सेना का कोई नायक नहीं रहा ? जो-जो नायक युद्ध के लिए जा पहुँचते हैं, उन्हें (वानर-सेना) मारती जा रही है। यह देखता हुआ मैं अब चुप नहीं रह सकता। अब मानवों तथा वानर-सेना को समाप्त करने के लिए मैं, तुम और कनिष्ठ (कुंभकर्ण), तीनों में से कौन जाएगा, यह तुम सोचकर बताओ। यह सुनकर उसने हाथ जोड़कर कहा कि आज मैं ही (युद्ध के लिए) जाऊँगा। प्रहस्त के चारों मंत्री (कुंभह, महानाद, दुर्मुख और समुन्नत) अपनी चतुरंग सेना ले उपस्थित हुए। लंका की समस्त सेना के चतुर्थांश का नायक तो प्रहस्त ही था। महारथी प्रहस्त अपने चारों मंत्री कुंभह, महानाद, दुर्मुख और इन्द्र के घोर शत्रु समुन्नत और विशाल सेना लेकर आगे बढ़ा। मार्ग में कई अपशकुन देख अपने मन में निश्चय लेकर (मृत्यु को अवश्यंभावी जानकर) और उसके लिए स्वयं सन्नद्ध हो पूर्व गोपुरद्वार से बाहर आ पावक-पुत्र (नील) से लड़ने लगा। १५० मर्कटों ने शिला, पत्थर, अचल आदि उठा-उठाकर मार-मारकर रक्षोगण को समाप्त करने का उपक्रम किया। चक्र, खड्ग, शक्ति आदि शस्त्रास्त्रों के लगने से मर्कट लोग भी मरकर नीचे गिर पड़ने लगे। हस्ति (हाथी) अश्व आदि भी नीचे गिरते गये। खून की धाराएँ प्रवाहित हुईं। अंभोजसंभव (ब्रह्मा) के नन्दन जांबवान् ने कुंभह और दुर्मुख को मारा तो महानाद, समुन्नत तथा महारथी प्रहस्त नील के

पुक्किरुन्नरुळीटिनान् । सेनापतियुं पटयुं मरिच्चतु मानियां रावणन् केट्टु कोपान्धनाय् । १५७

युद्धत्तिनु रावणन्द्रे पुऱप्पाटु

आरेयुं पोरिन्नयय्क्कुन्निल्लिनि ञेरे पौरुतु जयिक्कुन्नतुण्टल्लो । ञम्मोटु कूटेयुळ्ळोर्कळ् पोन्नीटुक ञम्मुटे तेरुं वरुत्तुकेन्नानवन् । वेण्मति पोले कुटयुं पिटिप्पिच्चु पोन्मयमायोरु तेरिल्क्करेट्रिनान् । आलवट्टङ्ङळुं वेण् चामरङ्ङळुं नीलत्तळकळुं मुत्तुक्कुटकळुं आयिरं वाजिकळेक्कोण्टु पूट्टिय वायुवेगं पूण्ट तेरिल्क्करयेट्रि; मेरु शिखरङ्ङळ् पोले किरीटङ्ङळ् हारङ्ङळादियामाभरणङ्ङळुं पत्तु मुखवुमिरुपत्तु कैकळुं हस्तङ्ङळिल् चाप बाणायुधङ्ङळुं नीलाद्रि पोले निशाचर नायकन् कोलाहलत्तोटु कूटेप्पुऱप्पेट्टान् । लङ्कयिलुळ्ळ महारथन्मारेल्लां शङ्कारहितं पुऱप्पेट्टारन्नेरं । मक्कळुं मन्त्रिकळ् तम्पिमारुं मरुमक्कळुं बन्धुक्कळुं सैन्यपालरुं १० तिक्कित्तिरक्कि वटक्कु भागत्तुळ्ळ मुख्यमां गोपुरत्तूटे तेरुतेरे; विक्रममेरिय

सामने आकर द्वन्द्व युद्ध करते हुए यमपुरी पहुँच गये । सेनापतियों तथा सेना की मृत्यु का समाचार सुनकर रावण क्रोध से अन्धा हो गया । १५७

युद्ध के लिए रावण का गमन

(रावण ने निश्चय किया कि) अब और किसी को युद्ध के लिए नहीं भेजूँगा; स्वयं लड़कर अब विजय पाऊँगा । उसने आज्ञा दी कि रथ लाया जाए तथा मेरे साथ आने के लिए तैयार लोग भी साथ चलें । श्वेत छत्र से समालंकृत कनक-निर्मित रथ पर (रावण) सवार हुआ । चामर, छत्र आदि राजचिह्नों से सुशोभित सहस्र अश्वजुत वायुवेग से युक्त रथ पर सवार हो, मेरुशिखरों के समान किरीट, हार आदि आभूषण, दशमुख, बीस भुजाएँ और हाथों में चाप-बाण आदि आयुध—इस प्रकार सब प्रकार से नीलपर्वत के समान दिखाई देनेवाला निशाचर-नायक कोलाहल के साथ निकल पड़ा । यह देख लंका में जीवित बचे सभी महारथी लोग भी निर्भय उसके पीछे चल पड़े । पुत्र लोग, मंत्रि लोग, भ्राता-लोग, भानजे-भतीजे, सगे-संबंधी, सेनानायक—१० इस प्रकार भीड़-भाड़ से युक्त राक्षस सेना की विशाल पंक्ति को उत्तर दिशा के मुख्य गोपुर-द्वार से निकलकर पुरोभाग (सामने) को आते देखकर मंद मुस्कान

नक्तञ्चरन्मारेयौक्कॆप्पुरो भुवि कण्टु रघुवरन् मन्दस्मितं चॆय्तु
नेत्रान्त संज्ञया मन्दं विभीषणन् तन्नोटरुळ् चॆय्तु— ऩल्ल वीरन्मार्
वरुन्नतु काणॆंटो ! चौल्लेणमॆन्नोटिवरॆ यथागुणं । ऎन्नतु केट्टु
विभीषणन् राघवन् तन्नोटु मन्दस्मितं चॆय्तु चौल्लिनान्— बाण
चापत्तोटु बालार्क्क कान्ति पूण्टानक्कऴुत्तिल् वरुन्नतकम्पनन् ।
सिंहध्वजं पूण्टतेरिलॆक्करयेऱि सिंह पराक्रमन् बाण चापत्तोटुं
वन्नवनिन्द्रजित्ताकिय रावणनन्दनन् ऩम्मॆ मुन्नं जयिच्चानवन् ।
आयोधनत्तिनु बाण चापङ्ङळ् पूण्टायतमायॊरु तेरिलॆक्करयेऱि
कायं वळर्न्नु विभूषणं पूण्टति कायन् वरुन्नतु रावणन् तन्मकन् । २०
पौन्नणिञ्ञानक्कऴुत्तिल् वरुन्नवनुन्नतनेटं महोदरन् मन्नव !
वाजिमेलेऱिप्परिघं तिरिप्पवनाजिशूरेन्द्रन् विशालन् नरान्तकन् ।
वॆळ्ळॆरुतिन्मुकळेऱि त्रिशूलवुं तुळ्ळिच्चिरिक्कुन्नवन् त्रिशिरस्सल्लो ।
रावणन् तन्मकन् मट्टेतिनङ्ङेतु देवान्तकन् तेरिल् वन्नतु मन्नव !
कुंभकर्ण्णात्मजन् कुंभनङ्ङेतवन् तम्पि निकुंभन् परिघायुधनल्लो ।
देवकुलान्तकनाकिय रावणनेवरोटुं ऩम्मॊ वेॆल्वान् पुऱप्पॆट्टु ।
इत्थं विभीषणन् चौन्नतु केट्टतिनुत्तरं राघवन् तानुमरुळ् चॆय्तु—

भरकर नेत्रान्त संज्ञया राम ने धीरे से विभीषण को बताया—"बड़े-बड़े वीरों को युद्ध के लिए आते देखा ! इनमें से प्रत्येक का यथागुण परिचय देते जाओ।" यह सुनकर विभीषण ने मंदस्मिति के साथ राम से कहा—"हाथी पर सवार एवं चाप-बाणधारी बालार्क (बाल सूर्य) सम तेजस्वी जो आगे बढ़ता आ रहा है वह अकंपन है। सिंह-ध्वजा से अलंकृत, बाण-चाप लिये सिंहविक्रम के साथ जो आ रहा है वह रावण-पुत्र इन्द्रजीत है, जिसने हम पर पहले विजय पायी थी। बाण-चाप हाथ में लेकर विशाल रथ पर सवार हो युद्ध के लिए निकला हुआ, तथा आभूषणों से सज्जित विशालकाय वह वीर रावण का ही पुत्र अतिकाय है। २० हे महाराज ! हाथी पर सवार एवं सुवर्णालंकृत वह ऊँचा वीर महोदर नामक (राक्षस) है। अश्व पर सवार परिघ घुमाता हुआ आनेवाला वह विशालकाय (राक्षस) युद्ध-वीरों में प्रमुख नरान्तक है। श्वेत बैल पर सवार हो शूल हिलानेवाला वह रावण का पुत्र त्रिशिरस् है। उसके बाद कुंभकर्ण का पुत्र कुंभ और बाद का परिघायुधधारी उसका भाई निकुंभ है। देवकुलान्तक रावण हम सबसे लड़ने निकला हुआ जान पड़ता है। विभीषण का वचन सुनकर राम ने उत्तर देते हुए कहा—"आज युद्ध में रावण का वध करके मैं मन का अपना क्रोध उतारूँगा।" राम

युद्धे दशमुखनॆक्कोल चॆय्तुटन् चित्त कोपं कळञ्ञीटुवनिऩ्ऩु ञान् ।
ऎऩ्ऩरुळिच्चॆय्तु तिऩ्ऩरुळुऩ्ऩेरं वऩ्ऩ पटयोटु चोऩ्ऩान् दशास्यनुं—
ऎल्लावरुं नामोळिच्चु पोऩ्ऩालवर् चॆल्लुमकत्तु कटऩ्ऩोरु भागमे ३०
पार्त्तु शत्रुक्कळ् कटऩ्ऩु कोळ्ळुं मुन्ने कात्तुकोळ्विन् निङ्ङळ् चॆऩ्ऩु
लङ्कापुरं । युद्धत्तिनिऩ्ऩु ञान् पोरुमिवरोटु शक्तियिल्लाय्कयु-
मिल्लितिनेतुमे । एवं नियोगिच्च नेरं निशाचररेवरुं चॆऩ्ऩु लङ्कापुरं
मेविनार् । बृन्दारकाराति रावणन् वानर वृन्दत्तॆयॆय्तॆय्तु तळ्ळि
विट्टीटिनान् । विल्लुं शरङ्ङळुमाशु कैक्कॊण्टु कौसल्या तनयनुं
पोरिन्नॊरुमिच्चान् । वन्पनायुळ्ळोरिवनोटु पोरिनु
मुम्पिलटियननुग्रहं नल्कणं ऎऩ्ऩु सौमित्रियुं चॆय्तिरऩ्ऩीटिनान्
मन्नवन् तानुमरुळ् चॆय्तितऩ्ऩेरं— वृत्रारियुं पोरिल् विप्रस्तनाय्
वरुं नक्तञ्चरेन्द्रनोटेट्टालङ्किक नी । माययुमुण्टु निशाचरक्कॆट्टवुं
न्यायवुमिल्लिवक्कॊक्कुमोरिक्कलुं । चन्द्रचूडप्रियनाकयुमुण्टिवन्
चन्द्रहासाख्यमां वाळुमुण्टायुधं । ४० ऎल्लां निरूपिच्चु चित्त-
मुऱप्पिच्चु चॆल्लणमल्लो कलहत्तिनॆऩ्ऩॆल्लां शिक्षिच्चरुळ् चॆय्त-
यच्चोरनन्तरं लक्ष्मणनुं तॊळुताशु विल् वाङ्ङिनान् । जानकी

जब यह कह रहे थे तभी रावण ने अपने पीछे-पीछे आये लोगों को देखकर कहा—"तुम सबके यहाँ (मेरे साथ) आ जाने पर वहाँ राजधानी के अन्दर कौन रह गया ? वे (शत्रु लोग) पीछे से राजधानी में प्रवेश करेंगे । ३० अवसर पाकर शत्रुओं के भीतर घुस पड़ने के पहले ही तुम लोग जाकर लंकापुरी की रक्षा करो । आज इन लोगों से लड़ने के लिए मैं अकेला पर्याप्त हूँ । मैं उसके लिए अशक्त हूँ, ऐसी बात नहीं है ।" रावण की यह आज्ञा सुनकर निशाचर लोग लंका में आकर बैठ गये । देवों का शत्रु रावण वानरों को बाण-प्रयोग से नीचे गिराता गया । यह देखकर कौसल्या-तनय (राम) हाथ में धनुष-बाण लिये रावण से युद्ध करने के लिये तैयार हुए । "इस वीर से लड़ने की अनुमति मुझे देने की कृपा करें", ऐसी प्रार्थना करते सौमित्र से तब महाराज (राम) ने कहा—"तुम यह जान लो कि राक्षसेन्द्र का सामना करते हुए वृत्रारि (इन्द्र) भी वित्रस्त (भयभीत) होते हैं । राक्षसों को मायावी जान लो । ये कभी नीति से युद्ध करनेवाले नहीं होते । (उसके अतिरिक्त) यह (रावण) चन्द्रचूड (शिव) का प्रियपात्र भी है और इसके हाथ में चन्द्रहास नामक (भयंकर) हथियार भी है । ४० इन सब परिस्थितियों पर विचार करके ही इससे कोई युद्ध करने जा सकता है ।" यह उपदेश देकर समझाते

चोरनेक्कण्टोरु नेरत्तु वानरनायकनाकिय मारुति तेर्त्तट तन्निल्
क्कुतिच्चु वीणीटिनानार्त्तनाय् वन्नु निशाचरनाथनुं। दक्षिण-
हस्तवुमोङ्ङिप्परञ्ञितु रक्षोवरनोटु मारुतपुत्रनुं—निर्ज्जरन्मारेयुं
तापसन्मारेयुं सज्जनमाय् मट्टुमुळ्ळ जनत्तेयुं नित्यमुपद्रविक्कुन्न
निनक्कु वन्नेत्तुमापत्तु कपिकुलत्तालेटो ! निन्नेयटिच्चु कोल्वान्
वन्नु निल्क्कुन्नोरेन्नेयोळिच्चु कोळ् वीरनेन्नाकिल् नी। विक्रम
मेरिय निन्नुटे पुत्रनामक्षकुमारनेक्कोन्नतु ञानेटो ! अन्नु
परञ्ञोन्नटिच्चान् कपीन्द्रनुं तन्नाय् विरच्चु वीणान् दशकण्ठनुं।५०
पिन्नेयुणर्न्नु चोन्नानिविटेक्किन्नु वन्न कपिकळिल् नल्लनल्लोभवान्
नन्मयेन्तायतेनिक्किन्नितु कोण्टु नम्मुटे तल्लु कोण्टाल् मट्टोरुवनुं
मृत्यु वराते जीविप्पवनिल्लल्लो मृत्यु वन्नील निनक्कतु कोण्टुञान्
अत्रयुं दुर्बलनेन्नु वन्नू नम्मिलित्तिरि नेरमिन्नुं पोरुतीटणं। अन्न
नेरत्तोन्नटिच्चान् दशाननन् पिन्ने मोहिच्चु वीणान् कपिश्रेष्ठनुं।
नीलनन्नेरं कुति कोण्टु रावणन्मेले करेरिक्किरीटङ्ङळ् पत्तिलुं
विल्लु तन्मेलुं कोटि मरत्तिन्मेलुमुल्लासमोटुमकुटङ्ङळ् पत्तिलुं
चाटिक्रमेण नृत्तं तुटङ्ङीटिनान् पाटित्तुटङ्ङिनान् नारदनुं तदा।

ही लक्ष्मण प्रणाम करके पीछे हट गये। जानकी के चोर को देखते मात्र ही वानर वीर मारुति क्रोधातुर हो उसके रथ पर कूद पड़े। निशाचर-नाथ (रावण) आर्त हो उठा। अपना दक्षिण हस्त (दायाँ हाथ) उठाते हुए मारुति ने राक्षसराज से कहा—"निर्जरों (देवों), तापसों और अन्य साधु-जनों को निरंतर सतानेवाले तुम आज कपिकुल के हाथों विपत्ति में पड़ जाओगे। अगर तुम्हारी इतनी सामर्थ्य है, तो तुम्हें मारने के लिए कटिबद्ध हो सामने खड़े मेरे प्रहार को बचा लो। तुम यह भलीभाँति जान लो कि तुम्हारे पुत्र अक्षयकुमार को मैंने ही मारा था।" यह कहकर कपीन्द्र ने एक प्रहार दिया। दशकंठ खूब काँपता हुआ नीचे गिर पड़ा। ५० फिर होश में आते ही (रावण ने हनुमान से) कहा—"यहाँ आये हुए कपिवरों में तुम्ही सबसे प्रबल हो।" (हनुमान ने उत्तर दिया कि) इस अनुमोदन से मेरा क्या प्रयोजन है। मेरा प्रहार लगकर अब तक कोई जीवित नहीं रहा। किन्तु तुम्हारी मृत्यु नहीं हुई। इसलिए तुम्हारी दृष्टि में मैं अत्यन्त दुर्बल लग सकता हूँ। अब हमें थोड़ी देर तक परस्पर भिड़ना है।" हनुमान के यह कहते ही दशानन ने (हनुमान पर) एक प्रहार किया, जिससे कपिश्रेष्ठ बेहोश गिर पड़े। तुरन्त ही नील रावण पर कूद पड़ा। फिर वह क्रम से दसों किरीटों, बाण, ध्वजा

पावकास्त्रं कोण्टु पावकपुत्रने रावणनेय्तुटन् तळ्ळिविट्टीटिनान् ।
तत्क्षणे कोपिच्चु लक्ष्मणन् वेगेन रक्षोवरनेच्चेरुत्तानतु नेरं । ६०
बाणगणत्ते वर्षिच्चारिरुवरुं काणरुतात्ते चमञ्ञितु पोर्क्कळं ।
विल्लु मुरिच्चु कळञ्ञितु लक्ष्मणनल्लल् मुळुत्तु निन्नू दशकण्ठनुं ।
पिन्ने मयन् कोटुत्तोरु वेल् सौमित्रि तन्नुटे मारिलाम्मारु चाट्टीटिनान् ।
अस्त्रङ्ङळ् कोण्टु तटुक्करुताञ्ञु सौमित्रियुं शक्तियेटाशु वीणीटिनान् । आटलाय्वीण कुमारनेच्चेन्नेटुत्तीटुवानाशुभाविच्चु दशाननन् । कैलास शैलमेटुत्त दशास्यनु बाल शरीरमिळक्करुताञ्ञितु राघवन् तन्नुटे गौरवमोर्त्तति लाघवं पूण्टितु रावण वीरनुं । कण्टु निल्क्कुन्नोरु मारुत पुत्रनुं मण्टियणञ्ञोन्नटिच्चान् दशास्यने । चोरयुं छर्द्दिच्चु तेरिल् वीणानवन् मारुति तानु कुमारनेत्तल्क्षणे पुष्प समानमेटुत्तु कोण्टादराल् चिल्पुरुषन् मुम्पिल् वच्चु वणङ्ङिनान् । ७० मारुं पिरिञ्ञु दशमुखन् कय्यिलाम्मारु पुक्कू मयदत्तमां शक्तियुं । त्रैलोक्य नायकनाकिय रामनुं पौलस्त्यनोटु युद्धं तुटङ्ङीटिनान् । गन्धवाहात्मजन्

सब पर कूद-कूदकर उल्लास-नृत्य करने लगा। (यह देख) आकाश-मार्ग में नारद ने वीणावादन किया। पावकास्त्र (आग्नेयास्त्र) का प्रयोग करके रावण ने पावकपुत्र (नील) से अपना पिंड छुड़ाया। तत्काल ही क्रुद्ध लक्ष्मण ने आकर राक्षसराज का सामना किया। ६० दोनों ने बाण-वर्षा की जिससे युद्धभूमि ढक गयी। लक्ष्मण ने (उसका) धनुष काट डाला तो दशकंठ व्याकुल खड़ा रह गया। फिर उसने मय से प्रदत्त बाण सौमित्र के वक्ष:स्थल को लक्ष्य बनाकर मारा। अपने बाणों से रोक न सकने के कारण सौमित्र शक्ति लगकर तुरन्त नीचे गिर पड़े। रथ से नीचे उतर कर मूर्छित पड़े लक्ष्मण को उठा ले जाने का रावण ने प्रयास किया। जिस रावण ने कैलास को उठाया था, वही कुमार (लक्ष्मण) का शरीर उठा नहीं सका। श्रीराम जी के प्रभाव का अनुस्मरण कर रावण लज्जित हो गया। सामने ही खड़े मारुत-पुत्र ने यह देख दौड़ आकर दशानन को एक तमाचा दे मारा। खून वमन करता हुआ वह (रावण) रथ में गिर पड़ा। मारुति ने तुरन्त ही लक्ष्मण को पुष्प समान (अनायास) उठा ले जाकर चिद्पुरुष (राम) के सामने रख कर हाथ जोड़े। ७० लक्ष्मण का वक्ष:स्थल छोड़कर मयप्रदत्त बाण रावण के हाथ में आ पहुंचा। त्रिलोकपति (राम) ने पुलस्त्य-पुत्र से युद्ध आरम्भ किया। गन्धवहात्मज (वायुपुत्र हनुमान) ने हाथ जोड़कर

वन्दिच्चु चौल्लिनान् पंक्तिमुखनोटु युद्धत्तिनेन्नुटें कण्टमेरिक्कोण्टु तिन्तरुळिक्कोळ्क कुण्ठतयेन्नियें कौल्क दशास्यनें। मारुति चौन्ततु केट्टु रघूत्तमनारुह्य तल् कण्ठदेशे विळङ्ङिनान्। चौन्तान् दशाननन् तन्नोटु राघवन् तिन्नेयट्टुत्तु काण्मान् कौतिच्चेन् तुलों; इन्नतिनाशु योगं वन्तिताकयाल् तिन्नेयुं निन्नोटु कूटे वत्तोरेयुं कौन्तु जगत्त्रयं पालिच्चु कौळ्ळुवनेन्नुटें मुम्मिलरक्षणं तिल्लु ती। अन्तरुळ् चेय्तु शस्त्रास्त्रङ्ङळ् तूकिनानौन्ति-नौन्तोप्पमेय्तान् दशवक्त्रनुं। घोरमाय् वन्तितु पोरुमन्तेरत्तु वारान्निधियुमिळकिमरियुन्तु। ८० मारुति तन्नेयुमेय्तु मुरिच्चितु शूरनायोरु निशाचर नायकन्। श्रीरामदेवनुं कोपं मुळुत्तति धीरतकैक्कोण्टेट्टुत्तोरु सायकं रक्षोवरनुटें वक्षःप्रदेशत्तें लक्ष्यमाक्कि प्रयोगिच्चानति द्रुतं। आलस्यमायितु बाणमेट्न्तेरं पौलस्त्य चापवुं वीणितु भूतले। नक्तञ्चराधिपनाय दशास्यनु शक्तिक्षयं कण्टु सत्वरं राघवन् तेरुं कौटियुं कुटयुं कुतिरयुं चारु किरीटङ्ङळुं कळञ्ञीटिनान्। सारथि तन्नेयुं कौन्तु कळञ्ञळवारूढ तापेन तिन्तु दशास्यनुं। रामनुं रावणन् तन्नोटरुळ्

राम से प्रार्थना की कि दशकंठ से लड़ने के लिए मेरे कंठ पर सवार हो जाइये और अनाकुल भाव से दशकंठ का वध कीजिए। मारुति की प्रार्थना सुनकर राम उनके कंठप्रदेश में आरूढ़ हो गये और रावण के पास पहुँचकर राम ने कहा—"तुम्हें निकट से देखने की बड़ी इच्छा थी, आज वह इच्छा पूर्ण करने का सुयोग प्राप्त हुआ। इसलिए तुम्हें और तुम्हारे साथ आगत अन्य राक्षसों का वध कर मैं जगत्त्रय का पालन करूँगा। तुम मेरे सम्मुख सीधे खड़े रहो।" ऐसा कहते हुए राम एक के बाद एक बाण चलाते गये तो दशमुख ने भी उसी क्रम से राम पर बाणों का प्रयोग किया। युद्ध ने घोर रूप धारण किया; सागर भी डाँवाडोल हो उमड़ पड़ा। ८० शूर रावण के बाण मारुति को भी लगे। इससे अत्यन्त क्रुद्ध राम ने धैर्यपूर्वक हाथ में एक सायक (बाण) उठा लिया तथा राक्षसप्रवर के वक्षःस्थल को लक्ष्य बनाकर उसे चलाया। बाण के लगने से रावण शिथिल हो नीचे गिरा और उसका चाप भी (हाथ से छूटकर) भूमि पर जा गिरा। राक्षसराज रावण के इस शक्तिक्षय को देखकर सत्वर ही राम ने रथ, ध्वजा, छत्र, तुरग तथा सुन्दर किरीट सब काट डाले। सारथी को भी मार डाला तो दशास्य अत्यन्त खिन्न खड़ा रह गया। राम ने रावण से कहा—"तुम अत्यन्त थक गये हो।

चेय्तानामयं पारं त्तिनक्कुण्टु मानसे, पोयालुमिन्नु भयप्पेटाय् केतुमे नीयिनि लङ्कयिल् च्चेन्नङ्ङिरुन्नालुं। आयुध वाहनत्तोटों-रुम्पेट्टु कोण्टायोधनत्तिनु नाळे वरेणं नी। ९० काकुत्स्थ वाक्कुकळ् केट्टु भयप्पेट्टु वेगत्तिलङ्ङु नटन्नु दशाननन्। राघवास्त्रं तुटरेंत्तुटर्न्नुण्टेन्नोराकुलं पूण्टु तिरिञ्ञु नोक्कित्तुलों वेपथु गात्रनाय् मन्दिरं प्रापिच्चु तापमुण्टायतु चिन्तिच्चु मेविनान्। ९३

कुंभकर्ण्णन्टे नीतिवाक्यं

मानवेन्द्रन् पिन्ने लक्ष्मणन् तन्नेयुं वानर राजनामक्कात्मजनेयुं रावण बाण विदारितन्माराय पावकपुत्रादि वानरन्मारेयुं सिद्धौषधं कोण्टु रक्षिच्चु तन्नुटे सिद्धान्तमेल्लामरुळ् चेय्तुमेविनान्। रात्रिञ्चरेन्द्रनुं भृत्य जनत्तोटु पेर्त्तुं निजार्त्तिकळोर्त्तु चोल्लीटिनान्-नम्मुटे वीर्य्यं बलङ्ङळुं कीर्त्तियुं नन्मयुमर्त्थं पुरुषकारादियुं नष्टमाय् वन्नितोटुङ्ङिस्सुकृतवुं कष्टकालं नमुक्कागतं निश्चयं। वेधावु तानुमनारण्यभूपनुं वेदवतियुं महानन्दिकेशनुं, रंभयुं पिन्ने

आज निर्भय चले जाओ और लंका में जा बैठकर आराम करो। हथियार, वाहन आदि से सज्जित हो लड़ाई के लिए तुम कल आ जाओ।" ९० दशरथ-पुत्र के वाक्य सुनकर भयभीत रावण जल्दी-जल्दी वापस चला गया। राम के बाण पीछे-पीछे आते होंगे, इस भय से वह बार-बार पीछे मुड़कर देखता गया। वह वेपथुगात्र (पसीने से तर शरीर) हो महल में पहुँचा और चिन्तामग्न हो गया। ९३

कुंभकर्ण के नीति-वाक्य

मानवेंद्र (राम) ने रावण के बाणों से आहत लक्ष्मण, वानरराज अर्कात्मज (सुग्रीव), पावकपुत्र (नील) आदि वानरों को सिद्धौषध से स्वस्थ बनाया तथा अपने भावी कार्यों के संबंध में अपना निर्णय सुना दिया। रावण ने भी अपनी विपत्ति एवं संकट के संबंध में चिन्तित हो उठकर अपने परिजनों से कहा—"मेरे वीर्य, बल, यश, पौरुष सब समाप्त हो गये, पुण्य का क्षय हुआ। निश्चय ही हमारा नाशकाल निकट आ रहा है। ब्रह्मा, अनारण्य नामक राजा (रावण के द्वारा पहले मारा गया अयोध्या का एक राजा), वेदवती (कुशध्वज नामक ऋषि की कन्या, जिस पर बलात्कार करने का रावण ने उद्यम किया था), नन्दिकेश, रंभा,

नळ कूबरादियुं जंबारि मुम्पां निलिम्प वरन्मारुं, कुंभोत्भवादि-कळाय मुनिकळुं शंभु प्रणयिनियाकिय देवियुं पुष्ट तपोबलं पूण्टु पातिव्रत्य निष्ठयोटे मरुवुन्न सतिकळुं १० सत्यमाय्च्चोल्लिय शाप वचस्सुक्कळ् मिथ्ययाय्वन्नु कूटायेन्नु निर्ण्णयं। चिन्तिच्चु काण्मिन् नमुक्किनियुं पुनरेन्तोन्नु नल्लू जयिच्चु कोळ्वानहो ! कालारि तुल्यनाकुं कुंभ कर्ण्णनेक्कालं कळयातुणर्त्तुक निङ्ङळ् पोय्। आरुमासं कळिञ्ञेन्नीयुणर्न्नीटुमारिल्ल मुन्नमुरङ्ङीट्टवनुमिन्नोम्पतु नाळे कळिञ्ञतुळ्ळू निङ्ङळम्पोटुणर्त्तुविन् वल्लप्रकारवुं। राक्षस राजनियोगेन चेन्नोरो राक्षसरेल्लामोरुम्पेट्टुणर्त्तुवान्। आनक दुन्दुभि मुख्य वाद्यङ्ङळुमानतेर् कालाळ् कुतिरप्पटकळुं कुंभकर्ण्णोरसि पाञ्ञुमार्त्तुं जगल् कम्पं वरुत्तिनारेन्तोरु विस्मयं। कुंभ सहस्रं जलं चोरिञ्ञीटिनार् कुंभकर्ण्णं श्रवणान्तरे पिन्नेयुं। कुंभिवरन्मारेक्कोण्टु नासारन्ध्र संभूत रोमं पिटिच्चु वलिप्पिच्चुं २० तुम्पिक्करमट्लरियुमानकळ् जंभारि वैरिक्कु कम्पमिल्लेतुमे। जृंभा समारंभमोटुमुणर्न्नितु संभ्रमिच्चोटिनाराशर वीरखं।

नलकूबर, जंभारि (इन्द्र) आदि देवश्रेष्ठ, कुंभोद्भव (अगस्त्य) आदि मुनि लोग, शंभु-प्रणयिनी (पार्वती) आदि देवियाँ पुष्ट तपोबल से युक्त अनेक सती-साध्वी नारियाँ—१० —आदि ने जो शापवचन (मुझे) दिये थे, वे कैसे मिथ्या प्रमाणित हो सकते हैं ? (उनके शाप निश्चय ही सत्य निकलने जा रहे हैं।) अब शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के क्या उपाय रह गये हैं ? यमराज तुल्य कुंभकर्ण को तुम लोग जल्दी ही जगा दो। वह साधारणतया छः मास बीतने पर ही जागता है। अब निन्द्रा को गये उसे नौ ही दिन हुए हैं। तुम लोग किसी न किसी प्रकार उसे जगा दो।" राक्षसराज की आज्ञा मानकर प्रत्येक राक्षस ने जाकर उसे जगाने का प्रयास किया। दुन्दुमी आदि वाद्य बजा-बजाकर, हाथी, घोड़े, रथ, पैदल इन चतुरंगिणी सेनाओं को लाकर कुंभकर्ण की छाती पर चढ़ाकर और उन्हें इधर-उधर भगाकर तथा कोलाहल मचाकर सारे जगत तक को कम्पित कर दिया गया। विस्मय की बात है (कुंभकर्ण पर इन सब का कोई असर नहीं पड़ा।) फिर कुंभकर्ण के कानों में सहस्रों कुम्भ भर जल डाला गया। कुम्भिप्रवरों (गजवर) को ले आकर उनसे (कुंभकर्ण के) नासारन्ध्र के रोएँ खिचवाये गये। २० हाथियों की सूँड दुखने लगीं, किन्तु इन्द्रशत्रु (कुंभकर्ण) अपनी नींद से जरा भी विचलित नहीं हुआ। इस

संभोज्यमन्नवुं कुन्नु पोले कण्टोरिम्पं कलन्नॊळुन्नेट्टिरुन्नीटिनान्।
क्रव्यङ्ङळादियाय् मट्टुपजीवन द्रव्य मेल्लां भुजिच्चानन्द चित्तनाय्
शुद्धाचमनवुं चेय्तिरिक्कुं विधौ भृत्य जनङ्ङळुं वन्नु वणङ्ङिनार्।
कार्यङ्ङळॆल्लामऱियिच्चुणर्त्तिय कारणवुं केट्टु पंक्तिकण्ठानुजन्
ऎङ्किलो वैरिकळॆक्कॊल चेय्तु ञान् सङ्कटं तीर्त्तु वरुवनॆन्निङ्ङनॆ
चॊल्लिप्पुऱप्पॆट्ट नेरं महोदरन् मॆल्लॆत्तॊळुतु पऱञ्ञानतु नेरं—
ज्येष्ठनॆक्कण्टु तॊळुतु विटवाङ्ङि वाट्टं वरातॆ पोय्क्कॊळ्ळुक नल्लतु।
एवं महोदरन् चॊन्नतु केट्टवन् रावणन् तन्नॆयुं चॆन्नु वणङ्ङिनान्।३०
गाढमायालिंगनं चॆय्तिरुत्तिनानूढमोदं निज सोदरन् तन्नॆयुं।
चित्ते धरिच्चतिल्लोक्कनी कार्य्यङ्ङळ् वृत्तान्तमॆङ्किलो केट्टालु-
मिन्नॆटो ! सोदरि तन्नुटॆ नासा कुचङ्ङळॆच्छेदिच्चतिन्नु ञान्
जानकी देवियॆ श्रीराम लक्ष्मणन्मारऱिकातॆ कण्टाराम सीम्नी
कॊण्टन्नु वच्चीटिनेन्। वारिधियिल्च्चिऱकॆट्टिक्कटन्नवन् पोरिनु
वानर सेनयुमाय्वन्नु कॊन्नान् प्रहस्तादिकळॆप्पलरॆयुमॆन्नॆयु
मॆय्तुमुऱिच्चान् जितश्रमं। कॊल्लातॆ कॊन्नयच्चानतु कारणमल्लल्

प्रकार बहुत देर तक के परिश्रम के फलस्वरूप कुंभकर्ण जंभाई के साथ जाग पड़ा तो राक्षसवीर भयभीत हो प्राण बचाकर भागने लगे। भोजन के निमित्त पहले से तैयार रखे अन्न का ढेर देखकर जरा सन्तुष्ट हो बैठ गया। मांस आदि अन्य भोज्य पदार्थ खाकर सन्तुष्ट-चित्त हो शुद्धाचमन करके बैठते ही भृत्य राक्षस लोग धीरे-धीरे आकर नमस्कार करने लगे। सारा हाल सुनाकर तथा जगाने का कारण समझाकर रावण की आज्ञा सुनायी गयी तो उसने बताया कि मैं पहले जाकर शत्रुओं का संहार करके रावण के पास उपस्थित होऊँगा। यह कहकर युद्धक्षेत्र के लिए निकले कुंभकर्ण से महोदर ने बताया कि ज्येष्ठ भ्राता (रावण) की आज्ञा लेकर ही (युद्ध के लिए) निकलें। यह सुनकर उसने पहले रावण के सम्मुख आ प्रणाम किया। ३० (रावण ने) अपने अनुज को गाढ़ाश्लेष से सन्तुष्ट करके आसन पर बैठा दिया। और बताया—"तुमने कोई हाल नहीं सुना होगा, तो मुझसे सुनो। राम-लक्ष्मण ने हमारी बहन के नासा-कुच काट लिये थे तो राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में मैंने जानकीदेवी को उठा लाकर यहाँ आराम में (उपवन में) रख लिया है। सागर में सेतु बाँधकर वह (राम) युद्ध के लिए वानरसेना ले आया है। (युद्ध में) प्रहस्त आदि कई वीरों का वध किया तथा मुझे भी अनायास बाणों से विक्षत कर दिया। मुझे मार-मारकर भगा दिया, इस दुःख के कारण और कोई

मुळ्ळत्तु आन् तिन्नैयुणर्त्तिनेन् । मानवन्मारेयुं वानरन्मारेयुं कोन्नु नीयेन्ने रक्षिच्चु कोळ्ळेणमे । एन्नतु केट्टु चोन्नान् कुंभकर्णनुं नन्नु नन्नेत्रयुं नल्लते नल्लु केळ् । नल्लतुं तीयतुं तानऱियातवन् नल्लतऱिञ्ञु चोल्लुन्नवर् चोल्लुकळ् ४० नल्ल वण्णं केट्टु कोळ्किलुं नन्नतल्लात्तवर्क्कुण्टो नल्लतुण्टाकुन्नु ? सीतये रामनु नल्कुकेन्निङ्ङने सोदरन् चोन्नानतिन्नु कोपिच्चु नी आट्टिक्कळञ्ञतु नन्नु नन्नोर्त्तु काण् नाट्टिल् निन्नाशु वाङ्ङी गुणमोक्कवे । नल्लवण्णं वरुं कालमल्लेन्नतुं चोल्लामतु कोण्टतुं कुट्मल्लेटो ! नल्लतोरुत्तरालुं वरुत्तावतल्लल्लल् वरुत्तुमापत्तणयुन्ननाळ् काल देशावस्थकळुं नयङ्ङळुं मूलवुं वैरिकळ् कालवुं वीर्य्यवुं शत्रु मित्रङ्ङळुं मद्ध्यस्थपक्षवुमर्थ पुरुषकारादि भेदङ्ङळुं; नालुपायङ्ङळुमारु नयङ्ङळुं मेलिल् वरुन्नतुमोक्के निरूपिच्चु पथ्यं पऱयुममात्यनुण्टङ्किलो भर्त्तृ सौख्यं वरुं कीर्त्तियुं वर्द्धिय्क्कुं । इङ्ङनेयुळ्ळोरमात्य धर्म्मं वेटिञ्ञेङ्ङने राजाविनिष्टमेन्नालतु ५०

दूसरा सहायक न पाकर मैंने तुम्हें जगाया। मानवों तथा वानरों का (युद्ध में) वध कर तुम मुझे बचा दो।" (रावण की प्रार्थना) सुनकर कुंभकर्ण ने कहा—"आपका प्रारम्भ ही विचित्र है! विचित्र है! जो अच्छा-बुरा पहचान नहीं सकता उसे चाहिए कि अच्छाई पहचानकर सुनानेवाले के उपदेश— ४० —खूब ध्यान देकर सुन ले। ऐसा सुननेवाले की भलाई होगी, अन्यथा किसी की भलाई कभी हो सकती है? भ्राता (विभीषण) ने तुम्हें समझाया था कि सीता को ले जाकर राम को समर्पित कर दो। इस उपदेश के फलस्वरूप तुमने उन्हें दुत्कार कर भगा दिया, जिसका परिणाम आज तुम देख रहे हो। इस प्रदेश से श्री पहले ही रूठकर चली गयी। विनाशकाल में सद्बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। इसलिए समझाने पर भी कोई समझ नहीं पाता। यह किसी का दोष नहीं माना जा सकता। कोई किसी का भला नहीं कर सकता। विपत्ति ही आकर लोगों को संकट में डालती है। काल-देश और अवस्थाएँ, नीति, बल, शत्रु का समय, वीर्य, शत्रुमित्र-भेद, मध्यस्थ पक्ष, पुरुषार्थ भेद, चार उपाय (साम दान भेद दण्ड) छः तन्त्र (सन्धि, विग्रह, मान, आसन, द्वैध और आश्रय) और भविष्य सब पर खूब विचार करके उचित उपदेश देनेवाला अगर अमात्य किसी को मिले तो वह राजा सुखी बनेगा, उसका यश बढ़ेगा। इस अमात्यधर्म को त्यागकर राजा की प्रसन्नता एवं पसन्द को ध्यान में रख— ५० —श्रवण सुख की बातें सुझाकर तथा स्वयं

कण्णं सुखं वरुमारु परञ्ञु कोण्टन्वह्मात्माभिमानवुं भाविच्चु मूल विनाशं वरुमारु नित्यवुं मूढरायुळ्ळोरमात्य जनङ्ङळिल् ऩल्लतु काकोळमेन्ऩतु चोल्लुवोरल्लल् विषमुण्टवर्क्कॆन्ऩियिल्लल्लो । मूढरां मंत्रिकळ् चोल्लु केट्टीटुकिल् ऩाटुमायस्सुं कुलवुं नशिच्चु पों । नादभेद केट्टु मोहिच्चु चेन्ऩु चेन्नाधिमुळ्ळुत्तु मरिक्कुं मृगकुलं; अग्नियेक्कण्टु मोहिच्चु शलभङ्ङळ् मग्नरायग्नियिल् वीणु मरिक्कुन्ऩु; मत्स्यङ्ङळुं रसत्तिङ्कल् मोहिच्चु चेन्ऩत्तल्प्पॆटुन्ऩु बळिशं ग्रसिक्कयाल् । आग्रहमोन्ऩिङ्कलेऱियालापत्तु पोक्कुवानावतल्लात वण्णं वरुं । ऩम्मुटॆ वंशत्तिनुं ऩल्ल ऩाटिनुमुन्मूल नाशं वरुत्तुवानायल्लो जानकि तन्निलोराशयुण्टायतुं ञानऱिञ्ञेनतु रात्रिञ्चराधिप ! ६० इन्द्रियङ्ङळ्क्कु वशनायिरिप्पवनेन्ऩुमापत्तोळिञ्ञिल्लेन्ऩु निर्णयं । इन्द्रियग्रामं जयिच्चिरिक्कुन्ऩवनोन्ऩु कोण्टुं वरा नूनमापत्तुकळ् । ऩल्लतल्लेन्ऩतऱिञ्ञिरिक्केब्बलाल् चेल्लुमोन्ऩिङ्कलोरुत्तनभिरुचि पूर्वजन्मार्ज्जित वासनयालतिनावतिल्लेतुमतिन् वशनाय् वरुं । अॆन्ऩालतिङ्कल् ऩिन्ऩाशु मनस्सिनेत्तन्नुटॆ शास्त्रविवेकोपदेशङ्ङळ् कोण्टु विधेय

(राजा की प्रसन्नता से अभिभूत हो) गर्वीला बनकर प्रतिदिन मूलनाश के उपयुक्त उपदेश देनेवाले दुर्मति अमात्य पर विश्वास एवं भरोसा रखनेवाला राजा विपत्ति में फँसता है । ऐसे अमात्य को विष से भी घातक समझकर उससे दूर रहना चाहिए । ऐसे मंत्रियों के वचनों पर चलनेवाले राजा की आयु, देश और वंश का नाश होता है । हरिण वाद्य संगीत सुनकर उसपर मोहित हो भयंकर मृत्यु पाता है । अग्नि को देख मोहित शलभ उसी में जल मरता है । मत्स्य भी अपने स्वाद के लोभ में पड़कर हूक में फँसकर प्राण-त्याग कर डालता है । किसी वस्तु पर जब आसक्ति बढ़ती है, तब विपत्ति में फँसना पड़ता है, जहाँ से लाख प्रयत्नों के बावजूद भी कोई बच नहीं पाता । हमारे वंश तथा सम्पन्न देश के उन्मूल नाश के लिए ही तुम्हारी जानकी के प्रति आसक्ति हुई, हे राक्षसराज ! मेरा यही अभिमत है । ६० जो इन्द्रियों का दास है, उसे विपत्तियों के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगता, यह निश्चित समझो । इन्द्रिय-रूपी ग्राम को वश में करनेवाले को किसी भी प्रकार की विपत्ति नहीं आती । किसी बात को अनुचित समझते हुए भी उसमें जो अभिरुचि बढ़ती है, वह पूर्वजन्म के संस्कार का परिणाम है, जिससे कोई बच नहीं पाता । इसलिए वह उसके वश में आ जाता है । किन्तु अपने शास्त्रज्ञान से प्राप्त

माक्कि क्कोंण्टिरिप्पवनुण्टो जगत्तिङ्कलारानुमोक्र्क नी ? मुन्नं
विचार काले आन् भवानोटु तन्ने पऱञ्ञतिल्ले भविष्यल् फलं ?
इप्पोळुपगतमाय्वन्नतीश्वर कल्पितमाक्कुं तटुक्कावतल्लल्लो ।
मानुषनल्ल रामन् पुरुषोत्तमन् नाना जगन्मयन् नारायणन् परन् ।
सीतयाकुन्नतु योगमाया देवि चेतसि नी धरिच्चीटुकेन्निङ्ङने ७०
निन्नोटु तन्ने पऱञ्ञु तन्नीलयो मन्नव ! मुन्नमेयेन्ततोराञ्ञतुं ।
आनोरुनाळ् विशालायां यथासुखं काननान्ते नर नारायणाश्रमे
वाळुन्न नेरत्तु नारदनेप्परितोषेण कण्टु नमस्करिच्चीटिनान् ।
एतोरु दिक्किल् निन्नागतनायितेन्नादरवोटरुळ् चेय्क महामुने !
अन्तोरु वृत्तान्तमुळ्ळू जगत्तिङ्कलन्तरं कूटातरुळ् चेय्केयेन्नेल्लां
चोदिच्च नेरत्तु नारदनेन्नोटु सादरं चोन्नानुदन्तङ्ङळीक्कवे ।
रावण पीडितन्मारायच्चमञ्ञोरु देवकळुं मुनिमारुमोरुमिच्चु
देव देवेशनां विष्णु भगवानेस्सेविच्चुणर्त्तिच्चु सङ्कटमोक्कवे :
त्रैलोक्य कण्टकनाय रावणन् पौलस्त्यपुत्रनतीव दुष्टन् खलन्
ञङ्ङळेयेल्लामुपद्रविच्चीटुन्नितेङ्ङु मिरिक्करुतातें चमञ्ञतु। ८०
मर्त्यनालेन्निये मृत्युविल्लेन्नतुमुक्तं विरिञ्चनाल् मुन्नमे कल्पितं ।

विवेक के अनुसार मन को उस वस्तु से हटाकर अपने नियन्त्रण में रखने-वाला क्या इस जगत में कोई व्यक्ति है ? यह भी तुम्हें सोचना चाहिए। प्रारम्भ में ही मैंने तुम्हें इसके सम्बन्ध में सचेत किया था और भविष्यत् फल भी समझाया था। (मेरी भविष्यवाणी) अब ठीक निकली। ईश्वर-कल्पित को कौन मिटा सकता है ? (तुम यह समझ लो कि) राम कोई मनुष्य नहीं हैं; वे परमात्मा, जगन्मय, पुरुषोत्तम, नारायण हैं। सीतादेवी योगमाया ही हैं। यह बात मन में याद रखने की है, ७० —मैंने पहले ही चेतावनी दी थी। तुमने क्यों तब विश्वास नहीं किया ? एक बार जब मैं विशाला के कानन में नर-नारायणाश्रम में यथासुख बैठा था, तब वहाँ नारद को देख सहर्ष प्रणाम किया था। "हे महामुनि ! आप कहाँ किस दिशा से पधारे हैं और जगत में कहाँ क्या समाचार है, सब कृपापूर्वक बता दें।" ऐसा आग्रह करने पर तब नारदजी ने मुझे सारा वृत्तान्त सुनाया था कि रावण से पीड़ित हो देवों-मुनियों ने मिलकर देवदेवेश भगवान विष्णु के सामने यह शिकायत की थी कि पुलस्त्य-पुत्र अत्यन्त खल एवं दुष्ट हो त्रिलोक के लिए काँटा बन गया है, वह हम सब को सता रहा है, जिससे हम कहीं (आराम से) नहीं रह पा रहे हैं। ८० मनुष्य को छोड़ अन्य किसी के हाथों उसकी मृत्यु नहीं होगी, ब्रह्मा ने उसे

मर्त्यनायत्तन्नै पिऱन्नु भवानिनि सत्य धर्म्मङ्ङळॆ रक्षिक्क वेणमे ।
इत्थमुणर्त्तिच्च नेरं मुकुन्दनुं चित्त कारुण्यं कलर्न्नरुळिच्चेय्तु :
पृथ्वियिल् ञानयोद्ध्यायां दशरथ पुत्रनाय् वन्नु पिऱन्निनिस्सत्वरं
नक्तञ्चराधिपन् तन्नॆयुं निग्रहिच्चत्तल् तीर्त्तीटुवनिनि त्रिलोकत्तिङ्कल् ।
सत्य सङ्कल्पनामीश्वरन् तन्नुटॆ शक्तियोटुं कूटि रामनाय् वन्नतुं
निङ्ङळॆयॆल्लामॊटुक्कुमवनिनि मंगलं वन्नु कूटुं जगत्तिङ्कलुं ।
ॲन्नरुळ् चॆय्तु मऱञ्ञु महामुनि नन्नाय् निरूपिच्चु कॊळ्क नी
मानसे । रामन् परब्रह्ममाय सनातनन् कोमळनिन्दीवर दळ
श्यामळन् माया मनुष्य वेषं पूण्ट राममनॆक्कायेनवाचा मनसा
भजिक्क नी । ९० भक्ति कण्टाल् प्रसादिक्कुं रघूत्तमन् भक्ति
यल्लो महाज्ञान मातावॆंटो ! भक्तियल्लो सतां मोक्षप्रदायनि
भक्ति हीनन्मार्क्कुं कर्म्मवुं निष्फलं । संख्ययिल्लातोळ मुण्ट-
वतारङ्ङळ् पङ्कज नेत्रनां विष्णुविनॆङ्किलुं संख्यावतां मतं
चॊल्लुवन् निन्नुटॆ शङ्कयॆल्लामकलॆक्कळञ्ञीटुवान् । रामावतार
सममल्लतॊन्नुमे नाम जपत्तिनालेवरुं मोक्षवुं । ज्ञान स्वरूप
नाकुन्न शिवन् परन् मानुषाकारनां रामनाकुन्नतुं तारक ब्रह्म

ऐसा वरदान पहले ही दे रखा है। इसलिए आप ही मनुष्य रूप में जन्म लेकर सत्य एवं धर्म की रक्षा करें। (देवों-मुनियों की प्रार्थना पर) मुकुन्द ने चित्तकारुण्य से युक्त होकर कहा कि पृथ्वी पर अयोध्या में दशरथ के पुत्र के रूप में जन्म लेकर मैं तुरन्त ही राक्षसेश्वर का वध कर त्रिलोक का दु:ख-हरण करूँगा। सत्यप्रतिज्ञ भगवान ने अपनी पूर्ण शक्ति के साथ राम के रूप में पृथ्वी में अवतार लिया है। अब वे तुम सबको समाप्त कर देंगे और फिर संसार का मंगल होगा। यह कह मुनि अदृश्य हो गये। इसलिए (हे रावण!) तुम मन में यह निश्चित रूप से समझ लो कि इन्दीवर-दल के समान श्यामल एवं कोमल राम सनातन परब्रह्म ही हैं। मायामनुष्य-रूप-धारी राम की मन वचन कर्म से सेवा करो तथा (उनका) भजन करो। ९० भक्ति से भगवान राम द्रवीभूत होते हैं क्योंकि भक्ति महत् ज्ञान की माता है। भक्ति ही तो सज्जनों को मोक्ष-प्रदायिनी है। भक्तिहीनों के सारे कर्म व्यर्थ जाते हैं। पंकजनेत्र विष्णु के भले ही संख्यातीत अवतार हैं, किन्तु तुम्हारे अज्ञान को दूर करने के लिए मैं संख्यावतां (पण्डितों का) मत प्रस्तुत करता हूँ कि वे सब रामावतार के बराबर नहीं हैं। राम के नाम-स्मरण से मुक्ति प्राप्त होती है। ज्ञान-स्वरूप भगवान शिव तक का कथन है कि मनुष्याकार राम

मेत्तन्ने चोल्लुन्नतुं श्रीराम देवनेत्तन्ने भजिक्क त्नी । रामनेत्तन्ने भजिच्चु विद्वज्जनमामयं तल्कुन्न संसार सागरं लंघिच्चु रामपदत्तेयुं प्रापिच्चु सङ्कटं तीर्त्तु कोळ्ळुन्नितु सन्ततं । बुद्ध तत्त्वन्मार् निरन्तरं रामनेच्चित्तांबुजत्तिङ्कल् नित्यवुं ध्यानिच्चु१०० तच्चरित्रङ्ङळुं चोल्लि नामङ्ङळुमुच्चरिच्चात्मानमात्मना कण्टुक- ण्टच्युतनोटु सायुज्यवुं प्रापिच्चु निश्चलानन्दे लयिक्कुन्नितन्वहं । माया विमोहङ्ङळेल्लां कळञ्ञुटन् नीयुं भजिच्चु कोळ्कानन्द मूर्त्तिये । १०३

कुभंकर्ण्ण वधम्

सोदरनेवं पऱञ्ञतु केट्टति क्रोधं मुळुत्तु दशास्यनुं चोल्लिनान्— ज्ञानोपदेशमेनिक्कु चेय्वानल्ल ञानिन्नुणर्त्ति वरुत्ति यथासुखं । निद्रयेस्सेविच्चु कोळ्क नीयेन्नयुं बुद्धिमानेन्नतुमिन्नऱिञ्ञेनहं । वेदशास्त्रङ्ङळुं केट्टु कोळ्ळामिनि खेदमकन्नु सुखिच्चु वाळुन्नताळ् । आमेङ्किलाशु चेन्नायोधनं चेय्तु रामादिकळे वधिच्चु वरिक नी । अग्रजन् वाक्कुकळित्तरं केट्टळवुग्रनां कुंभकर्ण्णन् नटन्नीटिवान् ।

तारकब्रह्म हैं। इसलिए तुम राम का भजन करो। विद्वान लोग सदा राम का भजन करते हुए इस दुःखपूर्ण संसार-सागर को पारकर राम-पद को ग्रहण करते हैं और सारे दुखों से विमुक्त हो जाते हैं। तत्वज्ञानी सात्विक लोग निरन्तर अपने मन-कमल में राम का ध्यान करते हैं,— १०० उनके सच्चरित्र का गुणगान करते हैं, (पावन) नाम का जाप करते हैं और हृदय में उन्हें बसाकर उन अच्युत का सायुज्य पाते हैं और सदा निश्चल आनन्द में तल्लीन रहते हैं। इसलिए माया से उद्भूत मोहों को त्यागकर तुम भी आनन्दस्वरूप (राम) का भजन करो।" १०३

कुम्भकर्ण का वध

अपने भाई का यह कथन सुन अत्यन्त क्रोधाकुल दशानन ने कहा— "ज्ञानोपदेश ग्रहण करने के लिए मैंने आज तुम्हें नहीं जगाया है। तुम जाकर यथासुख नींद ले लो। मैंने आज तुम्हारी विद्वत्ता को पहचाना है। सारे दुखों से निवृत्त हो सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते समय मैं (तुम्हारे मुख से) वेद-शास्त्र (की बातें) सुन लूँगा। तुम से सम्भव हो तो तुरन्त युद्ध में जाकर राम आदि का वध करके आओ।" अपने अग्रज (बड़े भाई) की इस तरह की बातें सुनकर वह (युद्ध के लिए) निकल पड़ा। युद्ध में

व्यग्रवुं कैविट्टु युद्धे रघूत्तमन् निग्रहिच्चाल् वरुं मोक्षमेन्नोर्त्तवन् प्राकारवुं कटन्नुत्तुंग शैलराजाकारमोटलरिक्कोण्टति द्रुतं। आयिरं भारमिरुम्पु कोण्टुळ्ळ तन्नायुधमायुळ्ळ शूलवुं कैक्कोण्टु वानर सेनयिल्प्पुक्कोरु नेरत्तु वानरवीररेल्लावरुमोटीटिनार्। १० कुंभकर्ण्णन् तन् वरवु कण्टाकुलाल् संभ्रमं पूण्टु विभीषणन् तन्नोटु वन्पुळ्ळ राक्षसनेवनिवन् पऱकंबरत्तोळमुयरमुण्डलभुतं। इत्थं रघूत्तमन् चोदिच्चळवतिनुत्तरमाशु विभीषणन् चौल्लिनान्— रावण सोदरन् कुंभकर्ण्णन् मम पूर्वजनेत्रयुं शक्तिमान् बुद्धिमान्; देवकुलान्तकन् निद्रावशनिवनावतिल्लावर्क्कु मेटाल् जयिच्चीटुवान्। तच्चरित्रङ्ङळेल्लामरियिच्चु चेन्निच्छया पूर्वजन् काल्क्कल् वीणीटिनान्। भ्राता विभीषणन् ञान् भवद् भक्तिमान् प्रीति पूण्टेन्नेयनुग्रहिक्केणमे। सीतये नल्कुक राघवनेन्नु ञानादर पूर्वमावोळमपेक्षिच्चेन्। खड्गवुं कैक्कोण्टु निग्रहिच्चीटुवानुग्रत-योटुमटुत्ततु कण्टु ञान् भीतनाय् नालमात्यन्मारुमाय् पोन्नु सीतापतियेश्शरणमाय् प्रापिच्चेन्। २० इत्थं विभीषणन्

अगर राम से मारा गया तो मोक्ष-प्राप्ति होगी, यह सोचकर उसने अपनी व्यग्रता त्याग दी। शैलराज (पर्वतराज) का सा भारी-भरकम शरीरवाला कुंभकर्ण हज़ार मन भारी अपने लोहे का शूल हाथ में उठाये, घोर गर्जना करते हुए प्राकार को पारकर वानरसेना की ओर बढ़ा तो उसे देखते ही सारे वानरवीर भाग गये। १० कुंभकर्ण को आते देखकर भगवान राम ने विभीषण से पूछा कि आकाश-तुल्य उन्नत शरीरवाला यह राक्षस कौन है, तो उसके उत्तर में तुरन्त विभीषण ने कहा—आकाश तक उन्नत यह विचित्र राक्षस रावण का भाई कुंभकर्ण है जो मेरा भी बड़ा भाई है, वह बड़ा ही बलिष्ट, बुद्धिमान तथा देवकुल का घातक है। वह निद्राविवश है, उसका सामना करके कोई विजयी नहीं बन सकता। उसका पूरा चरित्र बताने के उपरान्त विभीषण ने जाकर अपने पूर्वज (बड़े भाई) के चरणों पर प्रणाम किया और कहा—"मैं आपका भाई विभीषण हूँ। मैं आपके प्रति श्रद्धालु हूँ। आप प्रेमपूर्वक मुझे अनुगृहीत करें। मैंने अपनी शक्ति भर (रावण को) समझाया कि सीता को ले जाकर राम को दे दें। किन्तु खड्ग हाथ में लिये मेरा वध करने के लिए उद्यत हो आते (रावण) को देखकर अत्यन्त भयाकुल हो मैं चार अमात्यों को साथ लेकर सीतापति की शरण में आ पहुँचा।" २० विभीषण का यह कथन सुनकर उसने (कुंभकर्ण ने) अत्यन्त प्रसन्न हो अपने छोटे भाई को गले से लगाया। फिर पीठ

वाक्कुकळ् केट्टवन् चित्तं कुळिर्त्तु पुणर्न्नानुजनें। पिन्नेप्पुरत्तु तलोटिप्पर्ञ्ञितु धन्यनल्लो भवानिल्लकिल्लेतुमे। जीविच्चिरिक्क पलकालमूळियिल् सेविच्चु कौळ्ळुक राम पादांबुजं। नम्मुटे वंशत्तें रक्षिप्पतिन्नु नी निम्मलन् भागवतोत्तमनेंन्नयुं। नारायण प्रियनेंन्नयुं नीयेंन्नु नारदन् तन्नें पर्ञ्ञु केट्टेनहं; मायामय मिप्रपञ्चमेंल्लामिनिप्पोयालुमेंङ्किल् नी राम पादान्तिके। ऍन्नतु केट्टभिवाद्यवुं चेंय्ततिखिन्ननाय् बाष्पवुं वार्त्तु वाङ्ङीटिनान्। राम पार्श्वं प्राप्य चिन्ता विवशनाय् श्रीमन् विभीषणन् निल्क्कुं दशान्तरे हस्तपादङ्ङ्ळाल् मर्क्कट वीररें क्रुद्धनायोक्कें मुटिच्चु तुटङ्ङिनान्। पेटिच्चटुत्तु कूटान्ञु कपिकळु मोटित्तुटङ्ङिनार् नाना दिगन्तरे। ३० मत्त हस्तीन्द्रनेंप्पोलें कपिकळें पत्तुनूरायिरं कौन्नानरक्षणाल्। मर्क्कट राजनतु कण्टौरुमल कय्क्कौण्टेंरिञ्ञतु मारिल्त्तट्टुत्तवन् कुत्तिनान् शूलमेंटुत्ततु कौण्टति वित्रस्तनाय् वीणु मोहिच्चतर्क्कजन्। अप्पोळवनेंयुमूक्कोटेंटुत्तु कौण्टुल्पन्न मोदं नटन्नु निशाचरन्। युद्धे जयिच्चु सुग्रीवनेंयुं कौण्टु नक्तञ्चरे-

---

पर अपना हाथ फेरते हुए (कुंभकर्ण ने) कहा—"तुम धन्य हो। तुम्हें कोई दुःख नहीं आएगा। तुम दीर्घकाल तक पृथ्वी पर वास करो और राम के पादांबुजों की सेवा करते रहो। तुम भगवतोत्तम हो और हमारे वंश की रक्षा करनेवाले हो। मैंने स्वयं नारद के मुँह से सुन रखा है कि तुम भगवान के लिए अत्यन्त प्रिय हो। यह सम्पूर्ण प्रपंच ही मायामय है। तुम अब (सानन्द) राम की सेवा में चले जाओ।" यह सुनकर बड़े भ्राता को अभिवादन कर तथा नेत्रों में आँसू भरते हुए (विभीषण) लौट चले और चिन्ता-विवश हो राम के पास आकर बैठ गये। उस समय कुंभकर्ण ने अपने हाथों तथा लातों से मार-मारकर वानरों का नाश करने का उपक्रम किया। भयवश उसके पास न फटक पा सकने के कारण कपिवर नाना दिशाओं की ओर भागने लगे। मस्त-गजेन्द्र के समान चारों ओर से पकड़-पकड़कर उसने सैकड़ों हजारों कपियों को थोड़े ही समय में मार डाला। ३० यह देख मर्कटराज (सुग्रीव) ने एक चट्टान उठाकर उसकी ओर मारी, जिसे उसने अनायास ही अपने वक्षःस्थल से रोक दिया। तुरन्त ही उसने अपना शूल उठाकर सुग्रीव को मारा, जिसके लगते ही अर्कात्मज (सुग्रीव) विमूर्छित हो नीचे गिर पड़े। तब उन्हें जल्दी-जल्दी उठाकर निशाचर कुंभकर्ण लंका की ओर चल पड़ा। युद्ध में विजयी का सा भाव लिये सुग्रीव को उठा ले आते राक्षसराज कुंभकर्ण को देखकर

श्वरन् चेल्लुन्न नेरत्तु नारी जनं महाप्रसादमेरि त्तिन्नारूढ मोदं पनित्तीरिल् मुक्किय माल्यङ्ङळुं कळभङ्ङळुं तूकि नारालस्यमाशु तीर्त्तीट्टु वानादराल्। मर्क्कटराजनतेट्टु मोहं वेटिञ्ञुल्ककट रोषेण मूक्कुं चेविकळुं दन्त नखङ्ङळेक्कोण्टु परिच्चु कोण्टन्तरीक्षे पाञ्ञु पोन्नानति द्रुतं। क्रोधवुमेट्टमभिमान हानियुं भीतियुमुळ्ळक्कोण्टु रक्ताभिषिक्तनाय् ४० पिन्नेयुं वीण्टुं वरुन्नतु कण्टति सन्नद्धनायट्टुत्तु सुमित्रात्मजन्। पर्वतत्तिन्मेल् मळपोळियुं वण्णं दुर्वारबाण गणं पोळिच्चीटिनान्। पत्तुनूरायिरं वानरन्मारेयुं वक्त्रत्तिलाक्कियट्टुक्कुमवनुटन् कर्ण्ण नासाविलत्तूटे पुरप्पेटुं पिन्नेयुं वारि विळुङ्ङुमवन् तदा। रक्षोवरनुमन्नेरं निरूपिच्चु लक्ष्मणन् तन्नेयुपेक्षिच्चु सत्वरं राघवन् तन्नोटट्टुत्तानतु कण्टु वेगेन बाणं पोळिच्चु रघूत्तमन्। दक्षिण हस्तनुं शूलवुं राघवन् तलक्षणे बाणमेय्ताशु खण्डिक्कयाल् युद्धाङ्कणे वीणु वानर वृन्दवुं नक्तञ्चरन्मारुमोट्टु मरिच्चीटिन्नार्। वामहस्ते महासालवुं कैक्कोण्टु रामनोटेट्टमट्टुत्तु निशाचरन्। इन्द्रास्त्रमेय्तु खण्डिच्चानतु वीणु मिन्द्रारिकळ् पलरुं मरिच्चीटिनार्। ५०

नारियों ने प्रासादों के ऊपर चढ़कर हर्षित हो सुगन्ध-द्रव्यों से स्निग्ध मालाएँ, चन्दन आदि, आलस्य दूर करने के विचार से उसके ऊपर डाल दिये। उनके प्रभाव से मर्कटराज (सुग्रीव) का आलस्य दूर हुआ और उन्होंने अत्यन्त क्रोधातुर हो अपने दन्तों-नखों से कुंभकर्ण के नाक-कान नोच डाले और अन्तरिक्ष की ओर लपककर वे वापस आ गये। अभिमान-हानि से बहुत ही क्रुद्ध, किन्तु मन ही मन भयभीत, रक्त से भीगे कुंभकर्ण को दुबारा आते देखकर कटिबद्ध हो सुमित्रात्मज आगे बढ़े। ४० सुमित्रात्मज लक्ष्मण ने पर्वत पर वर्षा के समान कुंभकर्ण पर बाण-बर्षा की। उसकी परवाह किये बिना कुंभकर्ण हज़ारों वानरों को निगलता हुआ आगे बढ़ा तो वे वानर उसके कर्णद्वारों, नासापुटों से बाहर निकल पड़े। उसने दुबारा उन्हें पकड़कर निगल लिया। तब कुंभकर्ण मन ही मन कुछ सोचकर लक्ष्मण को छोड़ तुरन्त राम के सामने आया, जिसे देखकर राम ने जल्दी ही बाण-वर्षा आरम्भ की। उसका शूल-सहित दक्षिण हस्त राम ने बाण से खण्डित कर दिया। कई वानरवीर युद्ध में मारे गये; कई राक्षसवीर भी यमपुर चले गये। अपने वाम हस्त में एक विशाल वृक्ष लिये राक्षस कुंभकर्ण राम पर टूट पड़ा, तो राम ने इन्द्रास्त्र से उसे काट डाला, जिसके गिर पड़ने से कई राक्षस-जन मारे गये। ५० —फिर राक्षसवीर (कुंभकर्ण)

बद्ध कोपत्तोटलर्रि यटुत्तितु नक्तञ्चराधिपन् पिन्नेयुमन्नेरं अर्द्धचन्द्राकारमाय रण्टम्पु कोण्टुत्तुंग पादङ्ङळुं मुरिच्चीटिनान् । वक्त्रवुमेट्टं पिळर्न्नु विळुङ्ङुवान् नक्तञ्चरेन्द्रन् कुतिच्चटुक्कुन्नेरं पत्रिकळ् वायिल् निरच्चु रघूत्तमन् वृत्रारि दैवतमाय् विळङ्ङीटिनो— रस्त्रमेय्तुत्तमांगत्तेयुं खण्डिच्चु वृत्रारितानुं तेळिञ्ञानतु नेरं । उत्तमांगं पुरद्वारि वीणु मुरिञ्ञब्धियिलू वीणितु देहवुमन्नेरं । ५६

नारद स्तुति

सिद्ध गन्धर्व विद्याधर गुह्यक यक्षभुजंगखगाप्सरो वृन्दवुं किन्नर चारण किम्पुरुषन्मारुं पन्नग तापस देव समूहवुं पुष्प वर्षं चेय्तु भक्त्या पुकळ्तिनार् चित्पुरुषं पुरुषोत्तममद्वयं । देव मुनीश्वरन् नारदनुं तदा सेवार्त्थमम्पोटवतरिच्चीटिनान् । रामं दशरथनन्दनमुत्पल श्यामळं कोमळं बाण धनुर्द्धरं । पूर्ण्ण चन्द्राननं कारुण्य पीयूष पूर्ण्ण समुद्रं मुकुन्दं सदाशिवं । रामं जगदाभिराममात्माराममामोदमार्न्नु पुकळ्न्नु तुटङ्ङिनान् । सीतापते ! राम ! राजेन्द्र राघव ! श्रीधर ! श्रीनिधे !

अत्यन्त कोपाकुल हो राम की ओर बढ़ा तो अर्धचन्द्राकार दो बाणों से (उसके) दो चरण काट डाले गये। अपना मुख खोले राक्षसप्रवर आगे की ओर उछल पड़ा, तब राम ने बाणों से उसका मुँह भर दिया और इन्द्रास्त्र का प्रयोग करके उसका मस्तक छेद डाला। यह देखकर इन्द्र प्रसन्न हो उठे। तब (उसका) मस्तक कटकर पुरद्वार पर जा गिरा और देह समुद्र में जा गिरी। ५६

नारद-स्तुति

सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर, गुह्यक, यक्ष, नाग, खग, अप्सरा वृन्द, किन्नर, चारण, किंपुरुष, तापस, देवसमूह, सबने पुष्प-वर्षा करते हुए चिद्पुरुष, अद्वय, पुरुषोत्तम राम की भक्ति से स्तुति की। तब देवमुनीश्वर नारद (राम की) सेवा में उपस्थित हुए। (वे राम की स्तुति करने लगे) हे राम ! हे दशरथ-नन्दन ! नीलोत्पल (नीलकमल) सम श्यामल कोमल, बाण-धनुर्धर, पूर्णचन्द्र समान द्युतिमय आनन (मुख) वाले, कारुण्य-रूपी अमृत के सागर, मुकुन्द, सदाशिव राम (की जय हो) ! वे बड़े हर्षोल्लास के साथ स्तुति करते गये, "हे राम ! आप जगदाभिराम एवं आत्माराम

श्रीपुरुषोत्तम ! श्रीराम ! देवदेवेश ! जगन्नाथ ! नारायणा-
खिलाधार ! नमोस्तुते । विश्वसाक्षिन् ! परमात्मन् !
सनातन ! विश्वमूर्त्ते ! परब्रह्ममे ! दैवमे ! १० दुःख-
सुखादिकळ्ळेल्लामनुदिनं कैक्कोण्टु मायया मानुषाकारनाय्,
शुद्धतत्त्वज्ञनाय् ज्ञानस्वरूपनाय् सत्यस्वरूपनाय् सत्वप्रधान
गुणप्रियनाय् सदा, व्यक्तनायव्यक्तनायतिस्वस्थनाय् निष्कळनाय्
निराकारनायिङ्ङने, निर्ग्गुणनाय् निगमान्त वाक्यार्त्थमाय्
चिद्घनात्मावाय शिवनाय् निरीहनाय्, चक्षुरुन्मीलन कालत्तु
सृष्टियुं चक्षुर्न्निमीलनं कोण्टु संहारवुं, रक्षयुं नाना विधावतार-
ङ्ङळाल् शिक्षिच्चु धर्म्मर्त्तेयुं परिपालिच्चु नित्यं पुरुष प्रकृति
कालाख्यनाय् भक्तप्रियनां परमात्मने नमः । यातोरात्मा-
विनेक्काणुन्नितेप्पोळुं चेतसि तापसेन्द्रन्मार् निराशया तत्स्वरूपत्ति
नायक्कोण्टु नमस्कारं चित्स्वरूप प्रभो ! नित्यं नमोस्तुते ।
निर्विकारं विशुद्धज्ञान रूपिणं सर्व लोकाधारमाद्यं नमोनमः । २०
त्वल् प्रसादं कोण्टोळिञ्ञु मट्टोन्निनाल् त्वद्बोधमुण्टाय् वरिकयु-

---

हैं । हे सीतापति ! हे राम ! हे राजेन्द्र राघव ! हे श्रीधर ! हे श्रीनिधि !
हे श्री पुरुषोत्तम ! हे श्रीराम ! हे देवदेवेश ! हे जगन्नाथ ! हे अखिल
जगत के आधार नारायण ! आपको नमस्कार है । हे विश्व के साक्षी-
स्वरूप ! हे परमात्मा ! हे सनातन ! हे विश्वमूर्ति ! हे परब्रह्म !
हे दैव । १० आप अपनी माया से मानव-स्वरूप को अपनाकर नित्य सुख-
दुःख का अनुभव करते हैं । आप शुद्ध, तत्वज्ञ, ज्ञान-स्वरूप, सत्य-स्वरूप,
सत्वप्रधान गुणप्रिय हो कभी व्यक्त और कभी अव्यक्त रहते हैं । आप
स्वस्थ, निष्कल, निराकार, निर्गुण, निगमान्त वाक्यार्थ बन, चित्घनात्मा,
शिव-स्वरूप एवं निरीह बनकर सदा निवास करते हैं । आपके चक्षु के
उन्मीलन के समय सृष्टि का आविर्भाव होता है और चक्षु के निमीलन के
साथ सृष्टि का संहार भी होता है । नाना प्रकार के अवतार लेकर आप
सृष्टि की रक्षा करते हैं, अधर्मियों को दण्ड देकर धर्म की रक्षा करते हैं ।
नित्य, पुरुष-प्रकृति-काल-स्वरूप तथा भक्त-प्रिय आपको नित्य मैं नमस्कार
करता हूं । तापसेन्द्र लोग निराशा के समय जिस परमात्मा का मन-मुकुर
में ध्यान करते हैं, उस स्वरूप को मेरा नमस्कार है । हे चित्स्वरूप
प्रभु ! आपको नित्य मेरा नमस्कार है । निर्विकार स्वरूप, शुद्धज्ञान-
स्वरूप, सर्वलोकों के लिए अधार-स्वरूप और आद्यपुरुष आपको नमस्कार
है, नमस्कार है । २० आपके प्रसाद के अतिरिक्त और किसी उपाय से

मिल्लल्लो । त्वल् पाद पत्मङ्ङळ् कण्टु सेविप्पतिन्निप्पोळे-
निक्कवकाशमुण्टायतुं चित्पुरुष प्रभो ! निन् कृपा वैभव
मेप्पोळुमेन्नुळ्ळिल् वाळ्क जगत्पते ! कोप काम द्वेष मत्सर
कार्प्पण्य लोभ मोहादि शत्रुक्कळुण्टाकयाल् मुक्ति मार्ग्गङ्ङळिल्
सञ्चरिच्चीटुवान् शक्तियुमिल्ल निन् मायाबलवशाल् । त्वल्क्कथा
पीयूष पानवुं चेय्तु कोण्टुळक्काम्पिल् निन्नेयुं ध्यानिच्चनारतं
त्वल् पूजयुं चेय्तु नामङ्ङळुच्चरिच्चि प्रपञ्चत्तिङ्कलोक्के निरन्तरं
निन् चरितङ्ङळुं पाटि विशुद्धनाय् सञ्चरिप्पानायनुग्रहिक्केणमे ।
राज राजेन्द्र ! रघुकुल नायक ! राजीव लोचन ! राम !
रमापते ! पातियुं पोयितु भूभारमिन्नु नी बाधिच्च कुंभकर्ण्णन्
तन्नेक्कोल्कयाल् । ३० भोगीन्द्रनाकिय सौमित्रियुं नाळे मेघ
निनादनेक्कोल्लुमायोधने । पिन्ने मटेन्नाळ् दशग्रीवनेब्भवान्
कोन्नु जगत्त्रयं रक्षिच्चु कोळ्ळुक । ञानिनि ब्रह्मलोकत्तिनु
पोकुन्नु मानव वीर ! जयिक्क जयिक्क नी । इत्थं पऱञ्ञु
वणङ्ङि स्तुतिच्चति भक्तिमानाकिय नारदनुं तदा राघवनोट-
नुवादवुं कैक्कोण्टु वेगेन पोय् मऱञ्ञीटिनानन्नेरं । ३५

आपका आत्मज्ञान नहीं प्राप्त किया जा सकता । हे चिद्स्वरूप स्वामी ! आज आपके पाद-पंकजों की सेवा करने के लिए मुझे अवसर प्राप्त हुआ । हे जगत् के स्वामी ! आपकी कृपा सदा मुझे प्राप्त होती रहे । काम, क्रोध, द्वेष, मत्सर, कार्पण्य, लोभ, मोह आदि शत्रुओं के कारण आपकी माया के वश में पड़े मुझे मुक्ति के मार्ग का अनुसरण करने की क्षमता नहीं रह गयी है । आपकी कथा-रूपी पीयूष का पान कर, मन-मुकुर में निरन्तर आपका ध्यान कर, आपकी पूजा कर तथा आपका नाम-स्मरण कर, निरन्तर इस प्रपंच में आपके चरित का स्तुतिगान करते शुद्ध भाव से घूमते रहने के लिए मुझे अनुगृहीत करें । हे राजराजेन्द्र ! हे रघुकुल-नायक ! हे राजीवलोचन ! हे राम ! हे रमापति ! आपके द्वारा कुंभकर्ण का वध किये जाने से संसार का भार आज आधा कम हो गया । ३० शेषनाग के अवतार लक्ष्मण कल युद्ध में मेघनाद का वध करेंगे । फिर परसों दशानन का वध कर आप संसार की रक्षा कर लेंगे । मैं अब ब्रह्मलोक को जा रहा हूँ । हे मानववीर ! आपकी जय हो, जय हो ।" इस प्रकार की प्रार्थना एवं स्तुति करके भक्त नारद श्रीराम जी से (जाने की) अनुमति लेकर जल्दी ही अदृश्य हुए । ३५

अतिकाय वधम्

कुंभकर्णन् मरिच्चोरु वृत्तान्तवुं कम्पं वरुमारु केट्टु दशाननन् मोहिच्चु भूमियिल् वीणु पुनरुटन् मोहिच्चु तीर्न्नु मुहूर्त्त मात्रं कोण्टु। पिन्नेप्पलतरं चोल्लि विलापिच्चु खिन्ननायोरु दशग्रीवनेत्तदा चेन्नु तोऴुतु परञ्ञु त्रिशिरस्सुमुन्नतनायोरति काय वीरनुं। देवान्तकनुं नरकान्तकनुं मुहुरेवं महोदरनुं महा-पार्श्वनुं मत्तनुमुत्तमनुमोरुमिच्चति शक्तियेरीटुं निशाचर वीरन्मार् ऍट्टु पेरुं समरत्तिन्नोरुम्पॆट्टु दुष्टनां रावणन् तन्नोटु चोल्लिनार्— दुःखिप्पतिनेन्तु कारणं ञङ्ङळ् चेन्नोक्केरिपुक्कळॆक्कोन्नु वरामल्लो। युद्धत्तिनाययच्चीटुकिल् ञङ्ङळॆ-शत्रुक्कळालोरु पीडयुण्टायवरा। ऍङ्किलो निङ्ङळ् पोय्च्चेन्नु युद्धं चेय्तु सङ्कटं तीर्क्केन्नु चोन्नान् दशाननन्। १० कण्टु कूटातोळमुळ्ळ पेरुम्पटयुण्टतुं कोण्टु पोय्क्कोळ्विनेल्लावरुं। आयुध वाहन भूषण जालवुमावोळवुं कोटुत्तान् दशकन्धरन्। वेळ्ळं कणक्के परन्न पेरुम्पट्क्कुळ्ळिल् महारथन्मारिवरेण्वरुं पोक्कु पुरप्पॆट्टु चेन्नतु कण्टळवुक्कोटटुत्तु कपि प्रवरन्मारुं।

अतिकाय-वध

कुंभकर्ण की मृत्यु का समाचार सुनकर दशानन कम्पित हुआ। मूर्छित हो भूमि पर गिरा। पल भर में उसकी मूर्छा हटी तो कई प्रकार की बातें करते हुए विलाप करते दशानन के पास तुरन्त ही त्रिशिरस्, उन्नत अतिकाय, देवान्तक, नरकान्तक, महोदर, महापार्श्व, मत्त और उन्मत्त नाम के आठ प्रबल राक्षसवीर आये। युद्ध के लिए तैयार खड़े उन आठों राक्षसों ने दुष्ट रावण से कहा—"हे स्वामी! दुखी होने का क्या कारण है? हम सब मिलकर युद्ध में शत्रुओं का वध करके लौटेंगे। अगर आप हमें युद्ध के लिए भेजने की कृपा करेंगे तो हमें शत्रुओं से पीड़ित होने का कुछ भी भय नहीं है।" दशानन ने कहा—"ऐसी तुम लोगों की इच्छा है तो तुम लोग जाकर युद्ध करके मुझे संकट से मुक्त करो। १० हमारे पास जो असंख्य सेना है, उसे भी साथ ले जाओ।" दशानन ने (यह कहकर) भूरि-भूरि आयुध, वाहन और आभूषण दे दिये। पानी के समान विशाल सेना के मध्य इन आठ महारथियों को युद्ध के लिए निकले हुए देखकर वानरवीर भी उनसे भिड़ने के लिए आगे बढ़े। असंख्य एवं विशाल सागर के समान फैली हुई राक्षस-सेना को युद्ध के लिए आये देखकर

संख्ययिल्लातोळमुळ्ळ पॆरुम्पट वन् कटल् पोलॆ वरुन्नतु कण्टळ-
न्तकन् वीट्टिलाक्कीटिनार् सत्वरमॆन्तीरु विस्मयं चॊल्लावतल्लेतुं ।
कल्लुंमलयुं मरङ्ङ्ळुं कैक्कोण्टु चॆल्लुन्न वीररोटेट्टु निशाचरर्
कॊल्लुन्नितांशु कपिवरन्मारॆयुं तल्ल शस्त्रास्त्रङ्ङ्ळ् तूकि क्षणान्तरे ।
वारण वाजि रथङ्ङ्ळुं कालाळुं दारुणन्माराय राक्षस वीररुं
वीणु मरिच्चुळ्ळ चोरप्पुळकळुं काणायितु पलतायॊलिक्कुन्नतुं ।२०
अन्तमिल्लात कबन्धङ्ङ्ळुं पलतन्तिके नृत्तमाटित्तुटङ्ङी तदा ।
राक्षसरॊक्कॆ मरिच्चतु कण्टति रूक्षतयोटुमटुत्तान् नरान्तकन् ।
कुन्तवुमेन्तिक्कुतिरप्पुरमेऱि यन्तकनॆप्पोलॆ वेगालटुत्तप्पोळ् अंगदन्
मुष्टिकळ् कॊण्टवन् तन्नुटल् भंगं वरुत्ति यमपुरत्ताक्किनान् ।
देवान्तकनुं परिघयुमाय् वन्नु देवेन्द्रपुत्रतनयनोटेट्टितु । वारणमेऱि
महोदर वीरनुं तेरिलेऱि त्रिशिरस्सुमणञ्ञितु । मूवरोटुं पॊरुती-
टिनानंगदन् देवादिकळुं पुकळ्न्नितनानन्तरं । कण्टु निल्क्कुं वायु
पुत्रनुं नीलनुं मण्टिवन्नाशु तुणच्चारतु नेरं । मारुति कॊन्नितु
देवान्तकनॆयुं वीरनां नीलन् महोदरन् तन्नॆयुं । शूरनाकुं
त्रिशिरस्सिन् तलकळॆ मारुति वॆट्टिक्कळञ्ञु कॊन्नीटिनान् । ३०

(वानरों ने) बहुतों को तुरन्त ही यमपुर में भेज दिया । बड़े विस्मय की बात है ! (वानरों की वीरता की) कैसे प्रशंसा की जाए ! कंकड़-पत्थर, चट्टान, पेड़-पौधे उखाड़-उखाड़कर आगे-आगे बढ़ती वानरसेना से राक्षसवीर टक्कर लेने लगे और उन्होंने भी अपने अच्छे से अच्छे शस्त्रास्त्रों का प्रयोग करके कपिवीरों का वध किया । हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेना और भयंकर राक्षसवीर मरकर धराशायी हुए । सब कहीं कई धाराओं में बहती रक्त की नदियाँ दृष्टिगोचर होने लगीं । २० सामने ही असंख्य कबंध नाचते दिखाई दिये । बहुत से राक्षसों को मृत्यु के ग्रास बने देखकर अत्यन्त रुष्ट हो नरकान्तक सामने आया । घोड़े पर सवार हो हाथ में भाला लिये यमराज के समान बढ़ते (उसे) देखकर अंगद ने अपने मुष्टि-प्रहार से उसे यमपुरी को भेज दिया । परिघ हाथ में लिये देवान्तक ने देवेन्द्रपुत्र (बालि) के तनय (अंगद) से मुकाबला किया । तब तक वारण (हाथी) पर सवार हो वीर महोदर तथा रथारूढ़ हो त्रिशिरस् ने उसका साथ दिया । अंगद ने तीनों का एक साथ सामना किया, जिसे देखकर उसी क्षण देव लोग प्रशंसा करने लगे । यह देखकर खड़े वायुपुत्र (हनुमान) और नील ने दौड़ आकर अंगद की सहायता की । मारुति ने देवान्तक को तथा नील ने महोदर को मारा । मारुति ने शूर त्रिशिरस के सिर

वन्नु पोरुतान् महापार्श्वनन्नेरं कोन्नु कळञ्ञानृषभन् महाबलन् । मत्तनुमुन्मत्तनुं मरिच्चार् कपि सत्तमन्मारोटेतिर्त्तति सत्वरं । विश्वैक वीरनतिकायनन्नेरमश्वङ्ङळायिरं पूट्टिय तेरतिल् शस्त्रास्त्र जालं निरच्चु विल्लुं धरिच्चस्त्रज्ञनत्यर्थं मुद्धित चित्तनाय् युद्धत्तिनाय् चेन्नु ञाणोलियुमिट्टु नक्तञ्चर श्रेष्ठ पुत्रनट्टुत्तप्पोळ् निल्ककरुताञ्ञु भयप्पेट्टु वानरर्क्कोक्के वाल् पोङ्ङिच्चु मण्टित्तुटङ्ङनार् । सामर्त्थ्यमेऱ्युळ्ळोरतिकायने सौमित्रि चेन्नु चेरुत्तानतु नेरं; लक्ष्मण बाणङ्ङळ् चेन्नट्टक्कुं विधौ तल्क्षणे प्रत्यङ्मुखङ्ङळाय् वीणुपों । चिन्तमुळ्ळत्तेतुमावतल्लाञ्ञेट्टमन्धनाय् सौमित्रि निल्कुन्नतु नेरं मारुत देवनुं मानुषनाय् वन्नु सारनां सौमित्रियोटु चोल्लीटिनान्— ४० पण्टु विरिञ्चन् कोट्टोरु कञ्चुकमुण्टतु कोण्टिवनेल्ककयिल्लायुधं; धर्म्मत्तेरक्षिच्चु कोळ्ळुवानिन्निनि ब्रह्मास्त्रमेय्तिवन् तन्ने वधिक्क नी । पिन्ने निन्नाल् वधिक्कप्पेटुमिन्द्रजित्तुन्नतनाय दशाननन् तन्नेयुं कोन्नु पालिक्कुं जगत् त्रयं राघवनेन्नु पऱञ्ञु मऱञ्ञु समीरणन् । लक्ष्मणनुं निज पूर्वजन् तन् पद मुळ्क्काम्पिल् नन्नायुऱप्पिच्चु

काटकर उसका भी वध कर डाला । ३० तब महापार्श्व ने आकर युद्ध किया, जिसे महाबलशाली ऋषभ ने मारा । अल्पक्षण के भीतर मत्त और उन्मत्त भी कपियों से भिड़कर मर गये । तुरन्त ही अत्यन्त वीर अतिकाय सहस्र अश्वों से जुते रथ पर सवार हो, शस्त्रास्त्रों से अलंकृत हो तथा धनुषधारी बन, अपने अस्त्रज्ञान पर उद्धित हो, धनुष की टंकार मुखरित करता हुआ युद्ध के लिए आगे बढ़ा । राक्षसराज के पुत्र के समीप आने पर आस-पास कहीं टिकना कठिन होने से वानर लोग पूँछ उठाकर भागने लगे । युद्धकला में अत्यन्त प्रवीण अतिकाय का लक्ष्मण ने सामना किया । लक्ष्मण ने कई बाणों का प्रयोग किया, किन्तु उसके शरीर के समीप आते ही सारे बाण प्रत्यंगमुख (झुके हुए नोक वाले) हो नीचे गिर पड़ने लगे । चिन्तित हो, दूसरा कोई उपाय तुरन्त न पाकर अन्धाधुन्ध सौमित्र को खड़े देख भगवान वायु मनुष्याकार होकर सौमित्र के पास आकर कहने लगे—४० "ब्रह्मा ने पूर्व में इसे एक कवच दिया था, जिसे पहन रखने के कारण इसपर कोई आयुध नहीं लगेगा । धर्म-रक्षा के लिए आज इसे ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर मार डालें । फिर आप से ही इन्द्रजीत मारा जाएगा और उन्नत दशानन का वध कर राम जगतत्रय का पालन करेंगे ।" यह कह समीरण (वायुदेव) तिरोहित हुए । लक्ष्मण ने मन में अपने पूर्वज (राम)

वन्दिच्चु पुष्करसंभव बाणं प्रयोगिच्चु तत्क्षणे कण्ठं मुरिच्चानतु नेरं। भूमौ पतिच्चोरतिकाय मस्तकमामोदमुळ्ळकौण्टेटुत्तु कपिकुलं रामान्तिके वच्चु कैतोळुतीटिनाराममयं पूण्टु शेषिच्च रक्षोगणं। ४८

इन्द्रजित्तिन्टे विजयम्

रावणनोटरियिच्चारवस्थकळ् हा! विधियेन्तलरी दशकण्ठनुं। मक्कळुं तम्पिमारुं मरुमक्कळुमुळ्ळकरुत्तेरुं पटनायकन्मारुं मन्त्रिकळुं मरिच्चीटिनारेट्वरेन्तिनि ञल्लतु शङ्कर! दैवमे! इत्थं विलापिच्च नेरत्तु चेन्निन्द्रजित्तुं नमस्करिच्चीटिनान् तातने। खेद मुण्टाकरुतेतुमे मानसे तातनु ञानिह जीविच्चिरिक्कवे; शत्रुक्कळक्कोल चय्तु वरुन्नतुण्टत्तलुं तीर्त्तिङ्ङरुन्नरुळेणमे। स्वस्थनाय् वाळुक चिन्तेयुं कैविट्टु युद्धे जयिप्पाननुग्रहिक्केणमे। ॲन्नतु केट्टु तनयनेयुं पुणर्न्नेन्ने सुखमे जयिच्चु वरिक नी। वन्पनां पुत्रनुं कुम्पिट्टु तातने तन्पटयोटुं नटन्नु तुटङ्ङिनान्।

का स्वरूप स्मरण कर तथा उनकी वन्दना करके पुष्कर-सम्भव (ब्रह्मा) का बाण (ब्रह्मास्त्र) प्रयुक्त किया, जिसने जाकर उसका गला काट डाला। भूमि पर पड़े अतिकाय का मस्तक हर्षोन्माद से वानरों ने उठा लिया और राम के चरणों पर लाकर रख दिया। बचे हुए राक्षस लोग दुखी हो उठे। ४८

इन्द्रजीत की विजय

(राक्षसों ने जाकर) रावण को सारा हाल सुना दिया तो रावण ज़ोर से चिल्ला उठा 'हा विधाता! हे शंकर! हे दैव! पुत्र, अनुज लोग, भानजे-भतीजे, उग्र सेनानायक लोग, मन्त्री लोग जो भी युद्ध के लिए गये, सब के सब मर गये। अब मैं क्या करूँ!" इस प्रकार रावण के रोते-चिल्लाते समय इन्द्रजीत ने जाकर पिता को प्रणाम किया। उसने कहा—"जब तक मैं जीवित हूँ, पिताजी कुछ चिन्ता न करें। मैं शत्रुओं का वध कर आऊँगा। आप चिन्ता त्यागकर आराम से बैठिये। आप दुःख विस्मृत कर स्वस्थ बैठे रहें। मुझे युद्ध में विजय पाने के लिए आशीर्वाद दें।" यह सुनकर (रावण ने) पुत्र को छाती से लगाया और कहा—"युद्ध में विजयी बन आओ।" वीर पुत्र पिता को प्रणाम करके अपनी सेना लेकर चलने लगा। युद्ध के पूर्व ही शम्भुप्रसाद (शिव की कृपा)

शंभु प्रसादं वरुत्तुवानाय् चेन्नु जंभारिजित्तु निकुंभिल पुक्कितु। १०
संभार जालवुं सम्पाद्य सादरं संभाव्य होममारंभिच्चितन्नेरं।
रक्त माल्यांबर गन्धानुलेपेन युक्तनाय् तत्र गुरूपदेशान्वितं
भक्ति पूण्टुज्ज्वलिप्पिच्चग्नि देवनें शक्ति तनिक्कु वर्द्धिच्चु
वरुवानाय्। नक्तञ्चराधिप पुत्रनुमेंत्रयुं व्यक्त वर्ण्णस्वर मन्त्र
पुरस्कृतं कर्त्तव्यमायुळ्ळ कर्म्मं कळिच्चथ चित्रभानु प्रसाद-
त्तालति द्रुतं। शस्त्रास्त्र चाप रथादिकळोटुमन्तर्द्धान विद्ययुं
लब्ध्वा निराकुलं होम समाप्ति वरुत्तिप्पुरप्पेट्टु रामादिकळोटु
पोरिनायाशरन्। पोर्क्कळं पुक्कोरु नेरं कपिकळुं राक्षसरेच्चेरु
त्तार्त्तट्टुत्तीटिनार्। मेघजालं वरिषिक्कुन्नतु पोलें मेघनादन्
कणतूकित्तुटङ्ङिनान्। पाषाण पर्वत वृक्षादिकळ् कोण्टु
भीषणन्माराय वानर वीररुं २० दारुणमाय् प्रहरिच्चु
तुटङ्ङिनार् वारण वाजि पदाति रथिकळुं अन्तकन् तन्
पुरियिल्च्चेन्नु पुक्कु पुक्कन्तं वरुन्नतु कण्टोरु रावणि सन्ताप-
मोटुमन्तर्द्धानवुंचेय्तु सन्ततं तूकिनान् ब्रह्मास्त्र सञ्चयं।
वृक्षङ्ङळ् वेन्तु मुरिञ्ञु वीळुंवण्ण मृक्षप्रवरन्मार् वीणुतुटङ्ङिनार्।
वम्परां मर्क्कटन्मारटें कय्यिल् वन्नम्पतुं नूरुमिरुनूरुमञ्ञूरुं

को प्राप्त करने के लिए जंभारिजीत (इन्द्रजीत) होम करने गया। १०
आहुति के लिए आवश्यक सभी पदार्थ एकत्र करके युद्धविजय के लिए उसने होम का आरम्भ किया। रक्तमाल्य, वस्त्र एवं सुगन्धमय आलेपनों से युक्त (इन्द्रजीत ने) गुरु के उपदेशानुसार, अपने लिए शक्ति बढ़ने के निमित्त भक्तिपूर्वक अग्नि प्रज्वलित की। राक्षसराज के पुत्र ने अत्यन्त व्यक्त स्वर-वर्णों के साथ मन्त्रोच्चारण करके यथायोग्य सारे कर्म किये। चित्रभानु (अग्निदेव) के प्रसाद से द्रुत (जल्दी ही) शस्त्रास्त्र-चाप-प्रयोग तथा अन्तर्धान विद्या ग्रहण करके निराकुल भाव से होम समाप्त किया और राम आदि से युद्ध करने तुरन्त चल पड़ा। युद्धभूमि में पहुँचते ही राक्षसों से युद्ध करने वानरवीर भी आगे बढ़े। मेघजाल से गिरती वर्षा के समान मेघनाद ने बाणों की वर्षा की। भयंकर वानरवीर भी पाषाण, पर्वत, वृक्ष आदि लेकर— २० —(राक्षसों पर) दारुण प्रहार करने लगे। हाथी, अश्व, रथी और पैदल सेना को अन्तकपुरी (यमलोक) जा पहुँचते देखकर खिन्न हुआ रावणी (रावण का पुत्र मेघनाद) अन्तर्धान होकर निरन्तर ब्रह्मास्त्रों की वर्षा करने लगा। जैसे वृक्ष जलकर धराशायी होते हैं, वैसे वानरवीर नीचे भूमि पर गिर पड़ते गये। वीर योद्धा वानर

अम्पुकळ् कोण्टु पिळर्न्नु तेरुतेरे कम्पं कलर्न्नु मोहिच्चु वीणीटिनार्। अम्पतु बाणं विविदनेट्टु पुनरोम्पतु मैन्दनुमञ्चु गजन्मेलुं। तोण्णूरु बाणं नळनुं तरुच्चितव्वण्णमेट्टू गन्धमादनन् मेय्यिलुं। ईरोम्पतेट्टितु नीलनुं मुप्पतु मीरञ्चु बाणङ्ङळ् जांबवान् मेय्यिलुं। आरुपनसनुमेळुविनतनीरारु सुषेणनुमेट्टु कुमुदनुं। ३० आरञ्चु बाणमृषभनुं केसरिक्कारुमोरम्पतुं कूटे वन्नेट्टितु। पत्तु पुनरिरुपत्तञ्चुमेट्टितु शक्तियेरुं वेगदर्शिक्कतु पोले। नाल्पतु कोण्टु दधिमुखन् मेय्यिलुं नाल्पतु रण्टु गवाक्षनुमेट्टितु। मून्नु गवयनुमञ्चु शरभनुं मून्नुमोरु नालुमेट्टु सुमुखनुं। दुर्म्मुखनेट्टितिरुपत्ति नालम्पु सम्मानमायरुपत्तञ्चु तारनुं। ज्योतिर्म्मुखनुमरुपतेट्टू पुनरातङ्कमोटेण्पतग्नि वदननुं। अंगदन्मेलेळुपत्तञ्चु कोण्टितु तुंगनां सुग्रीवनेट्टु शरशतं। इत्थं कपिकुल नायकन्मारुपत्तेळु कोटियुं वीणितु भूतले। मर्क्कटन्मारिरुपत्तोन्नु वेळळवु- मर्क्कतनयनुं वीणोरनन्तरं आवतिल्लेतुमितिन्नु नमुक्केन्नु देव देवन्मारुमन्योन्यमन्नेरं। ४० व्याकुलं पूण्टु परञ्ञु निल्क्के रुषा राघवन्मारेयुमेय्तु वीळ्तीटिनान्। मेघनादन् महावीर्य्य

अपने शरीर पर पचास, सौ, दो सौ, पाँच सौ इस प्रकार बाणों के लगने से आहत हो एक के बाद एक मोहित एवं मूर्छित गिर पड़ते गये। विविद के पचास बाण लगे, मैन्द के शरीर में नौ, गज को पाँच बाण और नल को नब्बे बाण लगे। गन्धमादन के शरीर में भी नब्बे बाण लगे। नील के अठारह, जाम्बवान के चालीस बाण लगे। पनस को छः, विनत को सात, और छ: छ: बाण सुषेण तथा कुमुद के शरीर को लगे। ३० ऋषभ को तीस, और केसरी को छप्पन बाण आकर लगे। वैसे ही शक्तिमान वेगदर्शी के शरीर में पैंतीस तीखे बाण आ लगे। दधिमुख के शरीर में चालीस और गवाक्ष के शरीर में बयालीस बाण लगे। गवय के तीन, शरभ के पाँच और सुमुख के सात बाण लगे। दुर्मुख के शरीर में चौबीस बाण आकर लगे और तार के शरीर को पच्चीस बाणों से आहत किया। ज्योतिर्मुख को साठ बाण लगे और अग्निवदन के शरीर को अस्सी तीखे बाण लग गये। अंगद के शरीर को पचहत्तर और वीर सुग्रीव के शरीर में शत बाण आ लगे। इस प्रकार सड़सठ करोड़ वानरवीर (बाणों से आहत हो) भूतल पर गिरे और असंख्य वानर तथा अर्कात्मज (सुग्रीव) के धराशायी होने पर, तब देवों ने परस्पर 'क्या करेंगे हम'— ४० —ऐसा व्याकुल भाव से कहा। तभी अपार बलशाली, वीर्यवान एवं महाव्रतधारी

व्रतधरन् शोक विषण्णमाय् निश्चलमायितु लोकवुं कौणपाधीश
जयत्तिनालाखण्डलारियुं शंखनादं चेय्तु वेगेन लङ्कयिल्
पुक्किरुन्नीटिनान् लेखसमूहवुं माळ्किक गताशया । ४४

औषधत्तिनायि हनुमान्टे गमनम्

कैकसी नन्दननाय विभीषणन् भागवतोत्तमन् भक्तपरायणन्
पोक्कुवन् मेलिलापत्तु आर्नेन्नोर्त्तु पोक्कळं कैविट्टु वाङ्ङि
त्तिन्नीटिनान् । कोळ्ळियुं मिन्नि नोक्कि सञ्चरिच्चु तुटङ्ङि-
नानाक्कमेरुं वायुपुत्रनुमन्नेरं आरिनियुळ्ळतोरु सहायत्तिनेन्ना-
रायकवेणमेन्नोर्त्तवनुं तदा शाखा मृगङ्ङळ् किटक्कुन्नवर्कळिल्
चाकातवरितिलारेन्नु नोक्कुवान् एकाकियाय् नटक्कुन्न नेरं तत्र
राघवभक्तन् विभीषणनेक्कण्टु । तम्मिलन्योन्यमरिञ्ञु दुःखं पूण्टु
निर्म्मलन्मार् नटन्नीटिनार् पिन्नेयुं । पाथोज संभव नन्दनन्
जांबवान् तातननुग्रहं कोण्टु मोहं तीर्न्नु कण्णु मिळिप्पानरुताञ्ञि-
रिक्कुम्पोळ् चेन्नु विभीषणन् चोदिच्चितादराल्— निन्नुटे
जीवनुण्टो कपि पुंगव ! नन्नायितेङ्किल् नीयेन्नेयरिञ्ञितो ? १०

मेघनाद ने राम-लक्ष्मण को भी बाणों से आहत कर नीचे गिरा दिया। शोकाकुल हो सारे भुवन निश्चल रह गये। राक्षसों की विजय के उपलक्ष्य में शंखनाद करता हुआ इन्द्रजीत जल्दी ही लंका में सुखपूर्वक आ बैठा। देव आदि दुःख-सागर में निमग्न हुए। ४४

हनुमान का औषधि के लिए जाना

कैकसी के पुत्र अत्यन्त भागवतोत्तम एवं भक्तपरायण विभीषण भविष्य में विपत्ति का निवारण करने का विचार करके युद्ध-भूमि से पहले ही दूर रह गये थे। अब अग्नि प्रज्वलित करते हुए वे युद्ध-भूमि में आहत पड़ी सेना में घूम-घूमकर (यह) देखने लगे (कि कोई जीवित बचा है)। उसी समय चैतन्य युक्त वायुपुत्र (हनुमान) भी भूशायी शाखा-मृगों (वानरों) में कौन मेरी सहायता के लिए जीवित पड़ा है, इसका पता लगाने का उद्देश्य लेकर भटक रहे थे। तब वहाँ राम-भक्त विभीषण से भेंट हुई और दोनों परस्पर एक-दूसरे को पहचान कर अत्यन्त दुखी हो साथ-साथ घूमने लगे। पाथोजसंभव-नन्दन (ब्रह्मा के पुत्र) जांबवान्, अपने पिता के अनुग्रह से मूर्छा से हटकर, नेत्र खोलने के लिए अशक्त बैठे थे। तब विभीषण ने जाकर पूछा "हे कपिपुंगव ! क्या आप जीवित हैं ? तब तो अच्छा ही हुआ। क्या आप मुझे पहचान पा रहे हैं ?"। १०

कण्णु मिळिच्चु कूटा रुधिरं कोण्टु तिन्नुटे वाक्कु केट्टुळ्ळिल् विभातिमे राक्षसराजन् विभीषणनेन्नतु साक्षाल् परमात्थमेन्नोटु चोल्लुक। सत्यं विभीषणनायतु ञानेंटो! सत्वमते! पुनरेन्नतु केट्टवन् चोदिच्चिताशराधीश्वरन् तन्नोटु बोधमुण्टल्लो भवानेट्माकयाल् मेघनादास्त्रङ्ङळेट्टु मरिच्चोरु शाखामृगङ्ङळिल् नम्मुटे मारुति जीवनोटे पुनरेङ्ङान मुण्टङ्किलावतेल्लां तिरयेणमिनियेंटो! चोदिच्चिताशु विभीषणनेन्तेंटो! वातात्मजनिल् वात्सल्य मुण्टायतुं? राम सौमित्रि सुग्रीवांगदादिकळामवरेवरिलुं विशेषिच्चु नी चोदिच्चतेन्तु समीरणपुत्रने? मोदिच्चतेन्तवनेक्कुन्निच्चेट्वुं? ऍङ्किलो केळ्क्क नी मारुतियुण्टङ्किल् सङ्कटमिल्ल मट्टार्क्कुं मरिञ्ञालुं। २० मारुतपुत्रन् मरिच्चितेन्नाकिल् मट्टारुमिल्लोक्के मरिच्चतिनोक्कुमे। सारस संभव पुत्र वाक्यं केट्टु मारुतियुं बहुमानिच्चु सादरं ञानितल्लो मरिच्चीलेन्नवन् काल्क्कलामोद मुळ्क्कोण्टु वीणु वणङ्ङिनान्। गाढमायाश्लेषवुं चेय्तु जांबवान् कूटेत्तलयिल् मुकर्न्नु चोल्लीटिनान्— मेघनादास्त्रङ्ङळेट्टु मरिच्चोरु शाखामृगङ्ङळेयुं पिन्ने नम्मुटे राघवन्मारेयुं

(जांबवान् ने उत्तर दिया कि) रक्त-प्रवाह के कारण मैं नेत्र खोल सकने में असमर्थ हूँ। आपके वचनों से मुझे ऐसा आभास हो रहा है कि आप राक्षसराज विभीषण होंगे। आप मुझे अपना वास्तविक परिचय दीजिए। "हे सात्विक बुद्धि वाले! मैं सत्य ही विभीषण हूँ", यह सुनकर उन्होंने आशराधीश (राक्षसराज विभीषण) से कहा कि आप तो होश में हैं; इसलिए आप मेघनाद के शस्त्रों से मृत पड़े कपियों में खोज कर देखें कि हमारे मारुति (हनुमान) कहीं जीवित पड़े हैं। तुरन्त विभीषण ने उनसे पूछा—"क्या बात है? राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, अंगद आदि सभी के रहते हुए भी आपका वातात्मज (हनुमान) के प्रति विशेष वात्सल्य जागने का क्या कारण है? आपने विशेष कर क्यों समीरण-पुत्र का नाम लिया है? उनके प्रति आप क्यों विशेष प्रसन्न हैं?" (जांबवान् ने कहा) "आप को सुनने की इच्छा है तो सुनिये। मारुति के जीवित रहने पर किसी को कुछ संकट नहीं होगा। २० मारुति के मृत होने पर फिर कोई प्रयोजन नहीं है, शेष सब जीवित हों तो भी मरे के समान हैं।" सारस संभव पुत्र (जांबवान्) के वाक्य सुनकर मारुति ने सादर बताया—"मैं तो नहीं मरा हूँ।" यह कहकर वे (जांबवान् के) चरणों पर सानंद गिर पड़ प्रणाम करने लगे। गाढ़ाश्लेष के साथ मस्तक चूमते हुए

जीविच्चिरुत्तुवानाकुन्नवरारुमिल्ल नीयेन्निये; पोक वेणं नी हिमवानेयुं कटन्नाकुलमट्टु कैलास शैलत्तोळं। कैलास सन्निधियिङ्कलृषभाद्रि मेलुण्टु दिव्यौषधङ्ङळरिक नी। नालुण्टु दिव्यौषधङ्ङळवट्टिनु नालिनुं नामङ्ङळुं केट्टुकोळ्ळुक: मुम्पिल् विशल्य करिणियेन्नोन्नेटो ! पिन्पु सन्तान करिणि मून्नामतुं ३० नल्ल सुवर्ण्णं करिणि नालामतुं चोल्लुवन् ञान् मृतसञ्जीवनि सखे ! रण्टु श्रृंगङ्ङळुयर्न्नु काणामव रण्टिनुं मद्ध्ये मरुन्नुकळ् निल्पतुं। आदित्यनोळं प्रभयुण्टु नालिनुं वेदस्वरूपङ्ङळेन्नरिक नी। वारान्निधियुं वनङ्ङळ् शैलङ्ङळुं चारु नदिकळुं राज्यङ्ङळुं कट— न्नाराल् वरिक मरुन्नुकळुं कोण्टु मारुतनन्दन ! पोक नी वैकाते। इत्थं विधि सुतन् वाक्कुकळ् केट्टवन् भक्त्या तोळुतु माहेन्द्र मेरीटिनान्। मेरुविनोळं वळर्न्नु चमञ्ञवन् वारान्निधियुं कुल पर्वतङ्ङळुं लङ्कयुं राक्षसरु विरय्क्कुं वण्णं शङ्का रहितं करुत्तोटलरिनान्। वायुवेगेन कुतिच्चुयर्न्नंबरे पोयवन् नीहार शैलवुं पिन्निट्टु वैरिञ्चमुण्डवुं शङ्कर शैलवुं नेरे धरानदियुमळकापुरं ४० मेरु गिरियुमृषभाद्रियुं कण्टु मारुति विस्मयप्पेट्टु नोक्कीटिनान्। ४१

जांबवान् ने कहा—"मेघनाद के अस्त्रों से मृत पड़े शाखामृगों तथा हमारे राम-लक्ष्मण को जीवित रखने के लिए, तुम्हारे सिवा कोई दूसरा यहाँ नहीं है। तुम्हें तुरन्त हिमवान के भी आगे कैलास पर्वत तक जाना होगा। कैलास पर्वत के समीप ऋषभाद्रि पर कई दिव्यौषध हैं, यह तुम स्मरण रखो। वहाँ चार दिव्यौषध हैं और चारों के नाम तुम सुन लो। पहले विशल्यकरिणी नाम का एक (दिव्यौषध) है, फिर सन्तानकरिणी और तीसरा— ३० —सुवर्णकरिणी और हे मित्र ! चौथे का नाम है, मृत संजीवनी। (वहाँ पहुंचने पर) तुम्हें दो उन्नत श्रृंग दिखाई देंगे, उन दोनों के बीच ये औषध हैं। तुम यह जान लो कि वे चारों आदित्य सम प्रकाशमय हैं और वेदस्वरूप हैं। तुम तुरन्त सागर, कानन, शैल, सुन्दर नदियाँ और प्रान्त पार कर औषध ले आओ। हे मारुति ! तुम अविलंब निकलो।" इस प्रकार ब्रह्मा-पुत्र के वचन सुनकर भक्ति पूर्वक हाथ जोड़ प्रणाम करके वे (हनुमान) महेन्द्र पर्वत पर चढ़े। सुमेरु पर्वत के समान बढ़ गये और फिर सागर, पर्वत, लंका, राक्षस सब को कंपित करते हुए निर्भय घोर गर्जना की। वायु वेग से ऊपर उछल कर आकाश मार्ग से जाते हुए नीहार पर्वत (हिमवान) को पार कर ब्रह्माण्डभित्ति,

कालनेमियुटे पुरप्पाटु

मारुत नन्दननौषधत्तिन्नङ्ङु मारुत वेगेन पोयतरिञ्ञीरु चारवरन्मार् निशाचराधिपनोटारुमरियाते चेन्नु चौल्लीटिनार्; चारवाक्यं केट्टु रात्रिञ्चराधिपन् पारं विचारं कलर्न्नु मरुविनान्। चिन्तावशनाय् मुहूर्त्तमिरुन्नवनन्तर् गृहत्तिङ्कल् निन्नु पुरप्पेट्टु रात्रियिलारुं सहायं कूटाते रात्रिञ्चराधिपन् कालनेमी गृहं प्रापिच्चळवति विस्मयं पूण्टवनापूर्ण्णं मोदं तौळुतु सन्त्रस्तनाय्। अर्घ्यादिकळ् कौण्टु पूजिच्चु चोदिच्चानक्कोंदयं वरुं मुम्पे लघुतरं इङ्ङॆळुन्नॆळ्ळुवानॆन्तीरु कारणमिङ्ङनॆमट्टुळ्ळकम्पटि कूटाते? दुःख निपीडितनाकिय रावणनक्कालनेमि तन्नोटु चौल्लीटिनान्— इक्काल वैभवमेन्तु चौल्लावतुमोक्के निन्नोटु चौल्वानत्र वन्नतुं। १० शक्तिमानाकिय लक्ष्मणनेन्नुटे शक्तियेट्टाशु वीणीटिनान् भूतले। पिन्ने विरिञ्चास्त्र मेय्तुममात्मजन् मन्नवन्मारेयुं वानरन्मारेयुं कौन्नु रणाङ्कणं तन्निल् वीळ्त्तीटिनान् वेन्निप्परयुमट्टुप्पिच्चितात्मजन्। इन्नु जीविप्पिच्चु कौळ्ळुवान् मारुतनन्दननौषधत्तिन्नु

शंकर शैल (कैलास), धरा नदी, अलकापुरी— ४० —मेरु पर्वत, ऋषभाद्रि सब मारुति विस्मय पूर्वक देखने लगे। ४१

कालनेमि का आगमन

मारुति के मारुत वेग से औषध के लिए जाने का समाचार दूतों ने आकर एकांत में राक्षसराज को सुनाया। दूत-वाक्य सुनकर रात्रिचराधीश (रावण) बहुत ही चिन्तित हुआ। एक क्षण भर के लिए विचारमग्न रहने के उपरांत वह अन्तःपुर से बाहर निकला और एकांत रात के समय कालनेमि के घर पहुँच गया तो अत्यन्त विस्मय एवं प्रसन्नता के साथ उसने कंपित हाथों से प्रणाम किया, अर्घ्य आदि से पूजा की और (रावण से) पूछा—"अर्कोदय (सूर्योदय) के पूर्व इस प्रकार चारणों के बिना अकेले आने का क्या कारण है?" दुखार्त रावण ने तब कालनेमि से कहा—"समय के परिवर्तन के सम्बन्ध में तुमको क्या समझाऊँ! सब कुछ तुम्हें बताने के लिए ही आया हूँ। १० शक्तिमान लक्ष्मण मेरी शक्ति लगने से भूतल पर मूर्छित पड़े। फिर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर मेरे आत्मज (पुत्र मेघनाद) ने राजकुमारों (राम-लक्ष्मण) तथा वानरों को युद्ध-भूमि में मार गिराया और विजय दुन्दुभी बजायी। किन्तु आज (उन्हें) जीवन में लाने के लिए मारुति औषध को निकले हैं। तुम्हें

पोयीटिनान् । चेन्नु विघ्नं वरुत्तेणमतिन्नु नी न्निन्नोटुपायवुं चौल्लामतिन्नेटो ! तापसनाय्च्चेन्नु मार्ग्गं मद्ध्ये पुक्कु पाप विनाशनमायुळ्ळ वाक्कुकळ् चौल्लि मोहिप्पिच्चु काल विळंबनं वल्ल कणक्किलुं नी वरुत्तीटणं । तामस वाक्कुकळ् केट्टतेरं कालनेमियुं रावणन् तन्नोटु चौल्लिनान्— सामवेदज्ञ ! सर्वज्ञ ! लङ्केश्वर ! साममामेन्नुटे वाक्कुकळ् केळ्क्केणमे । न्निन्नेक्कुरिच्चु मरिप्पतिनिक्कालमेन्नुळ्ळिलेतुं मटियिल्ल निश्चयं । २० मारीच-नेक्कणक्के मरिप्पान्मन तारिलेनिक्केतुमिल्लोरु चञ्चलं । मक्कळुं तम्पिमारुं मरुमक्कळुं मक्कळुटे तल्लमक्कळुं भृत्यरुं औक्के मरिच्चु नी जीविच्चिरुन्निट्टु दुःखमोळ्ळिञ्ञेन्तोरु फलमुळ्ळतुं ? ऐन्तु राज्यं कोण्टु पिन्नेयोरु फलमेन्तु फलं तव जानकियेक्कोण्टुं ? हन्त ! जडात्मकमाय देहं कौण्टुमेन्तु फलं तव चिन्तिच्चु काण्केटो ! सीतये रामनु कौण्टक्कोटुत्तु नी सोदरनाय्-क्कोण्टु राज्यवुं नल्कुक । काननं तन्निल् मुनि वेषवुं पूण्टु मानस शुद्धियोटुं कूटि नित्यवुं प्रत्युषस्युत्थाय शुद्ध तोये कुळिच्चत्यन्त भक्तियोटर्क्कोदयं कण्टु सन्ध्या नमस्कारवुं चैय्तु शीघ्रमेकान्ते सुखासनं प्रापिच्चु तुष्टनाय् सर्व विषय संगङ्ङळुं कैविट्टु

अभी जाकर (मार्ग में) विघ्न डालना चाहिए । उसके लिए मैं तुम्हें उपाय सुझाता हूँ । तापस वेष में, मार्ग में जा बैठकर सात्विक वचनों से मुग्ध कर उनके कार्य में किसी न किसी प्रकार विलंब पहुँचाना चाहिए ।" नीच वचनों को सुनकर कालनेमि ने रावण से कहा—"हे सामवेदज्ञ ! हे सर्वज्ञ ! हे लंकेश्वर ! आप मेरे सौम्य वचन सुनने की कृपा करें । निश्चय ही आपका कार्य निभाकर मरने के लिए, मुझे अपने मन में कुछ भय नहीं है । २० मारीच के समान मरने को मुझे मन में कोई दुख भी नहीं है । पुत्र, अनुज, भतीजे, पौत्र, सेवक सब के मरने के उपरांत आपके जीवित रहने से क्या लाभ होगा ? फिर राज्य से आपका क्या प्रयोजन सिद्ध होगा और जानकी को लेकर आप क्या करेंगे ? आप ज़रा विचार पूर्वक देखें, इस जड़ात्मक देह से आपको क्या फल मिलेगा ? आप सीता को ले जाकर राम को दे दें और भ्राता (विभीषण) को राज्य देकर कानन में पहुँचकर मुनिवेष अपनाकर, निरंतर शुद्ध मन से प्रत्येक उषाकाल में उठकर, शुद्ध जल में स्नान कर तथा भक्ति से अर्कोदय देखकर, संध्या-वंदना करके शीघ्र ही एकान्त में संतुष्ट चित्त हो ध्यानस्थ बैठिए । सब प्रकार के विषय-भोगों की संगति छोड़कर, सब इन्द्रियों को

सर्वेन्द्रियङ्ङळुं प्रत्याहरिच्चुटन्; ३० आत्मनि कण्टु कण्टात्मान-मात्मना स्वात्मोदयं कोण्टु सर्वलोकङ्ङळुं स्थावर जंगम जाति-कळायुळ्ळ देव तिर्यङ्मनुष्यादि जन्तुक्कळुं देह बुद्धीन्द्रियाद्यङ्ङळुं नित्यनां देहि सर्वत्तिनुमाधारमेन्नतुं। आ ब्रह्मस्तंबपर्य्यन्त मायेन्तोन्नु तात्पर्य्यमुळ्ळकोण्टु कण्टतुं केट्टतुं ओक्कें प्रकृतियेन्नत्रे चोल्लप्पेटुं सद्गुरु माययेन्नुं परञ्ञीटुन्नु। इक्कण्ट लोक वृक्षत्तिन्न-नेकधा सर्ग्गं स्थिति विनाशङ्ङळ्क्कु कारणं। लोहित श्वेत कृष्णादि मयङ्ङळां देहङ्ङळेज्जनिप्पिक्कुन्नतुं माया। पुत्र गणं काम क्रोधादिकळेल्लां पुत्रिकळुं तृष्णा हिंसादिकळेटो ! तन्टे गुणङ्ङळेक्कोण्टु मोहिप्पिच्चु तन्टे वशत्ताक्कुमात्माविनेयवळ्। कर्त्तृत्व भोक्तृत्व मुख्य गुणङ्ङळे नित्यमात्मावाकुमीश्वरन् तङ्कले ४० आरोपणं चेय्तु तन्टे वशत्ताक्कि त्तेरे निरन्तरं क्रीडिच्चु कोळ्ळुन्नु। शुद्धनात्मा परनेकनवनोट्टु युक्तनाय् वन्नु पुरत्तु काणुन्नतु तन्नुटेयात्माविनेत्तान् मरक्कुन्नितन्वहं माया गुण विमोहत्तिनाल्। बोध स्वरूपनायोरु गुरुविनाल् बोधितनायाल्

वश में करके— ३० आत्मा में (मन में) आत्मानं (परमात्मा को) आत्मना (बुद्धि से) देख उससे उत्पन्न अपनी आत्मा के प्रकाश में समस्त जगत् को—स्थावर-जंगम जाति में आनेवाले देव, पशु-पक्षी, मनुष्य जैसे प्राणी, देह, बुद्धि, इन्द्रियाँ सब को—देख लीजिए। नित्य स्वरूप देही ही सब के लिए आधार है। ब्रह्मा से लेकर घास तक जो कुछ हम आसक्त हो देखते-सुनते हैं, वे सब कुछ प्रकृति कहे जाते हैं और सद्गुरु उन्हें ही माया कहा करते हैं। यह दिखाई देनेवाला संसार-वृक्ष अनेक प्रकार के सृष्टि-स्थिति-संहार के लिए कारणभूत है। लोहित (लाल), श्वेत, कृष्ण आदि रंगों से युक्त इन देहों की जननी तो माया ही है। इस माया के काम, क्रोध आदि पुत्र तथा तृष्णा, हिंसा आदि पुत्रियाँ हैं। यह माया अपने त्रिगुणों से मोहित कर आत्मा को अपने वश में करती है। नित्य के कर्तृत्व एवं भोक्तृत्व रूपी मुख्य गुणों का आत्मा रूपी ईश्वर पर। ४० —आरोप करके उसे अपने वश में लाकर वह (माया) निरन्तर क्रीड़ारत रहती है। परमात्मा शुद्ध अद्वय, एवं सब के परे है, वही माया के वश में आ जीव के रूप में बाहर प्रकट होता है। यह जीवात्मा माया के मोह में पड़कर अपने परमात्मस्वरूप को विस्मृत कर बैठती है। ज्ञानी गुरु को प्राप्त कर उसके ज्ञानोपदेश से ज्ञानी बनने तथा इन्द्रियों की आसक्ति से निवृत्त होने पर परमात्मा की स्पष्ट झलक

निवृत्तेन्द्रियनुमाय् काणुन्नितात्माविने स्पष्टमाय् सदा वेणुन्न-
तेल्लामवनु वन्नू तदा। दृष्ट्वा प्रकृतिगुणङ्ङळोटाशु वेर्पेट्टु
जीवन् मुक्तनाय् वरुं देहियुं। नीयुमेवं सदात्मानं विचारिच्चु
माया गुणङ्ङळिल् निन्नु विमुक्तनाय् अद्य प्रभृति विमुक्तनात्मा-
विति ज्ञात्वा निरस्ताशया जित कामनाय् ध्यान निरतनाय्
वाळ्केन्नाल् वरुमानन्दमेतुं विकल्पमिल्लोवर्कं नी। ध्यानिप्पतिन्नु
समर्त्थनल्लेङ्किलो मानसे पावने भक्ति परवशे ५० नित्यं सगुणनां
देवनेयाश्रयिच्चत्यन्त शुद्ध्या स्वबुद्ध्या निरन्तरं हृत्पत्म कर्णिका
मद्ध्ये सुवर्ण्ण पीठोत्पले रत्नगणाञ्चिते निर्म्मले श्लष्ण मृदुतरे
सीतया संस्थितं लक्ष्मण सेवितं बाण धनुर्द्धरं वीरासनस्थं विशाल
विलोचन मैरावती तुल्य पीतांबरधरं हार किरीट केयूरांगदांगु-
लीयोरु रत्नाञ्चित कुण्डल नूपुर चारु कटक कटिसूत्र कौस्तुभ
सारस माल्यवनमालिकाधरं श्रीवत्स वक्षसं रामं रमावरं श्री
वासुदेवं मुकुन्दं जनार्द्दनं सर्वहृदि स्थितं सर्वेश्वरं परं शर्ववन्द्यं
शरणागत वत्सलं। भक्त्या परब्रह्मयुक्तनाय् ध्यानिक्किल्

प्राप्त होती है। और विदित होता है कि सदा वही प्रकाम्य है। उस
परमात्मा का दिव्य दर्शन करके देहयुक्त जीव प्रकृति के गुणों से अलग हो
जीवन-मुक्त बन जाएगा। हे रावण! आप भी इस प्रकार सदा पर-
मात्मा का ध्यान करते हुए, माया गुणों से विमुक्त हो जाइये। 'आज से
मैं माया से विमुक्त हूँ' ऐसा जानकर, इच्छाओं को छोड़कर तथा कामनाओं
पर विजयी बन आप ध्यान निरत हो जाइये। ऐसा करने पर परमानंद
की प्राप्ति होगी। इसमें विकल्प के लिए कोई स्थान नहीं है; यह आप
समझ लीजिए। अगर (निर्गुण के) ध्यान की सामर्थ्य नहीं है तो पावन
मन में, भक्ति परवश हो— ५० अपनी शुद्ध बुद्धि से, अपने हृदय-रूपी
पद्मदल के मध्य में रत्नों से अलंकृत, निर्मल एवं स्निग्धमृदल स्वर्ण-पीठ
पर उन सगुण भगवान को स्थापित कीजिए, जो सीता-युक्त, लक्ष्मण से
सेवित, धनुष-बाणधारी, वीरासनस्थ, विशाल नेत्रवाले, बिजली के समान
प्रकाशमय पीतांबरधारण करनेवाले, हार, केयूर, अंगद, अंगुलीय, रत्नों से
सुसज्जित एवं अलंकृत कुंडल, नूपुर कटक, कटिसूत्र (मेखला), कौस्तुभ,
सारस माल्य (कमलों की माला), वनमाला आदि आभूषणों को धारण
करनेवाले हैं; जिनके वक्षःस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न है, जो लक्ष्मी देवी
के पति हैं, जो वासुदेव, मुकुन्द, जनार्दन, सब के हृदय में निवास करने-
वाले, सर्वेश्वर, परमात्मा, शर्ववन्द्य (शिव से पूजित) तथा शरणागत

मुक्तनाय् वन्नु कूटुं भवान् निर्ण्णयं। तच्चरित्रं केट्टु कोळ्कयुं चोल्कयुमुच्चरिच्चु राम रामेति सन्ततं ६० इङ्ङने कालं कळिच्चु कोळ्ळेन्नाकिलेङ्ङने जन्मङ्ङळ् पिन्नेयुण्टाकुन्नु ? जन्म जन्मान्तरत्तिङ्कलुमुळ्ळोरु कल्मषमोक्के नशिच्चुपों निश्चयं। वैरं वेटिञ्ञति भक्ति संयुक्तनाय् श्रीरामदेवनेत्तन्ने भजिक्क नी। देवं परिपूर्णमेकं सदा हृदि भावितं भावरूपं पुरुषं परं। नाम रूपादि हीनं पुराणं शिवं राममेवं भजिच्चीटु नी सन्ततं। राक्षसेन्द्रन् कालनेमि परञ्ञोरु वाक्कुकळ् पीयूष तुल्यङ्ङळ् केळ्क्कयाल् क्रोधताम्राक्षनाय् वाळुमाय् तल्गळं छेदिप्पतिन्नोरुम्पेट्टु चोल्लीटिनान्— निन्ने वेट्टिक्कळञ्ञिट्टिनि कार्य्यङ्ङळ् पिन्नेयेल्लां विचारिच्चु कोळ्ळामेटो ! कालनेमि क्षणदाचरनन्नेरं मूलमेल्लां विचारिच्चु चोल्लीटिनान्— राक्षसराज ! दुष्टात्मन् ! मति मति रूक्षत भावमितु कोण्टु किं फलं ? ७० निन्नुटे शासनं ञाननुष्ठिप्पतितेन्नुट सल्गतिक्केन्नु धरिक्क नी। सत्य स्वरूपत्ते वञ्चिप्पतिन्नु ञानद्य समुद्युक्तनायेन् मटियाते। ऎन्नु परञ्ञु हिमाद्रि पार्श्वे भृशं चेन्निरुन्नान् मुनि वेषमाय् तत्क्षणे। काणायिताश्रमं

वत्सल हैं। भक्ति पूर्वक उन परब्रह्म राम का ध्यान करने से आप निश्चय ही मुक्त हो जाएंगे। उनका चरित नित्य सुनें, नित्य बोलें तथा सन्तत राम राम राम— ६० ऐसा नामोच्चारण करें तो फिर भला कैसे पुनर्जन्म के वश में पड़ेंगे ? (राम का भजन करने से) निस्संदेह जन्म-जन्मांतरों के पाप मिट जाएँगे। इसलिए वैर-भाव को त्यागकर, आप श्रीरामदेव का भजन करते जाइये। राम परिपूर्ण, अद्वय, सदा हृदय में भावित होनेवाले, भावरूप (सत्य स्वरूप), परमात्मा, नाम रूपात्मक गुणों से रहित, पुराणपुरुष, शिवस्वरूप हैं। ऐसे राम का आप नित्य निरंतर भजन कीजिए।" कालनेमि के पीयूष (अमृत) तुल्य वचन सुनकर राक्षसेन्द्र क्रुद्ध हो ताम्राक्ष (लाल लाल नेत्रवाला) हो गया और वह खड्ग लिये उसका गला काटने के लिए तैयार हो इस प्रकार कहने लगा—"अब तुम्हें काट डालने के उपरांत ही मैं अपने भावी कार्य पर विचार करूँगा।" क्षणदाचर (रात्रिचर) कालनेमि ने तब अपना मूल (पूर्वजन्म वृत्तान्त) सोचकर, कहा—"हे राक्षसराज ! हे दुष्टात्मा ! बस कीजिए बस कीजिए। क्रुद्ध होने से क्या प्रयोजन है ? । ७० आपकी आज्ञा का पालन करने से आज मेरी सद्गति होगी, यह आप समझ लीजिए। सत्यस्वरूप भगवान से छल करने के लिए मैं आज निस्संकोच तैयार हो खड़ा हूँ।" यह कहकर

माया विरचितं नाना मुनिजन सेवितमायतं, शिष्य जन परिचारक संयुतमृष्याश्रमं कण्टु वायु तनयनुं चिन्तिच्चु निन्ना-निविटेयीराश्रममेन्तु मूलं पण्टु कण्टिट्टुमिल्ल ञान् । मार्ग्गं विभ्रंशं वरिकयो केवलमोर्क्कणमेन्मनोविभ्रममल्लल्ली ? नाना प्रकारवुं तापसनेक्कण्टु पानीय पानवुं चेय्तु दाहं तीर्त्तु काणां महौषधं निल्क्कुमत्युन्नतं द्रोणाचलं रघुपुंगवानुग्रहाल् । इत्थं निरूपिच्चोरु योजनायतं विस्तारमाण्टमायाश्रममश्रमं ८० रंभा-पनस खर्ज्जूर केराम्रादि सम्पूर्ण्णमत्यच्छ तोयवापीयुतं । कालनेमि त्रियामाचरनुं तत्रशालयिल्ऋत्विक्सदस्यादि कळोटुं इन्द्रयागं दृढ-माम्माऱनुष्ठिच्चु चन्द्र चूड प्रसादं वरुत्तीटुवान् भक्त्या शिवपूजयुं चेय्तु वाळुन्न नक्तञ्चरेन्द्रनां तापस श्रेष्ठने वीणु नमस्कारवुं चेय्तुटन् जगल्प्राणतनयनुमिङ्ङने चोल्लिनान्— रामदूतोहं हनुमानिति मम नामं पवनजनञ्जनानन्दनन्; राम कार्य्यार्त्थमाय् क्षीरांबु राशिक्कु सामोदमिन्नु पोकुन्नु तपोनिधे ! देहरक्षार्त्थ मिविटेय्क्कु वन्नितु दाहं पोऱाञ्ञु तण्णीर् कुटिच्चीटुवान् ।

मुनिवेष धारण कर हिमवान के पार्श्व में वह तुरन्त ही आ बैठा। वहाँ नाना मुनियों से सेवित माया से विरचित एक विशाल आश्रम तुरन्त ही प्रकट हो गया। शिष्यजनों, परिचारकों से संयुत ऋषि का आश्रम वायुतनय (हनुमान) ने देख लिया। वे सोचकर खड़े हो गये यहाँ एक आश्रम कैसे बना ? इसके पूर्व कभी मैंने यह नहीं देखा। क्या मैं मार्ग भ्रष्ट नहीं हुआ ? या यह केवल मेरे मन का ही विभ्रम है ? कुछ भी हो, तापस का दर्शन कर तथा जल पी करके तृषा बुझाकर, फिर श्रीरामजी की कृपा से दिव्यौषधों से भरा उन्नत द्रोणाचल देखूँगा। यह सोचकर एक योजन विस्तार उस माया-निर्मित आश्रम में वे पहुँचे। ८० वह आश्रम रंभा (केल वृक्ष), पनस (कटहल), खजूर, केर (नारियल), आम्र आदि वृक्षों से संकुल था। वहाँ स्वच्छ जल वाली निर्मल वापी थी। त्रियामाचर (राक्षस) कालनेमि उस आश्रम में ऋत्विक् (याग कर्म के अधिकारी लोग), सदस्य आदियों के साथ चन्द्रचूड़ (शिव) का प्रसाद प्राप्त करने के लिए दृढ़ता पूर्वक इन्द्रयाग का अनुष्ठान कर रहा था। भक्तिपूर्वक शिवपूजा करते बैठे राक्षस रूपी तापस श्रेष्ठ के चरणों पर प्रणाम करते हुए, वायुपुत्र ने इस प्रकार कहा—"मैं राम का दूत हूँ; मेरा नाम हनुमान है। मैं पवन-तनय और अंजनापुत्र हूँ। हे तपोनिधि ! मैं राम के कार्यार्थ क्षीरसागर तक आज जा रहा हूँ। देह-रक्षार्थ जल

ऐङ्ङु जलस्थलमेन्तरुळ् चेय्यणमेङ्ङुमे पार्क्करुतेन्नेन् मनोगतं। मारुति चोन्नतु केट्टु निशाचरन् कारुण्य भावं नटिच्चु चोल्लीटिनान्—९० मामकमाय कमण्डलुस्थं जलमामयं तीरुवोळं कुटिच्चीटुक। पक्व फलङ्ङळुं भक्षिच्चनन्तरं दुःखं कळञ्ञु कुऱच्चोन्नुरङ्ङुक। एतुं परिभ्रमिक्केण्ट भवानिनि भूतवुं भव्यवुं मेलिल् भविष्यतुं दिव्य दृशा कण्टरिञ्ञिरिक्कुन्नितु सुव्यक्तमायतु कोण्टु चोल्लीटुवन्— वानरन्मारुं सुमित्रा तनयनुं मानव वीर निरीक्षितराकयाल् मोहवुं तीर्न्नेळुन्नेट्टितेल्लावरुं आहवत्तिन्नोरुमिच्चु निन्नीटिनार्। इत्थमाकर्ण्य चोन्नान् कपिपुंगवनेवयुं कारुण्य शालियल्लो भवान्। पारं पेरुतुमे दाहमतु कोण्टु पोरा कमण्डलु संस्थितमां जलं। वायुतनयनेवं चोन्न नेरत्तु माया विरचित माया वटुविनें तोयाकरं चेन्नु काट्टिक्कोटुक्केन्नु भूयो मुदा कालनेमियुं चोल्लिनान्। १०० नेत्र निमीलनं चेय्तु पानीयवुं पीत्वा ममान्तिकं प्रापिक्क सत्वरं अन्नाल् निनक्कौषधं कण्टु किट्टुवानिन्नु नल्लोरु मन्त्रोपदेशं चेय्वन्। ऎन्नतु केट्टु विश्वासेन मारुति चेन्नानयच्च वटुविनोटुं मुदा। कण्णुमटच्चु

पीकर प्यास बुझाने के लिए मैं यहाँ आया हूँ। आप कृपा पूर्वक जल प्राप्त करने का स्थान बता दें; कहीं ठहरने का मेरा विचार नहीं है।" मारुति का वचन सुनकर करुणाभाव का बहाना करते हुए निशाचर ने कहा— ९० "मेरे कमण्डलु में भरा जल इच्छा पूर्वक पान कर तुम प्यास बुझा दो। फिर पक्वफल खाकर आलस्य एवं थकान दूर करने के लिए थोड़ी देर तक सुखपूर्वक नींद लो। तुम घबराओ मत। । भूत, भावी और वर्तमान को मैं दिव्यदृष्टि से देख बैठा हूँ। जो सुव्यक्त है, उसे मैं तुम्हें बता देता हूँ। मानववीर (राम) के कृपा-कटाक्ष से वानर तथा सुमित्रात्मज मूर्छा हटकर जीवित उठ बैठ चुके हैं।" यह सुनकर कपिपुंगव ने कहा—"आप बड़े कृपालु हैं। मेरी इतनी प्यास है कि उसे शान्त करने के लिए आप के कमण्डलु का जल पर्याप्त नहीं होगा।" वायु तनय के इस प्रकार कहते ही माया विरचित एक वटु (ब्रह्मचारी) को फिर कालनेमि ने प्रसन्नता पूर्वक आज्ञा दी कि तुम ले जाकर तोयाकर (वापी) दिखा दो। १०० (उसने हनुमान से कहा कि) "नेत्र बन्द करके पानी पीकर तुरन्त मेरे पास आ जाओ। फिर मैं तुम्हें दिव्यौषध को ढूंढ पाने में सहायक एक मंत्र का उपदेश करूँगा।" यह सुनकर पूर्णरूप से उस पर विश्वास करके मारुति साथ भेजे वटु के साथ चले

वापीतटं प्रापिच्चु तण्णीर कुटिप्पान् तुटङ्ङुं दशान्तरे वन्नु भयङ्करियाय मकरियुमुन्नतनाय महाकपि वीरने तिन्नु कळवानो-रुम्पेट्ट नेरत्तु कण्णु मिळिच्चु कपीन्द्रनुं नोक्किनान्। वक्त्रं पिळर्न्नु कण्टोरु मकरियें हस्तङ्ङळ् कोण्टु पिळर्न्नान् कपिवरन्। देहमुपेक्षिच्चु मेल्पोट्टु पोयितु देहियुं मिन्नल् पोले तदत्यत्भुतं। दिव्य विमान देशे कण्टितन्नेरं दिव्य रूपत्तोटु नारी मणियेयुं। चेतोहरांगियामप्सर: स्त्री मणि वातात्मजनोटु चोन्नाळतु नेरं— ११० निन्नुटे कारुण्य मुण्टाकयालेनिक्किन्नु वन्नू शापमोक्षं कपिवर ! मुन्नमोरप्सर: स्त्री ञानोरु मुनि तन्नुटे शापेन राक्षस-यायतुं। धन्यमालीति मे नामं महामते ! धन्यनां नीयिनियोन्नु धरिक्कणं। अत्र पुण्याश्रमे नी कण्ट तापसन् नक्तञ्चरन् कालनेमि महाखलन्। रावण प्रेरितनाय् वन्निरुन्नवन् तावक मार्ग्गं विघ्नं वरुत्तीटुवान्। तापस वेषं धरिच्चिरिक्कुन्नितु तापसदेव भूदेवादि हिंसकन्। दुष्टने वेगं वधिच्चु कळञ्ञिनिप्पुष्ट मोदं द्रोण पर्वतं प्रापिच्चु दिव्यौषधङ्ङळुं कोण्टङ्ङु चेन्निनि क्रव्यादवंशमशेष-मोटुक्कुक। ञानिनि ब्रह्मलोकत्तिनु पोकुन्नु वानरवीर ! कुशलं

और नेत्रनिमीलन करके वापी तट पर पहुँचे और पानी पीने का आरंभ करते ही एक भयंकर मगरी उन्नत कपीन्द्र को ग्रस लेने के लिए आगे बढ़ी। तब कपीन्द्र ने नेत्र खोल उसे देखा। मुँह बाये मगरी को कपि-वर ने अपने हाथों से फाड़ दिया। तब अत्यन्त विस्मय प्रदान करती हुई उसकी आत्मा बिजली की कौंध के समान देह छोड़ ऊपर चली गयी। आकाश में एक दिव्य विमान में एक दिव्य नारी रूप में वह दिखाई देने लगी। सुन्दरांगी अप्सरा नारी ने तब वातात्मज (हनुमान) से कहा— ११० —"हे कपिवर ! तुम्हारी कृपा से मैं आज शाप मुक्त हुई। मैं पहले एक अप्सरा थी, जो एक मुनि के शाप से राक्षसी बनी थी। हे महामति ! मेरा नाम धन्यमाली है। तुम बड़े धन्य हो। तुम एक बात समझ लो कि वहाँ तापसाश्रम में तुमने जिस तापस को देखा, वह दुष्ट कालनेमि नाम का राक्षस है। तुम्हारा मार्ग-विघ्न करने के लिए वह रावण से प्रेरित हो आया हुआ है। तापस वेषधारी वह तापसों, भूदेवों का हिंसक है। तुम तुरन्त उस दुष्ट का वध करके सुख पूर्वक तुरन्त ही द्रोण पर्वत पर पहुँचकर दिव्यौषध ले जाकर राक्षस वंश को निश्शेष समाप्त करो। हे वानरवीर ! मैं अब ब्रह्मलोक की राह ले रही हूँ। तुम्हारा कुशल हो !" यह कहकर वह चली गयी; मारुति

भविक्कते । पोयाळिवण्णं पउन्ञवळ्; मारुति मायावियां कालनेमि तन्नन्तिके १२० चेन्नानवनोटु चोन्नानसुरनुं वन्नीटु वानित्र वैकियतेन्तेटो ! कालमिनिक्कळयाते वरिक नी मूलमन्त्रो-पदेशं चेय्वनाशु ञान् । दक्षिणयुं तन्नभिवाद्यवुं चेय्क दक्षनाय् वन्नु कूटुं भवान् निर्णयं । तल्क्षणे मुष्टियुं बद्ध्वा दृढतरं रक्षः प्रवरोत्तमांगे कपिवरन् ओन्नटिच्चानतु कोण्टवनुं तदा चेन्नु पुक्कीटिनान् धर्म्मराजालयं । १२५

दिव्यौषध फलम्

क्षीरार्ण्णवत्तेयुं द्रोणाचलत्तेयुं मारुति कण्टु वणङ्ङि नोक्कुं विधौ औषधावासमृषभाद्रियुं कण्टितौषधमोन्नुमे कण्टतु-मिल्लल्लो । काणाञ्ञु कोपिच्चु पर्वतत्तेप्पउिच्चेणाङ्क बिम्बं कणक्केपिटिच्चन्न् कोण्टु वन्नप्पोटु राघवन् मुम्पिल् वच्चिण्टल् तीर्त्तीटुवान् वन् पटय्क्कन्नेरं । कोण्टल् नेर्वण्णनुं प्रीतिपूण्टान् नील कण्ठनुमानन्दमाय् वन्नितेटवुं । औषधत्तिन् काटुतट्टिय नेरत्तु दोषमकन्नेळुन्नेटि्टेल्लावरुं । मुन्नमिरुन्नवण्णं तन्नेयाक्कण-मिन्नु तन्ने शैलमिल्लोरु संशयं । अल्लाय्किलेङ्ङने रात्रिञ्चर-

---

कालनेमि नामक राक्षस के पास । १२० —पहुँचे तो राक्षस ने पूछा कि आने में इतना विलंब क्यों हुआ ? अब व्यर्थ देर मत करो, मैं तुरन्त ही मन्त्रोपदेश देता हूँ । तुम दक्षिणा देकर प्रणाम करो, तुम निस्संदेह (औषध पहचानने में) समर्थ बनोगे । तत्क्षण ही कपिवर ने राक्षसप्रवर के उत्तमाँग (मस्तक) पर बद्धमुष्टि से एक प्रहार दिया, जिसके लगते ही वह धर्मराज के आलय (यमलोक) में पहुँच गया । १२५

दिव्यौषध का फल

जब मारुति क्षीरार्णव और द्रोणाचल को देख प्रणाम करते खड़े थे, तब औषध का वासस्थान ऋषभाद्रि दिखाई पड़ा, किन्तु कोई औषध वहाँ दिखाई नहीं दे रहा था । इस पर क्रुद्ध हो उन्होंने पर्वत को ही उखाड़ कर चन्द्रबिंब के समान हाथ में उठा लिया, विशाल (वानर) सेना की मूर्छा दूर करने के लिए राम के सम्मुख ला रखा । इससे घनश्याम (विष्णु) प्रसन्न हो उठे; नीलकंठ (शिव) भी बहुत ही आनन्दित हुए । औषध की हवा लगते ही सब लोग मूर्छा के हटने से उठ बैठ गये । 'पहले के जैसे ही पर्वत को ले जा कर रखना है, अन्यथा निशाचरों का वध

बलं कोल्लुन्नतेन्नरुळ् चेय्तोरनन्तरं कुन्नुमेंट्टुत्तुयन्नान् कपिपुंगवन् वन्नानरनिमिषं कोण्टु पिन्नेयुं। युद्धे मरिच्च निशाचरन्मारुटलु नक्तञ्चरेन्द्र नियोगेन राक्षसर् १० वारान्निधियिलिट्टीटिनारेन्नतु कारणं जीविच्चतिल्ल रक्षोगणं। ११

मेघनाद वधम्

राघवन्मारुं महाकपि वीररुं शोकमकन्नु तेळिञ्ञु वाळुं विधौ मर्क्कट नायकन्मारोटु चोल्लिनानर्क्क तनयनुमंगदनुं तदा। ज़िल्क्करुतारुं पुऱत्तिनि वानररोक्केक्कटक्क मुऱिक्क मतिलुकळ्। वय्क्क गृहङ्ङळिलोक्कवे कोळ्ळियुं वृक्षङ्ङळोक्के मुऱिक्क तेरुतेरे, कूप तटाकङ्ङळ् तूर्क्क किटङ्ङुकळ् गोपुर द्वारावधि निरत्तीटुक। मिक्कतुमोक्के योंटुङ्ङि निशाचररुळ्ळकरुत्तुळ्ळवरिन्नु मुण्टेङ्किलो वेन्तु पाऱाञ्ञालुप्पुऱत्तु पुऱप्पेंटुमन्तकन् वीट्टिन्नयय्क्कामनुक्षणं। अन्नतु केट्टवर् कोळ्ळियुं कैक्कोण्टु चेन्नु तेरुतेरे वच्चु तुटङ्ङिनार्। प्रासाद गोपुर हर्म्म्यं गेहङ्ङळुं कासीस काञ्चन रूप्य ताम्रङ्ङळुं आयुधशालकळाभरणङ्ङळुमायतनङ्ङळु मञ्जन शालयुं; १० वारण वृन्दवुं वाजि समूहवुं तेरुकळुं वेन्तु वेन्तु वीणीटुन्नु।

नहीं कर सकेंगे', ऐसा (राम के) कहते ही कपिवर हनुमान पर्वत ले आकाश को उठे और आधे पल में वापस आये। युद्ध में मारे गये निशाचरों के शरीर निशाचरेन्द्र की आज्ञा पर राक्षसों ने— १० —सागर में डाले थे, इस कारण राक्षसगण जीवित नहीं उठे। ११

मेघनाद-वध

जब राम-लक्ष्मण और महावानर वीर दुख से निवृत्त हो सानंद बैठे थे, तब मर्कटनायक (सुग्रीव) तथा अंगद ने मर्कटवीरों से कहा कि अब कोई भी बाहर न खड़े रहे; दुर्ग भेद कर सब वानर अन्दर घुस जाएँ। तुम लोग सारे भवनों को आग लगा दो और सारे वृक्ष जल्दी-जल्दी काट डालो। कुओं, तालाबों को पाट दो और गोपुर द्वार तक खाइयाँ भर दो। अधिकतर राक्षस मर चुके हैं, अगर कोई शक्ति-शाली शेष है तो भवन को आग लगते ही बाहर निकल आएँगे। तब सब को तुरन्त ही यमपुरी भेज सकेंगे।" यह सुनकर हाथ में आग लिये वे क्रम से भवनों को आग लगाते गये। प्रासाद गोपुर, महल, भवन, कासीस, स्वर्ण, चाँदी ताँबा, आयुधशाला, आभूषण, घर, मज्जनशाला,— १० —वारण वृन्द,

स्वर्ग्ग लोकत्तोळमेत्ती दहननुं शक्रनोटङ्ङरियिच्चाननाकुलं मारुति चुट्टतिलेऱे तऩ्ऩाय्च्चमच्चोरु लङ्कापुरं भूतियाय् वऩ्ऩितु । रात्रिञ्चर स्त्रीकळ् वेन्तलऱिप्पाञ्ञुमार्त्तिमुळ्ळुत्तु तेरुतेरे चाकयुं; मार्त्ताण्ड गोत्रजनाकिय राघवन् कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ् पोळिक्कयुं गोत्रारिजित्तु जयिच्चतुमेत्रयुं पार्त्तोळमत्भुतमेऩ्ऩु पऱकयुं । रात्रिञ्चरन्मार् तिलविळि घोषवुं रात्रिञ्चर स्त्रीकळ् केळुन्न घोषवुं, आनकळ् वेन्तलऱीटुऩ्ऩ घोषवुं दीनत पूण्ट तुरगङ्ङळ् नादवुं, सन्ततं तिङ्ङिमुळङ्ङिच्चमञ्ञितु चिन्त मुळ्ळुत्तु दशानन वीरनुं कुंभकर्ण्णात्मजन्मारिल् मुम्पुळ्ळोरु कुंभनोटाशु ऩी पोकेऩ्ऩु चोल्लिनान् । २० तम्पियायुळ्ळ निकुंभनुमन्नेरं मुम्पिल् ञानेऩ्ऩु मुतिर्न्नु पुऱप्पेट्टान् । कम्पनन् तानुं प्रजंघनुमेत्रयुं वन्पुळ्ळ यूपाक्षनुं शोणिताक्षनुं वन् पटयोटुं पुऱप्पेट्टु चेऩ्ऩळविम्पं कलर्न्नुटुत्तार् कपिवीररुं । रात्रियिलार्त्तङ्ङटुत्तुपोरुतोरु रात्रिञ्चरन्मार् तेरुतेरेच्चाकयुं; कूर्त्त शस्त्रास्त्रङ्ङळ् कोण्टु कपिकळुं गात्रङ्ङळ् भेदिच्चु धात्रियिल् वीळ्कयुं; एट्टु पिटिच्चु मिटिच्चुमटिच्चु-

---

अश्व समूह, रथ सब जल कर भस्म हो गिरने लगे। दहन (अग्नि) ऊपर स्वर्गलोक तक पहुँच गया और अनाकुल भाव से शक्र को सूचना दी कि मारुति के जलाने से अधिक (आज) लंकापुरी भस्मीभूत हुई। निशाचरियाँ आग में जलकर व्याकुल हो भागती हैं, तो बड़ी संख्या में विलाप करती मर पड़ती हैं। मार्तण्ड गोत्रज (सूर्यवंशी) राम नुकीले बाणों की वर्षा करते रहे। (वे स्त्रियाँ कहने लगीं कि) विचार करने पर इन्द्रजीत ने इन वीरों पर जो विजय पायी, वह विस्मय की बात है। राक्षसों के चिल्लाने की आवाज़, राक्षसियों के विलाप की आवाज़, जल मरते हाथियों के चिंघाड़ने की ध्वनि, करुणार्द्र अश्वों के हींसने का स्वर, निरन्तर बढ़ता ही गया और सब कहीं मुखरित हो उठा। वीर दशानन की (ये स्वर सुनकर) चिन्ता बढ़ गयी। उसने कुंभकर्ण के पुत्रों में ज्येष्ठ कुंभ से तुरन्त लड़ने जाने का आग्रह किया। २० तब उसका अनुज निकुंभ 'पहले मैं ही जाऊँगा', ऐसा सोचकर (युद्ध के लिए) निकल पड़ा। कम्पन, प्रजंघ, बड़ा ही उग्र यूपाक्ष, शोणिताक्ष, आदि भी विशाल सेना लेकर आये तो कपिवर भी प्रसन्न हो आगे बढ़े। रात में कोलाहल मचाते आये राक्षस एक-एक करके मर गिरते गये। नुकीले शस्त्र लगकर कपिवर भी आहत शरीर हो पृथ्वी पर गिर पड़ने लगे। परस्पर धक्का देकर, कभी पकड़कर, कभी मुष्टि से

मङ्ङूटं त़टिच्चुं पौटिच्चुं परस्परं; चीटं मुळुत्तु पऱिञ्ञुं मरामरं तोट्टु पोकाय्कॅन्ऩु चौल्लियटुक्कयुं; वानर राक्षसन्मार् पौरुतार- भिमानं त़टिच्चुं त्यजिच्चुं कळेबरं। त़ालञ्चु त़ाऴिक त़ेरं पौरुतप्पोळ् कालपुरि पुक्कितेटॅरक्षोगणं। कम्पनन् वन्पोटट्टुत्ता- नतु त़ेरसम्पु कौण्टेटॅमकऩ्ऩु कपिकळुं। ३० कम्पं कलऩ्ऩौटॅ्टिच्चा- रतु कण्टथ जंभारिनन्दन पुत्रनुं कोपिच्चु कम्पनन् तन्न वधिच्चोर- नन्तरं पिन्पे तुटऩ्ऩटुङ्ङट्टुत्तान् प्रजंघनुं। यूपाक्षनुं तथा शोणित- नेत्रनुं कोपिच्चटुत्तारतु त़ेरमंगदन् कौणपन्मार् मूवरोटुं पौरुतति क्षीणनाय् वऩ्ऩतु बालितनयनुं। मैन्दनुमाशु विविदनुमाय तत्र मन्देतरं वऩ्ऩटुत्तारतु त़ेरं। कौऩ्ऩान् प्रजंघनेत्तारेयनुमथ पिन्ने- यव्वण्णं विविदन् महाबलन् कौऩ्ऩितु शोणितनेत्रनेयुमथ मैन्दनुं यूपाक्षनेक्कौऩ्ऩु वीऴ्ऩतनान्। नक्तञ्चरवरन्मारवर् त़ाल्वरुं मृत्युपुरं प्रवेशिच्चोरनन्तरं कुंभनणञ्ञु शरं पौऴिच्चीटिनान् वन्परां वानरन्मारौक्कॅ मण्टिनार्। सुग्रीवनुं तेरिलाम्मारु चाटिवीणुग्रतयोटवन् विल् कळञ्ञीटिनान्। ४० मुष्टियुद्धं चैय्त त़ेरत्तु कुंभनेप्पेटॅ्टॅन्ऩौटुत्तेऱिञ्ञीटिनानब्धियिल्; वाराऩ्निधियुं

प्रहार कर, वे लड़ते गये। पीठ दिखानेवाले को रोककर शत्रु लोग मारने लगे और आगे बढ़ने का प्रयास करते गये। वानरों तथा राक्षसों ने अपने शरीर पर ध्यान दिये बिना अपनी आन की रक्षा के लिए घोर युद्ध किया। इस प्रकार चार-पाँच घण्टों तक के युद्ध के फलस्वरूप अधिक संख्या में राक्षसवीर यमपुरी पहुँच गये। तब बड़ी सेना लेकर कम्पन आगे आया और उसके बाण-प्रहार से कपिवर दूर भागते गये। ३० यह देखकर जंभारिपुत्र (बालि) के नन्दन (पुत्र) ने सामने आ उसे रोक लिया और बहुत क्रुद्ध हो उसे मार डाला। तुरन्त ही पीछे खड़ा प्रजंघ सामने आ भिड़ गया। फिर यूपाक्ष, और शोणिताक्ष भी क्रोधान्वित हो सामने आये तो अंगद ने तीनों से युद्ध किया। किन्तु लड़ते-लड़ते अंगद थक गया। यह देख तुरन्त ही मैन्द और विविद उल्लसित हो उसकी सहायता के लिए आ पहुँचे। युद्ध में तारेय (अंगद) ने प्रजंघ का वध किया; वैसे ही महाबलशाली विविद ने शोणिताक्ष को तथा मैन्द ने यूपाक्ष को मार गिराया। जब चारों राक्षसप्रवर मृत्युपुर में प्रविष्ट हुए तब कुंभ सामने आ बाण-वर्षा करने लगा। बड़े से बड़े वानरवीर तक भाग खड़े हुए। (यह देख) सुग्रीव उसके रथ में कूद पड़े और उग्रतापूर्वक युद्ध करके उसका बाण काट डाला। ४० जब कुंभ ने मुष्टियुद्ध आरम्भ किया तब (सुग्रीव ने)

कलक्कि मरिच्चतिघोरनां कुंभन् करेरि वन्नीटिनान् । सूर्य्यात्मजनुमतु कण्टु कोपिच्चु सूर्य्यात्मजालयत्तिन्नयच्चीटिनान् । सुग्रीवनग्रजनेक्कोन्न नेरमत्युग्रन् निकुंभन् परिघवुमायुटन् संहार रुद्रनेप्पोले रणाजिरे सिंहनादं चेय्तटुत्तानतु नेरं । सुग्रीवनेप्पिन्निलिट्टु वातात्मजनग्रे चेरुत्तान् निकुंभनेत्तल्क्षणे । मारुति मारिलटिच्चान् निकुंभनुं पारिल् नुरुङ्ङि वीणू तल्परिघवुं । उत्तमांगत्तेप्परिच्चेरिञ्ञानति क्रुद्धनायोरु जगल्प्राणपुत्रनुं । पेटिच्चु मण्टिनार् शेषिच्च राक्षसर् कूटेत्तुटर्न्नंटुत्तार् कपिवीररुं । लङ्कयिल् पुक्कटच्चारवरुं चेन्नु लङ्केशनोटरियिच्चारवस्थकळ् । ५० कुंभादिकळ् मरिच्चोरु दन्तं केट्टुजंभारि वैरियुं भीति पूण्टीटिनान् । पिन्नेक्खरात्मजनां मकराक्षनोटन्यूनकोपेन चोन्नान् दशाननन्—चेन्नु नी रामादिकळेज्जयिच्चिङ्ङु वन्नीटुकेन्न नेरं मकराक्षनुं तन्नुटे सैन्य समेतं पुरप्पेट्टु सन्नाहमोटुमटुत्तु रणाङ्कणे । पन्नग तुल्यङ्ङळाय शरङ्ङळे वह्नि कीलाकारमाय्च्चोरिञ्ञीटिनान् । तिन्नु कूटाञ्ञु भयप्पेट्टु वानरर् चेन्नभयंतरिकेन्नु रामान्तिके

उसे उठाकर सागर में फेंक दिया । सागर में उथल-पुथल मचाता हुआ भयंकर कुंभ (सागर से) निकलकर (युद्धभूमि में) फिर आ पहुँचा । यह देख सूर्यात्मज (सुग्रीव) ने उसे तुरन्त ही सूर्यात्मजालय (कालपुरी) में भेज दिया । जब सुग्रीव ने भाई को मारा तब निकुंभ परिघ ले संहाररुद्र के समान रणभूमि में सिंहनाद करता हुआ आ पहुँचा । यह देखकर सुग्रीव को पीछे करके मारुति आगे बढ़े और उससे युद्ध करने लगे । क्षणभर में मारुति ने उसके वक्षःस्थल पर घोर प्रहार किया जिससे वह नीचे गिरा और उसके परिघ के भी कई खण्ड हुए । अत्यन्त कोपाकुल हो जगत्-प्राण पुत्र (हनुमान) ने उसका उत्तमांग (मस्तक) अलग कर उसे दूर फेंक दिया । बचे हुए राक्षस भयभीत हो भागने लगे तो कपिवर उल्लसित हो पीछा करते गये । वे सब के सब (राक्षस) लंका के भीतर घुस गये और द्वार बन्द करके सारा हाल लंकेश को कह सुनाया । ५० कुंभ आदि (राक्षसों) की मृत्यु का समाचार पाकर जंभारि वैरी (रावण) भयभीत हो उठा । फिर खरात्मज (खर के पुत्र) मकराक्ष से रावण ने अत्यधिक क्रोध सहित कहा—"तुम जाकर रामादि को तुरन्त जीत आओ ।" तब मकराक्ष अपनी सेना सहित निकल पड़ा । युद्ध के लिए आवश्यक सभी प्रबन्ध करके वह रणांकण (युद्धभूमि) में पहुँचा और पन्नगतुल्य (साँपों के जैसे) शर वह्निकीलाकार (अग्निज्वाला के रूप) में बरसाये । उन शरों

तिन्नु परञ्ञतु केट्टळवे रामचन्द्रनुं विल्लुं कुळियेक्कुलच्चुटन् विल्लाळिकळिल् मुम्पुळ्ळवन् तन्नोटु निल्लेन्नणञ्ञु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान्। ओन्निनोन्नोप्पमेय्तान् मकराक्षनुं भिन्नमायी शरीरं कमलाक्षनुं। अन्योन्यमोप्पं पोरुतु निल्ककुं नेरमोन्नु तळर्न्नु चमञ्ञु खरात्मजन्। ६० अप्पोळ् कोटियुं कुटयुं कुतिरयुं तल्पाणि तन्निलिरुन्नोरु चापवुं तेरुं पोटिपेट्टुत्तानेय्तु राघवन् सारथितन्नेयुं कोन्नानतु नेरं। पारिलाम्मारु चाटिश्शूलवुं कोण्टु पारमटुत्त मकराक्षनेत्तदा पावकास्त्रं कोण्टु कण्ठवुं छेदिच्चु देवकळ्क्कापत्तुमोट्टु तीर्त्तीटिनान्। रावणि तानतरिञ्ञु कोपिच्चु वन्नेवरेयुं पोरुताशु पुरत्ताक्कि रावणनोटरियिच्चानतु केट्टु देवकुलान्तकनाकिय रावणन् ईरेळु लोकं नट्टुङ्ङुंपटि परिचारकन्मारोटु कूटिप्पुरप्पेट्टान्। अप्पोळतु कण्टु मेघनिनादनुं तल्पादयुग्मं पणिञ्ञु चोल्लीटिनान्— इप्पोळटियनरिकळे निग्रहिच्चुळ्प्पूविलुण्टाय सङ्कटं पोक्कुवन्। अन्तःपुरं पुक्किरुन्नरुळीटुक सन्तापमुण्टाकरुतितु कारणं। ७० इत्थं परञ्ञु पिताविने वन्दिच्चु

के सामने टिक न पाने के कारण वानर राम के पास आ सहायता करने की याचना करने लगे तो राम ने तुरन्त शर-सन्धान किया और धनुर्धरों में श्रेष्ठ (मकराक्ष) से सामने ठहर जाने का आग्रह करके उसपर खूब शर-वर्षा की। मकराक्ष ने भी तुल्य विक्रम से बाण बरसाये और कमलाक्ष (राम) का शरीर आहत होने लगा। जब दोनों समान रूप से लड़ते आ रहे थे तब धीरे-धीरे मकराक्ष शिथिल होता गया। ६० तुरन्त उसके ध्वज-पताका, छत्र, घोड़े, उसके हाथ का चाप तथा रथ सब राम ने बाण चलाकर नष्ट कर डाले और क्षणभर में सारथी का भी वध किया। नीचे जमीन पर कूद पड़कर हाथ में शूल लिये लड़ने आते मकराक्ष का तुरन्त ही राम ने पावकास्त्र से कण्ठ छेद डाला और देवों की बड़ी मात्रा में विपत्ति दूर की। यह सुनकर कुपित हो रावणी (इन्द्रजीत) ने तुरन्त आकर युद्ध करके सारे वानरों को (लंका के) बाहर कर दिया और फिर रावण के पास आकर समाचार सुनाया। (पुत्र से समाचार सुनकर) देवकुलान्तक रावण चौदहों भुवनों को कम्पित करता-सा अपने परिचारकों के साथ निकला। तब यह देख मेघनाद ने उनके पादयुग्मों पर प्रणाम करते हुए कहा—"मैं यह दास तुरन्त शत्रुओं का वध करके आपके मन का दुःख दूर कर दूँगा। आप अन्तःपुर में जा विराजिये; किसी बात पर सन्ताप न करें।" ७० ऐसा कहकर तथा पिता को प्रणाम कर वृत्रारिजित्

वृत्रारिजित्तुं पुऱप्पॆट्टु पोरिनाय् । युद्धोद्यमं कण्ट सौमित्रि चॆन्नु काकुल्स्थनोटित्थमुणर्त्तिच्चरुळिनान्— नित्यं मऱञ्ञु निन्निङ्ङने रावणपुत्रन् कपिवरन्मारॆयुं नम्मॆयुं अस्त्रङ्ङळॆय्तुटनन्तं वरुत्तुन्नतॆत्र नाळॆय्क्कु पॊऱुक्कणमिङ्ङने ? ब्रह्मास्त्र मॆय्तु निशाचरन्मार् कुल मुन्मूलनाशं वरुत्तुक सत्वरं । सौमित्रि चॊन्न वाक्किङ्ङने केट्टथ रामभद्र स्वामि तानुमरुळ् चॆय्तु— आयोधनत्तिङ्कलोटुन्नवरोटु-मायुधं पोयवरोटुं विशेषिच्चु नेरे वरातवरोटुं भयं पूण्टु पादान्तिके वन्नु वीळुन्नवरोटुं पैतामहास्त्रं प्रयोगिक्करुतॆटो ! पातकमुण्टा-मतल्लाय्किलेवनुं । ञानिवनोटु पोर् चॆय्वनॆल्लावरुं दीनतयॆन्निये कण्टु निन्नीटुविन् । ८० ऎन्नरुळ् चॆय्तु विल्लुं कुलच्चन्तिके सन्नद्धनायतु कण्टोरु रावणि तल्क्षणे चिन्तिच्चु कल्पिच्चु लङ्कयिल् पुक्कु माया सीतयॆत्तेरिल् वच्चुटन्, पश्चिम गोपुरत्तूटॆ पुऱप्पॆट्टु निश्चलनाय् निन्न नेरं कपिकळुं तेरिल् माया सीतयॆक्कण्टु दुःखिच्चु मारुति तानुं परवशनायितु । वानरवीर-रॆल्लावरुं काणवे जानकी देवियॆ वॆट्टिनान् निर्द्दयं । अय्यो ! विभो ! राम रामेति वाविट्टु मय्येल् मिळियाळ् मुऱविळिच्ची-टिनाळ् । चोरयुं पारिल्प्परन्नितु कण्टु मारुति जानकियॆन्नु

(इन्द्रजीत) युद्ध के लिए निकला । युद्ध के लिए (इन्द्रजीत का) उद्यम देख सौमित्र ने आकर दाशरथी से कहा—"रावणपुत्र नित्य अदृश्य रहकर बाण-प्रयोग से कपिवरों का तथा हमारा जो अन्त करता आ रहा है, वह हम कब तक सहते जाएँगे । तुरन्त ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करके निशाचर कुल का उन्मूल नाश करना चाहिए ।" सौमित्र का यह वचन सुनकर स्वामी श्रीरामचन्द्रजी ने कहा—"युद्ध में पीठ दिखाकर भागनेवालों तथा निहत्थों पर और विशेषकर सीधे सामने न आनेवालों तथा भयभीत हो चरणों पर पड़नेवालों पर पैतामहास्त्र (पितामह ब्रह्मा का अस्त्र) का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए । अन्यथा पाप लगेगा । मैं अब इससे (इन्द्रजीत से) युद्ध करूँगा, तुम सब लोग सानन्द देखते रहो ।" ८० इतना कहकर शर-संधान कर खड़े राम को देख रावणी तुरन्त चिन्तित हो उठा और कुछ सोचकर लंका में वापस गया तथा तुरन्त ही माया निर्मित सीता को रथ में बिठाकर, पश्चिम गोपुरद्वार से बाहर निकला । (यह देख) तब वानर निश्चल खड़े रह गये । रथ में बैठी माया सीता को देख मारुति भी दुखी एवं परवश हुए । सब वानरों के सामने (इन्द्रजीत ने) जानकीदेवी को निर्दयतापूर्वक काट डाला । 'हाय !

तेन्नीटिनान् । शोभयिल्लेतुं न्नमुक्किनि युद्धत्तिनापत्तितिल्पर-
मॆन्तुळ्ळतीश्वरा ! न्नामिनि वाङ्ङुक सीताबधं मम स्वामि
तन्नोटुणर्त्तिप्पान् कपिकळे ! शाखामृगाधिपन्मारॆयुं वाङ्ङिच्चु
शोकातुरनाय मारुतनन्दनन् ९० चॆल्लुन्नतु कण्टु राघवनुं तदा
चॊल्लिनान् जांबवान् तन्नोटु साकुलं— मारुतियॆन्तु कॊण्टिङ्ङोट्टु
पोन्नितु ? पोरिल् पुऱं तिरिञ्ञीटुमाऱिल्लवन् । नी कूटॆयङ्ङु
चॆन्नीटुक सत्वरं लोकेशनन्दन ! पार्क्करुतेतुमे । इत्थमाकर्ण्य
विधिसुतनुं कपिसत्तमन्मारुमाय्च्चॆन्नु लघुतरं ऎन्तु कॊण्टिङ्ङु
वाङ्ङिप्पोन्नितु भवान् बन्धमॆन्तङ्ङोट्टु तन्ने न्नटक्क नी ।
ऎन्न नेरं मारुतात्मजन् चॊल्लिनानिन्नु पेटिच्चु वाङ्ङीटुकयल्ल
ञान् । उण्टॊरवस्थयुण्टायिट्टितिप्पॊळे चॆन्नु जगल् स्वामियो-
टुणर्त्तिक्कणं । पोरिक नीयुमिन्निङ्ङोट्टिनियॆन्नुटन् मारुति चॊन्नतु
केट्टवन् तानुमाय् चॆन्नु तॊळुतुणर्त्तिच्चितु मैथिलि तन्नुटॆ नाश-
वृत्तान्तमॆप्पेरुमे । मोहिच्चु भूमियिल् वीणु रघूत्तमन् सौमित्रि
तानुमन्नेरं तिरुमुटि १०० चॆन्नु मटियिलॆट्टुत्तु चेर्त्तीटिनान् मन्नवन्

प्रभु ! राम राम !' इस प्रकार मृगाक्षी विलाप करने लगी । पृथ्वी पर रक्त बहने लगा । यह देख बेचारे हनुमान ने सोचा कि सीता ही मारी गयी हैं । (वे पुकार उठे) अब हम क्यों युद्ध करें । हाय भगवान ! इससे भारी क्या विपत्ति आ सकती है ! हे वानरो ! अब हम वापस जाकर श्रीरामजी को सीता के वध की खबर सुना दें । शाखामृगाधियों को साथ ले शोकातुर हो मारुति को— ९० —वापस आते देख श्रीराम ने व्याकुल भाव से जांबवान् को बताया—"मारुति क्यों इस तरफ आ रहे हैं ? युद्ध में वे पीठ दिखानेवाले तो नहीं हैं । हे लोकेशनन्दन ! तुम भी तुरन्त वहाँ पहुँच जाओ । देर मत करो ।" यह सुनकर विधिपुत्र (ब्रह्मा के पुत्र जांबवान्) अन्य वानरों के साथ चलकर (रास्ते में हनुमान आदि से मिले और पूछा कि) "आप क्यों लौट रहे हैं ? क्या बात हुई है ? आप सीधे उधर ही (युद्ध को ही) चलिये ।" इतना सुनकर पवनसुत ने कहा—"आज मैं भयभीत होने से वापस नहीं आया हूँ । आज एक ऐसी घटना घटी है, जिसकी सूचना जगत् के स्वामी को देनी है । आप भी साथ चलिये ।" यह सुनकर जांबवान् आदि भी (मारुति के साथ) चलते हुए राम के पास आये । (मारुति ने आकर) प्रणाम करके राम को मैथिली के वध का समाचार सुनाया । श्रीरामजी मूर्छित हो नीचे गिर पड़े । सौमित्र ने शिरस्— १०० —उठाकर गोद में रखा तो अंजनापुत्र

तन् पदमञ्जना पुत्रनुं उत्संग सीम्नि चेर्त्तनितु कण्टु निस्संज्ञरा-योक्कवे निन्नु कपिकळुं। दुःखं केट्टुप्पतिनायुळ्ळ वाक्कु कळोक्केप्परञ्ञु तुटङ्ङी कुमारनुं। ऐन्तोरु घोषमुण्टायतेन्नात्मनि चिन्तिच्चविटेक्कु वन्नु विभीषणन्। चोदिच्च नेरं कुमारन् परञ्ञितुमातरिश्वात्मजन् चोन्न वृत्तान्तङ्ङळ्। कय्यिण कोट्टिच्चिरिच्चु विभीषणनय्यो! कुरङ्ङन्मारेन्तरिञ्ञू विभो! लोकेश्वरियाय देवियेक्कोल्लुवान् लोकत्रयत्तिङ्कलारुमुण्टायवरा। माया निपुणनां मेघनिनादनिक्कार्य्यमनुष्ठिच्चतेन्तिनेन्नाशु केळ—मर्क्कटन्मार् चेन्नुपद्रविच्चीटाते तक्कत्तिलाशु निकुंभिलयिल्च्चेन्नु पुक्कुटन् तन्नुटे होमं कळिप्पतिनाय्क्कोण्टु कण्टोरुपायमत्यत्भुतं। ११० चेन्निनि होमं मुटक्केणमल्लाय्किलेन्नुमवने वधिक्करुतार्क्कुमे। राघव स्वामिन्! जय जय मानस व्याकुलं तीर्न्नेळुन्नेल्क दयानिधे! लक्ष्मणनुमटियनुं कपिकुलमुख्य प्रवररुमायिट्टु पोकणं। ओर्त्तु कालं कळञ्ञीटरुतेतुमे यात्रयय्क्केणमेन्नु विभीषणन् चोन्नतु केट्टुळवालस्यवुं तीर्न्नु मन्नवन् पोकाननुज्ञनल्कीटिनान्। वस्तु

(हनुमान) ने महाराज (राम) के चरण उठाकर अपनी गोद में रखे। यह सब देख वानर लोग संज्ञारहित खड़े रह गये। कुमार (लक्ष्मण) ने दुःख-शान्ति के लिए सांत्वना के वचन कहे। तब 'इस भाव-भेद का क्या कारण हो सकता है?' ऐसा मन में सोचकर विभीषण तुरन्त वहाँ आ पहुँचे। आकर पूछने पर कुमार (लक्ष्मण) ने मातरिश्वात्मज (वायुपुत्र) के द्वारा कही गयी घटना सुना दी। हथेलियाँ पीट हँसते हुए विभीषण ने कहा—"वाह! हे स्वामी! वानरों ने क्या समझा है? लोकेश्वरी सीता को मारने की क्षमता रखनेवाला कोई भी इस त्रिभुवन में नहीं पैदा हुआ है। मायाजाल में प्रवीण मेघनाद ने यह कार्य क्यों किया, यह मुझसे सुनिये। वानरों के उपद्रवों से सुरक्षित हो, बिना किसी को पता लगे अन्तःगृह में बैठकर अपना होम पूरा करने के लिए, उसने यह उपाय ढूँढ लिया है। विस्मय की बात है (कि आप लोगों ने उसपर विश्वास किया)! ११० अभी जाकर होम में विघ्न डालें, अन्यथा कोई कभी उसे मार नहीं सकेगा। हे स्वामी! राम! हे दयानिधि! (आपकी) जय हो, जय हो! आप व्याकुल भाव त्यागकर उठ बैठिये। लक्ष्मण, यह दास (मैं) और कपिकुल प्रवर मिलकर जाएँगे। आप सोच-विचार करके व्यर्थ समय न गँवायें। आप हमें विदा करें।" विभीषण का यह कथन सुनकर भगवान राम का आलस्य दूर हुआ और महाराज (राम) ने

वृत्तान्तङ्ङळेल्लां धरिच्च नेरत्तु कृतार्त्थनाय् श्रीरामभद्रनुं सोदरन् तन्नेयुं राक्षस पुंगव सोदरन् तन्नेयुं वानरन्मारेयुं चेन्नु दशग्रीव नन्दनन् तन्नेयुं कोन्नु वरिकेन्ननुग्रहं नल्किनान्। लक्ष्मणनोटुं महाकपिसेनयुं रक्षोवरनुं नटन्नानतु नेरं। मैन्दन् विविदन् सुषेणन् नळन् नीलन् इन्द्रात्मजात्मजन् केसरि तारनुं, १२० शूरन् वृषभन् शरभन् विनतनुं धीरन् प्रमाथि शतबलि जांबवान्, वातात्मजन् वेगदर्शि विशालनुं ज्योतिर्म्मुखन् दुर्म्मुखन् सुमुखन बलि, श्वेतन् दधिमुखनग्निमुखन् गजन् मेदुरन् धूम्रन् गवयन् गवाक्षनुं मट्टुमित्यादि चोल्लुळ्ळ कपिकळुं मट्टुं नटन्नितु लक्ष्मणन् तन्नोटुं। मुन्निल् नटन्नु विभीषणन् तानुमाय् चेन्नु निकुंभिल पुक्कु निरञ्ञितु। नक्तञ्चरवरन्मारेच्चुळलवे निन्नि होमं तुटङ्ङीटिनान् रावणि। कल्लुं मलयुं मरवुमेटुत्तु कोण्टेल्लावरुमायट्टुत्तु कपिकळुं। एँट्टु मेरुं कोण्टु वीणु तुटङ्ङिनारट्मिल्लातोरो राक्षस वीररुं। मुट्टुकयिल्ल होमं नमुक्किङ्ङिनिप्पट्लरेच्चेट्कट्रियोळिञ्ञेन्नु कल्पिच्चु रावणि विल्लुं शरङ्ङळुं कैल्पोटेट्टुत्तु पोरिन्नट्टुत्तीटिनान्। १३० वन्नु निकुंभिलयाल्त्तरमेलेरि निन्नु दशानन-

---

जाने की (उन्हें) आज्ञा प्रदान की। वास्तविकता से अवगत हो कृतार्थ भाव को अपनाये श्रीरामजी ने अपने भ्राता, राक्षसराज के भ्राता (विभीषण) तथा वानरश्रेष्ठों को आशीर्वाद दिया कि दशग्रीव के पुत्र (इन्द्रजीत) को मारकर सुखपूर्वक आ जाएँ। तब लक्ष्मण को लिये विशाल वानरसेना तथा राक्षस श्रेष्ठ (विभीषण) चल पड़े। मैन्द, विविद, सुषेण, नल, नील, इन्द्रात्मज (बालि) के आत्मज (सुग्रीव), केसरी, तारेय (अंगद) — १२० —शूर, वृषभ, शरभ, विनत, धीर, प्रमाथि, महाबली जांबवान्, वातात्मज (हनुमान), वेगदर्शी, विशाल, ज्योतिर्मुख, दुर्मुख, सुमुख, बली, श्वेत, दधिमुख, अग्निमुख, गज, मेदुर, धूम्र, गवय, गवाक्ष और अन्य ऐसे ही गण्यमान्य वानर लक्ष्मण के साथ आगे बढ़े। आगे-आगे विभीषण चले। होम-स्थान वानरों से भर गया। रावणी (रावण का पुत्र इन्द्रजीत) ने निशाचरों को (पहरा देने के लिए) चारों ओर खड़ा करके होम आरम्भ किया था। पत्थर, शिलाएँ, वृक्ष आदि उठा-उठाकर सारे वानर टूट पड़े। उनके प्रहार से असंख्य राक्षस-वीर धराशायी होते गये। अब वानरों को जरा दूर हटाये बिना मेरा होम पूर्ण नहीं होगा, यह समझकर रावणी शक्ति भर धनुष-बाण लिये युद्ध के लिए आगे बढ़ा। १३० तब दशानन-पुत्र निकुंभिला (लंका में याग-यज्ञ आदि पुण्य

पुत्रनुमत्तेरं। कण्टु विभीषणन् सौमित्रि तन्नोटु कुण्ठत तीर्त्तु परञ्ञु तुटङ्ङिनान्— वीर! कळिञ्ञील होममिवनेंङ्किल् नेरे वेळिच्चत्तु कण्टु कूटा दृढं। मारुत नन्दनन् तन्नोटु कोपिच्चु नेरिट्टु वन्नतु कण्टीले भवान्। मृत्यु समयमटुत्तिती वन्निनि युद्धं तुटङ्ङुक वैकरुतेतुमे। इत्थं विभीषणन् चोन्न नेरत्तु सौमित्रियुमस्त्रशस्त्रङ्ङळ् तूकीटिनान्। प्रत्यस्त्र शस्त्रङ्ङळ् कोण्टु तटुत्तिन्द्रजित्तुमत्यर्थमस्त्रङ्ङळेय्तीटिनान्। अप्पोळ् कळुत्तिलेटुत्तु मरुल्सुतनुल्पन्न मोदं कुमारनेस्सादरं। लक्ष्मण पार्श्वे विभीषणनेक्कण्टु तल्क्षणं चोन्नान् दशानन पुत्रनुं— राक्षस जातियिल् वन्नु पिरन्नु नी साक्षाल् पितृव्यनल्लो मम केवलं। १४० पुत्रमित्रादि वर्गत्तेयोटुक्कुवान् शत्रु जनत्तिनु भृत्यनायिङ्ङने नित्यवुं वेल चेय्युन्नतोर्त्तीटिनालेत्रयुं नन्नु नन्नेन्नते चोल्लावू। गोत्र विनाशं वरुत्तुं जनङ्ङळ्क्कु पार्त्तु कण्टोळं गतियिल्ल निर्णयं ऊर्द्ध्वलोक प्राप्ति सन्तति कोण्टत्रे साद्ध्यमाकुन्नतेन्नल्लो बुधमतं। शास्त्रज्ञनां नी कुलत्तेयोटुक्कुवानास्थया वेल चेय्युन्नतुमत्भुतं। अेन्नतु केट्टु विभीषणन् चोल्लिनान् नन्नु नीयुं निन् पितावुमरिक

कर्मों के लिए रखा गया एक स्थान, जहाँ प्रतिष्ठित काली भगवती का नाम निकुंभिला है।) के वटवृक्ष के चबूतरे पर आ खड़ा हुआ। उसे देख विभीषण ने अनाकुल भाव से सौमित्र को बताया—"हे वीर! आज उसका होम अगर पूरा होता तो वह निस्सन्देह बाहर नहीं निकलता। मारुति के प्रति क्रुद्ध हो सीधे आ खड़े इसको क्या आप नहीं देख पा रहे हैं? अब उसकी मृत्यु निकट आ गयी है। अब अविलम्ब युद्ध आरम्भ कीजिए।" इस प्रकार विभीषण के कहते ही सौमित्र ने अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा कर डाली। प्रत्यस्त्र-शस्त्रों से उन्हें रोककर इन्द्रजीत ने भी (लक्ष्मण की ओर) अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा की। तुरन्त ही हर्षोल्लास से युक्त हनुमान ने कुमार (लक्ष्मण) को अपने कण्ठ पर उठा लिया। लक्ष्मण के पार्श्व में खड़े विभीषण को देख रावण-पुत्र ने कहा—"राक्षसवंश में जन्म लिये तुम वास्तव में मेरे पिता के अनुज हो। १४० पुत्र, मित्र आदि सब का नाश करने के विचार से शत्रुजन का भृत्य बनकर तुम नित्य जो काम करते आ रहे हो, उसके सम्बन्ध में क्या बताऊँ! तुम्हारा यह काम विचित्र ही है! जो अपने गोत्र के विनाश में लगा रहता है, उसे निस्सन्देह सद्‌गति नहीं मिल सकती। विद्वानों का अभिमत है कि संतति से ही सद्‌गति किसी को सिद्ध हो सकती है। (ऐसी हालत में) सभी शास्त्रों के ज्ञाता तुम

ती। वंशं मुटिक्कुन्नतिन्नु नीयेतुमे संशयमिल्ल विचारिक्क मानसे। वंशत्ते रक्षिच्चु कोळ्ळुवनिन्नु ञानंशुमाली कुलनायकानुग्रहाल्। इङ्ङने तम्मिल् परञ्ञु निल्क्कुंनेरं मङ्ङाते बाणङ्ङळ् तूकि कुमारनुं। अेल्लामतेय्तु मुरिच्चु कळञ्ञथ चोल्लिनानाशु सौमित्रि तन्नोटवन्— १५० रण्टु दिनं मम बाहु पराक्रमं कण्टतिल्ले नी कुमार! विशेषिच्चुं कण्टु कोळ्ळल्लाय्कि-लिन्नु ञान् निन्नुटल् कोण्टु जन्तुक्कळ्क्कु भक्षणमाक्कुवन्। इत्थं परञ्ञेळु बाणङ्ङळ् कोण्टु सौमित्रियुटेयुटल् कीरिनानेटवुं; पत्तु बाणं वायुपुत्रनेयेल्पिच्चु सत्वरं पिन्ने विभीषणन् तन्नेयुं नूरु शरमेय्तु वानरवीररु मेरेमुरिञ्ञु वशं केट्टु वाङ्ङिनार्। तल्क्षणे बाणं मळपोळियुं वण्णं लक्ष्मणन् तूकिनान् शक्रारि मेनि मेल्। वृत्रारि-जित्तुं शरसहस्रेण सौमित्रि कवचं नुरुविकयिट्टीटिनान्। रक्ताभि-षिक्त शरीरिकळायितु नक्तञ्चरनुं सुमित्रातनयनुं। पारमट्टुत्तञ्चु बाणं प्रयोगिच्चु तेरुं पोटिच्चु कुतिरकळेक्कोन्नु सारथि तन्टे

कुलनाश के लिए तत्पर हो जो कार्य करते हो, उसपर विचार करने पर आश्चर्य होता है।" यह सुनकर विभीषण ने कहा—"वंशनाश का कार्य तुम और तुम्हारे पिता ही कर रहे हैं। यह बात तुम मन में समझ लो। इसमें किसी को कुछ सन्देह नहीं हो सकता। अंशुमाली कुल (सूर्यवंश) के नायक (राम) के अनुग्रह से मैं आज वंश की रक्षा का कार्य कर रहा हूँ।" इस प्रकार दोनों जब परस्पर वार्तालाप में लगे थे, तब राजकुमार लक्ष्मण ने बाण-वर्षा आरम्भ कर दी। उन सब बाणों को अपने बाणों से काटकर उसने तुरन्त सौमित्र से कहा— १५० —"हे कुमार! तुमने तो दो दिन मेरा भुजबल देखा है। अन्यथा आज विशेषकर मेरा बाहुबल देख लो। आज मैं तुम्हारा यह शरीर जीव-जन्तुओं का भोजन कर दूँगा।" इस प्रकार कहते हुए उसने सात बाणों का प्रयोग कर लक्ष्मण का शरीर अत्यधिक आहत कर दिया। हनुमान के शरीर को लक्ष्य करके दस बाण भेजे, विभीषण पर शत बाण चलाये। कई वानरवीर भी बाणों से घायल हो पीछे हटे। तत्काल ही लक्ष्मण ने शक्रारि (इन्द्र शत्रु मेघनाद) पर बाणों की खूब वर्षा की। वृत्रारिजित् (इन्द्रजीत) ने भी सहस्रों बाणों से सौमित्र का कवच कई टुकड़ों में चीर डाला। निशाचर (मेघनाद) तथा सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) दोनों ही बाणों से अभिषिक्त हुए। फिर लक्ष्मण ने क्रोधाकुल हो पाँच बाणों से (इन्द्रजीत का) रथ नष्ट कर डाला, अश्वों को मारा, सारथी का मस्तक काटा और (इन्द्रजीत के हाथ

तलयुं मुरिच्चति सारमायोरु विल्लुं मुरिच्चीटिनान् । १६०
मट्टोरु चापमेट्टुत्तु कुलच्चवनट्टमिल्लातोळं बाणङ्ङळ् तूकिनान् ।
पिन्ने मून्नम्पेय्ततुं मुरिच्चीटिनान् मन्नवन् पंक्तिकंठात्मजनन्नेरं
ऊट्टमायोरु विल्लुं कुळियेक्कुलच्चेट्टमट्टुत्तु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् ।
सत्वरं लङ्कयिल् पुक्कु तेरुं पूट्टि विद्रुतं वन्नितु रावणपुत्रनुं ।
आरुमरिञ्ञील पोयतुं वन्नतुं नारदन् तानुं प्रशंसिच्चितन्नेरं ।
घोर मायुण्टाय संगरं कण्टोरु सारस संभवनादिकळ् चोल्लिनार्—
पण्टुलोकत्तिङ्कलिङ्ङनेयुळ्ळ पोरुण्टायतिल्लिनियुण्टाकयुमिल्ल ।
कण्टालुमीदृशं वीरपुरुषन्मारुण्टो जगत्तिङ्कल् मट्टिवरेप्पोले ।
इत्थं पलरुं प्रशंसिच्चु निल्पतिन्मद्ध्ये दिवसत्रयं कळिञ्ञू भृशं ।
वासरं मून्नु कळिञ्ञोरनन्तरं वासवदैवतमस्त्रं कुमारनुं १७०
लाघवं चेर्न्नु करेण सन्धिप्पिच्चु राघवन् तन् पदांभोरुह मानसे
चिन्तिच्चुरप्पिच्चयच्चानतु चेन्नु पंक्तिकण्ठात्मजन् कण्ठवुं छेदिच्चु
सिन्धु जलत्तिल् मुळुकि विशुद्धमायन्तरा तूणियिल् वन्नु पुक्कू शरं ।
भूमियिल् वीणितु रावणि तन्नुटलामयं तीर्न्नितु लोकत्रयत्तिनुं ।
सन्तुष्ट मानसन्माराय देवकळ् सन्ततं सौमित्रियें स्तुतिच्चीटिनार् ।

का) प्रभावशाली बाण भी काट डाला । १६० उसने दूसरा चाप लेकर अन्तहीन बाणों की वर्षा की । तो राजकुमार (लक्ष्मण) ने तीन बाण चलाकर उसे भी खण्डित कर डाला । पंक्ति-कण्ठात्मज (रावण पुत्र) ने तब एक भारी धनुष ले उससे कई बाण चलाये । फिर तुरन्त लंका में पहुँच एक जुता हुआ रथ ले रावणपुत्र जल्दी ही लौटा । उसके जाने-आने का किसी को पता तक नहीं चला । यह देखकर खड़े महर्षि नारद तक ने उसकी प्रशंसा की । दोनों के बीच में जो घोर युद्ध चला उसे देख ब्रह्मा आदि ने कहा—"अब तक कभी ऐसा युद्ध संसार में नहीं हुआ, और न भविष्य में होगा ही । देखने योग्य है । क्या इनके जैसे वीर पुरुष संसार में दूसरे होंगे ?" इस प्रकार कई लोगों ने प्रशंसा की । तब तक तीन दिन जल्दी ही गुज़र गये । तीन दिवसों के व्यतीत होते ही कुमार (लक्ष्मण) ने वासवास्त्र (इन्द्रास्त्र)— १७० —अपने हाथ में उठा लिया और राम के चरण-सरोजों का मन में ध्यान कर, बाण का संधान किया कि उसने जाकर दशकण्ठात्मज (रावण-पुत्र) का कण्ठ काट डालकर, फिर सागर जल में निमग्न हो स्वयं शुद्ध बन उनके तूणीर में प्रवेश किया । रावणी का शरीर भूमि पर गिरा तो त्रिभुवन का दुःख दूर हुआ । मन में सन्तुष्ट देवों ने सौमित्र की प्रशंसा एवं स्तुति की । उन्होंने बार-बार

पुष्पङ्ङळुं वरिषिच्चारुटनुटनप्सरः स्त्रीकळुं नृत्तं तुटङ्ङिनार् । नेत्रङ्ङळायिरवुं विळङ्ङी तदा गोत्रारितानुं प्रसादिच्चितेट्वुं । तापमकन्नु पुकळ्न्नु तुटङ्ङिनार् तापसन्मारुं गगनचरन्मारुं । दुन्दुभिनादवुं घोषिच्चितेट्मानन्दिच्चिताशु विरिञ्चनुमन्नेरं । शङ्का विहीनं चेरु ञाणोलियिट्टु शंखं विळिच्चुटन् सिंहनादं चेय्तु १८० वानरन्मारुमाय् वेगेन सौमित्रि मानवेन्द्रन् चरणांबुजं कूप्पिनान् । गाढमायालिंगनं चेय्तु राघवनूढमोदं मुकर्न्नीटिनान् मूर्द्धनि । लक्ष्मणनोटु चिरिच्चरुळिच्चेय्तु दुष्करमेत्रयुं नी चेय्त कारियं । रावणि युद्धे मरिच्चतु कारणं रावणन् तानुं मरिच्चान-न्निक नी । क्रुद्धनाय् नम्मोटु युद्धत्तिनाय्वरुं पुत्रशोकत्तालिनिद्दश-ग्रीवनुं । १८५

रावणन्टे विलापम्

इत्थमन्योन्यं परञ्ञिरिक्कुन्नेरं पुत्रन् मरिच्चतु केट्टोरु रावणन् वीणितु भूमियिल् मोहं कलर्न्नीति क्षीणनाय्प्पिन्ने विलापं तुटङ्ङिनान्— हा हा ! कुमार ! मण्डोदरीनन्दन ! हा हा !

पुष्प-वृष्टि की और अप्सराएँ नृत्य-निरत हुईं । इन्द्र अपने सहस्र नेत्र खोल प्रसन्न दिखाई दिये । सारे दुःखों से विमुक्त तापसों तथा गगनचरों (आकाशचारी) ने खूब (लक्ष्मण की) प्रशंसा की । सब कहीं दुंदुभियाँ बज उठीं । ब्रह्मा भी अत्यन्त पुलकित हो उठे । सानन्द लक्ष्मण धनुष को झंकृत कर, शंख-ध्वनि एवं सिंहनाद कर,— १८० —वानरों के साथ जल्दी (वापस) चल पड़े और मानवेन्द्र के चरणांबुजों पर नमस्कार किया । आनन्द पुलकित श्रीरामजी ने गाढ़ालिंगन करते हुए उनका मस्तक चूम लिया । फिर मुस्कान भरते हुए (राम ने) कहा—"तुमने बड़ा ही दुष्कर कार्य करके दिखाया । युद्ध में रावणी के मरने के कारण अब रावण को भी मरा ही समझो । पुत्रशोक के कारण क्रुद्ध रावण आज हमसे युद्ध करने आएगा ।" १८५

रावण का विलाप

इस प्रकार जब (राम-लक्ष्मण) परस्पर वार्तालाप करते बैठे थे, तब पुत्र की मृत्यु का समाचार पाकर रावण विमूर्छित हो पृथ्वी पर गिरा । मूर्छा हटते ही शिथिल शरीर रावण विलाप करने लगा—"हा हा ! कुमार ! हे मन्दोदरीनन्दन ! हा हा ! सुकुमार ! वीर ! मनोहर ! मैं अपने

सुकुमार ! वीर ! मनोहर ! मत्कर्म्म दोषङ्ङळेन्तु चोल्लावतु दुःखमितेन्तु मऱक्कुन्नतुळ्ळिल् ञान् । विण्णवर्क्कुं मुनि मार्क्कुं द्विजन्मार्क्कुमिन्तु तन्नायुऱङ्ङुमाऱायितु । नम्मेयुं पेटियिल्लार्क्कुमिनि मम जन्मवुं निष्फलमाय् वन्नितीश्वरा ! पुत्रगुणङ्ङळ् पऱञ्ञुं निरूपिच्चु मत्तल् मुळुत्तु करञ्ञु तुटङ्ङिनान् । ऎन्नुटे पुत्रन् मरिच्चतु जानकि तन्नुटे कारणमेन्नतु कोण्टु ञान् । कोन्नवळ् तन्नुटे चोर कुटिच्चोळिञ्ञेन्नुमे दुःखमोटुङ्ङुकयिल्लमे । खड्गवुमोङ्ङिच्चिरिच्चलऱित्तत्र निर्ग्गमिच्चीटिनान् क्रुद्धनां रावणन् । १० सीतयुं दुष्टनां रावणनेक्कण्टु भीतयायेत्रयुं वेपथुगात्रियाय् हा राम ! राम रामेति जपत्तोटुमाराम देशे वसिक्कुं दशान्तरे बुद्धिमानाय सुपार्श्वन् नयज्ञनत्युत्तमन् कर्बुर सत्तमन् वृत्तवान् रावणन् तन्नेत्तटुत्तु निर्त्तिप्पऱयावतेल्लां पऱञ्ञीटिनान् नीतिकळ् । ब्रह्म कुलत्तिल् जनिच्च भवानिह निर्म्मलनेन्नु जगत्त्रय सम्मतं तावकमाय गुणङ्ङळ् वर्ण्णिप्पतिनावतल्लोक्किल् गुहनुमनन्तनुं । देव देवेश्वरनाय पुरवैरि सेवकन्मारिल्

भाग्य-दोष के सम्बन्ध में क्या कहूँ। मैं यह दुःख कब मन से त्याग सकूँ ! अमरों, मुनियों और द्विजों (ब्राह्मणों) को आज शान्ति से सोने का सुअवसर प्राप्त हुआ। अब किसी को मेरा भय नहीं रह गया; हे ईश्वर ! मेरा जन्म निष्फल हुआ। पुत्र का गुणगान करता हुआ तो कभी पुत्र-शोक पर सोचता हुआ वह रोने लगा। मेरा पुत्र जानकी के कारण ही मरा, इसलिए उसे मारकर मैं उसका रक्त-पान करूँगा। अन्यथा यह मेरा दुःख कभी मेरा पिण्ड नहीं छोड़ेगा। (यह निश्चय करके) क्रुद्ध रावण हाथ में खड्ग लिये अट्टहास एवं गर्जना करता हुआ (कमरे के) बाहर निकला। १० दुष्ट रावण को (आते) देख भयभीत सीता पसीने से तर हो गयीं। जब वे भयभीत हो 'राम ! राम ! राम !' का जप करती उपवन में कम्पितगात्री हो बैठी थीं, तब बुद्धिशाली, नीतिज्ञ, उत्तम, आचार-मर्यादाओं में श्रेष्ठ तथा राक्षसों में सात्विक गुण-प्रधान सुपार्श्व ने रावण को रोककर यथाशक्ति एवं यथायोग्य नीति-वचन कह सुनाये—"ब्राह्मण-कुल में उत्पन्न आपको त्रिभुवन के लोग पवित्र स्वीकार करते हैं। आपके विशिष्ट गुणों का वर्णन करते शेषनाग भी पार नहीं पाता। देव देवेश त्रिपुरारि (शिव) के भक्तों में आप प्रमुख हैं। पुलस्त्य मुनि के कुल में जन्मे आप कुबेर के भ्राता (विश्रवा और कैकसी का पुत्र होने से कुबेर का सौतेला भाई) हैं तथा त्रिलोक में पूज्य राक्षसराज हैं। आप सामवेद के

प्रधाननल्लो भवान्। पौलस्त्यनाय कुबेर सहोदरन् त्रैलोक्य वन्द्यनां पुण्य जनाधिपन्। सामवेदज्ञन् समस्त विद्यालयन् वामदेवाधिवासात्मा जितेन्द्रियन्। वेद विद्याव्रतस्नान परायणन् बोधवान् भार्ग्गव शिष्यन् विनयवान्। २० ऍन्निरिक्कॆ्भवानिन्नु युद्धान्तरे ऩन्नु ऩन्नॆव्रयुमोर्त्तु कल्पिच्चतुं। स्त्री वधमाकिय कर्म्मत्तिनाशु ऩी भाविच्चतुं तव दुष्कीर्त्ति वर्द्धनं। रात्रिञ्चरेन्द्र प्रवर! प्रभो! मया सार्द्धं विरवोटु पोरिक पोरिनाय्। मानवन्मारॆयुं वानरन्मारॆयुं मानेन पोर् चॆय्तु कॊन्नु कळञ्ञु ऩी जानकी देवियॆ प्रापिच्चु कॊळ्ळुक मानस तापवुं दूरॆ ऩीक्कीटुक। नीतिमानाय सुपार्श्वन् पऱञ्ञतु यातुधानाधिपन् केट्टुसन्तुष्टनाय् आस्थान मण्डपे चॆन्निरुन्नॆव्रयुमास्थया मन्त्रिकळोटु निरूपिच्चु। शिष्टरायुळ्ळ निशाचरन्मारुमाय् पुष्टरोषं पुऱप्पॆट्टितु पोरिनाय्। चॆन्नु रक्षोबलं रामनोटेट्टळवॊन्नॊळियातॆ यॊटुक्किनान् रामनुं। मन्नवन् तन्नोटॆतिर्त्तितु रावणन् ऩिन्नु पोर् चॆय्तानभेदमाय् निर्भयं। ३० पिन्नॆ रघूत्तमन् बाणङ्ङळॆय्तॆय्तु भिन्नमाक्कीटिनान् रावण देहवुं। पारं मुऱिञ्ञु तळर्न्नु वशं कॆट्टु धीरतयुं विट्टु

पूर्ण ज्ञाता, समस्त विद्यालय (समस्त विद्याओं के लिए आश्रय स्थान), वामदेवाधि-वासात्मा (शिव के लिए वासस्थान जिनका मन है), तथा जितेन्द्रिय (इन्द्रियों को जीते हुए व्यक्ति) वेदपाठ, व्रत, स्नान जैसे वैदिक कर्मों में निष्ठावान, बुद्धिमान, भार्गवशिष्य (शुक मुनि के शिष्य) तथा विनयशील हैं। २० इन सब गुणों के रहते हुए, आश्चर्य है! आपने युद्ध में तन्मय रहते हुए यही सोच लिया (कि स्त्री का वध करें)। नारी-वध के लिए उद्यत आप को अपयश ही प्राप्त होगा। हे निशाचरराज! हे स्वामी! आप मेरे साथ युद्ध के लिए चलिये। मानवों (राम-लक्ष्मण) तथा वानरों को स्वाभिमान-पूर्वक युद्ध में मार डालकर आप सुखपूर्वक जानकीदेवी के साथ भोग कीजिए। इसलिए मन का सन्ताप आज दूर कीजिए।" नीतिकुशल सुपार्श्व का कथन सुनकर यातुधानाधिप (राक्षस-राज) प्रसन्न हुआ। फिर आस्थान मण्डप में आ बैठकर आस्था से मंत्रियों के साथ मन्त्रणा की। शेष बचे निशाचरों के साथ रोषाकुल रावण युद्ध के लिए चल पड़ा। जब राक्षस-सेना युद्ध के लिए राम से आ भिड़ी तब राम ने निश्शेष सबको समाप्त किया। मन्नव (महाराज) राम से तब रावण ने मुकाबिला किया और रावण ने निर्भय, राम से समान रूप से युद्ध किया। ३० फिर राम ने बाण चला-चलाकर रावण का शरीर

वाङ्ङ्दशाननन् । पोरुमिनि मम पोरुमेन्नोर्त्तति भीरुवाय् लङ्कापुरं पुक्कनन्तरं । ३३

रावणन्दे होमविघ्नम्

शुक्रनेच्चेन्नु नमस्करिच्चेवयुं शुष्कवदननाय् निन्नु चोल्ली-टिनान्— अक्कात्मजादियां मक्कंटवीररुमक्कान्वियोद् भूतनाकिय रामनुं ओक्केयोरुमिच्चु वारिधियुं कटन्निक्करे वन्नु लङ्कापुरं प्रापिच्चु शक्रारिमुख्य निशाचरन्मारेयु मोक्केयोटुविक आनेकाकि-यायितु दुःखवुमुळ्ळकोण्टिरिक्कुमाराायितु सद्गुरो ! आन् तव शिष्यनल्लो विभो ! विज्ञानियाकिय रावणनालिति विज्ञापितनाय शुक्र महामुनि रावणनोटुपदेशिच्चितेङ्किल् नी देवतमारे प्रसादं वरुत्तुक । शीघ्रमोरु गुहयुं तीर्त्तु शत्रुक्कळ् तोल्वकुं प्रकारमति रहस्य स्थले चेन्निरुन्नाशु नी होमं तुटङ्ङुक वन्नु कूटुं जयमेन्नाल् निनक्कोटो ! विघ्नं वरातें कळिञ्ञु कूटुन्नाकिलग्नि कुण्डत्तिङ्कल् निन्नु पुरप्पेटुं १० बाण तूणीर चापाश्वरथादिकळ् वानवरालुमजय्यनां पिन्ने नी । मन्त्रं ग्रहिच्चु कोळ्केन्नोटु

विदीर्ण कर डाला । शरीर के अत्यधिक विदीर्ण होने तथा आलस्य-युक्त होने से साहस खो रावण पीछे हटा । 'आज मेरे लिए इतना ही युद्ध करना सम्भव है', ऐसा सोचकर भीरु-हृदय रावण लंकापुर वापस आ बैठा । ३३

रावण के होम में विघ्न

शुक्र मुनि के पास आकर प्रणाम करके म्लानवदन हो (रावण ने) कहा—"अर्कात्मज (सुग्रीव) आदि मर्कटवीर (वानरवीर) एवं अर्कान्वय (सूर्यवंश) में उद्भूत राम-लक्ष्मण, सबने वारिधि (सागर) पारकर, लंकापुर में आकर शक्रारि मुख्य (देव शत्रुओं में प्रमुख) निशाचरों (कुंभकर्ण, इन्द्रजीत आदि) का वध किया, जिससे अब मैं अकेला पड़ गया हूँ। हे सद्गुरु ! मुझे दुखी हो बैठने की नौबत आ गयी । हे नाथ ! मैं तो आखिर आपका ही शिष्य रहा ।" ज्ञानी रावण के द्वारा इस प्रकार विज्ञापित होने पर महामुनि शुक्र ने उपदेश दिया—"ऐसी हालत में तुम देवताओं को प्रसन्न करो । शत्रुओं को पता न लगे, ऐसे गुप्त स्थान में एक गुहा बनाकर उसमें बैठ शीघ्र ही तुम होम प्रारम्भ करो, उससे तुम्हें निश्चय ही विजय प्राप्त होगी । निर्विघ्न होम के पूर्ण होने पर अग्निकुण्ड से निकलेंगे— १० —बाण, तूणीर, चाप, रथ, अश्व आदि, (जिनके प्राप्त होने पर) तुम फिर वानवों (देवों) के लिए भी अजेय बनोगे । तुम

सादरमन्तर मेन्निये होमं कळिक्क नी। शुक्रमुनियोट्टु मूलमन्त्रं केट्टु रक्षोगणाधिपनाकिय रावणन् पन्नग लोक समानमाय्त्तीर्त्तितु तन्नुटे मन्दिरं तन्निल् गुहातलं। दिव्यमां हव्य गव्यादिकमाय सद्द्रव्यङ्ङळ् तत्र सम्पादिच्चु कौण्टवन् लङ्कापुरद्वारमोक्के बन्धिच्चतिल् शङ्काविहीनमकं पुक्कु शुद्धनाय्, ध्यानमुरप्पिच्चु तल्फलमर्त्थिच्चु मौनवुं दीक्षिच्चु होमवुं तुटङ्ङिनान्। व्योम मार्ग्गत्तोळमुत्थितमायोरु होम धूपं कण्टु रावण सोदरन् रामचन्द्रन्नु काट्टिक्कोटुत्तीटिनान् होमं तुटङ्ङि दशाननन् मन्नव! २० होमं कळिञ्ञु कूटीट्टुकिलेन्नुमे नामवनोट्टु तोट्टीटुं महारणे। होमं मुटक्कुवानयच्चीटुक सामोदमाशु कपिकुल वीररे। श्रीराम सुग्रीव शासनं कैक्कोण्टु मारुतपुत्रांगदादि कळोक्कवे नूरु कोटिप्पटयोटुं महामतिलेरिक्कटन्नङ्ङु रावण मन्दिरं पुक्कु पुर पालकन्मारेयुं कोन्नु मर्क्कट वीररोरुमिच्च-नाकुलं। वारण वाजि रथङ्ङळेयुं पोटिच्चाराञ्ञु तत्र दशास्य होमस्थलं। व्याजाल् सरमानिजकर संज्ञया सूचिप्पिचितु दशग्रीव

मुझसे मन्त्र ग्रहण करो और फिर निस्सन्देह होम करो।" शुक्र मुनि से मूल मन्त्र ग्रहण कर राक्षसराज रावण ने पन्नग-लोक (नाग लोक) के समान एक गुहा अपने ही महल के भीतर बनवायी। पवित्र हव्य, गव्य पदार्थों को एकत्रित कर तथा लंकापुर के सभी प्रवेश-द्वारों को बन्द कराकर, वह शुद्ध भाव से उस गुहा के भीतर निर्भय प्रविष्ट हुआ। फिर ध्यान लगाकर तथा फल की अभ्यर्थना करते हुए, मौन साधना में तल्लीन हो उसने होम प्रारम्भ किया। व्योम मार्ग तक उठे होम-धूप को देखकर रावण के भ्राता (विभीषण) ने राम को (धूप) दिखाया (और बताया कि) हे महाराज! दशानन ने होम का आरम्भ किया है। २० अगर होम पूरा हुआ तो हम सदा युद्ध में उससे पराजित होंगे। इसलिए आप तुरन्त ही होम में बाधा डालने के लिए कपिवीरों को भेज दीजिए।" श्रीराम और सुग्रीव की आज्ञा मानकर मारुति, अंगद आदि, सौ करोड़ वानर-सेना सहित उत्तुंग दीवारें लाँघकर रावण के महल में प्रविष्ट हुए तथा वानरों ने मिलकर पहरेदारों को मार डाला; हाथी, घोड़े तथा रथ आदि चूर-चूर कर दिये और फिर रावण के होम-स्थल की खोज की। तब सरमा ने बड़े कौशलपूर्वक अपने हाथ के संकेतों से (वानरों को) रावण का होमस्थल दिखला दिया। होम-गुहा के द्वार पर रखे पत्थर को अंगद ने तोड़ दिया। फिर गुहा के भीतर प्रवेश करते ही निशाचरेन्द्र को

होमस्थलं । होम गुहाद्वार बन्धन पाषाणमामयहीनं पोटिपेट्टुत्तं-गदन् तत्र गुहयिलकं पुक्क नेरत्तु नक्तञ्चरेन्द्रनेक्काणायितन्तिके । मट्टुळ्ळवर्कळुमंगदानुज्ञया तेट्टेन्नु चेन्नु गुहयिलिरङ्ङिनार् । ३० कण्णुमटच्चुटन् ध्यानिच्चिरिक्कुन्न पुण्यजनाधिपनेक्कण्टु वानरर् ताडिच्चु ताडिच्चु भृत्य जनङ्ङळे पीडिच्चु कोळ्कयुं संभार सञ्चयं कुण्डत्तिलोक्केयोरिक्कले होमिच्चु खण्डिच्चितु लघुमेखला जालवुं । रावणन् कय्यिलिरुन्न महास्त्रवं पावनि शीघ्रं पिटिच्चु पऱ्रिच्चुटन् ताडनं चेय्तानतु कोण्टु सत्वरं क्रीडया वानर श्रेष्ठन् महाबलन् । दन्तङ्ङळ् कोण्टुं नखङ्ङळ् कोण्टुं दशकन्धर विग्रहं कीऱिनानेट्टवुं । ध्यानत्तिनेतुमिळक्कमुण्टायील मानसे रावणनु जय कांक्षया । मण्डोदरियेप्पिटिच्चु वलिच्चितन्मण्डनमेल्लां नुरुक्कियिट्टीटिनान् । विस्रस्तनीवियाय्क्कञ्चुकहीनयाय् वित्रस्तयाय् विलापं तुटङ्ङी-टिनाळ्— वानरन्मारुटे तल्लुकोण्टीट्टुवान् ञानेन्तु दुष्कृतं चेय्ततु दैवमे ! ४० नाणं निनक्किल्लयो राक्षसेश्वर ! मानं भवानोळ-मिल्ल मट्टार्क्कुमे; निन्नुटे मुम्पिलिट्टाशु कपिवररेन्नेत्तलमुटि चुट्टिप्पिटिपेट्टु पारिलिळ्च्चुकुन्नतुं कण्टिरिप्पतु पोरे परिभव-मोर्क्किल् जळमते ! ऎन्तिनाय्क्कोण्टु निन् ध्यानवुं होमवु-

---

अन्दर बैठे हुए देखा। फिर अंगद की आज्ञा पाकर दूसरे वानर भी तुरन्त अन्दर प्रविष्ट हुए। ३० आँखें मूद ध्यान निरत राक्षसराज को देख वानरों ने उसपर खूब प्रहार किया, उसे खूब धक्का दिया तथा सेवकों को खूब पीड़ित किया। पूजा-सामग्री को एकदम उठाकर अग्निकुण्ड में डाल दिया तथा लघु मेखलाओं को खण्डित किया। महाबली वानर श्रेष्ठ (हनुमान) ने रावण के हाथ का महास्त्रव शीघ्र ही छीन लिया तथा क्रीडावश उन्होंने उसी से रावण को खूब प्रताड़ित किया। वानरों ने दाँतों तथा नखों से दशानन का शरीर खूब दण्डित एवं पीड़ित किया। मन में विजय की आकाँक्षा लिये रावण का ध्यान ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। तब वानरों ने मन्दोदरी को घसीट लिया और उसके आभूषणों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। मन्दोदरी विस्रस्त नीवि (जिसकी कमर का वस्त्र खुल गया है) एवं कंचुकहीना हो, वित्रस्त (भयभीत) हो विलाप करने लगी। (और कहने लगी कि) "वानरों का प्रहार सहने के लिए हे दैव ! मैंने क्या दुष्कृत (पाप) किया है ? ४० हे राक्षसेन्द्र ! क्या आपको लज्जा नहीं आ रही है ? आपके जैसा स्वाभिमानी कोई दूसरा नहीं था। हे मूढ़ात्मा ! आपके सामने ही वानर लोग मेरे बाल खींचकर भूमि पर

मन्तर्गत मिनियेन्तोन्तु दुर्म्मते ! जीविताशाते बलीयसी मानसे हा ! विधिवैभवमेन्त्रयुमत्भुतं। अर्द्धं पुरुषनु भार्य्ययल्लो भुवि शत्रुक्कळ् वन्नवळेप्पिटिच्चेन्नयुं बद्धप्पेटुत्तुन्नतुं कण्टिरिक्कयिल् मृत्यु भवियक्कुन्नतुत्तममेवनुं। नाणवुं भक्तियुं वेण्टीलिवनु तल् प्राणभयं कोण्टु मूढन् महाखलन्। भार्य्या विलापङ्ङळ् केट्टु दशाननन् धैर्य्यमकन्नु तन् वाळुमाय् सत्वरं अंगदन् तन्नोटटुत्तानतु कण्टु तुंगशरीरिकळाय कपिकळुं ५० रात्रिञ्चरेन्द्र पत्नियेयुमयच्चार्त्तु विळिच्चु पुरत्तु पोन्नीटिनार्। होममशेषं मुटक्कि वयमेन्नु रामान्तिके चेन्नु कैतोळुतीटिनार्। मण्डोदरियोटनुसरिच्चन्नेरं पण्डितनाय दशास्यनुं चोल्लिनान्— नाथे ! धरिक्क दैवाधीनमोक्कयुं जातनायाल् मरिक्कुन्नतिन् मुन्नमे कल्पिच्चतेल्लामनुभविच्चीटणमिप्पोळनुभवमित्तरं मामकं। ज्ञानमाश्रित्य शोकं कळञ्ञीटु नी ज्ञान विनाशनं शोकमरिक नी। अज्ञानसंभवं शोकमाकुन्नतुमज्ञान जातमहङ्कारमायतुं; नश्वरमाय शरीरादिकळिले विश्वासवुं पुनरज्ञान संभवं; देहमूलं पुत्रदारादि

घसीट रहे हैं। यह देखकर भी आपको संतृप्ति नहीं हुई ? यह देखकर भी आपके मन में कोई दुःख नहीं हो रहा है। हे दुर्बुद्धि ! आपका यह ध्यान और यह होम सब किसलिए है ? आपकी क्या इच्छा है ? आपके मन की जिजीविषा तो बलवती ही है। विधि की विडम्बना विचित्र ही है ! भार्या पुरुष का अर्द्धांश है। शत्रुओं के द्वारा उसका अपहरण करते तथा दण्डित करते देख बैठने की अपेक्षा मृत्यु ही प्रकाम्य है। इस महाबलशाली मूढ़ात्मा को अपने प्राण की पड़ी है, इसलिए न लज्जा की चिन्ता है, न मान की।" भार्या के इस प्रकार का विलाप सुनकर शिथिल हुआ रावण अपना खड्ग लिये तुरन्त अंगद पर टूट पड़ा, तो तुंगशरीरी (उन्नतकाय) कपि लोग— ५० —निशाचरेन्द्र की पत्नी को छोड़ कोलाहल के साथ बाहर आये। उन्होंने राम के पास पहुँचकर हाथ जोड़ प्रणाम करके बताया कि हमने उसका होम पूरा नहीं होने दिया !" (वानरों की पकड़ से मुक्त हुई) मन्दोदरी के पास आकर रावण ने सौम्य वचन कहे— "हे स्वामिनी ! सबको विधिवश समझ लो। जो जन्म लेता है उसे मृत्युपर्यंत दैव-कल्पित के अनुसार सब (सुख-दुःख) भोगना पड़ता है। आज मेरा तो यही अनुभव है। तुम ज्ञान का आश्रय लेकर अपना दुःख विस्मृत कर लो, ज्ञान का अभाव ही दुःख का मूल कारण है। शोक अज्ञान की उपज है, अहंकार भी अज्ञान से उत्पन्न है। इसी अज्ञान के

बन्धवुं देहिक्कु संसारवुमतु कारणं। शोक भय क्रोध लोभ मोहस्पृहा रागहर्षादिजरा मृत्यु जन्मङ्ङळ् ६० अज्ञानजङ्ङळ-खिल जन्तुक्कळ्क्कुमज्ञानमेल्लामकलेक्कळकन्नी। ज्ञानस्वरूपनात्मा परनद्वयनानन्द पूर्णस्वरूपनलेपकन् ओन्निनोट्टिल्ल संयोगमतिनु-मट्टोन्निनोटिल्ल वियोगमोरिक्कलुं। आत्मानमिङ्ङने कण्टु तेळिञ्ञुटनात्मनि शोकं कळक नी वल्लभे! ञानिनि श्रीराम-लक्ष्मणन्मारेयुं वानरन्मारेयुं कोन्नु वन्नीटुवन्। अल्लाय्किलो रामसायकमेट्टु कैवल्यवुं प्रापिप्पनिल्लोरु संशयं। एन्ने रामन् कोल चेय्किल् नी सीतयेक्कोन्नु कळञ्ञुटनेन्नोटु कूटवे पावकन् तङ्कल् पतिच्चु मरिक्क नी भावनयोट्टुमेन्नाल् गतियुं वरुं। व्यग्रिच्चतु केट्टु मण्डोदरि दशग्रीवनोटित्थं पञ्ञाळतु नेरं— राघवनेज्ज-यिप्पानरुताक्कुमे लोकत्रयत्तिङ्कलेन्नु धरिक्क नी। ७० साक्षाल् प्रधानपुरुषोत्तमनाय मोक्षदन् नारायणन् रामनायतुं देवन् मकरावतारमनुष्ठिच्चु वैवस्वतमनु तन्ने रक्षिच्चतुं; राजीव लोचनन् मुन्नमोरु लक्षयोजना विस्तृतमायोरु कूर्म्ममाय् क्षीर

कारण ही नश्वर शरीर आदि पर भरोसा किया जाता है। इसी शरीर के कारण भार्या-पुत्र आदि का सम्बन्ध है और इसी कारण आत्मा संसारी बनती है। शोक, भय, क्रोध, लोभ, मोह, स्पृहा, राग, हर्ष आदि (भाव), जरा, मृत्यु, जन्म (आदि अवस्थाएँ)— ६० —सब जीव-जन्तुओं को अज्ञानवश अनुभूत होते हैं। इसलिए तुम अज्ञान को दूर कर दो। आत्मा ज्ञान-स्वरूप, परमात्मा, अद्वय, आनन्द-स्वरूप, अलिप्त है। उसका न किसी से संयोग होता है, न उसका कभी किसी से वियोग ही अनुभव होता है। मन में आत्मा के इस स्वरूप को समझकर, हृदय में उत्पन्न शोक को हे प्रिये! तुम त्याग दो। अब मैं श्रीराम-लक्ष्मण तथा वानरों का वध करके आऊँगा। अन्यथा निश्चय ही राम-सायक (राम-बाण) लगकर कैवल्य प्राप्त करूँगा। अगर मुझे राम ने मार डाला तो तुम सीता की हत्या करके, मेरे साथ पावक (चिता की ज्वाला) में जल मरो। पातिव्रत्य-भाव लिये मरने से तुम्हें सद्गति प्राप्त होगी।" यह सुन खिन्न हुई मन्दोदरी ने दशग्रीव से यह कहा—"आप यह स्मरण रखिए कि इस त्रिभुवन में कोई राम को जीत नहीं सकता। ७० राम साक्षात् नारायण, मोक्षप्रदायक प्रधान पुरुषोत्तम हैं। ये वे ही भगवान हैं जिन्होंने मत्स्यावतार लेकर वैवस्वत मनु की रक्षा की थी; ये ही राजीवलोचन (कमलनेत्र भगवान) हैं, जिन्होंने पहले क्षीरसागर के मन्थन के समय एक

समुद्र मथन काले पुरा घोरमां मन्दरं पृष्ठे धरिच्चतुं; पन्नियाय्
मुन्नं हिरण्याक्षनेक्कोन्नु मन्निटं तेट्मेल् वच्चु पोङ्ङिच्चतुं;
घोरनायोरु हिरण्यकशिपु तन् मार्रिटं कैनखं कोण्टु पिळर्न्नतुं;
मून्नटि मण्णु बलियोटु याचिच्चु मूलोकवुं मून्नटियायळन्नतुं;
क्षत्रियराय् प्पिरन्नोरसुरन्मारे युद्धे वधिप्पतिनाय् जमदग्नितन्
पुत्रनाय् रामनामत्तेद्धरिच्चतुं पृथ्वीपतियाय रामनिवन् तन्ने।
मार्त्ताण्डवंशे दशरथपुत्रनाय् धात्रीसुतावरनाकिय राघवन् ८०
निन्ने वधिप्पान् मनुष्यनाय् भूतले वन्नु पिरन्नतु मेन्नु धरिक्कनी।
पुत्र विनाशं वरुत्तुवानुं तव मृत्यु भविप्पानुमाय् नीयवनुटे वल्ल
भयेक्कट्टु कोण्टु पोन्नू वृथा निर्ल्लज्जनाकयाल् मूढ ! जळप्रभो !
वैदेहियेक्कोटुत्तीटुक रामनु सोदरनाय्क्कोण्टु राज्यवुं नल्कुक।
रामन् करुणाकरन् पुनरेन्नयुं नामिनिक्काननं वाळ्क तपस्सिनाय्।
मण्डोदरी वाक्कु केट्टोरु रावणन् चण्डपराक्रमन् चोन्नानतु नेरं—
पुत्रमित्रामात्य सोदरन्मारेयुं मृत्यु वरुत्ति ञानेकनाय्क्कानने

लाख योजन विस्तार युक्त कूर्म के रूप में अवतार लेकर अपनी पीठ पर मन्दर पर्वत को धारण कर लिया था। (ये ही भगवान हैं) जिन्होंने पूर्व में वराह रूप में (अवतार लेकर) हिरण्याक्ष का वध कर भूमि को दशन-शिखर पर उठा लिया था; (ये ही वे भगवान हैं) जिन्होंने अपने हाथ के नखों से घोर हिरण्यकशिपु का वक्षःस्थल विदीर्ण कर डाला था; (ये ही वे भगवान हैं) जिन्होंने राजा बलि से तीन कदम भूमि माँगकर तीनों लोकों को तीन कदमों में नाप लिया था; (ये ही वे भगवान हैं) जिन्होंने क्षत्रिय रूप में पैदा हुए असुरों को युद्ध में मारने के लिए जमदग्नि के पुत्र रूप में राम (परशुराम) के अभिधान से जन्म लिया था। वे ही भगवान आज पृथ्वीपति बन मार्तण्डवंश (सूर्यवंश) में दशरथपुत्र तथा धात्रीसुतावर (भूसुता देवी सीता के पति) बन—। ८० —आपका वध करने के लिए भूतल पर मनुष्य बन अवतीर्ण हुए हैं, यह आप समझ लीजिए। हे मूर्ख ! हे मूढात्मा ! पुत्र-विनाश तथा अपने विनाश के निमित्त आप निर्लज्ज हो उन्हीं की पत्नी को व्यर्थ चुरा लाये। अब आप वैदेही को राम के लिए लौटा दीजिए और भ्राता (विभीषण) के लिए राज्य त्याग दीजिए। राम करुणामूर्ति हैं (कि आपका अपराध क्षमा कर देंगे)। अब हम तपस्या करते हुए कानन-वास करेंगे।" मंदोदरी का यह कथन सुनकर उग्र पराक्रमी (रावण) ने तब कहा—"पुत्र, मित्र, अमात्य, सोदर सबको मरवा डालकर अब मेरा अकेला कानन में रहना अनुचित है। जैसा हम सोच

जीविच्चिरिक्कुन्नतुं भंगियल्लेंटो ! भाविच्च वण्णं भविक्क-यिल्लोंन्नुमे । राघवन् तन्नोटेंतिर्त्तु युद्धं चेय्तु वैकुण्ठराज्यमनु-भविच्चीटुवन् । ८९

राम-रावण युद्धम्

इत्थं परञ्ञु युद्धत्तिनोरुम्पेट्टु बद्धमोदं पुरप्पेट्टितु रावणन् । मूलबलादिकळ् संगरत्तिन्नु तल्क्काले पुरप्पेट्टु वन्नितु भूतले । लङ्काधिपन्नु सहायमाय् वेगेन संख्ययिल्लात चतुरंग सेनयुं पत्तु पटनायकन्मारुमोत्तिच्चु पत्तुकळुत्तनेक्कूप्पिप्पुरप्पेट्टार् । वारिधि-पोले परन्नु वरुन्नतु मारुति मुन्पां कपिकळ् कण्टेन्नयुं भीति मुळुत्तु वाङ्ङीटुन्नतु कण्टु नीतिमानाकिन रामनुं चोल्लिनान्—वानरवीररे! निङ्ङळिवरोटु मानं नटिच्चु चेन्नेल्करुतारुमे । ञानिवरोटु पोर् चेय्तोटुक्कीटुव नानन्दमुळ्क्कोण्टु कण्टु कोळ्केवरुं । अेन्नरुळ् चेय्तु निशाचर सेनयिल् चेन्नु चाटीटिनानेकनामीश्वरन् । चाप बाणङ्ङळुं कैक्कोण्टु राघवन् कोपेन बाण जालङ्ङळ् तूकी-टिनान् । १० अेत्रनिशाचररुण्टु वन्नेट्टतिङ्ङन्न रामन्मारुमुण्टेन्नतु

बैठते हैं वैसा कुछ होता नहीं है। इसलिए अब मैं युद्ध में राम का सामना करके वैकुंठ राज्य का सुख लूट लूँगा।" ८९

राम-रावण-युद्ध

यह कहकर युद्ध के लिए तैयार हो रावण उल्लास भरित हो निकला। तुरन्त ही (पाताल में रखे) मूलबल (आत्मरक्षा, राज्य-रक्षा तथा विपत्ति काल के उपयोगार्थ निर्धारित विशेष सेना) भूतल पर आ गये। लंकाधिपति के सहायतार्थ तुरन्त ही असंख्य चतुरंगिणी सेना अपने दस प्रबल सेनापतियों के साथ आ गयी। इस सम्मिलित सेना ने दशकंठ को हाथ जोड़ प्रणामकर युद्ध के लिए कूच किया। सागर तुल्य विशाल सेना को आगे बढ़ते देख मारुति जैसे वीर वानर तक भयभीत हो पीछे हट गये। यह देख नीति-निपुण राम ने कहा—"हे वीर वानरो! आप में से कोई भी मान-रक्षा की चिन्ता से इस (विशाल सेना) का सामना न करे। मैं इन सैनिकों का युद्ध में वध करूँगा। आप सब सानन्द मात्र देखते रहिए।" यह कह एकाकी ईश्वर (राम) निशाचर सेना के बीच कूद पड़े। उन्होंने हाथ में धनुष-बाण लिये खूब बाण-वर्षा की। १० जितने निशाचर वीर आये उनके सामने उतने ही राम दिखाई पड़े। संपूर्ण

पोलें राममयमाय्च्चमञ्ञितु संग्राम भूमियुमेन्तोरु वैभवमन्नेरं। ऒन्नोटु तन्ने पोरुन्नितु राघवनेन्नु तोन्नी रजनीचरक्कोक्कवे। द्वादश ऩाऴिक ऩेर मोरुपोलें यातुधानावलियोटु रघूत्तमन् अस्त्रं वरिषिच्च ऩेरमाक्कुं तत्र चित्ते तिरिच्चऱियायतिल्लेतुमे। वासर रात्रि निशाचर वानर मेदिनी वारिधि शैल वनङ्ङळुं भेदमिल्लातें शरङ्ङळ् निऱञ्ञितु मेदुरन्माराय राक्षस वीररुं आनयुं तेरुं कुतिरयुं कालाळुं वीणु मरिच्चु निऱञ्ञितु पोर्क्कळं। काळियुं कूळिकळुं कबन्धङ्ङळुं काळनिशीधिनियुं पिशाचङ्ङळुं ऩायुं ऩरियुं कऴुकुकळ् काक्ककळ् पेयुं पेरुत्तु भयङ्करमां वण्णं। २० राम चापत्तिन् मणितन् निनादवुं व्योम मार्ग्गे तुटरत्तुटरेक्केट्टु देव गन्धर्व यक्षाप्सरोवृन्दवुं देव मुनीन्द्रनां नारदनुं तदा राघवन् तन्ने स्तुतिच्चु तुटङ्ङिनाराकाशचारिकळानन्द पूर्वकं। द्वादश ऩाऴिक कोण्टु निशाचरर् मेदिनि तन्निल् वीणीटिनारोक्कवे। मेघत्तिनुळ्ळिल् निन्नर्क्क बिंबं पोलें राघवन् तन्नेयुं काणायितन्नेरं। लक्ष्मणन् तानुं विभीषणनुं पुनरर्क्क तनयनुं मारुत पुत्रनुं मट्टुळ्ळ वानर वीररुं वन्दिच्चु चुट्टुं निऱञ्ञितु राघवनन्नेरं

युद्धभूमि राममय दिखाई दी। उस वैभव के संबंध में क्या कहा जाए! प्रत्येक रजनीचर (राक्षस) को लगा कि राम मात्र मुझसे लड़ रहे हैं। द्वादश घड़ियों तक राम ने निरंतर राक्षस-समूह पर बराबर निर्विघ्न बाण वर्षा की, तो वहाँ कोई कुछ पहचान नहीं पाया। पूरी युद्धभूमि बाणों से भर गयी कि दिन-रात, निशाचर-वानर, भूमि, सागर, शैल, वन कोई चीज पहचानी नहीं जा रही थी। उन्नत राक्षस, हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सैनिक सब मरकर गिर पड़े और (लाशों से) युद्धभूमि भर गयी। काली, पिशाच और काल रात्रि रक्त पीकर पुलकित हो उठी। श्वान, सियार, गिद्ध, काक सब शव नोच खाने लग गये। २० राम-चाप की मणियों का निनाद आकाश मार्ग में बार-बार प्रतिध्वनित हो उठा। देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर आदि तथा देवमुनीन्द्र नारद आदि आकाश मार्ग पर आ खड़े हो सहर्ष राम के स्तुति-गान करने लगे। द्वादश घड़ियों के भीतर ही भीतर सारे के सारे राक्षस धराशायी हुए। तब सब सैनिकों से खाली एकान्त रणभूमि में राम ऐसे दिखाई दिये मानो मेघकालिमा को दूरकर आकाश में प्रकाशित अर्कबिंब (सूर्यबिंब) हो। तब लक्ष्मण, विभीषण, अर्कतनय (सुग्रीव), मारुतपुत्र (हनुमान), तथा अन्य वानर वीर राम को चारों ओर से घेर कर प्रणाम करने तथा स्तुतिगान करने लगे। तब

मर्क्कटनायकन्मारोटरुळ् चेय्तितिक्कणक्कै युद्धमाशु चेय्तीटुवान् नारायणनुं परमेश्वरनुमौळिञ्ञारुमिल्लेन्नु केळ्प्पुण्टु ञान् मुन्नमे। राक्षसराज्यं मुळुवनतुन्नेरं राक्षस स्त्रीकळ् मुऱविळि कूट्टिनार्—३० तात ! सहोदर ! नन्दन ! वल्लभ ! नाथ ! न्नमुक्कवलंबन-मारय्यो ! वृद्धयायेटं विरूपयायुळ्ळोरु नक्तञ्चराधिप सोदरि रामनै श्रद्धिच्च कारणमापत्तितौक्कवे वद्धिच्चु वन्नितु मट्रिल्ल कारणं। शूर्प्पणखय्क्कैन्तु कुट्रमतिल् परं पेप्पेरुमाळल्लयो दशकन्धरन् ? जानकियेक्कोतिच्चाशु कुलं मुटिच्चानोरु मूढन् महापापि रावणन्। अर्द्धप्रहर मात्रेण खरादियै युद्धे वधिच्चतुं वृत्रारिपुत्रनै मृत्युवरुत्ति वाळिच्चु सुग्रीवनैस्सत्वरं वानरन्मारैय-यच्चतुं, मारुति वन्निविटेच्चेय्त कर्म्मवुं वारिधियिल् च्चिरर कैट्टिक्कटन्नतुं, कण्टिरिक्के न्नन्नु तोन्नुन्नतेन्त्रयु मुण्टो विचार-मापत्तिङ्कलुण्टावू ? सिद्धमल्लाय्किल् विभीषणन् चोल्लिनान् मत्तनायतुं धिक्करिच्चीटिनान्। ४० उत्तमन् नल्ल विवेकि विभीषणन् सत्यव्रतन् मेलिल् नन्नाय्वरुमवन्; नीचनिवन्

राम ने कहा—"हे वानर वीरो ! आज मैंने जो युद्ध करके दिखाया है, ऐसा युद्ध नारायण और परमेश्वर को छोड़ अन्य कोई करके नही दिखा सकता; यह मैंने पहले ही सुन रखा है।" इस समय राक्षस-राज्य भर में राक्षस-नारियाँ विलाप कर उठीं—। ३० —"हे तात !, हे सहोदर!, हे नन्दन (पुत्र) !, हे स्वामी ! हे नाथ ! हाय ! अब हमारा कौन सहारा है ! एक बूढ़ी एवं कुरूपा राक्षस राज की बहिन के राम पर मोहित होने का यह परिणाम (विपत्ति) निकला। इस विपत्ति के लिए दूसरा कोई कारण नहीं है। अथवा शूर्पणखा पर दोषारोपण क्यों करें। रावण क्या कम कामांध है ? एक महापापात्मा, मूढ रावण ने जानकी के प्रति अत्यासक्त हो पूरा वंशनाश ही कर दिया। आधे प्रहर के भीतर खर आदि का वध, युद्ध में वृत्रारि-पुत्र (बालि) का वध करके सत्वर सुग्रीव का राज्याभिषेक, (सीतान्वेषण के लिए) वानरों को (चारों ओर) भेजना, इधर आकर मारुति की करतूतें, सागर में सेतुबन्धन और वानरों का इस पार पहुँचना, सब कुछ देख बैठे इसको यह क्या सूझा है ! भला विपत्ति के समय किसकी बुद्धि ठिकाने रहती है ? अगर वह (दुर्बुद्धि) यह समझ नहीं सकता था, तो विभीषण ने उसे समझाया था; किन्तु इस उन्मत्त ने धिक्कारपूर्वक उनकी भी अवहेलना की। ४० उत्तम स्वभाव वाले, सुबुद्धि एवं विवेकशील, सत्यव्रत विभीषण का भविष्य उज्ज्वल है।

कुलमोक्के मुटिप्पतिनाचरिच्चानितु तन्मरणत्तिनुं। नल्ल सुतन्मारेयुं तम्पिमारेयुं कोल्लिच्चु मट्टुळ्ळमात्य जनत्तेयुं अेल्लामनुभविच्चीटुवान् पण्टुतान् वल्लाय्म चेय्ततुमेल्लां मऱन्नितो? ब्रह्मस्वमायतुं देवस्वमायतुं निम्मरियादमटक्किनानेट्वुं। नाट्टिलिरिक्कुं प्रजकळेप्पीडिच्चु काट्टिलाक्किच्चमच्चीटिनान् कश्मलन्। अर्थमन्यायेन नित्य मार्ज्जिक्कयुं मित्र जनत्ते वेऱुत्तु चमय्क्कयुं; ब्राह्मणरेक्कोल चेय्कयुं मट्टुळ्ळ धार्म्मिकन्मार् मुतलोक्केयटक्कयुं; पारं गुरुजन द्वेषवु मुण्टिव नारेयुमिल्ल कृपयुमोरिक्कलुं; इम्महापापि चेय्तोरु कर्म्मत्तिनाल् नम्मेयुं दुःखिक्कुमाऱाक्कि नानिवन्। ५०
इत्थं पुरस्त्री जनत्तिन् विलापङ्ङळ् नक्तञ्चराधिपन् केट्टु दुःखार्त्तनाय् शत्रुक्कळेक्कोन्नीट्टुवकुवानिन्निनि युद्धत्तिनाशु पुऱप्पेट्टुकेङ्किलुनां। अेन्नतु केट्टु विरूपाक्षनुमतिन् मुन्ने महोदरनुं महापार्श्वनुं उत्तर गोपुरत्तूटे पुऱप्पेट्टु शस्त्रङ्ङळ् तूकित्तुटङ्ङिनारेट्वुं। दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतनादरिच्चुन्नतनाय निशाचर नायकन् गोपुर वातिल् पुऱप्पेट्टु निन्नितु चापलमेन्निये वानर वीररुं, राक्षसरोटेतिर्त्तारतु कण्टेट् मूक्कोटट्टुत्तु-निशाचर वीररुं। सुग्रीवनुं विरूपाक्षनुं तङ्ङळिलुग्रमां वण्णं

किन्तु इस नीच ने अपने तथा वंश के नाश के लिए यह आचरण किया। अपने सुपुत्रों तथा सहोदरों को इसने मरवा डाला; दूसरे अमात्यों का भी इसने वध करवा दिया। आज यह व्यर्थ दुखी नहीं है; यह कैसे अपने पुराने पापाचरणों को भूल सकता है? इसने क्या क्या ब्रह्मस्व द्रोह एवं देवस्वद्रोह नहीं किये? इसने क्या क्या अपमर्यादाएँ नहीं दिखाईं? इस नीच ने कितने गृहस्थों को प्रपीडित कर वन में नहीं भेजा? नित्य अन्याय एवं अत्याचार से धन-संग्रह करता रहा; मित्रों को शत्रु बनाया; ब्राह्मणों की हत्या की, अनेक धार्मिक व्यक्तियों का धनापहरण किया। इसने गुरुजनों का विरोध प्राप्त किया; इसने कभी किसी पर दया नहीं की। इस महापापी ने अपने कर्मों से हमें भी दुखी बना छोड़ा।" ५०
दुखार्त (दुख से पीड़ित) निशाचरपति ने नारी वर्ग के ये विलाप सुन लिये (और कहा) "अब मैं चुप बैठ नहीं सकता; शत्रुओं का वध करने मैं अभी युद्ध को निकलूँगा।" यह सुनकर विरूपाक्ष, महोदर तथा महापार्श्व ने उत्तर गोपुरद्वार से बाहर आ घोर शस्त्र-प्रयोग किये। अनेक अपशकुन दिखाई पड़े; उन सबकी उपेक्षा कर वीर राक्षसराज (रावण) गोपुरद्वार के बाहर आ खड़ा रहा। तब तक वीर वानर राक्षसों से

पोरुतारतु न्नेरं । वाहन माकिन वारण वीरनैस्साहसं कैक्कोण्टु वानरराजनुं कौन्नतु कण्टु विरूप विलोचनन् चेन्नितु वाळुं परिचयुं कैक्कोण्टु । ६० कुन्नु कौण्टोन्नेरिञ्ञान् कपिराजनुं तन्नायितेन्नु विरूपाक्षनुमथ वेट्टिनान् वानरनायक वक्षसि, पुष्ट कोपत्तोटु मर्क्कट राजनुं, न्नेट्टिमेलोन्नटिच्चानतु कौण्टवन् तेट्टेन्नु कालपुर पुक्कुमेविनान् । तेरिलेरिक्कौण्टटुत्तान् महोदरन् तेरुं तकर्त्तु सुग्रीवनवनेयुं मृत्यु पुरत्तिनयच्चतु कण्टति क्रुद्धनाय् वन्नटुत्तान् महापर्श्वनुं । अंगदन् कौन्नानवनयुमन्नेरं पौङ्ङु मिळिकळोटाशराधीशनुं पोर् मदत्तोटुमटुत्तु कपिकळे तामसास्त्रं कौण्टु वीळित्तनानूळियिल् । रामनुमैन्द्रास्त्रमेय्तु तटुत्तितु तामसास्त्रत्तेयुमप्पोळ् दशाननन् आसुरमस्त्रमेय्तानतु वन्नळवातुरन्मा-रायिताशु कपिकळुं । वारण सूकर कुक्कुट क्रोष्टुक सारमेयोरग सैरिभ वायस ७० वानर सिंह रुरुवृक काक गृद्धाननमाय्वरु-मासुरास्त्रात्मकं; मुद्गर पट्टस शक्ति परश्वथ खड्ग शूल प्रास बाणायुधङ्ङळुं रूक्षमाय् वन्नु परन्नतु कण्टळवाग्नेयमस्त्र

भिड़ गये । यह देख राक्षस वीर भी क्रुद्ध हो आगे बढ़े । सुग्रीव तथा विरूपाक्ष ने परस्पर उग्र युद्ध किया । वानरराज ने साहसपूर्वक उसके वाहन-स्वरूप वारण (हाथी) को मारा । यह देख विरूपाक्ष ढाल तलवार लिये आगे बढ़ा । ६० वानरराज (सुग्रीव) ने एक शिला उस पर दे मारी । तब 'खूब किया' यह कहते हुए क्रुद्ध विरूपाक्ष ने मर्कट-राज (सुग्रीव) के वक्षःप्रदेश पर जोर से तलवार दे मारी । तो सुग्रीव ने उसके माथे पर एक तमाचा दिया, जिसके लगते ही उसने यमपुरी की राह ली । तब महोदर रथ पर सवार हो आया और सुग्रीव ने रथ तोड़ उसे भी मृत्युपुरी को भेज दिया । यह देख भयंकर क्रोध युक्त हो महा-पार्श्व निकट आ पहुँचा, जिसे तुरन्त ही अंगद ने मारा । क्रोधातुर रावण आँखें फाड़-फाड़ देखने लगा और युद्ध की खुमारी में आगे बढ़ तामसास्त्रों का प्रयोग करके कपियों को भूमि पर गिराने लगा । तुरन्त राम ने ऐन्द्रास्त्र से तामसास्त्र को रोका; तुरन्त दशानन ने आसुरास्त्र का प्रयोग किया, जिसके आते ही वानर कातर हो गये । वारण (हाथी), सूकर (सुअर), कुक्कुट (मुर्गा), क्रोष्टु (गीदड़), सारमेय (कुत्ता), उरग (साँप), सैरभ (भैंसा), वायस (कौआ)— । ७० —वानर, सिंह, रुरु (कुत्ते के आकार का एक जन्तु), वृक, गिद्ध आदि के आनन (मुख) से युक्त आसुरास्त्रमूर्ति, जो मुद्गर, वेल, कुल्हाड़ी, खड्ग, भाला, तीर आदि

मेय्तान् मनुवीरनुं। चेङ्कनल्क्कोळ्ळिकळ् मिन्नल् नक्षत्रङ्ङळ् तिङ्कळुमादित्यनग्नियेन्निव्वरं ज्योतिर्म्मयङ्ङळाय्च्चेन्नु निरञ्ञळ-वासुरमस्त्रवुं पोयमरञ्ञू बलाल्। अप्पोळ् मयन् कोटुत्तोरु दिव्यास्त्रमामल्पेतरायुधं काणायितन्तिके। गान्धर्वमस्त्रं प्रयोगिच्चतिनेयुं शान्तमाक्कीटिनान् मानव वीरनुं। सौर्य्यास्त्र-मेय्तान् दशाननन्नेरं धैर्य्येण राघवन् प्रत्यस्त्रमेय्ततुं खण्डिच्च नेरमाखण्डल वैरियुं चण्डकरांशु समङ्ङळां बाणङ्ङळ् पत्तु कोण्टेय्तुमर्म्मङ्ङळ् भेदिच्चळवुत्तमपूरुषनाकिय राघवन् ८० नूरु शरङ्ङळेय्तानतु कोण्टुटल् कीऱि मुऱिञ्ञितु नक्तञ्चरेन्द्रनुं। लक्ष्मणनेळु शरङ्ङळालूक्कोटु तल्क्षणे केतु खण्डिच्चु वीळ्त्तीटिनान्। अञ्चु शरमेय्तु सूतनेयुं कोन्नु चञ्चलहीनं मुऱिच्चितु चापवुं। अश्वङ्ङळेगद कोण्टु लक्ष्मणन् तच्चु कोन्नानतु नेरं दशाननन् भूतले चाटि वीणाशु वेल् कोण्टति क्रोधाल् विभीषणने प्रयोगिच्चितु बाणङ्ङळ् मून्नु कोण्टेय्तु मुऱिच्चितु वीणतु मून्नुं नुरुङ्ङि महीतले। अप्पोळ् विभीषणनेक्कोल्लुमाऱवन् कल्पिच्चु मुन्नं मयन् कोटुत्तोरु-वेल् कैक्कोण्टु चाट्टुवानोङ्ङिय नेरत्तु लक्ष्मणन् मुल्प्पुक्कु

हथियारों की वर्षा करने में समर्थ है, को रूक्ष-रूप धारण किये आते देखकर मनुवीर (राम) ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग कर दिया। बिजली, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, अग्नि आदि देवों की ज्योति से युक्त आग्नेय के आते ही आसुरास्त्र तेजोरहित हो गया। तुरन्त (रावण को मय से प्रदत्त) दिव्यास्त्र सामने दिखाई पड़ा तो मानववीर (राम) ने गन्धर्वास्त्र का प्रयोग कर उसे भी शान्त कर दिया। तब दशानन ने सौर्यास्त्र का प्रयोग किया तो प्रत्यस्त्र का प्रयोगकर राम ने उसे भी खंडित कर दिया। तुरन्त ही आखण्डल वैरी (इन्द्र-शत्रु) ने चण्डकरांशु सम (सूर्य रश्मियों के तुल्य) दस शरों से (श्रीरामजी के) शरीर को विद्ध कर डाला तो उत्तम पुरुष रामने—। ८० —एक साथ शत बाण चलाये, जिनके लगने से निशाचरेन्द्र का शरीर विक्षत हो गया। उसी समय लक्ष्मण ने सात तीक्ष्ण बाणों से (रावण का) ध्वज काट नीचे गिराया, पाँच बाणों से उसका चाप खण्डित कर दिया तथा सारथी को भी मारा। लक्ष्मण ने गदा मारकर उसके अश्वों का संहार किया तो तुरन्त दशानन भूतल पर कूद पड़ा और क्रोधातुर हो विभीषण पर वेल का प्रयोग किया। किन्तु लक्ष्मण ने तीन बाणों से उसे तीन खंड कर महीतल पर गिरा दिया। तब विभीषण का वध करने के निमित्त पहले मय से प्रदत्त वेल उठाकर वह उसे प्रयुक्त करने ही जा

बाणङ्ङळेय्तितु; नक्तञ्चराधिपन् तन्नुटलोक्कवे रक्तमणिञ्ञु मुऱिञ्ञु वलञ्ञुटन् निल्क्कुं दशाननन् कोपिच्चु चोल्लिनान् लक्ष्मणन् तन्नोटु नन्नु नीयेत्रयुं। ९० रक्षिच्च वारु विभीषणनेत्तथा रक्षिक्किल् नन्नु निन्नेप्पुनरेन्नुटे शक्ति वरुन्नतु कण्टालु मिन्नोरु शक्तनाकिल् भवान् खण्डिक्क वेलितुं। एन्नु पऱञ्ञु वेगेन चाटीटिनान् चेन्नु तऱच्चितु माऱत्तु शक्तियुं। अस्त्रङ्ङळ् कोण्टु तटुक्करुताञ्ञुटन् वित्रस्तनाय् तत्र वीणु कुमारनुं। वेल् कोण्टु लक्ष्मणन् वीणतु कण्टुळ्ळिल् माल् कोण्टु रामनुं निन्नु विषण्णनाय्। शक्ति पऱिप्पतिनाक्कुं कपिकळ्क्कु शक्ति पोराञ्ञु रघुकुलनायकन् तृक्कैकळ् कोण्टु पिटिच्चु पऱिच्चुटनुळ्ळकोपमोटु मुऱिच्चेऱिञ्ञीटिनान्। मित्र तनय सुषेण जगल् प्राण पुत्रादि कळोटरुळ् चेय्तितादराल्— लक्ष्मणन् तन्नुटे चुटुमिरुन्निनि रक्षिच्चु कोळ्ळुविन् विषादिक्करुतेतुं। दुःख समयमल्लिप्पोळुळ्ळतोटु रक्षोवरने वधिक्कुन्नतुण्टु ञान्। १०० कल्याण मुळ्क्कोण्टु कण्टुकोळ्विन् निङ्ङळेल्लावरुमिन्नुमल्क्कर कौशलं। शक्रात्मजने वधिच्चतुं वेगत्तिलर्क्कात्मजादिकळोटुमोरुमिच्चु

रहा था कि उसके पूर्व ही आगे बढ लक्ष्मण ने शर-वर्षा से उसका शरीर शत विक्षत कर दिया जिससे रावण रक्त-स्नान करने लगा। तब क्रोधाकुल रावण ने लक्ष्मण से कहा—"तुम भी खूब निकले। ९० तुमने अब तक विभीषण को बचाया; किन्तु अब संभव है तो अपने को बचाओ। तुम मेरी महाशक्ति को आते देख लो और समर्थ हो तो इसे भी खंडित करो।" यह कह वक्षःस्थल को लक्ष्य कर उसने शक्ति का प्रयोग किया, जो वक्षःस्थल को जा लगी। अस्त्रों से रोक न पाने के कारण कुमार वित्रस्त हो वहीं नीचे गिर पड़े। शक्ति लगकर लक्ष्मण को नीचे गिर पड़ते देख मन में दुखी हो राम उदास खड़े रह गये। शक्ति निकालने की क्षमता किसी वानर में न देखकर रघुकुल नायक (राम) ने अपने श्रीकरों से उसे निकाल लिया और क्रोध से उसे तोड़कर दूर पटक दिया। फिर मित्र तनय (सुग्रीव), सुषेण और जगद्प्राणपुत्र (वायुपुत्र हनुमान) आदि को बताया—"तुम लोग उदास मत होओ, तुम लक्ष्मण के आस-पास ही रहकर उनका उपचार करो। यह दुखी होने का समय नहीं है। मैं तुरन्त रक्षोवर (रावण) का वध करूँगा। १०० तुम सब लोग आज मेरा हस्त-कौशल खड़े-खड़े देख लो और सुखी बनो। शक्रात्मज (बालि) का वध, फिर अर्कात्मज (सुग्रीव) आदि के साथ सेतु बाँध सागर पार

वारिधियिल् चिरक्कॆट्टिक्कटन्नतुं पोरिल् निशाचरन्मारॆ वधिच्चतुं
रावण निग्रह साध्यमायिट्टवन् केवलमिप्पोळभिमुखनायितु ।
रावणनुं बत ! राघवनुं कूटि मेवुक भूमियिलॆन्नुळ्ळतिल्लिनि ।
रात्रिञ्चरेन्द्रनॆक्कॊल्लुवन् निर्णयं मार्त्ताण्डवंशत्तिलुळ्ळवनाकिल्
ञान् । सप्तद्वीपङ्ङळुं सप्तांबुधिकळुं सप्ताचलङ्ङळुं चन्द्र-
सूर्य्यन्मारुं आकाश भूमिकळॆन्निवयुळ्ळ नाळ् पोकात कीर्त्ति
वर्द्धिक्कुं परिचिल् ञान् । आयोधने दशकण्ठनॆक्कॊल्वनॊरायुध
पाणियॆन्नाकिल् निस्संशयं । देवासुरोरग चारण तापसरेवरुं
कण्टङ्ङियेणं मम बलं । ११० इत्थमरुळ् चॆय्तु नक्तञ्चरेन्द्र-
नोटस्त्रङ्ङळॆय्तु युद्धं तुटङ्ङीटिनान् । राघव रावणन्मार्
तम्मिलिङ्ङनॆ मेघङ्ङळ् मारि चॊरियुन्नतु पोलॆ बाण गणं
पॊऴिच्चीटुन्नतु नेरं ञाणॊलि कॊण्टु मुऴङ्ङि जगत्त्रयं । सोदरन्
वीणु किटक्कुन्नतोर्त्तुळ्ळिलाधि मुळ्ळु रघुकुल नायकन् तारेय
तातनोटेवमरुळ् चॆय्तु धीरतयिल्ल युद्धत्तिनेतुं मम । भूतले
वाऴ्कयिल् नल्लतॆनिक्किनि भ्रातावुतन्नोटु कूटॆ मरिप्पतुं;
विल्प्पिटियुं मुरुकुन्नितिल्लेतुमे कॆल्पुमिल्लातॆ चमञ्ञु नमुक्किह

करना, युद्ध में इतने निशाचरों की हत्या सबका लक्ष्य इसी रावण का वध
करना ही था; किन्तु यह केवल आज ही प्रत्यक्ष सामने आया। कष्ट !
रावण और राम का अब एक ही समय भूमि पर रहना असंभव है। अगर
मैं मार्तण्डवंश (सूर्यवंश) में उद्भूत हूँ तो मैं रात्रिचरेन्द्र (रावण) का
अवश्य वध करूँगा। सप्तद्वीपों, सप्तसागरों, सप्ताचलों, सूर्य-चन्द्र, भूमि-
आकाश के रहते (आज इसका वधकर) मैं निर्दोषयुक्त यश बढ़ाऊँगा।
अगर मैं आयुधपाणि हूँ तो निस्संदेह आयोधन (युद्ध) में रावण का वध
कर डालूँगा। आज देव, असुर, उरग (नाग), चारण, तापस सब मेरी
सामर्थ्य देख लेंगे।" ११० यह प्रतिज्ञा करके राक्षसेन्द्र पर बाण-प्रयोग
करते हुए (रामने) पुनः युद्ध आरंभ किया। जैसे दो मेघ परस्पर स्पर्धा
करते जलकण बरसाते हैं वैसे जब राम-रावण परस्पर बाण-वर्षा कर रहे
थे, तब धनुष की झंकारों से त्रिलोक कंपित हुए। अपने विक्षत हो पड़े भ्राता
का मन में स्मरण करते हुए राम ने अत्यन्त खिन्न हो तारेय-तात (सुग्रीव)
से इस प्रकार कहा—"आज युद्ध करने का साहस नहीं रह गया। अब
भूतल पर रहने की अपेक्षा भ्राता के साथ मृत्यु पाना ही भला लगता है।
धनुष पकड़ते हाथ काँप रहा है, अब युद्ध के लिए शक्ति भी नहीं रही।
मैं सीधा खड़ा रह नहीं पा रहा हूँ। मन में उत्तरोत्तर विभ्रम बढ़ता जा

निल्पानुमेतुमरुतु मनस्सिनं विभ्रममेरि वरुन्नितु मेल्क्कुमेल् ।
दुष्टनेक्कोल्वानुपायवुं कण्टील नष्टमाय् वन्नितु मानवुं मानसे ।
एवमरुळ् चेय्त नेरं सुषेणनुं देवदेवन् तन्नोटाशु चोल्लीटिनान्—१२०
देहत्तिनेतुं तिरं पकर्न्नीलोरु मोहमत्रे कुमारनेन्नु निर्णयं । वक्त्र
नेत्रङ्ङळ्क्कुमेतुं विकारमिल्लत्तल् तीर्त्तिप्पोळुणरुमवरजन् ।
अेन्नुणर्त्तिच्चनिलात्मजन् तन्नोटु पिन्ने निरूपिच्चु चोन्नान् सुषेणनुं—
मुन्नेक्कणक्के विशल्य करिणियाकुन्न मरुन्निन्नु कोण्टु वन्नीटुक ।
अेन्नळवे हनूमानुं विरवोटु चेन्नु मरुन्नतु कोण्टु वन्नीटिनान् ।
नस्यवुं चेय्तु सुषेणन् कुमारनालस्यवुं तीर्न्नु तेळिञ्ञु विळङ्ङिनान् ।
पिन्नेयुमौषधशैलं कपिवरन् मुन्न मिरुन्न वण्णं तन्नेयाक्किनान् ।
मन्नवन् तन्ने वणङ्ङिनान् तम्पियुं तन्ताय् मुरुकेप्पुणर्न्नितु रामनुं ।
निन्नुटे पारवश्यं काण्क कारणमेन्नुटे धैर्य्यवुं पोयितु मानसे ।
अेन्नतु केट्टुरचेय्तु कुमारनुमोन्नु तिरुमनस्सिङ्कलुण्टाकणं । १३०
सत्यं तपोधनन्मारोटु चेय्ततुं मिथ्ययाय्वन्नु कूटायेन्नु निर्णयं ।
त्रैलोक्य कण्टकनामिवनेक्कोन्नु पालिच्चु कोळ्क जगत्त्रयं वैकाते ।

रहा है । इस दुष्ट को संहार करने का कोई उपाय नहीं दीख रहा है । मन में लज्जित हो रहा हूं ।" इस प्रकार कहते ही सुषेण ने देवदेवेश से कहा— । १२० "हे स्वामी ! कुमार की मृत्यु की आशंका न कीजिएगा । रक्त-प्रवाह के रुक जाने की आशंका भी निर्मूल है क्योंकि शारीरिक रंग में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है । निश्चय ही कुमार मूर्छा में हैं । वक्त्र (मुख) एवं नेत्रों में भी कोई परिवर्तन नहीं है, वे जल्दी ही मूर्छा से जाग उठेंगे ।" यह कहने के उपरांत सुषेण ने अनिलात्मज (हनुमान) से विचार करके कहा—"पहले के जैसे ही विशल्य करिणी नामक औषधी तुरन्त ले आओ । यह कहते मात्र ही हनुमान जाकर वही औषध ले आये । सुषेण ने उसका नस्य किया तो कुमार का आलस्य दूर हुआ और वे स्वस्थ हुए । फिर हनुमान ने औषधशैल को ले जाकर पूर्ववत् यथास्थान रख दिया । लक्ष्मण ने जाकर महाराज (राम) को प्रणाम किया और राम ने भाई को गाढ भाव से आश्लेष किया । (राम ने कहा कि) "तुम्हारी मूर्छा देखकर मेरा धैर्य जाता रहा ।" यह सुनकर कुमार लक्ष्मण ने कहा कि "आप एक बात पर सदा ध्यान रखिए । १३० आपने तपोधनों से जो सत्य प्रतिज्ञा की थी, वह कभी मिथ्या न होने पाए । आप अविलंब त्रिलोक के लिए कंटक तुल्य इसे (रावण को) मारकर धर्म की रक्षा करें ।" लक्ष्मण की उक्ति सुनकर जल्दी ही राम ने जाकर रावण

लक्ष्मणन् चॊन्नतु केट्टु रघूत्तमन् रक्षोवरनोटॆतिर्त्तानतिद्रुतं। तेरुमॊरुमिच्चु वन्नू दशास्यनुं पोरिन्नु राघवनोटॆतिर्त्तीटिनान्। पारिल् निन्निक्ष्वाकु वंश तिलकनुं तेरिल् निन्नाशरवंश तिलकनुं पोरति घोरमाय्च्चॆय्तोरु नेरत्तु पारमिळप्पं रघूत्तमनुण्टॆन्नु नारदनादिकळ् चॊन्नतु केळ्क्कयाल् पारं वळन्नोरु संभ्रमत्तोटुटन् इन्द्रनुं मातलियोटु चॊन्नान् ममस्यन्दनं कॊण्टक्कॊटुक्क नी वेकातॆ; श्रीराघवन्नु हितं वरुमारु नी तेरुं तॆळिच्चु कॊटुक्क मटियातॆ। मातलि तानतु केट्टुटन् तेरुमाय् भूतलं तन्निलिळिञ्ञु चॊल्लीटिनान्—१४० रावणनोटु समरत्तिनिन्नु ञान् देवेन्द्र शासनया विटकॊण्टितु। तेरितिलाशु करेरुक पोरिनाय् मारुततुल्य वेगेन नटत्तुवन्। ऎन्नतु केट्टु रथत्तेयुं वन्दिच्चु मन्नवन् तेरिलाम्मारु करेरिनान्। तन्नोटु तुल्यनाय् राघवनॆक्कण्टु विण्णिलाम्मारॊन्नु नोक्कि दशाननन्। पेमळ पोलॆ .शरङ्ङळ् तूकीटिनान् रामनुं गान्धर्वमस्त्रमॆय्तीटिनान्। राक्षसमस्त्वं प्रयोगिच्चतु नेरं राक्षस राजनुं रूक्षमायॆन्नयुं क्रूर नागङ्ङळामस्त्रत्तॆमाटुवान् गारुडमस्त्रमॆय्तु रघुनाथनुं। मातलि मेलुं दशाननन् बाणङ्ङळॆय्तु कॊटियुं

से युद्ध आरंभ किया। दशानन रथारूढ़ हो आया और राम से लड़ने लगा। इक्ष्वाकुवंश-तिलक (राम) ने पृथ्वी पर खड़े होकर तथा आशरवंश तिलक (रावण) ने रथ पर से घोर युद्ध किया। उस समय नारद आदि से यह सुनकर कि बिना रथ के रावण से लड़ना राम के लिए कठिन हो सकता है, अत्यत परिभ्रान्त हो इन्द्र ने मातली को आज्ञा दी कि तुम तुरन्त ही मेरा स्यंदन (रथ) ले जाकर (राम को) दो तथा राम के इच्छानुसार तुम सारथी का काम भी करो। यह आज्ञा पाते ही मातली रथ ले भूतल पर आकर राम से कहने लगे—। १४० —आज मैं रावण से युद्ध करते आपके पास देवेन्द्र की अनुज्ञा लेकर आया हुआ हूँ। आप युद्ध के लिए जल्दी ही इसी रथ पर आरूढ़ हो जाइए, मैं वायुवेग से रथ संचालन करता रहूँगा। यह सुनकर रथ को प्रणाम करके महाराज (राम) उस पर चढ़े। राम को अपने बराबर (रथ पर आरूढ़) पाकर दशानन ने एक बार अमरलोक की ओर घूरकर देखा और फिर राम की ओर मूसलाधार वर्षा के समान शर-वर्षा की तो राम ने भी गांधर्वास्त्र का प्रयोग किया। तुरन्त ही राक्षसराज (रावण) ने अत्यन्त तीक्ष्ण राक्षसास्त्र का प्रयोग किया। क्रूर नागास्त्र को शान्त करने के लिए रामने गारुड़ास्त्र चलाया। दशानन ने मातली पर बाण चलाया, ध्वजा भी काट डाली।

मुरिच्चु कळञ्ञतु; वाजिकळक्कुं शरमेट्मेट्ट पुनराजियुं
घोरमाय् वन्नु रघुवरन् कैकाल् तळर्न्नु तेर्त्तट्टिल् निल्कुं विधौ
कैकसीनन्दननाय विभीषणन् १५० शोकातिरेकं वळर्न्नु
निन्नीटिनान् लोकरुमेटं विषादं कलर्न्नितु । कालपुरत्तिनयप्पनि-
नियेन्नु शूलं प्रयोगिच्चिताशराधीशनुं । अस्त्रङ्ङळ् कोण्टु तट
पोरान्ञोर्त्तुटन् वृत्रारि तन्नुटे तेरिलिरुन्नोरु शक्तियेटुत्तयच्चू
राघुनाथनुं पत्तु नुरुङ्ङि वीणू तत्र शूलवुं । नक्तञ्चरेन्द्रनुटे
तुरगङ्ङळे शस्त्रङ्ङळ् कोण्टु मुरिच्चितु राघवन् । सारथि तेरुं
तिरिच्चटिच्चार्त्तनाय्प्पोरिलोळिच्चु निर्त्तीटिनानन्नेरं । आलस्य
मोट्टकन्नोरु नेरं तत्र पौलस्त्यनुं सूतनोटु चोल्लीटिनान्— अन्ति-
नाय्क्कोण्टु नी पिन्तिरिञ्ञू बलालन्धनाय् ञानत्र दुर्बलनाकयो ?
कूटलरोटेतित्तालू ञानोरुत्तनोटोटियोळिच्च वारेन्नु कण्टू भवान् ।
नीयल्ल सूतनेनिक्किनि रामनु नीयति बान्धवनेन्नरिञ्ञेनहं । १६०
इत्थं निशाचराधीशन् परञ्ञतिनुत्तरं सारथि सत्वरं चोल्लिनान्—
रामने स्नेहमुण्टायिट्टुमल्ल मल् स्वामियेाे द्वेष मुण्टायिट्टुमल्लमे ।
रामनोटु पोरुतु निल्क्कुन्नेरमामयं पूण्टु तळर्न्नतु कण्टु ञान्,
स्नेहं भवानेक्कुरिच्चेट्माकयाल् मोहमकलुवोळं पोक्कळं विट्टु

घोड़ों को भी खूब बाण लगे । पुनः युद्ध ने जोर पकड़ा । जब राम हाथ-पाँव दुखने के कारण रथ पर मौन खड़े थे तभी कैकसी नन्दन विभीषण— । १५० अत्यन्त दुखार्त हो उठे । साधु-संत भी हताश हुए । 'अब यमपुर को भेज दूंगा' यह कहते हुए आशराधीश (राक्षसराज रावण) ने शूल से राम पर वार किया । अस्त्रों से इसे रोका नहीं जा सकता, ऐसा सोचकर तुरन्त राम ने वृत्रारि (इन्द्र) के रथ में पहले से रखी गयी एक शक्ति उठाकर उसका प्रयोग किया तो उसके शूल के दस टुकड़े हुए । फिर राम ने राक्षसराज के तुरगों (घोड़ों) को शस्त्रों से छेद डाला तो तुरन्त सारथी ने रथ पीछे हटाकर युद्धक्षेत्र से दूर लाकर खड़ा किया । जब आलस्य ज़रा दूर हुआ तब रावण ने सूत से पूछा—"तुमने बलात् अंधे हो रथ क्यों पीछे हटा दिया ? क्या मैं इतना दुर्बल हुआ हूँ ? वानरों से युद्ध करते कभी तुमने मुझे पीछे हटते देखा है ? अब तुम मेरे सूत नहीं रहे, लगता है, तुम राम के अनुकूल हो ।" १६० इस प्रकार निशाचर-राज के कहने पर सारथी ने तुरन्त उत्तर दिया—"न राम के प्रति विशेष प्रीति से, न अपने स्वामी के प्रति विशेष द्वेष (के कारण मैंने रथ पीछे हटा दिया) । राम से लड़ते समय दुखी एवं विवश होते मैंने आपको

दूरे तिरत्तालस्य मॆल्लां कळञ्ञिनिप्पोरिन्नटुक्केणमॆन्नु कल्पिच्चते ।
सारथि तानरियेणं महारथन्मारुटे सादवुं वाजिकळ् सादवुं;
वैरिकळ्क्कुळ्ळ जयाजय कालवुं पोरिल् निम्नोन्नत देश विशेषवुं;
ऎल्लामरिञ्ञु रथं नटत्तुन्नवनल्लो निपुणनायुळ्ळ सूतन् प्रभो !
ऎन्नतु केट्टु तॆळिञ्ञथ रावणनॆन्नु पुणर्न्नु कैवळयुं कॊटु—
त्तित्तिनित्तेरट्टाशु कूट्टीटुक पिन्नोक्क मिल्लिनियॆन्नु कॊण्टुमेटो! १७०
इत्तॊट्टु ताळॆयॊटॆन्नु तिरिञ्ञीटुं मन्नवनोटुळ्ळ पोरॆन्तरिक नी ।
सूतनुं तेरति वेगेन कूट्टिनान् क्रोधं मुळुत्तङ्ङटुत्तितु रामनुं ।
तङ्ङळिलेट्मणञ्ञु पौरुतळवङ्ङुमिङ्ङुं तिरयुन्नु
शरङ्ङलाल् । १७३

अगस्त्य प्रवेशवुम् आदित्य स्तुतियुम्

अङ्ङनॆयुळ्ळ पोर् कण्टु निल्कुन्नेरमॆङ्ङनॆयॆन्तरिञ्ञील-
गस्त्यन् तदा राघवन् तेरिलिरुन्निङ्ङ निन्नीटिनानाकाश देशाल्
प्रभाकर सन्निभन् । वन्दिच्चु निन्नु रघुकल नाथनानन्द
मियन्नरुल् चॆय्तानगस्त्यनुं— अभ्युदयं निनक्काशु वरुत्तुवानि-
प्पोळिविटेक्कु वन्नितु ञानॆंटो ! तापत्रयवुं विषादवुं तीर्न्नुंपो-

---

पाया। आपके प्रति विशेष प्रेम के कारण ही मैंने मूर्छा हटने तक युद्ध-भूमि छोड़कर दूर रहने का संकल्प किया था। सच्चे सारथी का कर्तव्य है कि वह महारथी का आलस्य तथा अश्वों की थकावट पर सदा ध्यान रखे। हे स्वामी ! शत्रु की जय एवं पराजय का समय, युद्ध के समय निम्नोन्नत भूमि-विशेष सबका ध्यान रखते हुए रथ हाँकनेवाला ही निपुण सारथी है।" इतना सुनते ही रावण ने प्रसन्न मुद्रा से युक्त हो सारथी को एक बार गले से लगाया तथा एक कड़ा हाथ में पहना दिया और कहा कि अब फिर रथ सजा दो। अब किसी प्रकार की म्लानता के लिए अवकाश नहीं रह गया है। १७०

अगस्त्य का प्रवेश एवं आदित्य-स्तुति

इस प्रकार (राम-रावण) युद्ध देखते हुए, पता नहीं कैसे कहाँ से आये, प्रभाकर (सूर्य) सम तेजस्वी अगस्त्य मुनि आकाश देश से उतर कर रामजी के रथ में प्रकट हुए। रघुकुलनाथ वंदना करते खड़े रहे और प्रसन्न हो अगस्त्य ने कहा—"मैं तुम्हारे अभ्युदय के लिए अभी यहाँ आया हूँ। तुम्हारे तापत्रय मिटेंगे तथा विषाद दूर होगा, सब प्रकार की

मापत्तुमट्टूळ्ळवयुमकऱ्ऱुपों । शत्रुनाशं वरुं रोगविनाशनं वर्द्धिक्कुमायुस्सु सत्कीर्त्ति वर्द्धनं नित्यमादित्य हृदयमां मन्त्र मितुत्तममेत्रयुं भक्त्या जपिक्कॅटो ! देवासुरोरगचारण किन्नर तापस गुह्यकयक्षरक्षोभूत किं पुरुषाप्सरो मानुषाद्यन्मारुं सम्प्रति सूर्य्यनॆत्तन्ने भजिप्पतुं । देवकळाकुऱ्ऱतादित्यनाकिय देवनत्रे पतिऩ्नालु लोकङ्ङळुं । १० रक्षिप्पतुं निज रश्मिकळ् कॊण्टवन् भक्षिप्पतुमवन् कल्पकालान्तरे । ब्रह्मनुं विष्णुवुं श्रीमहादेवनुं षण्मुखन् तानुं प्रजापति वृन्दवुं शक्रनुं वैश्वानरनुं कृतान्तनुं रक्षोवरनुं वरुणनुं वायुवुं, यक्षाधिपनुमीशाननुं चन्द्रनुं नक्षत्र जालवुं दिक्करि वृन्दवुं, वारण वक्त्रनुमार्य्यनुं मारनुं तारागणङ्ङळुं नानाग्रहङ्ङळुं, अश्विनीपुत्ररुमष्ट वसुक्कळुं विश्वदेवन्मारुं सिद्धरुं साद्ध्यरुं, नाना पितृक्कळुं पिन्ने मनुक्कळुं दानवन्मारुमुरग समूहवुं, वारमासर्त्तुं संवत्सर कल्पादि कारक नायतुं सूर्य्यनिवन् तन्ने । वेदान्त वेद्यनां वेदात्मकनिवन् वेदार्त्थं

विपत्तियाँ भी दूर होंगी । शत्रु का नाश होगा, रोग-नाश होगा । आयु और यश की वृद्धि होगी । उसके लिए नित्य उत्तम आदित्य हृदय मन्त्र का भक्ति से जाप करो । देव-असुर, नाग, चारण, किन्नर, तापस, गुह्यक, यक्ष, राक्षस, किंपुरुष, अप्सरस्, मनुष्य सब इस समय कार्य-सिद्धि के लिए सूर्य का ही भजन करते हैं । चौदहों भुवनों में जो भी देवता हैं, वे सब इन्हीं आदित्य के रूपान्तर हैं । १० वे ही अपनी रश्मियों से सबका पालन करते हैं और कल्पान्त काल में वे ही अपनी रश्मियों से सबका संहार करते हैं । ब्रह्मा, विष्णु, श्री महादेव, षण्मुख, प्रजापति वृन्द (दक्ष जैसे सृष्टि कर्ताओं का समूह), शक्र (इन्द्र), वैश्वानर (वह्नि), कृतान्त (यमराज), रक्षोवर (निऋति), वरुण, वायु, यक्षाधिप (कुबेर), ईशानन (शिव), चन्द्र, नक्षत्रजाल, दिक्पाल, वारणवक्त्र (गणपति), आर्य (एक मनु का नाम), मार (कामदेव), तारागण, नानाग्रह, अश्विनीपुत्र, अष्टवसु (धरो ध्रुवश्च सोमश्च अगश्चैवानिलोनल: प्रत्युषश्च प्रभासश्च वसवोष्टावितिस्मृता:), विश्वदेव (उपदेवों में एक वर्ग जो संख्या में दस हैं : वसु: सत्य: क्रतुर्दक्ष: काल: कामोधृति: कुरु, पुरूरवा, माद्रवश्च, विश्व-देवा: प्रकीर्त्तित:), सिद्ध, साधक, नाना पितृगण, चौदह मनु (स्वायंभुव, स्वारोचित, औत्तमि, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सार्वणि, दक्षसार्वणि, ब्रह्मसार्वणि, धर्मसार्वणि, रुद्रसार्वणि, रौच्यदैवसार्वणि), दानव, उरग समूह (नागाजाति), वार, मास, ऋतुएँ, संवत्सर, कल्प इत्यादि कालभेदों के

विग्रहन् वेदज्ञसेवितन्, पूषा विभाकरन् मित्रन् प्रभाकरन् दोषाकरात्मकन् त्वष्टा दिनकरन् २० भास्करन् नित्यनहस्कर-नीश्वरन् साक्षि सविता समस्त लोकेक्षणन्, भास्वान् विवस्वान् नभस्वान् गभस्तिमान् शाश्वतन् शंभु शरण्यन् शरणदन्, लोक शिशिरारि घोरतिमिरारि, शोकापहारि, लोकालोक विग्रहन्, भानु हिरण्यगर्भन् हिरण्येन्द्रियन् दानप्रियन् सहस्रांशु सनातनन्, सप्ताश्वनर्ज्जुनाश्वन् सकलेश्वरन् सुप्तजनावबोधप्रदन् मंगलन्, आदित्यनर्क्कनरुणननन्तगन् ज्योतिर्म्मयन् तपनन् सविता रवि, विष्णु विकर्त्तनन् मार्त्ताण्डनंशुमानुष्ण किरणन् मिहिरन् विरोचनन्, प्रद्योतनन् परन् खद्योतनुद्योतनद्वयन् विद्याविनोदन् विभावसु, विश्व सृष्टि स्थिति संहार कारणन् विश्ववन्द्यन् महाविश्वरूपन् विभु, विश्वविभावनन् विश्वैकनायकन् विश्वासभक्तियुक्तानां

जनक सब ये ही सूर्य हैं। ये ही सूर्य वेदान्तवेद्य, वेदात्मक (वेदस्वरूप), वेदार्थ विग्रह (स्वयं वेद का रहस्य बनकर रहनेवाले), वेदज्ञसेवित, पूषा, विभाकर, मित्र, प्रभाकर दोषाकरात्मक (चन्द्रस्वरूप), त्वष्टा, दिनकर—। २० —भास्कर, साक्षी, सविता, समस्त लोकेक्षण, भास्वान, विवस्वान, नभ-स्वान, नभस्तिमान, शाश्वत, शंभुशरण्य, लोकशिशिरारि (संसार की ठंड को दूर करनेवाले), घोर तिमिरारि (घोर अंधकार को दूर करनेवाले), शोकापहारी (दुखों को हरण करनेवाले), लोकालोक विग्रह (दृश्य और अदृश्य लोक जिनका शरीर है), भानु, हिरण्येन्द्रिय (वस्तुओं के उत्पादन वीर्यों से युक्त), दानप्रिय, सहस्रांशु (हजार किरणोंवाले), सनातन, सप्ताश्व (सात अश्वों से युक्त), अर्जुनाश्व (सफेद घोड़ों से युक्त), सकलेश्वर, सुप्तजनावबोधप्रद (सुप्तजनों को जागृत करनेवाले), मंगल, आदित्य (अदिति के पुत्र), अर्क (गर्मी प्रदान करनेवाले), अरुण (लालिमा से युक्त), अनन्त (अंत को न प्राप्त होनेवाले), ज्योतिर्मय (तेजस्वरूप), तपन (तप्त करनेवाले), सविता (उत्पादक शक्तिवाले), रवि (संचरणशील), विष्णु (व्यापनशील), विकर्तन (स्थिति भेद को उत्पन्न करनेवाले), मार्तण्ड (मृत अंड से जन्म लेनेवाले), अंशुमान (घोड़ों वाले), उष्णकिरण, मिहिर (जलदान करनेवाले), विरोचन (विशेष रूप से शोभित), प्रद्योतन (सबसे अधिक प्रकाशित), खद्योतन (आकाश में प्रकाशित), उद्योतन (ऊँचाई पर शोभित होनेवाले), अद्वय, विद्याविनोदन (ज्ञान प्रकाश से युक्त), विभावसु (तेज-रूपी धन से युक्त), विश्व के सृष्टि, स्थिति संहार कारक, विश्ववन्द्य, महाविश्वरूप, विभु, विश्व विभावन

गतिप्रदन् ३० चण्डकिरणन् तरणि दिनमणि पुण्डरीक प्रबोध प्रदनर्यमा, द्वादशात्मा परमात्मा परापरनादितेयन् जगदादिभूतन् शिवन्, खेद विनाशनन् केवलात्मा बिन्दु नादात्मकन् नारदादि निषेवितन्, ज्ञान स्वरूपनज्ञानविनाशनन् ध्यानिच्चु कौळ्क नी नित्यमिद्देवनें; सन्ततं भक्त्या नमस्करिच्चीटुक । ३५

आदित्य हृदयम्

सन्तापनाशकराय नमोनमः ।

अन्धकारान्तकरायनमोनमश्चिन्तामणे ! चिदानन्दाय ते नमः । नीहारनाशकराय नमोनमः मोह विनाशकरायनमो नमः । शान्ताय रौद्राय सौम्याय घोराय कान्तिमतां कान्ति रूपाय ते नमः । स्थावर जंगमाचार्य्याय ते नमो देवाय विश्वैक साक्षिणे ते नमः । सत्य प्रधानाय तत्त्वाय ते नमः सत्य स्वरूपाय नित्यं नमोनमः ।

(सर्वसाक्षी), विश्वैकनायक (विश्व के एकमात्र स्वामी), विश्वास एवं भक्ति से युक्त मनुष्य को सद्गति प्रदान करनेवाले— । ३० —चण्डकिरण (उग्र रश्मियों से युक्त), तरणि (संचरणशील), दिनमणि, पुण्डरीक प्रबोधप्रद (कमल को विकसित करनेवाले), अर्यमा (संचरणशील), द्वादशात्मा (बारह शरीरों से युक्त), परमात्मा, परात्पर, आदितेय, जगदाभिभूत, शिव (कल्याण दाता), खेदविनाशन (दुखों का नाश करनेवाले), केवलात्मा, बिन्दुनादात्मक (ओंकार स्वरूप), नारदादिनिषेवित, ज्ञानस्वरूप, अज्ञान-विनाशन भगवान सूर्य देव का आप सदा ध्यान करें और निरंतर भक्ति पूर्वक उनको नमस्कार करें । ३५

आदित्य हृदय

सन्ताप का नाश करनेवाले को मेरा नमस्कार है । अन्धकार का अन्त करनेवाले को नमस्कार है । हे चिन्तामणि (अभीष्ट को पूरा करने वाले) ! हे चिदानन्द (चैतन्य स्वरूप और आनन्द स्वरूप) ! आपको नमस्कार है । नीहार का नाश करनेवाले के लिए नमस्कार है, नमस्कार है । मोह का नाश करनेवाले को नमस्कार है, नमस्कार है । शान्तिस्वरूप, रौद्रमूर्ति और सौम्य एवं उग्र स्वरूप, कान्तियुक्त वस्तुओं की कान्ति रूपी शरीर को धारण करनेवाले ! आपके लिए नमस्कार है । हे स्थावर-जंगम वस्तुओं के स्वामी ! आपको नमस्कार है । विश्व के एकमात्र साक्षी स्वरूप देवता के लिए नमस्कार है । हे सत्य स्वरूप ! हे तत्व स्वरूप ! हे सत्वप्रधान ! आपको नित्य नमस्कार है, नित्य नमस्कार है ।

इत्थमादित्य हृदयं जपिच्चु नी शत्रुक्षयं वरुत्तीटुक सत्वरं। चित्तं
तेंळिञ्ञगस्त्योक्ति केट्टेन्नयुं भक्ति वर्द्धिच्चु काकुल्स्थनुं कूप्पिनान्।
पिन्ने विमानवुमेरि महामुनि चेन्नु वीणाधरोपान्ते मरुविनान्। ९

रावणवधम्

राघवन् मातलियोटरुळिच्चेय्तिताकुलमेन्निये तेर् नटत्तीटु नी।
मातलि तेरति वेगेन कूट्टिनानेतुमे चञ्चल मिल्ल दशास्यनुं।
मूटि पोटि कोण्टु दिक्कुमुट निट कूटी शरङ्ङळुमेन्तोरु विस्मयं।
रात्रिञ्चरन्टे कोटिमरं खण्डिच्चु धात्रियिलिट्टु दशरथ पुत्रनुं।
यातुधानाधिपन् वाजिकळ् तम्मेयुं मातलि तन्नेयुमेरे येय्तीटिनान्।
शूलं मुसलं गदादिकळुं मेल्क्कु मेले पोळिच्चितु राक्षसराजनुं।
सायक जालं पोळिच्चवयुं मुरिच्चायोधनत्तिन्नटुत्तितु रामनुं।
एट्मणञ्ञुमकन्नुं वलं वच्चुमेटुमिटं वच्चुमोट्टु पिन् वाङ्ङियुं,
सारथिमारुटे सौत्य कौशलवुं तेरालिकळुटे युद्ध कौशल्यवुं,
पण्टु कीळिल् कण्टतिल्ल नामीवण्णमुण्टाकयु मिल्लिवण्णमिनि

(हे राम!) इस प्रकार नित्य आदित्य हृदय नामक इस मंत्र का जप करते हुए तुम तुरन्त शत्रु का नाशकर डालो। अगस्त्य मुनि का यह उपदेश सुनकर प्रसन्न चित्त हो दाशरथी ने भक्ति के साथ (उनके सामने) हाथ जोड़े और प्रणाम किया। फिर विमान पर चढ़कर महामुनि (अगस्त्य) वीणाधर (नारद) के निकट आ खड़े हुए। ९

रावण-वध

राम ने मातली से कहा—"अब निश्चिन्त रथ आगे बढ़ाओ।" (यह सुनकर) मातली ने रथ वायु के वेग में आगे बढ़ाया। फिर भी दशानन निश्चल था। चारों दिशाएँ धूल से आच्छादित हुईं और रणभूमि भी बाणों से भर गयी। दशरथ-पुत्र ने निशाचर की ध्वज-पताका खंडितकर नीचे डाल दी तो यातुधानाधिप (राक्षसराज रावण) ने (राम के रथ के) घोड़ों तथा (सारथी) मातली पर खूब बाण चलाये। वह बड़ी संख्या में शूल, मूसल, गदा आदि भी एक पर एक चलाता गया। उन सबको बाणों से खंडित कर राम युद्ध के लिए और आगे बढ़े। (दोनों ऐसे घोर युद्ध में लग गये कि) कभी दोनों परस्पर लड़ते हुए एक-दूसरे के निकट पहुँचते तो कभी बलात् पीछे हटते; कभी वार करते तो कभी वार बचाते। कुछ भी हो सारथियों का ऐसा सौत्य कौशल या रथियों का ऐसा युद्ध

मेलिल् । १०   अँन्नु देवादिकळ् पुकऴ्तीटिनार् नन्नु नन्नॆन्नु तॆळिञ्ञितु नारदन् । पौलस्त्य राघवन्मार् तॊऴिल् काण्कयाल् त्रैलोक्य वासिकळ् भीति पूण्टीटिनार् । वातमटङ्ङिमरुञ्ञितु सूर्य्यनुं मेदिनि तानुं विऱच्चितु पारमाय् । पाथोनिधियुमिळकि मऱिञ्ञितु पाताळ वासिकळुं नट्टङ्ङीटिनार् । अबुधियुं बुधियोटॆ तिर्त्तीटिलु मंबर मंबरत्तोटॆतिर्त्तीटिलुं राघव रावण युद्धत्तिनु समं राघव रावण युद्धमॊऴिञ्ञिल्ल । केवलमिङ्ङनॆ तिन्नु पुकऴ्तिनार् देवादिकळुमन्नेरत्तु राघवन् रात्रिञ्चरन्टॆ तलयॊन्न-ऱुत्तुटन् धात्रियिलिट्टानतु नेरमप्पोळॆ कूटॆ मुळच्चु काणायितवन् तल कूटॆ मुऱिच्चु कळञ्ञु रण्टामतुं । उण्टायितप्पोळतुं पिन्नॆ राघवन् खण्डिच्चु भूमियिलिट्टानरक्षणाल् । २० इत्थं मुऱिच्चु नूटॊन्नु तलकळॆ पृथ्वियिलिट्टु रघुकुल सत्तमन् । पिन्नॆयुं पत्तु तलयक्कॊरु वाट्टमिल्लॆन्नॆ विचित्रमे नन्नु नन्नॆवयुं । इङ्ङनॆ नूऱायिरं तल पोकिलुमॆङ्ङुं कुऱविल्लवन् तलपत्तिनुं । रात्रिञ्च-राधिपन् तन्टॆ तपोबलं चित्रं विचित्रं विचित्रमत्रे तुलों । कुंभकर्ण्णन् मकराक्षन् खरन् बालि वम्पनां माऱीचनॆन्निवरादियां

कौशल इसके पूर्व कभी न देखा गया, न आगे कभी देखने का अवसर ही मिल सकता है। १०   इस प्रकार देवों ने (दोनों की) खूब प्रशंसा की तो (युद्ध देख) प्रसन्न हो उठे नारद भी 'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा,' कहते गये। पौलस्त्य एवं राघव की युद्धविद्या देखकर त्रिभुवनवासी लोग भयभीत हुए। (धीरे-धीरे) हवा रुक गयी और सूर्यास्त भी हुआ। मेदिनी (पृथ्वी) भी अतिशय कंपित हो उठी। सागर तरंगित हो उठा, पातालवासी भी घबरा उठे। "चाहे सागर सागर से टक्करे, चाहे अंबर अंबर से (आकाश-आकाश से) भिड़े, तो भी राम-रावण युद्ध मात्र राम-रावण युद्ध की ही समता पा सकता है।" जब देव लोग इस प्रकार प्रशंसा करते खड़े थे तब राम ने रात्रिचर का एक मस्तक काटकर नीचे गिरा दिया। तभी देखा गया कि वहीं दूसरा मस्तक आ गया, तो राम ने दुबारा उसे काट डाला। तुरन्त फिर वही मस्तक बढ़ गया तो तत्काल ही उसे फिर काटा। २० रघुकुल के स्वामी ने इस प्रकार एक सौ एक सिर काटे। फिर भी दस मस्तक उसके पूर्ववत् थे। विचित्र है! विचित्र है! इस प्रकार सौ हजार (एक लाख) सिर कटने पर भी उसके दस सिर को कुछ घाटा नहीं होता। रात्रिचरेश्वर का तपोबल विचित्र है, विचित्र है, बिलकुल ही विचित्र है! "कुंभकर्ण, मकराक्ष, खर, बालि, वीर मारीच

दुष्टरेक्कौन्न बाणत्तिनिन्नेन्तति निष्ठुरनामिवनेक्कौल्लुवान् मटि उण्टायितिद्दशकण्ठनें क्कौल्लुवान् कण्टीलुपायवुमेतुमोन्नीश्वर ! चिन्तिच्चु राघवन् पिन्नेयुमद्दशकन्धरन्मेय्यिल् बाणङ्ङळ् तूकीटिनान्। रावणनुं पौळिच्चीटिनान् बाणङ्ङळ् देवदेवन् तिरुमेनिमेलावोळ। कौण्ट शरङ्ङळेक्कण्टु रघुवरनुण्टायितुळ्ळौरु निनवन्नेरं। ३० पुष्प समङ्ङळाय् वन्नु शरङ्ङळुं कैल्पु कुरञ्ञु दशास्यनुं निर्णयं। एळु दिवसं मुळुवनीवण्णमे रोषेण निन्नु पौरुतोरनन्तरं मातलि तानुं तौळुतु चौल्लीटिनानेतुं विषाद मुण्टाकायक मानसे। मुन्नमगस्त्य तपोधननादराल् तन्न बाणं कौण्टु कौल्लां जगल्प्रभो ! पैतामहास्त्रमतायतेन्निङ्ङनें मातलि चौन्नतु केट्टु रघुवरन् तन्नु परञ्ञतु नीयतेन्नोटिनिक्कौन्नीटुवन् दशकण्ठनें निर्णयं। अेन्नरुळिच्चेय्तु वैरिञ्चमस्त्रत्ते नन्नायेटुत्तु तौटुत्तितु राघवन्। सूर्य्यानलन्मारतिन्नु तरं तूवल् वायुवुं मन्दर मेरुक्कळ् मद्ध्यमाय् विश्वमेल्लां प्रकाशिच्चौरु सायकं विश्वास भक्त्या जपिच्चयच्चीटिनान्। रावणन् तन्टे हृदयं पिळर्न्नु भूदेवियुं भेदिच्चु वारिधियिल्प्पुक्कु ४० चोर कळुकि मुळुकि विरवोटु मारुत वेगेन

जैसे दुष्टों का वधकर डालनेवाले बाण को इस दुष्ट की हत्या करने में क्या कठिनाई है। इस दुष्ट दशकंठ का वध करने का कोई उपाय नहीं दीख रहा है। हे ईश्वर! क्या किया जाए" ऐसा सोचते हुए रामने उस दशस्कंध के शरीर पर बाण बरसाये। रावण ने भी देवदेवेश श्रीपुरुष के शरीर पर कई बाण चलाये। उन बाणों के लगते ही राम के मन में एक बात आ गयी—। ३० —कि (रावण के) बाण पुष्प सम मृदुल हो गये, जिस कारण निश्चय ही दशास्य की शक्ति मंद पड़ चुकी है। पूरे सात दिन निरंतर उसी रोष से लड़ने के उपरान्त मातली ने हाथ जोड़कर राम से कहा—"मन में कुछ निराशा न होने पाए। पहले अगस्त्य तपोधन ने जो बाण दिया था, उससे (रावण को) मारा जा सकता है। हे जगत् के स्वामी! वह तो पैतामहास्त्र (ब्रह्मास्त्र) है।" मातली का वचन सुनकर राम ने कहा—"तुमने आज मुझे ठीक बताया। अब दशकंठ को निश्चय ही (उस बाण से) मारा जाएगा।" यह कहकर राम ने धन्वा पर विरिंचास्त्र को रखा। सूर्य और अग्नि को उसके नोक, वायु को उसकी पूंछ तथा मन्दर और मेरु (पर्वतों) को मध्यभाग के रूप में आवाहित कर, फिर विश्वभर को दीप्तिमय करनेवाले उस बाण को भक्ति एवं विश्वास सहित (रावण को लक्ष्यकर) प्रयुक्त किया, जो रावण के हृदय

राघवन् तन्नुटे तूणियिल् वन्तिङ्ङु वीणु तेळिवोटु बाणवुमेन्तोरु विस्मयमन्नेरं। तेरिल् निन्नाशु मरिञ्ञु वीणीटिनान् पारिल् मरामरं वीणपोले तदा। कल्पक वृक्षप्पुतुमलर् तूकिनारुल्पन्न मोदेन वानवरेवरुं। अक्कं कुलोत्भवन् मूर्द्धनि मेल्कुमेल् शक्रनु नेत्रङ्ङळोक्कॆत्तेळिञ्ञितु; पुष्कर संभवनु तेळिञ्ञीटिनानर्क्कनु नेरेयुदिच्चानतु नेरं। मन्दमाय् वीयित्तुटङ्ङि पवननुं नन्नाय् विळङ्ङी चतुर्द्दश लोकवुं। तापसन्मारुं जय जय शब्देन तापमकन्नु पुकळ्न्नु तुटङ्ङिनार्। शेषिच्च राक्षसरोटियकं पुक्कु केळ्तुटङ्ङिनारोक्के लङ्कापुरे। अर्क्कजन् मारुति नीलांगदादियां मर्क्कट वीररुमार्त्तु पुकळ्त्तिनार्। ५०

रावण देह दहनम्

अग्रजन् वीणतु कण्टु विभीषणन् व्यग्रिच्चरिकत्तु चेन्निरुन्ना-कुलाल्; दुःखं कलर्न्नु विलापं तुटङ्ङिनानोक्के विधिबलमल्लो वरुन्नतुं। ञानितोक्कॆप्परञ्ञीटिनेन् मुन्नमे मानं नटिच्चेन्नयुं

को भेद भूदेवी को भी छेदकर वारिधि (सागर) में पहुँच—। ४० —रक्त को धो डालकर स्वयं परिशुद्ध हो वायुवेग से लौटकर स्वयं राम के तूणीर में आ गिरा। तब सबको क्या ही आश्चर्य हुआ! रावण कटे वृक्ष के समान मरकर रथ से नीचे पृथ्वी पर गिर पड़ा। देवों ने प्रसन्न हो कल्पवृक्ष के नूतन पुष्पों की राम पर वर्षा की। बार-बार शक्र के सहस्र नेत्र प्रकाशित हो उठे। पुष्करसंभव (ब्रह्मा) भी प्रसन्न हुए और अर्क भी सीधे ऊपर आ गया। पवन मंद-मंद आश्लेष करने लगा। चौदहों भुवन हर्षोल्लास से दीप्तिमय हुए। सारे तापों के दूर होने के कारण तापस लोग भी खूब जय जयकार करने लगे। बचे हुए राक्षस लंकापुरी के भीतर भाग गये। लंकापुरी के भीतर सब लोग (रावण की मृत्यु पर) विलाप कर उठे। अर्कज (सुग्रीव), मारुति, नील, अंगद आदि कपिश्रेष्ठ हर्षध्वनि करने लगे। ५०

रावण के शरीर को जलाना

अपने बड़े भाई को धरा पर पड़े हुए देख उसके पास आ बैठकर विभीषण दुख से रोने-विलाप करने लगे और कहने लगे—"नियति बड़ी है। वही सबको नचाती है। मैंने पहले ही यह सब कहा था, किन्तु मुझे मार भगाया था। हे वीर! सुन्दर पलंग पर लेटने योग्य आपको

वेटिञ्ञीटिन वीरा ! महाशयनोचितनाय त्री पारिली वण्णं किटक्कुमाऱायतुं; कण्टितेल्लां ञाननुभविक्केणमेन्नुण्टु दैवत्ति- नितावर्क्कोळिक्कावतुं । एवं करयुं विभीषणन् तन्नोटु देव देवेश- नरुळ् चेय्तितादराल्— अन्नोटभिमुखनाय् निन्नु पोर् चेय्तु तन्नाय् मरिच्च महाशूरनामिवन् तन्नेक्कुऱिच्चु करयरुतेतुमे तत्तल्लतु परलोकत्तिनु सखे ! वीररायुळ्ळ राजाक्कळ् धर्म्मं तल्ल पोरिल् मरिक्कुन्नतेन्नऱियेणमे । पोरिल् मरिच्चु वीर- स्वर्ग्गं सिद्धिक्कु पारं सुकृतिकळ्क्केन्नियोगं वरा । १० दोषङ्ङ- ळेल्लामोटुङ्ङीतिवन्निनि शेषक्रियय्क्कु तुटङ्ङुक वैकाते । इत्थमरुळ् चेय्तु निन्नरुळुन्नेरं तत्र मण्डोदरि केणु वीणीटिनाळ् । लङ्काधिपन् माऱिल् वीणु करञ्ञुमातङ्कमुळ्क्कोण्टु मोहिच्चुं पुनरुटन् ओरोतरं पऱञ्ञुं पिन्ने मट्टुळ्ळ नारी जनङ्ङळुं केणु तुटङ्ङिनार् । पंक्तिरथात्मजनप्पोळरुळ् चेय्तु पंक्तिमुखानुजन् तन्नोटु सादरं— रावणन् तन्नुटल् संस्करिच्चीटुक पावकनेज्ज्वलिप्पिच्चिनिस्सत्वरं । तत्र विभीषणन् चोन्नानिवनोळमित्र पापं चेय्तवरिल्ल भूतले । योग्यमल्लेतुमटियनिवनुटल् संस्करिच्चीटुवानेन्नु केट्टेट्टवुं वन्न

भूमि पर ऐसा लेटना पड़ा। भाग्य की इच्छा है कि मैं यह सब देख बैठूं। भाग्य-कल्पित को कौन मिटा सकता है !" तुरन्त ही इस प्रकार विलाप सहित प्रलाप करते विभीषण से देवदेवेश (राम) ने कहा—"युद्ध में मेरा सामना करते हुए मृत्यु को प्राप्त इस महाशूर के संबंध में सोचकर कोई दुखी न हो। हे मित्र ! यह (रोना-धोना) उसके परलोकवास के लिए अयोग्य है। आप यह समझ लें कि युद्ध करते मृत्यु पाना वीर राजाओं का धर्म है। युद्ध में देहत्याग कर वीरस्वर्ग पाने का सौभाग्य केवल पुण्यात्मा लोगों को ही प्राप्त होता है, अन्य को नहीं। १० (मेरे हाथों मृत्यु पाने से) इसके सारे पाप दूर हुए। अब अविलंब अन्त्येष्टि क्रियाओं का प्रबंध कर लें।" इस प्रकार कहते विराजमान राम के सम्मुख गिर पड़कर मंदोदरी विलाप करने लगी। लंकापति की छाती पर पड़ खूब रो-रोकर वह मूर्च्छित हो गयी। फिर जागने पर प्रलाप करती गयी। उसे देख दूसरी नारियाँ भी रोने लगीं। पंक्तिरथात्मज (दशरथ-पुत्र) ने तुरन्त पंक्तिमुखानुज (दशमुख के भाई विभीषण) से कहा—"अग्नि प्रज्वलित कर रावण का शरीर-संस्कार कर लीजिए।" तब विभीषण कहने लगे—"इस भूतल पर इसके समान दूसरा कोई पापी नहीं रहा। अतः अपने हाथों इसका संस्कार कर लेना इस दास के

बहुमानमोटे रघूत्तमन् पिन्नेयुं चोन्नान् विभीषणन् तन्नोटु— मद् बाणमेट्टु रणान्ते मरिच्चोरु कर्बुराधीश्वरनट्टितु पापङ्ङळ् ।२० वैरवुमामरणान्तमेन्नाकुन्नितेट्टिय सद्गतियुण्टावतिन्नु नी शेष क्रियकळ् वळ्ळिये कळ्ळिक्कोरु दोषं निनक्कतिनेतुमकप्पेटा । चन्दन गन्धादि कोण्टु चितयुमानन्देन कूट्टि मुनिवरन्मारुमाय् वस्त्राभरण माल्यङ्ङळ् कोण्टुं तदा नक्तञ्चराधिप देहमलङ्करि— च्चार्त्तु वाद्यङ्ङळुं घोषिच्चु कोण्टग्नि होत्रिकळेस्संस्करिक्कुन्न वण्णमे रावणदेहं दहिप्पिच्चु तन्नुटे पूर्वजनायुदक क्रिययुं चेय्तु । नारिकळ् दुःखं परञ्ञु पोक्किच्चेन्नु श्रीराम पादं नमस्करिच्ची- टिनान् । मातलियुं रघुनाथने वन्दिच्चु जात मोदं पोय् सुरालयं मेविनान् । चेन्नु निज निज मन्दिरं पुक्कितु जन्यावलोकन चेय्तु निन्नोर्कळुं । लक्ष्मणनोटरुळ् चेय्तितु रामनुं रक्षोवरनां विभीषणनाय् मया ३० दत्तमायोरु लङ्का राज्य मुळ्प्पुक्कु चित्त मोदालभिषेकं कळ्ळिक्क नी । एन्नतु केट्टु कपिवरन्मारोटुं चेन्नु शेषिच्च निशाचरन्मारुमाय् अर्णव तोयादि तीर्थ जलङ्ङळाल् स्वर्णकलशङ्ङळ् पूजिच्चु घोषिच्चु वाद्य घोषत्तोटु

अनुकूल नहीं होगा ।" यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में राम ने विभीषण से कहा—"युद्धक्षेत्र में मेरे बाण से मरे राक्षसराज के सारे पाप मिट गये । २० शत्रुता भी मरणपर्यन्त ही रहती है । इसलिए इसकी सद्गति के लिए आप विधिवत् इसका संस्कार कर्म कीजिए । ऐसा करने से आप को किसी प्रकार का दोष नहीं लगेगा । चंदन आदि सुगंधद्रव्यों से सानंद चिता जलाकर; वस्त्र, आभरण, माल्य आदि से उसके शरीर को सज्जित कर तथा वाद्यघोषों सहित अग्निहोत्रियों का सा संस्कार आप मुनिवरों को साथ लेकर रावण के शरीर का भी कर दें । तथा आप अपने अग्रज के लिए उदक क्रियाएँ अर्पित करें । दुखी हो विलाप करती नारियों को आश्वस्त करके (विभीषण ने) अग्रज के चरणों पर प्रणाम किया । मातली रामके चरणों पर नमस्कार करके सहर्ष सुरालय (देव- लोक) में चला गया । युद्ध देखने के लिए आये सारे लोग अपने-अपने भवनों में चले गये । राम ने लक्ष्मण से कहा—"राक्षसश्रेष्ठ विभीषण के लिए मुझसे— । ३० —प्रदत्त लंकाराज्य में पहुँचकर तुम सानंद उनका राजतिलक कर दो ।" यह सुनकर कपिवरों तथा बचे राक्षसों को साथ लेकर सागरजल आदि तीर्थ जलों से परिपूर्ण स्वर्णकलशों की पूजा तथा वाद्यघोष सहित, लक्ष्मण ने तापसों से विभीषण का अभिषेक

तापसन्मारुमायार्त्तु विळिच्चभिषेकवुं चेय्तितु। भूमियुं चन्द्र दिवाकरादियुं रामकथयुमुळ्ळन्नु विभीषणन् लङ्केशनाय् वाळ्केन्नु किरीटाद्यलङ्कारवुं चेय्तु दान पुरस्कृतं; पूज्यनायोरु विभीषणनाय्क्कोण्टु राज्य निवासिकळ् काळ्च्चयुं वच्चितु। वाच्च कुतूहलं पूण्टु विभीषणन् काळ्चयुमेल्लामेटुप्पिच्चु कोण्टव—न्नास्थया राघवन् तृक्काल्क्कल् वच्चभिवाद्यवुं चेय्तु विभीषण-नादराल्। नक्तञ्चरेन्द्र प्रसादत्तिनाय् रामभद्रनतेल्लां परि-ग्रहिच्चीटिनान्। ४० इप्पोळ् कृत कृत्यनायेनहमेन्नु चित् पुरुषन् प्रसादिच्चरुळीटिनान्। अग्रे विनीतनाय् वन्दिच्चु निल्क्कुन्न सुग्रीवनेप्पुनरालिंगनं चेय्तु सन्तुष्टनायरुळ् चेय्तितु राघवन् चिन्तिच्चतेल्लां लभिच्चु न्नमुक्कोटो! त्वत्सहायत्वेन रावणन् तन्ने ञानुत्साहमोटु वधिच्चितु निश्चयं। लङ्केश्वरनाय् विभीषणन् तन्नेयुं शङ्का विहीनमभिषेकवुं चेय्तु। ४५

सीता स्वीकरणम्

पिन्ने हनुमानै न्नोक्कियरुळ् चेय्तु मन्नवन् न्नी पोय् विभीषणा-नुज्ञया चेन्नु लङ्कापुरं पुक्करियिक्कणं तन्वंगियाकिय जानकि-

---

करा दिया। जब तक भूमि, चन्द्र-सूर्य, और रामकथा अवशेष है तब तक विभीषण लंकाधीश बने रहे, यह कहते हुए लक्ष्मण ने उनके मस्तक पर किरीट आदि अलंकार पहनाये और दान-पुरस्कार भी दिये। राज्य-वासियों ने सम्माननीय विभीषण को कई उपहार दिये। विभीषण प्रसन्न हो उठे और उन्होंने सारे उपहार ले आकर बड़ी आस्था के साथ श्रीरामजी के श्रीचरणों पर रख दिये। राक्षस प्रवर (विभीषण) की प्रसन्नता के लिए श्रीराम जी ने वे सब (उपहार) ग्रहण किये। ४० चित् स्वरूप भगवान ने सानंद कहा—"मैं अब कृतकृत्य हुआ हूँ।" फिर सामने विनीत भाव से हाथ जोड़ खड़े सुग्रीव का आश्लेष करते हुए सन्तुष्ट हो भगवान ने कहा—"मैंने जो चाहा वह सब प्राप्त हुआ। तुम्हारी सहायता से मैंने सोल्लास रावण का वध किया। तथा बिना किसी प्रयास के विभीषण का लंकेश्वर के रूप में अभिषेक किया।" ४५

सीता को स्वीकार करना

फिर श्रीरामजी ने हनुमान को देखकर कहा कि "तुम जाकर विभीषण की अनुज्ञा लेकर तन्वंगी सीता को सारा हाल सुना दो। राक्षस-

योटिदं। नक्तञ्चराधिप निग्रहमादियां वृत्तान्तमॆल्लां पऱञ्ञु केळ्प्पिक्कणं। अॆन्तालवळुटॆ भाववुं वाक्कुमिङ्ङॆन्नोटु वन्नु पऱक नी सत्वरं। अॆन्नतु केट्टु पवनतनयनुं चॆन्नु लङ्कापुरं प्रापिच्चनन्तरं वन्नु निशाचरर् सत्करिच्चीटिनार् नन्दित नायॊरु मारुतपुत्रनुं राम पादाब्जवुं ध्यानिच्चिरिक्कुन्न भूमिसुतयॆ नमस्करिच्चीटिनान्। वक्त्र प्रसादमालोक्य कपिवरन् वृत्तान्त मॆल्लां पऱञ्ञु तुटङ्ङिनान्। लक्ष्मणनोटुं विभीषणन् तन्नोटुं सुग्रीवनादियां मर्क्कटन्मारोटुं रक्षोवरनां दशग्रीवनॆक्कॊन्नु दुःखमकन्नु तॆळिञ्ञु मेवीटिनान्। १० इत्थं भवतियोटॊक्कॆप्पऱकॆन्नु चित्तं तॆळिञ्ञरुळ् चॆय्तितरिञ्ञालुं। सन्तोष मॆत्रयुण्टायितु सीतय्क्कॆन्नॆन्तु चॊल्लावतु जानकी देवियुं गद्गद वर्ण्णॆन चॊल्लिनाळॆन्तु ञान् मर्क्कट श्रेष्ठ चॊल्लेण्टतु चॊल्लुनी। भर्त्ताविनॆक्कण्टु कॊळ्वानुपाय मॆन्तॆन्न पार्क्कॆणमिनियुं शुचॆव ञान्। नेरत्ततिन्नु योगं वरुत्तीटु नी धीरत्वमिल्लिनियुं पॊरुत्तीटुवान्। वातात्मजनुं रघुवरन् तन्नोटु मैथिलि भाषितं चॆन्नु चॊल्लीटिनान्। चिन्तिच्चु रामन् विभीषणन् तन्नोटु सन्तुष्टनायरुळ् चॆय्तान् विरयॆन्नी जानकी देवियॆच्चॆन्नु वरुत्तुक दीनतयुण्टुपोलॆक्काणाय्क कॊण्टुमां।

राज का वध आदि सारे समाचार सविस्तार कह दो। फिर उनके (सीता के) भाव एवं वचन यहाँ आकर मुझे भी सुना दो।" यह सुनकर पवनतनय (हनुमान) लंकापुर में पहुँचे। सारे राक्षसों ने आकर उनका खूब स्वागत-सत्कार किया। (उससे) प्रसन्न हुए हनुमान ने राम के चरण-कमलों के ध्यान में बैठी भूमि-सुता (सीता) के पास आकर प्रणाम किया। प्रसन्नमुखी सीता को देखकर कपिश्रेष्ठ पूरे समाचार सुनाने लगे। "हे देवी! राक्षसराज रावण का वध करके श्रीरामजी लक्ष्मण, विभीषण, सुग्रीव आदि वानर सबके साथ सुखपूर्वक बैठे हैं। १० ऐसा आपको सुनाने की मुझे आज्ञा दी गयी है। यह आप समझ लें।" यह सुनकर सीता कितनी प्रसन्न हुई, यह मैं क्या बताऊँ! सीता देवी ने गद्गद वाणी में पूछा—"हे मर्कट श्रेष्ठ! तुम्हीं बता दो कि मैं (राम को सुनाने के लिए) तुमसे क्या कहूँ। अब मैं अपने पति को तुरन्त देख सकूँ, इसके लिए तुम उपाय करो। तुम मुझे उनसे मिलने का सुयोग ला दो। अब प्रतीक्षा करते रहने की मुझमें सामर्थ्य नहीं है।" वातात्मज (हनुमान) ने राम के पास पहुँचकर सीता के वचन सुनाये। तब राम ने विचार करके सहर्ष विभीषण से कहा—"आप जल्दी ही सीता जी को यहाँ लिवा

स्नानं कऴिप्पिच्चु दिव्यांबराभरणानुलेपाद्यलङ्कारमणियिच्चु
शिल्पमायोरु शिबिक मेलारोप्य मत्पुरो भागे वरुत्तुक सत्वरं। २०
मारुति तन्नोटु कूटे विभीषणनारामदेशं प्रवेशिच्चु सादरं।
वृद्धमाराय नारीजनत्तेक्कोण्टु मुग्द्धांगियेक्कुळिप्पिच्चु चमयिच्चु।
तण्टिलेटुप्पिच्चु कोण्टु चेल्लुन्नेर मुण्टाय्च्चमञ्ञतोरु घोषनिस्वनं।
वानर वीररुं तिक्किक्तिरक्कियज्जानकी देवियेक्कण्टु कोण्टीटुवान्।
कूट्टमिट्टङ्ङणयुन्नतु कण्टोरु याष्टिकन्मारणञ्ञाट्टियकट्टिनार्।
कोलाहलं केट्टु राघवन् कारुण्यशालि विभीषणन् तन्नोटरुळ् चेय्तु—
वानरन्मारेयुपद्रविप्पानुण्टो ञानुर चेय्तितु निन्नोटितेन्तेटो!
जानकी देवियेक्कण्टालतिन्नोरु हानियेन्तुळ्ळततु परञ्ञीटु नी।
माताविनेच्चेन्नु काणुन्नतु पोले मैथिलियेच्चेन्नु कण्टालुमेवरुं।
पाद चारेण वरेणमेन्नन्तिके मेदिनी नन्दिनि किं तत्र दूषणं ? ३०
कार्य्यार्त्थमाय् पुरा निर्म्मितमायोरु माया जनकजा रूपं मनोहरं
कण्टु कोपं पूण्टु वाच्चवादङ्ङळेप्पुण्डरीकाक्षन् बहुविधं चोल्लिनान्।
लक्ष्मणनोटु माया सीतयुं शुचा तल्क्षणे चोल्लिनाळेतुमे वैकाते

लाइये। सुना है, मुझे न देख पाने से वह अत्यन्त दुखी है। स्नान कराकर तथा श्रेष्ठ वस्त्र-आभरण पहनाकर और सुन्दर शिविका में बिठाकर आप उसे तुरन्त मेरे सामने ले आयें।" २० (राम की आज्ञा से) मारुति के साथ विभीषण आराम देश (उपवन) में पहुँचे और वृद्धा नारियों से मुग्धांगी (सीता) को नहलवाया तथा सुसज्जित एवं अलंकृत कराया। फिर शिविका में उन्हें उठा ले आते समय वहाँ खूब बाजे बजाये गये। जानकी देवी का दर्शन कर लेने के लिए वानरों की भीड़ जम गयी। वानरों की भीड़ देखकर याष्टिकों ने उन्हें दुत्कारकर भगा दिया। वहाँ की भीड़-दौड़ एवं कोलाहल देखकर कारुण्यमूर्ति राम ने विभीषण से कहा— "क्या मैंने वानरों को दूर भगाने की आपको कभी आज्ञा दी थी ? आप जरा यह बताइये, वानर अगर देवी जानकी को देखलें तो उससे क्या हानि हो सकती है ? माता तुल्य जानकी का सब (वानर) अवश्य दर्शन कर लें। उसमें क्या बुरा है ? सबको दर्शन देने के लिए भूमि-सुता (सीता) शिविका से नीचे उतर कर पैदल ही मेरे पास आ जाएँ।" ३० कार्यसिद्धि के लिए पूर्व में निर्मित (माया निर्मित) जनकजा का सुन्दर एवं मनोहर रूप था। उनको समीप आते देख चरित्र पर संदेह प्रकट करने वाले कुछ परुष वचन पुण्डरीकाक्ष (कमलनेत्र राम) ने कह डाले। तुरन्त ही माया सीता ने लक्ष्मण से आग्रह किया—"हे कुमार! मेरे स्वामी

विश्वासमाशु मद् भर्त्ताविनुं मट्टु विश्वत्तिल् वाळुन्नवर्क्कुं वरुत्तुवान् कुण्डत्तिलग्नियें तन्नाय् ज्वलिप्पिक्क दण्डमिल्लेतुमेनिक्कतिल चाटुवान् । सौमित्रियुमतु केट्टु रघूत्तम सौमुख्य भावमालोक्य ससंभ्रमं सामर्थ्यमेरुन्न वानरन्मारुमाय् होमकुण्डं तीर्त्तु तीयुं ज्वलिप्पिच्चु राम पार्श्वं प्रवेशिच्चु तिन्नीटिनान् भूमि सुतयुमन्नेरं प्रसन्नयाय् भर्त्तारमालोक्य भक्त्या प्रदक्षिणं कृत्वा मुहुस्त्रयं बद्धाञ्जलियोटुं देवद्विजेन्द्र तपोधनन्मारेयुं पावकन् तन्नेयुं वन्दिच्चु चौल्लिनाळ्— ४० भर्त्ताविनेयोळिञ्ञन्यनें ञान् ममचित्ते निरूपिच्चितेंङ्किलतिन्नु नी साक्षियल्लो सकलत्तिनुमाकयाल् साक्षाल् परमार्त्थमिन्नरियिक्क नी । ऐन्नु परञ्ञुटन् मून्नु वलं वच्चु वह्नियिल्च्चाटिनाळ् किञ्चिल् भयं विना । दुश्च्यवनादिकळ् विस्मयप्पेट्टितु निश्चलमायितु लोकवुमन्नेरं । इन्द्रनुं कालनुं पाशियुं वायुवुं वृन्दारकाधिपन्मारुं कुबेरनुं, मन्दाकिनीधरन् तानुं विरिञ्चनुं सुन्दरिमाराकुमप्सरः स्त्रीकळुं, गन्धर्व किन्नर किंपुरुषन्मारुं दन्तशूकन्मार् पितृक्कळ् मुनिकळुं, चारण गुह्यक सिद्ध साद्ध्यन्मारुं नारद तुंबुरुमुख्य जनङ्ङळुं, मट्टुं

तथा विश्ववासियों की संदेह-निवृत्ति के लिए तुरन्त ही तुम कुण्ड में अग्नि प्रज्वलित कर दो। उसमें कूदकर (अपनी सच्चरित्रता का) परिचय देने के लिए मुझे किसी प्रकार का दुख नहीं होगा।" यह सुनकर श्रीराम जी का मुख-भाव जान लेने के विचार से लक्ष्मण ने उनकी ओर देखा और (उन्हें उस कार्य के अनुकूल पाकर) लक्ष्मण ने कुछ समर्थ वानरों के साथ होम कुण्ड बनाकर उसमें अग्नि प्रज्वलित की। फिर लक्ष्मण राम के समीप आ खड़े हुए। तब भूमिसुता (सीता) ने प्रसन्न हो स्वामी की ओर देखा, भक्तिपूर्वक तीनबार परिक्रमा की तथा हाथ जोड़कर देवों, ब्राह्मणों तथा वह्नि की वन्दना की और (उन्होंने वह्नि से) कहा— । ४० —"हे सर्वसाक्षी अग्निदेव ! अपने स्वामी के अतिरिक्त किसी पर-पुरुष का मैंने कभी मन में स्मरण तक किया हो तो आज आप वास्तविकता का परिचय देने की कृपा करें।" यह प्रार्थना करके सीता देवी तीन बार परिक्रमा करके बिना कुछ भय के, अग्नि में कूद पड़ीं। दुश्च्यवन (इन्द्र) आदि विस्मित हुए, सारा संसार निस्तब्ध हो उठा। इन्द्र, यमराज, वरुण, वायुदेव, देव प्रवर लोग, कुबेर, मन्दाकिनीधर (शिव), विरिंचि (ब्रह्मा), सुन्दरी अप्सराएँ, गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष लोग, दन्तशूक (नाग लोग), मुनिगण, चारण, गुह्यक, सिद्ध-साधक लोग, नारद आदि

विमानाग्र चारिकळीक्कवे चुट्टुं तिरञ्ञितु रामन् तिरुवटि
तिन्नरुळुं प्रदेशत्तिङ्कलन्नेरं वन्दिच्चितेल्लावरेयुं नरेन्द्रनुं । ५०
रामचन्द्रं परमात्मानमन्नेरं प्रेममुळ्क्कोण्टु पुकळ्न्नु तटङ्ङिङ्ङनार्—
सर्वलोकत्तिनुं कर्त्ता भवानल्लो सर्वत्तिनुं साक्षियाकुन्नतुं भवान् ।
अज्ञान विग्रहकनाकुन्नतुं भवानज्ञान नाशननाकुन्नतुं भवान् ।
सृष्टिकर्त्तावां विरिञ्चनाकुन्नतुमष्ट वसुक्कळिलष्टमनायतुं
लोकत्तिनादियुं मद्ध्यवुमन्तवु मेकनां नित्य स्वरूपन् भवानल्लो ।
कर्ण्णङ्ङळायतुमश्विनी देवकळ् कण्णुकळायतुमादित्य चन्द्रन्मार् ।
शुद्धनाय् नित्यनायद्वयनायोरु मुक्तनाकुन्नतुं नित्यं भवानल्लो ।
निन्नुटे मायया मूटिक्कटप्पवर् निन्ने मनुष्यनेन्नुळ्ळिलोर्त्तीटुवोर् ।
निन्नुटे नाम स्मरणयुळ्ळोरुळ्ळिल् नन्नाय् प्रकाशिक्कुमात्म प्रबोधवुं
दुष्टनां रावणन् ञङ्ङ्ळुटे पदमोट्टोळियातेयटक्किनान् निर्द्दयं ।६०
नष्टनायानवनिन्नु निन्नालिनि पुष्ट सौख्यं वसिक्कां त्वल्क्करुणया ।
देवकळित्थं पुकळ्त्तुं दशान्तरे देवन् विरिञ्चनुं वन्दिच्चु वाळ्त्ति-
नान्— वन्दे पदं परमानन्दमद्वयं वन्दे परमशेष स्थिति कारणं ।
अद्ध्यात्म ज्ञानिकळाल् परिसेवितं चित्त सत्तामात्रमव्ययमीश्वरं ।

वीणा-वाद्य निपुण लोग तथा अन्य आकाशचारी लोग राम के समीप आ गये। नरेन्द्र (श्रीरामजी) ने सबको प्रणाम किया। ५० (देव आदि लोगों ने) प्रेमपूर्वक परमात्म-स्वरूप राम की प्रशंसा की—"आप ही समस्त लोकों के कर्ता हैं; आप ही सबके साक्षी हैं। आप ही तो अज्ञान मूर्ति (माया मनुष्य) बनते हैं और आप ही अज्ञान विनाशक भी हैं। आप ही तो सृष्टिकर्ता ब्रह्मा हैं और अष्टवसुओं में अष्टमवसु आप ही हैं। लोक के आदि, मध्य और अन्त आप ही हैं। आप एकमेवद्वैत-स्वरूप, नित्यस्वरूप हैं। अश्विनी देवता आपके कान हैं, आदित्य-चन्द्र आपके नेत्र हैं। आप शुद्ध, नित्य, अद्वय, मुक्त एवं स्वच्छन्द हैं। आपकी माया के वशीभूत लोग ही आपको मनुष्य समझने की भूल करते हैं। किन्तु जो आपका नाम-स्मरण करते हैं, उनके मन में आत्मबोध प्रकाशित हो उठता है। दुष्ट रावण ने निर्दय हो हमें अपने पदों से वंचित रखा था। ६० आपके हाथों आज वह मर गया; अब आप की कृपा से हम सानन्द रह पाएँगे।" जब देव लोग इस तरह राम की प्रशंसा में लगे थे, तभी ब्रह्मा भी आकर स्तुतिगान करने लगे—"परमानंद-स्वरूप एवं अद्वय ब्रह्म की मैं वंदना करता हूँ। आप परमात्मा, शेष वस्तुओं की स्थिति के लिए कारणभूत हैं। आप अध्यात्म-ज्ञानियों से परिसेवित जाग्रत्-स्वरूप,

सर्वं हृदिस्थितं सर्वजगन्मयं सर्वलोकप्रियं सर्वज्ञमत्भुतं। रत्नकिरीटं रविप्रभं कारुण्य रत्नाकरं रघुनाथं रमावरं। राज राजेन्द्रं रजनीचरान्तकं राजीवलोचनं रावणनाशनं मायापरमजं मायामयं मनुनायकं मायाविहीनं मधुद्विषं। मानवं मानहीनं मनुजोत्तमं माधुर्य्यसारं मनोहरं माधवं योगिचिन्त्यं सदा योगिगम्यं महायोग विधानं परिपूर्णमच्युतं ७० रामं रमणीय रूपं जगदभिरामं सदैव सीताभिरामं भजे। इत्थं विधातृ स्तुति केट्टु राघवन् चित्तमानंदिच्चरुळुंनेरं आश्रयाशन् जगदाश्रय भूतयामाश्रित वत्सलयाय वैदेहियॆ काळ्च्चयाय्क्कोण्टु वन्नाशु वणङ्ङिनानाश्चर्यमुळ्क्कोण्टु तन्निनतेल्लावरुं। लङ्केश निग्रहात्थं विपिनत्तिल् तिन्तॆङ्कलारोपितयाकिय देवियॆ शङ्का विहीनं परिग्रहिच्चीटुक सङ्कटं तीर्न्नु जगत् त्रयत्तिङ्कलुं। पावकनॆ प्रतिपूजिच्चु राघवन् देवियॆ मोदाल् परिग्रहिच्चीटिनान्। पङ्केरुहाक्षनुं जानकी देवियॆ स्वाङ्के समावेश्य शोभिच्चिरुेटवुं। ७८

अव्यय ईश्वर हैं। आप सबके हृदय में निवास करनेवाले, सर्वजगत् में परिव्याप्त, सर्वलोकप्रिय, सर्वज्ञ हैं। आपका रत्नकिरीट रविप्रभा से युक्त है; आप करुणासागर, रघुवंश के स्वामी एवं लक्ष्मीदेवी के नाथ हैं। आप राजराजेन्द्र हैं, रजनीचरान्तक (निशाचरों के लिए यमराज सम) हैं, राजीवलोचन (नीलकमल तुल्य नेत्रवाले), रावणनाशक हैं। आप माया से परे अजन्मा और मायामय दोनों हैं। आप मनुवंश के लिए नायक, माया रहित और मधु-वैरी हैं। आप निस्सीम मनुष्य, पुरुषोत्तम, माधुर्यसार, मनोहर, माधव, योगियों द्वारा सदा दर्शित, योगियों के लिए सदा गम्य, निर्विशेष आत्मतत्व में रमण करनेवाले हैं, परिपूर्णस्वरूप एवं अच्युत हैं। ७० आप राम हैं, रमणीय स्वरूपवाले हैं, जगदाभिराम हैं। मैं सदा सीताभिराम का भजन करता हूँ।" इस प्रकार ब्रह्मा की स्तुति सुनकर राम प्रसन्न बैठे थे। तभी अग्निदेव ने जगत् के लिए आश्रय स्वरूपिणी, तथा आश्रितवत्सला वैदेही को भगवान के सामने ला रखा। भगवान के चरणों पर समर्पित कर उन्होंने प्रणाम किया। सारे दर्शक आश्चर्य से खड़े रह गये। अग्निदेव ने राम से प्रार्थना की—"लंकेश के निग्रहार्थ वन में रहते समय मेरे पास न्यस्त देवी को आप निस्संदेह ग्रहण कीजिए। त्रिभुवन के दुख दूर हुए।" अग्निदेव को प्रणाम करके भगवान ने देवी को ग्रहण किया और पंकेरुहाक्ष (कमललोचन राम) जानकीदेवी को अपने उत्संग (गोद) में समाविष्ट कर वहाँ अत्यन्त प्रशोभित हुए। ७८

देवेन्द्रस्तुति

संक्रन्दनन् तदा रामनें निर्ज्जर संघेन सार्द्धं वणङ्ङि- स्तुतिच्चितु— रामचन्द्र प्रभो ! पाहिमां पाहिमां रामभद्र प्रभो ! पाहिमां पाहिमां। अङ्ङळे रक्षिप्पतिन्नु मट़ारुळ्ळ- तिङ्ङने कारुण्य पीयूष वारिधे ! निन्तिरुनामामृतं जपिच्ची- टुवान् सन्ततं तोन्नेणमेंन् पोट़ी ! मानसे। निन् चरितामृतं चोल्वानुमेंप्पोळुमेंन् चेंविकोंण्टु केळ्प्पानुमनुदिनं योगं वरुवाननुग्रहिच्चीटणं योगमूर्त्ते ! जनकात्मजावल्लभ ! श्रीमहादेवनुं निन् तिरुनामङ्ङळ् रामरामेति जपिक्कुन्नितन्वहं। त्वल् पादतीर्त्थं शिरसि वहिक्कुन्नितेंप्पोळु मात्म शुद्धिक्कुमा वल्लभन्। एवं पलतरं चोल्लि स्तुतिच्चोरु देवेन्द्रनोटरुळ् चेंय्तितु राघवन्— मृत्यु भविच्च कपिकुल वीररें यत्तल् कळञ्ञु जीविप्पिक्कयुं वेणं। १० पक्व फलङ्ङळ् कपिकळ् भक्षिक्कुम्पोळोक्कें मधुर माक्किच्चमच्चीटुक; वानरन्माक्कुं कुटिप्पान् नदिकळुं तेनायोंळ केणमेंन्नु केट्टिन्द्रनुं अेंल्लामरुळ् चेंय्तवण्णं वरिकेंन्नु कल्याण मुळ्क्कोंण्टनुग्रहिच्चीटिनान्। तन्नायुरङ्ङियुणर्न्नवरेंप्पोलें मन्नवन्

देवेन्द्र की स्तुति

तब संक्रन्दन (इन्द्र) अपने निर्जर (देव) गणों के साथ आकर राम की स्तुति करने लगे—"हे प्रभु रामचन्द्र ! मेरी रक्षा करें, मेरी रक्षा करें। हे प्रभु रामचन्द्र ! मेरी रक्षा करें, मेरी रक्षा करें। हे करुणा-रूपी अमृतनिधि ! हमारी रक्षा के लिए आप को छोड़ अन्य ऐसा कौन है ? हे प्रभु ! हमारे मन में आपके पावन नामों का जप करते रहने की इच्छा सदा बनी रहे। हे योगमूर्ति ! सदा आपका चरितामृत बोलने तथा कानों से सुनने का सुयोग प्राप्त होता रहे। हे जनकात्मजा के प्रभु ! आप इसके लिए अनुग्रह दें। श्री महादेव भी नित्यप्रति आपके राम नाम का जप करते रहते हैं। उमा-वल्लभ (शिव) अपनी आत्मशुद्धि के निमित्त सदा आपका पाद-तीर्थ अपने मस्तक पर धारण करते हैं।" इस प्रकार कई तरह से स्तुति करते देवेन्द्र से श्रीराम जी ने कहा—"मृत्यु वशगत कपिकुल वीरों को जीवित कर दें। १० जब कभी वानर लोग पक्वफल खाने लगें तब वे मीठे लगें। वानरों के पीने के लिए नदियाँ मधुमय हो बहती रहें।" यह सुनकर इन्द्र ने हर्षोल्लासमय वाणी में अनुग्रह दिया कि 'ऐसा ही हो'। तुरन्त ही वानरों ने मन्नव

तन्नेत्तोळुतानवर्कळुं। चन्द्रचूडन् परमेश्वनुं रामचन्द्रनै ऩोक्कियरुळ् चेय्तितऩ्ऩेरं— ऩिऩ्टे तातन् दशरथन् वऩ्ऩिता ऩिऩ्ऩु विमानममर्ऩ्ऩु ऩिऩ्नेक्काण्मान्। चेऩ्नु वणङ्ङुकेन्ऩन्पोटु केट्टथमन्नवन् संभ्रमं पूण्टु वणङ्ङिनान्; वैदेहितानुं सुमित्रातनयनुमादरवोटु वन्दिच्चु जनकनै। गाढं पुणर्ऩ्ऩु ऩेरुकयिल् चुंबिच्चु गूढनायोरु परमपुरुषनै सौमित्रि तन्नेयुं मैथिलि तन्नेयुं प्रेमपूर्ण्णं पुणर्ऩ्ऩानन्दमग्ननाय्। २० चिन्मयनोटु परञ्ञु दशरथनेन् मकनायिप्पिऱन्ऩ भवानै ञान् निर्म्मल मूर्त्ते! धरिच्चतिन्ऩाकयाल् जन्ममरणादि दुःखङ्ङळ् तीर्न्ऩितु। निन्महामाय मोहिप्पियाय्केन्नेयुं कल्मषनाशन! कारुण्य वारिधे! तात वाक्यं केट्टु रामचन्द्रन् तदा मोदेन पोवाननुवदिच्चीटिनान्। इन्द्रादि देवकळोटुं दशरथन् चेन्ऩमरावति पुक्कुमरुविनान्। सत्यसन्धन् तन्नै वन्दिच्चनुज्ञया सत्यलोकं चेन्ऩु पुक्कु विरिञ्चनुं। कात्त्यायिनी देवियोटु महेश्वरन् प्रीत्या वृषारूढनायेळुन्ऩळ्ळिनान्। श्रीरामचन्द्र

(राजा राम) को प्रणाम किया मानो नींद से अभी जाग उठे हों। चंद्रचूड परमेश्वर ने तब रामचन्द्र को देखकर बताया—"आपके पिताजी (दशरथ) आपका दर्शन करने के लिए विमान में आये हुए हैं। आप जाकर उन्हें प्रणाम करें।" यह कहते ही राम ने (उन्हें) प्रणाम किया। फिर वैदेही (सीता) तथा सुमित्रा-तनय (लक्ष्मण) दोनों ने प्रेमपूर्वक जनक (पिताजी) को प्रणाम किया। दशरथ ने रहस्य स्वरूप परमपुरुष (राम) का गाढ़ाश्लेष लेकर उनके माथे पर चुंबन अंकित किये; फिर सौमित्र तथा मैथिली का भी गाढ़ाश्लेष करके प्रेमनिमग्न एवं आनन्दमग्न हुए। २० दशरथ ने चिन्मय (राम) से कहा—"हे निर्मल स्वरूप! मेरे पुत्ररूप में जन्मे आपको पूर्णतया समझ लेने के कारण मेरे जन्म-मरण के दुख दूर हुए। हे कल्मषनाशक (पापों का हरण करनेवाले), हे करुणासागर! आपकी माया मुझे न मोहित कर पाए।" पिता जी के वचन सुनकर श्रीरामजी ने उन्हें सहर्ष जाने की अनुमति दी। फिर दशरथ इन्द्र आदि देवताओं के साथ अमरावती में पहुँचकर सुखपूर्वक रहने लगे। सत्यप्रिय भगवान की वन्दना करके तथा अनुज्ञा लेकर ब्रह्मा भी सत्यलोक को चले गये। तब प्रेमयुक्त महेश्वर अपनी देवी कात्यायिनी के साथ वृषभारूढ़ (बैल पर सवार) हो (राम के समीप से निकलकर) कैलास की ओर गये। श्रीराम की अनुज्ञा लेकर नारद आदि महामुनि गण भी वापस

नियोगेन पोयितु नारदनादि महामुनि वृन्दवुं। पुष्करनेत्रनै वाऴ्त्ति निराकुलं पुष्करचारिकळुं तटन्नीटिनार्। २९

अयोद्ध्ययिलेक्कुळ्ळ यात्र

मन्नवन् तन्नै वन्दिच्चपेक्षिच्चितु पिन्नै विभीषणनाय भक्तन् मुदा— दासनामेन्नेक्कुरिच्चु वात्सल्यमुण्टेतानुमेंङ्किलत्रैव सन्तुष्टनाय् मंगल देवतयाकिय सीतया मंगलस्नानवुमाचरिच्चीटणं; मेळमायित्तु विरुन्नु कऴिञ्ञिङ्ङु नाळेयङ्ङोट्टेय्क्कॆऴुन्नळ्ळुकयुमां ऎन्नु विभीषणन् चोन्नतु केट्टुटन् मन्नवर् मन्नवन् तानुमरुळ् चेय्तु— सोदरनाय भरतनयोद्ध्ययिलाधियुं पूण्टु सहोदरन् तन्नोटुं ऎन्नेयुं पार्त्तिरिक्कुन्नितु ञानवन् तन्नोटु कूटियॊऴिञ्ञलङ्कारङ्ङळ् ऒन्नुमनुष्ठिक्कयॆन्नुळ्ळतिल्लॆटो! चॆन्नॊरु राज्यत्तिल् वाऴुकॆन्नुळ्ळतुं स्नानाशनादिकळाचरिक्कॆन्नतुं नूनमवनोटु कूटियेयावितु। ऎन्नु पतिन्नालु संवत्सरं तिकयुन्नतॆन्नुळ्ळतुं पार्त्तवन् वाऴुन्नु। १० चॆन्नील ञानन्नुतन्नेयॆन्नालवन् वह्नियिल्च्चाटि मरिक्कुमे पिट्टेन्नाळ्। ऎन्नतु कॊण्टुळरुन्नितु ञानिह वन्नु समयवुमेट्टमितङ्ङु चॆन्नु

चले गये। पुष्करनेत्र (कमलनेत्र राम) की प्रशंसा करते निराकुल भाव से पुष्करचारी (आकाशगामी) लोग भी चले गये। २९

अयोध्या की ओर यात्रा

फिर प्रसन्न चित्त भक्त विभीषण ने महाराज (राम) के समीप आकर प्रार्थना की—"मुझ दास के प्रति वात्सल्य हो तो यहीं आज मंगलस्वरूपिणी देवी सीता के साथ मंगलस्नान करें तथा सानन्द आतिथ्य स्वीकार करें; फिर कल वहाँ (अयोध्या) के लिए निकल पड़ें।" विभीषण के यह कहने पर राजाओं के राजा (राम) बोले—"अयोध्या में मेरे भ्राता भरत अपने भ्राता (शत्रुघ्न) सहित मेरी प्रतीक्षा में दुखी बैठे हैं। उनको (तापस वेष में) रहने देकर मैं कोई अलंकार पहन नहीं सकता। किसी नगर में जाकर सुखपूर्वक रहना, स्नान-वान और भोजन करना सब निश्चय ही उनके ही साथ होगा। यही नहीं, वे इसी प्रतीक्षा में बैठे हैं कि चौदह वर्ष की अवधि किस दिन पूर्ण होगी। १० उस दिन अगर मैं वहाँ पहुँच नहीं सका तो अगले दिन वे अग्नि में कूद मरेंगे। यह सोचकर मेरा मन चंचल हो रहा है; समय भी बहुत निकट आ गया है। उसके पहले पहुँच पाने में संदेह है। आपके प्रति वात्सल्य न हो, ऐसी बात नहीं है।

कोळ्वान् पणियुण्टतिन् मुन्नमे तिन्निल् वात्सल्यमिल्लाय्कयुमल्लमे ।
सल्क्करिच्चीटु नी सत्वरमेन्नुटे मक्कंट वीररेयोक्कवे सादरं ।
प्रीतियवक्कुं वन्नालेनिक्कुं वरुं प्रीतियतिन्नोरु चञ्चलमिल्ल केळ् ।
अन्नेक्कनिवोटु पूजिच्चतिन् फलं वन्नु कूटुं कपिवीररेप्पूजिच्चाल् ।
पानाशन स्वर्ण्ण रत्नांबरङ्ङळाल् वानरन्मार्क्कलं भावं वरुं वण्णं
पूजयुं चेय्तु कपिकळुमाय्च्चेन्नु राजीवनेत्रनेक्कूप्पि विभीषणन् ।
क्षिप्रमयोद्ध्ययुक्केळुन्नेळ्ळुवानिह पुष्पकमाय विमानवु मुण्टल्लो ।
रात्रिञ्चराधिपनित्थमुणर्त्तिच्च वार्त्त केट्टास्थयोटुं पुरुषोत्तमन् २०
कालत्तु नी वरुत्तीटुकेन्नानथ पौलस्त्य यानवुं वन्नु वन्दिच्चितु ।
जानकियोटुमनुजनोटुं चेन्नु मानव वीरन् विमानवुमेरिनान् ।
अर्क्कात्मजादि कपिवरन्मारोटुं नक्तञ्चराधिपनोटुं रघूत्तमन्
मन्दस्मितं पूण्टरुळ् चेय्तितादराल् मन्देतरं ञानयोद्ध्ययक्कु पोकुन्नु ।
मित्र कार्य्यं कृतमायितु निङ्ङळाल् शत्रुभयमिनि निङ्ङळ्क्क-
ण्ट्टा । मर्क्कटराज ! सुग्रीव ! महामते ! किष्किन्धयिल्-
च्चेन्नु वाळ्क नी सौख्यमाय् । आशराधीश ! विभीषण !
लङ्कयिलाशु पोय् वाळ्क नीयुं बन्धु वर्ग्गवुं । काकुल्स्थनित्थ
मरुळ् चेय्त नेरत्तु वेगत्तिल् वन्दिच्चवर्कळु चोल्लिनार्— ञङ्ङळु

आप प्रेमपूर्वक मेरे वानर वीरों का स्वागत-सत्कार करें। वे प्रसन्न हों तो मैं भी प्रसन्न हूं; इस बात में कोई अन्तर नहीं है। कपिवरों की पूजा करने का वही फल मिलेगा, जो मेरी पूजा करने से मिल सकता है।" राम के आदेशानुसार वानरों को तृप्ति भर भोजन, स्वर्ण-रत्न और वस्त्र देकर तथा खूब उनकी सेवा करने के उपरांत, वानरों के साथ आकर विभीषण ने राम के सामने हाथ जोड़े। वे बोले—"शीघ्र ही अयोध्या में पहुँच पाने के लिए यहाँ पुष्पक विमान तो है ही।" रात्रिचरेन्द्र के यह कहने पर पुरुषोत्तम (राम) ने बड़ी आस्था सहित कहा—। २० "तुरन्त विमान ले आइये।" यह कहते ही विमान वंदना करता हुआ आ खड़ा हो गया। जानकी तथा भ्राता सहित मानववीर (राम) विमान में जा बैठे। फिर अर्कात्मज (सुग्रीव) आदि वानर श्रेष्ठों तथा राक्षसराज (विभीषण) से राम ने मंदस्मिति के साथ कहा—"मैं सहर्ष अयोध्या को जा रहा हूं। आप लोगों ने मित्र का कर्तव्य पूर्णतया निभाया। आप लोग सुखपूर्वक रहें। आप को कभी शत्रुभय नहीं होगा। हे वानरराज! हे सुग्रीव! हे महामति! आप किष्किन्धा में पहुँचकर सानंद रहें। हे आशराधीश (राक्षस राज)! हे विभीषण! आप भी सगे-संबंधियों

कूटे विटकोण्टयोद्धययिलङ्ङु कौसल्यादिकळेयुं वन्दिच्चु मंगलमाम्मारभिषेकवुं कण्टु तङ्ङळ् तङ्ङळ्क्कुळळविटे वाणीटुवा— ३० नुण्टाकवेणं तिरुमनस्सेङ्किले कुण्ठत ञङ्ङळ्क्कु तीरू जगल्प्रभो ! अङ्ङिने तन्ने ञमुक्कुमभिमतं निङ्ङळ्क्कु- मङ्ङने तोन्नियतत्भुतं ! ऎङ्किलो वन्नु विमानमेरीटुविन् सङ्कटमेन्नियॆ मित्र वियोगजं । सेनयासार्द्धं निशाचर राजनुं वानरन्मारुं विमानमेरीटिनार् । संसार नाशनानुज्ञया पुष्पकं हंस समानं समुल्प्पतिच्चू तदा नक्तञ्चरेन्द्र सुग्रीवननुजप्रिया युक्तनां रामनेक्कोण्टु विमानवुं अंत्रयुं शोभिच्चितंबरान्ते तदा मित्र बिंबं कणक्केद्धनदासनं । उत्संग सीम्नि विन्यस्य सीतां भक्त वत्सलन् नालु दिक्कुं पुनरालोक्य वत्से ! जनकात्मजे ! शृणु वल्लभे ! सत्सेविते ! सरसीरुह लोचने ! पश्च त्रिकूटा- चलोत्तमांगस्थितं विश्वविमोहनमाय लङ्कापुरं । ४० युद्धाङ्कणं काणतिलिङ्ङु शोणित कर्द्दममां सास्थिपूर्णं भयङ्करं । अत्रैव

के साथ तुरन्त लंका में जाकर सुख से रहें।" दाशरथी के यह कहते मात्र ही उन लोगों ने नमस्कार करते हुए अभ्यर्थना की—"हमें आपके साथ अयोध्या में पहुँचकर कौसल्या आदि को प्रणाम करने तथा सानंद अभिषेक देखकर अपने-अपने भवनों में जा रहने की—। ३० कृपापूर्वक आपकी अनुमति प्राप्त हो। हे स्वामी ! तभी हमारा दुख दूर होगा।" तब राम ने कहा—"मेरा भी यही अभिमत है; आश्चर्य है कि आपके मन में भी यही इच्छा है। तो आप लोग तुरन्त विमान चढ़ें; मित्र-वियोग जन्य दुख होने न पाये।" तुरन्त सेना सहित निशाचरराज तथा वानर लोग विमान में बैठ गये। संसार-नाशन (श्रीराम) की अनुमति लेकर विमान हंस (हंस का अर्थ सूर्य भी हो सकता है) के समान ऊपर उठता गया। राक्षसराज (विभीषण), सुग्रीव, अनुज तथा प्रियायुक्त राम सबको लिए धनदास (कुबेर) का विमान अंबर में (आकाश में) मित्रबिंब (सूर्यबिंब) के समान प्रकाशित हुआ। वामोत्संग में सीता को लिए भक्तवत्सल (राम) ने फिर चारों ओर देख लिया और (एक-एक समाचार) सीता से कहने लगे—"हे जनकजे ! हे नाथे ! हे सत्यस्वरूपिणी ! हे सरसीरुह (कमल) लोचने ! तुम मेरा कथन सुनो। तुम (पहले) त्रिकूटाचल की चोटी पर स्थित विश्वमोहक लंकापुरी देख लो। ४० उसीमें शोणित, कर्दम (कीचड) और अस्थिजालों से भरा भयंकर युद्धक्षेत्र देख लो। वहीं पर वानरों-राक्षसों में भयंकर युद्ध हुआ था। हे उत्तम

वानर राक्षसन्मार् तम्मिलेवयुं घोरमायुण्टाय संगरं। अवैव रावणन् वीणु मरिच्चितेन्नस्त्रमेट्टुत्तमे ! त्रिन्नुटे कारणं। कुंभकर्ण्णन् मकराक्षनु मेन्नुटेयम्पु कोण्टव्र मरिच्चितु वल्लभे ! वृत्रारिजित्तुमतिकायनुं पुनरत्र सौमित्रि तन्नस्त्रमेट्टुत्तमे ! वीणु मरिच्चितु पिन्नेयुं मट्टुळ्ळ कौणपन्मारेक्कपिकळ् कोन्नीटिनार्। सेतु बन्धिच्चतुं काणेटो ! सागरे हेतु बन्धिच्चततिन्नु नीयल्लयो ? सेतुबन्धं महातीर्त्थं प्रिये ! पञ्चपातक नाशनं त्रैलोक्य पूजितं कण्टालुमुण्टां दुरित विनाशनं कण्टालुमङ्ङतिन्नत्र रामेश्वरं। ॲन्नाल् प्रतिष्ठितनाय महेश्वरन् पन्नगभूषणन् तन्नेवणङ्ङुनी। ५० अत्र वन्नेन्नेशशरणमाय् प्रापिच्चितुत्तमनाय विभीषणन् वल्लभे ! पुष्करनेत्रे ! पुरोभुवि काणेटो ! किष्किन्धयाकुं कपीन्द्रपुरीमिमां। श्रुत्वा मनोहरं भर्त्तृवाक्यं मुदा पृथ्वीसुतयुमपेक्षिच्चितन्नेरं— तारादियायुळ्ळ वानर सुन्दरिमारेयुं कण्टङ्ङु कोण्टु पोयीटणं। कौतूहल मयोध्यापुरी वासिनां चेतसि पारमुण्टाय् वरुं निर्ण्णयं। वानर वीररुमोट्टु नाळुण्टल्लो मानिनिमारेप्पिरिञ्ञिरुन्नीटुन्नु। भर्त्तृवियोगज दुःख मिन्नेन्नोळमित्रिलोकत्तिङ्कलारऱिञ्ञिट्टुळ्ळू ? ॲन्नालिवरुटे वल्लभमारेयुमिन्नु तन्ने कूट्टिक्कोण्टु पोयीटणं।

स्वभाव वाली ! तुम्हारे कारण से वहीं पर रावण मेरे बाण लगकर मर पड़ा। हे स्वामिनी ! वहीं पर कुंभकर्ण, और मकराक्ष मेरे बाण लगकर मरे। फिर वहीं पर इन्द्रजीत और अतिकाय सौमित्र के बाणों से बिद्ध हो गिर मरे। फिर अन्य राक्षसों को वानरों ने मारा। आगे सेतुबंध देख लो। सागर में सेतु-बंधन के लिए तुम्हीं कारण हो। हे प्रिये ! यह सेतुबंध महातीर्थ है, पंचपापों का नाश करनेवाला है, त्रिलोक-पूजित है। इसको केवल देख लेने से सारे दुख दूर होंगे। उसके निकट ही वह देखो, रामेश्वर है। वहाँ मुझसे स्थापित पन्नगभूषण (शिव) को प्रणाम करो। ५० हे प्रिये ! वहीं उत्तम विभीषण मेरी शरण प्राप्त करने आये थे। हे कमललोचने ! वहीं आगे की भूमि देखो, वहीं वानरश्रेष्ठों की नगरी किष्किन्धा है।" ये मनोहर वचन सुनकर प्रसन्न हुई पृथ्वीसुता (सीता) ने प्रभु से प्रार्थना की—" तारा आदि सुन्दरियों से मिलकर उन्हें भी वहाँ (अयोध्या) ले जाएँगे। (उन्हें देख) निश्चय ही अयोध्यावासियों के मन में प्रसन्नता होगी। फिर ये वानरवीर कई दिनों से अपनी मानिनियों से बिछुड़े बैठे हैं। भर्तृ-वियोगजन्य दुख मेरे समान कौन अन्य इस त्रिभुवन में अनुभव कर चुका है? इसलिए

राघवन् त्रैलोक्य नायकनुळ्ळिलुळ्ळाकूतमप्पोळरिञ्ञु विमानवुं क्षोणीतलं नोक्कि मन्द मन्दं तदा ताणतु कण्टरुळ् चेय्तु रघूत्तमन्—६० वानर वीररे ! निङ्ङळ् निज निज मानिनिमारे वरुत्तुविनेवरुं। मर्क्कट वीररतु केट्टु मोदेन किष्किन्धपुक्कु निजांगनमारेयुं पोकेन्नु चोल्लि विमानं करेट्रिनार् शाखा मृगाधिपन्मारुं करेरिनार्। तारार् मकळाय जानकी देवियुं तारारुमादिकळोटु मोदान्वितं आलोकनालाप मन्दहासादि गाढालिंगन भ्रूचलनादिकळ् कोण्टु संभावनं चेय्तवरुमाय् वेगेन संप्रीति पूण्टु तिरिच्चु विमानवुं। विश्वैकनायकन् जानकियोटरुळिच्चेय्तितु परमानन्द संयुतं— पश्य मनोहरे ! देवि ! विचित्रमामृश्य मूकाचलमुत्तुंगमेत्रयुं; अत्रैव वृत्रारि पुत्रनेक्कोन्नतुं मुग्द्धांगि ! पञ्चवटि नामिरुन्नेटं। वन्दिच्चु कोळ्कगस्त्याश्रमं भक्ति पूण्टिन्दीवराक्षि ! सुतीक्ष्णा-श्रमत्तेयुं। ७० चित्रकूटाचलं पण्टु नां वाणेटमत्रैव कण्टु भरतने नामेटो ! भद्रे ! मुदा भरद्वाजाश्रमं काण्क शुद्धिकरं यमुनातट शोभितं। गंगानदियतिन्नङ्ङेततिन्नङ्ङु शृंगिवेरन् गुहन् वाळुन्न नाटेटो ! पिन्नेस्सरयू नदियतिन्नङ्ङेतु धन्यमाययोद्ध्या

आज ही इनकी पत्नियों को भी हम साथ ले चलेंगे।" तब त्रिलोकपति राम के मन का संकल्प समझकर विमान पृथ्वी-तल को देख मन्द-मन्द उतरने लगा तो राम ने कहा—। ६० "वानर वीरो ! आप सब अपनी-अपनी पत्नी को बुला लाइये।" यह सुनकर वानरश्रेष्ठ लोग किष्किन्धा में अपने-अपने घर पहुँच अपनी-अपनी पत्नियों को ले आ विमान में बैठ गये। फिर शाखामृगाधिप (वानर नायक) लोग भी सवार हुए। तारा, रुमा आदि नारियाँ सीतादेवी के पास आ सानन्द हाथ जोड़ने लगीं। फिर सब परस्पर देखने, आलाप करने, हँसने, आलिंगन करने में तल्लीन हुईं। देवी सीता ने भ्रू-चलन से उन सबका स्वागत-सत्कार किया। फिर तुरन्त ही अतिवेग में विमान चल पड़ा। लोकनायक ने सानन्द जानकी से कहा—"हे मनोहरी ! हे देवी ! उधर देखो, अत्युन्नत ऋष्यमूकाचल कितना आश्चर्यजनक है ! हे मुग्धांगी ! वहीं पर वृत्रा-रिपुत्र (बालि) का वध किया गया। फिर वह पंचवटी है, जहाँ हम बैठे थे। हे इन्दीवराक्षी ! अगस्त्याश्रम को प्रणाम करो; सुतीक्ष्णाश्रम को भी (प्रणाम करो;) ।७० (यह आया) त्रिकूटाचल, जहाँ पहले हम रह चुके थे तथा भरत आ हम से मिले थे। हे भद्रे ! सहर्ष भर-द्वाज का आश्रम देख लो, स्वच्छ यमुनातट यह आ गया। इसके आगे

नगरं मनोहरे ! इत्थमरुळ् चेय्त तेरत्तु राघवन् चित्तमरिञ्ञाशु ताणु विमानवुं । वन्दिच्चितु भरद्वाज मुनीन्द्रने तन्दिच्चनुग्रहं चेय्तु मुनीन्द्रनुं । रामनुं चोदिच्चितप्पोळयोद्ध्ययिलामयमेतु मोन्तिल्लयल्लीमुने ! मातृजनत्तिनुं सौख्यमल्ली मम सोदरन्मारक्कुमाचार्य्य जनत्तिनुं । तापस श्रेष्ठनरुळ् चेय्तितन्नेरं तापमोरुवक्कुमिल्लयोद्ध्या पुरे । नित्यं भरत शत्रुघ्न कुमारन्मार् शुद्धमाकुं फलमूलं भक्षिच्चु ८० भक्त्या जटा वल्कलादिकळुं पूण्टु सत्य स्वरूपनां निन्नेयुं पार्त्तु पार्त्तीहन्त ! सिंहासने पादुकं वच्चु मोहं त्यजिच्चु पुष्पाञ्जलियुं चेय्तु कर्म्मङ्ङळेल्लामतिङ्कल् समर्प्पिच्चु सम्मतन्मारायिरिक्कुन्नितेप्पोळुं । त्वल् प्रसादत्तालरिञ्ञिरिक्कुन्नितु चित्पुरुषप्रभो ! वृत्तान्तमोक्के ञान् । सीताहरणवुं सुग्रीव सख्यवुं यातुधानन्मारेयोक्के वधिच्चतुं, युद्ध प्रकारवुं मारुति तन्नुटे युद्ध पराक्रमवुं कण्टितोक्कवे । आदि मध्यान्तमिल्लात परब्रह्ममेतुं तिरियरुतातोरु वस्तु नी साक्षाल् महाविष्णु नारायणनाय मोक्षप्रदन् निन्तिरुवटि निर्णयं ।

गंगा नदी और फिर श्रृंगवेरपुर जहाँ गुह का निवास स्थान है। आगे (उसके) सरयू नदी और उसके बाद धन्य अयोध्या नगरी है।" इतना कहते ही राम के मन का आग्रह जानकर विमान नीचे को उतरा। भरद्वाज को प्रणाम किया और मुनीन्द्र ने राम को आशीर्वचन दिये। तब राम ने पूछा "हे मुनिवर ! अयोध्या में सब सुखी तो हैं ? क्या माताएँ सानन्द हैं ? मेरे भ्राता, मेरे आचार्य सब सकुशल हैं ?" तब तापस-श्रेष्ठ ने कहा—"अयोध्यापुरी में किसी को कुछ दुख नहीं है। कुमार भरत-शत्रुघ्न नित्य शुद्ध फल-मूल भोगकर—। ८० —तथा भक्तिपूर्वक जटा-वल्कल धारण कर, सत्यस्वरूप आपकी प्रतीक्षा करते हुए और सिंहासन पर रखी पादुकाओं को मोह-रहित हो पुष्पांजलि देते हुए और समस्त कर्मों को उन्हीं पर समर्पित कर जनता के लिए आदरणीय बन बैठे हुए हैं। हे चिद्पुरुष ! हे स्वामी ! आपकी कृपा से मैं सब कुछ जान बैठा हूं। सीता-हरण, सुग्रीव से मित्रता, यातुधानों (राक्षसों) का वध, युद्ध के विविध रूप, मारुति का युद्ध-पराक्रम सब कुछ मैं देखता आया हूँ। आप तो आदि, मध्य और अन्तहीन ब्रह्म हैं, जिनको कोई जान नहीं सकता। आप साक्षात् महाविष्णु, नारायण एवं मोक्षप्रद भगवान हैं, यह निर्विवाद सत्य है। सीता तो लक्ष्मी भगवती हैं और हे जगत् के स्वामी ! लक्ष्मण तो शेषनाग ही हैं। आज (अपने पादस्पर्श से) मेरे आश्रम को

लक्ष्मी भगवति सीतयाकुन्नतु लक्ष्मणनायतनन्तन् जगल् प्रभो !
इन्नु नी शुद्धमाक्केणं ममाश्रमं चेन्नयोद्ध्यापुरं पुक्कीटट्टत्तन्नाळ् ।९०
कर्ण्णामृतमां मुनि वाक्कु केट्टु पोय् पर्ण्णशालामकं पुक्कितु राघवन्।
पूजितनाय् भ्रातृ भार्य्या समन्वितं राजीव नेत्रनुं प्रीति पूण्टी-
टिनान् । ९२

हनुमद् भरत संवादम्

पिन्ने मुहूर्त्तं मात्रं निरूपिच्चथ चोन्नाननिलात्मजनोटु राघवन्— चेन्नयोद्ध्यापुरं प्रापिच्चु सोदरन् तन्नेयुं कण्टु विशेषमरिञ्ञु नी वन्नीटुकेन्नुटे वृत्तान्तवुं पुनरोन्नोळियातेयवनोटु चोल्लणं । पोकुन्न नेरं गुहनेयुं चेन्नु कण्टेकान्तमायरियिच्चीट-वस्थकळ् । मारुति मानुष वेषं धरिच्चु पोय् श्रीरामवृत्तं गुहनेयुं केळ्प्पिच्चु सत्वरं चेन्नु नन्दिग्राममुळ्प्पुक्कु भक्तनायीटुं भरतनेक्कूप्पिनान् । पादुकवुं वच्चुपूजिच्चनारतं चेतसा रामनेद्ध्यानिच्चु शुद्धनाय् सोदरनोटुममात्य जनत्तोटुमादर पूर्वं जटा वल्क्कलं पूण्टु मूल फलवुं भुजिच्चु कृशांगनाय् बालनोटुं कूटे वाळुन्नतु कण्टु । मारुतियुं बहुमानिच्चितेट्वु-

---

पावन बना दीजिए और फिर कल अयोध्या के लिए निकलें।" । ९० कर्णों के लिए पीयूष तुल्य, मुनि के वचन सुनकर राम पर्णशाला के अन्दर पहुँचे और वहाँ भ्राता एवं भार्या सहित पूजित हो राजीवनेत्र (राम) प्रसन्न हो उठे । ९२

हनुमान-भरत-सम्वाद

फिर थोड़ी देर तक सोच-विचार करने के उपरान्त राम ने अनिलात्मज (वायुपुत्र हनुमान) से कहा—"तुम अयोध्यापुरी में पहुँच कर भ्राता से मिल वहाँ के समाचार लेकर तथा मेरे सारे समाचार आद्यन्त उन्हें समझाकर आ जाओ। जाते हुए गुह से मिलकर उन्हें भी एकान्त में सारे समाचार सुना दो।" मनुष्य का वेष धारण कर मारुति ने गुह के पास पहुँच कर श्रीराम जी का सारा हाल सुनाया और फिर तुरन्त वहाँ से नन्दिग्राम में भरत के पास आकर प्रणाम किया। वहाँ पहुँच कर, भ्राता-सहित वल्कल वेष धारणकर और फल-मूल भोगते हुए अमात्यों आदि के साथ मन में उत्कट भक्ति लिये राम का ध्यान करते हुए तथा पादुकाओं की पूजा में बैठे कृशकाय भरत को वहाँ मारुति ने देखा। उन्होंने भरत का बड़ा आदर किया। पृथ्वी पर इतना भक्त दूसरा कोई

मारुमिल्लव भक्तम्मारवनियिल् । १०　अँन्नु कलिपच्चु वणङ्ङि विनीतनाय् त्तिन्नु मधुरमाम्मारु चौल्लीटिनान्— अग्रजन् तन्नै मुहूर्त्त मात्रेणत्तिन्नग्रे निरामयं काणां गुणनिधे ! सीतयोटुं सुमित्रात्मजन् तन्नोटुमादरवेरु प्लवग बलत्तोटुं सुग्रीवनोटुं विभीषणन् तन्नोटुमुग्रमायुळ्ळ रक्षोबलं तन्नोटुं पुष्पकमां विमानत्तिन्मेलेरि वन्निप्पोळिविटेयिरङ्ङुं दयापरन् । रावण-नेक्कोन्नु देवियेयुं वीण्टु देवकळालभि वन्दितनाकिय राघवनै-क्कण्टु वन्दिच्चु मानसे शोकवुंतीर्न्नु वसिक्कामिनिच्चिरं । इत्थ माकर्ण्य भरत कुमारनुं बद्ध सम्मोदं विमूर्च्छितनाय् वीणु । सत्वरमाश्वस्तनाय न्नेरं पुनरुत्थाय गाढमालिंगनवुं चेय्तु वानर वीर शिरसि मुदा परमानन्द बाष्पाभिषेकवुं चेय्तितु । २० देवोत्तमनो नरोत्तमनो भवानेवमेन्नेक्कुरिच्चित्व कृपयोटुं इष्ट वाक्यं चौन्नतिन्ननुरूपमाय् तुष्ट्या तरुवतिनिल्लमट्टेतुमे । शोकं मदीयं कळञ्ञ भवानु ञान् लोकं महामेरुसाकं तरिकिलुं तुल्यमाय् वन्नु कूटा पुनरेङ्किलुं चौल्लीटेटो ! राम कीर्त्तनं सौख्यदं।

नहीं— । १०　ऐसा सोचकर, विनीत भाव से प्रणाम एवं वन्दना करके मारुति ने मधुर वाणी में कहा—"हे गुणनिधि ! अब थोड़ी देर में अग्रज (राम) को अपने आगे देख पाएँगे । सीता, सुमित्रात्मज, विशाल कपि-सेना, सुग्रीव, विभीषण तथा उग्र रक्षोबल के साथ पुष्पक विमान में आकर दयालु राम यहाँ अभी उतरेंगे । रावण का वध कर तथा देवी को पुन: प्राप्त करके देवों से अभिवंदित राम को निकट पाकर आप उनको प्रणाम करके अपने मन का सारा दुख दूर करने का सुअवसर अभी पाएँगे ।" यह सुनकर कुमार भरत अत्यधिक आमोद के कारण मूर्छित-से हो गये और उनके मस्तक पर आनन्दाश्रु से अभिषेक कर दिया । २० फिर भरत ने हनुमान से कहा—"पता नहीं, आप देवोत्तम हैं या नरोत्तम । किन्तु मुझपर कृपा करके आपने जो इष्ट वचन कह डाले, उसके अनुकूल कोई वस्तु आपको बदले में सानन्द देने के लिए नहीं रही । मेरे दुख का निवारण करनेवाले आप महानुभाव को मेरु पर्वत तक की भूमि भेंट में दूँ तो भी (आप के उपकार के लिए) पर्याप्त नहीं है । फिर भी हे मित्र ! आप सुखप्रद राम के समाचार कह सुनाइये । मानववीर को कानन में वानरों से भेंट करने का सुयोग कैसे प्राप्त हुआ ? यातुधानाधिप (राक्षसराज) रावण वैदेही को किस प्रकार चुरा ले गया ?" ऐसे प्रश्नकर्ता राजकुमार भरत से मारुति ने उत्तर में कहा—"(सविस्तार सुनने की अगर आपकी इच्छा

मानव नाथनु वानरन्मारोटु कानने संगममुण्टायतेङ्ङने ?
वैदेहियेक्कट्टु कोण्टवारेङ्ङने यातुधानाधिपनाकिय रावणन् ?
इत्तरं चोदिच्च राजकुमारनोटुत्तरं मारुत पुत्रनुं चोल्लिनान्—
अङ्ङिलो निङ्ङळिच्चित्रकूटाचलत्तिङ्कल् निन्नाधि कलर्न्नु पिरिञ्ञ-
नाळ् आदियायिन्नोळमुळ्ळोरवस्थकळादरवुळ्ळकोण्टु चोल्लु-
न्नतुण्टु ञान् । ओत्तोळियाते तेळिञ्ञु केट्टीटुक वन्नुपों दुःख
विनाशं तपोनिधे ! ३० अन्नु परञ्ञरियिच्चानखिलवुं मन्नवन्
तन् चरित्रं पवित्रं परं शत्रुघ्न मित्र भृत्यमात्य वर्ग्गवुं चित्तं !
विचित्रमेन्नोर्त्तु कोण्टीटिनार् । ३२

अयोद्ध्या प्रवेशम्

शत्रुघ्ननोटु भरतकुमारनुमत्यादरं नियोगिच्चाननन्तरं—
पूज्यनां नाथनेळुन्नळ्ळुन्नेरत्तु राज्यमलङ्करिक्केणमेल्लाटवुं ।
क्षेत्रङ्ङळ् तोरुं बलि पूजयोटुमत्यास्थया दीपावलियुमुण्टाक्कणं ।
सूत वैताळिक वन्दिस्तुतिपाठकादिजनङ्ङळुमोक्के वन्नीटणं ।
वाद्यङ्ङळेल्लां प्रयोगिक्कयुं वेणं पाद्यादिकळुमोरुक्कणमेवरुं ।
राज दारङ्ङळमात्य जनङ्ङळुं वाजिगजरथ पंक्ति सैन्यङ्ङळुं

हो) तो सुनिये । आप लोगों के दुखपूर्वक चित्रकूटाचल छोड़ने के समय से लेकर अब तक का वृत्तान्त मैं आपको अब सविस्तार सुनाऊँगा । हे तपोनिधि ! बिना कुछ छूटने पाये, आप पूरा सुन लीजिए । यह वृत्तान्त सुनने पर दुखों का विनाश होगा ।" ३० यह कहकर महाराज (राम) का पूरा वृत्तान्त (मारुति ने) कह सुनाया । यह सुनकर शत्रुघ्न, मित्रवर्ग, भृत्यवर्ग, अमात्यवर्ग सभी ने आश्चर्य प्रकट किया और मन ही मन सोच लिया कि (राम का चरित) अद्भुतजनक है, विचित्र है । ३२

अयोध्या में प्रवेश

तुरन्त ही अत्यन्त प्रसन्न हो उठे राजकुमार भरत ने शत्रुघ्न को बताया—"आदरणीय प्रभु (राम) के आगमन के उपलक्ष्य में राज्य समलंकृत रखना चाहिए । मन्दिरों में बलि-पूजाओं तथा बड़ी आस्था के साथ दीपावलियों का प्रबन्ध किया जाना चाहिए । सूत, स्तुति-पाठक आदि लोगों को निमंत्रित किया जाना चाहिए । खूब बाजे बजाये जाएँ तथा सब मिलकर अर्घ्य-पाद्यों को तैयार करके रखें । राजरानियाँ, अमात्य लोग, चतुरंगिणी सेना (अश्व सेना, हाथी सेना, रथ सेना और पैदल सेना),

वार नारी जनत्तोट्टमलङ्करिच्चारूढमोदं वरेणमेल्लावरुं। चेक्कं
कोटिक्कूरकळ् कोटिक्कोक्कवे मार्ग्गमटिच्चु तळिप्पिक्कयुं वेणं।
पूर्ण्णं कुंभङ्ङळुं धूपदीपङ्ङळुं तूर्ण्णं पुरद्वारि चेक्कं समस्तरुं।
तापस वृन्दवुं भूसुर वर्ग्गवुं भूपति वीररुमोक्के वन्नीटणं। १०
पौरजनङ्ङळाबाल वृद्धावधि श्रीरामनेक्काण्मतिन्नु वरुत्तणं।
शत्रुघ्ननुं भरताज्ञया तल्पुरं चित्रमाम्मारङ्ङलङ्करिच्चीटिनान्।
श्रीरामदेवनेक्काण्मतिन्नाय् वन्नु पौरजनङ्ङळ् तिरञ्ञितयोद्ध्ययिल्।
वारणेन्द्रन्मारोरु पतिनायिरं तेरुमव्वण्णं पतिनायिरमुण्टु।
नूरायिरं तुरगङ्ङळुमुण्टञ्चु नूरायिरमुण्टु कालाळ्प्पटकळुं।
राज नारी जनं तण्टिलेरिक्कोण्टु रामकुमारनेक्काण्मानुळरिनार्।
पादुकं मूर्द्धनि वच्चु भरतनुं पादचारेण नटन्नु तुटङ्ङिनान्।
आदरवुळ्क्कोण्टु शत्रुघ्ननाकिय सोदरन् तानुं नटन्नानतु नेरं।
पूर्ण्णचन्द्राभमां पुष्पक मन्नेरं काणाय्च्चमञ्ञितु दूरे मनोहरं।
पौर जनादिकळोटु कुतूहलाल् मारुत पुत्रन् परञ्ञानतु नेरं—२०
ब्रह्मणा निर्म्मितमाकिय पुष्पकं तन्मेलरविन्दनेत्रनुं सीतयुं
लक्ष्मण सुग्रीव नक्तञ्चराधिप मुख्यरायुळ्ळोरु सैन्य समन्वितं
कण्टु कोळ्विन् परमानन्द विग्रहं पुण्डरीकाक्षं पुरुषोत्तमं परं।

वारवनिताएँ सब अत्यन्त प्रसन्न हो खूब सज-धजकर उपस्थित रहें। ध्वजों पर पताकाएँ फहरा दी जाएँ तथा राजमार्ग लीप-पोत कर साफ एवं स्वच्छ रखा जाए। पुरद्वारों पर पूर्णकुंभों, धूप-दीप आदियों को यथाविधि रखा जाए। सारे तापसवृन्द, भूसुरवर्ग, राजश्रेष्ठ आदि उपस्थित रहें। १० आबाल-वृद्ध पौरजनों को श्रीराम जी के दर्शनार्थ आमंत्रित किया जाए।" भरत की आज्ञा लेकर शत्रुघ्न ने नगर को खूब अलंकृत करवाया। श्रीरामचन्द्र जी का दर्शन-लाभ प्राप्त करने के लिए नागरिक लोग अयोध्या में आ पहुँचे। दस हजार गजराज, उतने ही रथ, सौ सहस्र तुरग (घोड़े) और पाँच लाख पैदल सैनिक तथा शिविकाओं में आरूढ़ हो राज-नारियाँ श्रीराम के दर्शन के लिए उपस्थित हुए। अपने मस्तक पर पादुकाएँ लिए भरत पैदल चल पड़े। तब भ्राता शत्रुघ्न भी सानन्द (पीछे-पीछे) चलने लगे। तब पूर्णचन्द्र की सी आभायुक्त मनोहर पुष्पक विमान दूर पर दर्शित हुआ। उल्लास-भरित मारुतपुत्र ने तब नागरिकों को बताया—। २० "ब्रह्मा से निर्मित पुष्पक विमान में अरविन्दनेत्र (राम), सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव एवं राक्षसराज विभीषण और सेना-सहित बैठे हुए हैं। पुण्डरीकाक्ष, परमानन्दस्वरूप, परमात्मा पुरुषोत्तम (राम)

अप्पोळ् जन प्रीति जात शब्द घनमभ्र देशत्तोळ मुल्पतिच्चू बलाल् ।
बाल वृद्ध स्त्री तरुण वर्ग्गारव कोलाहलं परयावतल्लेतुमे ।
वारण वाजि रथङ्ङळिल् निन्नवर् पारिलिरङ्ङि वणङ्ङिनारेवरुं।
चारु विमानाग्र संस्थितनां जगल्क्कारण भूतनेक्कण्टु भरतनुं
मेरु महागिरि मूर्द्धनि शोभया सूर्य्यनेक्कण्ट पोले वणङ्ङीटिनान् ।
चिल्पूरुषाज्ञया ताणितु मेल्लवे पुष्पकमाय विमानवुमन्नेरं ।
आनन्द बाष्पं कलर्न्नु भरतनुं सानुजनुमाय् विमानं करेरीटिनान् । ३०
वीणु नमस्करिच्चोरनुजन्मारे क्षोणीन्द्रनुत्संग सीम्नि चेर्त्तीटिनान् ।
कालमनेकं कळिञ्ञु कण्टीटिन बालकन्मारे मुरुकेत्तळुकिनान् ।
हृर्षाश्रु धारया सोदरमूर्द्धनि वर्षिच्चु वर्षिच्चु वात्सल्य पूरवुं
वर्द्धिच्चु वर्द्धिच्चु वाळुन्न नेरत्तु शत्रुघ्न पूर्वजनुं भरतन् पदं
भक्त्या वणङ्ङिनानाशु सौमित्रियेँ शत्रुघ्ननुं वणङ्ङीटिनानादराल् ।
सोदरनोटुं भरतकुमारनुं वैदेहितन् पदं वीणु वणङ्ङिनान् ।
सुग्रीवनंगदन् जांबवान् नीलनुमुग्रनां मैन्दन् विविदन् सुषेणनुं
तारन् गजन् गवयन् गवाक्षन् नळन् वीरन् वृषभन् शरभन् पनसनुं
शूरन् विनतन् विकटन् दधिमुखन् क्रूरन् कुमुदन् शतबलि दुर्म्मुखन्

का दिव्य विग्रह आप लोग देख लें ।" तब प्रसन्न जनता की हर्षध्वनि आकाश देश तक ऊपर उठी । बालकों, वृद्धों, स्त्रियों तथा तरुणवर्ग का जयघोष एवं कोलाहल कुछ कहा नहीं जा सकता था । वारण (हाथी), अश्व, रथ पर आरूढ़ बैठे लोग भी नीचे उतर कर वन्दना करने लगे । सुन्दर विमान की अग्रिम पंक्ति में बैठे जगत् के कारणस्वरूप (राम) को देखकर भरत ने ऐसे प्रणाम किया मानो उन्होंने मेरु पर्वत पर शोभित सूर्य को देखा हो । तब चैतन्य पुरुष की आज्ञा से पुष्पक विमान धीरे-धीरे नीचे उतर पड़ा । भरत के नेत्रों से आनन्दाश्रु उमड़ पड़े और (भगवान का स्वागत करने के लिए) अनुज (भरत-) सहित वे विमान पर चढ़ गये । ३० पैरों पर पड़कर नमस्कार-निरत भ्राताओं को उठाकर क्षोणीन्द्र (महाराज राम) ने अपनी गोदी में बिठा लिया । बहुत दिनों के उपरान्त देखे बालकों को राम ने गाढाश्लेष किया । जब राम निरंतर प्रवाहित हृर्षाश्रु की धारा में भ्राताओं के मस्तक नहलाये खड़े थे, तब शत्रुघ्न-पूर्वज (लक्ष्मण) ने भरत के चरणों पर भक्ति से प्रणाम किया, तब शत्रुघ्न ने सानन्द सौमित्र को प्रणाम किया । अपने भ्राता सहित राज-कुमार भरत ने वैदेही के चरणों पर नमस्कार किया । सुग्रीव, अंगद, जाम्बवान, नील, उग्र मैन्द, विविद, सुषेण, तार, गज, गवय, गवाक्ष, नल,

सारनाकुं वेगदर्शि सुमुखनुं धीरनाकुं गन्धमादनन् केसरि ४०
मट्टुमेवं कपिनायकन्मारेयुं मुट्टुमानन्देन गाढं पुणर्न्नितु। मारुति
वाचा भरतकुमारनुं पूरुष वेषं धरिच्चार् कपिकळुं। प्रीतिपूर्वं
कुशलं विचारिच्चति मोदं कलर्न्नु वसिच्चारवर्कळुं। सुग्रीवने
क्कनिवोट्टु पुणर्न्नथ गद्गद वाचा पऱञ्ञु भरतनुं— नूनं भवत्स-
हायेन रघुवरन् मानियां रावणन् तन्ने वधिच्चतुं; नालु सुतन्मार्
दशरथ भूपनिक्कालमञ्चामनायिच्चमञ्ञू भवान्। पञ्चम
भ्राता भवानिनि ञङ्ङळ्क्कु किञ्चन संशयमिल्लेन्नऱिकेटो!
शोकातुरमाय कौसल्य तन् पदं राघवन् भक्त्या नमस्करिच्चीटिनान्।
कालेकनिञ्ञु पुणर्न्नाळुटन् मुलप्पालुं चुरन्नितु माताविनन्नेरं।
कैकेयियाकिय मातृ पदत्तेयुं काकुल्स्थनाशु सुमित्रा पदाब्जवुं ५०
वन्दिच्चु मट्टुळ्ळ मातृजनत्तेयुं नन्दिच्चवरुमणच्चु तळुकिनार्।
लक्ष्मणनुं मातृ पदङ्ङळ् कूप्पिनानुळ्क्काम्पऱिञ्ञु पुणर्न्नारवर्कळुं।
सीतयुं मातृजनङ्ङळे वन्दिच्चु मोदमुळ्क्कोण्टु पुणर्न्नारवर्कळुं।
सुग्रीवनादिकळुं तोळुतीटिनारग्रे विनीतयाय् निन्नितु तारयुं।

वीर, वृषभ, शरभ, पनस, शूर, विनत, विकट, दधिमुख, क्रूर, कुमुद, शत-बली दुर्मुख, वेगदर्शी, सुमुख, धीर गन्धमादन, केसरी—। ४० और ऐसे अन्य कपिवीरों को मारुति के कहनेपर भरत ने गाढाश्लेश किया। मनुष्य वेष धारण कर वानर प्रीतियुक्त एवं सकुशल, वहाँ सानन्द रहने लगे। अत्यन्त सहृदयतापूर्वक सुग्रीव को गले लगाते हुए भरत ने गद्गद वाणी में कहा—"निश्चय ही आपकी कृपा से राम ने अहंकारी रावण का वध किया। दशरथ के पहले चार पुत्र थे, किन्तु आज आप (राम की सहायता करके) उनके पंचम पुत्र हुए। आज से आप हमारे पंचम भ्राता हैं, यह निश्चयपूर्वक जान लीजिए।" शोकातुर बैठी कौसल्या जी के चरणों पर श्रीराम जी झुक गये और उन्होंने अत्यन्त भक्ति से उनको प्रणाम किया। तुरन्त माता ने उन्हें छाती से लगाया और तब वात्सल्यातिरेक से उनके स्तन दूध से भर आये। तुरन्त ही दाशरथी ने कैकेई के मातृचरणों तथा माता सुमित्रा के चरण-कमलों पर—। ५० —प्रणाम किया। वैसे ही राम ने अन्य मातृजनों को भी नमस्कार किया और उन्होंने भी छाती से लगाते हुए उनकी (राम की) पीठ पर वात्सल्य से हाथ फेरे। लक्ष्मण ने भी मातृपदों पर प्रणाम अर्पित किया तो उन्होंने लक्ष्मण के मन के भाव भाँप कर उन्हें छाती से लगाया। सुग्रीव आदि (वानरों) ने भी हाथ जोड़े; तारा विनीत भाव से सामने आ

भक्तिपरवशनाय भरतनुं चित्तमळिञ्ञु तत्पादुका द्वन्द्ववुं श्रीराम पादारविन्दङ्ङळिल्च्चेर्त्तु पारिल् वीणाशु नमस्करिच्चीटिनान् । राज्यं त्वयादत्तमेङ्कल् पुराद्य ञान् पूज्यनां निङ्कल् समर्प्पिच्चिता-दराल् । इन्नुमज्जन्मं सफलमाय् वन्नितु मल्कर्म्मं साफल्यवुं प्रभो ! पण्टेतिलिन्नु पतिन्मटङ्ङायुटनुण्टिह राज भण्डारवुं भूपते । आनयुं तेरुं कुतिरयुं पार्त्तु काणूनमिल्लाते पतिन्मट-ङ्ङुण्टल्लो । ६० निन्नुटे कारुण्यमुण्टाक कोण्टु ञानिन्नयोळं राज्यमत्र रक्षिच्चतुं त्याज्य मल्लोट्टुं भवानालिनित्तव राज्यवुं ञङ्ङळेयुं भुवनत्तेयुं पालनं चेय्क भवानिनि मट्टेतुमालंबनमिल्ल कारुण्य वारिधे ! इत्थं परञ्ञ भरतनेक्कण्टवरेल्लयुं पारं प्रशंसिच्चु वाळित्तनार् । सन्तुष्टनाय रघुकुलनाथनु मन्तर्मुदा विमानेन मानेन पोय् नन्दिग्रामे भरताश्रमे चेन्नथ मन्दं महीतलं तन्निलिरङ्ङिनान् । पुष्पकमाय विमानत्ते मानिच्चु-चिल् पुरुषनरुळ् चेय्तानन्तरं— चेन्नु वहिक्क नी वैश्रवणन् तन्नेमुन्नेक्कणक्के विशेषिच्चु नी मुदा । वन्नीटु ञान् निरूपिक्कुन्न नेरत्तु निन्ने विरोधिक्कयुमिल्लोरुत्तनुं । एन्नरुळ् चेय्ततु केट्टु

खड़ी रही । भक्ति से ओत-प्रोत भरत ने अत्यन्त उदारतापूर्वक दोनों पादुकाएँ श्रीराम जी के चरण-कमलों से लगायीं और फिर भूमि पर पड़ नमस्कार किया । वे कहने लगे—"पहले मेरे पास आप से न्यस्त यह राज्य आज आदरणीय आपको समर्पित कर रहा हूँ । हे स्वामी ! आज मेरा जन्म सफल हुआ और मेरे सारे कर्म भी सफलीकृत हुए । हे महा-राज ! आज यहाँ का राज्य-भण्डार पहले से दसगुना बढ़ गया है । वैसे ही आप ही देख लीजिए, आज हाथी, रथ, घोड़े आदि भी दसगुने से अधिक हैं । ६० आपकी कृपा से मैं आज-पर्यंत राज्य की देखभाल कर सका । अब आप अपने राज्य को, हमको तथा भुवन को त्याग नहीं सकेंगे । हे करुणासागर ! अब आप हमारा पालन कीजिए; हमारा कोई दूसरा अवलम्ब नहीं रहा ।" इस प्रकार प्रार्थना करते भरत को देख सब उनकी प्रशंसा करने लगे । मन ही मन प्रसन्न हुए श्रीराम जी विमान-मार्ग से जाते हुए नन्दिग्राम में भरताश्रम में आ पृथ्वीतल पर नीचे उतर पड़े । तब चैतन्यस्वरूप ने विमान को समुचित सम्मानित करते हुए कहा—"तुम अब जाकर पहले के जैसे ही वैश्रवण को धारण करते रहो । जब मैं चाहूँगा तब तुम यहाँ आ सकते हो; तुम्हारा कभी विरोध नहीं होगा ।" यह सुनकर प्रणाम करके विमान सीधे अलकापुरी को चला

वन्दिच्चु पोय्च्चेन्नळकापुरि पुक्कु विमानवुं । ७० सोदरनोटुं वसिष्ठनामाचार्य्यं पादं नमस्करिच्चू रघुनायकन् । आशीर्वचनवुं चेय्तु महासनमाशु कोटुत्तु वसिष्ठ मुनीन्द्रनुं । देशिकानुज्ञया भद्रासन भुवि दाशरथियुमिरुन्नरुळीटिनान् । अप्पोळ् भरतनुं केकय पुत्रियुमुत्पल संभव पुत्रन् वसिष्ठनुं वामदेवादि महामुनि वर्ग्गवुं भूमिदेवोत्तमन्मारुममात्यरुं रक्षिक्क भूतलमेन्नपेक्षिच्चितु लक्ष्मीपतियाय रामनोटन्नेरं । ब्रह्म स्वरूपनात्मारामनीश्वरन् जन्मनाशादिकळिल्लात मंगलन् निर्म्मलन् नित्यन् निरुपमनद्वयन् निर्म्ममन् निष्कळन् निर्ग्गुणनव्ययन् चिन्मयन् जंगमाजंगमान्तर्ग्गतन् सन्मयन् सत्य स्वरूपन् सनातनन् । तन्महामायया सर्वं लोकङ्ङळुं निर्म्मिच्चु रक्षिच्चु संहरिक्कुन्नवन् । ८० इङ्ङनेयङ्ङवर् चोन्नतु केट्टळविगितज्ञन् मन्दहास पुरस्कृतं मानसे खेद मुण्टाकरुताक्कुमे ञानयोद्ध्याधिपनाय् वसिक्कामल्लो । ऐङ्किलतिन्नोरुक्कीटुकेल्लामेन्नु पङ्कजलोचनानुज्ञया संभ्रमाल् अश्रुपूर्णाक्षनाय् शत्रुघ्ननुं तदाश्मश्रुनिकृन्तकन्मारे वरुत्तिनान् । संभारवुमभिषेकार्त्थमेवरुं संभरिच्चीटिनारानन्द चेतसा । लक्ष्मणन् तानुं भरत कुमारनुं रक्षोवरनुं दिवाकर पुत्रनुं मुन्पे जटाभार

गया । ७० फिर श्रीरामजी ने अपने भ्राता-सहित आचार्य वसिष्ठ के चरणों पर पड़ नमस्कार किया । वसिष्ठ मुनीन्द्र ने आशीर्वचन देकर महासन पर बिठाया । देशिक (वसिष्ठ) की आज्ञा पाकर राम ने भद्रासन को ग्रहण किया । तब भरत, केकयपुत्री (कैकेई), उत्पल सम्भव-पुत्र (ब्रह्मा के पुत्र) वसिष्ठ, वामदेव आदि मुनिगण, भूमिदेवोत्तम (ब्राह्मणश्रेष्ठ), अमात्यवर्ग सबने लक्ष्मीपति राम से भूतल की रक्षा करने की प्रार्थना की । ब्रह्मस्वरूप, परमात्मा, ईश्वर, जन्म-मरणों से रहित मंगलस्वरूप, निर्मल, नित्य, निरुपम, अद्वय, निर्मम, निष्कल, निर्गुण, अव्यय, चिन्मय, जड़-चेतन के अन्तर्गत निवास करनेवाले, सन्मय, सत्यस्वरूप, सनातन, अपनी ही माया से समस्त लोकों की सृष्टि, स्थिति एवं संहार करनेवाले— । ८० (भगवान) ने, जो संकेतग्राही हैं, उनकी प्रार्थना करने पर मन्दहास के साथ बताया–"अब आप लोग दुखी न हों, मैं अयोध्यापति बनने को तैयार हूँ । तो उसके लिए आवश्यक प्रबन्ध कर लें ।" पंकजनेत्र (राम) की अनुज्ञा पाकर शत्रुघ्न ने तुरन्त श्मश्रुनिकृन्तकों (नाइयों) को बुलवा लिया । सभी ने प्रसन्न चित्त हो राज्याभिषेक की सामग्रियाँ एकत्र कीं । लक्ष्मण, राजकुमार भरत, राक्षसराज

शोधनयुं चेय्तु सम्पूर्ण मोदं कुळिच्चु दिव्यांबरं पूण्टु माल्यानु-
लेपाद्यलङ्कारङ्ङळाण्टु कुतूहलं कैक्कोण्टनारतं। श्रीरामदेवनुं
लक्ष्मणनुं पुनरारूढ मोदमलङ्करिच्चीटिनार्। शोभयोटे
भरतन् कुण्डलादिकळाभरणङ्ङळेल्लामनुरूपमाय् ९० जानकी
देवियेे राजनारीजनं मानिच्चलङ्करिप्पिच्चारति मुदा। वानर
नारी जनत्तिनुं कौसल्य तानादराललङ्कारङ्ङळ् नल्किनाळ्।
अन्नेरमत्र सुमन्त्रर् महारथं नन्नाय्च्चमच्चु योजिप्पिच्चु निर्त्तिनान्।
राजराजन् मनुवीरन् दयापरन् राजयोग्यं महास्यन्दन मेरिनान्।
सूर्य्यतनयनुमंगद वीरनुं मारुति तानुं विभीषणनुं तदा।
दिव्यांबराभरणाद्यलङ्कारेण दिव्य गजाश्व रथङ्ङळिलाम्मारु
नाथन्नकम्पटियाय् नटन्नीटिनार् सीतयुं सुग्रीव पत्निकळादियां
वानर नारिमारुं वाहनङ्ङळिल् सेनापरिवृतमारायनारतं पिम्पे
नटन्नितु शंखनादत्तोटुं गंभीर वाद्य घोषङ्ङळोटुं तदा। सारथ्य
वेल कैक्कोण्टान् भरतनुं चारु वेञ्चामरं नक्तञ्चरेन्द्रनुं, १००
श्वेतातपत्रं पिटिच्चु शत्रुघ्ननुं सोदरन् दिव्य व्यजनवुं वीयिनान्।
मानुषवेषं धरिच्चु चमञ्ञुळ्ळ वानरेन्द्रन्मार् पतिनायिरमुण्टु

(विभीषण), दिवाकर पुत्र (सुग्रीव) सबसे पहले जटाएँ उतरवाकर तथा
स्नान-निवृत्त हो सानन्द दिव्यांबर, माला, अनुलेप आदि अलंकार धारण
कर कुतूहलपूर्वक बैठ गये। फिर श्रीराम-लक्ष्मण भी प्रसन्नतापूर्वक
अलंकारों से सुसज्जित हुए। भरत ने राजा के अनुकूल कुण्डल आदि
आभरण लाकर उन्हें अलंकृत कर दिया। ९० तुरन्त ही राज-नारियों
ने सहर्ष सीतादेवी को सम्मानित कर अलंकारों से विभूषित कर दिया।
तब सुमन्त्र राजतिलक के लिए विशेषरूप से अलंकृत रथ ले आये। राज-
राजेश्वर, दयाशील, मनुवीर (राम) राजा के योग्य महास्यंदन में आरूढ़
हुए। सूर्यतनय (सुग्रीव), अंगद, मारुति, और विभीषण दिव्यवस्त्रों और
आभूषणों से समलंकृत हो हाथी, घोड़े और रथों पर सवार हो स्वामी
(राम) के अनुचर बन निकल पड़े। सीता, सुग्रीव-पत्नी आदि वानर-
नारियाँ सवारियों पर, सेनापरिवृत हो तुरन्त ही पीछे-पीछे चल पड़ीं।
शंखध्वनियों, गंभीर वाद्यघोषों से चारों दिशाएँ गुँजित हो उठीं। भरत
ने सारथी का तथा राक्षसराज (विभीषण) ने चारु चामर डुलाने का काम
अपने हाथ में लिया। १०० शत्रुघ्न ने श्वेतातपत्र हाथ में लिया और भाई
(लक्ष्मण) ने दिव्य व्यजन डुलाने का भार अपना लिया। मनुष्य वेषधारी
दस हज़ार वानर वीर अपनी सहधर्मिणियों के साथ गजवीरों पर सवार हो

वारणेन्द्रन्मार् कळुत्तिलेऱिप्परिवार जनङ्ङळुमाय् ऩटन्ऩीटिनार् ।
रामनीवण्णमेळुन्ऩळ्ळुं ऩेरत्तु राममारुं चेन्ऩु हर्म्म्यङ्ङळेऱिनार् ।
कण्णिनानन्दपूरं पुरुषं परं पुण्य पुरुषमालोक्य नारी जनं गेह
धर्म्मङ्ङळुमोर्क्कॅ मऱन्नुळ्ळिल् मोह परवशमाराय् मरुविनार् ।
मन्दमन्दं चेन्ऩु राघवन् वासव मन्दिर तुल्यमां तातालयं कण्टु
वन्दिच्चकं पुक्कु मातावु तन पदं वन्दिच्चितन्य पितृप्रियन्मारेयुं ।
प्रीत्या भरतकुमारनोटन्ऩेरमास्थया चोन्ऩानविळंबितं भवान्—
भानुतनयनुं नक्तञ्चरेन्द्रनुं वानरनायकन्माक्कुं यथोचितं ११०
सौख्येन वाळ्वतिन्नोरो गृहङ्ङळिलाक्कुक वेणमवरे विरॅवॅ ऩी ।
ऍन्ऩतु केट्टु चेय्तान् भरतनुं चेन्ऩवरोरो गृहङ्ङळिल् मेविनार् ।
सुग्रीवनोटु पऱञ्ञु भरतनुमग्रजनिप्पोळभिषेक कर्म्मवुं मंगल
माम्मारु ऩी कळिच्चीटणमंगदनादिकळोटुं यथाविधि । ऩालु
समुद्रत्तिलुं चेन्ऩु तीर्त्थवुं काले वरुत्तुक मुम्पिनाल् वेण्टतुं । ऍङ्किलो
जांबवानुं मरुल्पुत्रनुमंगदन् तानुं सुषेणनुं वैकाते स्वर्ण्ण
कलशङ्ङळ् तन्निल् मलयजपर्ण्णेन वाय्क्कॅट्टि वारियुं पूरिच्चु
कोण्टु वरिकॅन्ऩयच्चोरळववर् कोण्टु वन्ऩीटिनारङ्ङने सत्वरं ।

निकले। राम का यह जुलूस निकलते ही सुन्दरियाँ (दिव्यदर्शन) के लिए प्रासादों पर चढ़ गयीं। नेत्रों को आनन्द प्रदान करनेवाले परमात्मा पुण्यपुरुष (राम) का अवलोकन कर (नारियाँ) अपने गेहधर्म को विस्मृत कर मन ही मन मोहित हो खड़ी रह गयीं। धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए श्रीराम जी ने वासव-मन्दिर (इन्द्र-भवन) के समान अपने तातालय (दशरथ का महल) को देख वन्दना की तथा अन्दर प्रविष्ट हो माता तथा अन्य पिता के प्रियजनों के चरणों पर प्रणाम किया। तब प्रेमपूर्वक एवं आस्था सहित श्रीराम जी ने राजकुमार भरत से तुरन्त कहा—"भानुतनय (सुग्रीव) तथा राक्षसेन्द्र (विभीषण) और वानर-प्रमुखों को यथोचित—। ११० —सुखपूर्वक रहने के लिए आप जल्दी ही पृथक्-पृथक् महलों में आवश्यक प्रबन्ध कर दें। यह सुनकर भरत ने ऐसा ही किया। वे (सुग्रीव आदि) अलग-अलग महलों में प्रविष्ट हुए। तब भरत ने सुग्रीव से प्रार्थना की कि आप अंगद आदि को साथ लेकर अग्रज का यथाविधि समंगल राज्याभिषेक कर दें। उसके लिए सबसे पहले चार समुद्रों का जल मँगवा लें।" तुरन्त ही सुग्रीव ने आज्ञा दी—"जाम्ववान्, मारुति, अंगद और सुषेण तुरन्त जाकर सुवर्णकलशों में पानी भरके उन्हें मलयजपर्णों (चन्दन के पत्र) से बांध ले आएं।" कहने भर

पुण्य नदी जलं पुष्करमादियामन्य तीर्त्थङ्ङळिलुळ्ळ सलिलवुं ओक्कें वरुत्ति मट्टुळ्ळ पदार्त्थङ्ङळ् मर्क्कटवृन्दं वरुत्तिनार् तल्क्षणे । १२० शत्रुघ्ननुममात्यौघवुमाय् मट्टु शुद्ध पदार्त्थङ्ङळ् संभरिच्चीटिनार् । रत्नसिंहासने रामनेयुं चेर्त्तु पत्नियेयुं वामभागे विनिवेश्य वामदेवन् मुनि जाबालि गौतमन् वाल्मीकियेन्निवरोटुं वसिष्ठनां देशिकन् ब्राह्मण श्रेष्ठरोटुं कूटि दाशरथिक्कभिषेकवुं चेय्तितु । पौन्निन् कलशङ्ङळायिरत्तेट्टु मङ्ङन्यून शोभं जपिच्चार् मङ्कळुं । नक्तञ्चरेन्द्रनुं वानर वीरनुं रत्नदण्डं पूण्ट चामरं वीयिनार्, शत्रुघ्न वीरन् कुटपिटिच्चीटिनान् क्षत्रियवीररुपचरिच्चीटिनार् । लोक पालकन्मारुपदेवतमारुमाकाश मार्ग्गे पुकळ्न्नु निन्नीटिनार् । मारुतन् कैयिल्क्कोटुत्तयच्चान् दिव्यहारं महेन्द्रन् मनुकुलनाथनु सर्व रत्नोज्ज्वलमाय हारं पुनरुर्वीश्वरनुमलङ्करिच्चीटिनान् । १३० देव गन्धर्व यक्षाप्सरो वृन्दवुं देवदेवेशनेब्भजिच्चीटिनार् । पूर्ण्ण भक्त्या पुष्प वृष्टियुं चेय्तु कारुण्य निधियेब्भजिच्चितेल्लावरुं । स्निग्द्ध दूर्वादळ श्यामळं कोमळं पत्मपत्रेक्षणं सूर्य्य कोटिप्रभं

की देरी थी, वे जल भर लाये। फिर पुण्य नदी-जल, पुष्कर आदि तीर्थों का जल तथा अन्य आवश्यक द्रव्य तुरन्त ही वानर लोग ले आये। १२० शत्रुघ्न अन्य अमात्यों सहित सभी पवित्र वस्तुएँ जमा कर लाये। फिर रत्नसिंहासन में राम तथा वाम भाग में पत्नी सीता को बिठाकर, आचार्य वसिष्ठ ने वामदेव, जाबाली, गौतम, वाल्मीकि आदि मुनियों तथा ब्रह्मश्रेष्ठों की उपस्थिति में एक हजार आठ कनक-कलश रखकर तथा वेदमन्त्रों का जप करते हुए शुभ मुहूर्त में दाशरथी का अभिषेक कर दिया। राक्षसेन्द्र तथा वानर वीर (सुग्रीव) ने कनकदंड से युक्त चामर डुलाये। वीर शत्रुघ्न ने छत्र पकड़ लिया और दूसरे-दूसरे राजाओं ने अन्य उपचार किये। लोकपालक एवं उपदेवता लोग आकाशमार्ग में आ स्तुतियाँ करने लगे। देवेन्द्र ने मनुकुल के तिलक (राम) को पहनाने के लिए वायु के हाथ दिव्यहार भिजवा दिया; उर्वीश्वर (पृथ्वीपति राम) ने सर्वरत्नालंकृत उस हार को स्वयं पहन लिया। १३० देव, गन्धर्व, यक्ष, किन्नरवृन्दों ने देवदेवेश का भजन-कीर्तन किया। फिर पुष्पवर्षा करते हुए पूर्ण भक्ति के साथ (उन्होंने) कारुण्यमूर्ति की स्तुतियाँ कीं—"स्निग्ध दूर्वादल के समान श्यामल एवं कोमल, पद्मदल सम लम्बे नेत्र वाले, करोड़ों सूर्य सम प्रभायुक्त, हार-किरीट से शोभित तथा कामदेव-तुल्य लावण्य वाले हे मनोहर

हार किरीट विराजितं राघवं मार समान लावण्यं मनोहरं।
पीतांबर परिशोभितं भूधरं सीतया वामाङ्क संस्थया राजितं
राज राजेन्द्रं रघुकुल नायकं राजीव बान्धववंश समुत्भवं रावण
नाशनं रामं दयापरं सेवकाभीष्टदं सेव्यमनामयं। भक्ति
कैक्कोण्टुमा देवियोटुं वन्नु भर्गनुमप्पोळ् स्तुतिच्चु तुटङ्ङिनान्—
रामाय शक्तियुक्ताय नमोनमः श्यामळ कोमळ रूपायतेनमः।
कुण्डलीनाथ तल्पाय नमोनमः कुण्डलमण्डित गण्डायते नमः। १४०
श्रीराम देवाय सिंहासनस्थाय हारकिरीट धराय नमोनमः।
आदिमद्ध्यान्तहीनाय नमोनमः वेदस्वरूपाय रामाय ते नमः।
वेदान्त वेद्याय विष्णवे ते नमो वेदज्ञ वन्द्याय नित्याय ते नमः।
चन्द्रचूडन् पुकळ्न्नोरु नेरं विबुधेन्द्रनुं भक्त्या पुकळ्त्तित्तुटङ्ङिनान्—
ब्रह्मवरं कोण्टहंकृतनायोरु दुर्म्मद मेरिय रावण राक्षसन् मल्पद-
मेल्लामटक्किनान् कश्मलन् तल्पुत्रनेन्ने बन्धिच्चु महारणे। त्वल्
प्रसादत्तालवन् मृतनाकयालिप्पोळेनिक्कु लभिच्चतु सौख्यवुं।
अन्तन्तिवण्ण मोरोतरमापत्तु वन्नालतु तीर्त्तु रक्षिच्चु कोळ्ळुवान्

राम! (आपकी जय हो!) अपने वाम भाग में सीता से शोभित, पीतांबर से परिशोभित, राजराजेन्द्र रघुकुलतिलक, राजीवबांधव (सूर्य) वंश में आविर्भूत, रावण-विनाशन, दयामय एवं सेवकों को अभीष्ट फल प्रदान करनेवाले हे राम! आप हमारे लिए सानन्द सेव्य हैं।" उसी समय उमा-सहित आकर शंकर ने भक्तिपूर्वक इस प्रकार स्तुति की—"शक्तियुक्त राम को नमस्कार है। हे श्यामल कोमल स्वरूप वाले (राम!) आपके लिए नमस्कार है। कुण्डलीनाथ (शेषनाग) को तल्प (शय्या) बनाये रहनेवाले (विष्णु)! आपको नमस्कार है। १४० सिंहासन पर आरूढ़ एवं हार-किरीट को धारण किये श्रीराम देव के लिए नमस्कार है, नमस्कार है। आदि, मध्य एवं अन्तहीन (भगवान) राम! आपको प्रणाम है। केवल वेदान्त-वेद्य विष्णु! आपको नमस्कार है। हे वेदज्ञों से आराध्य एवं नित्यस्वरूप! आपको नमस्कार है।" जब चन्द्रचूड (शिव) इस प्रकार स्तुति कर रहे थे, तभी विबुधेन्द्र (देवेन्द्र) आकर भक्ति सहित स्तुति-प्रशंसा करने लगे—"ब्रह्मा के वर-प्रसाद से गर्वीले एवं अहंकारी बने राक्षस रावण ने मेरा पद अपहरण कर लिया था; उस नीच के पुत्र ने मुझे महायुद्ध में बांध लिया था। आपकी कृपा से, उन दोनों के मरने से अब मुझे सुख प्राप्त हुआ। जब-जब कोई न कोई विपत्ति आ पड़ती है, तब उससे रक्षा करके हमारी देख भाल करने की कृपा दिखाने-

इत्र कारुण्यमोरुत्तक्कुमिल्लेन्नतुत्तम पूरुष ! ञान् पऱयेणमो ? अेल्लां भवल् करुणाबलमेन्निमट्टिल्लोरालंबनं नाथ ! नमोस्तुते। १५० आदित्य रुद्र वसु प्रमुखन्मारुमादितेयोत्तमन्मारुमतु नेरं आशरवंश विनाशननाकिय दाशरथियै वेव्वेरे पुकळ्त्तिनार्। यज्ञभागङ्ङ-ळेल्लामटक्किकक्कोण्टानज्ञानियाकिय रावण राक्षसन् त्वल्-क्कटाक्षत्तालतोक्के लभिच्चितु दु:खवुं तीर्न्नितु ञङ्ङळ्क्कु दैवमे ! त्वल्पादपत्मं भजिप्पतिन्नेप्पोळुं चिल् पुरुषप्रभो ! नल्कीटनुग्रहं। रामाय राजीव नेत्राय लोकाभिरामाय सीताभिरामायते नम:। भक्त्या पितृक्कळुं श्रीराम भद्रनेच्चित्तमळिञ्ञु पुकळ्न्नु तुटङ्ङिनार्— दुष्टनां रावणन् नष्टनायानिन्नु तुष्टराय् वन्नितु ञङ्ङळुं दैवमे ! पुष्टियुं वाच्चितु लोकत्रयत्तिङ्कलिष्टियु मुण्टा यितिष्ट लाभत्तिनाल्। पिण्डोदकङ्ङळुदिक्काय कारणं दण्डवुं तीर्न्नितु ञङ्ङळ्क्कु दैवमे ! १६० यक्षन्मारोक्के स्तुतिच्चारनन्तरं रक्षोविनाश ननाकिय रामने। रक्षितन्मारायच्चमञ्ञितु ञङ्ङळुं रक्षोवरने वधिच्च मूलं भवान्। पक्षीन्द्र वाहन ! पापविनाशन ! रक्ष-रक्षप्रभो ! नित्यं नमोस्तुते। गन्धर्व संघवुमोक्के स्तुतिच्चितु

वाला कोई दूसरा देवता नहीं है। हे पुरुषोत्तम ! यह तो कह सुनाने की आवश्यकता ही क्या है ? सब कुछ आपकी करुणा ही है। हे नाथ ! हमारा कोई दूसरा सहारा नहीं है। आपको मेरा नमस्कार है। १५० आदित्य, रुद्र, वसुप्रमुख तथा आदितेयोत्तमों ने भी आशरवंश (राक्षसवंश) के लिए कालस्वरूप दाशरथी की पृथक्-पृथक् प्रशंसाएँ कीं। अज्ञानी राक्षस रावण ने यज्ञ-भाग सब हड़प लिये थे, किन्तु आपके कृपा-कटाक्ष से वे सब पुन: प्राप्त हुए तथा हे दैव ! हमारी दुख-निवृत्ति भी हो गयी। हे चिन्मय पुरुष ! हे प्रभु ! सदा आपके पाद-पद्मों का भजन करते रहने के लिए आप हमें अनुग्रहीत करें। हे सीताभिराम ! है लोकाभिराम ! हे राम ! आपको नमस्कार है। पितरों ने भी हृदय खोल श्रीरामदेव की स्तुति की और बताया कि दुष्ट रावण के नाश के कारण आज हम लोग सन्तुष्ट हुए हैं। हे दैव ! अब त्रिभुवन की उन्नति होगी। अभीष्ट लाभ के कारण अब त्रिभुवन में यज्ञादि कर्म चलते रहेंगे। हे दैव ! पिण्डोदक क्रियाओं के पुन: आविर्भाव के कारण हमारा दुख मिट गया"। १६० उसके बाद राक्षसवंश के विनाशक राम की यक्षों ने स्तुति की और कहा—"आपके द्वारा राक्षसराज (रावण) का वध हो जाने से हम सुरक्षित हो गये। हे पक्षीन्द्र (गरुड) वाहन ! हे पाप-विनाशन ! हे

पंक्ति कण्ठान्तकन् तन्ने निरामयं। अन्धनां रावणन् तन्नेभयप्पॆट्टु सन्ततं ञङ्ङळॊळिच्चु किटन्नतुं इन्नु तुटङ्ङित्तव चरितङ्ङळुं तन्नाय् स्तुतिच्चु पाटिक्कॊण्टनारतं सञ्चरिक्कामिनिक्कारुण्य वारिधे! निन् चरणांबुजं नित्यं नमोनमः। किन्नरन्मारुं पुकळ्न्नु तुटङ्ङिनार् मन्नवन् तन्ने मनोहरमां वण्णं— दुर्न्नय-मेरिय राक्षस राजनेक्कॊन्नु कळञ्ञुटन् ञङ्ङळे रक्षिच्च निन्नेभजिप्पानवकाशमुण्टायि वन्नतु निन्नुटे कारुण्य वैभवं। १७० पन्नग तल्पे वसिक्कुं भवत्पदं वन्दामहेवयं वन्दामहेवयं। किम्पुरुषन्मार् परम्पुरुषन् पदं संभाव्य भक्त्या पुकळ्न्नारति द्रुतं; कम्पितन्माराय् वयं भयं पूण्टॊळिच्चेन् पोट्टि! रावणनेन्नु केळ्क्कुन्नेरं अंबरमार्ग्गे नटक्कुमारिल्लिनि निन् पादपद्मं भजिक्काय् वरेणमे। सिद्धसमूहवुमप्पोळ् मनोरथं सिद्धिच्च मूलं पुकळ्त्तुटङ्ङिनार्— युद्धे दशग्रीवनेक्कॊन्नु ञङ्ङळ्क्कु चित्तभयं तीर्त्त कारुण्यवारिधे! रक्तारविन्दाभ पूण्ट भवल् पदं नित्यं नमोनमो नित्यं नमो नमः। विद्याधरन्मारुमत्यादरं

प्रभु! रक्षा करें। नित्य आपको नमस्कार है।" पंक्तिकंठ (रावण) का वध करनेवाले राम की निराकुल भाव से गन्धर्व वर्ग ने भी स्तुति की—"दुर्मद रावण से भयभीत हम निरन्तर छिपे रहे। हे कारुण्यमूर्ति! आज से आपके चरित गा-गाकर तथा नित्य आपकी स्तुति करते हम स्वच्छन्द घूमेंगे। आपके चरण-कमलों को नित्य नमस्कार है, नमस्कार है।" किन्नरों ने भी सुन्दर मधुरकंठ से महाराज (राम) की स्तुति की —"दुर्विनीत रावण का वध करके हमारी रक्षा करनेवाले आपकी सेवा एवं भजन करने का जो अवसर प्राप्त हुआ है, वह आपके करुणा-वैभव का ही प्रभाव है। १७० पन्नगतल्प (शेषनाग रूपी शय्या) पर विराजमान आपके चरणों की हम वन्दना करते हैं, हम वन्दना करते हैं।" फिर किंपुरुषों ने भी सम्भाव्य भक्ति लेकर परमपुरुष की तुरन्त स्तुति आरम्भ की—"हे प्रभु, रावण का नाम सुनते मात्र हम भय से कम्पित हो छिप जाते थे। आकाश-मार्ग से कभी जाते नहीं थे। अब आपके चरण-कमलों का भजन करने का अवसर प्राप्त रहे।" तब अपने मनोरथ (मन की कामना) की पूर्ति पर सिद्धों ने भी प्रशंसा की—"युद्ध में दशग्रीव का वध कर हमारे मन के भय को दूर करनेवाले हे करुणानिधि! रक्तारविन्द (लाल कमल) की आभा से युक्त आपके चरणों पर नित्य नमस्कार है, नित्य नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है।" विद्याधरों ने भी आकर

पूण्टु गद्यपद्यादिकळ् कोण्टु पुकळ्त्तिनार्— विद्वज्जनङ्ङळ्क्कु-मुळ्ळिलुत्तिरियाततत्त्वात्मने परमात्मनेते नमः। चारु रूपं तेटुमप्सरसां गणं चारणन्मारुरगन्मार् मरुत्तुकळ् १८० तुंबुरु नारद गुह्यक वृन्दवुमंबरचारिकळ् मट्टुळ्ळवर्कळुं स्पष्ट वर्णोद्यन्मधुर पदङ्ङळाल् तुष्ट्या कनक्कस्तुतिच्चोरनन्तरं रामचन्द्रानुग्रहेण समस्तरुं कामलाभेन निज निज मन्दिरं प्रापिच्चु तारक ब्रह्मवुं ध्यानिच्चु ताप त्रयवुमकन्नु वाणीटिनार्। सच्चिल् परब्रह्म पूर्णमात्मानन्दमच्युतमद्वय मेकमनामयं भावनया भगवल् पदांभोजवुं सेविच्चिरुन्नार् जगत्त्रयवासिकळ्। सिंहासनोपरि सीतया संयुतं सिंह पराक्रमं सूर्य्यं कोटिप्रभं सोदर वानर तापस राक्षस भूदेव वृन्द निषेव्यमाणं परं राममभिषेक तीर्थार्द्र विग्रहं श्यामळं कोमळं चामीकर प्रभं चन्द्रबिंबाननं चार्वायत भुजं चन्द्रिका मन्दहासोज्ज्वलं राघवं १९० ध्यानिप्पवर्क्क भीष्टास्पदं कण्टु कण्टानन्दमुळ्ळकोण्टिरुन्नितेल्लावरुं। १९१

भक्ति-समन्वित गद्य-पद्यों से प्रशंसा की—"विद्वान लोगों के मन के लिए भी अगम्य तत्वस्वरूप हे परमात्मा! आपको नमस्कार है।" चारुरूप (सुन्दर स्वरूप) से युक्त अप्सरस्, चारण, उरग (नाग) तथा मरुत् आदि—। १८० तुम्बरु, नारद, गुह्यकवृन्द तथा अन्य आकाशचारी लोगों ने स्पष्ट वर्णों एवं मधुर पदों में सन्तुष्ट चित्त हो रामकी खूब स्तुति की। उसके उपरान्त राम के अनुग्रह पाकर, अपनी कामना-तृप्ति करके सब अपने-अपने भवन चले गये। वे तारक ब्रह्म का निरन्तर ध्यान करते हुए तापत्रयों से मुक्त हो सानन्द रहने लगे। सच्चिद् परब्रह्म, परि-पूर्णानन्दमय, अच्युत, अद्वय, अनामय के चरणारविन्दों की भक्तिभावना से सेवा करते हुए त्रिभुवन के लोग सानन्द जीवन बिताने लगे। सिंहासन पर सीता समेत बैठे, सिंह पराक्रमी, करोड़ों सूर्य के समान प्रभा वाले, भ्राताओं, वानरों, तापसों, राक्षसों एवं भूदेव वृन्दों से परिसेवित तथा राज्याभिषेक के तीर्थ-जलों से आर्द्र, श्यामल, कोमल एवं चामीकरप्रभामय स्वरूप वाले, चन्द्रबिम्ब के समान आननयुक्त, सुन्दर एवं विशाल भुजाओं वाले चन्द्रिका-सम मन्द-शीतल मुस्कान से उज्ज्वल— १९० ध्यान करने-वालों को अभीष्ट फलदाता राम को देख-देखकर सब लोग आनन्दसागर में निमग्न होते गये। १९१

वानरादिकळ्क्कु भगवान् कौटुत्त अनुग्रहम्

विश्वंभरा परिपालनवुं चेय्तु विश्वनाथन् वसिच्चीटुं दशान्तरे सस्य सम्पूर्णयाय् वन्नितवनियुमुत्सव युक्तङ्ङळायी गृहङ्ङळुं। वृक्षङ्ङळेल्लामतिस्वादु संयुत पक्वङ्ङळोटु कलर्न्नु तिन्नीटुन्नु। दुर्गन्धपुष्पङ्ङळक्कालमूळियिल् सद्गन्ध युक्तङ्ङळाय् वन्नितीक्कवे। नूरायिरं तुरगङ्ङळ् पशुक्कळुं नूरु नूरायिरत्तिल्प्पुरं पिन्नेयुं मुप्पतु कोटि सुवर्ण भारङ्ङळुं सुब्राह्मणर्क्कु कौटुत्तु रघूत्तमन्। वस्त्राभरण माल्यङ्ङळ संख्यमाय् पृथ्वीसुरोत्तमन्मार्क्कु नल्कीटिनान्। स्वर्णरत्नोज्ज्वलं माल्यं महाप्रभं वर्ण वैचित्र्यमनर्घमनुपमं आदित्य पुत्रनु नल्किनानादरालातिदेयाधिप पुत्र तनयनुं अंगद द्वन्द्वं कौटुत्तोरनन्तरं मंगलापांगियां सीतय्क्कु नल्किनान् १० मेरुवुं लोकत्रयवुं कौटुक्किलुं पोरा विलयतिनङ्ङनेयुळ्ळोरु हारं कौटुत्ततु कण्टु वैदेहियुं पारं प्रसादिच्चु मन्दस्मितान्वितं। कण्ठदेशत्तिङ्कल् निन्नङ्ङेटुत्तिट्टु रण्टु कैकौण्टुं पिटिच्चु नोक्कीटिनाळ्— भर्तृ मुखाब्जवुं मारुति वक्त्रवुं मद्ध्ये मणिमयमाकिय हारवुं। इंगितज्ञन् पुरुषोत्तम-

---

वानर आदि को भगवान के आशीर्वाद

जब विश्वनाथ (संसार के स्वामी राम) विश्वंभरा-परिपालन (भू की रक्षा) में लगे थे, तब भूमि सस्यसम्पूर्ण हुई तथा प्रत्येक घर में त्योहार का सा आनन्द प्रकट होने लगा था। सारे वृक्ष अत्यन्त रसीले पक्व फलों से भर गये और सारे के सारे दुर्गन्ध-युक्त पुष्प सुगन्धमय हो उठे। श्रीराम जी ने सौ सहस्र घोड़े तथा उससे अधिक गौएँ और तीस करोड़ थालियाँ-भर स्वर्ण ब्राह्मणों को (दान में) दिये। वैसे ही ब्राह्मणों के लिए वस्त्र-आभूषण-मालाएँ आदि वस्तुएं प्रदान कीं। स्वर्ण-रत्न-जटित अत्यन्त प्रभायुक्त आश्चर्यकारी कांतिमय एवं अनुपम एक माला आदित्य-पुत्र (सुग्रीव) को अर्पित की तो इन्द्रपुत्र (बालि) के पुत्र अंगद को दो मालाएँ दीं। उसके बाद (हनुमान के लिए संकल्पित करके) सुन्दरी सीता को—। १० —सुमेरु तथा लोकत्रय देने पर भी जिसका मूल्य नहीं हो सकता, ऐसा एक अमूल्य हार दिया जिसे पाकर सीता मन्दस्मिति भरती हुई अत्यन्त प्रसन्न हो उठीं। सीता ने दोनों हाथों से उसे कण्ठदेश से उतार लिया और दोनों हाथ में लिए उसे संतोषभर कर एक बार खूब देख लिया। फिर सीता बार-बार स्वामी का मुख, हार, और हनुमान का

नन्नेरं मंगलदेवतयोट्टु चॊल्लीटिनान्— इक्कण्टवर्कळिलिष्ट-
नाकुन्नतारुळ्ळक्कमलत्तिल् निनक्कु मनोहरे ! नल्कीटवन्नु नी
मट़ारुमिल्लिनिन्नाकूत भंगं वरुत्तुवानोमले ! ऎन्नतु केट्ट्
चिरिच्चु वैदेहियुं मन्दंविळिच्चु हनुमानु नल्किनाळ् । हारवुं
पूण्टु विळङ्ङिनानेट़वुं मारुतियुं परमानन्द संयुतं । अञ्जलियोटु
तिरुमुम्पिल् निन्नीटुमञ्जना पुत्रनेक्कण्टु रघुवरन् २० मन्दमरिके
विळिच्चरुळ् चॆय्तितानन्द परवशनाय् मधुराक्षरं— मारुत नन्दन !
वेण्टुं वरत्तॆ नी वीरा ! वरिच्चु कॊळ्केतुं मटियातॆ । ऎन्नतु
केट्टु वन्दिच्चु कपीन्द्रनुं मन्नवन् तन्नोटपेक्षिच्चरुळिनान्— स्वामिन्
प्रभो ! निन्तिरुवटि तन्नुटॆ नामवुं चारु चरित्रवुमुळ्ळन्नाळ्
भूमियिल् वाळ्वानुग्रहिच्चीटणं रामनामं केट्टु कॊळ्वाननारतं ।
नाम जपस्मरण श्रवणङ्ङळिल् मामके मानसे तृप्तिवरा विभो !
मट्टुवरं मम वेण्टा दयानिधे ! मुट्टुमिळक्कमिल्लातॊरु भक्तियुं
उण्टायिरिक्केणमॆन्नतु केट्टॊरु पुण्डरीकाक्षननुग्रहं नल्किनान्—
मल्ककथयुळ्ळन्नाळ् मुक्तनाय् वाळ्क नी भक्तिकॊण्टेवरू ब्रह्मत्ववुं

पुरुषोत्तम (राम) ने तुरन्त मंगल स्वरूपिणी (सीता) से कहा कि "हे सुन्दरी ! इधर खड़े लोगों में से जो तुम्हारे लिये सबसे प्यारे हैं, तुम उन्हीं को (यह हार) दे दो, तुम्हारी अभिलाषा कोई भंग नहीं करेगा।" यह सुनकर वैदेही ने मुस्कराते हुए धीरे से हनुमान को बुलाकर (उन्हें) हार दे दिया। हार पहनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए हनुमान वहाँ खूब शोभित हो उठे। फिर हाथ जोड़ सम्मुख खड़े अंजनापुत्र को देखकर राम ने— । २० —धीरे से अपने निकट बुला लिया तथा आनन्दातिरेक से युक्त हो मधुरवाणी में कहा—"हे वायुपुत्र ! हे वीर ! तुम निस्संकोच मनपसन्द वर माँग लो।" यह सुनते ही कपिश्रेष्ठ ने प्रणाम करते हुए महाराज (राम) से प्रार्थना की—"हे स्वामी ! हे प्रभु ! जब तक आपका नाम तथा चरित रहेगा तब तक पृथ्वी पर रहने तथा निरन्तर राम-नाम सुनते रहने का अनुग्रह प्रदान करें। आपका नाम-जप, नाम-स्मरण और नाम-श्रवण करते हुए कभी तृप्ति न हो। हे दयानिधि ! मुझे दूसरा कोई वर नहीं चाहिए। साथ ही आप पर अटल भक्ति बनी रहे।" यह सुनकर प्रसन्न हो पुण्डरीकाक्ष (कमलनेत्र राम) ने अनुग्रह प्रदान किया—"हे मित्र ! जब तक मेरी कथा रहे तब तक तुम जीवन्मुक्त बन रहो और अटल भक्ति से तुम्हें ब्रह्मत्व भी प्राप्त होगा। जानकीदेवी ने स्वयं

सखे ! जानकी देवियुं भोगानुभूतिकळ् ताने वरिकेन्नुनुग्रहिच्ची टिनाळ् । ३० आनन्द बाष्प परीताक्षनायवन् वीणु नमस्कृत्य पिन्नेयुं पिन्नेयुं राम सीताज्ञया पारं पणिप्पेट्टु राम पादाब्जवुं चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु चेन्नु हिमालयं पुक्कु तपस्सिनाय्; पिन्ने गुहने विळिच्चु मनुवरन् । गच्छ सखे ! पुरं श्रृंगिवेरं भवान् मच्चरित्रङ्ङळुं चिन्तिच्चु वाळ्क नी । भोगङ्ङळेल्लां भुजिच्चु पुनरेक भावं भजिच्चीट्टुकॊन्नोट्टु नी । दिव्यांबराभरण-ङ्ङळेल्लां कॊट्टुत्तव्याज भक्तने यात्र वळङ्ङिनान् । प्रेम भारेण वियोग दुःखं कॊण्टु रामनालाश्लिष्टनाय गुहन् तदा गंगा नदी परिशोभितमायोरु श्रृंगिवेरं प्रवेशिच्चु मरुविनान् । मूल्यमिल्लात वस्त्राभरणङ्ङळुं माल्य कळभ हरिचन्दनादियुं पिन्नेयुं पिन्नेयुं वेण्टुवोळं नल्कि मन्नवन् गाढ गाढं पुणर्न्नादराल् ।४० मर्क्कट नायकन्मार्क्कुं कॊट्टुत्तु पोय् किष्किन्ध पूकेन्नयच्चरुळीटिनान् । सुग्रीवनुं वियोगेन दुःखं पूण्टु किष्किन्ध पुक्कु सुखिच्चु मरुविनान् । सीताजनकनायिट्टुं जनकने प्रीतियोटे परन्नाश्लेषवुं चेय्तु सीतयेक्कॊण्टु कॊटुप्पिच्चोरोतरं नूतन पट्टांबराभरणादियुं नल्कि

भोगानुभूति उत्पन्न होने का अनुग्रह भी दिया । ३० आनन्दातिरेक के कारण अश्रुस्निग्ध नयनों से उन्होंने बार-बार श्रीराम जी को नमस्कार किया । फिर अनिच्छापूर्वक ही सही, राम-सीता की आज्ञा लेकर तथा रामपादाब्जों को मन ही मन बसाये वे तपस्या के लिए हिमालय को चले गये । फिर मनुवर राम ने गुह को (पास) बुलाया (और कहा)–"हे मित्र ! आप श्रृंगिवेरपुर जाइए और वहाँ मेरे चरित्त का स्मरण करते वास कीजिए । सब प्रकार के भोग भोगते हुए एकात्मभाव से मेरा भजन करते रहिए ।" फिर दिव्य वस्त्र-आभूषण आदि देकर अव्याज (कपट रहित) भक्त को (राम ने) विदा किया । राम के प्रति असीम प्रेम से उत्पन्न वियोग दुख को मन में धारण किये गुह, जो राम का आश्लेष प्राप्त किए हुए थे, गंगा नदी से परिशोभित श्रृंगिवेरपुर में आकर बस गये । असंख्य परिमाण में अमूल्य वस्त्र, आभूषण, हार, सुगन्ध द्रव्य, हरिचन्दन आदि बार-बार देकर महाराज (राम) ने वानरों को आश्लेष किया । ४० उन्हें लेकर वानर लोग सुखपूर्वक किष्किन्धा को चले गये । सुग्रीव भी वियोग दुःख लिये किष्किधा में वापस आकर रहने लगा । सीता जी के जनक (पिता) महाराज जनक का खूब आश्लेष किया तथा सीता जी से कई प्रकार के रेशमी वस्त्र, आभूषण दिलवाये तथा दयामय भगवान ने

विदेह राज्यत्तिनु पोकॆन्नु पुलिकक्कनिवोटु यात्र वळङ्ङिनान् । काशिराजाविनु वस्त्राभरणङ्ङळाशयानन्दं वरुमारु नल्किनान् । पिन्ने मट्टुळ्ळ नृपन्मार्क्कुमोक्कवे मन्नवन् निर्म्मल भूषणाद्यङ्ङळु सम्मानपूर्वं कॊटुत्तयच्चीटिनान् सम्मोदमुळ्ळ्कॊण्टु पोयारवर्कळुं । नक्तञ्चरेन्द्रन् विभीषणनन्नेरं भक्त्या नमस्करिच्चान् चरणांबुजे । मित्रमाय् नी तुणच्चोरु मूलं मम शत्रुक्कळॆज्जयिच्चेनोरुजाति ञान् । ५० आचन्द्रतारकं लङ्कयिल् वाळ्क नी नाशमरिकळालुण्टाकयिल्लते । ऎन्ने मरन्नु पोकाते निरूपिच्चु पुण्यजनाधिपनाय् वसिच्चीटॆटो ! विष्णु लिंगत्तॆयुं पूजिच्चु नित्यवुं विष्णु परायणनाय् विशुद्धात्मना मुक्तनाय् वाणीटुकॆन्नु नियोगिच्चु मुक्ताफल मणि स्वर्ण्ण भारङ्ङळु आवोळवु कॊटुत्ताशु पोवानयच्चाविर्म्मुदा पुणर्न्नीटिनान् पिन्नेयुं । चित्ते वियोग दुःखं कॊण्टु कण्णुनीरत्यर्थमिट्टिटु वीणु वणङ्ङियु गद्गदवर्ण्णेन यात्रयु चॊल्लिनान् निर्ग्गमिच्चानोरु जाति विभीषणन् ; लङ्कयिल्च्चॆन्नु सुहृज्जनत्तोटुमातङ्कमॊऴिञ्ञु सुखिच्चु वाणीटिनान् । ५८

जनकपुर को जाने की अनुमति देकर उन्हें विदा कर दिया । काशीराज को तृप्तिभर आभूषण एवं वस्त्र प्रदान किये । फिर महाराज (राम) ने अन्य राजाओं को भी बहुविध आभूषण एवं वस्त्र भेंट किये । वे सब सानन्द वापस चले गये । तब राक्षसराज विभीषण ने राम के चरण-कमलों पर प्रणाम किया तो राम ने कहा–"मित्रतावश आपने जो उपकार किये, उनके कारण मैं किसी न किसी प्रकार से शत्रुओं पर विजय पा सका । ५० जब तक सूर्य-चन्द्र-तारे रहेंगे तब तक आप लंका में रहिए; शत्रुओं द्वारा आपका कभी नाश नहीं होगा । मुझे सदा स्मरण करते हुए आप राक्षसों के राजा बन नित्य रहिए । नित्य विष्णु-पूजा एवं विष्णु-ध्यान करते हुए विशुद्धात्मा एवं जीवन्मुक्त हो रहिए । यह उपदेश देकर ले जाने के लिए भूरि-भूरि मुक्ताफल, रत्न, स्वर्ण की थालियाँ, सब कुछ उपहार में दिए और प्रसन्नतापूर्वक बार-बार गले से लगाकर उन्हें जाने की अनुमति दी । वियोगजन्य दुख से पीड़ित हो अश्रुस्निग्ध नयनों को ले रामपादों पर पड़ प्रणाम करके बड़ी कठिनाई से गद्गद वाणी में विदा लेकर विभीषण वहाँ से निकले । वे लंका में पहुँच अपने मित्रों के साथ, सब प्रकार के दुखों से मुक्त एवं सुखी बन जीवन बिताने लगे । ५८

श्रीरामन्टे राज्यभार फलम्

जानकी देवियोटुं कूटि राघवनानन्दमुळ्ळवॊण्टु राज भोगान्वितं अश्वमेधादियां यागङ्ङळुं चॆय्तु विश्व पवित्रयां कीर्त्तियुं पॊङ्ङिच्चु । निश्शेष सौख्यं वरुत्ति प्रजकळक्कु विश्वमॆल्लां परिपालिच्चरुळिनान् । वैधव्य दुःखं वनितमार्क्किल्लॊरु व्याधिभयवुमॊरुत्तर्क्कुं मिल्लल्लो । सस्य परिपूर्णयल्लो धरित्रियुं दस्यु भयवुमॊरेटत्तु मिल्लल्लो । बालमरणमकप्पॆट्टु माऴिल्ल काले वरिषिक्कुमल्लो घनङ्ङळुं । राम पूजा परन्मार् नरन्मार् भुवि रामनॆध्यानिक्कुमेवरुं सन्ततं । वर्णाश्रमङ्ङळ् तनिक्कु तनिक्कुळ्ळ तॊन्नु मिळक्कं वरुत्तुकिल्लारुमे । ऎल्लावनुमुण्टनुकम्प मानसे नल्लतॊऴिञ्ञॊरु चिन्तयिल्लार्क्कुमे । नोक्कुमाऴिल्लारुमे परदारङ्ङळॊर्क्कयुमिल्ल परद्रव्यमारुमे । १० इन्द्रिय निग्रह मॆल्लावनु मुण्टु निन्दयुमिल्ल परस्परमार्क्कुमे । नन्दनन्मारॆप्पितावु रक्षिक्कुन्न वण्णं प्रजकळॆ रक्षिच्चु राघवन् । साकेतवासिकळाय जनङ्ङळ्क्कु लोकान्तर सुखमॆन्तॊन्नितिल् परं ? वैकुण्ठ लोक भोगत्तिनु तुल्यमाय् शोक मोहङ्ङळकन्नु मेवीटिनार् । १४

श्रीराम जी के राज्य-शासन का फल

श्रीराम जी ने सीता जी सहित राजभोगों का अनुभव करते हुए सानन्द अश्वमेध यज्ञ आदि किए तथा विश्व में निर्मल यश प्राप्त किये। प्रजाओं को विशेष सुख प्रदान करते हुए उन्होंने सारे विश्व की रक्षा की। राम के शासनकाल में न वनिताओं को कभी वैधव्य दुख हुआ, न किसी व्यक्ति को किसी प्रकार की व्याधि अनुभव हुई। पृथ्वी सस्य-श्यामल हो उठी; कहीं किसी प्रकार का दस्यु-भय नहीं रहा। कहीं अकाल मृत्यु का नाम तक सुनने में नहीं आया। मेघ कालानुकूल बरसते रहे। संसार के सारे लोग राम की पूजा में निरत रहे। सब लोग निरन्तर राम-ध्यान में तल्लीन थे। कोई अपने वर्णाश्रम धर्म का पालन करने से नहीं मुकरता था। सब परस्पर सहानुभूति-युक्त थे; कोई किसी का अनुचित सोच नहीं पाता था। न कोई भूलकर भी पर-स्त्री को देखा करता था, न पर-द्रव्य की कभी चिन्ता करता था। १० सब लोगों ने इन्द्रियों पर विजय पायी थी; कोई किसी की कभी निन्दा नहीं करता था। जैसे पिता अपने पुत्रों का पालन करता है, वैसे राम ने (निष्ठापूर्वक) प्रजा-पालन किया। अयोध्यावासी लोग स्वर्गलोक में भी इससे बढ़कर किस सुख की आशा रख सकते थे ? सारे लोग शोक, मोह छोड़कर वैकुण्ठ-लोक में उपलब्ध भोगों के समान श्रेष्ठ भोगों का अनुभव करते रहे। १४

रामायण माहात्म्यम्

अध्यात्म रामायणमिदमेंत्रयुमत्युत्तमोत्तमं मृत्युञ्जय प्रोक्तं अद्धयनं चेय्किल् मर्त्यनिज्जन्मना मुक्ति सिद्धिक्कुमतिनिल्ल संशयं। मैत्रीकरं धन धान्य वृद्धिप्रदं शत्रुविनाशनमारोग्य वर्द्धनं, दीर्घायुरर्त्थप्रदं पवित्रं परं सौख्यप्रदं सकलाभीष्ट साधकं। भक्त्या पठिक्किलुं चोल्किलुं तल्क्षणे मुक्तनायीटुं महापातकङ्ङळाल्। अर्त्थाभिलाषि लभिक्कुं महाधनं पुत्राभिलाषि सुपुत्रनेयुं तथा। सिद्धिक्कुमार्य्य जनङ्ङळाल् सम्मतं विद्याभिलाषि महाबुधनाय्वरुं। वन्ध्या युवति केट्टीटुकिल् नल्लोरु सन्ततियुण्टामवळ्क्केन्नु निर्ण्णयं। बद्धनायुळ्ळवन् मुक्तनाय् वन्नीटुमर्त्थार्त्थि केट्टीटिलर्त्थवानाय्वरुं। दुर्ग्गङ्ङळेल्लां जयिक्कायुवरुमति दुःखितन् केळ्क्किल् सुखियाय् वरुमवन्। १० भीतनितु केळ्क्किल् निर्भयनाय्वरुं व्याधितन् केळ्क्किलनातुरनाय् वरुं। भूत दैवात्मार्थमायुटनुण्टाकु माधिकळेल्लामकन्नुपों निर्ण्णयं। देव पितृगण तापस मुख्यन्मारेवरुमेट्

रामायण–माहात्म्य

मृत्युंजय (परमेश्वर) से प्रोक्त (कथित) यह अध्यात्मरामायण अत्युत्तम है। जो मनुष्य इसका अध्ययन करता है, उसे इसी जन्म में मुक्ति प्राप्त होगी, इस बात में कोई सन्देह नहीं है। यह अध्यात्मरामायण मित्र-लाभ प्रदान करनेवाली, धन-धान्य की वृद्धि करनेवाली, शत्रु का नाश करनेवाली, स्वास्थ्य को बढ़ानेवाली, दीर्घायु एवं धन प्रदान करनेवाली सुखदायक समस्त अभीष्टों को पूर्ण करनेवाली एवं पवित्र है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इसका पारायण करता है तथा इसकी कथा सुनता है, वह तुरन्त ही महापापों तक से मुक्त हो जाता है। जो धन की कांक्षा करता है, वह धन प्राप्त करता है, वह पुत्र-कांक्षी सुपुत्र को पाता है। ऐसा व्यक्ति आर्यजनों का आदर पाता है। विद्या चाहनेवाला महान विद्वान बनता है। जो वंध्या युवती यह रामायण सुन लेगी वह सुपुत्र को प्राप्त करेगी, यह निर्विवाद सत्य है। जो (माया में) आबद्ध है वह मुक्त होगा। अर्थार्थी (धन की आकांक्षा करनेवाले) को (राम-कथा) सुनने पर धन प्राप्त होगा। (रामायण सुननेवाला) सारे दुर्ग ज़ीत लेगा। दुखी व्यक्ति यह कथा सुनकर सुखी बनेगा। १० जो भयभीत व्यक्ति (रामायण) सुनेगा वह भयरहित बन जाएगा। व्याधियों से पीड़ित व्यक्ति अनातुर बनेगा। इससे निश्चय ही भौतिक, दैविक और आध्यात्मिक

प्रसादिक्कु मत्यरं । कल्मषमॆल्लामकलुमतेयल्ल धर्म्मार्त्थ काम मोक्षङ्ङळ् साधिच्चिटुं । अध्यात्म रामायणं परमेश्वरनद्रि सुतय्क्कुपदेशिच्चितादराल् नित्यवुं शुद्ध बुद्ध्या गुरु भक्ति पूण्टद्ध्ययनं चॆय्किलुं मुदा केळ्क्किलुं सिद्धिक्कुमॆल्लामभीष्ट मॆन्निङ्ङनॆ बद्धमोदं परमार्त्थमितोक्कवे । भक्त्या परञ्ञटङ्ङी किळिप्पैतलुं चित्तं तॆळिञ्ञु केट्टू महालोकरुं । १८

इत्यद्ध्यात्मरामायणे उमा महेश्वर संवादे

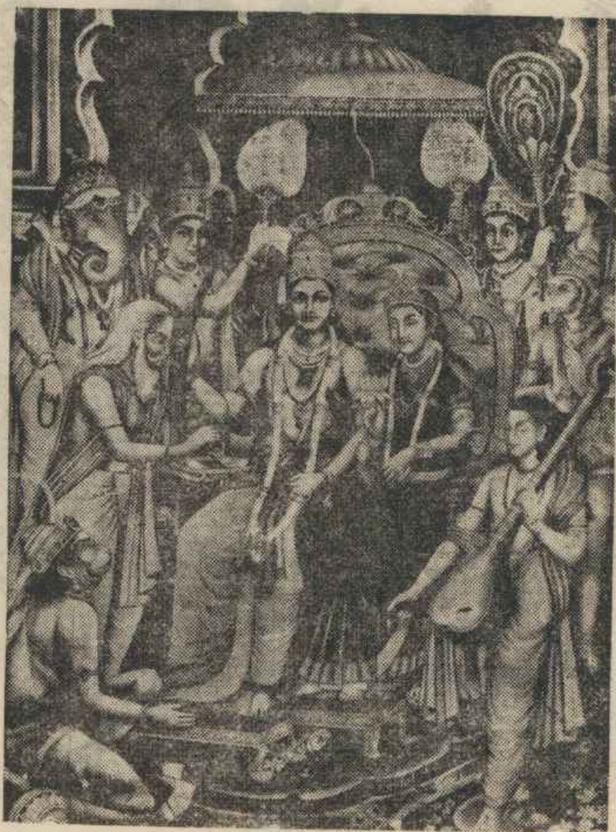
युद्धकाण्डं समाप्तं

सभी ताप मिट जाएँगे । देवगण, पितरगण तथा तापसगण सब अत्यन्त प्रसन्न होंगे । सारे कल्मष दूर होंगे ही, यही नहीं, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि भी होगी । साक्षात् परमेश्वर के द्वारा अद्रिसुता को सुनायी गयी यह अध्यात्म रामायण नित्य शुद्ध-बुद्धि एवं गुरु-भक्ति के साथ कोई सुने या पढ़े वह सब प्रकार के अपने अभीष्ट तुरन्त ही पूर्ण कर लेगा । यही सच्ची बात है । भक्तिपूर्वक यह कथा सुनाकर शुकबालिका मौन रही और संसार के श्रोता लोग परमानन्द-सागर में निमग्न हुए ।१८

इस प्रकार अध्यात्म रामायण में उमा-महेश्वर सम्वाद रूप

युद्धकाण्ड समाप्त

श्रीराम-पञ्चायतन





अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥

कवि तुञ्चत्तु एळुत्तच्छन्टे

उत्तर रामायणम्

किळिप्पाट्टु'

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

प्रथमाध्यायम् ।

अविघ्नमस्तु

श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! नारायणायनमो नारायणायनमो नारायणायनमो नारायणाय नमः । श्रीराम पाद भक्ति कौण्टु शुद्धात्मावाय शारिकप्पैतले ! ऩी चौल्लेंटो ! रामायणं । चौल्लुवनेंङ्किल् केट्टुकौळ्ळुवनेल्लावरुं ऩल्ल सल्क्कथयितु कल्याणप्रदमल्लो । उत्तररामायणं वाल्मीकि

कवि तुञ्चत्‌ एळुत्तच्छन्‌ कृत श्री उत्तर रामायण

शुकी-गीत'

॥ हरि : श्री गणपतये नमः ॥

प्रथम अध्याय ।

अविघ्नमस्तु

श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! श्रीराम ! राम ! राम ! नारायणाय नमो ! नारायणायनमो ! नारायणायनमो ! नारायणायनमः । (कवि मंगलाचरण के उपरान्त शुकी से आग्रह करता है) श्रीराम जी के चरणों के प्रति भक्ति के कारण शुद्धात्मा हे शुक बालिके ! तुम रामायण (के शेष भाग) की कथा सुना दो । (तब शुकी कहती है) ऐसी इच्छा है तो मैं (रामायण की कथा) बताती हूँ, सब लोग सुनें । यह सद्कथा (सुनने में) आनन्दप्रद तथा कल्याणदायिनी है । (पूर्व में) वाल्मीकि मुनि से

मुनिप्रोक्तं उत्तमोत्तममिदं मुक्तिसाधनं परं। रावणाद्यखिल रक्षोगणवधं चेय्तु देवकळालुमभिपूजितनाय रामन्, देवियुमनुजनुं वानरप्पटयुमाय् सेवकजनवुमाय् पुष्पकं करयेरि वेगमोटयोद्ध्य पुक्कभिषेकवुं चेय्तु लोकङ्ङळ् पतिन्नालुं पालिच्चु वाळुं कालं; नाना देशङ्ङळ् तोरुं वाणीटुं मुनिजनं मानव वीरन् तन्नेक्काण्मानाय् वन्तारल्लो। वासव दिक्किल् निन्नु वन्नितु कण्वादिकळ् कौशिकागस्त्यादिकळ् दक्षिणदिक्किल् निन्नुं; १० पश्चिम दिक्किल् निन्नु वन्नितु धौम्यादिकळ्, विश्वामित्रनुं जमदग्नियुं गौतमनुं अत्रि काश्यपन् भरद्वाजनुं वसिष्ठनुं उत्तर दिक्किल् निन्नु वन्नितौन्निच्चु तन्ने। द्वारपालकनोटु कुंभसंभवन् चोन्ना- नारण्यराय नङ्ङळ् वन्नतङ्ङरियिच्चु नेरत्तु वन्नीटु नीयेन्नतु केट्टन्नेरं द्वारपालनुं नरवीरनोटुणर्त्तिच्चान्— गोपुर द्वारत्तिङ्कल् पार्त्तु निन्नरुळुन्नु तापसप्रवरन्मारामगस्त्यादि जनं। पौरन्मारोटुमतु केट्टु राघवन् चेन्नु परातें कूट्टिक्कोण्टु पोन्नु तल् सभातले। आसन पाद्यार्घ्यादि कोण्टु पूजिच्चु वन्दिच्चादरपूर्वं मुनीन्द्राज्ञया यथासुखं

प्रोक्त यह उत्तर रामायण उत्तमोत्तम तथा मुक्ति का परम साधन है। रावण आदि समस्त राक्षसगण का वध करके देवताओं से अभिवंद्य श्रीरामजी देवी (सीता), भ्राता (लक्ष्मण), वानर सेना तथा सेवकजनों के साथ पुष्पक विमान में सवार हो तुरन्त ही अयोध्या में पहुँचकर राज्याभिषेक करके जब चौदहों भुवनों का परिपालन करते आ रहे थे, तब नाना देशों में निवास करने वाले मुनि जन मानव वीर (राम) के दर्शनार्थ पधारे। वासव दिशा (पूर्व दिशा—इन्द्र पूर्व दिशा के पालक माने गये हैं) से कण्व आदि (मुनि गण) आये और दक्षिण दिशा से अगस्त्य जैसे मुनि लोग पधारे। १० —पश्चिमी दिशा से धौम्य आदि आये तो उत्तरदिशा से विश्वामित्र, जमदग्नि, गौतम, अत्रि, काश्यप, भरद्वाज और वसिष्ठ एक साथ आ पहुँचे। सब ऋषि-मुनियों के आ उपस्थित होने पर कुम्भसम्भव (अगस्त्य) ने द्वारपाल को बताया कि तुम जाकर हम अरण्यवासियों के आगमन की (राम को) सूचना दे आओ। यह सुनते ही द्वारपाल ने नरवीर को जाकर सूचना दी—"अगस्त्य आदि तापस प्रवर लोग गोपुर द्वार पर (आपकी) प्रतीक्षा में खड़े हैं।" यह सुनकर राघव पौरजनों सहित बाहर आ उन्हें अपने सभामण्डप में ले चले तथा अर्घ्यपाद्यादियों के साथ उनकी विधिवत् पूजा एवं आदर-सम्मान करके उन्हें प्रसन्न करके आसनों पर बिठा दिया। फिर मुनिजनों की आज्ञा से यथासुख स्वयं

पार्त्थिवोत्तमन् परमासनं पुक्कशेषं आस्थया मुनिवर्ग्गत्तोटरुळ् चेय्तीटिनान्— सौख्यमो निङ्ङळ्क्केल्लामेन्नतु केट्टु लोक श्लाघ्यन्माराय मुनि श्रेष्ठन्माररुळ् चेय्तु— रक्षो जातिकळेयुं वधिच्चु लोकत्रयं रक्षिच्चु सीतादेवि तन्नोटुं कूटेब्भवान् २० सौख्यमाय् वाळुन्नतु काण्कयिल् ञङ्ङळ्क्कुण्टो सौख्यं मट्टितिल्परं मानवशिखामणे ! पिन्ने नी दशास्यनेक्कोन्नतु कोण्टु लोकं तन्नु तन्नेन्नु पुकळ्तुन्नतज्ञानमत्रे । सर्वलोकवुं जयिक्कामल्लो भवानिह केवलं दशास्यनेक्कोन्नतेन्तोरु चित्रं ? रक्षोनायक सुतनाकिय रावणियें लक्ष्मणन् कोलचेय्ततोर्क्किलेत्रयुं चित्रं ! कुंभसंभवनित्थमरुळ् चेय्त नेरं अंभोजाक्षनुं चिरिच्चप्पोळे चोद्यं चेय्तान्— रावणन् जगत्त्रय कण्टकनवनिलुं रावणि तन्ने प्रशंसिप्पतिनेन्तु मूलं ? ऊक्केरुं दशाननपुत्र विक्रममेल्लां केळ्क्कणमरुळिच्चेय्तीटामेन्नाकिलिप्पोळ् २७

आसन पर बैठकर पार्थिवोत्तम (मनुष्य श्रेष्ठ राम) ने बड़ी आस्था के साथ मुनिगण से प्रश्न किया—"आप लोग सुखी तो हैं ?" यह सुनकर लोकश्लाघ्य (संसार से पूजित एवं प्रशंसित) मुनि श्रेष्ठों ने कृपापूर्वक उत्तर दिया—"राक्षस जाति का वध कर त्रिभुवन की रक्षा करते हुए सीतादेवी सहित आपको— । २० —सुखपूर्वक देखकर हमें जो परमानन्द हो रहा है, हे मानव शिखामणि ! उससे बढ़कर क्या सुखानन्द हम चाहेंगे ? किन्तु आपके द्वारा रावण के वध को महान कार्य समझकर आपकी प्रशंसा करना संसार का मूढत्व है। चाहें तो सर्वलोकों पर विजय प्राप्त करने में समर्थ आपका केवल रावण पर विजय प्राप्त करना कौन सी बड़ी विस्मय की बात है ? हाँ राक्षसनायक (रावण) के पुत्र मेघनाद का लक्ष्मण द्वारा वध निश्चय ही आश्चर्यजनक है !" इस प्रकार कुम्भसम्भव के कहने पर अंभोजाक्ष (कमल लोचन राम) ने मुस्कान भरते हुए (मुनि से) प्रश्न किया—"रावण तो त्रिभुवनों के लिए कंटक तुल्य था। उसके रहते उसके पुत्र रावणी (मेघनाद) की प्रशंसा करने का क्या कारण है ? उदारतापूर्वक कह सुनायेंगे तो दशानन के पुत्र (इन्द्रजीत) के विक्रम एवं पराक्रम के सम्बन्ध में सुनने की इच्छा है।" २७

राक्षस कुलोत्पत्ति विवरणम्

ऐन्नतु केट्टनेरमगस्त्यनरुळ् चेय्तु मन्नव ! केट्टु कोळ्क
रावणवृत्तान्तङ्ङळ्। रावणनुटे तपोबलवुं शौर्यङ्ङळुं पूर्वराक्षस
कुलोत्पत्तियुमरियिक्कां। ब्रह्मनन्दननाय पुलस्त्य तपोधनन्
निर्म्मलन् महामेरुतन्नुटे पार्श्वत्तिङ्कल् चेन्नुटन् तृण बिन्दु
तन्नुटेयाश्रमत्तिलन्यूनमाय तपोनिष्ठया वाळुंकालं, तत्र चेन्नीटुं
चिल कन्यका जनङ्ङळुं चित्त कौतुकत्तोटु कळिप्पान् पलरुमाय्।
नित्यवुं कण्टु कण्टु पुलस्त्य तपोधननुळ्त्तारिलोर्त्तानिदमेत्रयुमुपद्रवं।
कन्यका जनमिनियिविटे वरुन्नाकिलन्नेयुण्टाकुं गर्भमेन्नोरु शापं
चेय्तान्। पिट्टेन्नाळ् कन्यकमार् चेन्नील कळिप्पानाय् मुट्टमत्तपोधनन्
तन्नुटे शापभयाल्। अक्कथयेतुमरियाते पोय् चेन्नीटिनाळ्
मुख्यनां तृणबिन्दु भूपतियुटे मकळ्। तन्नुटे सखिकळैयन्वेषिच्चच-
ङ्ङोटिङ्ङोटन्य नारिकळेक्काणाञ्ञवळ् पोयाळल्लो; १०
गर्भवुमुण्टाय् वन्नितप्पोळुततुमूलमुळ्प्पेटियोटु कूटेत्तात सन्निधौ

राक्षस-कुल की उत्पत्ति का वर्णन

(राम का आग्रह सुनकर) अगस्त्य ने कहा—"हे महाराज ! (इन्द्र-जीत के साहस एवं पराक्रम का हाल सुनने के पहले) रावण का वृत्तान्त कह सुनाऊँगा। मैं रावण का तपोबल, शौर्य, पूर्व में राक्षस-कुल की उत्पत्ति सब समझा दूंगा। ब्रह्मनन्दन पुलस्त्य जो निर्मल तपोधन हैं, सुमेरु पर्वत के पार्श्व में पहुंचकर वहाँ देखे तृणबिन्दु नामक महर्षि के आश्रम में प्रवेश कर जब दीर्घकालीन तपस्या में दत्तचित्त बैठे थे, तब कुछ कन्यकाएँ खेलते हुए कुतूहलवश वहाँ आया करती थीं। नित्य इन कन्यकाओं को देख-देखकर तपोधन पुलस्त्य ने इन्हें अपने लिए उपद्रव समझकर यह शाप दिया—"आगे कभी यहाँ कन्यकाएँ पैर रखेंगी तो उनका गर्भाधान होगा।" उस श्रेष्ठ तपोधन के शाप से भयभीत कन्यकाएं अगले दिन वहाँ खेलने नहीं पहुँचीं। किन्तु इस (शाप की) कथा से अनभिज्ञ महा-राज तृणबिन्दु की पुत्री (उस दिन भी) वहाँ आयी और अपनी सखियों की खोज में इधर-उधर भटकती रही और उन्हें न पाकर वह खिन्न भाव से वापस चली भी गयी। १० उस कारण वह गर्भवती बनी और फलतः मन ही मन भयाकुल हो वह अपने पिता के समीप आयी। पुत्री (के गर्भाधान) का वृत्तान्त जानते ही तुरन्त तृणबिन्दु अपनी पुत्री को लिए पुलस्त्य के आश्रम में पहुंचे। नरेन्द्र ने लोकेशात्मज (पुलस्त्य) के

चेन्नाळ्। पुत्रितन् वृत्तान्तङ्ङळरिञ्ञु तृणबिन्दु सत्वरं चेन्नु पुलस्त्याश्रमे मकळुमाय्; लोकेशात्मजपदं वन्दिच्चु नरेन्द्रनु आकांक्षयोटु चोदिच्चीटिनान् मनोगतं। त्वन्तिरुवटियुटे शापंकोण्टुण्टायोरु सन्तापं तीर्प्पानिनिमट्टारुमिल्लयल्लो। चिन्तिच्चालिनि मम पुत्रियें यथाविधि त्वन्तिरुवटि तन्ने कैक्कोळ्केन्नते वरू। अङ्ङने तन्नेयेन्नु पुलस्त्य मुनीन्द्रनुं अंगनारत्नत्तेयुं कैक्कोण्टान् वळिपोले। वेद विश्रवणेन गर्भमुण्टायमूलं जातनां कुमारनु विश्रवस्सेन्नु नामं १७

वैश्रवणन्टे उत्भवम्

अक्कालं भरद्वाजन् तन्नुटे पुत्रितन्ने विख्यात गुणवानां विश्रवस्सिनु नल्कि। विश्रवस्सिनु सुतनायवळ् पेट्टुण्टायि विश्रुत कीर्त्तियोटे वैश्रवणनुमन्नाळ्। दिव्य वत्सरं नाल्पत्तोन्पतिनायिर वुमव्याजं तपस्सु चेय्तान् निराहारनाये; दिक् पालत्ववुं निधीशत्ववुं कोटुत्तितु पुष्पक विमानवुमक्कालं विधातावुं। वरवुं विमानवुं वाङ्ङि वैश्रवणनुं त्वरितं जनकनेच्चेन्नु कैवणङ्ङिनान्। नन्दनाभ्युदयङ्ङळ् कण्टु विश्रवस्सुमानन्दमुळ्क्कोण्टु गाढाश्लेषवुं

चरणों पर प्रणाम किया और (मुनि ने) उत्कंठातुर हो (राजा का) मनोगत पूछा। (राजा ने बताया कि) आपके शाप से उत्पन्न (पुत्री के) संताप को दूर करने वाला अब दूसरा कोई नहीं रहा। चिन्ता करना व्यर्थ है। अब यथाविधि आप ही मेरी पुत्री का पाणिग्रहण कर लें।" पुलस्त्य मुनि ने "ऐसा ही हो" कहकर विधिवत् अंगनारत्न का पाणिग्रहण किया। वेद निश्रवण (आत्मज के शब्द-श्रवण) से गर्भाधान होने के कारण (उससे) उत्पन्न कुमार का विश्रवस् (विश्रवा) नाम पड़ा। १७

वैश्रवण का जन्म

उन दिनों भरद्वाज की पुत्री (इलिबिला) विख्यात गुणों से युक्त विश्रवस् को (विवाह में) दी गयी। तब उसके गर्भ से विश्रवस् के पुत्र विश्रुत कीर्तिशाली वैश्रवण का जन्म हुआ। उन्होंने उनचास सहस्र दिव्य संवत्सर तक निराहार कठिन एवं घोर तपस्या की। तब (प्रसन्न हो) विधाता (ब्रह्मा) ने उन्हें दिग्पाल तथा धन का अधिपति बनाया और पुष्पक विमान भी दिया। वर-प्रसाद तथा विमान पाकर सत्वर उन्होंने वापस आकर जनक (पिता) को प्रणाम किया। अपने पुत्र का अभ्युदय

चेय्तीटिनान् । अन्नेरं पिताविनोटर्त्थिच्चान् कुमारनुमित्तें-निक्किरिप्पतिनेविटेस्सुखमुळ्ळू ? त्तिन्तिरुवटियरुळ् चेय्यणमेन्नु केट्टु चिन्तिच्चु परञ्ञितु विश्रवस्सतु न्नेरं— विश्वकर्म्माविु निर्म्मिच्चीटिनानल्लो पुरा विश्वविस्मयकरमाकिय लङ्कापुरं; दक्षिणाब्धियिल् त्रिकूटाचलोपरि तत्र रक्षोवरन्माक्कुं वाणीट्टुवान् विचित्रमाय् । १० यातुधानन्मारेल्लामविटेस्सुखत्तोटे आधि-वेर्पेट्टु वसिच्चीटिनार् पलकालं । आदितेयन्मारेप्पीडिप्पि-च्चारतुमूलमादिनारायणनुमवरेक्कोल चेय्तान् । शेषिच्च निशाचरर् पाताळे चेन्नु पुक्कार् दोषङ्ङळ् नीक्कि तत्र वसिक्कां निनक्किप्पोळ् । अन्नतु केट्टु तातन् तन्नेयुं वणङ्ङिप्पोय् चेन्नति विचित्रमाय् निर्म्मिच्च राजधानि तन्निलाम्मारु सुखिच्चिरुन्नु वैश्रवणन् मन्नव ! केट्टालुमेन्नगस्त्यनरुळ् चेय्तु । रामचन्द्रनु-मप्पोळ् तोळुतु चोद्यं चेय्तान् मामुनिप्रवरनामगस्त्यनोटु मुदा । पुलस्त्य कुलोत्भवन्मार् निशाचररेन्नु पलक्कुं मतमते केट्टिट्टुळ्ळतु ञानुं । राक्षसरतिन् मुम्पेयुण्टाय प्रकारवुं सौख्यं पूण्टवरेल्लां लङ्कयिल् वाणवारु साक्षाल् श्रीनारायणनवरे वधिच्चतुमाख्यानं

देखकर प्रसन्न चित्त विश्रवस् ने उन्हें गाढाश्लेष किया। तब कुमार (वैश्रवण) ने पिता से प्रार्थना की कि मुझे सुखपूर्वक निवास करने का स्थान बता दें। यह सुनकर खूब सोच-विचार करने के उपरान्त विश्रवस् ने कहा—"विश्वकर्मा ने पहले राक्षस श्रेष्ठों के निवासार्थ दक्षिण समुद्र में त्रिकूटाचल पर विश्वमोहक एवं आश्चर्यजनक लंकापुर का निर्माण किया था। १० राक्षसों ने दुख भूलकर वहाँ बहुत समय तक सुखपूर्वक वास किया था। उन्होंने आदितेयों (देव लोग) को बहुत ही उत्पीड़ित किया, जिस कारण भगवान् श्रीनारायण ने उनका वध किया। बचे हुए राक्षस लोग (भयभीत हो) पाताललोक में चले गये। अब (उस पुरी का) पाप निराकरण करके तुम वहाँ रह सकते हो।" यह सुनकर पिताजी को प्रणाम करके वहाँ अपनी सुन्दर राजधानी बनाकर वैश्रवण सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे। अगस्त्य ने कहा—"हे महाराज ! आप यह कथा समझ लीजिए।" तब सानन्द श्रीरामचन्द्र जी ने हाथ जोड़ प्रणाम् करते हुए मुनि श्रेष्ठ से पूछा—"बहुतों का अभिमत है कि निशाचर लोग पुलस्त्य कुलजात हैं। मैंने भी ऐसा ही सुन रखा है। हे तपोधन ! आप मुझे यह बतादें कि उससे पहले राक्षस कैसे उत्पन्न हुए, वे किस प्रकार सुखपूर्वक लंका में निवास करते आये थे और साक्षात् श्रीनारायण

चेय्तीटणमेन्नोटु तपोनिधे ! अंभोज विलोचननिङ्ङने चोदिच्चप्पोळ् कुंभसंभवन् तेंळिञ्ञखिलमरियिच्चान् २०

राक्षस्सुकळुटेयुं यक्षन्मारुटेयुं उत्भवम्

अंभोजोत्भवन् तपश्शक्ति कोण्टादिकाले अंभसापुरं निर्म्मिच्चीटिनोरनन्तरं, सृष्टिच्चान् चिलरेयन्नेरत्तु तोंळुतवर् सृष्टिकर्त्ताविनोटु चोदिच्चार् ञङ्ङळ्क्केल्लां पैदाहादिकळ् तीर्प्पानेन्तु साधनमेन्तु, जातसंभ्रमत्तोटु चोदिच्चोरनन्तरं मन्दहासवुं पूण्टु यक्ष्यतामेन्नु चोन्नान् मन्दन्मारतु केट्टु रक्ष्यामो वयमेन्नार् । अन्नतिल् चिलरप्पोळ् यक्ष्यामो वयमेन्नार् अण्णोजासननप्पोळवरोटरुळ् चेय्तान्— एन्नोटु निङ्ङळित्थं चोन्नकारणत्तिनाल् रक्षोजातिकळ् निङ्ङळन्यन्मारेल्लामिनि यक्षन्मारेन्नुमरुळ् चेय्तितु रण्टु विधं । रक्षोजातिकळिल् वच्चुत्तमन्माराय् वन्नारक्कालं हेतियेन्नुं मट्टवन् प्रहेतियुं; ज्येष्ठ-नायुळ्ळ हेति कालन् तन् भगिनियें वेट्टितु गृहस्थ धर्म्मत्ते

ने उनका वध क्यों किया था ।" अंभोजविलोचन (कमललोचन राम) के इस प्रकार प्रश्न करने पर प्रसन्न हो कुंभोद्भव (अगस्त्य) ने सारा हाल कह सुनाया । २०

राक्षसों-यक्षों की उत्पत्ति

आदिकाल में अंभोजोद्भव (ब्रह्मा) ने अपनी तपःशक्ति के द्वारा जल से एक पुरी का निर्माण करने के उपरान्त (वहाँ निवास करने के लिए) कुछ लोगों की सृष्टि की । उन लोगों ने हाथ जोड़कर सृष्टिकर्ता से पूछा कि हमारी पैदाह शान्ति (भूख-प्यास का शमन) के लिए क्या साधन है ? अत्यन्त आतुर हो उनके द्वारा इस प्रकार पूछने पर मन्दहास के साथ (ब्रह्मा ने) कहा 'रक्ष्यतां' (भगवान से रक्षित हों) । यह सुन-कर उन मूढात्माओं में से कुछ लोगों ने 'रक्ष्यामः' कहा तो अन्यों ने 'यक्ष्यामः' का उच्चारण किया । तब (क्रुद्ध हो) अर्णोजासन (कमलासन ब्रह्मा) ने कहा—"तुम लोगों के इस प्रकार दुर्विनीत हो मुझसे बात करने के कारण तुम लोग रक्षोजाति (रक्ष्यामः बोलने वाले) और यक्ष जाति (यक्ष्यामः का उच्चारण करने वाले) इस प्रकार दो प्रकार के बनोगे । तब राक्षस जाति में प्रमुख हेति और प्रहेति नाम के दो भाई हुए । ज्येष्ठ भ्राता हेति ने गृहस्थ धर्म की रक्षा करने के लिए यमराज की बहिन से

रक्षिप्पानायि । ब्रह्मचर्यत्तोटिरुन्नीटिनान् प्रहेतियुं निर्म्मलनाय हेतियक्कुण्टायि तनयनुं । १० विद्युल् केशाख्यनवनेत्रयुं गुणवानायुद्योत शरीरनाय् वर्त्तिच्चीटिन कालं सुन्दरी सालकटं कटयान्नामं पूण्ट सन्ध्यानन्दन तन्नेक्कैक्कोण्टान् कुतूहलाल् । कन्दर्प्प विवशनाय् सन्ध्यानन्दनयोटुं नन्दिच्चु लोकङ्ङळिल् सञ्चरिच्चीटुं कालं मन्दरगिरि तटं प्रापिच्च नेरमोरु नन्दनन् तन्नेस्सन्ध्यापुत्रियुं प्रसविच्चाळ् । नन्दनन् तन्नेप्परित्यजिच्चु यथारुचि कन्दर्प्पलील पूण्टु पिन्नेयुं नटन्नु कोण्टार् । भूतले किटन्नति दारुण नादत्तोटुं रोदनं चेय्तानल्लो बालनुमतु नेरं । आकाश मार्ग्गे महादेवनुं देवियुमायेकान्ते सरभसमेळुन्नेळ्ळुम्पोळ् मुदा काणायि तेजस्सोटुं बालनेत्ताळेत्तव्र वन्यभूमियिल्क्किटक्कुन्नतु ताने तन्ने । कारुण्यं पूण्टु देवितन्नुटे वचनत्तालारण्य देशे कीळ्प्पोट्टिरङ्ङि महेशनुं । देवियुमेटुत्तु तन् मुलयुं कोटुत्तितु देवनुं प्रसादिच्चु वरवुं नल्कीटिनान् । मल्परिचारकनाय् वाळुकमेल् नाळेन्नु मुप्पुरवैरियोरु वरवुं नल्कीटिनान् । २० अप्रदेशान्ते नल्लोरालयमुण्टाय् वन्नितप्पोळे भविच्चितु यौवनं कुमारनुं । आत्म सन्तोषं कैक्कोण्टीश्वरी

विवाह किया । प्रहेति ने ब्रह्मचर्य का पालन किया । निर्मल स्वभाव के हेति का एक पुत्र हुआ । १० विद्युत्केश नाम का हेति का पुत्र अत्यन्त गुणी एवं दीप्तिमय शरीर वाला था । उसने सुन्दरी सालकटंकटया नाम की संध्यापुत्री से कौतूहलवश विवाह कर लिया और जब वह संध्या-पुत्री को साथ लिये कामातुर एवं मदमस्त हो लोकों में घूम रहा था, तब मन्दरगिरि की तराई में आने पर संध्या-पुत्री ने एक पुत्र को जन्म दिया । उस पुत्र को वहीं छोड़कर वे कन्दर्प लीलाओं में यथारुचि मग्न घूमते ही रहे । तब पृथ्वी पर पड़ा वह शिशु अत्यन्त दारुण रूप से क्रंदन करने लगा । तब आकाश मार्ग से महादेव तथा देवी पार्वती पधार रहे थे और उन्होंने नीचे वन प्रदेश में एकाँत पड़े उस शिशु सौन्दर्य को देखा । उसे देख करुणा-पूरित देवी (पार्वती) के कथन पर महादेव नीचे कानन प्रदेश में उतर पड़े और देवी ने उसे उठाकर अपना स्तन पान कराया । देव (महादेव) ने कृपापूर्वक उसे (अपना भक्त रहने का) वर प्रदान किया । २० तब उस वन प्रदेश में एक सुन्दर भवन बना और बालक तुरन्त ही यौवनयुक्त हो गया । (भगवद्कृपा से क्या नहीं होता !) महेश्वरी ने आत्म सन्तोष से प्रेरित हो उसे संतानयुक्त होने का आशीर्वाद दिया । स्वामी (महादेव) ने उसका सुकेश नामकरण किया और सारे

देवितानुमात्मजन्मारुमुण्टाय् वरिकॊन्ररुळ् चॆय्तु। नामवुं सुकेश-नॆन्ररुळिच्चॆय्तु नाथनामयं तीर्न्नु वणङ्ङीटिनान् सुकेशनुं। पुष्कर देशत्तिङ्कल् शिल्पमायुळ्ळपुरं पुक्कु सौख्येन वसिच्चीटिनान् सुकेशनुं। अन्तकान्तक भृत्यन् तन्महिमानं कण्टु गन्धर्व प्रवरनां ग्रामणियतु कालं तन्नुटॆ वेदवतियाकिय तनूजयॆ धन्यनां सुकेशनु कॊटुत्तान् मटियातॆ; चाल्यन्मारल्लातॆ कण्टुण्टायि सुकेशनु माल्यवान् सुमालियुं मालियुमॆन्नु मूवर्। पुत्रन्मार् महाबल विक्रम कीर्त्तियोटुं शक्तिपूण्टॊरुमिच्चु तपस्सु तुटङ्ङिनार्। मेरु सन्निधौ निराहारन्मारायि निन्नु वारिजोत्भवन् तन्नॆच्चिचन्तिच्चु चिरकालं निन्नतु कण्टु चतुर्म्मुखनुं प्रसादिच्चु चॆन्नवर् चॊन्नवरमॆल्लामे नल्कीटिनान्। ३० पुष्करोत्भवन् मरञ्ञीटिनोरनन्तरं रक्षो-वीरन्मार् तत्र तपस्सुं समर्प्पिच्चार्। लोकवासिकळेयुं पीडिप्-पिच्चवरॆल्लामाकुलमकन्नु वाणीटिनारतु कालं। विश्वकर्म्मावु तन्नॆ विळिच्चु चॊन्नारवर् विश्वविस्मयकरमाकिय पुरं भवान् निर्म्मिच्चु तन्नीटुक ञङ्ङळ्क्कॆन्नतु केट्टु निर्म्मलनाय विश्व-कर्म्मावुमुर चॆय्तान्— मुन्नं ञानमरेन्द्रन् तन्नुटॆ नियोगत्तालुन्नतमाय

दुःखों से निवृत्त सुकेश ने (उन्हें) प्रणाम किया। (देव-देवी के चले जाने पर) सुकेश पार्वतीश के भजन-कीर्तन में अनवरत तल्लीन हो वहीं निर्मित मणि मन्दिर में सुखपूर्वक रहने लगा। अन्तकान्तक (शिव) के भृत्य (सुकेश) की महिमा से प्रभावित हो ग्रामणी नामक गन्धर्व श्रेष्ठ ने सानंद उन दिनों धन्य सुकेश को अपनी तनूजा (पुत्री) वेदवती (विवाह में) दी। सुकेश के (वेदवती में) माल्यवान्, सुमाली और माली नाम के तीन प्रतापशाली एवं शक्तिशाली पुत्र हुए। तीनों महाबलशाली, पराक्रमी एवं सुकीर्त्तिशाली पुत्रों ने एक साथ (ब्रह्मा की) तपस्या आरम्भ की। मेरु पर्वत के समीप आहार-विहार रहित हो उन्होंने चिरकाल तक वारिजोद्भव (ब्रह्मा) की तपस्या की। यह देखकर सन्तुष्ट हो ब्रह्मा ने उनके समीप आकर उनके सभी अभीप्सित वर प्रदान किये। ३० पुष्क-रोद्भव (ब्रह्मा) के अदृश्य होते ही उन राक्षसों ने अपनी तपस्या बन्द कर दी और (मदमत्त उन राक्षसों ने) लोकवासियों को उत्पीड़ित करने का उपक्रम किया और स्वयं अनाकुल भाव से रहने लगे। उन्होंने विश्वकर्मा को बुलाकर आज्ञा दी कि हमारे लिए विश्वविस्मयकारी पुर का निर्माण कर दीजिए। निर्मलचित्त विश्वकर्मा ने बताया—"पहले मैंने अमरेन्द्र (इन्द्र) के आदेशानुसार दक्षिण सागर के मध्य में उन्नत त्रिकूटाचल

त्रिकूटाचलोपरि तीर्त्तेन् मुप्पतु कातद्वय विस्तृतमायिट्टति शिल्पमायोरु पुरं दक्षिणोदधि मद्ध्ये; लङ्कयॆन्नल्लो नाममविटॆयिरिक्क पोय् शङ्ककूटातॆ शत्रुपीडयुमुण्टाय्वरा। ऎन्नतु केट्टनेरं मूवरुमोरुमिच्चु चॆन्नु लङ्कयिल् वसिच्चीटिनार् सुखत्तोटॆ। नर्म्मदयाय गन्धर्वस्त्रीतन् मक्कळेयुं सम्मानिच्चववर्कुं नल्कीटिनाळतुकालं। उत्रमां नक्षत्रं कोण्टवरुं विवाहं चेय्तॆत्रयुमानन्दिच्चु वसिच्चारतुकालं। ४० सुन्दरियॆन्नु पेरां माल्यवानुटॆ पत्नि सुन्दरगात्रि पॆट्टिट्टुण्टायि पुत्रन्मारुं; मत्तनुमुन्मत्तनुं वज्रदंष्ट्रनुं पिन्ने सुप्तघ्नन् विरूपाक्षन् दुर्म्मुखन् यज्ञान्तकन् ऎन्निवरेळु पेक्कुं सोदरियायिट्टुण्टाय् वन्नितु कन्यकयुमनलयॆन्नु पेराय्। पिन्नेयस्सुमालितन् वल्लभ केतुमति तन्नुटॆ पुत्रन्माराय् पत्तुपेरुण्टाय् वन्नु, कन्यकमारुं नाल्वरुण्टायि सुमालिक्कुं मन्नव! चोल्लीटुवनवर्कळटॆ पेरुं। प्रहस्तन् विकटनुं धूम्राक्षनकम्पनन् महत्त्वमेरुं सुपार्श्वन् दण्डन् संह्लादियुं प्रजंघन् कालधनुस्सुं भास श्रवणनुं बलयुं पुष्पोल्कट कैकसी कुंभीनसी। सुखवुं मनसि वर्द्धिच्चितु सुमालिक्कुं तनयन्माराय् मालिक्कुण्टायि वसुधपे— ट्नलननिलनुं वरनुं सम्पातियुं। पुत्रन्मारोटुं पटयोटुमोन्निच्चु नटन्नॆत्रयुं पीडिप्पि-

---

पर साठ योजन विस्तारपूर्ण एक सुन्दर पुर बनाया था, जिसका लंका नाम है। आप वहीं पर जाकर निर्भय निवास कीजिए; वहाँ रहते शत्रुभय भी नहीं होगा।" यह सुनकर तीनों ने वहीं जाकर सुखपूर्वक अपना जीवन बिताना आरम्भ किया। उन दिनों नर्मदा नामक गन्धर्व नारी ने सम्मानपूर्वक उन्हें अपनी पुत्रियों को विवाह में दिया। उत्तरा नक्षत्र में विवाह करके उन्होंने अत्यन्त सुखपूर्वक जीवनयापन किया। ४० सुन्दरी नाम की माल्यवान की कोमलगात्री पत्नी ने मत्त, उन्मत्त, वज्रदंष्ट्र सुप्तघ्न, विरूपाक्ष, दुर्मुख, यज्ञान्तक नाम के सात पुत्रों को जन्म दिया। उन सातों की बहिन के रूप में अनला नाम की एक कन्या का भी जन्म हुआ। फिर सुमाली की पत्नी केतुमती के दस पुत्र तथा चार पुत्रियाँ हुईं। (अगस्त्य राम से कहते हैं) हे महाराज! मैं उनके नाम भी बताऊँगा। वे प्रहस्त, विकट, धूम्राक्ष, अकम्प, महान् सुपार्श्व, दंड, संह्लादि, प्रजंघ, कालधनुस, भासश्रवण (पुत्र); बला, पुष्पोत्कटा, कैकसी और कुंभीनसी (पुत्रियाँ) हैं। (पुत्र-पुत्रियाँ पाकर) सुमाली सुखी एवं आनन्दित हो उठा। माली के अपनी पत्नी वसुधा से अनल, अनिल, वर और सम्पाति नाम के चार पुत्र हुए। वे तीनों अपने पुत्रों तथा विशाल

च्चारवरुं जगत्त्रयं । ५० देव तापस गन्धर्वोरगन्मारुं परिवेदन-त्तोटुमौळिच्चीटिनार् गुहतोरुं । अक्कालं देवादिकळ् कैलास-त्तिङ्कल्च्चेन्नु दक्षारितन्नेस्तुतिच्चवस्थयरियिच्चार् । वृत्तान्तं केट्टशेषं मृत्युशासनन्तानुं उळ्त्तारिल् सुकेशनैयोर्त्तरुळ् चेय्तीटिनान्—कोल्लुन्तीलवरॆ ञानेङ्किलुं निङ्ङळोटु चोल्लुवानुपायमापत्तु तीर्त्तीटुवानाय्; चॆल्लुक निङ्ङळिनि क्षीरसागर तीरे चॊल्लुक मुकुन्दनोटुळ्ळ सङ्कटमॆल्लां । कल्याणमूर्ति तन्नॆ दुष्ट राक्षसरेयुं कॊल्लु मॆन्नरिञ्ञालुं निङ्ङळॆ रक्षिप्पानाय् । ॲन्नतु केट्टनेरं देवकळ् महेशनॆ वन्दिच्चु वेगेन पोय्पाल्क्कटल् तीरं पुक्कान् । भक्ति कैक्कॊण्टु तन्नाय् स्तुतिच्चु तुटङ्ङिनार् भक्तवत्सलनाय पत्मनाभनेत्तदा । नमस्ते ! नारायण ! मुकुन्द ! दयानिधे ! नमस्ते वासुदेव ! गोविन्द ! जगत्पते ! नमस्ते लोकेश्वर ! नमस्ते नरकारे ! रमिच्चिटणं चित्तं भवति रमापते ! ६० पुण्डरीकाक्ष ! जयपुरुषोत्तम ! जय चण्डिकापति हृदयावास ! जय जय । वेदान्तवेद्य ! जय वेदात्थीत्मक ! जय केशव !

सेना के साथ तीनों जगत को उत्पीड़ित करते रहे । ५० देव, तापस, गन्धर्व, उरग (नाग लोग) लोग उनके उत्पीड़न से भयातुर हो गुहाओं में जा छिप गये । उन दिनों देवों ने कैलास में पहुँचकर दक्षारि (शिव) की स्तुति करते हुए सारे समाचार सुना दिए । सारी हालत सुनने के उपरांत मृत्युशासन (शिव) ने अपने भक्त सुकेश का मन में स्मरण करते हुए (देवों से) कहा—"मैं उन्हें तो नहीं मारूँगा; किन्तु आप लोगों की विपत्ति दूर करने का मैं आप लोगों को उपाय सुझा दूँगा । आप लोग क्षीरसागर के तट पर पहुँचकर अपना संकट मुकुन्द को बता दीजिए; कल्याणस्वरूप मुकुन्द आपकी रक्षा करने के लिए दुष्ट राक्षसों का संहार करेंगे, यह आप निश्चित समझ लीजिए ।" यह सुनते ही देवता लोग शिव जी को प्रणाम करके तुरन्त ही क्षीरसागर के तट पर पहुंच गये और अत्यन्त भक्तिपूर्वक भक्तवत्सल पद्मनाभ (श्री विष्णु) की स्तुति करने लगे—"हे नारायण ! हे मुकुन्द ! हे दयानिधि ! आपको नमस्कार है । हे वासुदेव ! हे गोविन्द ! हे जगन्नाथ ! आपको नमस्कार है । हे समस्त लोकेश्वर आपको नमस्कार है ! हे नरकारि ! आपको नमस्कार है । हे रमापति ! हमारे मन में आपकी उत्कट भक्ति हो । ६० —हे पुण्डरी-काक्ष (कमललोचन) ! हे पुरुषोत्तम ! आपकी जय हो । हे चण्डिकापति-हृदयवासी (पार्वती देवी के पति शिव जी के हृदय में निवास करनेवाले) !

जयजय माधव ! जय जय। निर्ज्जरप्रवरन्मारीवण्णं स्तुतिच्चेट्- मर्त्तिच्चु वसिच्चळवखिल जगन्नाथन् योगनिद्रयुमुणर्न्नरुळिच्चेय्ती- टिनानागमिप्पतिनेन्तु कारणं निङ्ङळेल्लां; सन्तुष्टन्मारायेन्ने- स्सेविप्पान् वरिकयो ? सन्तापमेतानुमुण्टाकयो चोल्लीटुविन् । चिन्तितमेल्लामोक्केस्साधिप्पिच्चीटुवन् आनन्तरमेतुमिल्ल विबुध श्रेष्ठन्मारे ! अच्युतनेवमरुळ्चेय्ततु केट्टनेरं दुश्च्यवननुं तोळुत- खिलमग्रियिच्चान्। चन्द्रशेखर प्रियनाकिय सुकेशनु नन्दनन्माराय् मून्नु राक्षसरुण्टाय् वन्नु— माल्यवान् सुमालियुं मालियुमोरुमिच्चु बाल्यकालत्तु तपोनिष्ठया विरिञ्चने सन्तोषिप्पिच्चु वरं वाङ्ङिक्कोण्टवरिप्पोळ् सन्तापं जगत्त्रयत्तिङ्कलुं वळर्त्तुन्नु। ७० शङ्करन् सुकेशनिलुळ्ळ वात्सल्यं कोण्टु किङ्करोम्यहमिति चञ्चल मनस्कनाय् पङ्कजविलोचननोटुणर्त्तिय्क्कयेन्नाल् सङ्कटं तीक्कुं जगन्नाथनेन्नरुिञ्ञालुं। रक्षोवीरन्मारेयुं वधिच्चु जगत्त्रयं रक्षिक्कुं लक्ष्मीवरनेन्नरुळ् चेय्तु रुद्रन्। अङ्ङळुमतु केट्टु न्निन्तिरुवटियेक्कण्टिङ्ङु वन्नुणर्त्तिप्पानाय् विट कोण्टु नाथ ! मट्टोरु शरणमिल्लिज्जनत्तिनु पोट्टी ! मुट्टुं न्निन्तिरुवटियोळिञ्ञु

आपकी जय हो, जय हो, जय हो !" जब निर्जरप्रवर (देव-श्रेष्ठ) लोग इस प्रकार स्तुति-कीर्तन करने लगे, तब अखिल जगत् के स्वामी ने अपनी योगनिन्द्रा से उठकर सादर पूछा—"आप सबके आगमन का क्या कारण है ? क्या सन्तुष्टचित्त आप लोग मेरी सेवा के लिए उपस्थित हुए हैं ? या आप पर कोई संकट आ पड़ा है ? कृपापूर्वक आप लोग बता दें। हे विबुधश्रेष्ठ (देव प्रमुख) ! मैं आप लोगों का अभीष्ट पूरा कर दूँगा। मेरी यह प्रतिज्ञा अटल है।" इस प्रकार अच्युत के कहने पर दुश्च्यवन (इन्द्र) ने हाथ जोड़कर सारा हाल बता दिया—"चन्द्रशेखर (शिव जी) के प्रियपात्र सुकेश के तीन राक्षसपुत्र हुए हैं माल्यवान, सुमाली और माली। उन तीनों ने साथ-साथ बाल्यकाल में ही अपनी तपोनिष्ठा से विरञ्चि (ब्रह्मा) को सतुष्ट कर वर-प्रसाद प्राप्त किये, जिसके बल पर वे अब संसार में भारी उपद्रव मचा रहे हैं। ७० सुकेश के प्रति अपने वात्सल्य की बात सोचकर तथा उसे अपना दास समझकर शंकर जी (तीनों राक्षसों की हत्या करने से) अन्यमनस्क हो रहे हैं। उन्होंने हमें बताया है कि पंकजनेत्र (विष्णु जी) को अपना संकट सुना देने पर वे उसके लिए परिहार मार्ग ढूँढ़ लेंगे। रुद्र (शिव जी) ने बताया कि लक्ष्मीवर (महाविष्णु) राक्षस वीरों का संहार कर त्रिभुवन की रक्षा करेंगे।

दयानिधे ! इत्तरं देवगणमुणर्त्तिच्चतु ऩेरं चित्तकारुण्यत्तोटु मुकुन्दनरुळ् चेय्तु— रक्षोवीरन्मारेयुं वधिच्चु भवान्मारे रक्षिच्चीट्टवनतिनिल्ल संशयमेतुं । यातुधानन्मार् पीडिप्पिक्किलन्नेरमोरु दूतने नियोगिच्चालप्पोळे वरुवन् ञान् । ऎङ्किलो निङ्ङळ्ङ्ङु पोयालुमिनियेन्नु पङ्कजविलोचननरुळिच्चेय्त शेषं वन्दिच्चु देवकळुं पोय्च्चेन्नु निज निज मन्दिरं पुक्कु वसिच्चीटिनोरनन्तरं; ८० माल्यवाननुजन्मारोटुरचेय्तु निङ्ङळ् बाल्यं कोण्टुळ्ळ मदं कळञ्ञु केट्टीटुविन् । नम्मुटे दोषमेल्लां देवकळ् चेन्नु कण्टु मन्मथवैरियोटु सङ्कटमऱियिच्चु । अन्नेरं सुकेशनिलुळ्ळ वात्सल्यं कोण्टु पन्नग विभूषणनवरोटरुळ् चेय्तु : कोल्लुन्नीलवरे ञान् निङ्ङळ्क्कु तापं तीर्क्कान् चोल्लुवनुपायवुं खेदिक्कवेण्टा निङ्ङळ् । चेल्लुविन् पालाऴि पुक्कंबुजनेत्रनोटु चोल्लुविन् वृत्तान्तं ञान् चोन्नतुं चोल्लीटुविन् । कल्याणमूर्त्ति करुणाकरन् नारायणन् ऎल्ला जातियुं परिपालिक्कुं जगत्त्रयं । शङ्करवाक्यं केट्टु देवकळप्पोळे

हे नाथ ! उनका उपदेश ग्रहण कर हम आपको अपना दुखड़ा सुनाने के लिए यहाँ तक आये हैं । हे स्वामी ! इन दासों के लिए आप दयानिधि सर्वेश्वर के अतिरिक्त अन्य कहीं दूसरी शरण नहीं है ।" इस प्रकार देवगण के दुखड़ा रोने पर करुणामूर्ति मुकुन्द ने कहा—"राक्षस वीरों का वध करके मैं आप लोगों की रक्षा करूँगा । मेरी इस बात पर संदेह करने की आवश्यकता नहीं है । यातुधान (राक्षस) लोगों के उत्पीड़ित करते ही अगर कोई दूत भिजवा दें तो मैं तुरन्त (आपकी रक्षा के लिए) उपस्थित रहूँगा । अब आप लोग सादर चलिए ।" इस तरह पंकज-विलोचन (कमलनेत्र विष्णु) के आश्वासन देने के उपरांत नमस्कार एवं वन्दना करके देवगणों के अपने अपने भवनों में पहुँच निवास करने के बाद— । ८० माल्यवान ने अपने छोटे भाइयों से कहा—"तुम अपने बाल्य-सहज दर्प त्यागकर मेरी बात सुन लो । देव लोगों ने (कैलास में पहुँचकर) मन्मथ-वैरी (कामदेव के शत्रु शिव जी) से हमारे अपराध तथा अपना संकट कह सुनाया । तब सुकेश के प्रति अपने वात्सल्य के वशीभूत हो पन्नगविभूषण (शिव जी) ने उन्हें बताया कि मैं उन्हें नहीं मारूँगा; किन्तु आप लोग निराश न हों, मैं आपको रक्षा का उपाय बता देता हूँ । आप लोग क्षीरसागर में पहुँच अंबुजनेत्र के सामने अपना संकट सुना दें तथा मैंने जो कहा, वह भी उन्हें बता दीजिए; तब कल्याणमूर्ति एवं करुणाकर नारायण सब प्रकार से जगत्त्रय की रक्षा करेंगे । शंकर जी का उपदेश

पोय् सङ्कटं नारायणनोटवर् चॊल्लीटिनार्। पङ्कजनेत्रनु त्रिदशन्मारोटरुळ् चॆय्तु सङ्कटमॆल्लां तीर्प्पन् ञान् तन्ने सुरन्मारे ! देवकळतु केट्टु तॆळिञ्ञु मरुविनारावर्तॆन्तिनि नमुक्कॆन्तनु चिन्तिक्कणं। कॊण्टल्नेर्वर्णन् त्रिदशन्मार्क्कु वेण्टित्तन्ने पण्टु दैतेयन्मारॆ पलरॆक्कॊल चॆय्तान्। ९० नम्मॆयुं कॊल्लुमवनिल्ल संशयमॆन्ताल् नम्मुटॆ निलयॆन्तॆन्नोर्त्तु कल्पिक्केणं नां। सोदरन्मारोटित्थं माल्यवान् परञ्ञप्पोळ् मेदुरन्मारामनुजन्मारुमुर चॆय्तार्— आदि नारायणनिल्लेतुं दूषणमतिन्नादितेयन्मारत्रे साहसराकुन्नतुं; देवकळुटॆ गर्वमटक्कीटणमतिन्नावोळं वैकीटातॆ कूट्टेणं पटयिनि; पाताळत्तिङ्कल् वाळुमसुरेन्द्रन्मारॆयुं यातुधानन्मारॆयुमिप्पोळॆ वरुत्तेणं। दूतन्मार् चॆन्नु वरुत्तीटिनार् पटयॆल्लां आदितेयादिकळुमॊक्कॆ वन्नॊरुमिच्चार्। वारण वाजि रथ विहंग मृगजाल मेऱिनारायुधङ्ङळॆट्टुत्तु पिटिच्चवर् देवकळोटु समरत्तिन्नु पुऱप्पॆट्टारावोळं पिळच्चु काणायितु निमित्तङ्ङळ्। दुर्न्निमित्तङ्ङळॊन्नुमादरियातॆयवर् चॆन्नटुत्तितु सुरलोक गोपुर द्वारॆ। देवेन्द्रनतु कण्टु

लेकर वे (देवगण) तभी जाकर नारायण को सारा हाल बता चुके। तब पंकजनेत्र ने त्रिदश (देव) लोगों से सांत्वना भरे शब्दों में कहा— हे सुरगण ! मैं स्वयं आपको संकट से मुक्त कर दूंगा। तब से देव लोग आश्वस्त हो सप्रसन्न बैठे हैं। अब हमें यह सोचना चाहिए कि हम क्या करें। घनश्याम महाविष्णु ने पहले भी त्रिदशों (देवों) के लिए कई दैत्यों का वध कर डाला था। ९० अब वे निश्चय ही हमें भी मार डालेंगे। अतः हमें भी अपनी रक्षा का उपाय सोच लेना चाहिए।" जब माल्यवान ने अपने भाइयों से इस प्रकार कहा तब उन स्थूलकाय भाइयों ने उत्तर में कहा—"इस बात में आदिनारायण (विष्णु) का कुछ दोष नहीं है। आदितेय (देव) लोग ही (हमें मारने के लिए) साहस कर रहे हैं। अतः देवों का गर्व भंगकर डालना चाहिए और उसके लिए यथासंभव शीघ्र ही सेना एकत्र करनी होगी। पाताललोक-वासी असुरश्रेष्ठों तथा यातुधानों को अभी बुला लेना होगा।" (यह कहते मात्र ही) दूतों ने जाकर पूरी सेना बुला ली और देव लोग भी इधर-उधर से आकर जमा हुए। वारण (हाथी), वाजि (अश्व), रथ, विहंग (पक्षी), मृग (पशु), आदि पर सवार हो तथा नाना हथियार हाथ में उठाये राक्षस लोग देवों से भिड़ने निकल पड़े तो मार्ग पर कई अपशकुन दिखाई देने लगे। इन अपशकुनों पर ध्यान दिये बिना वे आगे बढ़कर सुरलोक के गोपुरद्वार के समीप आ

दूतनेंययच्चितु देवदेवेशनाय भगवानोट्टु चॊल्वान् । १००
देवदूतोक्ति केट्टु माधवन् तिरुवटि देवारिकळेयॊक्के निग्रहिप्पतिन्नायि वैनतेयन्मेलेरियायुधङ्ङळुमायि दानवन्मारोट्टु युद्धत्तिनु पोय नेरं रक्षोवीरन्मारॆल्लामट्टुत्तु युद्धं चॆय्तार् पक्षीन्द्र ध्वजनुमस्त्रावलि तूकीटिनान् । युद्ध वैदग्ध्यमिनिमेलिलुळ्ळॆटं चॊल्वानॆन्नयुं पणियॆन्नालॆन्नु पैङ्किळिमकळ् । १०४

द्वितीयाध्यायम् ।

अन्नवुं पालुं पळवुं तरुवन् ञानॆन्नोट्टु चॊल्लुक शेषं कथामृतं । ऎन्नतु केट्टु परञ्ञु किळिमकळ् इन्नुं चुरुक्किप्परयुन्नतुण्टु ञान् । मिन्नल् पोले शरजालं तॆरुतॆरॆच्चॆन्नु निशाचरन्मार् शरीरङ्ङळिल् कॊण्टु पुरप्पॆट्टु भूमियुं भेदिच्चु कुण्ठतकैविट्टु पुक्कितु पाताळं । आयुध वाहन भूषण जालङ्ङळ् सायक पंक्तिकळ् कॊण्टु नुरुङ्ङियुं, कैकाल् कळुत्तुकळटु निशाचरर् मेय्कळिल् निन्नुयिर् वेर्पॆट्टु वीळ्कयुं, युद्धाङ्कणवुं निरञ्ञु शरङ्ङळालॆन्नयुं चित्रमाय्

पहुँचे। यह देखकर देवेन्द्र ने देवदेवेश भगवान को (राक्षसों के आक्रमण) की खबर पहुँचाने के लिए तुरन्त दूत भेजा । १०० देवदूत का कथन सुनकर भगवान माधव देवों के शत्रुओं का दमन करने के लिए वैनतेय (गरुड़) पर सवार हो तथा आयुधों से युक्त हो दानवों से युद्ध करने के लिए पहुँचे तो सारे राक्षस पास आ उनसे लड़ने लगे। पक्षीन्द्रध्वज (महाविष्णु) ने बाण वर्षा की। 'आगे जो युद्ध-वैदग्ध्य दर्शाया गया, उसका वर्णन करना मेरे लिए दुष्कर है,' ऐसा कहते हुए शुकबालिका ने मौन साध लिया । १०४

द्वितीय अध्याय ।

(कवि शुकी से कहता है कि) मैं तुम्हें दाना, दूध-फल सब दूँगा, तुम शेष कथामृत सुना दो। यह सुनकर शुक-बालिका ने कहा कि मैं आज फिर (राम-कथा) संक्षेप में बताऊँगी। (वह आगे कहने लगी—) बिजली के समान तीव्रगति से शरजाल एक के बाद एक जाकर निशाचरों के शरीर को विद्ध करने लगे। वे शर उनके शरीर के आर-पार जाकर भूमि का भेदन कर सीधे पाताललोक की ओर गये। निशाचरों के आयुध, वाहन, आभूषण सब सायक (बाण) पंक्तियों से कटते गये। निशाचरों के हाथ-पाँव कटने, धड से सिर पृथक् होने और शरीर से प्राण छूटने लगे।

वन्नितु युद्धवुं। पङ्कजनेत्रनुमप्पोळटुत्तुटन् शंखं भयङ्करमाय् विळिच्चीटिनान्। दारुणमाकिय शंखध्वनि केट्टु पारिटमोन्नु कुलुङ्ङि गिरिकळुं; वारण वाजि निशाचर वीररुं पारं विरच्चु मोहिच्चु वीणीटिनार्। १० शंखध्वनि केट्टुमस्त्रङ्ङल् कोण्टुमातंकं कलर्न्नु निशाचर वीररुं मण्टियतीव भयत्तोटकन्नतु कण्टु सुमालि कोपिच्चटुत्तीटिनान्। अस्त्रावलिकळ् तूकीटिनानन्नेर- मेत्रयुं घोरमाय् वन्नितु युद्धवुं; कोलाहलत्तोटु कूटेत्तुटर्न्नुटन् मालियुमस्त्रशस्त्रङ्ङळ् तूकीटिनान्। चित्पुरुषन् पुरुषोत्तमनन्नेरं कैल्पेरेयुळ्ळ सुमालितन् सुतने कोन्नतु कण्टट्टुत्तीटिनान् मालियु- मन्नेरमाशु मुकुन्दन् तिरुवटि, तेरुं कळञ्ञु विल्लुं मुरिच्चीटिनान् पारतिल्च्चाटिनान् मालि गदयुमाय्। रूक्षतयोटु गरुडनेत्ता- डिच्चान् तार्क्ष्यन् तळर्न्नु चुळन्नु पऱन्नितु मालियुटे गळनाळमप्पोळ् वनमालि चक्रेण खण्डिच्चु कळञ्ञितु। तापस निर्ज्जर चारणरादिकळ् तापमकन्नु मुकुन्दने वाळ्त्तिनार्। २० आर्त्तिमुळ्ळुत्तु शरङ्ङळ् कोण्टेट्टवुं भीत्या निशाचररोटुन्नतु नेरं

समर-प्रांगण शर-वर्षा से पट गया और युद्ध ने भीषण एवं अद्भुत रूप अपनाया। तुरन्त पंकजनेत्र ने उनके समीप आकर भीषण घोष में एक बार अपना शंख बजाया। उस दारुण शंखध्वनि को सुनकर समस्त पृथ्वी तथा पर्वत एक बार कंपित हो उठे। वारण, वाजि और निशाचर लोग कंपित एवं विमूर्छित हो धराशायी हुए। १० शंखध्वनि तथा तीखे बाणों के प्रहार से निशाचर वीर आतंकित हुए। उन्हें अत्यन्त भयभीत हो इधर-उधर भागते देख क्रुद्ध हो सुमाली आगे बढ़ा। उसने अस्त्र-वर्षा करके भीषण युद्ध किया। तब खलबली मचाता हुआ माली भी आगे बढ़ बाण-वर्षा करने लगा। चित्पुरुष पुरुषोत्तम ने तुरन्त सुमाली के बली पुत्र का वध कर डाला, जिसे देखकर माली (पुरुषोत्तम के) समीप आ गया। भगवान मुकुन्द ने उसका रथ खंडित कर डाला और धनुष के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। माली गदा हाथ में लिए पृथ्वी पर कूद पड़ा और क्रोधातुर हो उसने गरुड़ पर गदा दे मारी, जिससे पीड़ित एवं शिथिल गरुड़ इधर-उधर उड़ने लगा। वनमाली (भगवान विष्णु) ने तुरन्त अपने सुदर्शन चक्र से माली का गला छेद डाला और तापसों, निर्जरों (देवों) और चारणों ने अपना दुःख विस्मृत कर मुकुन्द की भूरि-भूरि प्रशंसा की। २० निरन्तर बाण लगने से भयभीत हो पीठ दिखाकर भागते निशाचरों को देख भगवान ने उनका पीछा किया और बाणों से अनेक

पिम्पे तुटर्न्नुतस्त्रावलि तूकि वम्पुळ्ळ राक्षस वीररेयीक्कवे कोल्लुन्नतु कण्ट नेरत्तु माल्यवान् चोल्लिनानित्तोळ्ळिल् धर्म्ममल्लेतुमे। पेटि पेरुत्तु निरायुधन्मारुमायोटुन्नवरे वधिच्चालतुमूलं वन्नु कूटीटुं नरकमेन्नुळ्ळतुं निन्नुळ्ळिल्लयो ? धर्म्मज्ञनल्लो नी। अत्यर्त्थमुळ्ळ युद्ध श्रद्धतीर्प्पतिन्नत्रैव ञानिता मुन्निट्टु निल्क्कुन्नु। इत्थं पऱञ्ञोरु वेल् कोण्टु चाट्टिनानुत्तम पूरुष वक्षसि राक्षसन्। पुष्कराक्षन् वेल् पऱिच्चतिनेक्कोण्टु रक्षोवरन्माऱिलाशु चाट्टीटिनान्। वेलतु कोण्टु तळर्न्नाश्वसिच्चवन् शूलमेटुत्तु वेगेन चाट्टीटिनान्। पेट्टेन्नेटुत्तु पुरुषोत्तमोरसि मुष्टि चुरुट्टि प्रहरिच्चनन्तरं ३० पक्षिप्रवरनेयुं प्रहरिच्चोरु रक्षःप्रवरने वाळ्त्तिनारेवरुं। ताक्ष्र्यनुं तन्नुटे पक्षपुटङ्ङळाल् वायुक्कुन्न वायुवेगत्ताल् निशाचरं दूरेत्तेऱिप्पिच्चु वीळ्त्तनानन्नेरं पारिल्प्परन्नितु रक्तप्रवाहवुं। अग्रजन् वीणतु कण्टु सुमालियुं व्यग्रिच्चु शेषिच्च रक्षोगणवुमाय् वेगेन पोयानतुकण्टु माल्यवान् शोकेन सोदरन् तन्नोटु कूटवे। लङ्कयिल्च्चेन्नु दुःखिच्चु मरुविनान् पङ्कजलोचनन् पिन्नेयुं पिन्नेयुं नक्तञ्चरवररोटु पोर् चेय्तितु शक्तियिल्लेन्नु भयप्पेट्टवर्कळ्ळु

वीरों का वध किया तो माल्यवान ने यह देखकर (भगवान से) कहा कि यह कोई धर्म नहीं है। भयभीत हो तथा निरायुध हो भागनेवालों का वध करने से नरकभागी बन जाएँगे। क्या यह बात आप विस्मृत कर चुके हैं ? आप तो धर्मज्ञ हैं। आपके युद्धमद का शमन करने हेतु मैं तो यहां आपके सामने खड़ा हूँ। यह कह कर राक्षस ने उत्तमपुरुष की छाती पर एक शक्ति का प्रयोग किया तो पुष्करनेत्र (विष्णु) ने उसी को निकाल कर राक्षस वीरों पर प्रहार किया। उसके लगने से पीड़ित हो थोड़ी देर विश्राम लेने के उपरान्त माल्यवान ने भगवान की ओर शूल मारा और साथ ही छाती पर मुष्ठि प्रहार किया—। ३० —और पक्षिप्रवर (गरुड़) को भी आहत कर दिया तो उसकी वीरता की सभी ने प्रशंसा की। ताक्ष्र्य (गरुड़) ने अपने पक्षों से वायुवेग से उस पर प्रहार करके उसे दूर गिरा दिया तो उसके आहत शरीर का रक्त भूमि पर सब कहीं छा गया। अपने अग्रज (माली) को गिरते देख सुमाली बचे हुए राक्षस वीरों को लेकर भागा तो यह देख माल्यवान भी भाई का अनुसरण करता हुआ दुःखी हो लंका में आ बैठा। पंकजनेत्र (विष्णु) ने बार-बार राक्षसों से युद्ध करके उन्हें लंका में बैठना असह्य कर डाला तो भगवान से युद्ध करने के लिए अपने को दुर्बल पाकर वे पाताल में आ बैठे

चैन्तु पाताळवुं पुक्कु वसिच्चितु वन्नितु सौख्यं जगद्वासिकळ्क्कॆल्लां। इप्पोळ् दशमुखन् तन्ने वधिच्चतु चिल्पुमानाय नारायणन् नी तन्ने। इङ्ङनॆचैन्तु पाताळे निशाचरर् तङ्ङळ् तङ्ङळ्क्कुळ्ळ वल्लभ मारुमाय्। ४० सन्तुष्टराय् पलकालं वसिच्चितु चिन्तिच्चितेकदा तत्र सुमालियुं; ऎन्तोरु वृत्तान्तमुळ्ळू धरणियिल् बन्धुक्कळारानुमुण्टो नमुक्कॆन्नु अन्वेषणं चैय्तरियेणमॆन्नोर्त्तु तन्नुटॆ पुत्रियां कैकसि तन्नोटुं भूमण्डलं तन्निलेङ्ङुं नटन्नुटनामोदमार्न्निरुन्नीटुं दशान्तरे; सिद्ध देवाप्सरो गन्धर्व किन्नर प्रस्तुतनाकिय वैश्रवणन् तदा लङ्कयिल् निन्नु पुरप्पॆट्टु भूषणालङ्कारमोटु पिताविने वन्दिप्पान्। पुष्पकमेरि वेगेन पोकुन्नेरमत्भुतमाम्मारु कण्टु सुमालियुं। चैन्तु निजालये वाळुंविधौ मुदा चॊन्नान् मकळोटु सादरमन्नेरं—ऎन्नुटॆ पुत्रियायोरु निनक्किन्नु वन्नितु यौवनं बाल्यं कळिञ्ञितु। निन्नॆ विवाहं कळिप्पानुपायवुमॊन्नुमे कण्टील बन्धुक्कळायवर्। ५० आरुं परिग्रहिच्चीटुकयिल्लमे वैरिजनङ्ङळॆ शङ्किच्चतु मूलं। कल्याणवुं कळिञ्ञात्मानुरूपनां वल्लभन् तन्नोटु कूटॆ सुखिच्चु नी नित्यं वसिक्कुन्नताहन्त काणाञ्ञु चित्ते मुळ्ळुत्तोरु सन्तापमुण्टुमे।

और लोकवासियों का दुःख दूर हुआ। वे फिर से सुखपूर्वक रहने लगे। अब रावण का वध करके संसार की रक्षा करनेवाले वही चिद्पुरुष भगवान आप हैं। इस प्रकार अपनी-अपनी पत्नियों सहित पाताल में पहुँचकर वे राक्षस—। ४० बहुत समय तक सानंद रहे। तब वहाँ रहते हुए एक बार सुमाली ने सोचा कि पृथ्वी का क्या हाल है, यह जानना चाहिए तथा देखना चाहिए कि हमारे सगे-सम्बन्धी कोई वहाँ बचे हैं। यह सोचकर अपनी पुत्री कैकसी को लिये जब वह पृथ्वी पर सानन्द इधर-उधर घूम रहा था तब सिद्धों, देवों, अप्सरसों, गन्धर्वों, किन्नरों से स्तुत्य वैश्रवण आभूषणों से अलंकृत हो अपने पिता के दर्शनार्थ लंका से निकले और उन्हें पुष्पक विमान में सवार हो तीव्रगति से बढ़ते देख सुमाली विस्मित हो उठा। वहाँ से अपने वासस्थान पर आ सुख से रहते समय उसने अपनी पुत्री से कहा—"तुम बाल्यकाल को पीछे छोड़ तारुण्य में पदार्पण कर चुकी हो। अब तुम्हें विवाह में देने के लिए यहाँ कोई सगा-सम्बन्धी अब तक नहीं मिल पाया। ५० शत्रुओं के भय से हमारा कोई सम्बन्धी तुमसे विवाह करेगा, ऐसा नहीं लग रहा है। तुम्हारे अनुयोज्य पति के साथ विवाहित हो तुम्हें उसके साथ सुखपूर्वक नित्य रहते हुए देख न पाने के कारण मुझे

कण्टीलयो वैश्रवणन् पिताविनेक्कण्टु वन्दिप्पान् गमिक्कुन्नताशु नी?
उत्साहमुण्टु निनक्कींङ्किलीवण्णं तत्समनायीरुपुत्रनुण्टाय्वरुं।
पौलस्त्यनाकिय विश्रवसंमुनिं कालत्तु सेविक्क नीयिनि नन्दने!
त्रैलोक्य सम्मतनायीरुनन्दनन् पौलस्त्यपुत्रनायुण्टाय्वरुमेन्नाल्।
इत्थं सुमालि परञ्ञोरनन्तरं चित्तमोदेन तपोवनं प्रापिच्चाळ्। ५८

रावणादिकळुटे उत्भवम्

विश्रुतनाय पुलस्त्यतनयनां विश्रवस्सांमुनिमुख्यमुपासिच्चु, चित्त
शुद्ध्या पलनाळ् चेन्ननन्तरं नित्यकर्म्मं कळिप्पान् मुनिपुंगवन्
अस्तमय समयत्तिङ्कलेकदा भक्ति पूर्वं सन्ध्यावन्दनं चेय्युम्पोळ्
सन्तानमाशु देहीति देहीतियेन्नन्तर्मुदा वरिच्चीटिनाळ् कैकसि।
चिन्तिच्चु तापस श्रेष्ठनरुळ् चेय्तु हन्तकष्टं तव निर्बन्धमीदृशं।
दारुण मायीरु वेळयिप्पोळतु कारणमुण्टां प्रजकळुमेत्रयुं क्रूरमतिकळां
दुष्टरायेवरू घोरमायोरु सन्ध्यावेळ कारणाल्। अन्नतु केट्टु
परञ्ञितु कैकसि नन्नु नन्निन्नरुळ् चेय्युन्नतिङ्ङने। पुष्ट

मन में बड़ा दु:ख अनुभव हो रहा है। तुमने वैश्रवण को आज पिता जी का दर्शन कर प्रणाम करने जाते देखा है न? अगर तुम्हारी इच्छा हो तो तुम्हें उनके समान (भाग्यवान्) पुत्र प्राप्त होगा। हे पुत्री! पुलस्त्य-तनय मुनि वैश्रवस् की तुम अविलम्ब सेवा में लग जाओ। तब तुम्हें त्रिलोक में प्रसिद्ध एक पुत्र पौलस्त्य-तनय के रूप में प्राप्त करने का सौभाग्य मिलेगा।" इस प्रकार सुमाली का उपदेश पाते ही वह (कैकसी) मन ही मन प्रसन्न हो तपोवन की ओर (विश्रवस् की परिचर्या के लिए) चली गयी। ५८

रावण आदि का जन्म

विश्रुत पुलस्त्य के पुत्र मुनि विश्रवस् की वह (कैकसी) नित्य पूजा-सेवा करने लगी। शुद्धात्मना इस प्रकार कई दिनों तक मुनि की सेवा एवं भजन करने के उपरान्त एक दिन जब मुनिपुंगव संध्या समय भक्तिपूर्वक संध्या-वंदना में तल्लीन थे तब कैकसी ने (उनके समीप आकर) 'मुझे संतान दीजिए,' ऐसी याचना की। तापस-श्रेष्ठ ने खूब सोच-विचार करके बताया—"हाय! तुम्हारी ऐसी जिद कष्टदायक है। यह दारुण समय है (वर-दान का अनुकूल समय नहीं है।) तुम्हारे दुष्ट एवं क्रूरात्मा पुत्र ही होंगे।" यह सुनकर कैकसी ने कहा—"खेद है! आप

तपोबलमुळ्ळ भवान् तनिक्किष्टमायुण्टाय् वरुन्न तनयन्मार् दुष्टराय् वन्नालतु निन्तिरुवटिक्कोट्टुमे कीर्त्तिक्कु पोरा तपोनिधे ! १० ऎन्नतु केट्टरुळ् चेय्तु तपोधननिन्नितु केट्टु-कोळ्कुत्तमे कैकसि ! उण्टां निनक्कोटुक्कत्तोरु नन्दनन् कोण्टल्-वर्ण्णन्नुमतिप्रियनामवन् । दीर्घावलोकनमुळ्ळ गुणालयन् दीर्घायुष्मानाय् वरुमेन्नु निर्ण्णयं । इत्थमनुग्रहं नल्कि मुनीन्द्रनु बद्धमोदेन पोयाळवळ् कैकसि । गर्भवुं पूर्ण्णमाय् वन्नोरनन्तर-मर्भकन् तन्नेयुं पेटाळ् निशाचरि । पत्तु तलयुमिरुपतु कैकळुमेन्नयुं भीषणमाय् पिऱन्नानवन् । कोण्टल् निऱं पूण्ट नीलशैलम्पोले रण्टामतुमुटनुण्टायितन्यनुं । मून्नामतुण्टायतुमोरु राक्षसि चार्त्तु-चेर्त्तुळ्ळवरुं तोळिञ्ञीटिनार् । पिन्ने नालामतुण्टायानोरु पुमान् धन्यनाय् भागवतोत्तमनायेटो ! नामं दशमुखनुं कुंभकर्ण्णनुं श्रीमान् विभीषणनेन्नुं विळिच्चितु । २० तातनुं शूर्प्पणखेति भगिनिक्कु प्रीति पूण्टीटिनाळ् कैकसियुं तदा । मक्कळोटुं कूटि श्लेष्मातिकाटवि पुक्कु सुखेन वाणीटुं दशान्तरे । पुष्करमार्ग्गेण

ऐसी बात कर रहे हैं । हे तपोधन ! आप जैसे महातपोनिष्ठ मुनि के अभिमत से उत्पन्न संतानें अगर दुष्ट एवं क्रूर बनें, तो वह बात आप तपोधन की कीर्ति के अनुकूल कभी नहीं होगी ।" १० यह सुनकर तपोधन ने कहा—"हे कैकसी! तुम उत्तम शीला हो । तुम आज मेरा कथन सुनो । आखिर में तुम्हें एक ऐसा पुत्र पैदा होगा, जो घनश्याम (विष्णु-) प्रिय विवेकी, दूरदर्शी, गुणी एवं दीर्घायु होगा । यह सत्य बात है ।" मुनीन्द्र ने ऐसा आशीर्वाद दिया और कैकसी वर-प्रसाद लेकर प्रसन्न हो वापस चली गयी । गर्भ के पूर्ण होने पर उसने एक अर्भक (छौना) को जन्म दिया, जो अपने दस सिर और बीस भुजाओं सहित भीषण रूप में पैदा हुआ । तुरन्त दूसरा एक पुत्र भी पैदा हुआ जो मेघाच्छादित नील शैल के समान स्थूलकाय था । तीसरी एक पुत्री थी जो साक्षात् राक्षसी थी । फिर चौथा एक पुत्र हुआ जो महासात्विक, शान्त एवं भागवद् गुणों से युक्त था । पिता ने अपनी इच्छा के अनुसार पुत्रों के नाम दशमुख, कुंभकर्ण और श्रीमान विभीषण रखे । २० तीनों पुत्रों की भगिनी का शूर्पणखा नाम रखा । (संतानों को देखकर) कैकसी प्रसन्न हुई । कैकसी जब अपनी सन्तानों सहित श्लेष्मातिका वन में आ निवास कर रही थी तब एक दिन पुष्पक विमान में बैठ पुष्कर (आकाश) मार्ग से, दिशाओं को परिशोभित करते हुए राज-राज (राजाधिराज) वैश्रवण (कुबेर) को सानन्द

पुष्पकत्तिन्मेलेऱि दिक्कुकळॊक्कॆ विळङ्ङुमाऱङ्ङने राजितनाकिय तातनॆ वन्दिप्पान् राजराजन् मुदा पोकुन्नतु नेरं कण्टु चॊन्नाळ् मकन् तन्नोटु कैकसि कण्टो तवाग्रजन् पोकुन्न कॊप्पु नी । २५

रावणादिकळुटे तपस्सु

इन्नु निनक्कुमवनुमॊरुमुनि तन्ने पितावतुकॊण्टॆन्तु फलं ? ऎन्नु जननि पऱञ्ञतु केट्टुटन् चॊन्नान् दशमुखनम्मे! धरिक्क नी; इन्निवन् तन्निलुमेट्टमधिकनाय् वन्नुकूटुं ञानतिनिल्ल संशयं । ऎल्लां तपोबलं कॊण्टे मनोरथमॆल्लावनुं साध्यमाय् वरु निर्णयं । ऎन्नु कलिपच्चु सहोदरन्मारुमाय् चॆन्नु गोकर्ण्णं प्रवेशिच्चु मूवरुं । सारससंभवन् तन्नॆक्कुऱिच्चति घोरमायुळ्ळ तपस्सु तुटङ्ङिनार् । पञ्चद्वयानन् ग्रीष्मकालत्तिङ्कल् पञ्चाग्नि मद्ध्यस्थनायेकनिष्ठया शीतकालत्तिङ्कलाकण्ठमग्ननाय् मेदुर वृष्टि काले ननञ्ञु तदा । सूर्यबिंबे निज नेत्रमुऱप्पिच्चु धैर्येण कुंभकर्ण्णन् मरुवीटिनान् । ब्रह्मस्वरूपवुं ध्यानिच्चु सन्ततं निर्म्मलनाय विभीषणन् मेविनान् । १० अङ्ङनॆ चॆन्नु पतिनायिरत्ताण्टुमिङ्ङु विधाता-

---

अपने पिता की वंदना करने जाते हुए देखकर कैकसी ने अपने पुत्र (रावण) से कहा—"पुत्र ! तुमने अपने अग्रज को गम्भीर एवं दीप्तिमय स्वरूप को लिये जाते देखा ? २५

रावण आदि की तपस्या

(कैकसी आगे रावण से कह रही है कि) तुम्हारे और उनके (वैश्रवण के) एक ही पिता हैं, किन्तु उससे क्या हुआ ?" इस प्रकार जननी के कहते ही दशमुख ने कहा—"माँ ! तुम एक बात समझ लो; मैं आज उनसे भी आगे बढ़ जाऊँ, इसमें कोई संदेह नहीं है। यह निश्चित बात है कि तपोबल से ही सब का मनोरथ पूर्ण होता है।" यह कहकर अपने भ्राताओं को साथ लेकर, तीनों, गोकर्ण में पहुँच गये। उन्होंने सारससंभव को प्रसन्न करने के लिए उग्र तपस्या आरम्भ की। पंचद्वयानन (दशमुख) ग्रीष्मकाल में एकनिष्ठ हो पंचाग्नि मध्य में, शीतकाल में गले तक जल में तथा घोर वर्षाकाल में पूर्णतया भीगता हुआ तपस्या में तल्लीन रहा। कुंभकर्ण साहसपूर्वक सूर्य बिंब की ओर अपने नेत्र केन्द्रित कर तपस्या में तल्लीन रहा। निर्मल विभीषण ब्रह्मस्वरूप में ध्यान लगाये खड़ा रहा। १० इस प्रकार (घोर तपस्या करते) दस

विनेक्कण्टतिल्लल्लो। अन्नु दशानन् तन्टे तलकळिलोन्नरुत्तग्नि-यिलाहुतियाक्किनान्। आयिरत्ताण्टु पार्त्तीटिनानिङ्ङने नायकनाय विधाताविनेक्काणाञ्ञु वह्नियिलाहुति चेय्तानोरुतल पिन्नेयुमायिरत्ताण्टु पार्त्तीटिनान्। ओन्पतिनायिरत्ताण्टिलवन् तलयोन्पतुं होमिच्चु पार्त्तान् दशाननन्। १५

ब्रह्मावु रावणादिकळ्क्कु वरं कोटुक्कुन्नतु

पत्तोम्पतिनायिरत्ताण्टु चेन्नळवुत्तमांगं पिन्नेयोन्नुळ्ळतुमवन् खण्डिप्पतिन्नु वाळोङ्ङिय नेरमाखण्डलाद्यन्मारुमायब्ज संभवन् संभ्रमत्तोटु दशाननन् तन्नुटे मुम्पिलाम्माऱुळ्ळत्तळिळयरुळ् चेय्तु—वीर! मति मति साहसमिङ्ङने पोरुमभिमतं चोल्लु ञान् नल्कुवन्। ऎन्नरुळ् चेय्त विरिञ्चने वन्दिच्चु चोन्नान् दशमुखन् तन्नुटे वाञ्छितं। देवगन्धर्व सुरोरगाद्यन्मारिलेवरालुं ञानवध्यनायीटणं। ऎन्नु वेण्टा नरन्मारालोळिञ्ञॊनिक्कन्यराल् मृत्यु वरातेयिरिक्कणं। ऎल्लां निनक्कोत्तवण्णं वरिकेन्नु चोल्लिविरवोटु कुंभकर्णान्तिके चेन्नुवरं कोटुप्पान् तुटङ्ङुं विधौ नन्नायत्तोळुतपेक्षिच्चितु देवकळ् वृन्दारकानुचरन्मारेयम्पिनोटोन्निच्चु पत्तिनेत्तिन्नानोरुदिनं १०

हजार वर्ष प्रतीक्षा में बिताये। लेकिन ब्रह्मा प्रकट नहीं हुए तो उसने अपना एक सिर काटकर अग्नि को आहुति दी। फिर एक हजार वर्ष प्रतीक्षा करता रहा और दूसरा सिर भी होम किया। इस प्रकार नौ सहस्र वर्षों में अपने नौ मस्तकों का होम चढ़ाकर वह प्रतीक्षारत रहा। १५

ब्रह्मा द्वारा रावण आदि को वर देना

उन्नीस हजार वर्ष पूर्ण होते ही अपने बचे हुए मस्तक को होमार्पण के लिए काटने ज्यों ही उसने (रावण ने) तलवार उठायी तो एकाएक अब्ज संभव (ब्रह्मा) दशानन के सम्मुख प्रकट होकर बोले—"हे वीर! अपना साहस बस करो, बस करो। तुम अपना मनोरथ प्रकट करो, मैं उसे पूरा कर दूँगा।" ऐसा कहनेवाले विरिंच (ब्रह्मा) की उसने वंदना की और अपनी अभिलाषा व्यक्त की—"देव, गन्धर्व, असुर, नाग आदि किसी के द्वारा मेरा वध न होने पाए, यही नहीं नरों को छोड़कर अन्य किसी के हाथों मेरी मृत्यु न होने पाए।" तुम्हारी इच्छा सफल हो, ऐसा कहकर कुंभकर्ण के समीप आ वर देने का उपक्रम लेते ही देवों ने बार-बार हाथ जोड़ प्रार्थना की—"(बिना वर-प्रसाद के ही इसने) एक दिन सात देव-भृत्यों को उनके बाणों सहित खा लिया था।—१० —तथा

देवांगनमारिलेळु पेरॆत्तिन्तानावोळमोर्त्तु वेणं वरं नल्कुवान् । वानवर् वाक्कुकळ् केट्टु विरिञ्चनुं वाणी भगवतियोटरुळ् चॆय्तितु— कुंभकर्ण्णन् नाविनग्रे वसिच्चु नी संभ्रान्ति वाक्किनुण्टाक्किच्चमय्क्कणं । ऎन्न नेरं कुंभकर्ण्ण जिह्वास्थले चॆन्नु पुक्कीटिनाळ् वाणियुं तल्क्षणे । कुंभकर्ण्णन् तन्नोटन्नेरमादरालंभोज संभवन् तानुमरुळ् चॆय्तु— ऎन्तभीष्टं तव चॊल्कॆन्नतु केट्टु वन्दिच्चु कुंभकर्ण्णन् परञ्ञीटिनान्— निद्रात्वमाशु नल्केणमटियनु विद्रुतं मट्टॊन्नु वेण्टील दैवमे ! अङ्ङने तन्ने वरिकॆन्नरुळ् चॆय्तु मंगलात्मावां विभीषणन् तन्नुटे सन्निधौ चॆन्न नेरं भक्तिपूर्वकं संप्रीति पूण्टु नमस्करिच्चीटिनान् । भक्ति विश्वास गुणगणं काण्कयाल् पङ्कजसंभवनेवमरुळ् चॆय्तु— २० वेण्टुं वरं ञान् तरुवन् परक नी वेण्टा विषादवुमॊन्निनुं मानसे । सन्तुष्टनां निन्तिरुवटि तन्नॆयिन्नन्तिके काणायमूलमटियनु वन्नितु वेण्टुन्न तॊक्कवे केवलं वन्दे पदांबुजं पिन्नेयुं पिन्नेयुं । इन्नुमॊरुवरं नल्केणमादरालॆन्नुमे धर्म्मस्थिति पिळयाय्कयुं श्रीपाद भक्ति-

---

सात देवांगनाओं को खा लिया था । इसलिए भली-भाँति सोच-समझकर ही इसे वर देना चाहिए ।" देवों के वचन सुनकर ब्रह्मा जी ने वाणीदेवी (सरस्वती) से कहा—"कुंभकर्ण के जिह्वाग्र पर बैठकर आप उसके वचनों में विभ्रम पैदा कर दीजिए ।" यह सुनकर तत्क्षण ही वाणीदेवी जाकर कुंभकर्ण के जिह्वाग्र पर बैठ गयीं । तब अंभोजसंभव (ब्रह्मा जी) ने सानन्द कुंभकर्ण से कहा—"अपना अभीष्ट बता दो ।" यह सुनकर ब्रह्मा जी को प्रणाम करते हुए कुंभकर्ण ने कहा—"मुझ दास को तुरन्त निद्रात्व प्रदान कीजिएगा, हे भगवान ! मुझे अन्य कोई वस्तु नहीं चाहिए ।" 'ऐसा ही हो' कहकर ज्यों ही (ब्रह्मा जी) मंगलात्मा विभीषण के समीप पहुँचे, त्यों ही विभीषण ने भक्ति-विभोर हो सानन्द उन्हें नमस्कार किया । (उनके) भक्ति-विश्वास आदि गुण-गणों को देखकर पंकजसंभव इस प्रकार बोले— । २० —"(आप पूछ लें) मैं आपको इच्छित वर दूँगा । किसी भी प्रकार का मन में विषाद न होने पावे ।" (विभीषण ने कहा—) "सन्तुष्ट भगवान को आज नेत्र-सम्मुख देखकर यह दास अब पूरा अभीष्ट प्राप्त कर चुका है । यह दास पुनः पुनः आपके चरणों पर प्रणाम करता है । आज प्रसन्नचित्त हो एक और वर प्रदान कीजिएगा । कभी भी यह दास धर्मच्युत न होने पाये; श्रीचरणों के प्रति भक्ति अटल हो तथा पापकर्मों के प्रति विमुखता उत्पन्न

क्किळक्कमिल्लाय्कयुं पापकर्म्मङ्ङळिल् वैमुख्यभाववुं एवं भविप्पाननुग्रहं तल्कणं देवदेवेश ! नमस्कारमेप्पोळुं। ऎङ्किलनेक ताळ् जीविच्चिरिक्क ती सङ्कटमामूलमुण्टाय् वरातव। भागवतोत्तमनाय् धरामण्डले वाळ्क ती कल्पावसान कालत्तोळं। ऎन्तरुळ् चेय्तेळुन्तळ्ळि विरिञ्चनुं वन्नितु कुंभकर्ण्णनाशु निद्रयुं। सिद्ध सङ्कल्पन्मारायवर् मूवरुं बद्धमोदेन पोय् श्लेष्मातक वने ३० बन्धुक्कळोटुं जननियोटुं चेर्न्नु सन्तुष्टराय् वसिच्चीटुं दशान्तरे; वृत्तान्तमेल्लामरिञ्ञु सुमालि तन् पुत्रनोटुं कूटि वन्नानतु कालं तातनुं भ्राताक्कळुं तनयन्मारुमादरवेरिय बन्धुजनङ्ङळुं कूटेस्सुखिच्चु वसिच्चितु कैकसि गाढमोदेन तल्क्कालमोरुदिनं ३४

प्रहस्त दौत्यम्

चोन्नान् प्रहस्तनवस्थकळोक्कवे नन्नाय्च्चेवितन्नु केट्टालुमेङ्किलो। मुन्नमदितियुं पिन्ने दितियेन्नुं तन्विमार् काश्यपपत्निमाराय् वन्नार्। आदित्यन्मारुं तथैव दैत्यन्मारुं आदिकाले तनयन्मारुमुण्टायार्। लोकत्रयमटक्केणं नमुक्केन्नोराकांक्ष रण्टु

हो। हे देव देवेश ! यह (मेरी इच्छा) सफल होने का अनुग्रह कीजिए। सदा आप के चरणों पर प्रणाम है।" (ब्रह्मा जी ने आशीर्वाद दिया) "ऐसी इच्छा है तो आप दीर्घजीवी बनें तथा किसी भी प्रकार का दुःख होने न पाए। कल्पान्त तक भागवतोत्तम बन धरामण्डल में सुखपूर्वक रहें।" ऐसा अनुग्रह देकर ब्रह्मा जी चले गये। तुरन्त ही कुंभकर्ण निद्राविवश हुआ। तीनों सिद्धसंकल्प हो संतुष्ट भाव से श्लेष्मातक वन को चले गये। ३० (वहाँ आकर) सगे-सम्बन्धियों तथा जननी के साथ सानन्द रहते समय, समाचार से अवगत सुमाली अपने पुत्रों सहित (पाताल से) वहाँ आ पहुँचा। पिता, भ्राता, पुत्र तथा प्रिय बन्धुजनों के साथ कैकसी अत्यन्त सन्तुष्टचित्त हो सुख से रहने लगी। ३४

प्रहस्त का दौत्य

उन दिनों एक बार प्रहस्त (नामक राक्षस-प्रमुख) ने (रावण आदि से) आग्रह किया कि वे ध्यान से उसका कथन सुन लें। बहुत पहले की बात है; काश्यप की अदिति और दिति नाम की दो सुन्दरी पत्नियाँ थीं। उनके क्रमशः आदित्य (देव) तथा दैत्य (असुर) पुत्र हुए। दोनों के मन

जनङ्ङळ्क्कुमुण्टल्लो। तङ्ङळिल् वैरवुं वर्द्धिच्चतुकालं संगरमेत्रयुं घोरमायुण्टायि। देवकळ् पक्षत्तिल् निन्नु महाविष्णु देवारिकळे वधिच्चानतु कालं। शेषिच्चसुरकळ् नाकलोकेषु सन्तापिच्चिरिक्कुन्नितेन्नुमरिक नी। मुन्नं नमुक्कु कुलालय-मायतु विण्णोर् पुरिक्कोत्त लङ्कापुरमेटो! माल्यवान् तानुं सुमालियुं मालियुं बाल्यकाले वाणिरुन्नितु लङ्कयिल्। नारायणन-विटुन्नु कळञ्ञतु कारणं लङ्कयुपेक्षिच्चु पोयनाळ्। १० तातन् निज सुतनां वैश्रवणनु मोदालिरिप्पतिन्नाय्क्कोटुत्तीटिनान्। इक्कालमग्रजन् वाळुन्नु लङ्कयिल् इक्कथयोन्नुमरिञ्ञीलयो भवान्? इत्थं प्रहस्त वाक्यं केट्टनन्तरं सत्वरं चोल्लीटिनान् दशकन्धरन्—नी चेन्ननुसरिच्चाशु चोल्लीटणं आशरवंशालयं लङ्कयायतु। आचार मोर्त्तोळिच्चु तन्नीटणमाशु भवान् गुणवानल्लो केवलं। अन्नु नी चेन्नु चोन्नालतिनुत्तरं निन्नोटु चोल्लुन्नतुं केट्टुकोण्टुवा। इत्थं दशास्य वाक्यं केट्टनन्तरं सत्वरं पोयान् प्रहस्तनुमन्नेरं। किन्नरेशन् तन्नेक्कण्टु चोल्लीटिनानिन्नु तवानुजनाय दशाननन्

में त्रिभुवन को अपने अधीन करने की प्रबल इच्छा हुई। तब दोनों में पारस्परिक शत्रुता बढ़ी और दोनों में घोर युद्ध भी हुआ। देवों के पक्ष से महाविष्णु ने तुरन्त देवारियों (असुरों) का वध किया। अब बचे हुए असुरों को नाकलोक में भयभीत एवं संतापयुक्त बैठे जान लीजिए। देवालय तुल्य लंकापुरी पहले से हमारी वंश-परम्परा का वास स्थान रही है। माल्यवान, सुमाली और माली ने अपना बाल्यकाल लंकापुरी में ही व्यतीत किया था। जब नारायण (महाविष्णु) ने उन्हें। १० —वहाँ से भगा दिया तब वे लंका छोड़ चले गये। और आपके पिता (विश्रवस) को लंकापुरी निवास के लिए दे दी। आज आपका अग्रज (विश्रवापुत्र कुबेर) लंका में सुखी जीवन बिता रहा है; क्या आप कभी इसका भी ध्यान रखते हैं? इस प्रकार प्रहस्त के कहते ही तुरन्त दशानन ने कहा—"तुम्हीं जाकर एक बार शान्ति के साथ (वैश्रवण कुबेर को) बता दो कि लंका आशरवंश (राक्षसवंश) का निवास स्थान है। आप तो सात्विक स्वभाववाले हैं। कुल-मर्यादा का ध्यान रखते हुए आप तुरन्त लंका (हमारे लिए) छोड़ दें। यह कहने पर वह जो उत्तर देता है, उसे तुम सुन आओ।" दशानन के ये वचन सुनकर जल्दी ही प्रहस्त (लंका में) पहुँच गया और उसने किन्नरेश (वैश्रवण) से मिलकर कहा कि आज आपके भ्राता (रावण) के द्वारा मैं यहाँ भेजा

तन्नुटे चौल्लिनाल् वन्निरिप्पोळहं। पुण्यजनेश्वरनाय भवानोटु कण्णॅ परकेन्नु चौल्लिविट्टीटिनान्। २० नक्तञ्चरन्मार्क्कुं पण्टु पण्टेयुळ्ळ पत्तनमायतु लङ्कापुरमेंटो! इत्र नाळुं भवान् पालिच्चतुं पुनरेंत्रयुमेटं तॆळिञ्ञतॆल्लावर्क्कुं। इन्नुमीरुकालं मीळुकयिल्लवरॆन्नोर्त्तिरुन्नु पोकेण्ट गुणांबुधे! इत्थं प्रहस्तोक्ति केट्टु धनेशनुमुत्तरमायवन् तन्नोटु चौल्लिनान्— तातनॆनिक्किरिप्पानिविटं तन्नितेतुमतु कौण्टु वैषम्यमिल्ल केळ्। राक्षसन्मारॆल्लामुपेक्षिच्चु पोयितु सूक्षिप्पतिन्नारुमिल्लॆन्नतुं वन्नु। कालवुमोट्टु चेन्नोरु शेषं पिता पालनं चेय्कॆन्नॆनिक्कु तन्नीटिनान्। ऍन्नुटॆ सोदरनाय दशाननन् तन्नोटु कूटि वसिक्किलुमामेंटो! सौख्यमॆन्नालतु अङ्ङळ्क्किरुवर्क्कुं मार्क्कुमिल्लॆन्नाल् परिभवमारोटुं। नेरत्तु चेन्नु वरुत्तीटवनॆ नी चारत्तु काण्मानॆनिक्कुमुण्टाग्रहं। ३० ऍन्तु दशाननभावमॆन्नालतिङ्ङन्तिके वन्नु परयुन्नतुण्टु ञान्। ऍन्नु परञ्ञु नटन्नान् प्रहस्तनुं अन्नु तन्ने पुरप्पॆट्टान् धनेशनुं।

गया हूँ। उन्होंने पुण्यजनेश्वर (श्रेष्ठ पुण्यश्लोक) आप से कहने के लिए यह सन्देश देकर मुझे भेजा है—। २० —कि पहले से लंका रात्रिचरों की राजधानी रही है। आज सबको यह विदित हो चुका है कि अब तक आपने (अनधिकार रूप) से यहाँ शासन किया है। अब आगे कभी भी वे अपने अधिकार की माँग नहीं करेंगे, ऐसा समझने की कभी भूल मत कीजिए।" इस प्रकार के प्रहस्त के वचन सुनकर धनेश (वैश्रवण) ने उत्तर में बताया—"पिता जी ने मुझे निवास करने के लिए यही स्थान दिया था; किन्तु उससे कुछ मनमुटाव के लिए अवकाश नहीं रहा। राक्षस लोग (लंका) छोड़कर चले गये थे और तब इसकी देखभाल के लिए कोई नहीं रहा था। बहुत समय के बाद पिता जी ने इस देश के शासन एवं परिपालन का काम मुझे सौंपा था। मेरे भ्राता दशानन चाहें तो मेरे साथ रह सकते हैं। ऐसा करने से हम दोनों सुखी रहेंगे और किसी का परस्पर वैमनस्य भी नहीं रह पाएगा। आप तुरन्त जाकर उन्हें यथाकाल लिवा लाइए, उनसे मिलने की मेरी भी बड़ी इच्छा है। ३० 'दशानन का जो विचार होगा, वह यहाँ आकर मैं आपको सूचित करूँगा' ऐसा कहकर प्रहस्त निकल पड़ा; उसी दिन धनेश भी (पिता से मिलने) चल पड़े। पिता जी से मिलकर उन्होंने (रावण के) दूत का सन्देश सविस्तार कह सुनाया और प्रार्थना की कि आपही

तातनैक्कण्टु वन्दिच्चु दशानन दूत वाक्यङ्ङळशेषमऱियिच्चु।
चिन्तिच्चरुळ् चेय्क वेणमेनिक्किनि ऎन्तु तिलयेन्तु मट्टिल्लीराश्रयं। ३४

वैश्रवणन्ट्रे लङ्कापरित्यागम्

एवं धनदोक्ति केट्ट तेरं विश्रवस्सुं तनयनोटाशु चोल्लीटिनान्—
तल्लतल्लेतुमवन् दुष्टनेत्रयुं तल्लतु तीयिङ्ङु पोरिक वैकाते।
अर्थ कळत्रपुत्रादि जनत्तोटुमत्रेव सत्वरं वाङ्ङि वसिक्क ती;
सङ्कटमेतुं वराते दिनंप्रति शङ्कराज्ञाकरनायिरिक्कामेटो!
कैलास शैलान्तिके पुरवुं तीर्त्तु कालारि भक्तनाय् वाळ्क मेलिल्
भवान्। इत्थं जनक नियोगवुं कैक्कोण्टु पुत्रमित्रार्त्थ कळत्रादि-
कळोटुं लङ्कयिल् तिन्नुटन् वाङ्ङि धनेशनुं शङ्करन् तन्नेत्तपस्सु
तुटङ्ङिनान्। दक्षारियें प्रसादिप्पिच्चु सेवया सख्यवुं कैक्कोण्टु
सौख्यं कलन्नवन् पुक्कानळकापुरियिल् सुखत्तोटु विख्यातनाकिय
वैश्रवणन् तदा। अक्कालमाशु दशग्रीवनुं निज रक्षोवरनां
प्रहस्त वाक्यं केट्टु। १० कर्त्तव्यमेन्तेन्नु चिन्तिच्चिरिक्कवे
वृत्तान्तमाशु केळ्क्कायि सकलवुं। लङ्कयिल् तिन्नु वाङ्ङी

सोच-बिचार करके मुझे बता दें कि मुझे क्या करना होगा। मेरे लिए कोई दूसरा आश्रयस्थान नहीं रहा। ३४

वैश्रवण का लंका-परित्याग

इस प्रकार धनेश के वचन सुनकर तुरन्त ही विश्रवस् ने अपने पुत्र को बताया—"वह किसी भी प्रकार से सज्जन नहीं है; वह बड़ा दुष्ट है; तुम्हारे लिए यही उचित है कि तुम अविलम्ब यहीं चले आओ। अपने धन, कलत्र (भर्या), पुत्र आदि को साथ लिये तुम तुरन्त वहाँ से पृथक् हो यहीं बस जाओ। किसी भी प्रकार के संकट के बिना सदा शंकर का आज्ञानुवर्ती बनकर यहाँ रह सकोगे। तुम कैलास पर्वत के समीप अपनी नगरी बसाकर कालारि (शिव जी) के भक्त बनकर भावी जीवन (सुख-पूर्वक) बिताओ।" पिता जी का यह आदेश पाकर धनेश ने पुत्र, मित्र, कलत्र, आदि को साथ लिये लंकापुरी तुरन्त ही छोड़ दी और शंकर की तपस्या आरम्भ की। दक्षारि (शिव जी) को अपनी सेवा से प्रसन्न कर तथा उनके प्रिय पात्र बनकर विख्यात वैश्रवण सुखपूर्वक अलकापुरी में पहुँचे। उन्हीं दिनों जब दशानन अपने राक्षस-प्रमुख प्रहस्त के वचन सुनकर। १० —अपने भावी कर्तव्य की चिन्ता में बैठा था तब (वैश्रवण-सम्बन्धी) सारे बन्धु मित्रादियों को बुलाकर रावण ने मंत्रणा की कि धनेश

धनाधीश्वरन् किङ्करोम्यत्रैव ञानिनियेन्तॆल्लां बन्धुक्कळोटुं
विचारिच्च तेरत्तु चिन्तिच्चवरुं पऱञ्ञारनाकुलं— शङ्क
कैविट्टिनि राक्षसराजावु लङ्केशनेन्नभिषेकं कऴिक्कणं । मातामहनुं
सुतन्मारुमायिह मातावितोटुमवरजन्मारोटुं घोषिच्चु लङ्का-
पुरत्तिनाय्क्कोण्टु सन्तोषिच्चु वेगाल् नटन्नु तुटङ्ङिनार् ।
लङ्कयिल्च्चॆन्नभिषेकं कऴिच्चितु पङ्कजयोनिवरप्रसादत्तिनाल् ।
निद्रावशनामनुजनुऱक्कऱ चित्रमाय् तीर्त्तुकोटुत्तान् दशाननन् ।
अत्रयुं शक्तन् गुणाढ्यन् ममानुजन् निद्रावशनाय्च्चमञ्ञू विधिवशाल् ।
इप्रकारं निरूपिच्चु दशास्यनुमुळ्प्पूविलाधि मुऴुत्तु चमञ्ञितु । २०
मल्पापमॆन्तिवनिङ्ङनॆ वन्नतुमुल्पलसंभवन् तन्नोटुणर्त्तिक्कां ।
एवं निरूपिच्चु नान्मुखनॆच्चॆन्नु सेविच्चु सङ्कटमॆल्लामुणर्त्तिच्चान् ।
इप्पोळ् जगत्त्रय कर्त्तृत्ववुं विभो ! त्वल् प्रसादत्तालॆनिक्कु
लभिच्चितु, दुःखमॆन्नॆप्पिरियुन्नीलतु कोण्टु सौख्यमोरुनेर-
मॊन्निनुमिल्लमे। भ्रातवु निद्रावशगतनाकयाल् खेद परवशनायितु
ञानिह, तल् प्रबोधमोरु नेरमिल्लाय्कयाल् निष्फलमायितु

ने लंका छोड़ दी है और अब मुझे क्या करना होगा। तब उन लोगों ने खूब सोच-विचार करके अनाकुल भाव से सुझाया कि अब निश्चिन्त आपको राक्षसराज लंकेश के रूप में अपना अभिषेक कर लेना चाहिए। फिर अपने मातामह (नाना), सुत (पुत्र), माता, अवरज (छोटे भाई), सबको यह सूचना देकर और सब कहीं यह घोषित करके संतुष्ट हो रावण सबके साथ तुरन्त लंका की ओर चल पड़ा और लंका में पहुँच कर अभिषेक करवा लिया। पंकजयोनि (ब्रह्मा) के वर-प्रसाद से निद्रावश अपने भ्राता के लिए एक सुन्दर निद्रालय दशानन ने बनवाकर दिया। "मेरा अनुज अतीव शक्तिशाली, सर्वगुणसंपन्न है, किन्तु विधिवश् निद्रालस्ययुक्त हो गया", ऐसा सोचकर दशानन मन ही मन बड़ा खिन्न एवं दुःखी हो उठा। २० "उसने ऐसा कौन सा पाप किया कि उसे ऐसी निद्रा आ जाए। कुछ भी हो उत्पलसंभव (ब्रह्मा) से प्रार्थना करूँगा।" ऐसा सोचकर (सत्यलोक में पहुँचकर) चतुरानन (ब्रह्मा) की वंदना करके सारा हाल कह सुनाया—"हे विभु ! आपकी कृपा से मुझे त्रिभुवन का स्वामित्व प्राप्त हुआ; फिर भी दुःख मेरा पीछा नहीं छोड़ता। किसी कार्य में कभी मन नहीं लगता, सुख भी नहीं मिलता। अपने भ्राता के निद्रालस्य के कारण मैं अत्यन्त दुःखी एवं खिन्न हूँ। वह कभी भी एक क्षण भी सचेत नहीं, जिस कारण उसका जन्म ही व्यर्थ हुआ।" पंक्तिकण्ठ (रावण)

जन्मवुं केवलं । पंक्तिकण्ठोक्तिकळ् केट्ट विरिञ्चनुं चिन्तिच्चव-
नोटरुळ् चेय्तु सादरं— आरुमासं कळिञ्ञालोरुवासरं
वेऴायिरिक्कुमुऴक्कमवनिनि । मट्टेतुमावतिल्लेन्नरुळ् चेय्तु
तेट्टन्नविटे मऴञ्ञु विरिञ्चनुं । लोकत्रयोपद्रवं चेय्तु सन्ततमा-
खण्डलादिकळ्क्काधि मुळुत्तितु । ३० शङ्कारहितं दशानननिङ्ङने
लङ्कयिल् वाळुन्न नेरमोरुदिनं, शीघ्रं मृगया कुतूहल चेतसा
व्याघ्रादि सेवित घोर वनान्तरे, तन्वंगियायोरु कन्यक तन्नोटु
मुन्नतनां मयनेक्कण्टु चोदिच्चान् । आरायतु भवानेन्तोन्नु
चिन्तिच्चु घोराटवीतलं तन्निल् नटक्कुन्नु ? अेन्नतु केट्टु
पऴञ्ञानसुरनुं अेन्नुटे नामं मयनेन्नऱिञ्ञालुं । हेमयेन्नेन्नुटे
वल्लभयामवळ् आमोदमार्न्नमरालये मेविनाळ् । कन्यकया-
मिवळेन्नुटे पुत्रि केळ् वन्नितु यौवनारंभमिवळ्क्किप्पोळ् ।
आर्क्कु कोटुक्कावतेन्नु निरूपिच्चु योग्यपुरुषनेत्तेटि नटक्कुन्नु ।
ञानऱिञ्ञील भवानेयारेन्नतु सानन्दमेन्नोटु चोल्लुकयुं वेणं ।
अेङ्किलो केळ्क्क ञान् पौलस्त्यनन्दनन् लङ्केश्वरनां दशग्रीव-
नऱिञ्ञालुं; ४० कन्यक तन्नेयेनिक्कु नल्कीटणमेन्नाल् भवानु-

का कथन सुनकर ब्रह्मा ने सोच-विचार के उपरांत उससे कहा—"छः मास की नींद के उपरान्त केवल एक वासर (दिन) वह सचेत (जाग्रत) अवस्था में रहेगा। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है।" ऐसा कहकर ब्रह्मा तुरन्त वहीं अदृश्य हो गये। (वहाँ से आने के बाद) रावण निरंतर त्रिभुवन में उपद्रव मचाने लगा। समस्त लोकवासी उससे पीड़ित हुए। ३० जब रावण इस प्रकार निर्भय हो लंका में अधिवास करता आ रहा था, तब एक दिन मृगया के लिए व्याघ्रों से परिसेवित घोर वन में भटकते हुए उसने एक तन्वंगी (सुन्दरी) कन्यका सहित आते श्रेष्ठ मय को देखा और उससे पूछा—"आप कौन हैं? और किसलिए इस घोर वन में घूम रहे हैं?" यह सुनकर उस असुर ने कहा—"मेरा नाम मय जान लीजिए। हेमा नाम की मेरी पत्नी स्वर्ग में पहुँच सुखवास कर रही है। इस कन्यका को मेरी पुत्री जानिये; यह अब तारुण्य में पहुंच गयी है। इसे किसको (विवाह) में दूँ, इस चिन्ता में, इसके लिए योग्य वर की खोज में घूम रहा हूं। अच्छा! आपका मैंने परिचय नहीं पाया, कृपापूर्वक अपना परिचय मुझे दें।" (रावण ने कहा कि) "ऐसी इच्छा है तो सुनिये, मुझे पौलस्त्य-पुत्र लंकेश्वर दशानन समझ लीजिए। ४० आप यह कन्या मुझे दें, इससे आपका भी भला होगा।" रावण में

मतीव सौख्यं वरं । आभिजात्यादि गुणङ्ङळुण्टेन्नोर्त्तु शोभनमाय मुहूर्त्ते मयन् तदा । तुष्टि कलर्न्नु कोटुत्तानवनति दुष्टनायुळ्ळवनेतुमरियाते । स्त्रीधनवुं कोटुत्तान् विशेषिच्चति मोदालोरु वेलुमाशु नल्कीटिनान् । वैरोचनासुर दौहित्रि तन्नेयुं वीरनां कुंभकर्णन् विवाहं चेय्तु; शैलूषनाकिय गन्धर्व पुत्रियां नीलविलोचनयाय सरमये पाणिग्रहणं चेय्तु विभीषणन् वाणीटिनार् सुखत्तोटवर् मूवरुं । पिन्ने विद्युजिह्वनाशु नल्कीटिनान् तन्नुट सोदरि तन्ने दशास्यनुं, वन्नितु राक्षस वंश सौख्यं तुलोमन्नु मण्डोदरी पेट्टाळोरु सुतं; मेघनादं पोले रोदनं चेय्कयाल् मेघनिनादनेन्निट्टितु नामवुं । ५० पुत्रमित्रार्थं कळत्र भृत्यामात्य वृद्धियोटुं तत्र लङ्कानगरियिल् वाणीटिनान् दशवक्त्रन् दिनंप्रति वानवरेप्पीडिप्पिच्चुमति शठन् । पंक्तिमुखनुटे दुश्चरित्रङ्ङळ् केट्टन्तर्मनसि चिन्तिच्चु धनेशनुं; नल्लतु चोल्लेणमेल्लावरुं तनिक्कुळ्ळवरोटतु नल्लतु निर्ण्णयं । एन्नु कलिपच्चोरु दूतने विट्टितु चेन्नु नी चोल्लेणमेन्नुटे वाक्कुकळ् । अप्रकारङ्ङळेल्लां निज दूतनोटेप्पेरुमप्पोळ् परञ्ञयच्चीटिनान् । चेन्नु लङ्कापुरं

आभिजात्य गुणों को देखकर, और फलतः उसके दोषों, दुर्गुणों पर ध्यान दिये बिना, मय एक शुभ मुहूर्त में अपनी कन्या को रावण के हाथ में सौंप कर बहुत ही संतुष्ट हुआ । उसने भूरि स्त्रीधन (दहेज) और विशेष रूप से एक अमोघ शक्ति (रावण को) दी । असुर वैरोचन (विरोचन-कुमार) की दौहित्री (वज्रज्वाला) के साथ कुंभकर्ण का विवाह हुआ । गन्धर्वराज शैलूष की पुत्री नील विलोचना सरमा का विभीषण ने पाणिग्रहण किया । तीनों (विवाहित हो) सुखपूर्वक रहने लगे । फिर विद्युद्जिह्व ने दशानन को विवाह में अपनी भगिनी को दे दिया । इस प्रकार राक्षसवंश में सुख छा गया । मन्दोदरी (मय की पुत्री और रावण की पत्नी) ने एक पुत्र को जन्म दिया । मेघ-नाद का सा रुदन करने के कारण उसका मेघनाद नाम पड़ा । ५० पुत्र, मित्र, कलत्र, धन-धान्य, भृत्य, अमात्य आदि से युक्त हो ऐश्वर्यशाली किन्तु मूर्ख रावण प्रतिदिन देवों को उत्पीड़ित करता हुआ लंका में निवास करता आया । दशानन के इस दुश्चरित्र का हाल सुनकर धनेश चिंतित हो उठे । 'सगे-संबंधियों को सदुपदेश देना अवश्य ही उचित एवं उत्तम है' ऐसा विचार करके उन्होंने एक दूत को रावण के पास यह कहकर भेजा कि तुम जाकर रावण से मेरी बात बता दो । फिर उन्होंने रावण के लिए उचित संदेश देकर दूत को

पुक्किकतु दूतनुं वन्नु विभीषणन् सल्करिच्चीटिनान् । पिन्नॆद्दशमुखनॆच्चॆन्नु कण्टितु चॊन्नानवनुमिरिक्कॆन्नु सादरं; आसनवुं कॊटुत्ताशु पूजिच्चळवासीन भृत्यनप्पोळ्पर्ञ्ञीटिनान्— राक्षसराज ! जय जय सन्ततं दाक्षिण्यशील ! प्रभो ! गुणवारिधे ! ६० अग्रजन् तन्नुटॆ सन्देश वाक्कुकळ् सद्गुणराशे ! चॆवितन्नु केट्टालुं । उग्रमाय्च्चॆय्त तपस्सिन् फलङ्ङळुमॊक्कॆ क्षयिच्चुपों भोगङ्ङळालॆटो ! मुन्नं पलरुं तपोबलं कैक्कॊण्टु दुर्न्नयं पूण्टु लोकोपद्रवं चॆय्तार् । चॆन्नवरुं नरकं भुजिच्चीटिनार् चॆन्नीटुमो चिरकालमायुस्सॆटो ! देह धनादिकळ् नित्यमॆन्नोक्कुन्न देहिकळॆन्नयुं मूढन्मार् निर्ण्णयं । यौवनं कॊण्टुं वरबलं कॊण्टुं नी सर्वजनङ्ङळॆप्पीडिप्पिच्चालुटन् वन्नीटुमापत्तु मायुर् विनाशवुं नन्नाय् निरूपिच्चु कॊळ्क नी मानसे । वृन्दारकन्मारॆ द्वेषिच्चतुं बलाल् नन्दनोद्यानमळिच्चतुं केट्टु ञान् । ऎन्नयुं कश्मलन् वैश्रवणानुजन् उत्तमनल्ल दशानननॊट्टुमे, नाट्टारिवण्णं पर्युन्न वाक्कुकळ् केट्टालॆनिक्कु पॊरुक्करुतॊट्टुमे ।७० धर्म्मस्थिति पिळयाते शुभङ्ङळां कर्म्मङ्ङळुं चॆय्तिरुन्नु कॊळ्ळेणमे । पंक्तिमुखनॆ वधिच्चु कॊळ्वानुटनॆन्तु कळिवॆन्नु तङ्ङळिल्तङ्ङळिल्

भेज दिया। दूत लंकापुर में पहुँचा तो विभीषण ने उसका स्वागत-सत्कार किया। फिर जाकर दशमुख से मिला और उसने भी सानन्द बैठने का आग्रह किया। बैठने को आसन दिया तथा उसकी सेवा की। रावण के दिये आसन पर बैठकर दूत ने कहा—"हे राक्षसराज ! हे करुणामूर्त्ति ! हे प्रभु ! आपकी निरन्तर जय हो, जय हो। आप गुणवारिधि हैं। ६० हे सद्गुणी महाराज ! आप ध्यानपूर्वक अपने अग्रज (ज्येष्ठ-भ्राता) के संदेश सुनें। उग्र तपस्या से प्राप्त सारे ऐश्वर्य इस भोग-विलास में नष्ट हो जाएँगे। पहले भी कई लोगों ने तपोबल प्राप्त करके लोकोपद्रव किये थे। वे सब नरकभागी हुए हैं। क्या जीवन चिरकाल तक रहनेवाला है ? अपने यौवन तथा वर-बल के मद में उन्मत्त हो इस प्रकार सब लोगों को सताते रहोगे तो संकट में पड़ोगे तथा प्राणनाश भी होगा; यह बात तुम ध्यान में रखो। मैंने सुना कि तुमने देवों का विद्वेष मोल लिया है तथा नन्दनोद्यान उजाड़ दिया है। वैश्रवण का कनिष्ठ भ्राता दशानन कश्मल (गंदा) है, वह कोई सज्जन व्यक्ति नहीं, ऐसी बात सारे लोग कहते आ रहे हैं और ऐसी बात मैं सुन नहीं सकता। ७० तुम धर्म-अविरुद्ध शुभ कर्म करते रहो। पंक्तिमुख को मार डालने के लिए

मन्त्रं तुटङ्ङिनार् देवमुनीन्द्रन्मार् चिन्तिच्चु कोळ्ळुक नीयुमि-
तोक्कवे; ञानिङ्ङु शङ्कर सख्यवुं प्रापिच्चु दीनङ्ङळ्
तीर्त्तिरिक्कुन्नतरिक नी। एन्निवण्णं दूतवाक्यङ्ङळ् केट्टुटन्
तन्नुटे कैत्तेरिच्चट्टहासं चेय्तु चोन्नान् परिहास पूर्वकमेन्नयुं
नन्नुनन्नग्रजन् चोन्नतु केवलं; तानेत्रयुं धनवान् गुणवानेन्नुं
ञानति कश्मलन् दुष्टनेन्नुमिह चोन्नतुपपन्नमिल्लोरु संशयं
तन्नुटे नन्मकोण्टो पोरुक्कामल्लो। आशापतित्ववुं गुह्यकेशत्ववुमीश
सखित्वं निधीशत्ववुं तथा किन्नरेशत्ववुं यक्षाधिपत्यवुं पुण्य-
जनत्ववुं मट्टुमीवण्णवुं, ८० नाना प्रभुत्वङ्ङळुळ्ळव चिन्तिच्चु-
मानिच्चु तन्ने मट्टुळ्ळोरे निन्दिच्चु कोट्टयिलुळ्प्पुक्किरुन्नु
कोळ्केन्नतुं काट्टिक्कोट्टुक्कुन्नतुण्टु ञान् वैकाते। क्रोधेन
वाळुमेट्टुत्तु दशाननन् दूतने वेट्टि नुरुक्कियिट्टीटिनान्। दूतने-
क्कोन्नतु मूलमिनियोरु दूतनाल् वन्नीटुमापत्तु निर्णयं।
मुम्पिनालग्रजन् तन्नेज्जयिक्कणं उम्परेप्पिन्नेज्जयिक्कामितेन्नुटन्।
वन्पटयोटुं पुरप्पेट्टितन्नेरं वन्पनायीटुं दशास्यन् महाबलन्।

क्या उपाय है ? —ऐसा देव-मुनि लोग परस्पर मंत्रणा करते आ रहे हैं। तुम यह बात समझ लो। मैं यहाँ शंकर जी की कृपा का पात्र बनकर सुख से जीवन यापन कर रहा हूँ।" इस प्रकार के दूत-वचन सुनकर दशानन ने हाथ मलकर अट्टहास किया तथा अत्यन्त परिहास के साथ बताया—"अग्रज का सन्देश अच्छा है ! अच्छा है ! वह तो धनी है, गुणी है और मैं कश्मल एवं दुष्ट ! उसका कथन बहुत ही उपयुक्त है ! वह अपनी महत्ता लेकर रहे। उसके लिए अपनी ही योग्यता पर्याप्त है ! अपने आशापतित्व (दिक्पालकत्व), गुह्यकेशत्व (गुह्यक जाति का स्वामित्व), ईश-सखित्व (महेश्वर की मित्रता), निधीशत्व (कुबेरत्व) किन्नरेशत्व, यक्षाधिपत्य, पुण्यजनत्व तथा अन्य प्रकार के—। ८० —नाना प्रभुत्व की कल्पना में अपनी प्रशंसा तथा पर-निन्दा करते उसके दुर्गपति बन बैठने का मैं तुरन्त ही मजा चखाऊँगा।" तुरन्त ही क्रोधाकुल दशानन ने तलवार से दूत के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। (कवि का कथन है) दूत की हत्या के फलस्वरूप एक अन्य दूत से उसे भी निश्चय ही संकट में पड़ना होगा। अब पहले अग्रज को जीतना होगा और उसके उपरान्त देवों को जीता जाएगा; ऐसा सोचकर अपनी विशाल सेना सहित महाबली एवं उग्र प्रतापी रावण चल पड़ा। भृगु आदि को दान-दक्षिणा प्रदान करके तथा देवताओं की प्रीति हेतु नाना कर्म पूरा करके दिग्विजय के लिए

भृग्वादिकळक्कु दानङ्ङळुटन् चेय्तु दिग्जयमाय मुहूर्त्तवुमोर्त्तुटन्
देवता प्रीतियुं चेय्तु सन्नद्धनाय् देवताराति महारथमेरिनान् ।
उत्तरदिक्कु नोक्कि प्रथमं महाप्रस्थानवुं दशवक्त्रन् तुटङ्ङिनान् ।
मारीचनोटु शुक सारणन्मारुं वीरन् महोदरनुं महापार्श्वनुं, ९०
वन्पनां धूम्राक्षनुमिवरारुपेर् मुम्पिल् नटक्क पेरुम्पटयोटुटन्;
चेन्नळकापुरि कण्टणयुन्नेरं निन्न धनेश दूतन्मारतु कण्टु
चेन्नु धनाधिपन् तन्नोटु चोल्लिनार् किन्नराधीश्वरनुं पऱञ्ञीटिनान्—
निङ्ङळवरोटेतिर्त्तु पोर् चेय्तालुमङ्ङु ञानुं वरुन्नुण्टु युद्धत्तिनाय् ।
अन्नतु केट्टोरु यक्षमहाबलं चेन्नु रक्षोबलत्तोटेतिर्त्तीटिनार् ।
यक्षरक्षोबलं तम्मिलेतिर्त्तप्पोळ् प्रक्षोभमायितु लोकत्रयं तदा ।
यक्षप्रवररोटेट्टु रक्षोबलं निल्करुताञ्ञु भयेन वाङ्ङीटिनार् ।
अप्पोळतु कण्ट नेरं दशाननन् अब्धि पोलेयलरिच्चेन्नु पोर् चेय्तान् ।
यक्षवीरन्मार् चुळन्नु पोर् चेय्तितु रक्षोवरनुं कुऱञ्ञतिल्लेतुमे ।
उग्रन् दशास्यन् गदयुमाय्च्चेन्नुटन् निग्रहिच्चान् पल यक्ष-
वीरन्मारे । १०० शूरनायुळ्ळोरु यक्षनतु नेरं मारीचनोटु कलहं
तुटङ्ङिनान् । तल्लु कोण्टूळियिल् वीणु मारीचनुं अल्लल्
कूटातेळुन्नेटवनुं तदा । यक्षप्रवरनेयोन्नटिच्चीटिनान् तत्क्षणे तल्लु

निकलने की शुभ घड़ी समझकर युद्ध के लिए कटिबद्ध देवताराति (देव-शत्रु रावण) एक बड़े रथ पर आरूढ़ हो गया । दशमुख ने उत्तर दिशा को लक्ष्य करके महाप्रस्थान किया । मारीच, शुक, सारण, वीर महोदर, महापार्श्व— । ९० —महायोद्धा धूम्राक्ष ये छः वीर योद्धा नगाड़ों सहित पहले ही युद्ध के लिए आगे बढ़ चुके थे । उन सबके अलकापुरी पहुँचते ही धनेश के दूतों ने उन्हें देखकर धनेश को (शत्रु के आगमन की) सूचना दी तो किन्नराधीश (वैश्रवण) ने आज्ञा दी—"तुम लोग जाकर शत्रु का सामना करो, पीछे मैं भी युद्ध के लिए आ रहा हूँ ।।" यह सुन विशाल यक्ष-सेना ने राक्षस सेना का सामना किया । यक्ष-राक्षस सेनाओं के परस्पर भिड़ते ही त्रिभुवन कंपित हो उठा । यक्षप्रवरों का सामना करने में अपने को असमर्थ देखकर राक्षस सेना पीछे हटी । यह देखते ही अब्धि (सागर) तुल्य घोर गर्जना करते हुए दशानन ने आगे बढ़ युद्ध किया । यक्षप्रवरों ने चारों ओर से घेर-घेरकर रावण से युद्ध किया तो राक्षसराज ने भी कुछ कमी नहीं दिखाई । उग्र दशानन ने गदा लेकर कई यक्षवीरों का वध किया । १०० तुरन्त एक शूर-वीर यक्ष मारीच पर टूट पड़ा । उसका प्रहार सहकर मारीच पृथ्वी पर गिर पड़ा, लेकिन तुरन्त ही उठकर

कोण्टोटीटिनान् यक्षनुं। चेन्नळकापुरि गोपुरं पुक्किकतु सन्नद्ध-
नायट्टुत्तान् दशवक्त्रनुं। तोरणमूरियटिच्चानतु नेरं घोरनां भास्कर
भानु दशास्यनै। पौलस्त्यनुमतु कोण्टु वीणीटिनानालस्यवुं तीर्न्त्
वनुमनन्तरं, ओन्नटिच्चीटिनान् भास्करभानुवे नन्नायप्पोटिञ्ञु
वीणानवनूळियिल्। अन्नतु कण्टु भयत्तोटुमोटिनार् निन्न-
यक्षन्मारतु कण्टनन्तरं मानिवरनाय यक्षकुलाधिपन् माणिवरन्
निज सैन्यमायुळ्ळतिल् नालायिरं पटयोटुमटुत्ततिलायिरत्तेक्कोल
चेय्तान् महोदरन्। ११० आयिरत्तेक्कोलचेय्यान् प्रहस्तनुं।
रण्टायिरवुमोटुक्किनान् मारीचनुण्टाय कोपालटुत्तितु यक्षनुं।
धूम्राक्षनुं मुसलं कोण्टेरिञ्ञितु ताम्राक्षनायि माणिवरनन्नेरं
धूम्राक्षनेग्गद कोण्टेरिञ्ञीटिनान् वन्मल वीण पोले पतिच्चानवन्।
अप्पोळतु कण्टटुत्तान् दशाननन् कैल्पोटु वेलयच्चान् महायक्षनुं,
मारिटत्तिङ्कलतेटु दशाननन् चीरियटुत्तान् गदयुमेटुत्तुटन्।
मानिवरन् तन् मकुटत्तटत्तिङ्कल् मानियां पंक्तिमुखनेरिञ्ञीटिनान्।
पार्श्वगतमाय्च्चमञ्ञु मकुटवुं पार्श्व किरीटनन्नायितु नामवुं।

उसने भी यक्ष पर प्रहार किया। प्रहार पाते ही खिन्न हो यक्ष भागने लगा। रावण ने अलकापुरी के गोपुर द्वार तक उसका पीछा किया। युद्ध के लिए कमर कसे रावण को देखकर भास्कर भानु नामक यक्ष ने तोरण उठाकर रावण पर दे मारा, जिसके आघात मात्र से पौलस्त्य-तनय (रावण) धराशायी हुआ, किन्तु तुरन्त ही आलस्य से उठकर उसने भास्कर भानु पर गदा मारी जिसके लगते ही वह चकनाचूर हो गया और भूमि पर जा गिरा। यह देख पास खड़े यक्ष लोग भयभीत हो भाग खड़े हुए। तुरन्त ही स्वाभिमानी माणिवर नामक यक्षप्रमुख अपनी चार हजार सैनिकों की सेना लेकर बढ़ा तो महोदर ने उनमें से एक हजार सैनिकों को मारा—। ११० दूसरे एक हजार सैनिकों को प्रहस्त ने तथा बचे हुए दो हजार को मारीच ने समाप्त कर दिया। तब अत्यन्त क्रुद्ध हो यक्ष आगे बढ़ सामने आया और धूम्राक्ष ने उस पर मुसल मारा तो क्रोध से माणिवर ताम्राक्ष (लाल नेत्रवाला) हो गया। उसने धूम्राक्ष पर गदा का वार किया तो वह विशाल पर्वत सा धराशायी हुआ। यह देख दशानन सामने आया तो यक्ष ने एक अमोघ शक्ति चलायी। उसके छाती पर आ-लगते ही चीखता हुआ रावण गदा लिये आगे बढ़ा। स्वाभिमानी दशानन ने अपनी गदा उसके मकुट पर मारी तो उसके आघात से उसका मकुट पार्श्व भाग की ओर हट गया जिस कारण यक्ष पार्श्वकिरीटी के नाम से अभिहित

घोरनायीटुं दशमुखन् तन्नोटु पोरति दारुणमाय् चेय्तु यक्षनुं;
पारं तळर्न्नो ळिच्चीटिनानन्नेरं पोरिन्नटुत्तार् निशाचर वीररुं। १२०
तल्क्षणे वैश्रवणन् पुरप्पेट्टुटन् रक्षोवरनोटिवण्णमुर चेय्तान्—
मुन्नं तपस्सु चेय्तार् पलरुमवर् चेन्नुयमालयं तन्निल् मेवीटिनार्।
दुर्वारमाय वर प्रभावं कोण्टु सर्वजनत्तेयुपद्रविक्काय्कॆटो!
चेय्तु दुष्कर्म्म फलङ्ङळनेकं नाळ् कैतवहीनमनुभविक्काय् वरुं।
देहनाशं वरुं मुम्पेयीटुङ्ङुमिस्साहसाल् चेय्त तपस्सिन् फलमेल्लां
आहार नीहार निद्रा परन्माराय् मोहवशगतन्मारायनुदिनं
देह धनादिकळेल्लां गतागतं देहिकळ्क्कुळ्ळतेलुमरियाते, धर्म्मा-
धर्म्मङ्ङळुं चिन्तियाते नित्यं दुर्म्मरियादकळ् चेय्तु जन्तुक्कळे
पीडिप्पिच्चीटुन्न दुष्टन् नरकङ्ङळाटल् कैक्कोण्टु भुजिक्कुं चिरकालं।
मूढनां निन्नोटु चोल्लुन्न ञानतिमूढनेन्ने वरू केळ्क्क जळप्रभो! १३०
घोरनां नी मदं कोण्टु मदिच्चोरु कारणमेन्निये साधुजनङ्ङळे
पारमुपद्रविच्चीटुन्नतुमोरु कार्यवुमिल्ल निनक्कुमतुमूलं।
मेलिलापत्तुकळ् घोरमाय् वन्नीटुं मूल विनाशवुं कूटॆ वरुं दृढं।
इत्थं परञ्ञु गदयुमेटुत्तु सन्नद्धनाय्च्चेन्नणयुन्न धनेश्वरन्

हुआ। यक्ष ने घोर दशानन से दारुण युद्ध किया जिससे अत्यन्त शिथिल एवं आलस्ययुक्त हो वह हट गया। यह देख (दूसरे) राक्षस वीर युद्ध के लिए आगे बढ़े। १२० तुरन्त ही वैश्रवण ने (बाहर) निकलकर राक्षसराज से इस प्रकार कहा—'पहले भी कई लोगों ने तपस्या की थी और वे सब अब यमपुर में वास कर रहे हैं। दुर्निवार वर-प्रभाव को पाकर सारे लोगों को सताओ मत। अपने दुष्कर्मों का बहुत समय तक फल भोगना ही पड़ेगा। देह-नाश के पहले ही इस प्रकार के दुस्साहस के कारण अपनी तपस्या से प्राप्त सारे फल समाप्त होंगे। प्रतिदिन मोहासक्त तथा आहार-निद्रावशगत हो, देह तथा धन आदि को अनित्य समझे बिना तथा धर्म-अधर्म पर विचार किये बिना मर्यादारहित हो जीवों को प्रपीड़ित करनेवाले दुष्ट पापी लोग नरक में पहुँचकर चिरकाल तक यातनाएं भोगते रहेंगे। हे मूर्ख! तुमसे इस प्रकार का सारोपदेश करनेवाला मैं अतिमूर्ख हूँ। १३० तुम मूर्ख पापी अपने मद से उन्मत्त हो बिना कारण सज्जनों को पीड़ित करते जा रहे हो। तुम्हारे इस दुष्कर्म से, सोचें तो, तुम्हें कुछ प्रयोजन भी प्राप्त होनेवाला नहीं है। प्रत्युत भविष्य में घोर विपत्ति आ पड़ेगी जिससे वंश का समूल नाश भी होगा, यह निश्चित है।" ऐसी भर्त्सना करते हुए तथा गदा लिये युद्ध के लिए

तन्नुटे धीरत कण्टु निशाचरर् तिन्नवर् पेटिच्चकन्नारतु नेरं। सत्वरं चेन्नु नक्तञ्चराधीशनें क्रुद्धनायीन्नटिच्चान् धनाधीश्वरन्। तल्लु कॊण्टाशु बिरच्चु दशाननन् तुल्यनाय् निन्नु पॊरुतानतु नेरं। कण्टु निन्नोरु देवादिकळेद्वं कॊण्टाटिनारथ रण्टु जनत्तेयुं। यक्षेशनाग्नेयमस्त्रं प्रयोगिच्चान् रक्षोवरन् वरुणास्त्रेण माट्टिनान्। पिन्ने मायायुद्धमाशु चेय्तन्नेरं किन्नराधीश्वरन् तन्ने मोहिप्पिच्चान्। १४० पौलस्त्यनुं निज बुद्धि मरन्नवनालस्यमुळ्ळकॊण्टु वीणानवनियिल्। पत्मादिकळां मुनिकळ् धनदनेक्कॆल्पोटॆटुत्तुटन् नन्दन कानने वच्चु रक्षिच्चुणर्त्तीटिनारन्नेरं विश्वासमुळ्ळकॊण्टु निन्नु धनदनुं। पुष्पकमाय विमानवुं कैक्कॊण्टु कर्बुराधीश्वरनुं नटन्नीटिनान्। अग्रजन् तन्नैज्जयिच्चु दशाननन् निर्ग्गमिच्चीटिनान् पुष्पकत्तिन्मेले वन्नु शरवणदेशमणञ्ञप्पोळ् तन्नायुरच्चिचळकाञ्ञतु पुष्पकं; ॲन्तितिन् कारण मॆन्नु दशाननन्, चिन्तिच्चुळ्ळन्नतुकण्टु मारीचनुं। चॊन्नान् धनदनॆयॆन्निये पुष्पकमन्यजनत्ते वहिक्कयिल्लॆन्नतो? मट्टोरु कारणमुण्टा-

तैयार हो आगे बढ़ते धनेश का साहस देखकर वहाँ खड़े हुए निशाचर लोग तुरन्त ही भयभीत हो पीछे हट गये। शीघ्र आगे बढ़कर क्रुद्ध धनेश ने राक्षसेश पर एक प्रहार दिया। प्रहार सहते ही वहाँ खड़े-खड़े दशानन काँपने लगा। फिर तुल्य साहस एवं बल सहित वह युद्ध करने लगा। यह देख खड़े देवों ने, उनके युद्ध-कौशल देख, दोनों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। यक्षेश ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया जिसे राक्षसेश ने वरुणास्त्र से काटा। फिर (रावण ने) माया-युद्ध के द्वारा किन्नरेश को मूर्छित कर दिया। १४० वैश्रवण बुद्धि-विमोहित हो तथा आलस्ययुक्त हो पृथ्वी पर गिर पड़े। पद्मा आदि मुनिवरों ने तत्काल ही बड़ी कठिनाई से धनेश को नन्दनवन में उठा ले जाकर उनकी परिचर्या करके मूर्छा से जगाया तो धनेश विश्वासपूर्वक उठ खड़े हो गये। कर्बुराधीश (रावण) बलात् पुष्पक विमान का अपहरण करके उस पर सवार हो चला गया। अपने अग्रज पर विजय पा तथा पुष्पक पर सवार हो जाते-जाते हिमालय प्रान्त के निकट शरवण प्रदेश में पहुँचते ही विमान की गति रुक जाने से तथा बहुत प्रयत्न करने पर भी उसे न हिलता हुआ पाकर दशानन सोच में पड़ गया कि आखिर इसका क्या कारण है? रावण को चिन्तित देख मारीच पूछने लगा—"क्या धनेश को छोड़ अन्य किसी को पुष्पक धारण नहीं करेगा या इसका और कोई कारण है? कुछ भी हो तुरन्त

कयोयितिन् कुट्मेन्तेन्तु विचारिच्चु काणणं। अन्तु पडञ्ञरि-क्कुन्न नेरं तत्र नन्दीश्वरनोरु वानर वेषमाय् १५० चेन्नुर चेय्तानुमापति शङ्करन् चन्द्रचूडन् परमेश्वरनीश्वरन्। नील-कण्ठन् नृत्तमाटुं प्रदेशमिताक्कुमोरिक्कलुं वन्नु कूटायल्लो; अङ्कुल्त्तिरिकें नी वन्न वळिक्किनिक्काले गमिच्चु कौळ्ळेणं यथोचितं। धिक्कारमुळ्ळ्कोण्टु तन्ने मरिप्पतिनुल्कटाहङ्कारमोटु वरायक नी। अन्नतु केट्टु दशास्यनुमन्नेरमेन्नोटु वन्नोरु वानरन् चोन्नतु नन्नु नन्नेन्नपहासवुं चेय्तवनोन्नलरिच्चिचरिच्चीटिनानेट्वुं। निन्दिच्चु चोन्नतु केट्टु कोपं पूण्टु नन्दीश्वरनुमवनोटु चोल्लिनान्— इप्पोळ् वधिक्कुन्नतिल्ल ञानेन्नुमे पत्मोत्भवन् तव तन्न वरत्तिनाल्। वानरनेन्नु नी निन्दिच्च कारणं वानरन्माराल् वरुं कुलनाशवुं। देवद्विजेन्द्रन्मारेप्पीडिप्पिच्चिनिक्केवल मायुर्विनाशं वरिक ते।१३० अन्नु नन्दीश्वर शापमुण्टायतुमोन्नु मरिञ्ञील राक्षस राजनुं।१६१

कैलासोद्धरणम्

शङ्करनाकुन्नतेवनेन्निङ्ङने शङ्क कूटातेयटुत्तान् दशाननन्।

इसका कारण ढूँढ पाना होगा।" इस प्रकार विचार करते बैठते समय साक्षात् नन्दीश्वर एक वानर के वेष में—। १५० —वहाँ पहुँचकर कहने लगे—"उमापति शंकर जो चन्द्रचूड, परमेश्वर, भगवान नीलकंठ हैं, उनके नृत्य करने की यह भूमि है और यहाँ दूसरों का आना वर्जित है। इसलिए आप लोग यथोचित जिस रास्ते से आये, उसी रास्ते से वापस चले जाइये। उद्धत एवं अहंकारयुक्त आप धिक्कारपूर्वक स्वयं मृत्यु का ग्रास बनने के लिए यहाँ मत आइये।" यह सुनकर 'मुझे एक वानर उपदेश देने लगा, बड़ी बात है' ऐसा उपहास करते हुए रावण ने अट्टहास किया। रावण के निन्दासूचक शब्द सुनकर क्रुद्ध हो नन्दीश्वर ने उससे कहा—पद्मोद्भव ने तुम्हें वर दे रखा है, यह सोचकर मैं अब तुम्हारा वध नहीं करता हूँ। वानर समझ मेरी निन्दा करने के कारण वानरों द्वारा तुम्हारा वंश-नाश होगा। देवों, ब्राह्मणों को पीड़ित करने के फलस्वरूप तुम्हारा अन्त होगा।" १६० नन्दीश्वर का यह जो शाप हुआ, उसे राक्षसराज ने नहीं जाना। १६१

कैलास का उद्धारण

'शंकर कौन है ?' ऐसा पूछते हुए दशानन निर्भय आगे बढ़ा। वह

नेर् वळ्ियेमम पोकेरुतॆङ्किल् नी पोवतोळिच्चु कोळ्नाथनेन्नाकिलो।
ॲन्नु परञ्ञिळक्कीटिनान् कैलासमोन्नु कुलुङ्ङियन्नेरं परवशाल्;
चन्द्रचूडानुचरन्मार् विरच्चितु चन्द्राननयाय पार्वती देवियुं
आटल् पूण्टोटि वियर्त्तु भयं पूण्टु गाढमायालिंगनं चेय्तरुळिनाळ्—
लोकमातावु पुणर्न्नतु कण्टनुरागवशनाय् चिरिच्चु महेशनुं
चारु पादांगुष्ठ मून्निक्कळिच्चतुनेरमुरच्चितु कैलास शैलवुं।
कैकसीपुत्रनु शैलमिळक्किय कैकळिरुपतुं पर्वतं तन्नुटे कीळाय्
ॲरुङ्ङिच्चतञ्ञतु कारणमूळियुमाळियुं शैलवनङ्ङळुं, केळुन्नु
नादङ्ङळ् केट्टु विरच्चितु लोकत्रयत्तिङ्कलुळ्ळ जनङ्ङळुं। १०
शोकं कलर्न्नु भयविवशन्माराय् हस्तङ्ङळेयङ्ङ् वीणयाक्किक्कोण्टु
तत्रैव सामगानं चेय्तनारतं मृत्युञ्जयनेभजिच्चानतु नेरं।
भक्तियुं वर्द्धिच्चितु दशवक्त्रनुं आयिरं संवत्सरं पुनरिङ्ङने
पोयितु कालंदशास्यनतु नेरं कालारि कारुण्य पूर्णचित्तेन तृक्कालु-
मयच्चरिकेच्चेन्नरुळ् चेय्तु— इत्रिलोकत्तिङ्कल् निन्नेक्कणक्के
मट्टिन्नबलवान्मारायिल्लोरुवरुं। रावं त्वदीयं निरञ्ञु जगत्त्रये
रावणनेन्नतिनाल् तव नामवुं; चन्द्रहासं निनक्कायुधवुं तरां

कहने लगा कि अगर मैं सीधे रास्ते पर नहीं जा सकता, और तुम समर्थ स्वामी हो तो मेरे मार्ग में विघ्न डाल दो। यह कहते हुए उसने कैलास को वहाँ से उठा लिया और तब कैलास भी एक बार कंपित हो उठा। तब चन्द्रचूड के अनुचर तथा चन्द्रानना पार्वतीदेवी भी कम्पित हुईं। भयाकुल एवं पसीनों से तर पार्वतीदेवी अपने स्वामी से लिपट गयीं। लोकमाता को इस प्रकार लिपटे देख अनुरागयुक्त महेश हँसने लगे। उन्होंने अपने सुन्दर पादांगुष्ठ से कैलास को खिलवाड़ में ही दबाया कि कैलास नीचे स्थिर हो गया और कैकसी-पुत्र की शैल उखाड़ने वाली बीस भुजाएं शैल के नीचे दबने लगीं, जिससे रावण के आर्त्तनाद को सुनकर शैल, कानन, पृथ्वी, सागर और तीनों लोकवासी काँप उठे। १० तब भयातुर रावण ने अपने पीड़ित हाथों की वीणाएं बनाकर वहीं निरन्तर सामगान ध्वनि से मृत्युंजय भगवान का भजन किया। दशमुख की भक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और इस प्रकार जब दशानन वहीं हजार वर्ष पड़ा रहा तब मन में करुणापूर्ण कालारि (शिव) ने अपने पैर के अंगूठे को शिथिल करने के बाद दशानन के निकट आकर कहा—"इस त्रिभुवन में तुम्हारे समान बलशाली दूसरा कोई नहीं है। तुम्हारा रव (शब्द) त्रिलोक में व्याप्त हुआ, इस कारण तुम्हारा रावण नाम अन्वर्थक है। तुम्हारी भक्ति से मैं

सन्तुष्टनायेन् भवानेक्कुञ्चिचु ञान् । इन्नु तुटङ्ङभजिच्चु- कोळ्केन्ने ञी येन्नाल् निनक्किल्लपजयमोन्नुमे । वेण्टुं वळिये गमिच्चालुमेतुमे वेण्टा विषादमनुसरिच्चेनहं । भक्त्या नमस्कृत्य रावणनन्नेरं सत्वरं पुष्पकमेरिन्नटकोण्टान् । २० क्षिप्रंहिमवल् गिरिवरकानने सुप्रीति पूण्टु वसिच्चान् दशास्यनुं; तत्रैव कण्टानोराश्रमत्तिङ्कलत्युत्तमयायोरु कन्यक तन्नेयुं । चित्र भानु प्रभयोटुं तपोधन वृत्तियोटुं कण्टु चोन्नान् दशास्यनुं— सर्व- स्त्रीवर्गवुं कण्टाल् वणङ्ङुन्न सर्वमनोहरियाय नीयिङ्ङने, दिव्यभोगङ्ङळुपेक्षिच्चु संपूर्ण यौवनवुं वेरुते कळञ्ञाकुलाल्, सर्वेन्द्रियङ्ङळेयुं जयिच्चत्रैव सर्वदा तापसियाय् वसिक्कुन्न निन् दुर्वाञ्छित मतमेन्नोटु चोल्लुक उर्वशियो नी? तिलोत्तमयो मट्टु शर्वाणियो महालक्ष्मियो चोल्लु नी । तातनाकुन्नतारम्म- याकुन्नतार् ? चेतोहरे ! पञ्ञीटु मटियाते । पंक्तिकण्ठोक्ति कळिङ्ङने केट्टोरु बन्धुरगात्रियुमुरचेय्तु— ३० वेदाद्ध्ययन परायणनायति बोधवानाय बृहस्पति नन्दनन् नाम्ना कुशध्वजनां मुनि तन्नुटे वाङ्मतियाकिय पुत्रिञान् केळ्क्क नी । वेदज्ञन्माराय

प्रसन्न हूं; अतः मैं तुम्हें आयुध रूप में चन्द्रहास दे दूंगा । आज से तुम मेरा भजन करते रहो, तुम्हारी कभी पराजय नहीं होगी । तुम अपनी पसन्द के मार्ग से चलो, तुम निराश मत बनो, मैं तुम्हारी इच्छा के सम्मुख झुकता हूँ । तब भक्तिपूर्वक (भगवान को) प्रणाम करके रावण पुष्पक पर सवार हो चला गया । २० क्षिप्रगति से हिमवान के काननप्रदेश में पहुँचकर वहाँ सन्तुष्टचित्त हो रावण कुछ समय विश्राम करता रहा । तब वहाँ एक आश्रम में एक अत्युत्तम कन्या को उसने देखा, जो सूर्य के समान तेजस्विनी तथा तपस्यावृत्ति में तल्लीन थी । उसे देख दशानन ने पूछा—"समस्त स्त्री वर्ग से प्रणम्य अत्यन्त मनोहर स्वरूपिणी, समस्त दिव्य भोगों को त्याग तथा अपने सम्पूर्ण तारुण्य को व्यर्थ गँवाकर, सर्व इन्द्रियों पर विजय पाकर यहाँ तपस्विनी के रूप में रहनेवाली तुम्हारी क्या दुर्वांछा (असाधारण इच्छा) है ? मुझे बता दो । क्या तुम उर्वशी हो या तिलोत्तमा या शर्वाणी (पार्वती) या महालक्ष्मी ? मुझे सत्य बता दो । हे मनोहरी तुम्हारे पिता कौन हैं ? माता कौन है ? तुम निस्संकोच भाव से मुझे बताओ ।" पंक्तिकण्ठ का यह कथन सुनकर उस सुन्दरगात्री ने उत्तर दिया— ३० —"वेदाध्ययन में अतिपरायण तथा अत्यन्त ज्ञानी बृहस्पति के कुशध्वज नामक जो पुत्र हैं, उन कुशध्वज मुनि की वाङ्मति (वेद-

तापसन्मार् मम वेदवतियेन्नु नामवुं चोल्लिनार्। अन्नेप्परि-
ग्रहिय्क्कुवानाय्क्कोण्टु वन्नार् पलरुमप्पोळ् मम ताननुं,
कन्यक तन्नेत्तरिकयिल्लेन्नाशु चोन्नतु केट्टटङ्डीटिनारेवरुं।
अन्नुटे नन्दनावल्लभनाकणं माधवनेन्नु चिन्तिच्चु कोटाञ्ञतु
अन्ने तल्काञ्ञमूलं ममताततेक्कोन्नान् चतिच्चोरु राक्षसन् क्रुद्धनाय्।
मातावु तानुमप्पोळ् मरिच्चीटिनाळ् माधवनेक्कुरिच्चन्नु तुटङ्ङिञान्
तातन् निनच्चतु साधिच्चु कोळ्ळुवान् पीतांबरन् मम कान्त-
नायीटणं। अन्नु कल्पिच्चु तपस्सु चेय्युन्नितु तन्नाय् वरिक
पोयालुं भवानेङ्किल्। ४० उग्रमाय्च्चेय्त तपस्सिनाले जन-
मुख्यनाय् वन्नु भवानेन्नरिञ्ञु ञान्। इत्थमाकर्ण्य दशानननुं
विमानत्तिङ्कल् निन्नुटन् ताळत्तिरङ्ङिनान्। चोल्लिनान्
वेदवतियोटु रावणनिल्ल सौजन्यं निनक्कु मनोहरे! वल्लभे!
केळ् मम कैकळिलोन्नोळमिल्ल बलमेटो! विष्णुविनोर्क्क नी।
पोरुं तपस्सिनि निन्नुटे यौवनं नारीमणे! वेरुते कळयाय्कटो!
वाक्यमेवं केट्टु चोल्लिनाळ् तापसि योग्यमल्लात्ततेन्नोटु चोल्लाय्क
नी। अन्नवळ् चोन्नतु केट्टु दशाननन् चेन्नु तलमुटि चुट्टिप्पि-

वचनों में प्रवीणा) पुत्री मैं हूँ। ऐसा आप जान लीजिए। वेदज्ञ तपस्वियों ने मेरा वेदवती नाम रखा है। मेरा पाणिग्रहण करने के निमित्त कई लोग आये थे, किन्तु पिता जी का यह कथन सुनकर कि कन्या को मैं नहीं दूंगा, वे सबके सब निराश चले गये। मेरी पुत्री के साक्षात् माधव ही पति हों, यही सोचकर पिता ने मुझे दूसरे किसी को नहीं दिया। मुझे न देने के कारण क्रुद्ध हो एक राक्षस ने मेरे पिता को छल से मार डाला। साथ ही माता भी चल बसी। पिता जी की इच्छा-पूर्ति के लिए, पीतांबरधारी माधव ही मुझे पतिरूप में प्राप्त हों, यह साध ले तब से (पिता की मृत्यु के समय से) मैं माधव की कामना करती हुई तपस्यारत हूँ। अच्छा अब आप सानन्द चले जाएं। ४० मैंने यह जान लिया है कि आप अपनी घोर तपस्या से जनमुख्य बन गये हैं।" यह सुनकर दशानन विमान से नीचे उतर पड़ा और वेदवती से बोला—"हे मनोहरी! तुम रावण के प्रति उदार-हृदया नहीं हो! हे प्रिये तुम सुनो। तुम यह स्मरण रखो कि विष्णु में मेरी एक भुजा का भी बल नहीं है। हे नारीरत्न! तुम अपनी तपस्या बस करो, तुम अपना यौवन व्यर्थ मत जाने दो।" ऐसा वचन सुनकर तपस्विनी ने कहा--"तुम ऐसा अनुचित वचन मुझसे मत कहो।" इस प्रकार उसे कहते

टिच्चितु। वन्न कोपत्ताल् परञ्ञितु तापसी ऎन्नें नी तॊट्टतु कारणमिन्नु ञान् निन्ने वधिक्कुन्नतिल्लतु चॆय्किलो वन्नुपोमल्लो तपस्सिनु नाशवुं; इद्देहमिप्पोळुपेक्षिच्चिनियॊरु सद्वृत्तयायॊरु भूपति पुत्रियाय् ५० वन्नु जनिप्पनयोनिजयायुटन् वन्नीटुमन्नु निनक्कु मरणवुं; ऎन्नॆक्कॊण्टेतुमनुभवं कूटातॆ वन्नु पोकणं कुलनाशवुं तव। कन्यक तानुमीवण्णं शपिच्चुटन् तन्नुटॆ योगमहाग्नियिल् देहवुं नन्नाय्द्दहिप्पिच्चितॆन्नु धरिच्चालु मिन्नु सीतादेवियायतवळल्लो। नारायणनायतु भवान् निर्णयं कारणं रावणनाशत्तिनॆन्नतुं। पिन्ने विमानवुमेऱि दशाननन् चॆन्नु मरुत्तनां मन्नवन् तन्नुटॆ यागशालाजिरे देवकळन्नेरं वेगाल् मऱञ्ञितु वेषच्छन्नन्माराय्। इन्द्रन् मयूरमायन्तकन् काकनायन्नमाय् तन्ने मऱञ्ञु वरुणनुं। किन्नरेशन् कृकलासमायुं तथा ऒन्नुमिळकातिरुन्नु मरुत्तनुं। अन्नेरमाशु परञ्ञु दशास्यनुं ऒन्नुकिलॆन्नोटु युद्धं तुटङ्ङुक ६० नन्नाय् वणङ्ङुक पोक्करुतॆङ्किलो ऎन्नु दशास्यन् परञ्ञतु केट्टथ मन्नवनाय मरुत्तनुं

सुनकर दशानन ने जाकर उसके बाल पकड़कर उसे खींच लिया। तब अत्यन्त क्रोध के वश में आकर उस तपस्विनी ने कहा—आज तुमने मेरा स्पर्श किया; उसके लिए मैं तुम्हारा वध नहीं करूँगी, क्योंकि ऐसा करने से मेरी तपस्या भंग होगी। लेकिन अपने (तुम्हारे कर-स्पर्श से अपावन बने) इस शरीर को अब त्यागकर एक सच्चरित्रा भूपति-कन्या, । ५० —जो अयोनिजा होगी, के रूप में मैं जन्म लूँगी और तब (मेरे कारण) तुम्हारी मृत्यु होगी। मेरे साथ तुम्हारा कोई अनुभव सिद्ध हुए बिना, तुम्हारा वंश-नाश भी होगा।" (अगस्त्य मुनि राम से कह रहे हैं—) इस प्रकार शाप देकर उस कन्या ने अपनी योगाग्नि में देह जला दी और वही आज सीतादेवी के रूप में अवतीर्ण हैं, यह आप स्मरण रखिएगा। आप ही स्वयं नारायण हैं जो निश्चय ही रावण के विनाश के लिए अवतरित हुए हैं। (रावण की पूर्वकथा का विस्तार करते हुए मुनि ने कहा कि) वेदवती का शाप लेकर रावण विमान पर सवार हो मरुत्त नामक राजा की यागशाला में पहुँचा। (उसे देख) वहाँ बैठे सारे देव लोग वेष बदलकर इधर-उधर छिप बैठे। इन्द्र ने मयूर का रूप अपनाया, यमराज ने कौए का रूप लिया तथा वरुण हंस का रूप धारण कर छिप गये। किन्नरेश कृकलास (गिरगिट) बने; किन्तु मरुत्त वहीं अचल बैठे ही रहे। तब दशानन ने उनसे कहा—"या तो मुझसे लड़ो—। ६० —या मृत्यु

चौल्लिनान्— ॲन्तु परञ्ञितु चापल्य वाक्कुकळन्तकन् वीट्टिन्नु पोकणमॆन्नतो ? चौल्लुनीयारॆन्नुमॆन्नोटु वैकातॆ चौल्लिनानुत्तर- मप्पोळ् दशास्यनुं । ॲन्नोटु पेटि कूटातॊरुत्तरुं मन्नवरारुमे चौन्नवरिल्ल केळ्, राक्षसराजावु वैश्रवणानुजन् केळ्क्क पौलस्त्य तनयन् दशाननन् । विग्रहमॆन्तयुं घोरमाय्च्चॆय्तळवग्रजन् तन्नॆज्ज- यिच्चेनरिक ती । पुष्पकमाय विमानमवनोटु कॊल्पोटु युद्धे परिच्चु कौण्टेनहं । इत्थमाकर्ण्य चिरिच्चु मरुत्तनुमॆन्तयुं नल्ल धर्म्मिष्ठ- नल्लो भवान् । तातनुतन्नॆ समाननाकुं ज्येष्ठ भ्राताविनॆज्ज- यिच्चोरु नी निर्म्मलन् । दुष्टनां निन्नॆ वधिच्चु रक्षिक्कणं शिष्टजनङ्ङळॆयिल्लकिल्लेतुमे । ७० इत्थं परञ्ञु नटन्न नरेन्द्र नोटुत्तमनाय संवर्त्तनु चौल्लिनान्— यागमन्पोटु दीक्षिच्चाल- तॆन्नियॊराकांक्षमट्टॊन्निलुण्टाकरुतल्लो। पिन्नॆ महेश्वर सत्र विच्छेदवु वन्नीटरुततुमोर्त्तु कौळ्ळेणमे । युद्धे जयाजयवुमरिवान् पणि सत्तं कळिञ्ञॊळिञ्ञॊन्नुमरुतल्लो । इत्थं बृहस्पति सोदरनां मुनिसत्तमनाय संवर्त्तन् परञ्ञप्पोळ् आचार्य शासनं केट्टु

से बचने के लिए मुझे विनीत भाव से प्रणाम करो ।" दशानन का यह कथन सुनकर राजा मरुत्त ने कहा—"तुमने क्या दुर्वचन कहा ? क्या यमपुर में जाने की इच्छा है ? अविलम्ब तुम मुझे यह भी बताओ कि तुम कौन हो ।" तब दशानन ने उत्तर दिया--"मुझसे किसी राजा ने अब तक निर्भय ऐसा दुर्वचन नहीं कहा । यह तुम याद रखो । मुझे, राक्षसराज, वैश्रवण का भ्राता तथा पौलस्त्य-तनय दशानन जानो । भयंकर युद्ध में मुझे, अपने अग्रज पर भी विजय प्राप्त किया हुआ समझ लो । यह पुष्पक विमान मैंने युद्ध में उससे बलपूर्वक ले लिया है ।" यह सुनकर मरुत्त हँस पड़ा और कहा कि आप बड़े धार्मिक हैं ! पिता तुल्य ज्येष्ठ भ्राता को जीतनेवाले आप बड़े पवित्रात्मा हैं ! आप दुष्टात्मा की हत्या कर मुझे सज्जनों की रक्षा करनी है, इसमें संशय नहीं है ।" ७० इस प्रकार बोल उठे राजा (मरुत्त) से उत्तम चरित्रवाले संवर्त्त मुनि ने कहा--"एक बार यज्ञ आरम्भ कर लेने पर फिर उसको छोड़ और किसी में कोई आकांक्षा नहीं रखनी चाहिए । उसके अतिरिक्त महेश्वर के लिए किये जानेवाले यज्ञ में कोई विघ्न भी नहीं होना चाहिए । फिर (आप दोनों में युद्ध छिड़ जाने के पहले) युद्ध में जय-पराजय का पहले ही अनुमान नहीं किया जा सकता; इसलिए यज्ञ की समाप्ति तक और कोई काम मत कीजिए ।" बृहस्पति के भाई मुनिसत्तम संवर्त्त के द्वारा इस प्रकार का

मरुत्तनुमाचरिच्चानतु कण्टु दशाननन् रात्रिञ्चर बलत्तोटुं तट कौण्टानार्त्तु विळिच्चु विजय भावत्तोटुं। रावणन् पोयतरिञ्ञु भयंतीर्न्नु देवकळुं मखशालयिल् मेविनार्। इन्द्रन् विळिच्चु चौन्नान् मयूरत्तोटु सुन्दरमाक निङ्ङळ्क्कु शरीरवुं, पीलिकळ्-तोरुमेन्न कणक्के नल्ल नीलनेत्रङ्ङळुमुण्टाकयुं वेणं। ८० भूमियिल् ञान् वरिषिक्कुन्न नेरमोरामोदमुण्टाय् वरिक निङ्ङळ्-क्केल्लां। काकवृन्दङ्ङळ्क्कु कालन् वरं नल्कि रोगङ्ङळ्कौण्टुं वयस्सुपुक्कुंनिङ्ङळ चाकाय्कौरुत्तर् कौल्लातेयोरिक्कलुं। मत्पुरं पुक्कु वाळुं जनङ्ङळ्क्केल्लां क्षुत्पिपासादिकळ् तीरुवान् मानुषर् इच्छयाय् नल्कुन्न पिण्डं तन्नुच्छिष्टमोक्कवे निङ्ङळ् भुजिक्कुन्न नेरत्तु तृप्तिवरिकवर्क्केन्नु कृतान्तनुं सुप्रमोदेन कौटु-त्तान् वरङ्ङळुं। अन्नङ्ङळोटु वरुणनुं चौल्लिनान् वर्णं वेळुत्तु जलाशयान्ते निङ्ङळ् पङ्कजनाळ सूत्रङ्ङळुं भक्षिच्चु सङ्कट मेन्नियेे वाणु कौण्टीटुविन्। किन्नरेशन् कृकलास गणत्तिनु खिन्नत कैविट्टु नल्कीटिनान् वरं। पौन्मयमां मकुटं मूर्द्धनि चेर्त्तु कौण्टुन्नतन्माराय् वसिच्चीटुविन् निङ्ङळ्। ९० इत्थं

उपदेश दिये जाने पर, आचार्य का उपदेश मानकर मरुत्त शान्त हो गये। तब दशानन विजय-गर्व के साथ जयघोष करता हुआ अपनी राक्षस सेना सहित आगे बढ़ा। रावण को जाते हुए देखकर भय-विमुक्त देवता लोग (जो अब तक छिपे बैठे थे) मखशाला में फिर आ गये। इन्द्र ने मयूर को बुलाकर आशीर्वाद दिया कि तेरी जाति का शरीर सुन्दर होगा। तेरे पंख में सुन्दर नील नेत्र-रूप चिह्न भी होंगे। ८० जब मैं भूमि पर वर्षा करूँगा तब तुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। कौए की जाति को यमराज ने वरदान दिया कि तेरी जाति, मनुष्य के द्वारा जब तक मारी नहीं जाती, तब तक न रोग से पीड़ित होगी न आयु के बढ़ने से मरेगी। मेरे राज्य में रहकर जो मानव भूख-प्यास से पीड़ित हैं, उनकी भूख-प्यास की शान्ति के लिए उनके बांधव लोग स्वेच्छया जो पिंड-दान देते हैं उसका उच्छिष्ट तेरे चुगने पर ही वे (पितर लोग) संतृप्त होंगे। इस प्रकार कृतान्त (काल) ने कौओं को वर प्रदान किया। वरुण ने हंसों से कहा कि तुम लोग श्वेतरंग-युक्त बनकर जलाशयों में कमलतंतु भोजन के रूप में ग्रहण करते हुए सुखपूर्वक जीवन बिता लो। किन्नरेश (वैश्रवण) ने कृकलासों (गिरगिटों) को प्रसन्न हो वर दिया कि सुवर्ण मकुट सिर पर धारण किये तुम उन्नत जीवन बिताओ। ९० (पशु-पक्षि योनियों को) इस प्रकार

वरङ्ङळुं नल्कि हविर्भागं तृप्तियाम्मारु भुजिच्चु सुरगणं, चेन्नु सुरलोकवुं पुक्कुमेविनार् पिन्नेमखवरदक्षिणयुं चेय्तु मन्नवनाय मरुत्तन् मरुविनान् । ९२

अनारण्य शापम्

ओरो नृपतिवीरन्मार् विषयङ्ङळ् तोरुमणञ्ञु परञ्ञितु रावणन्—
युद्धत्तिनाशु पुरप्पेटुविन् पक्षे सत्वरं वन्नु वणङ्ङुविनल्लायिकल् ।
इत्तरं रावणन् तन्नुटे वाक्कु केट्टुत्तमन्माराय भूपति वीरन्मार्
गाथि सुरथन् पुरूरवावुं महानीतिमानाय दुष्यन्तादिकळेल्लां
अब्जोत्भवन् तन् वरप्रभावं पार्त्तु निर्जितन्मार् ञङ्ङळेन्नु
चोल्लीटिनार् । वन्नानिविटेय्क्कु पिन्नेद्दशाननयोद्ध्याधिपना-
मनारण्यनो— ट्टुद्धतनां दशवक्त्रनुमन्नेरं युद्धत्तिनाय् विळिच्चान-
नारण्यने । बद्ध रोषेण पुरप्पेट्टु भूपनुं चित्रमाम्मारु कलहिच्च
नेरत्तु नक्तञ्चरेन्द्रन् चतुरंग सेनयॆ मृत्युपुरत्तिनयच्चानतु नेरं ।
सैन्यनाशं कण्ट नेरत्तु भूपनुं मान्यनां रावणनोटेतिर्त्तीटिनान् । १०
अस्त्रशस्त्रङ्ङळ् वरिषिच्चिरुवरुमेत्रयुं घोरमाय् वन्नितु युद्धवुं ।
तद्दशायां दशकण्ठन् गदकोण्टु विद्रुतं चेन्नटिच्चीटिनान् भूपने ।

के वर प्रदान करने के उपरान्त देवताओं ने संतुष्ट हो हविर्भाग खा लिया और सुरलोक को चले गये । यज्ञान्त पर दक्षिणा चुकाकर राजा मरुत्त सुख से रहने लगे । ९२

अनरण्य का शाप

(अब दिग्विजय के लिए कटिबद्ध हो) प्रत्येक राजप्रवर के राज्य में पहुँचकर रावण ने कहा—"या तो तुरन्त युद्ध के लिए निकल पड़ो या सामने आकर प्रणाम करो ।" इस प्रकार रावण की आज्ञा सुनकर गाथि सुरथ, पुरूरवा, महानीति-निपुण दुष्यन्त जैसे उत्तम-महाराजा लोग, अब्जोद्भव (ब्रह्मा) के वर-प्रभाव को स्मरण कर कहने लगे कि हम हार गये । फिर अयोध्यापति अनरण्य के पास दशानन आया और उद्दंड दशानन ने उन्हें भी युद्ध की चुनौती दी । रोषाकुल राजा युद्ध के लिए निकल आये और जब घोर युद्ध कर रहे थे तब दशानन ने उनकी चतुरंगिणी सेना को मृत्युपुर (यमलोक) में पहुँचा दिया । सेना की क्षति देखकर राजा ने उद्धत रावण का सामना किया । १० —दोनों ने खूब अस्त्र-शस्त्र की वर्षा की और युद्ध ने भयंकर रूप अपनाया । उस समय दशग्रीव ने तुरन्त राजा

ताडनमेट्टु तळर्न्नु नराधिपन् पीडयोटुं शपिच्चानाशरेशनै— मृत्यु वरुमेनिक्किप्पोळ् निशाचर सत्तमनां त्तिनक्किल्लितिनाल् जयं। मित्रवंशत्तिल् दशरथ भूपनु पुत्रनाय् रामनेन्नुण्टामोरु पुमान्। त्तिन्नुटै वंशमशेषमोटुक्कोटुमन्नवनित्तितु चेय्क निमित्तमाय्। ऎन्नु शपिच्चिन्द्र लोकवुं पुक्कितु मन्नवनामनारण्य महीपति। इत्थमगस्त्योक्ति केट्टु रघूत्तमन् चित्तमोदेन चिरिच्चरुळीटिनान्— अक्कालमुळ्ळ राजाक्कळ्क्कोरुवर्क्कुमग्रे दशग्रीवनोटु युद्धत्तिनु त्तिल्क्करुताय्वरानेन्तोरु कारणं पृथ्वीपतिकळ्क्कु २० शक्ति-यिल्लाय्कयो नक्तञ्चरेन्द्रनु शक्ति पेरुक्कयो ? कुंभोत्भवनतु केट्टु चिरिच्चुटनंभोज लोचननोटरुळिच्चेय्तान् २२

कार्त्तवीर्य विजयम्

ऎङ्किलो केळ्क्क त्ती पङ्कजलोचन ! हुङ्कारमुळ्क्कोण्टु लङ्केश्वरन् तदा सङ्कटं देवादिकळ्क्कु चेर्त्तुळ्ळिलातङ्कं मुनिवरन्माक्कुं वळर्त्तुटन् चेन्नु पुक्कीटिनान् माहिष्मतीपुरि तन्निलविटेक्कृतवीर्य नन्दनन्

पर गदा से प्रहार किया। गदा-प्रहार से शिथिल एवं आलस्ययुक्त राजा ने दुःखार्त हो आशरेश (रावण) को शाप दिया—"हे राक्षसराज ! अब मेरी मृत्यु निकट है, किन्तु निशाचरराज ! इससे तुम विजयी मत बनोगे। मित्रवंश (सूर्यवंश) में महाराज दशरथ के पुत्र-रूप में राम का जन्म होगा और आज मेरे साथ ऐसा (अन्याय) करने के कारण वे तुम्हारे वंश का उन्मूलनाश कर डालेंगे।" यह शाप देकर श्रेष्ठ महीपति अनरण्य इन्द्रलोक को गये।" अगस्त्य मुनि के द्वारा कही गयी यह कहानी सुन राम ने मुस्कान भर दी और उन्होंने (अगस्त्य मुनि से) प्रश्न किया—"उन दिनों कोई भी राजा युद्ध में दशानन का सामना नहीं कर सका, तो इसका क्या कारण था ? क्या पृथ्वीपति लोग दुर्बल थे या दशग्रीव अमित बलशाली था ?" यह सुनकर कुंभोद्भव ने हंसते हुए अंभोजलोचन (श्रीराम जी) से कहा— । २२

कार्त्तवीर्य—विजय

हे पंकजलोचन ! तो आप सुन लीलिए। अपने हुंकार से देवताओं को भयभीत कर तथा मुनिप्रवरों के मन में आतंक फैलाता हुआ लंकेश्वर रावण माहिष्मतीपुरी में आ पहुँचा, तो, वहाँ के राजा कृतवीर्य-पुत्र (कार्त्तवीर्य) जलक्रीड़ा करने के लिए अपनी नारियों सहित नर्मदा नदी को

ऩर्म्मेच्छया निजनारीजनवुमाय् नर्म्मदयिङ्कलाम्मारु पोयीटिनान् ।
अप्पोळ् दशास्यननुचरन्मारोटु पुष्पकत्तिन्मेले सञ्चरिक्कुं विधौ
बन्धुर कानन शोभितमाकिय विन्ध्याचलं कण्टतेरं कुतूहलाल्
निर्म्मल वारि तिरङ्ञोऴुकीटुन्न नर्म्मदयाकुन्न पुण्यनदिकण्टु ।
तीर्त्थ देशे तत्र विश्रमिच्चीटुवान् वीरननुचरन्मारोटु चॊल्लिनान् ।
ओरो नृपवरन्मारोटु पोर् चॆय्तु पारमुळ्ळालस्यमाशु तीर्त्तीटुवान्
स्वर्न्नदियोटु समानयां नर्म्मद तन्निलिऱङ्ङिक्कुळिप्पिनॆल्लावरुं ।१०
ञानुमिविटॆक्कुळिच्चु नियमङ्ङळुनं वरातॆ कऴिय्क्कुन्नतुण्टल्लो ।
मध्याह्नमायितु कालमिप्पोळिनि मृत्युञ्जयार्च्चनवुं कऴिच्चीटुवन् ।
ऎन्नतु केट्टु कुळिच्चु निशाचरर् चन्दन पुष्पादिकळॊरुक्कीटिनार् ।
उत्तममाय शिवलिंगमॆन्नयुं विस्तृत वालुका कल्पित वेदियिल्
वच्चु मणिपीठ मूर्द्धिनि शिवलिंगमर्च्चनार्त्थं वच्चभिषेक पूर्वकं ।
आचार्य वाक्योपदेश मार्ग्गेणतल् पूजा विधानेन चॆय्तु शिवार्च्चनं,
भक्त्या नमस्कृत्य नृत्तवुमाटिनिन्नत्यन्त शुद्धनाय् स्तुत्वा पलतरं ।
नित्याय निर्म्मलानन्दाय रुद्राय मृत्युञ्जयाय भूतेशाय ते नमः ।

गये हुए थे । तब रावण अपने अनुचरों के साथ पुष्पक पर आरूढ़ हो घूमने लगा । वहाँ सुषमायुक्त काननों से विराजित विंध्याचल को देखा और कुतूहलवश निर्मल सलिल प्रवाह से युक्त नदी नर्मदा को भी देखा । वीर राक्षसप्रवर ने उस तीर्थप्रदेश में विश्राम लेने की अनुचरों को आज्ञा दी । उसने कहा—"अनेक राजाओं से युद्ध करते-करते जो भारी थकान अनुभव हो रही है, उसे दूर करने के लिए तुम लोग देवनदी (गंगा) के समान पवित्र इस नर्मदा के जल में उतर कर स्नान कर लो । १० मैं भी इसमें स्नान करके निर्विघ्न अपने अनुष्ठानों को यथाविधि पूरा करूँगा । अब मध्याह्न का समय है, अब मृत्युंजय की पूजा-अर्चना की जानी चाहिए ।" यह सुनकर निशाचरों ने पानी में उतरकर स्नान किया और फिर (रावण की पूजा के लिए) आवश्यक चन्दन, पुष्प आदि एकत्र कर लाये । उस विस्तृत बालुका रूपी कल्पित वेदी पर एक मणिपीठ के ऊपर अभिषेक करके उत्तम शिवलिंग को अर्चनार्थ रख दिया और फिर आचार्यों के द्वारा निर्दिष्ट वाक्यों, मन्त्रों सहित यथाविधि उसकी पूजा-अर्चना की । फिर भक्तिपूर्वक नमस्कार तथा पवित्र हृदय से कई प्रकार (शिव की) स्तुतियाँ करता हुआ रावण नृत्य-निरत हुआ । (वह कहता गया कि) नित्य, निर्मल, आनन्दस्वरूप, रुद्र, मृत्युंजय, भूतेश आपको मेरा नमस्कार है । मेरे मन में यह अनुभूति होती है कि मैं, आचार्य और ईश में

ञानुमाचार्यनुमीशनु मौन्नायि मनसे तोन्नि वरुन्नितु मामकं। इङ्ङने वन्दिच्चिरिक्कुन्नतिन् मध्ये पौङ्ङि वरुन्नतु काणायितुजलं। २० पीठवुं वाळुं शिवलिंगवुमेल्लां कूटे मरिञ्ञभिषिक्तमाय् वन्नितु। कष्टमाहन्त! कष्टं! पुण्यवाहिनि पेट्टेन्नु पौङ्ङियतेन्तोरु कारणं? कीऴ्प्पोट्टोऴुकुन्न तोयमुण्टो पण्टु मेल्पोट्टोऴुकुमारेन्नयुमल्भुतं! ऐङ्ङने मेल्पोट्टु पौङ्ङ् जलमेन्नु तिङ्ङळ् तिरञ्ञरिञ्ञिङ्ङु वन्नीटुविन्। ऐन्नु शुकसारणन्मारे रावणन् चेन्नरिवानयच्चप्पोळवर्कळुं कीऴ्प्पोट्टु योजन वऴि चेल्लुम्पोळ् वाय्प्पोटु कण्टानोरु नरवीरने। अर्ज्जुन भूपति नारीजनवुमाय् मज्जनं चेय्युन्न नेरं कळिच्चुटन् पञ्चशतद्वयमां करं कौण्टवन् किञ्चन कीऴ्पोट्टयच्चीलितु जलं। अङ्ङने वाहिनि वेगेन मेल्पोट्टु पौङ्ङिय कारणमेन्नवर् चौल्लिनार्। कोपिच्चतु केट्टु रावणनेत्रयुं तापत्तोटुं परञ्ञीटिनानन्नेरं— ३० अर्ज्जुननाकुन्नतेवनति शठन् सज्जनद्वेषकन् कश्मलनेत्रयुं; ऐङ्किलवनेज्जयिच्चौऴिञ्ञेन्नियॆ लङ्कय्क्कु पोकुन्नतिल्ल ञान् निर्णयं। ऐन्नुर चेय्तु महेश्वर पूजयुं नन्नाय् समर्प्पियाते दशकन्धरन्

समरसता है। इस प्रकार वन्दना करते रहते समय नदी-जल बढ़ आता हुआ दिखाई पड़ा। २० वेदी, तलवार, शिवलिंग सब उलट गये और पानी से अभिषिक्त हो गये। (रावण सोचने लगा) हन्त! कष्ट-कष्ट! इस पुण्य नदी में एकाएक इस प्रकार जल बढने का क्या कारण होगा? यह बड़ा आश्चर्य हुआ! क्या नीचे को बहता जल पहले कभी ऊपर की ओर बहता हुआ देखा गया है? (उसने अनुचरों को आदेश दिया कि) नदी-प्रवाह की गति उलटने का कारण खोज आओ। इस प्रकार आज्ञा देकर रावण ने शुक और सारण को कारण ढूँढ़ने भेजा। वे नीचे एक योजन दूर तक गये तो एक नरवीर को देखकर आश्चर्यचकित हो उठे। राजा अर्जुन ने नारीमणियों सहित जलक्रीड़ा करते हुए अपने सहस्र करों से खिलवाड़ के रूप में जल की नीचे की ओर गति रोक दी थी, यही कारण है कि नदी-जल ऊपर की ओर बढ़ने लगा। ऐसा उन लोगों ने आकर (रावण को) बताया। यह सुनकर रावण अत्यन्त रोषाकुल हो उठा और अत्यन्त उत्ताप के साथ तब बोला— ३०। —"अर्जुन नामक वह शठ कौन है? जो भी हो वह सज्जनद्रोही एवं अत्यन्त कश्मल है। ऐसी बात है तो उस पर विजय पाये बिना मैं लंका को नहीं जाऊँगा; इसमें संशय नहीं है। ऐसा बोलकर, महेश्वर-पूजा को अपूर्ण ही छोड़कर दशग्रीव

क्रुद्धनाय्च्चेन्नुङ्ङट्टुत्तान् कृतवीर्य पुत्रनोटन्नु युद्धत्तिनु रावणन् ।
तीरदेशत्तिङ्कल् निल्क्कुन्न सामन्त वीरन्मारोटु परञ्ञु दशाननन्—
रात्रिञ्चरेश्वरनाकिय रावणन्, कार्त्तवीर्यार्ज्जुननोटु युद्धत्तिनाय्
वन्निता निन्नु विळिक्कुन्नितेन्नतुं चेन्नरियिप्पिन् नृपनोटु वैकाते ।
भूपति तन्नमात्यन्मारतु केट्टु सापहासं परञ्ञीटिनारन्नेरं ।
युद्ध समयमरिञ्ञिह वन्नु नीयेत्रयुं नन्नुचितज्ञनल्लो भवान् ।
केळिकलर्न्नु नीराट्टुन्नितु नृपन् नाळेयटक्कुं तवमदं निर्ण्णयं । ४०
पार्त्तुकूटा निनक्केङ्किलो ञङ्ङळेच्चीर्त्तमोदत्तोटु कोन्नाल् नृपवरन्
निन्नोटु युद्धत्तिनाय् वरुं निर्ण्णयं पिन्नेटमेल्लां निनक्करियाय् वरुं ।
अेन्नवर् चोन्ननेरं प्रहस्तादिकळ् निन्न नृपभटन्मारोटु पोर् चेय्तार् ।
युद्ध कोलाहलं केट्टु नृपाधिपन् मुग्धाक्षिमारोटु सादरं चोल्लिनान्—
पेटि कूटाते कुळिच्चु करेरुविनाटल् कूटाते ञानुं निमिषं वरां । ४५

रावणबन्धनम्

इत्थं परञ्ञु गदयुमेटुत्तति क्रुद्धनां कार्त्तवीर्यार्ज्जुनन्नेरं चेल्लुन्न
नेरं प्रहस्तन् मुसलं कोण्टल्ललाम्मारु नृपने प्रयोगिच्चान् । वन्न

तभी रोषाकुल हो कार्त्तवीर्यार्जुन से युद्ध करने जा पहुँचा । नर्मदा के तीर-प्रदेश पर खड़े सामन्त वीरों से दशग्रीव बोला—"रात्रिचर राजा रावण कार्त्तवीर्यार्जुन को युद्ध के लिए बुला रहा है, ऐसा तुम लोग तुरन्त जाकर राजा को सूचना दे आओ ।" राजा के अमात्यों ने यह सुनकर परिहास भरे शब्दों में कहा—"आप तो बड़े नीतिज्ञ जान पड़ते हैं ! आप युद्ध का समय देख आये हैं ! आप भी खूब निकले ! आज राजा केलियों सहित जल-क्रीड़ा में रत हैं; कल आइये, निश्चय ही आपका घमण्ड चूर कर देंगे । ४० अगर आप प्रतीक्षा नहीं कर सकेंगे तो सानन्द हमें मार डालिये; तब नृप (राजा) निश्चय ही तुरन्त आप से युद्ध करने आयेंगे और फिर उसका फल आप स्वयं देख लेंगे ।" उनके इस प्रकार कहते ही प्रहस्त आदि ने वहीं खड़े सैनिकों पर आक्रमण आरम्भ किया । युद्ध का कोलाहल सुनकर राजा ने सानन्द कामिनियों से कहा—"निर्भय तुम लोग स्नान-निवृत्त हो जाओ । मैं भी क्षणभर में आऊँगा । ४५

रावण-बन्धन

यह कहकर रोष से परिपूर्ण हो, गदा लिये कार्त्तवीर्यार्जुन के बढ़ते समय प्रहस्त ने मुसल ले ज़ोर से उन पर एक प्रहार किया तो उस मुसल-प्रहार

मुसलमिळविकक्कळञ्ञुटनीऱ्ऱटिच्चान् गद कौण्टु नृपाधिपन्।
ताडनमेट्टु मोहिच्चु वीणीटिनानाटलोटु प्रहस्तन् पुनरन्नेरं।
पेटि पैरुत्तु धूम्राक्षादिकळेल्लां ओटिनारेन्नतु कण्टु कोपत्तोटे
युद्धं दशशतहस्तनोटुं दशवक्त्रनुं चेय्तान् भयङ्करमां वण्णं।
मुन्नं पशुपतियोटु पितृपति सन्नाहमोटे पोरुत पोले तदा।
यातुधानाधिपन् तन्टे कवचवुं भेदिच्चु मेदिनि तन्निल् वीणू बलाल्।
कार्त्तवीर्यार्ज्जुननप्पोळ् गद कौण्टु रात्रिञ्चरेन्द्रनेयोऱ्ऱटिच्चीटिनान्।
ताडनमेट्टु विल्पाटु तेंट्रिच्चु पोय् पीडमुळ्ळुत्तु वीणान् दशवक्त्रनुं।१०
मोहं कलर्न्नु किटक्कुं दशास्यनेस्साहसत्तोटु कृतवीर्यनन्दनन्
पाशेन कालुं करङ्ङळुं बन्धिचु नीचनेयुमेट्टुप्पिच्चु भृत्यन्माराल्।
चन्द्रहासत्तेयुं कैक्कोण्टु भूमिपालेन्द्रनुमालयत्तिन्नु पोयीटिनान्।
कारागृहं तन्निलाक्कुविनेन्नयुं क्रूरनां रावणन् तन्नेयेन्नानवन्।
देवकळुं पुष्पवृष्टि चेय्तीटिनारावतिल्लेन्नु निशाचररुं पोयार्।
ॲन्तु कळिविनि नम्मुटे स्वामियां पंक्तिमुखन् तन्ने वीण्टु कौण्टीटुवान्। सन्तापमुळ्क्कोण्टु तम्मिल् विचारिच्चु चिन्तिच्च नेरत्तु मारीचनुं चौन्नान्। चेन्नु पुलस्त्य मुनियोटुणर्त्तिक्कु वन्नु

को काटकर नृपाधिप ने (प्रहस्त को) गदा से मारा। गदा-ताड़न से तुरन्त प्रहस्त विमूर्छित हो धराशायी हुआ। धूम्राक्ष आदि अत्यन्त भय-विह्वल हो भाग खड़े हुए। तो दशशत हस्तवाले (सहस्र भुजा वाले कार्तवीर्य) से दशग्रीव ने भयंकर युद्ध किया जैसे कि पूर्वकाल में पशुपति (शिव जी) से पितृपति (यमराज) ने पूरी तैयारी के साथ युद्ध किया था। रावण का कवच विदीर्ण हो नीचे जा गिरा; तब कार्त्तवीर्यार्जुन ने दशग्रीव पर गदा-प्रहार किया। गदा-ताड़न से खिन्न हो रावण मूर्छित हो दूर जा गिरा। १० बोध-रहित पड़े दशानन के हाथ-पैर कार्त्तवीर्यार्जुन ने पाश से आबद्ध किये तथा उस पापी को अपने सेवकों से उठवा लिया। (रावण का) चन्द्रहास हाथ में उठाये भूपति (कार्त्तवीर्यार्जुन) अपने भवन में आ गये। उन्होंने अपने सेवकों को उस क्रूर दशग्रीव को कारावास में रखने का आदेश दिया। (यह देख) देवताओं ने पुष्प-वर्षा की और दूसरा कोई उपाय न पाकर निशाचर लोग वापस चले गये। (वे परस्पर विचार करने लगे कि) हमारे स्वामी दशग्रीव को छुड़ा लाने का क्या उपाय है? बड़े दुःखपूर्वक जब इस पर विचार किया जा रहा था, तब मारीच ने कहा—"हम जाकर पुलस्त्य मुनि को समाचार देंगे तो उदारचेता वे आकर बचा लेंगे।' यह निश्चय लेकर उन्होंने जाकर पुलस्त्य मुनि को समाचार

रक्षिक्कुमवन् तिन्तिरुवटि। अन्तु कलिपच्चवर् चेन्नु चौल्ली-
टिनार् खिन्ननायप्पोळ् पुलस्त्य मुनीन्द्रनुं। तन्नुटे पुत्रतनय
वात्सल्यत्ताल् चेन्नु माहिष्मति तन्निलकं पुक्कान्। २० अर्घ्यं
पाद्यासनाद्यङ्ङळाल् पूजिच्चु सल्करिच्चाशु नमस्करिच्चीटिनान्।
अत्रयुमानन्दमुण्टायितु भवानत्रैव मोदालेळुन्नळ्ळिय मूलं।
कर्त्तव्यमेन्तु मया पुनरेन्नतुं पृथ्वीशनाशु चोदिच्चोरनन्तरं। २३

रावणमोचनं

मन्दस्मितं चेय्तरुळ् चय्तु तापसनिन्दु कुलोत्भवन्मार्क्किततुपपन्नं।
अन्यून वीर्यबलादिकळोटुं नी नन्नाय् सुखिच्चु वसिक्क पलकालं।
वारान्निधियेयुं पर्वतं तन्नेयुं घोरनां रावणन् तन्नुटेयाज्ञयाल,
एतुमळियाते निर्त्तुन्नवने नी पाद प्रहारेण शीघ्रं जयिच्चतु—
मेत्रयुमत्भुतमेन्ने परयावू भक्तनत्यन्तमिष्टन् भवानाकयाल्।
पौत्रनेनिक्कु दशास्यनवने नी यात्रयाक्केणमेन्नोटु कूटे प्रभो!
अन्न नेरत्तेळुन्नेट्टु महीपति चेन्नुटन् केट्टुमळिच्चु विट्टादराल्।

सुनाया और समाचार पाकर पुलस्त्य मुनि अत्यधिक खिन्न हुए। अपने पौत्र के प्रति वात्सल्य से ओतप्रोत हो वे महिष्मतीपुरी में पहुँचे। २० (उनके पहुँचते ही कार्त्तवीर्यार्जुन ने) अर्घ्य-पाद्य-आसन आदि से उनका सेवा-सत्कार किया और नमस्कार किया तथा (बोले कि) आपके कृपापूर्वक पधारने से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। उसके बाद पृथ्वीश ने (मुनि से) पूछा कि मैं आपकी क्या सेवा करूँ ?। २३

रावण-मोचन

मुनीन्द्र ने मन्दहास के साथ कहा—"इन्दुकुल (चन्द्रवंश) में उत्पन्न राजाओं के लिए यह (तपोधन-भक्ति) उचित ही है। अत्यधिक वीर्य-बल-साहस के साथ आप दीर्घकाल तक सुखपूर्वक जीवित रहें। आतंककारी रावण सागर तथा पहाड़ तक को अपनी आज्ञा के वशीभूत रखता है। ऐसे रावण पर केवल पाद-प्रहार से आपने विजय पायी। आपकी अद्भुत शक्ति है। इतना ही कहा जा सकता है। आप मेरे भक्त और मेरे प्रिय हैं। (इसलिए मैं याचना करता हूँ कि) रावण मेरा पौत्र है और उसे मुक्त कर मेरे साथ भेजने की कृपा करें। यह सुनते ही सानन्द महीपति सिंहासन से उठे तथा रावण के पास पहुँच कर उसे बन्धन-मुक्त कर दिया। अभ्यंग स्नान के उपरान्त भोजन दिया तथा सप्रसन्न राजा

अभ्यंग स्नानादि भोजनवुं कौट्टुत्पन्न मोदेन वस्त्राभरणङ्ङळ् आलेपनादिकळ् कोण्टुमलंकरिच्चालस्यवुं तीर्त्तयच्चान् मुनियोटुं। लज्जया पत्तु वक्त्रङ्ङळुं ताळ्त्ति तिन्नज्र्जुनन् तन्नोटु यात्रयुं चोल्लिनान् । १० मुत्तच्छनेच्चेन्नभिवाद्यवुं चेय्तु मत्तनां रावणन् निर्ग्गमिच्चीटिनान् । अर्ज्जुन भूपनाशीर्वादवुं चेय्तु विज्वरनायें ळुन्नळ्ळि मुनीन्द्रनुं । पंक्तिमुखानुचरन्मारुमाशु वन्नन्तिके तिन्नु तोळुतार् दशास्यनें । पुष्पकमाय विमानवुमादराल् पिन्पाटु चन्द्रहासत्तेयुं नल्किनान् । कार्त्तवीर्याज्र्जुननप्पोळ् दशानननार्त्तियुं तीर्न्नु पितामहन्तन्नोटुं सेतुमुरिच्चुविट्टोरु महानदि मोदेन वेगाल्-वकटन्न पोले तदा, निर्ग्गमिच्चीटिनानन्नेरमन्निके किष्किन्धयां नगरं कण्टितन्नेरं । विग्रहत्तिङ्कल् जयिक्केणमिन्नुटनुग्रनां बालियें येन्नु निनच्चवन्, युद्धत्तिनाशु पुरप्पेट्टु चेन्नुटन् वृत्रारिपुत्रनेच्चेन्नु विळिच्चप्पोळ् तारनां वानरवीरनतु केट्टु शूरनां रावणनोटु चोल्लीटिनान्— २० इप्पोळिविटेयिल्लल्लो कपीश्वरन् अल्पनेरं पार्क नक्तञ्चराधिप ! सिन्धुक्कळ् नालिलुं चेन्नु कुळिच्चवन् सन्ध्याभिवन्दनं चेय्तु वरुमिप्पोळ् । अर्द्धप्रहरमात्रं पार्त्तुकोळ्ळुक

ने वस्त्राभरणों तथा आलेपनों से उसका अलंकार किया और विश्राम के उपरान्त उसे मुनि के साथ जाने दिया । लज्जावश अपने दसों आनन झुकाये रावण ने कार्त्तवीर्यार्जुन से विदा माँगी । १० फिर अपने पितामह को प्रणाम करके उन्मत्त रावण वहाँ से निकल पड़ा । भूपति कार्त्तवीर्यार्जुन को आशीर्वाद दे तथा मन के दुःख को दूर करके मुनीन्द्र भी (अपने आश्रम को) निकल पड़े । तुरन्त ही रावण के अनुचरों ने निकट आकर रावण को प्रणाम किया । कार्तवीर्यार्जुन ने सहर्ष पुष्पक विमान और बाद में चन्द्रहास उसे वापस दे दिया । तब दुःख से निवृत्त रावण अपने पितामह के साथ ऐसे निकल पड़ा जैसे सेतु-बन्धन तोड़ कोई महानदी बह निकलती है । इस प्रकार यात्रा करते समय समीप ही किष्किन्धानगरी दिखाई दी । आज युद्ध में उग्र बाली को जीतना है, ऐसा सोचकर युद्ध के लिए तैयार हो आगे बढ़कर उसने वृत्रारिपुत्र (बाली) को युद्ध के लिए निमंत्रण दिया । तब यह सुनकर वानरवीर तारेय (अंगद) शूर रावण से बोला— । २० —"हे नक्तंचरेश ! अब कपीश्वर घर पर नहीं हैं, आप थोड़ी देर ठहर जाएँ । चारों सागरों में स्नान तथा संध्या-वंदना करके वे तुरन्त आ जाएँगे । युद्ध के लिए कटिबद्ध हो आये हे राक्षसेश्वर ! अर्द्ध प्रहर मात्र के लिए प्रतीक्षा करें । पहले भी ऐसे कई

युद्धत्तिनाय् वन्न नक्तञ्चर प्रभो ! पण्टुमी वण्णं पलरुं मदिच्चु वन्नण्टर्कोन् पुत्रनोटेट्टु युद्धं चेय्तार्। कोन्नान् कपीन्द्रनवरुटे-येल्लोरु कुन्नु पोले किटक्कुन्नतु काण्क नी। बालियोटेक्किल् तीयुं मरिच्चीटुमिक्कालममृत पानं चेय्तिताकिलुं। मृत्युवट्टुत्ति-निप्पार्क्करुतेन्नु निन् चित्तत्तिलुण्टेङ्किल् वैकाते चेल्क नी। दक्षिण वारिधि तीर देशत्तिङ्कल् मर्क्कट वीरनिरिक्कुमिप्पोळेटो ! तत्रैव चेन्नवन् तन्नोटेतिरिट्टु युद्धवुं चेय्तु मरिच्चु कोण्टालुं नी।२९

रावणन् बालियुटे वालिल् कुटुङ्ङियतु

तारनीवण्णं परञ्ञ वाक्यं केट्टु नेरे तिरिच्चु नटन्नितु रावणन्। रूक्षत पूण्ट सैन्यङ्ङळोटुं चेर्न्नु दक्षिण वारिधि तीरे तिरिच्चप्पोळ् मर्क्कट वीरनेक्काणायि तत्क्षणे तेक्कु तिरिञ्ञि-रुन्नीटुन्नतुनेरं। तन्नेयवन् कण्टीलेन्नु निरूपिच्चु पिन्नूटे चेन्नु पिटिच्चान् दशाननन्। एन्नेप्पिटिप्पान् वरुन्निनतिवनेन्नु तन्नुळ्ळि-लोर्त्तिरुन्नान् कपिश्रेष्ठनुं। मन्द मन्दं चेन्नटुत्त नेरं वालि तन्नुटे

मदमत्त लोगों ने आकर इन्द्रपुत्र से युद्ध किया था और कपीन्द्र ने सब की हत्या की थी। उनकी हड्डियों का ढेर लगा हुआ है, जिसे आप देख लीजिए। चाहे इस बार अमृत-पान करके ही क्यों न आये हो, बाली से लड़कर आप भी मृत्युगत होंगे। मृत्यु के नजदीक पहुँच पाने के कारण अगर आपको प्रतीक्षा करना असह्य सा लग रहा है तो आप तुरन्त ही उनके पास पहुँच जाइये। मर्कटराज अब इस समय दक्षिणी सागर के तट पर मिलेंगे। वहाँ पहुँचकर तथा उनसे मिलकर आप मृत्यु का ग्रास **बनिये। २९**

रावण का बालि की पूँछ में फँस जाना

तारेय के ऐसे वचन सुनकर रावण सीधे वहाँ से निकला और अपनी उग्र सेना को लिए दक्षिणी सागर की तरफ चल पड़ा। दक्षिणी समुद्र के तट पर पहुँचते ही उसने दक्षिण की तरफ मुख किये बैठे बालि को देख लिया। 'मुझे उसने नहीं देखा' ऐसा सोचकर दशानन पीछे से उसको पकड़ने के लिए पहुँचा। मुझे पकड़ लेने के लिए ही यह आ रहा है, ऐसा मन में सोचकर ही कपिश्रेष्ठ बैठा हुआ था। धीरे-धीरे उसके निकट आते ही बालि ने अपनी पूँछ में उसे फँसा लिया। भयभीत राक्षस निकट नहीं आये। बालि ने उसे पूँछ से कसकर बाँध लिया और रावण के

वाल् कॊण्टु पॆट्टॆन्नु चुट्टिनान् । पेटिच्चटुत्तील राक्षसरारुमे गाढमाय्
बन्धिच्चु तूङ्ङिक्किटक्कवे दुश्च्यवनात्मजन् वेगेन चाटिनान्
पश्चिम वारिधि तन्निलविट्टॆन्नुं तर्प्पणं चॆय्तु वटक्कुमव्वण्णमे
कॆल्पोटु पूर्वाब्धि राशियिलुं चॆन्नु मर्क्कट राजन् कुळिच्चु पाटिप्पोन्नु
किष्किन्ध पुक्किरुन्नीटिनानश्रमं । १० भोजनवुं कळिच्चानंद
चित्तनाय् पूजितनाय् वसिच्चीटुं दशान्तरे देवेन्द्र नन्दनन्
चोदिच्चितादराल् रावणन् तन्नोटु मन्दस्मितान्वितं । आरॆटो
नीयॆन्तिविटॆ अकप्पॆट्टतारुं निनक्कॊरु बन्धुविल्लान्त्रितो ।
रावणनाकुन्न पौलस्त्यनेष आनेवमॆन् कर्म्मदोषत्तालकप्पॆट्टु;
विख्यातनाय भवानोटॆनिक्किनिस्सख्यमुण्टाकयुं वेणं विशेषिच्चुं ।
किष्किन्धयुं मम लङ्कानगरवुमॊक्कुमिरुवर्क्कुमॊन्नायिरिक्कणं ।
पावकन् तन्नॆयुं साक्षियाक्किक्कॊण्टु रावणनोटु सख्यं चॆय्तु वालियुं
किष्किन्धयिलॊरु मासमिरुन्नितु रक्षोवरन्मारुमाय् दशकन्धरन् ।
यात्रयुं चॊल्लिप्पुऱप्पॆट्टितु पिन्नॆ रात्रिञ्चरेन्द्रन् पटयोटु कूटवे ।
इन्नयॆल्लां बलमुळ्ळ कपीन्द्रनॆ धात्रीतले धर्म्मरक्षवरुत्तुवान् २०
क्षिप्रमॊरु शरं कॊण्टु वधिच्चतुं चित्पुरुष ! पुरुषोत्तम ! नी तन्नॆ ।

पूँछ में लटकते ही दुश्च्यवनात्मज (इन्द्रपुत्र बालि) शीघ्र पश्चिमी सागर की ओर कूद पड़ा और वैसे ही उत्तरी सागर में पहुँच तर्पण करने के उपरान्त पहले के जैसे ही वहाँ से पूर्वी सागर पर पहुँचा। नहा-धोकर मर्कटराज वहाँ से सीधे किष्किन्धा में पहुँच सानन्द बैठ गया १०। भोजन के बाद सानन्द विश्राम करते हुए पीछे मुड़ इन्द्रपुत्र ने मन्द मुस्कान भरते हुए रावण से पूछा—"अरे तुम कौन हो और यहाँ कैसे फँस गये हो? (यहाँ से छुड़ा लेने के लिए) क्या तुम्हारे कोई बन्धु-बान्धव नहीं थे?" (रावण बोला) मैं पौलस्त्य रावण हूँ, कर्मदोष से यहाँ फँस गया। विश्रुत एवं विख्यात आप से मैं विशेष रूप से सख्य स्थापित करने का कांक्षी हूँ। किष्किन्धा तथा मेरी लंकानगरी को हम दोनों अभिन्न मान लें। ऐसा कहकर अग्नि को साक्षी बनाकर बालि ने रावण के साथ सख्य-स्थापना की। दशग्रीव अपने राक्षसों सहित किष्किन्धा में पूरा एक मास रहा और फिर राक्षसेश ने अपनी सेना के साथ वहाँ से विदा ली। (अगस्त्य मुनि भगवान राम से कहते हैं) पृथ्वी पर धर्म की रक्षा के लिए ऐसे शक्तिशाली कपीन्द्र को—। २० —हे चिद्पुरुष! हे पुरुषोत्तम! आप ही ने क्षण भर में एक बाण से मार डाला। लोककंटक-स्वरूप रावण नरपतियों पर

निर्घृणनाय दशास्यन् महीपति वर्गत्तेयुं जयिच्चात्मोदयत्तोटुं चेन्नु लङ्कापुरि तन्निल् वाणीटिनान् वन्नितु पौरजनत्तिनु सौख्यवुं।२३

नारद-रावण संभाषणं

अक्कालमेकदा श्री नारदन् मुनि मुख्यनुं चेन्नितु लङ्कयिलादराल् । सल्क्कारवुं चेय्तिरुत्तिद्दशास्यनुं रक्षोवरनोटु चोन्नान् मुनीन्द्रनुं । एकाङ्कशेखर भक्तनाकुं निन्नेक्काणेणमेन्नु कौतिक्कुन्नितुळ्ळिल् ञान्। ओट्टुनाळुण्टतिनिन्नु योगं वन्नु तुष्टियुमेट्टं वळर्न्नितु मानसे । चोल्लुवन् ञान् तव नल्लतु केळ्क्क नी चोल्लुळ्ळ मन्नरिल् मुम्पुळ्ळ मन्नव ! पृथ्वियिल् वाळुन्न मर्त्यजनङ्ङळे युद्धे पलरेयुं निग्रहि-च्चायल्लो । ॲन्तोरु कीर्त्तियतिनाल् निनक्कुळ्ळतन्तकन् तन्-वशरल्लो मनुष्यर्केळ् । आधिकळ् कोण्टुं महाव्याधिकळ् कोण्टु प्रेताधिपालयं पुक्कुवाणीटुवोर । आर्त्तरां मर्त्यरेक्कोन्नाल् निनक्कोरु कीर्त्तियिल्लेन्नतुं पार्त्तरुळेणमे । सत्यमत्रेयखळ् चेय्तते-निक्कोरु बुद्धि पऱञ्ञतुमेत्रयुमुत्तमं । १० पाताळ लोकमकं पुक्कु ञानिनि वाताशनेन्द्रादिकळेज्जयिच्चु पोय् देवलोके चेन्नु

विजय पाने के उपरान्त सहर्ष अपनी लंका में लौटकर सुखपूर्वक रहने लगा । नगरवासी लोगों की सुख-शान्ति उत्तरोत्तर बढ़ती गयी ।

नारद-रावण संवाद

उन्हीं दिनों एक बार मुनि-प्रवर नारद लंका में आये । दशग्रीव ने सत्कारपूर्वक उन्हें बिठाया तो मुनीन्द्र ने राक्षसराज से कहा—"महादेव के प्रिय भक्त ! तुमसे मिलने की कई दिनों से मेरी इच्छा थी; किन्तु आज ही वह सौभाग्य प्राप्त हुआ । (तुमसे मिलकर) आज मन संतुष्ट हुआ । संसार के प्रसिद्ध राजाओं में अग्रेसर हे रावण ! मैं आज तुमसे एक विशेष बात कहना चाहता हूँ । तुम मेरी बात मानो, तुम्हारा मंगल होगा । तुमने संसार के असंख्य लोगों को युद्ध में मार डाला । उससे तुम्हारा क्या यश बढ़ा है ? नहीं (मारो) तो भी मनुष्य काल के ग्रास हैं । आधियों-महाव्याधियों के शिकार बनकर प्रेताधिपालय (यमलोक) में वे जानेवाले ही हैं । इन दुःखी मानवों की हत्या करने से तुम्हारा विशेषकर कुछ यश बढ़नेवाला नहीं है, यह तुम जान लो ।" (तुरन्त रावण का कथन है) आपका कथन सत्य है । आपने मुझे सद्बुद्धि दिलानेवाले सदुपदेश दिये, जिसके लिए आप अभिनन्दनीय हैं ! । १० मैं अभी रसातल में पहुँच

देवेन्द्रनादियेंद्देवकळोटुं जयिक्कुन्नतुण्टल्लो । अेन्नतु केट्टरुळ्
चैय्तितु नारदन् इन्नुन्निनक्कतु साधिक्कुमेंङ्किलुं एतॊरु मार्ग्गेण
पोकुन्नितु भवान् पाताळलोकत्तु चॆन्नु कौण्टीटुवान् । अन्तकन्
तन् पुरि तन्नरिके वळि दन्तशूकालयत्तिन्नु पोयीटुवान्
अेन्तौरुपाय मितोक्कॆणमेंङ्किलुमन्तकन् पोवानयय्कयुमिल्लल्लो ।
नारदनेवमरुळ् चॆय्त नेरत्तु घोरन् मदेन चिरिच्चु चौल्लीटिनान् ।
भावं त्वदीयमड्रिञ्ञेन् महामुने ! केवलं मूर्खम्माक्कॆन्तड्रियावतुं ।
अन्तकन् तन्नॆज्जयिच्चौळ्ञ्ञेतु मौरन्तर्गत मेंनिक्किल्लॆन्नु निर्णयं ।
अेन्नुर चॆय्त दशाननन् तन्नोटु नन्नायनुवादवुं चॆय्तु नारदन् । २०
युद्ध कोलाहलं काणायिनियेन्नु चित्तकुतूहलं पूण्टॆळुन्नळ्ळिनान् ।
मानुषर् चॆय्युं शुभाशुभ कर्म्मङ्ङळ् मानसे चिन्तिच्चमात्य जनवुमाय्
वाणीटुमन्तकन् तन् पुरि पुक्कितु वीणाधरन् मुनि गानवुं चॆय्तितु । २३

नारद-काल संभाषणं

वन्दनवुं चॆय्तॆतिरेटु पूजिच्चु नन्दिच्चिरुत्तिनान् धर्म्मराजन् तदा ।

वाताशनेन्द्र (सर्पश्रेष्ठ) आदि को जीतकर तुरन्त वहाँ से देवलोक में पहुँच कर समस्त देवताओं सहित इन्द्र को जीत लूँगा ।" यह सुनकर नारद जी बोले—"आज तुम सब कुछ करने की सामर्थ्य रखते हो । फिर भी मैं पूछता हूँ कि तुम पाताललोक तक पहुँचने के लिए किस मार्ग से जाओगे ? दन्तशूकालय (सर्पों का आलय—पाताललोक) पहुँचने के लिए अन्तकपुरी (यमपुरी) के समीप से मार्ग निकलता है । यमपुरी के समीप से तुम्हें यमराज जाने नहीं देंगे । ऐसी हालत में वहाँ जाने का उपाय पहले ही सोच लेना उचित होगा । " इस प्रकार नारद को कहते सुनकर दुष्ट रावण अट्टहास के साथ बोला—"हे महामुनि ! आपका तात्पर्य मैं समझ गया । निरे मूर्ख लोग क्या जानेंगे ! अब निश्चयपूर्वक समझ लीजिए; पहले यमराज को जीत लेने के अतिरिक्त मेरा दूसरा कोई मनोरथ नहीं है ।" इस प्रकार कहनेवाले रावण से नारद जी ने विदा ली । २० और 'आगे जल्दी ही भीषण युद्ध देखने का अवसर आएगा,' ऐसा मन में सोच कुतूहल के साथ वे चल पड़े । मनुष्य के शुभाशुभ कर्मों के बारे में अपने अमात्य जनों के साथ न्यायासन पर बैठ विचार करनेवाले यमराज की नगरी में वीणाधर मुनि (नारद जी) वीणा वादन करते हुए पहुँचे । २३

नारद-यमराज संवाद

धर्मराज ने वन्दना सहित नारद जी का स्वागत किया और सहर्ष पूजा करके उन्हें आसन पर बिठा दिया । फिर प्रसन्न मुद्रा में मन्दस्मिति

मन्दस्मितं चेय्तु नारदन् तन्नोटुं नन्दिच्चु चोदिच्चितादर पूर्वकं ।
ॲन्तोरु वार्त्तयुळ्ळू भुवनत्रये सन्तापमेतानुमिल्लयल्ली मुने !
ॲन्तु पऱयावतेन्नऱिञ्ञील ञान् बन्धमिल्लातोरवस्थयुण्टिन्निप्पोळ् ।
केळ्क्कुन्नतुमतु निन्नोटु चोल्लुवान् शीघ्रमिविटेक्कु वन्नितु ञानेटो!
पण्टु केट्टिट्टिल्लयात विशेषङ्ङळुण्टु केळ्क्कुन्नितु विस्मयमेत्रयुं ।
अन्तकन् तन्नेज्जयिक्केणमेन्नतु चिन्तिच्चिविटे वरुं दशकन्धरन् ।
अन्तक दण्डमेट्टाल् मरियातोरु जन्तुविल्लेन्नतु केळ्प्पुण्टु मुन्नमे ।
इन्नऱियामतुमेन्ने पऱयावितेन्नरुळ् चेय्तिरुन्नीटुं दशान्तरे
पूर्ण्णं शरच्चन्द्रमण्डलमाकाशे तूर्ण्णमुदिच्चु पोङ्ङुं वण्णमाभया,१०
काणायि पुष्पकमाय विमानवुं कौणपाधीशन् वरवितु निर्ण्णयं ।
ॲन्नतऱिञ्ञुरचेय्तु कृतान्तनुं वन्नु कूटीटुक नम्मुटे सैन्यवुं ।
अन्तक सैन्यवुं शंखनादं केट्टु दुन्दुभिघोषेण वन्नु कूटीटिनार् । १३

नरक वर्ण्णनं

कण्टान् कृतान्त पुरियिल् तदा दशकण्ठन् भयङ्करमां नरकङ्ङळे ।
तापमाम्मारु महानरकङ्ङळिल् पापिकळेच्चेर्त्तु दहिप्पिक्कुन्नतुं ।

के साथ धर्मराज ने (नारद जी से) पूछा—"हे महामुनि ! संसार में क्या समाचार है ? आप को कोई संकट तो नहीं है ?" (नारद जी बोले) "क्या उत्तर दूँ, यह नहीं समझ पा रहा हूँ । आधार-रहित एक जनश्रुति फैली हुई है । जो सुना गया, उसे तुम्हें बता देने के लिए मैं शीघ्र यहाँ उपस्थित हुआ हूँ । ऐसा समाचार सुनने में आ रहा है, जैसा पहले कभी सुनने का अवसर नहीं आया था । (सुना है कि) यमराज को जीतने का संकल्प लिये तुरन्त दशग्रीव यहाँ आनेवाला है । पूर्व में सुन रखा है कि काल-दण्ड लगने पर कोई प्राणी जीवित नहीं रह पाएगा । आज (वही) देखना है; यही कहा जा सकता है ।" इतना कहते ही, आकाशमण्डल में शरत्कालीन पूर्णचन्द्र की सी आभा लेकर— । १० पुष्पक विमान दिखाई पड़ा और उसे राक्षसराज का आगमन समझकर यमराज ने आदेश दिया—"हमारी सेनाएँ तैयार हों ।" तुरन्त ही यमराज की सेनाएँ दुंदुभी बजाते हुए तथा शंखनाद करती हुई आ खड़ी हो गयीं । १३

नरक-वर्णन

दशग्रीव ने कृतान्तपुरी (यमपुरी) में भयंकर नरक देख लिये। पापियों को महानरकों में भयंकर अग्निज्वाला में जलाते हुए तथा अत्यन्त

पुण्यमतीव चेंय्तोरें मनोहर स्वर्णालये सुखिप्पिक्कुन्नतुं तदा।
कालसूत्रमसिपत्रवनमथ शूल प्रोतं वैतरणियेन्नित्तरं। क्रूरङ्ङळाय
महानरकङ्ङळिलोरो दुरितङ्ङळ् चेंय्त जनङ्ङळे दुःखिप्पि-
क्कुन्नतुं कण्टु दशाननन् उल्क्कट रोषेण नायुं नरिकळुं। चेंन्नु
कटिच्चु कीरुन्न नेरत्तु खिन्नतयोटे मुरयिट्टुन्नू चिलर्। वाच्च
क्रिमिकळ् कटिच्चु वशं केट्टु मूर्छिच्चु वीणु मुरयिट्टुन्नू चिलर्।
कूरिरुट्टाय कुळिकळिल् वीणळल् पारं मुळुत्तु मुरयिट्टुन्नू चिलर्।
घोरांबुधियिलोरु कर काणाते पारमुळन्नु मुरयिट्टुन्नू चिलर्। १०
तीयिल् क्किटन्नु पोरिञ्ञुरुकि युटलय्यो! शिव! शिवयेन्नु करकयुं।
तण्णीर तरुवतार् पैदाहमुण्टेन्नु तन्ने परञ्ञु मुरयिट्टुन्नू चिलर्।
चेम्पु कोण्टुळ्ळ रूपं पळुक्केच्चुट्टु सम्प्रमोदेन तळुकिच्चुमेप्पोळुं
पोन् निरमामिवळेप्पुणर्न्नोटु नी अन्नोनिनक्कुळ्ळलिन्नो सुखमुळ्ळु?
अेन्नु परकयुं नन्नायत्तळुकिच्चुं निन्नीटुमन्तक किङ्करन्मारेल्लां
उन्नत माकिय कुन्निन् मुकळिल् निन्नन्यून तापेन कीळ्प्पोट्टुरुट्टियुं
अेय्युन्नतारेन्नतुमेतु मरियाते मेय्यिल् वन्नम्पुकळ् कोण्टु कोण्टुं बलाल्।

पुण्यात्माओं को मनोहर स्वर्णिम भवनों में सुखवास कराते हुए (रावण ने देखा)। कालसूत्र, असिपत्रवन, शूलप्रोत, वैतरणी ऐसे महादारुण नरकों में पापात्माओं को अपने दुष्कर्मों के अनुसार भयंकर दुःख देते देख रावण अत्यन्त रोषाकुल हो उठा। कहीं कुत्तों-सियारों के नोच-खसोटकर खाते समय कुछ लोग अत्यन्त वेदनापूर्ण शब्दों में कराह उठते हैं। कुछ लोग उग्र एवं घोर क्रिमियों के निरन्तर दंशन से मूर्छित हो असह्य पीड़ा से चिल्ला उठते हैं। कुछ लोग अन्धकारावृत गढ़ों में गिर पड़ दारुण पीड़ा से रो उठते हैं। कुछ अन्य लोग गहरे सागर में फँसकर पार जाने का उपाय न पाकर चिल्लाते हैं। १० कुछ लोग अग्निज्वाला में जल-गलकर "हाय! शिव शिव!" की पुकार मचाते हैं। 'प्यास लगती है, कौन पानी देगा' ऐसा कोई-कोई चिल्लाते हैं। स्त्री-लंपटों को तप्त तांबे की स्त्री प्रतिमाएँ दिखाकर कहते हैं कि स्वर्णिम रंग की इस नारी का आश्लेष करो और देख लो कि तुम्हें तब अधिक सुख मिलता था या आज मिल रहा है। ऐसा कहते हुए यमदूत उन प्रतिमाओं से पापियों का गाढाश्लेष करवाते हैं तो कभी उत्तुंग शिखरों पर से घोर यातनाओं से परिपूर्ण गहरे गर्तों में फेंक देते हैं और स्वयं अदश्य रह उनके शरीरों को तीखे बाणों की वर्षा से आहत कर डालते हैं। किन्हीं लोगों के मुँह में तप्त हो गलता सीसा भरा जाता है और उसी का पान कराया जाता है। मल-मूत्र, रक्त-मज्जा से

ईयवुं तन्नायुरुक्किच्चिलरुटे वायिल्प्पकर्न्नु कुटिप्पिक्कयुं चिलर् ।
मूत्र मल जल चोर चलङ्ङळाल् पूर्त्तियायुळ्ळ पुळयिल्क्किटन्नु चिलर्।
तीन्तिक्कुळञ्ञतु तन्ने कुटिक्कयुं तान्तराय् वाळुमनेक नाळिङ्ङने २०
शूलत्तिन्मेल्किटन्नाटुन्नितु चिलर् काल भटन्मार् कळयिट्टु वेक्कियुं;
चुट्टकोटिल् कोण्टुटलिल्प्पिटिक्कयुं निष्ठुरमां वण्णं कोक्कु वलिक्कयुं
वक्त्र तुण्डङ्ङळाल् गृद्ध काकन्मारुमक्षिकळ् कोत्तिक्कुटयुन्नितु पिन्ने।
नाय्क्कळेळुनूट्रिरुपतुण्टुग्रमाय् रूक्षतयोट् कटिच्चु वलिक्कयुं;
राक्षसर् वाळ्कोण्टु वेट्टिप्पोळिक्कयुं वाय्क्कुन्न चोर कुटिच्चुटनाक्कयुं।
वाय्पोट्टु वायुमम्मूक्कुममर्त्तुटन् वीर्प्पुमुट्टिच्चु पिटयुन्नितु चिलर् ।
मुळ्ळल वट्टिन्मेलिट्टु वलिच्चुटन् तुळ्ळितिलविळिक्कुन्नतुं
केळ्क्कायि । अट्मिल्लातोळमुळ्ळ नरकङ्ङळ् मट्टुं पलतरं
कण्टितु रावणन् । तापेन घोर नरके किटप्पोरु पापिकळेक्कण्ट
नेरं दशाननन् । कारुण्यमुळ्क्कोण्टेटुत्तु करेट्टिनान् । ३०

रावण-कालयुद्धं

पोरिन्नटुत्तार् कृतान्त भटन्मारुं; आरिवर् धर्म्मराजाज्ञये

भरे तालाबों में हाथ-पाँव पटक-पटक कर शिथिल हो कोई-कोई वही पीते जा रहे हैं। और कई दिनों तक वहीं पड़े रहते हैं। २० किन्हीं लोगों को शूलों पर लटकाते हैं, नचाते हैं और उन्हें यमदूत बड़े डंडों से दबाया करते हैं। कितने ही लोगों का शरीर गरम चिमटे से खींचा जाता है तो निष्ठुरता-पूर्वक कितनों के अधर नोचे जाते हैं। गिद्ध-काक आदि मुख पर बैठ आँखें नोच-नोच निकालते हैं। वहाँ सात सौ बीस उग्र कुत्ते हैं जो दारुण रूप से शरीर चबाते-काटते हैं। राक्षस लोग आकर पूरी शक्ति लेकर तलवार से टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं और रक्त चूस-चूसकर अट्टहास भरते हैं। बलात् मुँह तथा नासिका-द्वारों को जोर से दबाने से कुछ लोग दम घुटकर तड़पते हैं। बहुतों को छुरों की धारों पर खींचा जाता है, जिससे आर्त्तनाद करते हुए लोग देखे जाते हैं। इस प्रकार अपार यातनाओं से युक्त और भी कई नरक दशग्रीव ने देख लिये। घोर नरकों में पड़ तड़पते पापियों को देख जीव-दया से प्रेरित हो रावण ने उनका वहाँ से उद्धार किया। ३०

रावण-काल युद्ध

कृतान्त के सैनिक (रावण को देख) युद्ध के लिए आगे बढ़े और पूछ बैठे—"धर्मराज की आज्ञा का उल्लंघन करने के लिए कटिबद्ध यह दुर्विनीत

लंघिप्पान् दौरात्म्यमुळ्ळ्कोण्टिविटेय्क्कु वन्नतुं। नम्मळाल् च्चेन्निङ्ङ् कोण्टु पोन्नीटातॆ नम्मुटॆ राज्यत्तु वन्नतुमत्भुतं ! पत्तु तलयुमिरुपतु नेत्रवुं हस्तङ्ङळुमुण्टिरुपतिवन्नॆटो ! नीलाद्रि पोलॆ भयङ्करमॆन्नयुं कालवशगतनाक तन्ने दृढं। अन्योन्यमित्थं परञ्ञायुधङ्ङळुं सन्नाहमोटॆट्टुत्तार्त्तटुत्तीटिनार्। श्राद्ध देवानुचरन्मारॆयत्तेरं रात्रिञ्चरन्मार् तटुत्तु निर्त्तीटिनार्। अप्पोळ् कृतान्त भटन्मार् शरङ्ङळाल् पुष्पकमाय विमाने निरत्तॆळुं गोपुर सौधादिकळ् मुरिच्चोरळवाभया पिन्नॆयुमुण्टाय् वरुं दृढं। ब्रह्माविनाल् पुरा निर्म्मितमाकिय निर्म्मल पुष्पकमाकयाल् विस्मयं ! १० नक्तञ्चरेन्द्रनुमस्त्रजालङ्ङळालत्तल् चेर्त्तीटिनानन्तक सेनयॆ। शक्तियोटन्तक किङ्करन्मार् गदा शक्ति शूलादिकळ् कोण्टु सरभसं नक्तञ्चरेन्द्र बलत्तॆ प्रयोगिच्चार् वित्रस्तरायितु रक्षो बलं तदा। युद्ध कोलाहलं कोण्टु जगत्त्रय मुद्धूतमायितु चित्रमत्रे तुलों। रात्रिञ्चरन्मार् तळर्न्नु चमञ्ञतु पार्त्तु दशग्रीवनुमति क्रुद्धनाय्। अत्यर्थमस्त्रशस्त्रङ्ङळ् वरिषिच्चानत्तलॊळिञ्ञु निन्नन्तक सैन्यवुं शस्त्र शूलास्त्र वज्रादि प्रहारेण रक्ताभिषिक्तनाय् नक्तञ्चरेन्द्रनुं।

कौन है ? हमारे स्वयं लाये बिना इसका हमारे राज्य में प्रवेश पाना आश्चर्य ही है ! इसके दस सिर, बीस नेत्र और बीस भुजाएँ हैं। नील शैल के समान भयंकर स्वरूपवाला यह निश्चय ही मृत्यु का ग्रास बनने जा रहा है। परस्पर ऐसा कहते हुए तथा आवश्यक हथियार और अन्य सामग्रियाँ लिये हुए वे शब्दघोष के साथ आगे बढ़े। तुरन्त निशाचरों ने श्राद्धदेव (यमराज) के अनुचरों को आगे बढ़ रोक लिया। क्रुद्ध यम-सैनिकों ने बाणों से पुष्पक विमान के अन्दर के गोपुरों, सौधों को काट-काटकर गिराना आरम्भ किया। किन्तु विस्मय की बात है, जैसे-जैसे वे कटते गये वैसे-वैसे वे फिर बनते गये। क्योंकि यह तो पहले ब्रह्मा से निर्मित पुष्पक ही रहा। १० राक्षसेन्द्र ने अस्त्र-जालों से यमराज के सैनिकों को आकुल-व्याकुल कर दिया। किन्तु यमराज के सैनिक गदा, शक्ति, शूल आदि उठाकर जल्दी-जल्दी राक्षस-सेना पर प्रयोग करते गये, जिससे राक्षस-सेना भयभीत हो उठी। युद्ध-कोलाहल से तीनों भुवन काँप उठे, युद्ध आश्चर्यजनक एवं विचित्र ही था ! निशाचर लोग आलस्य-युक्त होते गये; यह देखकर दशग्रीव बड़ा क्रोधाकुल हुआ और उसने बड़ी मात्रा में अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा की। किन्तु अन्तक-सेना निरुत्साहित नहीं हुई। यमदूतों के अस्त्र-शस्त्र, शूल, वज्र आदि के प्रहारों से राक्षसेन्द्र

पुष्पित शिंशपा तुल्य शरीरनाय् पुष्पकाग्रे त्रिन्नु भूमियिल्च्चाटिनान् ।
विल्लुं शरङ्ङ्ळुं कैक्कोण्टु रावणन् कोल्लुन्नतुण्टिवरे क्षणं कोण्टेन्नु ।
पाशुपतास्त्रं जपिच्चु तोटुत्तिताकाश भूम्यन्तरमन्तर मेन्नियये; २०
उज्ज्वलिच्चेट्मेरियुन्नतु कण्टु निर्ज्जर दैत्य गन्धर्व यक्षादिकळ्
वित्रस्तरायकन्नीटिनारन्नेरं । शत्रु संघत्ते योटुक्कुवानाय्-
वन्नोरस्त्राग्नि तन्निल्ट्टहिच्चु तुटङ्ङिनार् । मित्रात्मजानुचरन्मारतु
कण्टु नक्तञ्चरन्मारुमार्त्तु तुटङ्ङिनार् । सेना विनाशवुं शत्रु
विजयवुं मानसे चिन्तिच्चु कलिपच्चु कालनुं । ञानिवनेज्ज
यिच्चीटुवनेन्नभिमानमोटुर्वी समानमां तेरतिल् सत्वरमेरि
न्नटन्नानतु कण्टु मृत्युवुमन्तकन् मुम्पे न्नट कोण्टान् । मिन्नल् पोले
विळङ्ङुन्न पाशङ्ङ्ळुं तन्नरिके चेर्त्तुमुल्गराग्रत्तिङ्कल् तानोरु
मूर्त्तियाय् कालदण्डं धरिच्चूनमोळिञ्ञन्तकाग्रे न्नटन्नु कोण्टान् ।
अन्तक कोपमालोक्य महाजनमेन्तितय्यो कष्टमेन्नुळ्ळन्नीटिनार् । ३०
पेटिच्चु मण्टिनार् धूम्राक्षनादिकळ् पेटि कूटाते न्निन्नान् दशवक्त्रनुं ।
आयुध जालमयच्चान् कृतान्तनुमायासमुळ्क्कोण्टु न्निन्नान् दशास्यनुं ।

रक्ताभिषिक्त हुआ । पुष्पित शिंशपा तुल्य शरीर लिये वह पुष्पक विमान से नीचे पृथ्वी पर कूद पड़ा । 'इन लोगों को क्षण भर में समाप्त कर देता हूँ', ऐसा सोचकर रावण ने धनुष-बाण हाथ में उठाये । उसने मन्त्र-जाप सहित पाशुपतास्त्र का प्रयोग किया, जो भूमि और आकाश के बीच— । २० —अग्निज्वाला से प्रज्वलित हो उठा, जिसे देखकर देव, दैत्य, गन्धर्व, यक्ष आदि वित्रस्त हो दूर भाग गये । शत्रु-समूह का संहार करने के लिए प्रयुक्त अस्त्र की अग्नि-ज्वाला में यमराज के सैनिक (शलभों के समान) जल मरने लगे । यह देख निशाचर लोग जय-जयकार करने लगे । अपनी सेना का विनाश तथा शत्रु-सेना की विजय देख यमराज ने निश्चय किया कि अब मैं इसको जीत लूँगा । इस स्वाभिमान से युक्त हो यमराज पृथ्वीतल के समान (समतल) अपने रथ पर आरूढ़ हुए और तुरन्त आगे बढ़े । मृत्यु भी स्वयं यमराज के आगे-आगे चल पड़ी । मरणकारक मृत्यु-गदा के अग्रभाग में बिजली के समान दीप्तिमय पाश लपेटे तथा स्वयं मूर्तिमान बन और कालदण्ड को हाथ में लिये उत्साह सहित यमराज के आगे-आगे चली । यमराज का रोष देख समस्त जन भयभीत हो उठे कि हाय ! क्या विपत्ति है ! । ३० धूम्राक्ष आदि भयाकुल हो भागने लगे, किन्तु दशानन निर्भय खड़ा रहा । यमराज ने आयुधजालों का प्रयोग किया, फिर भी दशानन सायास खड़ा ही रहा ।

पारं तळर्न्नु तुटङ्ङिन्न नेरत्तु घोरमायेय्तान् कृतान्तने रावणन् । निर्म्मलमायवरायुध जालङ्ङळ् मर्म्मङ्ङळ्तोरुमयच्चान् कृतान्तनुं । एळहोरात्रमवर् तम्मिलिङ्ङने रोषेण निन्नु पोर् चेय्तारोरुपोले । कण्टार् विरिञ्चादिकळुमायोधनं; पण्टोरुयुद्धमोरुनाळुमिङ्ङने उण्टायतुमिल्लिनियी वण्णमेङ्ङुमे युण्टाकयुमिल्लयेन्नु महाजनं कोण्टाटिनार् कण्टु निन्नवरोक्कवे। नूरायिरं शरमेय्तान् कृतान्तने वेरेयोरेळम्पु सूतनेयुमेय्तान् । नूरु शरं मृत्यु तन्नेयुमेय्तितु शूरनां रावणन् पिन्नेयतु नेरं । ४० मृत्युमुखानल वायुवेगं कोण्टु नक्तञ्चरन्मार् दहिच्चु तुटङ्ङिनार् । तल्क्षणं मृत्यु चोन्नानन्तकनोटु रक्षोवरने ञान् निग्रहिच्चीटुवन् । अन्नेय-यच्चालुमेतुं प्रयासमिल्लिन्निवन् तन्ने वधिप्पानरिक नी । अङ्किल् नी चेल्केन्नु धर्म्मराजाज्ञया हुङ्कारमोटु नटन्नितु मृत्युवुं । कालन् महादण्डवुं धरिच्चु कोण्टु कालानल ज्वालपोङ्ङुन्नतु पोले अन्तकन् तन्नुटे दण्डु कोण्टालोरु जन्तुक्कळुं पिन्ने जीविक्कयिल्लल्लो । अन्तकन् दण्डुमाय् वेगालटुत्तप्पोळ् अन्तिके निन्नवर् वेन्तु पोरायकयाल् उण्टामिनिज्जयमन्तकनेन्नेल्लां कण्टु निन्नोरु परञ्ञु

जब वह अत्यन्त शिथिल होने जा रहा था तब उसने पूर्ण शक्ति लगाकर यमराज पर बाण-प्रयोग किये । यमराज ने भी निर्मल एवं सशक्त आयुध उसके मर्मों को लक्ष्य करके प्रयुक्त किये । इस प्रकार दोनों ने सात दिन-रात निरन्तर समान रूप से घोर युद्ध किया । ब्रह्मा आदि ने भी युद्ध देखा । समस्त दर्शक जनों ने भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि ऐसा भयंकर युद्ध न पहले कभी हुआ है, न भविष्य में कभी होगा ही । वीर रावण ने सौ हजार बाण कृतान्त पर, पृथक् सात बाण सूत पर और सौ बाण मृत्यु पर चलाये । ४० मृत्युमुख से निकलती अग्नि के वायुवेग में नक्तंचर लोग जल मरने लगे । उसी समय स्वयं मृत्यु ने अन्तक से कहा— "मैं राक्षसराज का वध कर दूंगी । अगर आप मुझे उसके लिए भेजेंगे तो मुझे उसका वध करने में कोई कठिनाई नहीं होगी, ऐसा आप समझ लीजिए ।" 'तो तुम्हीं जाओ', ऐसी धर्मराज की आज्ञा पर हुँकार भरती हुई, कालानल ज्वाला जैसे उठती है वैसे कालदण्ड हाथ में उठाये मृत्यु आगे बढ़ी । काल-दण्ड लगने पर कोई भी जीवधारी बच नहीं पाएगा । कालदण्ड लिये मृत्यु के आगे बढ़ते ही निकट खड़े लोग ज्वाला में झुलसने लगे और वे दर्शक लोग कहने लगे कि अब निश्चय ही अन्तक की विजय होगी । चण्डकरात्मज (सूर्यपुत्र) एवं चण्डपराक्रमी यमराज का दण्ड-

तुटङ्ङिनार् । चण्डकरात्मजन् चण्डपराक्रमन् दण्डं प्रयोगिप्पा-
नोङ्ङिङ्य नेरत्तु पुण्डरीकोत्भवन् मण्टिवन्नीटिनान् दण्डिनाल्
ताडिक्कोला ५० न्नी दशास्यनें खण्डिक्कोला मम सत्य वाक्यत्तें
न्नी । देवकळाल् मरियायकेन्नोरुवरं रावणनाय्क्कोटुत्तीटिनेनेष
ञान् । बाडवाग्निप्रभमाकिय दण्डिनाल् ताडनमेट़ाल् मरिक्कुं
समस्तरुं । अन्नु निनक्कु वरं तन्नितेन्नतिलोन्निनु विघ्नं वरुमितु
चेय्किल् न्नी । नीयटङ्ङेणमेन् वाक्कुकेट्टिन्निप्पोयालुमन्तः
पुरत्तिङ्कल् वेकाते । इत्थमाकर्ण्य पितामहन् तन्नोटुं वृत्नारि-
मुख्यन्मारां सुरन्मारोटुं सत्व हृदयनां नारदन् तन्नोटुं सत्वरं
मोदालमर्त्य लोकं चेन्नु मृत्युवुं पुक्कति स्वस्थनाय् मेविनान् ।
अन्तकनेज्जयिच्चेनेन्नु मानसे चिन्तिच्चु पूर्णमदान्धनाय् रावणन्
वासुकि तन्नुटे मन्दिरं प्रापिच्चु वासवराति विळिच्चितु पोरिनाय् ।६०
सर्प्प गणत्तेयुं वेन्नु विरवोटु कर्बुरेन्द्रन्वशमाक्कि नटन्नुटन्
चेन्नान् मणिमयियाय महापुरि तन्निल् निवातकवचासुरेन्द्रन्मार् ।
धातावु तन्टे वरबलं कोण्टवर् भीति कूटाते चिरं वसिच्चीटिनार् ।

प्रयोग करने के लिए ज्यों ही मृत्यु ने उसे उठाया त्यों ही पुण्डरीकोद्भव (ब्रह्मा) भाग-दौड़ आये और प्रार्थना की कि आप अपने दण्ड से न मारें— । ५० —दशग्रीव को । आप मेरे सत्य वचन को व्यर्थ जाने न दीजिए । मैंने दशग्रीव को यह वर दे रखा है कि तुम देवताओं के हाथों नहीं मरोगे । 'बाडवाग्नि के समान प्रभायुक्त आपके दण्ड का प्रहार लगने पर समस्त संसार का ही अन्त होगा ।' ऐसा आपको भी वर प्राप्त है । इस दण्ड का प्रयोग करने पर दोनों वरों में से एक असत्य स्थापित होगा । मेरी यह प्रार्थना मानकर आप शान्त हो जाइए और अभी अविलम्ब अतःपुर में चले जाइए ।" पितामह (ब्रह्मा) वृत्नारि (इन्द्र) जैसे प्रमुख देवताओं तथा सत्त्व हृदयवाले नारद आदि के मुँह से ऐसी प्रार्थना मानकर अन्तक शान्त हो तुरन्त स्वर्गलोक में अपने भवन में आ सुखपूर्वक रहने लगे । मन ही मन अन्तक पर विजय पाने की धारणा लिए मदान्ध रावण ने वासुकि के भवन के निकट आकर उसे युद्ध के लिए आमन्त्रित किया । ६० सर्पगणों पर विजय पाकर तथा उन्हें अपने वश में कर कर्बुरेन्द्र (रावण) आगे चल पड़ा, और मणिमयीपुरी को प्रस्थान किया, जहाँ निवातकवच नामक दैत्य लोग ब्रह्मा से प्राप्त वर-प्रसाद से चिरकाल से निर्भय निवास करते आ रहे थे । वहाँ पहुँचकर दशग्रीव ने सिंहनाद करते हुए ललकारा तो युद्ध के लिए आमंत्रित करनेवाले दशग्रीव के वचन सुनकर निवातकवच अपने हाथों में चाप-शर धारण किये निर्भय युद्ध करने

तत्रैव चेन्नु युद्धात्थं तदा दशवक्त्रनुं सिंहनादं चेय्तु चोल्लिनान् । पोक्कुं पुरप्पेटुकेन्नोटिनियेन्न वाक्कु केट्टोरु निवातकवचन्मार् । चाप शरादिकळ् कैक्कोण्टटुत्तोरु चापल्यमेन्नियेपोर् तुटङ्ङीटिनार् भीतियोळिञ्ञु पोर् चेय्तान् दशास्यनुमेतुमे भेदवुं वन्नीलोरुवनुं । तोलियुं वेन्नियुं कण्टतिल्लिङ्ङने कालवुमोराण्टु चेन्नितव्वण्णमे । तत्कालमंभोजसंभवनन्तिके पुष्करान्ते तिन्नुटनेळुन्नळिळनान् । आयिरत्ताण्टिङ्ङने निङ्ङळ् तङ्ङळिलायोधनं चेय्किलुमिल्लोरु जयं । ७० देवासुरादिकळाल् मरियाय्केन्नु रावणनाय् ञान् वरं कोटुत्तीटिनेन् । निङ्ङळ्क्कुमुण्टाय्वरा तोल्वियाकयाल् निङ्ङळिल् सख्यमम्पोटु चेय्तीटुविन् । अेन्नरुळ् चेय्तवारेयवर् तङ्ङळिल् नन्ताय् तिरन्नु सख्यं चेय्तु मेविनार् । वन्दिच्चवर्कळ्क्कनुग्रहवुं नल्कि मन्देतरमेळुन्नळ्ळि विरिञ्चनुं । पिन्ने मणिमयियाकिय नगरियिलन्योन्यमोन्निच्चिरुन्नु दशास्यनुं । ओराण्टु कालं कळिञ्ञोरनन्तरं वीरन् दशाननोर्त्तरुळीटिनान् । नूरु मासं कळिञ्ञू मम लङ्कयुं वेरिट्टु पोन्निट्टु पोकणमाशु नां । कालं कळयरुतेन्नु पुरप्पेट्टु कालकेयन्मारुटे पुरिपुक्कितु कोन्नानसुररिलेळु जनङ्ङळे पिन्ने वरुणालयं कण्टु मेविनान् । क्षीरांबुराशिक्कुमूलमाय् मेविन चारु सुरभियेयुं कण्टु वन्दिच्चान् । ८० युद्धत्तिनाशु विळिच्चान्

लगे। निर्भय दशास्य ने भी उनसे युद्ध किया। दोनों पक्ष में कुछ अन्तर (जय-पराजय) नहीं आया। दोनों में किसी की न जय देखी न पराजय ही। इस प्रकार युद्ध करते एक वर्ष व्यतीत हुआ। तब पुष्कर-संभव (ब्रह्मा जी) आकाश से वहाँ पधारे और बोले—"इस प्रकार आप लोग चाहे हज़ार वर्ष तक लड़ते रहें तो भी किसी की जय नहीं होगी। ७० मैंने रावण को वर दे रखा है कि देवों-असुरों से उसकी मृत्यु न होगी। तुम लोगों की भी पराजय कभी न होगी। इसलिए दोनों पक्ष परस्पर सख्य करें।" ब्रह्मा का यह कथन मानकर दोनों परस्पर सख्य स्थापित कर बैठे। प्रणाम-निरत खड़े दोनों को अनुगृहीत कर ब्रह्मा वहाँ से धीरे-धीरे चले गये। फिर दशग्रीव ने मणिमयी नगरी में निवात-कवचों से प्रीतिपूर्वक मिलते हुए एक वर्ष बिताया। तब रावण ने कहा "मुझे लंका छोड़े सौ महीने हो गये। अब मुझे तुरन्त वहाँ पहुंचना होगा। समय व्यर्थ बिताना अनुचित है।" यह कहकर वहाँ से निकलकर कालकेय दैत्यों की नगरी (अश्मनगर) में पहुँचा। वहाँ सात असुरों का वध करके वह वरुणालय में आ पहुँचा। वहाँ क्षीरसागर के

वरुणनेत्तव वरुणपुत्रन्मार् पुरप्पेट्टार् । रात्रिञ्चरन्मार् तटुत्तु त्तिर्त्तीटिनारात्ति मुळुत्तु वरुणात्मज बलं । कूर्त्त शस्त्रास्त्रङ्ङ- ळेट्टीटुङ्ङीटिनार् धात्रियिल् निन्नुयर्न्नंबरे निन्नुटन् पेर्त्तु पोरुतार् वरुणात्मजन्मारुं । रात्रिञ्चरेश्वरनाकिय रावणन् आर्त्तनाय् मोहं कलर्न्नु निन्नीटिनान् । अप्पति नन्दनन्मारुटे तेर्त्तटमप्पोळ् महोदरनुं पोटिच्चीटिनान् । अन्नतिनेतुमोरु कुरवेन्निये पिन्नेयुमंबरे निन्नु युद्धं चेय्तार् । मोहमकन्नुटन् रावणनन्नेरं साहसं कैक्कोण्टटुत्तु युद्धं चेय्तान् । शूल परिघ शस्त्रास्त्रङ्ङळुं मळपोले चोरिञ्ञान् दशाननन्नेरं । शस्त्रङ्ङळेट्टु वरुणात्मजन्मारुं पृथ्वियिल् वीणु मोहिच्चारतु नेरं । ९० सेनाधिपन्मारेटुत्तङ्ङु कोण्टु पोय् पानीयवुं तळिच्चाश्वसिप्पिच्चितु । नक्तञ्चराधिपनाय दशाननन् मत्तनाय् निन्नु विळिच्चु चोल्लीटिनान् । पोक्कुं पुरप्पेटुवान् चोल् वरुणने पार्क्करुतेतुमिनियेन्नु चोल्लुविन् । इत्थमाकर्ण्य प्रभासन् वरुणभृत्योत्तमनुत्तरं सत्वरं चोल्लिनान् । इप्पोळिविटेयिल्लल्लो जलाधिपनुल्पलसंभवन् तन्नुटे सन्निधौ गीतङ्ङळ्केळ्प्पतिन्नायङ्ङु पोयितु जातमोदेन पोय्क्कोण्टालुमाशुनी । निर्ज्जराराातियां निन्नोटु पोर् चेय्तु निर्ज्जितन्मारायच्चमञ्ञु कुमारन्मार् । निन्नोटु

आरम्भ-स्थल पर खड़ी सुन्दर सुरभि को प्रणाम किया । ८० फिर युद्ध के लिए वरुण को बुलाया तो वरुण-पुत्र निकल आये । निशाचरों ने उनसे टक्कर ली । वरुण-पुत्रों की सेना परेशान होती गयी । तीखे शस्त्रास्त्र लगकर सैनिक मर गये तो पृथ्वी से उठ आकाश में खड़े होकर वरुणात्मजों ने युद्ध किया । रावण आर्त्त भाव से थोड़ी देर तक विषादयुक्त खड़ा रह गया । उस समय महोदर ने वरुण-पुत्रों का रथ तहस-नहस कर डाला । उस अभाव पर ध्यान दिये बिना फिर वे आकाश पर खड़े हो युद्ध करते ही गये । तब तक मूर्छा त्यागकर रावण ने साहस के साथ युद्ध प्रारम्भ किया । तब दशानन ने उन पर वर्षा के समान शूल-परिघ जैसे शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किया । तब शस्त्र लगकर वरुणपुत्र मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़े । ९० सेनापति लोग उन्हें तुरन्त उठा ले गये और पानी छिटकाकर उनकी परिचर्या की । तब राक्षसराज रावण उन्मत्त हो पुकार उठा— "वरुण से बोलो कि वह युद्ध के लिए निकले । अब मैं प्रतीक्षा नहीं कर सकता ।" यह सुनकर वरुण के सेवकों में प्रधान प्रभास ने तुरन्त उत्तर दिया—"जलाधिप (वरुण) अब यहाँ नहीं हैं । वे ब्रह्मा जी के समीप संगीत सुनने गये हुए हैं । इसलिए आप सानन्द चले जाइए । देवशत्रु ! आप से लड़कर वरुणपुत्र हार गये हैं । अब आप का सामना करने के लिए यहाँ

ऩेरिट्टुवानिल्लिनियारुं वन्नु जयिच्च फलं तव निर्णयं । अँन्नतु केट्टपहासवुं चेय्तङ्ङु नन्दिच्चु पुष्पकमेऱि ऩटकोण्टान् । ९९

दिव्यांगनापहरणम्

देव दैतेय गन्धर्व मुनि सिद्ध दर्वीकर नर किन्नर यक्षादि वंशङ्ङळिलुळ्ळ दिव्यांगनमारे संशयमेन्निये चेन्नु पिटिपॆट्टु पुष्पकं तन्निल्क्करेट्टि यवरुटे विप्रलापं केट्टलियुं शिलकळुं । हा हा ! जनक ! हा हा ! मम वल्लभ ! हा हा ! जननि ! हा हा ! मम नन्दन ! हा हा ! सहज ! पितृव्य ! गुणांबुधे ! निङ्ङळेयुं पिरिञ्ञीत्रयुं दुःखिच्चु अङ्ङळीवण्णमकप्पॆट्टु दैवमे ! विट्टुकळकयुमिल्लिवनेङ्ङुमे दुष्टन् पिटिच्चु भक्षिच्चु कळकयो ? कोल्लुमतल्लयाय्किल् पुलयाटिक्कुमिल्लोरु नल्लतोरुजातियुं हरे ! मारातुरनाय नीचनोरु दिव्य नारी निमित्तं वरिक मरणवुं । इत्थं कुलस्त्रीकळिट्ट शापत्तेयुं मत्तनायेतुमरिञ्ञील रावणन् । १० भेरी निनादेन लङ्कापुरं पुक्क नेरमेतिरेट्टु वन्दिच्चितेवरुं । पौर जनङ्ङळ् विमानत्तिन्मेल् निन्नु पारिलिऱङ्ङि वसिच्चितु रावणन् ।

कोई नहीं रहा । अतः आप को विजय की फल-सिद्धि हुई है।" यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न रावण पुष्पक पर आरूढ़ हो चला गया । ९९

दिव्यांगनाओं का अपहरण

देव, दैत्य, गन्धर्व, मुनि, सिद्ध, नाग, मनुष्य, किन्नर, यक्ष आदि जाति की दिव्यांगनाओं को निस्संकोच बलात् पकड़ कर रावण ने विमान में बिठा दिया । उनका विलाप सुनकर शिलाएँ तक पिघल जाती हैं । (वे रो-रोकर चिल्लाने लगीं) हाय जनक ! हाय स्वामी ! हाय जननी ! हाय मेरे पुत्र ! हाय भ्राता ! हाय पितृव्य, हे गुणनिधि ! आप सबसे पृथक् हो हम इस प्रकार (रावण के हाथ में) फँसकर दुःख भोग रही हैं । हाय दैव ! 'यह दुष्ट हमें नहीं छोड़ रहा है, पता नहीं हमें पकड़ ले-जाकर वह खा लेगा ? यह या तो हमें मार डालेगा या हमारा चारित्र्य नष्ट करेगा । कुछ भी हो, हे भगवान ! यहाँ से हमारा बच पाना असंभव दिखता है । 'यह कामार्त दुष्ट एक दिव्य नारी के कारण मृत्यु को प्राप्त करे ।' कुल नारियों का यह शाप कामांध रावण जान नहीं पाया । १० भेरी बजाता हुआ (रावण के) लंकापुर में पहुँचते ही सभी नागरिकों ने प्रणाम किया । विमान से रावण नीचे उतर पड़ा । तब विलाप करती हुई शूर्पणखा ने

अत्तेरमाशु शूर्प्पणखयुं भ्रातावु तन्नोटु केणु पऱञ्ञु तुटङ्ङनाळ् ।
विश्वजनङ्ङळ् पळिक्कुमारेन्ने त्री विश्वस्तयाक्किच्चमच्चतु तत्तल्लो।
शत्रु मित्रत्वमोर्त्तील युद्धत्तिल् ञान् भर्त्तावु तन्नेयुण्टाक्कां त्तिनक्किन्तु;
चेन्तु खरदूषण त्रिशिराक्कळोटोत्तिच्चु दण्डकं तन्निल् वसिक्क त्री ।
अॆन्नाल् त्तिनक्कु पतियाय् वरिच्चालुं धन्यनायोरु पुरुषने वैकाते ।
इत्थं पऱञ्ञयच्चानवळुं पोयि बद्धमोदं जनस्थाने मरुविनाळ् ।
रावणि राजसूयाश्वमेधादिकळावोळवुं पलयागङ्ङळुं चेय्तु
देवकळोटु वरवुं वरिच्चु कोण्टेवरेयुं जयिक्काय् वरुमारवन् । २०
तातनेक्कण्टु नमस्करिच्चीटिनान् आदरवोटु पुणर्न्नु दशाननन् ।
त्तिन् तोळिलेन्तेन्तु चोदिच्च त्तेरत्तु स्वान्तर्म्मुदा पऱञ्ञीटिनान्
शुक्रनुं । यागादि कर्म्मङ्ङळ् चेय्तु वरं कोण्टु लोकोत्तरनाय्-
च्चमञ्ञु तवात्मजन् । तेरुं त्तिनच्च वण्णं त्तटक्कुं तञ्टे वैरि-
कळ्क्केङ्ङुमे काणानुमावल्ल । बाणमोटुङ्ङातेयुळ्ळोरु तूणियुं
प्राणरक्षार्त्थमभेद्य कवचवुं अॆल्लां कोटुत्तु महेश्वरन् तन्नुटे वल्ल-
भयोटुं मऱञ्ञितिप्पोळेटो ! वन्तु तुटङ्ङ भवानेन्तु केळ्क्कयाल्
त्तिन्नतु कण्टु पोकामेन्नतोर्त्तु ञान् । वाजि मेधादिकळ् कोण्टु

अपने भाई से कहा—"लोकवासियों की भर्त्सना प्राप्त करने के लिए तुमने मुझे विधवा बनाकर छोड़ा। तुमने (मेरे पति की हत्या करके) मेरे साथ क्या ही भला किया!" (रावण ने उसे सांत्वना दी कि) "क्या करूँ! युद्ध में शत्रु-मित्र का अन्तर देख नहीं सका, तुम खिन्न मत होओ। मैं तुम्हारे लिए (दूसरा) पति ला दूँगा। तुम जाकर खर, दूषण और त्रिशिरस के साथ दण्डकवन में बस जाओ। तुम जल्दी ही वहाँ रहते हुए अपने मन-पसन्द पुरुष को पति रूप में स्वीकार कर लो।" ऐसा कहकर (रावण ने) उसे भेज दिया तो वह जनस्थान में पहुँचकर सानन्द रहने लगी। (यहाँ) रावणी (मेघनाद) ने राजसूय, अश्वमेध आदि कई प्रकार के यज्ञ करके देवताओं से सब लोगों पर विजय प्राप्ति के वर ग्रहण कर लिए थे। २० पिता जी का दर्शन कर उसने प्रणाम किया और सहर्ष दशानन ने उसे गले से लगाया—और पूछा कि तुम अब तक क्या-क्या करते रहे? समीप खड़े शुक्र मुनि ने उत्तर दिया—"यज्ञ आदि कर्मों का अनुष्ठान करके आपका आत्मज लोकोत्तर पद का अधिकारी बन गया है। रथ उसकी इच्छा पर चलेगा और शत्रु लोग उसे देख तक नहीं पाएँगे। कभी बाणों से खाली न पड़नेवाला तूणीर, प्राण-रक्षार्थ अभेद्य कवच, सब कुछ प्रदान करके अपनी प्रिया सहित महेश्वर को अभी-अभी अदृश्य हुए समझ

देवन्मारे प्पूजिप्पतिन्नवकाशमिल्लेतुमे । देवकळ् नम्मुटे शत्रुक्क-
ळाकयाल् सेविप्पतिन्निल्ल योगमवरे नां । ईशने पूजिप्पतु
काम्यमेन्नुटनाशराधीशन् पऽञ्ञोरनन्तरं । ३० पुष्पकत्तिन्मे-
लिरुन्नु विलापिक्कुमुल्पलपत्राक्षिमारेयिऽक्किनान् । अप्पोळतु
कण्टु चोन्नान् विभीषणनत्भुतमोर्त्तु कण्टालिप्पराक्रमं । नल्ल-
पतिव्रतमारेप्पिटिच्चु कोण्टोल्लात कर्म्मङ्ङळिङ्ङने चेय्कयाल्
दुष्कीर्त्ति दुष्कृतं वंश विनाशनमोक्केयकप्पेटुमिल्लोरु संशयं ।
इत्थं परदारपीड चेय्ताल् वरुमेन्वयुमापत्तुकळतुकेळ्क्क नी ।
नम्मुटे ताताग्रजन् माल्यवान् तन्मकळ् पुष्पोत्क्कटयामिवळल्लो ।
नम्मुटे मातावु तन्नुटे मूत्तवळ् तन्मकळ् कुंभीनसियवळ् तन्नयुं
कोण्टु पोयान् मधुवाकिय राक्षसन् कण्टीलतारुमिविटेयिरुन्नवर् ।
मेघनादन् मुनिमारुमायोरोरो यागवु चेय्तिरुन्नीटिनानन्नेरं ।
दीनतयेन्निये वन्नु विरवोटु ञानुमिविटेयिल्लाञ्ञोरवसरं ४०
पार्त्तु बलालाशु कोण्टु पोयानवन् कीर्त्तिकेटुं नमुक्कुण्टेन्नु निर्ण्णयं ।
ञानुमोर्त्तेनवन् तन्ने वधिक्किलो नूनमवळ्क्कु वैधव्यमकप्पेटुं ।

लीजिए। आपके आगमन से अवगत मैं आपका दर्शन करके जाने के विचार से ठहरा हुआ हूँ।" यह सुनकर रावण ने कहा—"अश्वमेध आदि से देवताओं की पूजा करने की आवश्यकता नहीं थी। देवता लोग हमारे शत्रु हैं, उनकी पूजा करने की हमें क्या पड़ी है ? महेश की पूजा जो की है, वह तो काम्य है।" इस प्रकार कहने के उपरान्त आशराधीश ने—। ३० —पुष्पक में विलाप करती बैठी उत्पलाक्षी नारियों (सुन्दरियों) को नीचे उतारा। यह देख विभीषण ने (व्यंग्य भरे शब्दों में) कहा—" सोचें तो आपका यह पराक्रम अद्भुत ही है ! सुन्दर कुलीना नारियों का अपहरण कर उनके साथ अत्याचार करने से निश्चय ही अपकीर्ति होगी, पाप लगेगा और वंश-विनाश भी होगा। इस प्रकार पर-नारियों को पीड़ित करने से भारी विपत्तियाँ आ पड़ेंगी, यह मेरी बात सुनिए। हमारे पिता के ज्येष्ठ भ्राता माल्यवान की पुत्री पुष्पोत्कटा की, जो (नाते से) हमारी माता की बड़ी बहन भी है, पुत्री कुंभीनसी को मधु नामक राक्षस अपहरण कर ले गया है। यहाँ बैठे किसी ने यह नहीं जाना। तब मेघनाद मुनियों के साथ बैठा याग कर रहा था। मैं भी यहाँ नहीं था। तब वातावरण को अनुकूल—। ४० —देखकर बलात् उसे छीन ले गया, जो निस्संशय हमारे लिए अपमानजनक है। किन्तु मैं यह सोचकर मौन रहा कि उसका वध करने पर उसे (कुंभीनसी को) वैधव्य भोगना होगा। फिर (कन्या

पिन्नेयुं वेणमोरुत्तनु नल्कुक कन्यकतन्नेयतिनिल्ल संशयं। ऍङ्किलवनु तन्नेयेन्नतिङ्ङने सङ्कल्पमुळ्ळकोण्टिरिक्कुन्नितु ञानुं। ऍन्नु विभीषणन् चोन्नतु केट्टप्पोल् वन्न कोपत्तोटु चोन्नान् दशाननन्— चेन्नु विरवोटु कोन्नु मधुविने विण्णवर् तन्नेयुं वेन्नु वरुवन् ञान्। कुंभकर्णनुणर्न्नालवन् तन्नुटे वन्पटयोटुं वरुवान् नियोगिक्क। मुम्पिल् नटक्क वेणं मेघनादनुं वन्पटयाळिकळायुळ्ळवर्कळुं। नम्मुटे तेरुमोरुमिच्चु निर्त्तुक सम्मोदमोटु पुरप्पेटुकेवरुं। शंख मृदंगादि वाद्यघोषत्तोटुं मंगलमाय मुहूर्त्ते पुरप्पेटां। ५० लङ्कयुं पालिच्चिरिक्क विभीषणन् शङ्काविहीनं जयिच्चु वरुवन् ञान्। ऍन्नु परञ्ञु तेरेरिप्पुरप्पेट्टु चेन्नु मधुपुरान्ते मरुवीटिनान्। कण्णु नीरुं वार्त्तु कुंभीनसि वन्नु तन्नुटे सोदरनोटु चोल्लीटिनाळ्। ऍन्नुटे भर्त्ताविनेक्कोल चेय्यारुक निन्नभीष्टङ्ङळनुष्ठिक्कुमेन्पति। देवकळोटु युद्धत्तिनु पोकिलो सेवकन्मारिलोन्नायवनुं वरुं। ऍङ्किलेन् मुम्पिल् वरुत्तीटवने नी सङ्कटं तीर्त्तभयं कोटुत्तीटुवन्। ऍन्नतु केट्टु कुंभीनसि वेगेन चेन्नु भर्त्तारमुणर्त्ति वरुत्तिनाळ्। चेन्नुमत्सोदरन् तन्नेयुं कण्टवन् तन्नोटु कूटि युद्धत्तिनु पोकु नी। ऍन्नाल् निनक्कु सौख्यं वरु निर्णयं वन्नु कूटीटु मेनिक्कु सुखमेन्नाल्।

को किसी पुरुष को किसी समय विवाह में) देना ही पड़ता है, ऐसी हालत में वह उसे ही मिले, ऐसा मन मसोसकर मैं बैठा हूँ।" विभीषण का यह कथन सुनते ही अत्यधिक क्रोध के साथ दशानन बोला—"मैं अभी जाकर मधु का वधकर तथा देवों का मद चूरकर लौटूँगा। जागते ही कुम्भर्ण को आदेश दें कि बड़ी सेना लेकर वह भी मेरे पीछे आ जाए। मेघनाद और अन्य सेनाधिपति लोग आगे-आगे निकलेंगे। शंख, मृदंग आदि वाद्य-घोषों के साथ मंगल शुभ घड़ी को हम यहाँ से निकल पड़ेंगे। ५० विभीषण लंका की देखरेख करता रहे, मैं निर्भय उस पर (मधु) विजय पाकर वापस आऊँगा।" ऐसा बोलकर (रावण) रथ पर आरूढ़ हो निकला तथा मधुपुर के निकट आ ठहरा। तब अश्रुस्निग्ध नयनों से कुंभीनसी ने आकर अपने भ्राता से प्रार्थना की—"मेरे पति का वध न करें। वे आपके इच्छानुवर्ती बनकर रहेंगे। जब आप देवताओं से लड़ने जाएँगे तब वे भी एक सेवक बनकर साथ देंगे।" (तब रावण ने कहा) "तो उसे तुरन्त मेरे सामने ले आओ, उसे दुःख-निवृत्ति के लिए मैं अभयदान देता हूँ।" यह सुनकर कुंभीनसी पति को समझा-बुझाकर ले आयी। उसने कहा—"तुरन्त मेरे भाई से मिलकर उनके साथ युद्ध के लिए जाओ। तब

कुंभीनसि वाक्कु केट्टु मधुवति संभ्रमं पूण्टु दशास्यनेयुं वन्नु ६०
कण्टु यथोचिताचार पुरस्कृतं कोण्टाटि नन्नाय् विरुन्नु कळिच्चुटन् ।
बन्धु सल्क्कारं परिग्रहिच्चादराल् पंक्तिमुखनुमवनोट्टु चोल्लिनान् ।
ऎन्नुटे कूटे नी पोरिक वैकाते विण्णोर्पुरिक्कु युद्धत्तिनु मल्सखे !
रावणनोट्टु कूटॆप्पुरप्पॆट्टितु देवकळोट्टु पोक्काय् मधुवीरनुं । ६४

नळ कूबर शापं

अन्तिनेरं चॆन्नु कैलास शैलेश्वरान्तिक कानने पुक्कान् दशास्यनुं ।
तल्क्षणे चॆन्नळकापुरि सन्निधौ रक्षोबलवुं किटन्नुरङ्ङीटिनार् ।
सौरभ्यमान्द्य शैत्यादि गुणत्तोटुं चारत्तु वीयित्तुटङ्ङि पवननुं ।
चन्द्रनुमप्पोळुदिच्चु पोङ्ङीटिनान् चन्द्रिकयुं पारिलॊक्कॆप्परन्नुते ।
किन्नरेशालयं तन्निलिरुन्नोरो किन्नरन्मारप्सरः स्त्रीजनवुमाय्
पाटुन्न गीतङ्ङळ् केट्टकतारळिञ्ञाटल् पूण्टाननंगातुरनायवन् ।
कन्दर्प्प बाणङ्ङळेट्टु सन्तापेन चन्द्रबिंबत्तेयुं नोक्कि वाळुं विधौ,
दिव्यांबराभरणालेपनङ्ङळाल् सर्वांगमॆल्लामलंकरिच्चङ्ङने,

तुम सुखी रहोगे और मुझे भी सुख प्राप्त होगा ।" कुंभीनसी का वचन सुनकर मधु भयातुर हो दशग्रीव के पास आकर— । ६० यथा विधि आचार-व्यवहारों के साथ मिला तथा उसकी खूब अतिथिसेवा की। भोजन तथा सेवा-सत्कार ग्रहण करके सानन्द रावण ने उससे कहा— "हे मित्र ! तुम तुरन्त मेरे साथ देवलोक में युद्ध के लिए चल पड़ो ।" रावण की आज्ञा मानकर मधुवीर देवताओं से युद्ध करने के लिए रावण के साथ निकल पड़ा । ६४

नल-कूबर शाप

सायंकाल होते ही पर्वतराज कैलाश के समीप के कानन-प्रदेश में रावण पहुँच गया । तब अलकापुरी के पास राक्षस-सेना ने पड़ाव डाला और सब के सब सो गये । तब सुगन्धि से युक्त शीतल समीरण मन्द-मन्द बह रहा था । चन्द्र उदित हो उठा था और सारा संसार चन्द्रिकास्नात हो रहा था । किन्नरों के भवनों में मुखरित किन्नरों तथा अप्सराओं के सुमधुर सामगीतों की ध्वनि सुनकर रावण का हृदय द्रवीभूत होता जा रहा था और साथ ही वह अनंग-पीड़ा से आतुर होने लगा । काम-बाणों से बिंधकर दुःखी रावण आकाश के चन्द्रबिंब को देखते बैठा ही था कि अचानक दिव्य परिधानों, आभूषणों, आलेपनों से सर्वांगों को अलंकृत कर

कॅक सुन्दरियाकिय नारितानेकाकिनियाय् वरुन्नतु कण्टवन् ।
न कैयुं पिटिच्चिरुत्तीटिनानाकुल मानसयाय्च्चमञ्ञाळवळ् । १०
रुन्नीयाकुन्नतेन्तुन्निन् पेरुमट्टारेंटो ! न्निन्नुटे वल्लभन् भाग्यवान् ।
न्नोटु कूटि रमिच्चु वाणीटुवानेन्नोटु तुल्यनायिल्ल मट्टारुमे ।
न्नोटु कूटि लसिच्चीटिविटे न्नी पिन्ने ञान् न्निन्नेयय्च्चीटुवनेंटो !
थं दशमुखन् चोन्नतु केट्टति त्रस्तयाय्च्चोल्लिनाळ् मेल्लवे रंभयुं—
न्नुटे पूर्वजनाय धनेश्वरन् तन्नुटे पुत्रन् नळ कूबरनवन्, तन्नुटे
ल्लभयाकिय रंभ ञान् न्निन्नुटे पुत्रियाय् वन्नीटुमोक्क न्नी ।
ल्लात कार्यमोराय्क न्नी मानसे न्नल्लवण्णमयच्चीटेन्ने वेकाते ।
प्पोळ् दशमुखन् चोन्नानतिन्मूलमप्सर: स्त्रीकळ्क्कु दूषणमिल्लेतुं ।
ाप्पोटिवण्णं पुणर्न्नितु रावणन् रंभयेक्कम्पं कलर्न्नु पोयाळवळ् ।
न्नु नळकूबरनोटवस्थकळोन्नोळियाते पऱञ्ञितु रंभयुं । २०
म्पोटिनियुमोरुत्तियेच्चेन्नवनन्पोटिवण्णं तोटुकिलवन् तल एळाय्
ुरुङ्ङ् वीणाशु मरिक्केन्नु रोषाल् नळ कूबरन् शपिच्चीटिनान् ।
ेरियुं पारं मुळक्किनार् देवकळ् मारि पोले पुष्प वृष्टि तूकीटिनार् ।

एकाकिनी चली आती हुई एक अलौकिक सुन्दरी को उस तरफ आते हुए उसने देखा । तुरन्त हाथ पकड़कर रावण ने उसे पास ही बिठा दिया और वह मन में भयाकुल हो उठी । १० (रावण ने पूछा) "तुम कौन हो और तुम्हारा क्या नाम है ? तुम्हारा भर्तृ पद अलंकृत करनेवाला वह भाग्यशाली कौन है ? तुम्हारे साथ सुखपूर्वक रमण करने के लिए मेरे समान योग्य दूसरा कोई पुरुष नहीं है । तुम थोड़ी देर मेरे साथ सुख भोग करो, फिर मैं तुम्हें जाने दूँगा ।" दशग्रीव के ऐसे शब्द सुनकर अत्यन्त त्रस्त हो रम्भा ने धीमे स्वर में कहा—"तुम्हारे ज्येष्ठ भ्राता धनेष के पुत्र नलकूबर की सहधर्मिणी मैं रम्भा हूँ और इस नाते में तुम्हारी पुत्री हूँ । तुम यह स्मरण रखो । तुम अधर्म की बात मन में मत लाओ । मुझे निराकुल भेज दो ।" तब दशमुख रावण ने कहा—"उससे (बहुपतित्व से) तुम अप्सराओं का कुछ दूषण नहीं होता ।" ऐसा कहकर रावण ने प्रेमाश्लेष के साथ उसे अपनी काम-पूर्ति का शिकार बनाया और रम्भा कंपित एवं वेपथुगात्री बनी । वहाँ से लौटकर रम्भा ने नलकूबर को सारा हाल कह सुनाया । २० सारा हाल सुनकर क्रोधाकुल नलकूबर ने रावण को शाप दिया—"आज से कभी इस प्रकार कामार्त हो उसे न चाहनेवाली किसी युवती पर बलात्कार करेगा तो तत्काल उसके मस्तक के सात टुकड़े होकर वह मरेगा ।" देवताओं ने खूब भेरी बजायी और खूब

अन्नु तुटङ्ङियिणङ्ङातमातरेच्चेन्नु तोटुकयुमिल्ल दशाननन्। २४

स्वर्ग विजयं

आदित्यनुमुदिच्चीटिनानन्तेरं वादित्र घोषेण राक्षस वीररु स्वर्ग लोकं गमिप्पान् नट कोण्टितु ओक्के नटुङ्ङि भयेन जगत्त्रयं। सप्त समुद्रङ्ङळुं पूर्ण्ण घोषेण तृप्ति कलर्न्नङ्ङु पोङ्ङि वरुम्पोले। कोलाहलं केट्टु वासवनन्तेरमालोल चेतसा चेन्नानति भयाल्। क्षीर पारावार तीरं प्रवेशिच्चु नारायणनेस्तुतिच्चान् पलतरं। रावणन् तन्ने वधिच्चु भयं तीर्त्तु देवकळेप्परिपालिच्चु कोळ्ळणं। आश्रयं मट्टिल्ल ञङ्ङळ्क्कोरुनाळुमाश्रितवत्सल! कारुण्यवारिधे! संक्रन्दन स्तुति केट्टु नारायणन् शंख चक्रब्जगदाधरन् माधवन् पङ्कजलोचनन् पत्मालयावरन् सङ्कटं भक्तजनत्तिनु तीर्प्पवन्, देवेन्द्रनोटरुळ् चेय्तानतु नेरं रावणनोटु निङ्ङळ्क्कु जयंवरा। १० देवकळ्क्किन्नभिमानक्षयं वरुं देवारिकळोटु युद्धंतुटङ्ङुकिल्। धाताबु तन्टे वरप्रभावत्तिनालेतुमवनोटोरुत्तक्कुमावल्ल। आधि-कूटाते वसिप्पनेल्लावरुं खेदवुं कालान्तरे तीर्त्तीटुवन्। शत्रुक्कळोटु

पुष्प-वर्षा की। तब से न चाहनेवाली नारी पर बलात्कार करना रावण ने त्याग दिया। २४

स्वर्ग-विजय

तब सूर्योदय हुआ और सारे राक्षस वीर वाद्य-घोषों के साथ स्वर्ग-विजय के लिए चल पड़े। सारा संसार एक बार कांप उठा। राक्षस-सेना का कोलाहल ऐसा जान पड़ा मानो सप्त सिंधु के अनियंत्रित हो पूर्ण स्वच्छन्दता से उमड़ पड़ने का भयंकर घोष हो। तब चंचल मन से युक्त वासव (इन्द्र) ने भयातुर हो क्षीरसागर के तट पर पहुँच भगवान नारायण की कई प्रकार स्तुति की और प्रार्थना की—"रावण का वध करके भयातुर देवताओं की रक्षा करें। हे आश्रितवत्सल! हे करुणानिधि! हमारे लिए अन्य कहीं दूसरी शरण नहीं है। संक्रन्दन (इन्द्र) की यह स्तुति सुनकर शंख, चक्र, कमल और गदाधारी, पंकजविलोचन, लक्ष्मीदेवी के स्वामी तथा भक्तजनों के दुःख-विनाशक भगवान नारायण ने इन्द्र से कहा—"रावण से लड़कर आप लोग जीत नहीं पाएँगे। १० राक्षसों से लड़ने पर आज देवताओं का अपमान होकर ही रहेगा। ब्रह्मा के वर-प्रसाद के प्रभाव के कारण कोई उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता। आप

ञानेट़ालवर्कळे मृत्यु पुरत्तिन्नयच्चीट्टिञ्ञेन्निये पिन्तिरिञ्ञाशु पोकुमारिल्लतिनन्तर मिल्लितु कारणमित्तु ञान् तिन्नोटु कूटि वरिकयुमिल्लवन् तन्ने वधिप्पानटुत्तील कालवुं। उण्टामोरु समयं तमुक्कक्कालमुण्टाय् वरुं जयमेन्तरिञ्ञीटु ती। इत्थमरुळ् चेय्तु नारायणस्वामि तत्रैव मेल्लेमरञ्ञरुळीटिनान्। वन्दिच्चु भक्त्या नमस्कारवुं चेय्तु मन्द मन्दं विबुधेन्द्रनुं वाङ्ङिनान्। केळक्कायितप्पोळतीव कोलाहलं राक्षस देव सेना समरोत्भवं। २० वारण वाजिकळ् कालाळ्प्पट तम्मिल् पारमणञ्ञु पोरुतोरनन्तरं, सायक शक्ति गदा चक्रमुख्यमामायुधमेटु मुरिञ्ञु वीणीटिनार्। आयोधनत्तिङ्कलादितेयन्मारुमायासमेरुमसुर वीरन्मारुं अप्पोळ् सुमालिसुतनुटे सेनयुं केल्पोटटुत्तु शरङ्ङळ् तूकीटिनार्। शस्त्रङ्ङळेटु पोराञ्ञमरन्मारुं अत्तल् मुळुत्तु वाङ्ङीटिनातन्तेरं। अष्टमनाय वसुप्रवरन् वन्तु दुष्ट निशाचरन्मारेयोटुविकनान्। पिन्ने सुमालितन् वाहनवुं कळञ्ञन्यून शक्त्या गदयुमेटुत्तुटन् चेन्तु सुमालियेत्तच्चु पोटिच्चितु चेन्तु यमालयं पुक्कु सुमालियुं। तिन्त निशाचर सैन्यवुमोटिनार् सन्नद्धनायतु कण्टु कोपवुं पूण्टु,

---

लोग अपना दुःख छोड़िए, कालान्तर में मैं आप लोगों का दुःख दूर करूँगा। शत्रुओं से एक बार टक्कर लेने पर उन्हें मृत्युपुर भेजे बिना मैं वहाँ से नहीं हट सकता। यह मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है। यह सोचकर मैं आज आप के साथ (रावण से युद्ध करने) नहीं आ रहा हूँ। उसके वध का अभी समय नहीं आया। जब समय आएगा, तब हमारी विजय होगी, यह आप समझ लीजिए।" इतना कहकर भगवान नारायण वहीं तुरन्त अदृश्य हो गये। भक्तिपूर्वक भगवान की वंदना करके धीरे-धीरे विबुधेन्द्र (देवराज) वापस चल पड़े। तब देवासुर युद्ध से उत्पन्न भयंकर कोलाहल (इन्द्र को) सुनायी पड़ा। २० हाथी, घोड़े और पैदल सेना परस्पर भिड़ गये। बाण, शक्ति, गदा, चक्र आदि मुख्य आयुधों के वार से युद्ध में आदितेय (देव) तथा शूर राक्षस कटकर नीचे गिरते गये। तब सुमाली का पुत्र सेना सहित आकर बाणों की वर्षा करने लगा। शस्त्रों का सामना करने में असमर्थ पा दुखी देव लोग पीछे हटे। तुरन्त ही अष्टम वसुप्रवर ने आकर दुष्ट राक्षसों का खूब संहार किया। फिर अत्यन्त बलशाली बसु ने सुमाली का रथ तोड़ डाला और भारी गदा से वार कर सुमाली को यमपुर भेज दिया। तभी दूसरे निशाचर लोग भाग गये। यह देख रोषाकुल मेघनाद निर्भय अपने रथ पर सवार हुआ

मेघनादन् निज तेरिल्क्करेरिनानाकुलमेन्नियें आर्णोलियुमिट्टु । ३०
शीघ्रमट्टुत्तु कण्टु देवन्मारुं व्याघ्रत्तेक्कण्ट पशुकुलत्तेप्पोलें
मण्टुन्न नेरं परञ्ञु महेन्द्रनुं कण्टु निल्पिन् निङ्ङळोटाय्विनारुमे ।
ॲन्नुटॆ पुत्रन् जयन्तनिवनोटु निन्नु पोर् चेय्युमवन्नु सहायमाय्
निन्नु कोंटुप्पिनेल्लावरुमोटातेयेन्न् देवेन्द्रन् परञ्ञोरनन्तरं तन्नुटॆ
तेरिल्क्करेरिज्जयन्तनुं नन्नाय् शरङ्ङळ् पोळिच्चान् मलपोलें ।
नन्नु नन्नीवयुं नल्ल वीरन् भवानेन्नु परञ्ञटुत्तान् मेघनादनुं ।
नन्नाय् शरङ्ङळ् पोळिच्चानतु नेरमेन्नु तळर्न्नु जयन्तनुं सेनयुं ।
ॲन्नालुमेतुमिळच्चतिल्लायवन् पिन्नेयुं घोरमाय् वन्नितु युद्धवुं ।
आदितेयन्मारुमाशरेशन्मारुमाधिमुळुत्तु मुरिञ्ञु वीणीटिनार् ।
मातलिपुत्रनां गोमुखनिन्द्रजन् सूतनवनेयेय्तान् मेघनादनुं । ४०
इन्द्रात्मजनतु कण्टथ रावणि तन्नुटॆ सूतनेयेय्तु पिळर्न्नितु । मेघ-
निनादनेयुं पल बाणङ्ङळाकुलमेरुमारेय्तु जयन्तनुं । तल्क्षणं
बाणङ्ङळ् तोमरं वाळ् गदा शक्तिकळ् शूलङ्ङळ् वेण्मळु कुन्तङ्ङळ्
अस्त्र शस्त्रं पोळिच्चान् मेघनादनुमत्तल् मुळुत्तोळिच्चारमरन्मारुं ।
मातावु तन् पितावाय पुलोमावुमाधि मुळुत्तु जयन्तनेयुं कोण्टु

और धनुष का टंकार-नाद मुखरित किया । ३० उसको शीघ्र समीप आते देख देव लोग व्याघ्र को देख भय-विह्वल भागती गौओं के समान भाग खड़े हुए । यह देख ढाढ़स बंधाते हुए इन्द्र ने कहा—"तुम लोग डटे रहो, भागो मत । मेरा पुत्र जयन्त इसका सामना करता हुआ युद्ध करेगा और तुम लोग बिना भागे, अचल रहकर उसकी सहायता मात्र करते रहो ।" इन्द्र के यह कहते ही अपने रथ पर आरूढ़ हो जयन्त ने शत्रुओं पर खूब बाण चलाये । 'आप भी खूब निकले, आप भी बड़े वीर हैं' ऐसा कहता हुआ मेघनाद सामने आया । उसने खूब शर-वर्षा की जिससे जयन्त और उसकी सेना जरा थकान अनुभव करने लगी । फिर भी लड़ने में उनकी तरफ से कुछ शैथिल्य आने नहीं पाया; फिर युद्ध ने भयंकर रूप अपनाया । आदितेय तथा आशरेश लोग खूब आहत हो गिरने लगे । तब मेघनाद ने इन्द्रपुत्र जयन्त के सूत मातली के पुत्र गोमुख पर तीखे बाण चलाये । ४० यह देख इन्द्रात्मज ने रावणी के सूत का शरीर बाणों से विदीर्ण कर डाला । जयन्त ने मेघनाद पर भी कई दारुण बाण चलाये । तुरन्त मेघनाद ने बाण, तलवार, गदा, शक्ति, शूल, कुल्हाड़ी, भाला, आदि नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का बार-बार प्रहार किया जिससे देवलोग व्याकुल हो उठे । माता के पिता (नाना) पुलोमा ने व्याकुल हो जयन्त को ले जाकर सागर

वारिधियिल्प्पुक्कोळिच्चानतु नेरं धीरतकैक्कोण्टु निन्नारसुररुं ।
पंक्ति कंठन् तदा बाणगणं पुनरन्तमिल्लातोळं तूकिनानन्नेरं ।
इन्द्रनुं मातलि तन्नोटु चोल्लिनान् मन्देतरं मम तेर् नटत्तीटु नी ।
नक्तञ्चरेन्द्रनभिमुखमां वण्णं सत्वरं मातलि तेरुं नटत्तिनान् ।
युद्धत्तिनिन्द्रन् पुरप्पेट्ट नेरत्तु सिद्ध साध्यन्मारश्विनीपुत्ररुं ५०
देव गन्धर्व यक्षोमुख संघवुं देवेन्द्रनोटु कूटेप्पुरप्पेट्टितु । दुर्न्नि-मित्तङ्ङळुमुण्टायितेट्वुं नन्नायटुत्तान् निशाचर वीररुं । मेघ-निनादनेप्पिन्निट्टु रावणन् वेगेन पोरिन्नटुत्तु निन्नीटिनान् । राक्षस वीररुं देवप्रवररुं रूक्षतयोटङ्ङटुत्तु पोरुन्नेरं कुंभकर्णन् मदत्तोटुमटुत्तु वन्नुम्परे वन्पोटु पोर् चेय्तु वीळ्त्तिनान् । रुद्ररटुत्तु निशाचरवीररे विद्रुतं कोन्नु कोन्नोक्केयोटुक्किनार् । नक्त-ञ्चरन्मार् तेरुतेरे वीळ्कयुं रक्तवुमाऱायोळुकिप्पलवळि । रावण-पुत्रनतु कण्टु कोपिच्चु देवकळ् मेय्यिल् बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् ।
वृत्रारियुमति क्रुद्धनायन्नेरमस्त्र जालं वरिषिच्चु तुटङ्ङिनान् ।
अन्धकारं कोण्टु मूटि भुवनवुं पंक्तिमुखनतु कण्टु चोल्लीटिनान्—६०
सारथि तन्नोटु नीयिनि वैकाते तेरतुकूट्टुक देवकळ् सेनयिल् ।
मारुत वेगेन भीतियुं कैविट्टु नेरे नटुवे सुरन्मारे वेल्लुवान् ।

में छिपा लिया, जिससे निशाचर लोग साहसपूर्वक युद्धक्षेत्र में स्थिर रहे। तब पंक्तिकंठ ने आगे बढ़ बाण-वर्षा की। इतने में इन्द्र ने मातली से अपना रथ (युद्धक्षेत्र की ओर) ले चलने का आग्रह किया तो मातली ने अभिमुख कर रथ आगे बढ़ाया। युद्ध के लिए इन्द्र को निकलते देखकर सिद्ध, अश्विनीकुमार, देव, गन्धर्व, यक्ष आदि देवेन्द्र के पीछे-पीछे चल पड़े। कई अपशकुन दिखाई देने लगे। युद्ध के लिए निशाचर भी बढ़े। मेघनाद को पीछे करके दशानन युद्ध करने आगे आया। जब देव और असुर लोग आमने सामने खड़े हो उग्र युद्ध करने लगे तब सेना-सहित कुम्भकर्ण आ पहुंचा और भयंकर युद्ध करके देवताओं में अनेक लोगों को नीचे गिरा दिया। इतने में इंद्र आगे बढ़ राक्षस वीरों को मार-मारकर नीचे गिराने लगे। अनेक राक्षस गिर पड़े और कई धाराओं में रक्त की नदी बह चली। रावण-पुत्र ने यह देख देवों पर कई बाण चलाये। वृत्रारि (इन्द्र) ने भी रोष से ओतप्रोत हो खूब बाण-प्रयोग किये। सारा संसार अन्धकार से आवृत हुआ। यह देख पंक्तिकंठ (रावण) ने कहा—। ६० —(रावण ने) सारथी से कहा—"वायुवेग से रथ देवसेना के बीच में ले चलो ताकि देवों का संहार कर सकूं।" सूत ने रथ

सूतनुं तेरत्ति वेगेन कूट्टिनान् आदितेयाधिपन् चॊल्लिनानन्नेरं—
नम्मुटॆ सैन्य मध्ये वन्नु पुक्किकतु वन्मदत्तोटुं निशाचर नायकन्;
वेगेन तिङ्ङळ् वळञ्ञु युद्धं चॆय्तु पोकरुतात वण्णं चॆरुत्तीटुविन् ।
कॊन्नु कूटा नमुक्कॊन्नु कॊण्टुमिवन् तन्नॆ विरिञ्चन् कॊटुत्त वरत्तिनाल्
देवेन्द्रनेवं परञ्ञोरनन्तरं देवगणं चुळन्नाशु युद्धं चॆय्तार् ।
तातनॆ वैरिकळ् वन्नु वळञ्ञळवातुरनायितु रावणि वीरनुं ।
आक्कुमे कण्टु कूटातवण्णं मरञ्ञुवक्कोटु शस्त्रास्त्र जालं वरिषिच्चान् ।
अम्पु कॊण्टुम्पर् तळर्न्नतु कण्टॊरु जंभारितानुं तिरञ्ञु तुटङ्ङिनान् ७०
तेरुमुपेक्षिच्चु मेल्पोट्टु तन्नुटॆ वारणमेरित्तिरञ्ञितॆल्लाटवुं ।
ऎङ्ङुमे कण्टील रावणपुत्रनॆयङ्ङनॆयल्लो वरं कॊटुत्तू पुरा ।
आवतु मिल्लॆनिक्किन्नतिनॆन्नोर्त्तु देवेन्द्रनुं तळर्न्नंन्न निन्नीटिनान् ।
रावणियुं मायायुद्धेन साहसाल् देवेन्द्रनॆप्पिटिच्चाशु कॆट्टीटिनान् ।
हाहा बलाधिपनाय गन्धर्वनुं हूहू समं चॆन्नु रावणन् तन्नोटु देहमु-
पेक्षिच्चु युद्धं तुटङ्ङिनान् साहसं पूण्टु पॊरुतान् दशास्यनुं ।
हा हा ! शिव शिव ! कष्टं पॊरुतपोराहवमिङ्ङनॆ कण्टिट्टु

तीव्रगति से चलाया तो आदितेयाधिप ने (अपने सैनिकों से) कहा—"देखो, मदमस्त निशाचर नायक हमारी सेना के बीच आ गया है। तुम लोग तुरन्त चारों ओर से घेरकर ऐसा लड़ो कि वह बचकर न जा सके। ब्रह्मा के दिये वर-प्रभाव से हम किसी भी प्रकार से इसका वध नहीं कर सकेंगे।" देवेन्द्र के ऐसा कहते ही देवों ने पूरी शक्ति लगाकर युद्ध आरम्भ किया। अपने पिता को चारों ओर से घेर शत्रुओं को युद्ध करते देखकर वीर रावणी भयभीत हो उठा। तुरन्त सबकी आँखों से बचकर उसने शर-जाल बरसाये। बाणों की चोटों से देव लोगों को पीड़ित होते देख इन्द्र ने मेघनाद को ढूँढ़ निकालने का प्रयत्न किया। ७० रथ छोड़ अपने वारण पर सवार हो उन्होंने ऊपर इधर-उधर उसकी खोज की। कहीं रावण-पुत्र दिखाई नहीं दिया। (इन्द्र सोचने लगे कि) शिव ने मेघनाद को यही (अदृश्य हो युद्ध करने का) वर दिया था। अब मैं इसके लिए कुछ नहीं कर सकता, ऐसा सोचकर खिन्न एवं उदास हो इन्द्र वहीं के वहीं खड़े रहे। रावणी ने माया-युद्ध करके साहसपूर्वक इन्द्र को तुरन्त बाँध लिया। हाहा नामक श्रेष्ठ गन्धर्व तथा हूहू नामक तुल्य साहसी गन्धर्व प्राण हथेली पर लेकर रावण से लड़ने लगे तो रावण भी साहस के साथ लड़ता गया। "हा हा ! शिव शिव ! खेद है-खेद है ! ऐसा युद्ध कहीं नहीं देखा गया। युद्ध में शत्रुओं द्वारा हमारे वृद्ध श्रवस् (इन्द्र) आबद्ध

मिल्लल्लो। युद्धमद्धये बलाल् शत्रुप्रवरनाल् बद्धनायानुटन् वृद्ध श्रवस्सय्यो ! इत्थं परञ्ञु निल्क्कुं विधौ रावणि सत्वरं तत्र मरञ्ञु युद्धं चेय्तु। शस्त्रास्त्र जालं वरिषिच्चमररे जित्वा पिताविनेयुं वीण्टु कोण्टु पोय् ८० पत्तनं पुक्कु सुखिच्चु मरुविनानत्तल् पूण्टप्पोळमर्त्यगणं द्रुतं। गत्वा पितामहं नत्वा ससंभ्रमं वृत्तान्तमेल्लामुणर्त्तिच्चरुळिनान्। श्रुत्वा विरिञ्चनुमुत्थाय सत्वरं कृत्वाशुचा महाप्रस्थानमादराल्। चारु लङ्का नगरोपरि देवकळोरो विमानङ्ङळ् तोरुं मरुविनार्। पुष्करसंभवन् चेन्नु लङ्कापुरं पुक्कतु कण्टेतिरेटु दशमुखन् वन्दिच्चु निन्नतु कण्टु चतुर्म्मुखन् नन्दिच्चु रावणन् तन्नोटरुळ् चेय्तुवाळ्क जगत्त्रयत्तिन्नेक नाथनाय् शोकमकन्नोरु वैरियुं कूटाते। पुत्रनां मेघनिनादनुण्टाकयालेत्रयुं भाग्यवानेन्नु वन्नू भवान्। कल्यनां निन्नुटे पुत्रनु तुल्यनायिल्ल जगत्त्रयत्तिङ्कलिन्नारुमे। इन्द्रने युद्धे जयिच्चतु कारणं इन्द्रजित्तेन्नु नामं कोटुत्तेनहं। ९० इन्द्रनेयेन्नोटु कूटेययक्केण मेन्नालभीष्ट वरं तरुन्नुण्टु ञान्। एन्नरुळ् चेय्त विरिञ्चने वन्दिच्चु चोन्नान् दशाननन्दननादराल्--

---

हो गये।" ऐसा कहते हुए जब देवसेना खड़ी थी तब रावणी तुरन्त छिपे-छिपे युद्ध करने लगा। शस्त्रास्त्र-जाल से अमरों को जीतकर वह अपने पिता को उनके बीच से छुड़ा ले गया। ८० (कैदी इन्द्र को लिए) पिता-पुत्र लंका में पहुँच सुख से बैठ गये। तब देवता लोग बहुत खिन्न हुए। वे पितामह (ब्रह्मा) के पास पहुँचकर तथा उन्हें प्रणाम कर समस्त वृत्तान्त कहने लगे। वृत्तान्त सुनकर ब्रह्मा जी अपने स्थान से जल्दी ही उठे और दुःख-पीड़ित हो उन्होंने लंकानगरी की ओर प्रस्थान किया। सारे देवता लोग भी सुन्दर लंकानगरी के ऊपर विमान पर सवार हो आकाश मार्ग में आ विराजमान हुए (किन्तु उन्हें लंकानगरी के अन्दर प्रवेश करने का साहस नहीं रहा)। पुष्करसंभव (ब्रह्मा जी) को लंकापुरी में प्रविष्ट पाकर दशमुख ने उनका स्वागत किया। प्रणाम-निरत रावण को देख प्रसन्न हो ब्रह्माजी ने रावण से कहा—"त्रिभुवन के लिए एकमात्र स्वामी बन, समस्त शोकों, शत्रुओं से मुक्त हो सुखी रहो। पुत्र रूप में मेघनाद को पाकर आप बड़े भाग्यशाली बन गये। उस के समान समर्थ आज संसार में दूसरा कोई नहीं रहा। युद्ध में इन्द्र को जीतने के कारण मैं उसे इन्द्रजीत नाम दे रहा हूँ। ९० इन्द्र को विमुक्त कर मेरे साथ भेज देंगे तो मैं आपको मन-पसन्द वर दूंगा।" इस प्रकार

होमं वळियु् कळिच्चालेनिक्कुटन् होम कुण्डत्तिल् निन्नु जनिक्कुन्न तेरतिलेरियाल् वेणममरत्वमारालु मेन्नेज्जयिच्चु कूटायुकयुं; वेणमतेन्निये होमं मुटियाते मानेन युद्धं तुटङ्ङुकिलन्नेरं वन्नालुमेन् मरणं पुनरल्लायुकिल् तन्नायमरत्ववुं वन्नु कूटणं । मुट्टु तपोबलं कोण्टु वरङ्ङळे मट्टुं पलरुं वरिच्चुतानुं पुरा; ञान् मम बाहुबलं कोण्टु वाङ्ङुन्नु काम्यङ्ङळाय वरङ्ङलरिञ्ञालुं । इत्थं वरमरुळ् चेय्किल् विरवोटु वृत्रारि पोयालुमेन्नु चोल्लीटिनान् । अल्लां निनक्कोत्तवण्णं वरिकेन्नुं नल्ल वरमरुळ् चेय्तु विरिञ्चनुं । १०० मेघनादन् पुनरिन्द्रनेयन्नेरं पोकेन्नयच्चान् पितामहन् तन्नोटुं । देवकळोटुं महेन्द्रन् प्रसादिच्चु देवलोकं चेन्नु पुक्किरुन्नीटिनान् । पिन्नेयुं भावक्षयं पूण्टु वासवन् खिन्ननायु् वाळुन्नतु कण्टु नान्मुखन्— चोल्लिनान् खेदं कळक नी निन्नुटे वल्लायुम कोण्टितु वन्नु धरिक्क नी । मुन्नमहल्ययेे प्रापिच्च दोषत्ताल् वन्नितभिमान हानि निनक्कोटो ! वैकाते वैष्णवमाय महामखं चेय्क नी दुष्कृतमेल्लामकलुवान् । धातृ नियोगेन यागवुं चेय्तति मोदं

की बातें करते खड़े ब्रह्मा जी को प्रणाम करते हुए दशानन-पुत्र (मेघनाद) ने भक्तिपूर्वक कहा—"हे प्रभु ! विधिवत् होम करने पर होमकुण्ड से मुझे एक रथ मिले और उस पर सवार हो युद्ध के लिए निकलने पर कोई मुझे न जीत सके, न मार सके । हाँ, होम की पूर्त्ति के पहले अगर युद्ध आरम्भ हो, तो मेरी मृत्यु हो, अन्यथा मुझे अमरत्व मिलना चाहिए । इसके पहले भी कई लोगों ने कठिन तपोबल से कई श्रेष्ठ वर प्राप्त कर लिए हैं । लेकिन आज मैं अपने बाहुबल के कारण काम्य वर माँग रहा हूँ । यह आप स्मरण रखें । अगर ये वर प्रदान करेंगे तो वृत्रारि (इन्द्र) स्वतन्त्र हो आपके साथ चलेंगे ।" ऐसा मेघनाद ने कहा । ब्रह्मा ने प्रसन्न हो वरदान दिया—"तुम्हारे सारे अभीष्ट पूर्ण हों ।" १०० मेघनाद ने तब इन्द्र को पितामह के साथ जाने दिया । देवताओं के साथ इन्द्र देवलोक में पहुंच सुख से रहने लगे । फिर भी भाव-क्षय (अपमान की बात सोचकर खिन्न) से इन्द्र को खिन्न होते देख चतुरानन (ब्रह्मा) ने कहा—"तुम अपना सन्ताप त्याग दो । तुम्हारी बुराई के कारण ऐसी दशा आ गयी, यह जान लो । पहले अहल्या के साथ समागम करने के अपराध से तुम्हारा आज यह अपमान हुआ । सारे पापों से मुक्त होने के लिए तुम अविलम्ब वैष्णव महायज्ञ कर लो ।" ब्रह्मा जी की आज्ञा मानकर सहर्ष यज्ञ पूरा कर महेन्द्र सुख से रहने लगे । 'रावण से भी

कलर्न्नु वसिच्चु महेन्द्रनुं। रावणनेक्काळ् पराक्रमियायतु रावणियेन्नु ञान् चोन्नतिन् कारणं इङ्ङनेयाकयालेन्नरुळ् चेय्तितु मंगळात्मावामगस्त्य मुनीन्द्रनुं। भूमिपालेन्द्रनुं भ्रातृजनङ्ङळुं भामिनियाकिय जानकी देवियुं, ११० सुग्रीवनादियां वानर-वीररुं रक्षोवरनां विभीषण वीरनुं, रात्रिञ्चर वरन्मारुं मनुष्यरुं धात्रीपतिकळुं भूमिदेवन्मारुं, कुभोत्भवनरुळ् चेय्तत्तु केट्टुळ्ळिल् सम्पूर्ण कौतुकं पूण्टु मरुविनार्। राघवन् तन्नोटनुवादवुं कोण्टु वेगेन तापसन्मारोटु कूटवे भागवतोत्तमनामगस्त्यन् तेळिञ्ञाकाश मार्ग्गेण पोय् मरञ्ञीटिनान्। ११५

श्रीर मन्टे बन्धु मित्रादि सत्क्कारं

संध्या नियम कर्म्मङ्ङळनुष्ठिच्चु बन्धुक्कळोटुं निज समयं चेय्तु भोगीन्द्र भोगसमान तल्पस्थले योगेशनुं योगनिद्र कोण्टीटिनान्। गायक मागधवन्दिकळुं जगन्नायकनाकिय रामनरेन्द्रने पळ्ळिक्कु-रिप्पुणर्त्तीटिनारन्नेरमुळ्ळं तेळिञ्ञु सन्ध्या वन्दनं चेय्तु; मज्जन होम जपार्च्चनपूर्वकं सज्जन संयुत मिष्टाशनं चेय्तु; वस्त्राभरणानुलेपनवुमणिञ्ञुत्तुंग रत्नसिंहासने

रावणी को घोर साहसी एवं पराक्रमी कहने का मेरा यही कारण है' ऐसा मंगलात्मा अगस्त्य मुनि ने राम से कहा। भूमिपालेन्द्र (राम जी), भ्राता लोग, भामिनी जानकी देवी—। ११० —सुग्रीव आदि वानरश्रेष्ठ, राक्षसराज विभीषण और अन्य राक्षस गण, मनुष्य लोग, धात्रीपति (राजा) लोग, भूमिदेव (ब्राह्मण) आदि कुंभोद्भव (अगस्त्य) का कथन सुनकर मन ही मन प्रसन्न एवं उत्सुक हुए। फिर श्रीराम जी से सहर्ष विदा लेकर भागवतोत्तम अगस्त्य अपने अन्य तापसों के साथ आकाश मार्ग में पहुँचकर अदृश्य हो गये। ११५

श्रीराम के द्वारा बन्धु-बांधवों का सत्कार

(मुनियों को विदा करने के बाद) संध्या-वंदना आदि नित्यकर्मों से निवृत्त हो तथा बन्धुजनों के साथ थोड़ी देर बिताने के उपरान्त आदिशेष के शरीर तुल्य शय्या पर (मृदुल-कोमल शय्या पर) योगेश (राम) ने योगनिद्रा ली। (प्रातःकाल में) स्तुति गायकों, चारणों के द्वारा जगाये जाने पर जगत् के स्वामी महाराज राम ने सानन्द, स्नान, होम, जप, अर्चना सहित संध्या-वंदन किया तथा सुहृद्जनों के साथ मिष्ठान्न भोजन

मेविनान् । सोदरामात्य पुरोहित सामन्त भूदेव तापस सेनापति वीर, मेदिनीपाल प्लवंग कुलाधिपयातुधानादिकळ् चुट्टुं मरुविनार् । देवकळोटुं सुधर्म्मयिलाम्मारु देवेन्द्रनेन्न पोलें विळङ्ङीटिनान्। तल्क्षणं सीताजनकन् जनकनां सल्क्षिति-पालकन् तन्ने वन्दिच्चुटन् । १० आनन्दमुळ्क्कोण्टरुळ् चेय्तितन्नो-रमूनं वरातें चिरकेंट्टि वारिधौ रात्रिञ्चरकुलमोक्कें मुटिच्चतु-मोर्त्तालु त्वदीय कारुण्य बलत्तिनाल् । ञानिनि तल्कुन्न रत्नादि-कळेल्लां मानसानन्देन वाङ्ङिराज्यं पुक्कु पुत्रियेयुं पुनरेन्नेयुमेप्पोळुं चित्ते मरन्नु पोकातें मरुवुक । स्वर्णरत्नांबर भूषण जालङ्ङळ् ऍण्णमिल्लातोळं दिव्य पदार्थङ्ङळ् जानकि कय्यिल्क्कोटुत्तु कोटुप्पिच्चु मानवश्रेष्ठनयच्चितु यात्रयुं । आनन्द बाष्पवुं वार्त्तु वार्त्तावोळं मानववीरनाशीर्वचनङ्ङळुं गद्गद वर्ण्णेन चोल्लिलप्पट-युमाय् निर्ग्गमिच्चीटिनानाशु जनकनुं । मातुलन् केकयभूपन् युधाजित्तुमाधिमुळ्ळुत्तु वियोगं निरूपिच्चु वाळुन्न नेरमनेकं पदार्त्थङ्ङळ् भूषण पट्टांबरादिकळुं कोटु—२० त्तामोदमुळ्क्कोण्टु यात्र वळङ्ङिनान् प्रेमातिरेकाल् भरतनेयुं मुदा गाढमायालिंगनं

भी किया। फिर वस्त्राभरणों, अनुलेपनों से सुसज्जित हो उत्तुंग रत्नसिंहासन पर विराजमान हुए। चारों ओर भ्राताओं, अमात्यों, सामन्तों, भूदेवों, तापसों, सेनापतियों, वीरों, मेदिनी-पालकों (राजाओं), वानर-राक्षस-प्रमुखों से वे परिवृत थे। इनसे परिवृत श्रीराम जी देव-सभा में इन्द्र के समान परिशोभित थे। तत्काल ही (उन्होंने) सीता जी के जनक (पिता) महाराज जनक जी को सादर प्रणाम किया। १० और बड़े प्रसन्न हो उनसे कहा—"बिना कठिनाई के सागर में सेतु बांधकर रात्रिचर-कुल का नाश करने की सामर्थ्य मुझे, विचारपूर्वक देखा जाए तो आपकी कृपा से प्राप्त हुई। आप सानन्द मेरे दिये रत्नादि पदार्थ ग्रहण कर अपने राज्य को लौट चलें तथा सदा अपनी पुत्री तथा मेरा ध्यान रखते हुए वहाँ सुखपूर्वक रहें।" यह कहकर मानवश्रेष्ठ ने स्वर्ण, रत्न, वस्त्र, आभूषण आदि अपरिमेय दिव्य वस्तुएँ जानकी के हाथों (उन्हें) दिलवाकर विदाकर दिया। आनन्दाश्रु बहाते-बहाते सगद्गद वाणी में मानववीर को आशीर्वाद देकर जनक जी तुरन्त अपनी सेना सहित (जनकपुर को) चल पड़े। मातुल केकयराज युधाजित वियोग का अनुस्मरण कर दुखार्त बैठे थे; तभी आभूषण, बहुमूल्य वस्त्र आदि अनेक पदार्थ भेंटकर—। २० —सहर्ष उन्हें भी विदा किया। प्रेमाधिक्य से भरत और राम का गाढाश्लेष

चेय्तवन् पटयोटुं नटन्नु निजालयं मेविनान् । पिन्ने प्रदर्द्दननाय काशीपति तन्नेयुं गाढमायालिंगनं चेय्तु, वारण वाजि पदाति रथङ्ङळुं चारुतराभरणांबराद्यङ्ङळ, वेण्टुवोळं कोटुत्तुळ्ळिला-नन्दवुं पूण्टु पोयालुमेन्नाशु वळङ्ङिनान् । पिन्नेयुं मुन्नूरु मन्नवन्मार् तदा तिन्नवक्कुं धनं वेण्टुवोळं नल्कि सम्मानिच्चाशु पोवान् नियोगिच्चळवम्महीपालरुं चेन्नुपुरि पुक्कार् । बन्धु-क्कळाय नामारुं तुणयाते सिन्धुविल् सेतु बन्धिच्चु लंघिच्चुटन् पंक्तिमुखादिकळेक्कोल चेय्ततु चिन्तिच्चु कण्टाल् नमुक्किकळप्पं तुलों । उण्टेन्नु निर्णयमेङ्किलुं नाथनेक्कण्टतु कार्यं नमुक्केन्नु निर्णयं । ३० इत्थं परञ्ञु परञ्ञु तङ्ङळ्क्कुळ्ळ पत्तनं चेन्नु पुक्कू महीपालरुं । दुर्लभमायुळ्ळ वस्तुक्कळ् पार्त्तु पार्त्तेल्ला-र्क्कुमङ्ङु कोटुत्तयच्चीटिनान् । वानर राक्षस वीररोरुमिच्चु कानन राज्यपुर भवनङ्ङळिल् मन्नवर् मन्नवन् तन्नोटोरुमिच्चु नन्नाय् सुखिच्चु कळिच्चु मरुविनार् । रण्टुमासं कळिञ्ञू पुन-रिङ्ङने रण्टु दिवसं कळिञ्ञ पोले तदा । वासरं पोयतरिञ्ञ-तिल्लारुमे वाससौख्यं कोण्टु दत्तृ गुणङ्ङळाल् । तल्क्कालमेकदा

करके वे भी अपनी सेना को लिये अपने भवन को चले । फिर प्रतर्द्दन नामक काशीराज को गले से लगाया तथा असंख्य हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सैनिक, सुन्दर आभूषण, वस्त्र आदि देकर सानन्द उन्हें जाने की अनुमति प्रदान की । फिर वहाँ शेष बचे तीन सौ राजाओं को भूरि-भूरि धन प्रदान कर तथा आदर देकर जाने का आदेश दिया और वे भी सब कुछ ग्रहण करके अपने-अपने नगरों को सहर्ष चलने को हुए । "आपने हम बन्धुजनों की सहायता के बिना सेतुबंधन करके सागर लाँघकर पंक्तिमुख आदि का वध किया, जिसके संबंध में विचार करते हुए हम अपना लघुत्व अनुभव करते हैं । फिर भी स्वामी का दर्शन-लाभ पाकर निश्चय ही हम चरितार्थ हुए ।" । ३० ऐसा कहते हुए सभी महीपाल (राजा लोग) अपने-अपने नगरों को चले गये । सोच-सोचकर दुर्लभ वस्तुएं सबको भेज दीं । अपने आत्मीय मित्र तथा भक्त वानर एवं राक्षसवीर, सुग्रीव एवं विभीषण, भगवान का सहवास पाकर काननों, राज्यों, नगरियों, भवनों में घूमते-भटकते उल्लासमय जीवन व्यतीत करते रहे । उन्होंने दो मास का समय दो दिन के समान बिताया । स्वामी के गुणों से अभिभूत एवं सुखवास से परिचालित उन्हें समय और दिनों के व्यतीत होने का ध्यान नहीं रहा । तब एक दिन स्वामी श्रीराम जी उनका खूब अनुमोदन करते

रामभद्रस्वामि सल्क्कारपूर्वमरुळ् चेय्तितादराल्— मर्क्कटा-धीश्वरन् तन्नोटु मोदेन किष्किन्धयिल्च्चेन्नु वाळ्क सुखेन नी। वानरन्मारॆयुपद्रविच्चीटातॆ वारं प्रति परिपालिच्चु कॊळ्क नी। आयुस्सुपेक्षिच्चु नम्मोटु कूटॆ निन्नायोधनं चॆय्तवरिवरेवरुं। ४० नम्मिलॆस्सख्यं मरन्नु पोयीटातॆ धर्म्मप्रधाननाय् वाळ्क पलकालं। आभरणांबराद्यङ्ङळ् बहुविधमामोदमार्न्नु कॊटुत्तयच्चीटिनान्। रात्रिञ्चरेश्वरनाय विभीषणनार्त्ति पोम्मारुरुळ् चॆय्तयच्चीटिनान्। नम्मिलुळ्ळोरु बन्धुत्वमोरुन्नाळुं निन्मनतारिल् मरयातिरिक्कणं। आकल्पकालं सुखिच्चु नी लङ्कयिल् भागवतोत्तमनाय् वसिच्चीटुक। ऎन्नरुळ् चॆय्त नेरं पवनात्मजन् चॆन्नु पादांबुजं वन्दिच्चु शान्तनाय् चॊल्लिनान् निन्तिरुमेनि पिरिञ्ञॆनिक्कल्ललाय् वाळुवान् शक्ति-यिल्लेतुमे। रामकथामृतं लोकत्तिलुळ्ळ नाळामोदमोटतु केट्टु-कॊळ्वान् मम वेणमायुस्सतिन् मुन्नेयॊरुदिनं प्राणविनाशं वरातॆ-यिरिक्कणं। आशमट्टॊन्निनुमिल्लटियनुळ्ळिलाशरवंश विना-शन! श्रीपते! ५० इत्थं परञ्ञु तॊळुतु निल्क्कुं वायुपुत्रनॆ

हुए सानन्द मर्कटेश्वर (सुग्रीव) से बोले—"अब आप सानन्द किष्किन्धा में जाकर सुख से रहिए। वानरों को किसी प्रकार का दुःख दिये बिना आप राज्य का भार संभालिए। अपने प्राण की परवाह किये बिना ये वानर लोग युद्ध में हमारा साथ देते रहे। इसका आप बराबर स्मरण रखिए। ४० हमारी परस्पर मित्रता का ध्यान रखते हुए आप चिरकाल तक धार्मिक जीवन बिताइए।" यह कहते हुए नाना प्रकार के आभूषण, वस्त्र, आदि सहर्ष उन्हें प्रदान किये और विदा किया। फिर विश्वस्त मित्र विभीषण की ओर देखकर उनके दुख को दूर करते हुए राम जी बोले—"रात्रिचरेश्वर विभीषण! हमारी मित्रता की बात आप कभी मन में विस्मृत होने न दें। भागवतोत्तम आप कल्पान्त तक लंका में सुखी जीवन बिताइए।" इतना कहते ही शान्तस्वरूप हनुमान जी आगे बढ़ चरणांबुजों पर नमस्कार करते हुए बोले—"आपकी सुन्दर मूर्त्ति से बिछुड़ कर दुखी जीवन बिताने में असमर्थ हूँ। जब तक संसार में रामकथा प्रचलित रहेगी सदा उसका श्रवण करते रहने के लिए दीर्घायु चाहिए, इसलिए रामकथा के रहते समय तक मेरा प्राण-नाश होने न पाए। हे आशरवंश-विनाशक! हे श्रीपति! इस दास की दूसरी कोई कामना नहीं है।" ५० इस प्रकार की प्रार्थना सहित हाथ जोड़ खड़े वायुपुत्र का गाढाश्लेष करते हुए इन्दिरापति राघव ने मन्दस्मिति के साथ इस प्रकार

गाढमायालिंगनं चॆय्तु मन्दस्मितान्वितमेवमरुळ् चॆय्तितिन्दिरा-वल्लभनाकिय राघवन्। लोकङ्ङळुळ्ळन्नाळोळमॆन् कीर्त्तियुं पोकयिल्लन्न ताळुं वाळ्क नीयॆंटो ! जन्ममरण दुःखापहं निर्म्मलं ब्रह्मपदं मम तन्नेन् निनक्कुञान्। इङ्ङनॆयुळ्ळ भवानॆप्पिरिञ्ञु पोयॆङ्ङने ञङ्ङळ् पोरुक्कुन्नतीश्वरा ! अन्योन्यमेवं परञ्ञु परञ्ञु पोय्तन्नटॆ तन्नटॆ राज्यमकं पुक्कार्। पुत्रमित्रार्त्थ कळत्रादि-कळुमाय् तत्र सुखिच्चु वसिच्चितॆल्लावरुं। पुष्पकमाय विमानवुम-त्तॆरमुल्पल नेत्रनॆ वन्दिच्चु चॊल्लिनान्— ऎन्नोटु रावणन् कॊण्टु पोयानवन् तन्नेयुं कॊन्नु रघुकुल नायकन् निन्नॆप्परिग्रहिच्चा-निनियुंचिरं मन्नवन् तन्नॆ वहिक्क नी साम्प्रतं। ६० सौख्यमॆ-निक्कतिन्मीतॆमटॊन्निल्ल साक्षाल् पुरुषोत्तमनॆ वहिक्क नी। ऎन्नु धनदन् परञ्ञोरनन्तरं इन्नु ञानिङ्ङोट्टु पोन्नु ञान् मन्नव ! ऎन्नुं तिरुवटियॆप्पिरिञ्ञोटुवानॆन्नुळ्ळिलुं मटियुण्टु रघुपते ! ञान् निरूपिक्कुन्न नेरं वरिक नीमान्यनाय् चैत्ररथे वाळ्क सन्ततं। ऎन्नरुळ् चॆय्तयच्चान् विमानत्तॆयुं तन्नाय् विळङ्ङी समस्त-लोकङ्ङळुं। वन्नु वसन्त समयवुं मैथिलि तन्नोटु कूटॆ रमिच्चु

आश्वासन दिया—'जब तक संसार का अस्तित्व है तब तक मेरा यश घटने न पाएगा और तब तक तुम भी जीवित रहोगे। अन्त्य काल में जन्म-मृत्यु-दुःख-रहित ब्रह्मपद प्राप्त करने का मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं।" "ऐसे कृपालु भगवान से बिछुड़कर हम कैसे रह पाएंगे", ऐसा परस्पर कहते हुए सब अपने-अपने निवास-स्थान को चले। पुत्र, मित्र, कलत्र सबसे मिल-जुलकर सब सुखमय जीवन बिताने लगे। तब पुष्पक विमान उत्पल-नेत्र (कमलनेत्र राम जी) को प्रणाम करता हुआ बोला—"हे स्वामी ! कुबेर ने मुझे आपके पास भेज दिया है। वे कहते हैं कि मुझसे तुम्हें रावण उठा ले गया था और उस रावण का वध कर तुम्हें रघुकुल-नायक ने ग्रहण कर लिया है, इसलिए आगे से तुम उन्हीं को वहन करते रहो। ६० इससे बढ़कर आनन्द की बात मेरे लिए अन्य कुछ नहीं है; इसलिए तुम साक्षात् पुरुषोत्तम का वाहन बने रहो। हे महाराज ! धनेश्वर की अनुमति लेकर आज मैं इधर वापस आ चुका हूं। हे रघुपति ! आपसे बिछुड़ रहने में मुझे भी बड़ा दुःख अनुभव होता है।" ऐसा कहते ही श्रीराम जी ने कहा—"तो मेरा संकल्प करते समय तुम उपस्थित रहो। तब तक चैत्ररथ में पहुँच कर सुख से रहो।" ऐसा बोलकर विमान को विदा किया। उस समय सारा संसार प्रसन्न हो

भगवानं भोगीन्द्र भोग तल्पस्थनुमाभोग भोगेन नालु मासं कळिञ्ञूतदा। जानकी देविक्कुगर्भंवुमक्कालमानन्दवुं तल्प्रज-कळक्कु वर्द्धिच्चु। श्रीरामनाश्रम वर्ण्ण धर्म्मत्तोटुमीरेळ लोक-ङ्ङळुं परिपालिच्चु सोदरामात्य पुरोहित संयुत वेदान्तवेद्यन् वसिच्चितक्कालमे। ७०

तृतीय अध्यायम्।

वेल्लवुं पाल्क्कुळम्पुं पञ्चसारयुं तेनुं वेळिळत्तालत्तिलुण्टु वच्चिरिक्कुन्नु बाले! एल्लामे भुजिच्चु निन् मानसं तेळिञ्ञुटन् नल्ल सल्क्कथ परञ्ञीटणं किळिप्पेण्णे! राम माहात्म्यं परञ्ञीटणमेन्नोटु नी राम नामत्तालल्लो मोक्षत्ते प्रापिक्कुन्नु। काल्क्षणं कालं कळञ्ञीटाते भक्तियोटे मोक्षसाधनं रामचरितं केट्टु कोळ्विन्। रावणादिकळाय राक्षसरेयुं कोन्नु देवकळालुमभि-वन्द्यनां रघुनाथन् पुष्पक विमानमेरिक्चेन्नयोद्धयियिल् अत्भुत

उठा। फिर वसन्त काल का आगमन हुआ। भगवान मैथिली के साथ रमण करते रहे। शेषनाग के तल्प पर वास करनेवाले भगवान ने इधर काम नामक पुरुषार्थ का उपभोग करते हुए चार मास व्यतीत किये और जानकी देवी ने गर्भ धारण किया। यह जानकर सारे प्रजावर्ग अत्यन्त प्रसन्न हो उठे। इस प्रकार (मनुष्यावतार के) अनुकूल वर्णाश्रमधर्मों का पालन करते हुए वेदान्तवेद्य भगवान राम अपने भ्राताओं, अमात्यों, पुरोहितों सहित सुखमय जीवन व्यतीत करते आ रहे थे। ७०

तृतीय अध्याय।

(कथा-कथन में लगी शुकी से कवि कह रहा है) हे बालिके! सुवर्णमय थाली में तुम्हारे लिए गुड़, दूध, शक्कर और मधु सब रखे हुए हैं। हे लाड़ली शुक-बालिके! सबका उपभोग कर खूब संतुष्ट होकर सुन्दर रामचरित का आगे वर्णन करो। राम-माहात्म्य का गुणगान करते जाओ, क्योंकि (कहा जाता है कि) रामनाम ही मुक्ति-साधन है। (शुकी बोलती है) अब अविलम्ब भक्तिपूर्वक मोक्षप्रदायक रामचरित सुनिए। रावण आदि राक्षसों का संहार करके देवताओं से अभिवन्द्य अद्भुत पराक्रमी रघुनाथ जी पुष्पक विमान पर आरूढ़ हो अयोध्या में पहुँच कर राज्याभिषिक्त हुए। उपरान्त दर्शनार्थ आये हुए कुंभसंभव (अगस्त्य) के मुख से राक्षसों का इतिहास सुनने के बाद उन्हें सानन्द विदा कर दिया।

पराक्रमनभिषेकवुं चेय्तु । कुंभसंभवनरुळ् चैय्तोरु निशाचरसंभवं केट्टु तेळिञ्ञवरेयय्च्चुटन् । मेदिनि परिपालिच्चनुजन्मारुमाये मेदिनीसुतयोटु कूटे लीलकळ् पूण्टु; वनक्रीडयुं जलक्रीडयुं चेय्तु नित्यं मनः प्रीतियुं पूण्टु रम्यहर्म्यङ्ङळिलुं, रमिच्चु वसिच्चितु चिलन्नाळतुकालं समस्त लोकङ्ङळुमाश्वसिक्कयुं चेय्तु । १० अक्कालं जानकिक्कु गर्भवुमुण्टाय् वन्नु पुष्करनेत्रन् तानुं प्रीति-पूण्टरुळिनान् । पौरुषमाय धाम धरिच्चु सीतादेवि पौरन्मारा-नन्दवुं धरिच्चारतु कालं । अङ्ङने मरुवुंन्नाळेकदा रघुवरनंगना-शिरोमणि तन्नोटु चोद्यं चेय्तु । वल्लभे ! निनक्किप्पोळ् गर्भ-मुण्टल्लो तव वल्लतुमभिरुचियुळ्ळतु परयणं । गर्भिणिमार्क्कु वाञ्छयुळ्ळतु नल्कीटाञ्ञालर्भकन्मार्क्कोरो कुटमुण्टाय्वरु । दुर्लभमेन्नाकिलुं ञानतु नल्कीटुवन् चोल्लु नी मनोरथमेन्नोटु मटियाते । ऍन्नतु केट्टु सीतादेवियुं चोल्लीटिनाळ् मुन्नं ञां वनवासत्तिनु पोयतुकालं ओरोरो मुनिपत्निमारुमायाश्रमत्तिल् स्वैरमाय् वसिच्चतिल् कौतुकमुण्टु पारं । मुनि पत्निकळुमायो-रुन्नाळ् वाणीटुवान् मनसि कौतियुण्टु मट्टोन्निल्लेनिक्केतुं ।

फिर वे अपने भ्राताओं के साथ मेदिनी (पृथ्वी) का परिपालन करते हुए तथा नित्य मेदिनीसुता (सीता जी) के साथ केलि-लीलाएँ, वनक्रीड़ा, जल क्रीड़ा, तथा रम्य हर्म्य (सुन्दर महल) में विविध प्रकार के सुख भोग भोगते हुए मन को प्रसन्न रखते आये । इस प्रकार कुछ समय के भीतर सारा विश्व (समर्थ राजा को पाकर) आश्वस्त हुआ । १० उन्हीं दिनों जानकी ने गर्भ धारण किया और (समाचार से अवगत) पुष्करनेत्र (श्रीराम) प्रसन्न हो उठे । सीता जी ने अपने गर्भ में उज्ज्वल तेज को धारण किया, यह समाचार सुनकर पौरजन आनन्दमग्न हुए । इस प्रकार सुख से रहते हुए एक बार रघुवर ने अंगनारत्न (सीता जी) से पूछा—"प्रिये तुम गर्भवती हो ! अगर तुम्हारी कुछ कामनाएँ हों तो अवश्य बता दो । गर्भवती नारियों की दोहदेच्छा की पूर्ति न होने पर भावी शिशु में कुछ न कुछ वैकल्य (त्रुटि) होने की संभावना है । तुम्हारी वांछा चाहे कितनी ही दुष्कर क्यों न हो, मैं उसे पूर्ण करा दूँगा; इसलिए तुम अपनी मनोकामना निस्संकोच मुझे बता दो ।" यह सुनकर सीता जी बोलीं—"पहले वनवास के समय अनेक मुनियों के आश्रमों में पहुँच मुनि-पत्नियों से मिलकर सुखमय जीवन बिताने के अवसर मिले थे, वैसे ही एक दिन मुनि-पत्नियों के साथ आश्रमवास करने की बड़ी अभिलाषा हो रही है, अन्य मेरी कोई अभिलाष

इङ्ङने सीतादेवि चोन्नतु केट्टनेरं अंगनारत्नत्तोटु राघवनरुळ् चेय्तु— २० ऐङ्किल् ञान् सौमित्रियेत्तुणयुं कूट्टि नाळे पङ्कजनेत्रे पोवानाय् नियोगिक्कामल्लो। ऐन्नतु केट्टु तेळिञ्ञिरुन्नु वैदेहियुं मन्नवनास्थान सिंहासने मरुविनान्। २२

अपवाद श्रवणम्

अन्नेरं विजयनुं मधुमत्तनुं कूटि वन्नितु काश्यपनुं पिंगलन् सुराजियुं। मागधन् कालकनुं भद्रनुमिवरेल्लामागतम्मारायितु सेविप्पान् नरेन्द्रने। वन्दिच्चु कूप्पिस्तुतिच्चीटिनारवरेल्लां नन्दिच्चु नरेन्द्रनुं चोदिच्चानवरोटु। निङ्ङळ् चोल्लणं परमार्थं वृत्तान्तमेल्ला मेङ्ङने नम्मेक्कोण्टुमेतोरु जाति पऱयुन्नितु महाजनं। ऐन्नतु केट्टु तोळुतुणर्त्तिच्चितु भद्रन् मन्नव! महाजनवादङ्ङळ् चोल्लीटुवन्। वारिधि तन्निल्च्चिरक्कॆट्टि लङ्कयिल्च्चॆन्नु घोरनां दशास्यने राक्षसप्पटयोटुं निग्रहिच्चीरेळुलोकङ्ङळुं धर्म्मत्तोटे व्यंग्रं तीर्तारिवण्णं रक्षिक्कुन्नतु पार्त्ताल्? पण्टुण्टाय्वन्निल्लारुमीवण्णं नरेन्द्रन्मारुण्टाय् वन्नीटुकयुमिल्लिनि मेलिलेवं ऐन्नेल्लां ओरोविधं

नहीं है।" सीता जी के यह बोलने पर, उसे सुनकर राघव ने नारीरत्न से कहा—। २० "ऐसी इच्छा है तो हे कमललोचने! कल ही लक्ष्मण के साथ तुम्हारे जाने का प्रबन्ध करवा दूँगा।" यह सुनकर वैदेही प्रसन्न हो उठीं और महाराज (श्रीराम) वहाँ से निकलकर (राजकाज देखने के लिए) सिंहासन पर आ विराजित हुए। २२

अपवाद-श्रवण

तभी विजय, मधुमत्त, काश्यप, पिंगल, सुराजि, मागध, कालक और भद्र, नरेन्द्र (राम) की सेवा में उपस्थित हुए। सबने आकर हाथ जोड़ प्रणाम किया तो सहर्ष महाराज ने प्रश्न किया—"तुम लोग सत्य बोलो, पौरजनों में मेरे संबंध में कैसी चर्चा हो रही है?" यह सुनकर भद्र हाथ जोड़कर बोला—"हे महाराज! मैं पौरजनों के विचार आपको सुनाऊँगा। (वे कहते आ रहे हैं कि) सोचें तो कौन ऐसा राजा मिलेगा जो सागर में सेतुबंधन कर लंका में पहुँच राक्षस-सेना सहित भयंकर रावण का वधकर, चौदहों भुवनों का दु:ख निवारण कर धर्मपूर्वक परिपालन करता है। अब तक इनका जैसा कोई राजा नहीं हुआ और आगे भी ऐसा कोई राजा जन्म नहीं लेगा। समस्त प्रजाएँ इस प्रकार आपकी प्रशंसा करते हुए नाना

त्तिन्तिरुवटि तन्ने वर्ण्णिच्चु परयुन्नु लोकरुमेल्लां। अन्नतु केट्टु रामचन्द्रनुमरुळ् चेय्तु तन्नु तन्नित्थं वर्ण्णिक्कुन्नतु मतिमति। १० राज सन्निधियिङ्कल् दोषङ्ङळ् मरच्चोरो पूजनीयङ्ङळाय गुणङ्ङळ् वर्ण्णिच्चीटुं अङ्ङने लोकस्वभावं पुनरेन्नालतु मंगळ-मल्ल सत्यं चोल्लुन्नतत्रे नल्लू। पार्क्कुम्पोळ् गुणदोष सम्मिश्र-मायिट्टेयुळ्ळु आर्क्कुमे गुणजालं दोषं कूटाते वरा चोल्लु नी दोष-मायिट्टुळ्ळतुमिनियेन्नु चोल्लिय नृपनोटु भद्रनुमुरचेय्तान्—अच्युतनोटु समनाय राघवन् पुनरिच्चेय्त कर्म्ममेन्तु मट्टुळ्ळो-र्क्करियावू ? न्यायमल्लाते दशकण्ठनां निशाचरन् माययुमेट्मुळ्ळोन् कट्टु कोण्टङ्ङु पोयि, लङ्कयिल् पलकालं वच्चिरुन्नवळ् तन्नेश्शङ्क कूटाते परिग्रहिच्चतेन्तु रामन् ? राजावु कल्पिच्चतु कार्यमोन्नोळिञ्ञु मट्टाचारमेन्तु परयुन्नतु पौरजनं अन्नेल्लां चिलर् परयुन्नतु केळ्प्पानुण्टु मन्नव ! मट्टोन्निल्ल दोषमायिट्टु चोल्वान्। राघवनतु केट्टु विजयादिकळ् तम्मे वेगेन सम्मानिच्चु यात्रयु वळङ्ङिनान्। २० सन्तोषत्तोटवर् पोयतु नेरमुळ्ळिल् चिन्त पूण्टुरक्कर पुक्कितु रघुनाथन्। २१

प्रकार की चर्चाएँ किया करती हैं।" यह सुनकर श्रीराम जी बोले—"तुमने अच्छा कहा! किन्तु ऐसी प्रशंसा की बातें बस करो, बस करो। १० यह लोगों का स्वभाव है कि दोषों को छिपाकर राजा के सामने केवल प्रशंसनीय गुणों का वर्णन सुनाते हैं। किन्तु इसमें राजा और प्रजा की भलाई नहीं है। वास्तविक बात बताने में भलाई है। सोचें तो प्रत्येक व्यक्ति गुण-दोषों से युक्त रहता है। बिना किसी दोष के केवल गुणी कोई नहीं मिलता। इसलिए अब तुम मेरी बुराई (की चर्चा) सुनाओ।" राम का आग्रह सुनकर भद्र ने कहा—"अच्युत (विष्णु) सम राम ने फिर यह जो कार्य किया, उसे लोग क्या समझेंगे ? मायावी और अत्याचारी रावण ने जिस (पत्नी) को चुरा ले जाकर लंका में बहुत दिन तक रखा, उसे राम ने कैसे निस्संकोच स्वीकार किया ? राजा जैसा करता है वही आचरण पौरजन भी करेंगे। हे महाराज ! इस प्रकार कुछ लोगों को कहते पाया गया है, अन्य कोई दोष आपको सुनाने के लिए नहीं रहा।" यह सुनकर राघव ने तुरन्त ही सम्मान-पूर्वक विजय आदि को विदा किया। २० जब वे लोग सानन्द चले गये तब उद्विग्न हो श्रीराम जी शयनागार में प्रविष्ट हुए। २१

सीता परित्यागं

प्रत्युषस्सिनु पुनरुत्थानं चेय्तु रामभद्रनुं नियमङ्ङळ् कऴिञ्ञोरनन्तरं, आदरपूर्वं प्रतिहारिकळोटु चॊन्नान् सोदरन्मारॆ वरुत्तीटुविन् विरयॆप्पोय् । द्वास्थन्मारतु केट्टु वेगेन चॆन्नु तॊऴुतास्थया चॊल्लीटिनारुळ् चेय्तॆवयॆल्लां । सत्वरं पुऱप्पॆट्टारवरुमॆन्तॆन्नोरु चित्त चाञ्चल्यत्तोटु वन्नटि वणङ्ङिनार् । राघवन् भ्राताक्कळॆग्गाढमाश्लेषं चॆय्तु रागभारेण पिटिच्चिरुत्तियरुळ् चॆय्तु— प्राणनायतु निङ्ङळॆनिक्कु बालन्मारे ! प्राणन् पोयिटुं मम निङ्ङलॆप्पिरियुम्पोळ् । निङ्ङळ्क्कु वेण्टित्तन्नॆ राज्यभारत्तॆयॆल्लामिङ्ङनॆ वहिक्कुन्नु ञानॆन्नतऱिञ्ञालुं । मेदिनि तन्निल् दशरथ तनयनाय् जातनाय् धर्म्मपरिपालनं चॆय्तु वाणेन् । सूर्यवंशत्तिन्नॊरु कळङ्कमुण्टाकातॆ आर्यन्मारालुं संपूजितनायित्त ञाळुं । इन्निप्पोळपवादं मुटि वन्निरिक्कुन्नु अॆन्नतु निङ्ङळोटु चॊल्लुवान् चॊल्लि विट्टेन् । १० ओराण्टु लङ्कतन्निलिरुन्न सीततन्नॆ ओरातॆ कैक्कॊण्टतु नन्नल्ल रघुवरन् । इङ्ङनॆ मन्त्रिक्कुन्नु पुरवासिकळॆल्लां निङ्ङळतेतुं धरिच्चीलल्लो बालन्मारे ! ञानतिन्नुपायवुं कण्टि-

सीता-परित्याग

प्रात:काल में उठकर नित्यकर्मों से निवृत्त होने के उपरान्त श्रीरामचन्द्र जी ने प्रतिहारियों को आज्ञा दी कि वे तुरन्त जाकर भाइयों को बुला ले आएं। प्रतिहारियों ने यह सुनकर शीघ्र ही (भाइयों को) प्रणाम करके बड़ी आस्था के साथ (राम के) वचन सुना दिये। क्यों बुलाये जा रहे हैं ? इस विचार से उद्विग्न हो वे भी तुरन्त निकलकर आये और (राम के पास पहुँचकर) श्रीचरणों में प्रणाम किया। अपने भाइयों का प्रीति से आश्लेष करके, राम ने उन्हें सहर्ष बिठाया और बोले— "हे बालको ! तुम लोग मेरे प्राण हो ! तुम से बिछुड़ने पर मेरे प्राण निकल जाएँगे। तुम लोग यह स्मरण रखो कि केवल तुम्हारे लिए मैं इस प्रकार शासन-भार संभालता आ रहा हूँ। पृथ्वी पर दशरथ के पुत्र के रूप में जन्म लेकर धर्म का पालन करता आया हूँ। सूर्यवंश के लिए कोई कलंक न लगे, ऐसे कार्य करता हुआ अब तक मैं आर्यों से आदर पाता आया। आज अपवाद के शब्द उठ रहे हैं। उसके सम्बन्ध में समझाने के लिए तुम लोगों को आमंत्रित किया गया है। १० 'एक वर्ष जो सीता लंका में रही, उसे पुन: निश्शंक अपनाकर श्रीराम ने अच्छा नहीं किया,

ट्टुण्टिप्पोळतु मानसे धरिच्चालुं चोल्लुवनतु केळ्प्पिन् । गर्भिणि-कळ्क्कुरुचियुण्टामोरोन्निलतुमिप्पोळेन्तोन्निलाश निनक्केन्निवळोटु चोदिच्चेनिन्नले ञानन्नेरमवळ् चोन्नळ् चेतसि कौति येनिक्कोन्निलुण्ट-ङ्ङ्ञालुं । तापसाश्रमङ्ङळिलोरुन्नाळ् मुन्नेप्पोले तापसीजनत्तोटु कूटि वाळुवानिन्नु । ऍङ्किलो सौमित्रियेत्तुणयुं क्कूट्टि नाळेस्सङ्कट कूटातेकण्टयय्क्कामेन्नु ञानु परञ्ञेनतिन्निनि सौमित्रे ! वैकीटाते परञ्ञवण्णं तन्ने कोण्टु पोकयुं वेणं । तेर् मेले करयेट्टि-स्सुमन्त्ररोटुं कूटे वाल्मीकि मुनि प्रवराश्रमोपान्तत्तिङ्कल्, वन् काट्टिल्क्कोण्टक्कळञ्ञिङ्ङु नी पोन्नीटुक शङ्किक्क वेण्ट नी ञान् चोन्नतु केळ्क्के वेण्टु । २० ऒन्निनि मरुत्तितिनेन्नोटु चोल्लुमवरेन्नुटे शत्रुक्कळाकुन्नतेन्नु नूनं । जानकि तानुं ञानुं सौमित्रे ! नीयुं कूटिक्कानने तपस्सु चेय्तिरुन्नीटिन कालं, मानिने प्पिटिप्पानाय् ञान् पोय्नेरं नीयुं जानकी वाक्कुकेट्टु वेङ्ट्टोरवसरं, कण्टु रावणनोरु भिक्षु वेषत्ताल्क्कट्टु कोण्टु पोय् लङ्कापुरि तन्निल् वच्चोरु शेषं । सुग्रीवन् तन्नेक्कण्टु सख्यं चेय्तवनोटुं

ऐसा पुरवासी लोग कहते आ रहे हैं । आश्चर्य है ! बालको, तुमने अब तक नहीं समझा । उसके लिए मैंने एक उपाय सोच रखा है, जिसे तुम लोगों को बताता हूँ, तुम लोग उसे सुनकर मन में ही रखो । मैंने कल उससे (सीता से) कहा कि गर्भवती नारियों की कुछ न कुछ इच्छाएँ रहा करती हैं और पूछा कि तुम्हारी ऐसी कौन सी इच्छा है ? तो उसने उत्तर दिया कि मेरे मन में केवल एक इच्छा है, जिसे आप सुनिए । पहले के जैसे तापसाश्रमों में जाकर तपस्विनियों के साथ एक दिन बिताने की मेरी इच्छा है । मैंने उसे बताया कि तुम्हारी ऐसी इच्छा है तो कल तुम्हें लक्ष्मण के साथ सानन्द भिजवा दूँगा । इसलिए हे सौमित्र ! जैसा मैंने वादा किया वैसा आज उसे ले जाना होगा । रथ पर सवार कर सुमन्त्र के साथ उसे ले जाकर मुनिप्रवर वाल्मीकि के आश्रम-प्रान्त के समीप घोर कानन में उसे त्यागकर तुम इधर वापस चले आओ । इसमें सशंकित होने की बात नहीं है, तुम केवल मेरी आज्ञा मान लो । २० जो इसके विपरीत मुझे बताएगा, वह निश्चय ही मेरा शत्रु होगा । हे सौमित्र ! जब जानकी, मैं और तुम वन में पहुँचकर तपस्या-रत बैठे थे तब हिरण को पकड़ लाने के लिए मैं तथा जानकी के वचन पर तुम उससे पृथक् हुए थे । यह अवसर पाकर रावण भिक्षुवेष में आकर उसे लंका में चुरा ले गया । फिर सुग्रीव से मिलकर (मैंने) उससे सख्य स्थापित किया तथा कपीन्द्र वाली का वध

निग्रहिच्चितु बालियाकिय कपीन्द्रनें। मारुति मैथिलियेक्कण्टु वन्नीरु शेषं वारिधितन्निल्च्चिर कॅट्टि लङ्कयिल्च्चेन्नु रावणन् तन्नेप्पटयोटुं निग्रहिच्चुनां रावण सहजने वाळिच्चु लङ्कतन्निल्। मेदिनी सुतयेक्कौण्टग्नि प्रवेशं चेय्यिच्चाधिकॅक्कौण्टु निल्क्कुन्नेरत्तु वह्निदेवन् जानकि तन्नेक्कौण्टन्नेन्नुटे कय्यिल् नल्कि मानिनिक्कौरु दोषलेशमिल्लन्नु चौन्नान्। देवेन्द्रादिकळाय देवकळ् मुनिकळुं देवदेवेशन्महादेवनुं विरिञ्चनुं ३० योषमार् मणियाय जानकी देविक्कौरु दोषमिल्लेन्नु चौन्नतौक्के नी केट्टायल्लो। आनतु मूलं परिग्रहिच्चु विश्वासेन जानकि तन्नेयतु कारणमायिट्टिप्पोळ् दुष्कीर्त्ति परन्नितु नाट्टिलेल्लामे मम दुष्कीर्त्ति कळवानाय्क्कळयां निङ्ङळेयुं माताक्कन्माराकिलुं राज्यमेन्नाकिलुं आनेतुमे मटियातॆ कळवन् पिळ्ळतीप्पान्। जाह्नवी तीरे महाकानने मटियातॆ जानकि तन्नेक्कौण्टक्कळञ्ञु पोन्नीटु नी। अल्ललामितु विचारिच्चु चेय्येणमेट्मौल्लातौन्नितु पुनरॅन्नौरुवन् चौल्लुकिल् अॅन्नुटॆ वैरियवनाकुन्नितुमूलं खिन्ननाकौल्ल नियोगं मम केळ्क्के वेण्टु। आरौळ्ळुकीटुं वण्णं कण्णुनीरुटनुटन् मारातैयौ-

किया। जब मारुती लंका में पहुँच जानकी को देख आये तब वारिधि में सेतु बाँध (हम लोग) लंका में पहुँचे। हमने सेना सहित रावण का वध करके उसके भाई का राज्याभिषेक करा दिया। जब हम सीता को अग्नि में प्रवेश कराकर खिन्न खड़े थे तब अग्निदेव ने जानकी को ले आकर मेरे हाथ में दिया और कहा कि यह मानिनी निर्दोष है। देवेन्द्र जैसे देवप्रमुख, मुनि लोग, देवदेवेश महादेव, ब्रह्मा—। ३० —सभी ने कहा था कि नारियों में श्रेष्ठ जानकी किसी भी प्रकार के कलंक से मुक्त है और यह बात तुमने भी सुनी थी। इस कारण मैंने विश्वासपूर्वक जानकी को ग्रहण किया था जिसकी वजह से अब राज्य में यह अपकीर्त्ति फैल गयी है। अपना अपयश दूर करने के लिए मैं तुम लोगों को भी त्याग सकता हूँ। अपनी त्रुटि दूर करने के लिए चाहे माताएँ हों, चाहे राज्य हो, मैं निस्संकोच छोड़ सकता हूँ। (इसलिए) जाह्नवी (गंगा) के तटवर्ती घोर वन में जानकी को छोड़ आओ। यह अवश्य दुःख की बात है। किन्तु यदि कोई इसे अनावश्यक कार्य बोले तो वह मेरा शत्रु होगा। इसलिए यह सोचकर तुम्हें दुखी होने का कारण नहीं रहा। यह मेरा आदेश है जिसे मान लेना मात्र तुम्हारा कर्तव्य है।" इतना कहते ही नदी-प्रवाह के समान उनकी आँखों से अजस्र अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। तुरन्त अपने शयनागार

ळुकिप्पोय् तन्नुटे मणियर तन्निल्प्पुक्कटच्चुटन् पर्यङ्कमतु तन्मेल्
चेर्न्नुटन् किटन्नितु मन्नवन् शोकत्तोटे। रात्रियुं कळिञ्ञितु
लक्ष्मणन् तोळुतुटन् धात्रीनन्दनयोटु मेल्लेवे चल्लीटिनान्— ४०
काननभूमि तन्निल् तापसिकळ्क्काण्मान् जानकि ! पोक तेर् मेलेरुक
वैकीटाते। तेरोरुमिच्चु कोण्टु वन्नितु सुमन्त्रनुं पोरिकेन्नतु केट्टु
जानकि सन्तोषिच्चाळ्। इन्नले मम भर्त्ता चोन्नतिनेतुं नीक्कं
वन्नीलेन्नोर्त्तु कौतूहलवुं पूण्टाळेटं। पट्टुकळ् वस्त्राभरणङ्ङळ्
नल्लवमट्टुमिष्टमाम्मारु मधुर द्रव्यमायिट्टेटं भक्षण साधनङ्ङ-
ळेन्निव पलतरं शिक्षयिल् संभरिच्चु सुगन्ध द्रव्यङ्ङळुं।
चन्दनादिकळ् मुनिपत्निकळ्क्कानन्दमाय् वन्दिच्चु दानं चेय्वानेट्टुत्तु
वैदेहियुं। यात्रयुमयप्पिच्चु तेरतिल्क्करयेट्टियास्थया सौमित्रियुं
तेरतिल्क्करेरिनान्। मन्दमन्दं तेर् नटत्तीटिनान् सुमन्त्रनुं
सुन्दरियतु नेरं लक्ष्मणनोटु चोन्नाळ्— नन्नल्ल शकुनङ्ङळेन्तु
कारणं चोल्लीटेन्नुटे भर्त्ताविनुमनुजन्मारायीटुं निङ्ङळ्क्कुं
सुखमल्ली निमित्तं कण्टतिप्पोळ् मंगलमल्ल मूलमेन्ततिनेन्नु चोल्
नी। ५० चोल्लुवानिल्ल विशेषिच्चोरापत्तु भद्रे ! नल्लतु
वन्नुकूटुमिल्ल संशयमेतुं। धीरत कोण्टु परितापत्ते मरच्चुटन्

में प्रविष्ट हो, द्वार बन्द किये महाराज शोकार्त हो शय्या पर आ लेट गये। रात बीत गयी; लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर धीमे स्वर में भूमिसुता से कहा—।४० —"हे जानकी ! वन में तपस्वियों से मिलने जाने के लिए आप अविलम्ब रथ पर सवार हो जाइए।" सुमन्त्र सजा हुआ रथ ले आया। आश्रम-गमन की बात सुनकर जानकी अत्यन्त प्रसन्न हुईं। कल मेरे स्वामी ने जो वचन दिया, उसमें कुछ अन्तर आने नहीं पाया, यह सोचकर उन्हें आश्चर्य भी हुआ। अमूल्य रेशमी वस्त्र, आभूषण, आदि नाना प्रकार की वस्तुएँ, मधुर पक्वान्न, भोजन-सामग्री, कई प्रकार के सुगन्ध द्रव्य, चन्दन, कपूर आदि कई पदार्थ तपस्विनियों को नमस्कार पूर्वक दान के लिए वैदेही ने साथ लिये। विदाई के बाद जानकी को श्रद्धा-सहित रथ पर चढ़ाकर सौमित्र भी रथ पर सवार हुए। सुमन्त ने धीरे-धीरे रथ को आगे बढ़ाया तो सुन्दरी (सीता) ने तब लक्ष्मण से कहा—"अशुभ शकुन दिखाई दे रहे हैं। उनके क्या कारण हो सकते हैं ? मेरे स्वामी और तुम देवर लोग सब सुखी तो हैं ? फिर ऐसे अपशकुनों के तुम कारण बताओ।" ५० "हे भद्रे ! किसी को भी कहने योग्य कुछ संकट नहीं है। परिणाम अच्छा ही होगा, इसमें संदेह नहीं है।" साहसपूर्वक अपने

तारात् मानिनि तन्नोटिङ्ङने परञ्ञुटन् गौमतीतीरे चेन्नारस्त-मिच्चीटुं न्नेरं यामिनि कळिञ्ञक्कनुदिच्चोरनन्तरं, तेरतिले-रिच्चेन्नु गंगातीरवुं पुक्कार् वारियिलिरङ्ङि सन्ध्यानुष्ठानवुं चेय्तार्। अमित्रान्तकनाय सुमित्रातनयनुममर्त्य नदियेयुं कटत्ति वेगत्तोटे वाविट्टु करयुन्न लक्ष्मणन् तन्ने न्नोक्किट्टेवियुमुर चेय्ताळेन्तितु कुमार ! चोल् । ऍन्तिनु करयुन्नु सन्तापमुण्टायतु-मेन्तेन्नु परमार्त्थं चोल्लु नी मटियाते । अग्रजन् तन्नेप्पिरिञ्ञि-रुन्निट्टिल्लयल्ली व्यग्रिच्चु करयुन्नु मुट्टं बालकनां नी ? रण्टु वासरं पौरुष्पानिल्ल शक्तियोट्टुं पण्टु नी पिरिञ्ञिरियुन्नतुमिल्ल-यल्लो । ऍन्ने नी न्निरूपिक्क मुन्नं ञानोराण्टेय्वकुमेन्नुटे भर्त्तावि-नेप्पिरिञ्ञु वाणेनल्लो। ६० इन्निनि मुनि पत्निमारेयुं कण्टु न्नाळेच्चेन्नु न्निन् पूर्वजनेक्काणामेन्नरिञ्ञालुं । ऍन्निव केळ्क्कुन्तोरुं तन्नुळ्ळिलटङ्ङाते वन्न दुःखत्तालवनुं वाविट्टु मुरयिट्टान् । तन्नोटु सनत्क्कुमारन् मुनियरुळ् चेय्ततोन्नोन्ने निरूपिच्चु न्निन्नितु सुमन्त्ररुं । पिन्नेयुं करयुन्न लक्ष्मणन् तन्ने नोक्कि तन्वंगि विषण्ण-यायेन्ततेन्नरियाञ्ञु । पिन्नेयुं चोदिच्चितु सौमित्रि तन्नोटप्पोळ्

परिताप को छिपाते हुए लक्ष्मण ने कमललोचना सीता को उत्तर दिया। सूर्यास्त के समय वे गौतमी नदी के तट-प्रदेश में पहुँचे। वहीं रात बिताकर प्रभातकाल में रथ पर सवार हो गंगातट पर पहुँचे। वहाँ पानी में स्नान कर सभी ने संध्या-वंदन किया। अमित्रान्तक (शत्रुओं के लिए काल सम) सुमित्रातनय ने जल्दी ही सीता को अमर्त्यनदी (देवनदी) के पार पहुँचाया। तब अत्यन्त विलाप करते लक्ष्मण को देख देवी ने पूछा— "हे कुमार ! क्या बात है ? मुझे बता दो। तुम क्यों रोते हो ? तुम्हें ऐसा क्या दुःख हुआ है। तुम मुझे स्पष्ट बता दो। ज्येष्ठ भ्राता से कभी दूर नहीं रहे, इसलिए आज इस प्रकार दुःखी हो रोते हो ! यह बाल्य चपलता है ! क्या दो दिन का वियोग भी सहने की सामर्थ्य नहीं है ! हाँ, तुम्हें पहले कभी ऐसा विछोह नहीं हुआ। तुम मुझे देखो, मैंने पहले अपने स्वामी से वियुक्त हो एक पूरा वर्ष गुजारा था। ६० आज मुनि-पत्नियों से भेंट करके कल जाकर अपने अग्रज से मिल सकोगे।" ये बातें सुनते ही अदमनीय दुःख से खिन्न हो वे एकदम प्रलाप करने लगे। भावी फल के संबंध में सनतकुमार मुनियों ने जो बातें कही थीं, उनका अनुस्मरण कर सुमन्त मौन खड़ा रहा। बार-बार विलाप करते लक्ष्मण को देख उसके कारण से अनवगत सीता जी उदास रह गयीं। और फिर

अॆन्ते कष्टमे तीयॆन्तिङ्ङने खेदिक्कुन्नु ? मुन्नं ञानिव दुःखमुण्टा-यिट्टीरुन्नाळुं तिन्नॆक्कण्टिट्टिल्लेटं धैर्यमुण्टल्लो तव । दुःखत्तिन् मूलमॆल्लामॆन्नोटु चॊल्लीटणं कैक्कॊळ्क धैर्यं भवानज्ञानियल्लयल्लो । चॊल्लु चॊल्लॆन्नु सीता निर्बन्धं केट्ट नेरं चॊल्लिनान् सौमित्रियुं गद्गद वर्णङ्ङळाल् । चॊल्लियाल् केळ्प्पान् रघुनाथनु पलरुण्टु कल्यन्मारायिट्टवर् पलरुमिरिक्कवे. अॆन्नोटायितु नियोगिच्चतु रामचन्द्रन् मुन्नं चॆय्त दुष्कर्म्मङ्ङळ् तन् फलत्तिनाल् । ७० अॆन्नोळं पापं चॆय्तिट्टारुमिल्लोरेटत्तुं पुण्यमिल्लात पुरुषाधमनायेनल्लो । वह्निनयिल्च्चाटीटेणमॆन्नु चॊल्लुकिलेतुं दण्डमिल्लॆनिक्कतिल्पर-मिन्नितुपार्त्ताल् । काळकूटत्तॆक्कुटिक्केणमॆन्नरुळ् चॆय्किल् कालं वैकाते कुटिक्कामतिनॆळुतल्लो । आर्क्कुमोर्त्तोळमरुतात दुष्कर्म्मं चॆय्वान् आख्यानं चॆय्तानल्लो राघवन् तिरुवटि पण्टु ञान् चॆय्त पापमॆन्तॆन् भगवाने ! कण्टीलॆन् प्राणत्यागं चॆय्वानुमुपायङ्ङळ् ! इङ्ङने पऱकयुं वीळ्कयुं करकयुं तिङ्ङिङ्ङन दुःखं पूण्ट लक्ष्मणन् तन्नॆक्कण्टु वैदेहि विषण्णयायॆन्तितॆन्नरियाते खेदेन बाष्पं वार्त्तु लक्ष्मणनोटु चॊन्नाळ्— भर्तृ्शासनं मम सौमित्रे ! वैकीटाते

सौमित्र से प्रश्न किया—"हाय ! तुम्हारे ऐसा दुखी होने का भला, क्या कारण है ? मैंने पहले कभी तुम्हें इस प्रकार विषादयुक्त नहीं देखा, तुम बड़े धैर्यशाली थे । दुःख का कारण मुझे बता दो और फिर तुम धैर्य धारण करो । तुम अज्ञानी तो नहीं हो ।" 'बोलो बोलो' इस प्रकार सीता के जिद करने पर लक्ष्मण ने गद्गद वाणी में कहा—"श्री रघुनाथ जी की आज्ञा माननेवाले अत्यधिक धैर्यशाली कई सेवक हैं । उनके रहते हुए भी रामचन्द्र जी ने मुझे ऐसा कठिन आदेश दिया, जो मेरे पूर्व-जन्म के पापों का फल है । ७० मेरे जैसे पापी कहीं नहीं हैं; हाय ! मैं पुण्य से वंचित अधम पुरुष ही रहा ! आग में कूद पड़ने के लिए आदेश दिया जाए तो मुझे इस तरह का कोई दुःख नहीं होगा । कालकूट विष पीने की आज्ञा हो तो तुरन्त पी सकता हूँ, वह मेरे लिए सरल होगा । किन्तु किसी के लिए अचिंत्य ऐसा दुष्कर्म करने की भगवान् राम ने मुझे आज्ञा दी । हे भगवान् ! मेरे पूर्वजन्म का ऐसा कौन सा अपराध है ! मैं अपने प्राणत्याग का भी कोई मार्ग ढूँढ़ नहीं पा रहा हूँ ।" इस प्रकार रोते, चिल्लाते, गिरते-उठते भारी दुःख से पीड़ित लक्ष्मण को देख, कारण से अवगत न होने से अत्यन्त विषाद-समन्वित हो वैदेही ने लक्ष्मण से कहा—"हे सौमित्र ! मेरे स्वामी का क्या आदेश है ? तुम निराकुल भाव

सत्यमेन्नोटु परञ्ञीटणं मटियाते। त्निन्तिरुवटि तन्नोटेन्तु ञान् परवतु ? वेन्तु वेन्तुरुकुन्नु मानसमय्यो पापं ! अेन्तोन्नु चोल्लुवतु पार्त्तु कण्टोळमुळ्ळिल् सन्तापं मेल्क्कुमेले सन्ततं वळरुन्नु। ८० चेन्तीयिल् चाटुकयो ? काकोळं कुटिक्कयो ? अेन्तोन्नु चेय्कये न्नल्लू शोकत्तेयटक्कुवान्। इत्तरं परञ्ञु केळुन्न लक्ष्मणन्तन्नोटुळ्त्तापत्तोटु भूमिपुत्रियुमुर चेय्ताळ्— वल्लभन् नियोगिच्च कर्म्मं त्नीयेन्नो-टिप्पोळ् वल्लतुं परञ्ञालुमेतुमे शङ्किक्केण्ट। वल्लाय्म त्निनक्केतु-मुण्टाकयिल्लयेन्नाल् चोल्लुकेन्नोटु त्नीयित्तेल्लामे परमार्त्थं। चोल्लुवान् तोन्नातव मुप्पिल् त्निन्तेनिक्किप्पोळ् चोल्लामेङ्किलुं तव वल्लभन् नियोगत्ते चोल्लुन्नु पुरवासीजनङ्ङळेल्लां तम्मिल् वल्लाय्मयत्रे सीतादेवियेक्कैक्कोण्टतुं। रावणन् कोण्टु पोयि लङ्कयिल् वच्चुकोण्ट देवियेप्परिग्रहिच्चीटुवान् न्यायमिल्ल। अेन्नुळ्ळोरपवादं त्निरञ्ञु पुरत्तिङ्कल् मन्नवनतुमूलमेन्नोटु नियोगिच्चान्— काननत्तिङ्कल मुनि श्रेष्ठन्माराश्रमत्तिङ्कल् जानकि तन्नेक्कोण्टेयाक्कि त्नी पोन्नीटुक। भर्त्ताविनोटुं पिन्ने मट्टुळ्ळ ञङ्ङळोटुमुळ्त्तारिलेतुं कोपं कूटाते वसिच्चालुं। ९०

से मुझे सुना दो। अविलम्ब सत्य बात मुझे बता दो।" तब लक्ष्मण ने कहा—"हे भगवती ! आपको मैं क्या बताऊँ ! हाय मेरा मन दग्ध होता जा रहा है। क्या कहूँ, कैसे कहूँ ! उत्तरोत्तर मेरा परिताप बढ़ता जा रहा है। ८० क्या मैं प्रज्वलित अग्नि में कूद मरूँ ? कालकूट विषपान करूँ ? इस संताप से मुक्त होने के लिए क्या करना मेरे लिए उचित होगा ?" इस प्रकार कहते हुए कराह उठते लक्ष्मण से संतप्त वैदेही ने कहा—"स्वामी ने तुमसे जो कार्य करने को कहा, वह मुझे बताते हुए तुम्हें दुःखी नहीं होना चाहिए। कहने में तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है, तो तुम यथार्थ सत्य मुझे बताओ।" तब लक्ष्मण बोले—"आपके सामने खड़े हो वह बोलने की मुझे शक्ति नहीं है, तो भी आपके स्वामी का आदेश मैं सुनाता हूँ। सारे पुरवासीजन परस्पर कहते हैं कि सीता-ग्रहण कर श्रीराम ने उचित कार्य नहीं किया। रावण ने जिस सीता को उठा ले जाकर लंका में रखा, उसे स्वीकार करने का कोई न्याय नहीं है। ऐसा अपवाद राज्य में व्याप्त हो चुका है। इसलिए महाराज ने मुझे आदेश दिया कि मुनिश्रेष्ठों के आश्रम के समीप कानन में जानकी को छोड़ आओ। आप अपने स्वामी तथा अन्य हम लोगों के प्रति बिना किसी वैमनस्य के यहीं रहिएगा। ९० आप अगर शाप देंगी तो चौदहों भुवन

त्तिन्तिरुवटि शपिच्चीटुकिल् दहिच्चुपों अन्तरमेतुमिल्ल लोकङ्ङळ् पतिन्नालुं। इन्न पातिव्रत्यत्तिल् निष्ठयुळ्ळगंनमारि त्रिभुवनत्तिङ्क-लिल्ल मट्टारुमोर्त्तल्। वह्निदेवनुं महादेवनुं विरिञ्चनुमन्यन्माराय देवेन्द्रादियां देवन्मारुं, धन्यन्माराय मुनीन्द्रन्मारुं पर्ञ्ञ वाक्कोन्नोळियाते ञानुं केट्टिरिक्कुन्नु भद्रे! तापवुं कळञ्ञि-त्तापसाश्रमत्तिङ्कल् तापसीजनत्तोटुं कूटि वाळुक नाथे! । ९५

सीता परिदेवनं

सीतादेवियुमतु केट्ट नेरत्तु तन्न मेदिनि तन्निल् वीणु मोहिच्चु निस्संज्ञयाय्। अङ्ङनेमुहूर्त्तमात्रं कळिञ्ञोरु शेषं अंगनामणि मोहं तीर्न्नुटनोन्नु वीर्त्ताळ्। अय्यो! भर्त्तावे! वेंटिञ्ञायो मां वृथा बलाल् नीयेन्नेयुपेक्षिच्चतेन्तु कारणं नाथ! ञान् मुन्नमनेकं मानुषरे दुःखिप्पिच्चु काम्यदारङ्ङळोटु वेर्पेटुत्ततिन् फलं ञानिन्नोळमनुभविच्चीटुन्निततिनिमेलिल् दीनत्वमेत्रकालं भुजिच्ची-टुक वेणं। सन्ततं मुनिकळुं तापस पत्निमारुं ॲन्तिनु वेंटिञ्ञतु

दग्ध हो उठेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। विचारपूर्वक देखा जाए तो आपकी जैसी पतिव्रता नारी इस त्रिलोक में अन्य कोई नहीं है। अग्नि-देव, महादेव, ब्रह्मा, देवेन्द्र जैसे देवगण, धन्यश्रेष्ठ लोग आपके पातिव्रत्य के सम्बन्ध में जो बात कह गये हैं, हे भद्रे! उन्हें मैंने संपूर्ण सुन रखा है। हे स्वामिनी! अब आप अपना सन्ताप त्याग कर तापसाश्रम में तपस्विनियों के संग सुखपूर्वक रहने की कृपा करें।" ९५

सीता-विलाप

यह सुनते ही सीतादेवी मूर्छित और संज्ञारहित हो पृथ्वी पर गिर पड़ीं। ऐसे कुछ क्षण बीत जाने पर मूर्छा हटने पर नारीरत्न ने एक आह भर दिया और विलाप करती गयीं—"हाय! नाथ! आपने मुझ निरपराध को त्याग दिया। हे नाथ! आपने मुझे किस अपराध पर छोड़ दिया! पूर्व में कई पुरुष मेरे रूप-सौन्दर्य पर मोहित हो अपनी परिणीता पत्नियों से घृणा करने लगे थे, ऐसा सुना है। उसका बुरा फल मैं आज तक भोगती आयी और अब आगे कब तक ऐसा भोगना होगा! अब मुनियों तथा तपस्विनियों के यह पूछने पर कि तुम्हें राघव ने क्यों त्याग दिया, मैं क्या उत्तर दे सकूँ! यह सन्ताप मैं किसलिए भोगूँ! किसी प्रकार अगर प्राण त्याग कर दूँ तो सूर्यवंश संतान-परम्परा से वंचित रह जाएगा। हे

राघवन् त़िन्नेयेन्तु चोदिच्चाल् ञानेन्तवरोटु चोल्लुं सन्तापमेन्तु-कोण्टु ञान् पोरुक्कुन्नितय्यो ! वल्लताकिलुं प्राणत्यागं चेय्तीटुवन् ञानिल्ल सन्तति सूर्यवंशत्तिलेन्नुं वरुं। माताक्कन्मारोटु चेन्नेल्लामे चोल्लीटु नी खेदमुण्टवर्कळ्क्कुमेन्नेयोर्त्तीटुं नेरं। वल्लजातियुं मनोरंजनयोटुं कूटे कल्याणत्तोटुं वाणीटुन्नतु नृपधर्म्मं। १० लोकापवादं शङ्किच्चेन्नेस्सन्त्यजिच्चितु लोकनायकन् मम भर्त्ता श्रीरामचन्द्रन्। एन्ने वेर्टिट्ट कालमेतुमे दुःखियाते तन्नायि रक्षिक्क भूमण्डलं धर्म्मत्तोटे। अग्रजन् तन्ने परिचरिच्चीटुक नित्यं व्यग्रवुं कळञ्ञेङ्किल् पोयालुं वैकीटाते। वैदेहिवाक्कु केट्टु मून्नुरु प्रदक्षिणं चेय्तु कुम्पिट्टु कण्णीर् वार्त्तुरियाटाते पोय्। भूमियिल् वीणुरुण्टु करयुन्न भूमिनन्दन तन्ने नोक्किक्प्पोय्च्चेन्नु गंगयुं कटन्नुटन् सुमन्त्ररोटुं कूटि मंगलं प्रार्त्थिच्चु मन्दमन्दं नट कोण्टान्। अन्नेरं सौमित्रियुं सुमन्त्ररोटु चोन्नान् नन्नु तन्नि-वयोर्त्तलेत्रयुं चित्रं ! चित्रं ! मानव श्रेष्ठनाय रामचन्द्रनुं तथा जानकीदेविक्कुमोरोरो ताळुण्टाय् वन्न दुःखङ्ङळ् निरूपिच्चा-लेत्रयुं कष्टं ! दुष्कर्म्मं कुरुञ्ञोन्नु चेय्तिट्टिल्लल्लो तानुं। सौमित्रि वाक्कु केट्टु सुमन्त्ररुळ् चेय्तु नामित्र दुःखिप्पतिनिल्लवकाशमेतुं। २०

लक्ष्मण ! तुम जाकर माताओं से सारा हाल कह दो। मुझे स्मरण करते हुए वे खिन्न होती होंगी। पति के त्यागने से मुझे दुःख नहीं है। किसी भी प्रकार से हो प्रजा को रंजित करना तथा कल्याण से रहना राजधर्म है। १० लोकनायक मेरे स्वामी श्रीरामचन्द्र जी ने लोकापवाद से भयभीत हो मेरा परित्याग किया है। मेरे वियोग में दुःखी न रहकर वे भूमण्डल का धर्मानुसार पालन करते रहें। दुःख त्यागकर तुम भी अपने अग्रज की सेवा करते रहो। अब तुम जल्दी ही वापस जाओ।" वैदेही का आदेश मानकर तीन बार उनकी परिक्रमा और प्रणाम कर अश्रु बहाते मौन हो वे आगे बढ़े। भूमि पर लोटती चिल्लाती सीता की ओर मुड़-मुड़कर देखते हुए गंगा पार की और सीता जी की मंगलकामना करते हुए सुमन्त्र के साथ मन्द-मन्द आगे बढ़े। तब सौमित्र ने सुमन्त को बताया—"यह जो हुआ, उसके सम्बन्ध में सोचते हुए आश्चर्य और विस्मय होता है। क्या से क्या हुआ ! आश्चर्य है ! आश्चर्य है ! मानवश्रेष्ठ राम तथा जानकीदेवी पर जो-जो विपत्तियाँ आ पड़ीं, वे अवश्य ही दुःखपूर्ण हैं ! उनमें किसी ने कुछ दुष्कर्म किये भी नहीं।" सौमित्र के वचन सुनकर सुमन्त बोला—"इस पर सोचकर खिन्न होने की बात नहीं है। २०

मत्थ्यं कौण्टु नीक्कावतल्ल दैवमतं सौमित्रे ! केट्टालुं नीयेंङ्किलो
ावृत्तं । निङ्ङळ् नालुवरुं पिरन्नुण्टाय शेषत्तिङ्कल् पोङ्ङ-
रानन्दवुं कैक्कोण्टु दशरथन्; चेन्नितु गुरुवाय वसिष्ठा-
मत्तिङ्कल् अन्नुटनत्रिपुत्रनाकिय दुर्वासावुं वन्नितु चातुर्म्मास्य-
रिप्पान् तत्रैव केळ् वन्दिच्चु नृपेन्द्रनुं तापसश्रेष्ठन्मारे । वसिष्ठ
तमायोरातिथ्यं ग्रहिच्चुटन् वसिच्चु यथासुखं भूपति श्रेष्ठन् तानुं ।
शलप्रश्नङ्ङळुं चेय्तितु मुनीन्द्रन्मार् कुशलं तन्नेयेन्नु परञ्ञु
न्द्रनुं । वन्दिच्चु दुर्वासावु तन्नोटु चोद्यं चेय्तु नन्दनन्मारुण्टल्लो
लु पेरेनिक्किप्पोळ् । अन्नतिल् ज्येष्ठन् रामन् दीर्घायुष्मानो ?
लिल वन्नीटुं गुणदोषङ्ङळेयुमरुळ् चेय्क । बालकन्मार्
टुळ्ळोरुं गुणवान्मारो पार्त्तालू शीलादि गुणङ्ङळुमेन्तयुमुण्टितेल्लां,
लिलुळ्ळवस्थकळ् दिव्यलोचनं कोण्टु कालमे काणामल्लो सर्व्वुं
वादृशां । ३० इत्तरं नृपवाक्यं केट्टुटन् दुर्वासावुं सत्वरमरुळ्
त्तु केट्टु कोण्टालुमेङ्किल् । ईरेळुलोकङ्ङळुं परिपालिच्चु
न्नाय् श्रीरामन् पतिनोरायिरं वत्सरं वाळुं । पौरन्मारोटुं
ाताक्कन्मारामवरोटुं आरूढानन्दं पिन्ने वैकुण्ठं प्रापिच्चीटुं ।
ानकीदेवि तन्ने मध्ये मानवश्रेष्ठन् काननं तन्निलुपेक्षिक्कयुं

मित्र ! ईश्वरेच्छा को कोई अपनी सामर्थ्य से टाल नहीं सकता।
सुनना चाहो तो पूर्वकथा सुन लो। तुम चारों का जन्म होने पर
यन्त सन्तुष्ट हो दशरथ गुरु वसिष्ठ जी के आश्रम में पहुँचे थे। तब
तुर्मास का अनुष्ठान करने के लिए अत्रिपुत्र दुर्वासा भी वहाँ आये हुए
। वहाँ महाराज ने दोनों तापस-श्रेष्ठों को प्रणाम किया, कुशलान्वेषण
ा। महाराज ने बताया—कुशल से हूँ," फिर प्रणाम करके महाराज
दुर्वासा से कहा—मेरे अब चार पुत्र हैं। उनमें से ज्येष्ठ क्या दीर्घायु
ो ? उनके भावी गुण-दोषों के बारे में कृपापूर्वक कहिएगा। अन्य
नों बालक क्या गुणशील-सम्पन्न होंगे ? उनकी शील-गुण संपन्नता,
का भावी फल, सब कुछ कहने की कृपा करें। आप सब कुछ देख
कते हैं। आप त्रिकालज्ञ हैं। अपने ज्ञानचक्षु से भविष्यत् को देख
ते हैं।" । ३० राजा का यह आग्रह सुनकर तुरन्त दुर्वासा बोले—"यही
छा है तो आप सुनिए, चौदहों भुवनों का परिपालन करते हुए श्रीराम जी
ारह सहस्र वर्ष रहेंगे। फिर पौरजनों तथा भ्राताओं सहित सानन्द
कुण्ठलोक को चले जायेंगे। इस बीच मानवश्रेष्ठ जानकी देवी का
नन में परित्याग कर देंगे। सुख-दुःख का परिचिन्तन करें तो दुःख का

चेय्युमल्लो। दुःखकालवुं सुखकालवुमोर्त्तु कण्टाल् दुःखकालङ्ङ-
ळेऱियिरिक्कुमल्लो तानुं। पुत्रन्मारिरुवरुण्टाय्वरुमवरेयुं पृथ्वीश-
नोरो राज्यं तोरुं वाऴिक्कुं तानुं। पिन्नेयङ्ङयोद्ध्ययुं वनमाय्
वन्नु कूटुं मन्नवनयोद्ध्यावासिकळामवर्क्केल्लां तन्नुटे लोकं
कोटुत्तीटुमेन्नतु नूनं पिन्नेयुं सूर्यान्वयमोटुङ्ङुवकूटुवोळं, अन्तन्तु-
ळ्ळवस्थकळरुळिच्चेय्तु मुनि मन्नवनेन्नोटरुळ् चेय्तितु मट्टारोटुं
अेन्तुमीयवस्थकळुर चेय्काय्कवेणं अन्तु तोट्टारोटुं आनुर चेय्ततु
मिल्ल। ४० अेन्तिरिक्किलुमिन्नु निन्नोटु परमार्त्थमोन्नोळियाते
पऱञ्ञीटेरुतेन्निल्लल्लो। अन्तेल्लां पऱञ्ञु निल्क्कुन्नेरं वैदेहियुं
वन्नोरु दुःखं सहियाञ्ञु वीणुरुण्टुटन् अय्यो! भर्त्तावे! वेटिञ्ञा-
योमां वेरुते नी तीयिल्च्चाटणमेन्नु चोन्ततुं चेय्तेनल्लो।
वह्नियिल्च्चाटि मरिक्कामेन्नु निरूपिच्चाल् वह्नियुं चुट्टकयिल्लेन्ने-
येन्तावतय्यो! अेन्तोन्नु पऱवतु निन्नोटु कूटि मुन्नं सन्तोषं पूण्टु
वाणतोरोन्ने निरूपिच्चाल्। वेळ्ळत्तिल्क्कालुं केट्टिच्चाटिच्चाकयो
नल्लू? वळ्ळियुं केट्टि आन्तु चाकयो नल्लू पार्त्तल्।
कालसर्प्पत्तेक्कोण्टु कटुप्पिच्चीटुकयो? काळकूटत्तेप्पानं चेय्तु
चाकयो नल्लू? एतोरु जाति मम प्राणनेक्कळयावू?

समय अधिक रहेगा। पृथ्वीश राम के दो पुत्र होंगे जिन्हें वे एक-एक
राज्य पर अभिषिक्त कर देंगे। फिर यह अयोध्या कानन में परिवर्तित
होगी। महाराज सारे अयोध्यासियों को अपना लोक (स्वर्ग) प्रदान
करेंगे, इसमें संशय नहीं है। फिर सूर्यवंश के अन्त तक की प्रत्येक घटना
का विशद वर्णन मुनि ने किया। महाराज (दशरथ) ने मुझे सारा हाल
सुनाया था और कहा था कि यह रहस्य मैं कभी किसी को न बताऊँ।
इसलिए तब से आज तक मैंने किसी को यह नहीं बताया। ४० फिर भी
आज तुमसे सारी वास्तविक बातें कहने में कोई आपत्ति नहीं है।" ऐसा
कहते खड़े थे कि वैदेही असह्य विरह-ताप से पीड़ित हो धरती पर लोटती
हुई कहती गयीं—"हाय! हाय स्वामी! आपने मुझे अकारण त्याग दिया,
आग में कूद पड़ने की आपकी आज्ञा मैंने मान ली थी। अब आग में
कूद मरना चाहूँ तो आग भी मुझे दग्ध नहीं करेगी। फिर मैं क्या करूँ!
आपके साथ पहले जो सुखमय जीवन बिताया, उसके संबंध में क्या
बताऊँ! पैर जकड़कर पानी में डूब मरूँ तो ठीक रहेगा? या गले पर
रस्सी बाँध लटक जाऊँ? इनमें से कौन सा उचित रहेगा? मैं किस ढंग
से अपना प्राण त्याग कर सकूँ? इस पृथ्वी पर जीवन काफी हो गया।"

मेदिनि तन्निल् वसिक्कुन्नतुमिनिमति। तापेन सीतादेवि करयुं नादमप्पोळ् तापसकुमारन्मारिल्च्चिलर् केट्टारल्लो। चेन्नवर् वाल्मीकियेँ वन्दिच्चु चोन्नारप्पोळिन्नोरु नारि गंगातीरे काननदेशे ५० वीणुटन् किटन्नुरुण्टेट्वुं करयुन्नोळ् वानवर् नारि-मारिलारानुमल्लयल्ली ? श्रीभगवतियेन्नु तोन्नीटुं काणुन्तोरुं तापवुमुण्टायतवळ्क्केन्तेन्नुमरिञ्ञील। पुष्करनेत्रयुटे दुःखं कण्टतु-मूलं वृक्षङ्ङळ् वल्लिकळुं माळ्कुन्नु कष्टं ! कष्टं ! नदियु-मोळुकातेँ निल्क्कुन्नु दुःखत्तोटे कतिरोन् भानुमुळन्तङ्ङने निन्नी-टुन्नु। पवनन्तनिक्कुमिल्लिळक्कमेन्ते कष्टं ! पवनाशनन्मारुं विलत्तिल्प्पुक्कीटुन्नु। पक्षिकळ् वृक्षन्तोरुं शब्दिक्कुन्नतुमिल्ल रक्षिच्चीटुक वेणमवळेत्तपोनिधे ! सल्करिक्केणमवळेप्पुन-रतिन्नवळ् तक्कवळेन्नु नूनमिल्ल संशयमेतुं। ५७

सीता सान्त्वनं

सर्वबालकन्मारुमिङ्ङने चोन्ननेरं दिव्वलोचनङ्ङोण्टु कण्टितु वाल्मीकियुं। अर्घ्यं पाद्यादिकळुं कैक्कोण्टु चेन्नु मुनिमुख्यनुं चोन्नानवळ्क्काश्वासं वरुंवण्णं। ज्ञानदृञ्ञितु निन्ने राघव

इस प्रकार विरहार्त हो विलाप करती सीता के शब्द तापस-कुमारों में से एकाध ने सुन लिये। उन्होंने जाकर वाल्मीकि को सूचना दी कि अब एक स्त्री गंगा नदी के तीर-प्रदेश के कानन में—। ५० लोटती हुई विलाप कर रही है। संदेह होता है, देवनारियों में से तो कोई नहीं ! देखने पर कोई देवनारी ही लगती है, पता नहीं, उस पर किस बात का दुःख आ पड़ा है। पुष्करनेत्रा का दुःख देख वृक्ष-लताएँ तक उदास हो रहे हैं। दुःख की बात है ! दुःख की बात है ! दुःखार्त हो नदियों ने अपना प्रवाह रोक लिया, सहस्रकिरण (सूर्य) भी घबराकर अन्धाधुन्ध खड़ा है। खेद है ! पवन तक अचंचल हो गया। पवनाशन (सर्प) भी अपनी बिलों में जा बैठने लगे हैं। वृक्ष की डालियों पर बैठी चिड़ियाँ मौन हो गयी हैं। हे तपोनिधि ! उसकी रक्षा की जानी चाहिए। उसका सत्कार होना चाहिए; निश्चय ही वह स्वागत-योग्य है। ५७

सीता को सांत्वना देना

समस्त तपस्वीकुमारों के इस प्रकार कहते समय वाल्मीकि ने अपने ज्ञानचक्षु से देख लिया (और सीता को पहचान लिया)। अर्घ्य-पाद्य आदियों सहित पहुँचकर मुनिनायक ने उन्हें सांत्वना भरे शब्दों में संबोधन

पत्नियॆन्नुं जानकि जनकराजात्मजयॆन्नुमिप्पोळ्। ॲळ्ळोळं कुट्टं निनक्किल्लॆन्नुमऱिञ्ञु ञान् उळ्ळिलॆक्कण्णुकॊण्टु कण्टॆन्नु धरिच्चालुं। भर्त्तावु निन्नॆयुपेक्षिक्कान् कारणवुं ञान् उळ्त्तारिलऱिवुट्टॆनिन्निनि वैकातॆ नी अर्घ्यं पाद्यादिकळुं कैक्कॊण्टॆन्नोटु कूटॆ दुःखवुमुपेक्षिच्चु पोरिक मटियातॆ। आश्रमं तन्निल् वसिच्चीटुक निनक्किप्पोळाश्रयमायिट्टुण्टु तापसि वर्ग्गमेट्टं। आदरिच्चीटुमवर् निन्नॆ जानकी! नित्यं खेदमेतुमे निनक्कुण्टाकयिल्ल तानुं। निन्नुटॆ गृहं तन्निलिरुन्नीटुन्नवण्णं तन्नॆयाश्रमं तन्निलिरिक्कामऱिञ्ञालुं। मैथिलियतु केट्टु वन्दिच्चु मुनीन्द्रनॆ पॆय्तीट्टुं बाष्पत्तोटुमनुवादवुं चॆय्ताळ्। १० वैदेहियोटुं कूटिच्चॆन्नु वाल्मीकिमुनियादरवोटुं निज पर्ण्णशालयिल्प्पुक्कान्। तापसी जनत्तोटुं चॊल्लिनान् मुनीन्द्रनुं तापं कूटातॆ निङ्ङळ् पालिक्क वैदेहिये। सन्तोषिच्चवर्कळुं कूट्टिक्कॊण्टकं पुक्कार् अन्तस्तापवुमोट्टु कुऱञ्ञु वैदेहिक्कुं। जानकि मुनियुमाय्पोयतु कण्टनेरं मानसचिन्तयोटुं लक्ष्मणन् नटकॊण्टान्। सूर्यनस्तमिक्कुम्पोळ् कौशिकी नदियुटॆ

किया और कहा—"मैंने आपको राघव-पत्नी तथा महाराज जनक की पुत्री जानकी पहचान लिया है। मैं यह भी जानता हूँ कि आप बिलकुल निर्दोष हैं। मैंने अन्तःचक्षु से सब कुछ जान लिया, ऐसा आप समझ लीजिए। अपने स्वामी के द्वारा आपके परित्यक्ता होने का कारण (जनापवाद) भी मैंने दिव्यदृष्टि से जान लिया है। अब आप अर्घ्य-पाद्य आदि ग्रहणकर तथा दुःख त्यागकर निस्संकोच मेरे साथ (आश्रम में) चलिए। आप आश्रम में आकर वास कीजिए, आपकी परिचर्या के लिए तपस्विनियाँ मिलेंगी। हे जानकी! वे नित्य आपको अपना वात्सल्य अर्पित करेंगी और आपको निश्चय ही वहाँ किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। जैसे आप अपने भवन में, वैसे यहाँ आश्रम में रह सकेंगी।" मैथिली ने मुनीन्द्र को प्रणाम किया तथा अश्रु-स्निग्ध नयनों से (आश्रम में आने की) स्वीकृति दी। १० वात्सल्य-भरे मुनि वाल्मीकि वैदेही को साथ लिये अपनी पर्णशाला में आये। उन्होंने तपस्विनियों से कहा कि आप लोग वैदेही की सेवा करें ताकि उन्हें दुःख न होने पाए। सन्तुष्ट-चित्त तपस्विनियाँ उन्हें आश्रम के भीतर ले गयीं और वैदेही की मनोव्यथा जरा शान्त हुई। जानकी को मुनि के साथ जाते हुए देखकर लक्ष्मण आत्मग्लानि से युक्त हो आगे चल पड़े। सूर्यास्त तक वे गौतमी के तट पर पहुँच गये और रात में वहीं ठहर गये। सूर्योदय के साथ ही वहाँ से

तीरं प्रापिच्चु वसिच्चीटिनारवर्कळ्ळुं। मार्त्ताण्डोदये पुरप्पेट्टु वेगेन चेन्नु मद्ध्याह्न नेरमयोद्ध्यापुरमकं पुक्कार्। आननपत्मं वाटियारेयुं नोक्कीटाते मानस खेदत्तोटे कण्णुनीर् वार्त्तु वार्त्तु मानववीरन् कुम्पिट्टिरिक्कुन्नतु कण्टु मानियां सौमित्रि पादांबुजं वणङ्ङिनान्। एन्तुणर्त्तिप्पनेन्नु तन्नुटे मनक्काम्पिल् चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु सौमित्रियुमुर चेय्तान्— ज्ञानमिल्लातमूढ जनत्तेप्पोले भवान् मानसे खेदिप्पतिनेन्तु कारणं नाथ! २० देह गेहार्त्थपुत्र कळत्रादिकळोटु देहिकळुण्टो पिरियाते भूमियिलारुं? पान्थन्मार् पेरुवळियम्पलं तन्निल् वन्नु तान्तरायिरुन्नुटन् पिरिञ्ञु पोकुं पोले जनक जननियुं नन्दन भार्या धनमनुवासरं कैक्कोण्टिरुन्नु चिल दिनं। मुख्य भेदत्तोटवर् चेय्तिट्टुं कर्म्मङ्ङळ्क्कुतकुमारोरो वळि पिरिञ्ञु पोयीट्टवोर्। अतिनु दुःखिक्कुन्नतज्ञानमल्लो नाथ! बुधन्मारुटे मतमल्लितु रघुपते! नित्तिरुवटियरियातेयिल्लेतुमेन्तालन्धत्व- मुण्टामति शोकत्तालेल्लावर्क्कुं। नारियेप्पिरिञ्ञतु कारणं नरेन्द्रनु पारमुण्टळ्ळेन्नु नानालोकरुमेल्लां तङ्ङळिल्प्परिहास भावेन चौल्लुन्नतुं मंगलमल्ल महीपालतिलकमे! विषय चापल्यमिल्लाते-

---

निकल कर मध्याह्न को वे अयोध्या में प्रविष्ट हुए। वहाँ उदास मुखार- विन्द लिये, किसी ओर ध्यान दिये बिना तथा आत्मग्लानिवश अश्रुधारा बहाते-बहाते आनतमुख बैठे मानववीर को देख लक्ष्मण ने चरण-कमलों पर प्रणाम अर्पित किया। 'क्या बताऊँ' ऐसा मन में सोच-सोचकर सौमित्र बोले—"हे स्वामी! अज्ञानी एवं मूर्ख साधारण मनुष्य के समान आपके दुःखी होने का क्या करण है?। २० इस धरती पर कौन ऐसा शरीर- धारी है जिसे (कभी न कभी) देह, गेह, धन, पुत्र, कलत्र आदि से बिछु- ड़ना न पड़े? जैसे कोई यात्री सराय में पहुँचकर थकान के कारण थोड़ी देर ठहर कर फिर उसे छोड़ चला जाता है, वैसे थोड़े दिन के लिए जनक, जननी, नन्दन (पुत्र), भार्या, धन सबको अपना समझकर हम बैठते हैं, किन्तु अपने किये-धरे के अनुसार वे सब पृथक्-पृथक् रास्तों से हमें छोड़ जानेवाले हैं। हे नाथ! ऐसे वियोग पर दुःखी होना क्या अज्ञान नहीं है? हे रघुपति! बुद्धिमान लोगों का यह मन्तव्य नहीं हो सकता। आप भगवान् के लिए कुछ भी अविदित नहीं, किन्तु सब लोग अत्यन्त दुःख से कभी-कभी अन्धत्व को पाते हैं। हे राजाधिराज! नारी के विरह में महाराज खिन्न बैठे हैं, ऐसा नानाजनों का परिहासपूर्ण वचन आपके लिए श्रेयस्कर नहीं होगा। स्त्री-संबंधी विषय-चापल्य से कोई मुक्त नहीं है,

यिल्लोरुवक्कुंमृषिकळ् पोलुमतिल् मोहिच्चीटुन्नुवल्लो । धीरनेन्नयुं रामनेन्नु चोल्लुन्नतुं पारमेन्नयुमुण्टु चापल्यमरिञ्ञालुं । ३० ॲन्तेल्लामवरवर् चोल्लीटुन्नतुमोर्त्ताल् तन्तल्ल महामते ! राघव महीपते ! ॲल्ला जातियुं विषादं कळयणमतु नल्लतु सुखदुःखं मिश्रमायिट्टेयुळ्ळू । सौमित्रि वचनङ्ङळिङ्ङने केट्टनेरं सौमुख्य-मोटु रामभद्रनुमरुळ् चेय्तु । नन्नु नी परञ्ञतु सारमेन्नयुमोर्त्ता-लिन्निनि वेण्टुं कार्यं चिन्तिच्चीटुक वेणं । नालुनाळ् कळिञ्ञितु दुःखिच्चिरुन्नुमम कालमो तेरुतेरे पोमल्लो लघुतरं । कार्यङ्ङळ् चिन्तिप्पानुमुण्टायिल्लवसरं कार्यङ्ङळ् विचारियाञ्ञा-लतु निमित्तमाय् आपत्तु वरुमल्लो राजाक्कन्माक्कुं नूनं पापत्तिनतु तन्ने कारणमेन्नुं वरुं । ३७

नृग चरितं

पण्टयोद्ध्ययिल् नृगनेन्नोरु नृपश्रेष्ठनुण्टायानिक्ष्वाकुविन् सोदरना-यिट्टेटो ! गो कोटि दानं चेय्तान् भूदेवोत्तमन्माक्कुं लोकरु प्रशंसिच्चु वाणीटुं कालत्तिङ्कल् । तन्नुटे पशुक्कूट्टं तन्निल् वन्नोरु

यहाँ तक कि ऋषि लोग भी जाल में फंस जाते हैं। राम कितने ही धैर्य-शाली कहे जाते हैं, किन्तु देखा जाए तो वास्तव में वे कितने चंचल हैं। ३० हे महीपति ! हे महामति राघव ! ऐसा लोग कहें तो वह आपके लिए अच्छा नहीं होगा। विषाद को त्याग बैठना सबके लिए श्रेयस्कर है। सुख-दुख परस्पर मिले जुले रहते हैं।" इस प्रकार के सौमित्र-वचन सुनकर प्रसन्नवदन हो रामभद्र ने कहा—"हे कुमार ! तुम्हारा कथन ठीक ही है। वह बहुत ही सारपूर्ण है। अब उचित कार्य सोचना चाहिए। मुझे इस प्रकार दुःखी हो बैठते चार दिन बीत गये। इस प्रकार धीरे-धीरे समय व्यतीत होता जाएगा। अब तक कार्यों (राज कार्य) पर सोचने को समय नहीं मिला। उचित कार्यों पर सोच-विचार न करने पर, उससे राजा लोग विपत्तियों में फँस जाएँगे। और वही पाप का भी कारण बन सकता है।" ३७

नृग-चरित

(राम जी लक्ष्मण को सुना रहे हैं—) "पहले अयोध्या में इक्ष्वाकु के भ्राता नृग नामक एक राजश्रेष्ठ शासन करते थे। उन्होंने भूदेवों के लिए करोड़ों गौएँ दान में दीं। प्रजा ने उनकी खूब प्रशंसा की। उन्हीं दिनों

विप्रन् तन्नुटे पशुकूटेक्कूटिप्पोयितु बलाल् । तानेतुमद्रियाते मट्टोरु भूदेवनु दानवुं चेय्तीटिनानीश्वर विधियाले । तन्नुटे पशुविनेक्काणाञ्ञु विप्रोत्तमन् अन्वेषिच्चीरेटत्तु काणाञ्ञु दुःखं पूण्टान् । अङ्ङने चिलदिनं कऴिञ्ञोरनन्तरमङ्ङोरु विप्रालये काणायि पशुविने । वा ! वा ! वा ! शबलेयेन्नवळे विळिच्चप्पोळ् गोवुतन् नाथन् तन्ने कण्टु पिन्नाले पोयाळ् । अन्नेरमपरनां नाथनुं चोल्लीटिनानेन्नुटे पशुवितु राजावु तन्नतेटो ! राजावु तरिकयिल्लेन्नुटे पशुविने व्याजमेन्नोटे पऱञ्ञीटाते विप्रोत्तम ! मन्नवन् पऱयणं ञान् तन्न पशु वल्लेन्नेन्नाल् ञानयच्चीटुमिल्ल संशयमेतुं । १० अल्लायिकिलयय्कयिल्लेन्नुं ञान् पशुविने चोल्लुन्न दुर्वाक्कुकळोक्के ञान् पोरुत्तीटां । कळ्ळन्मारोटु पशु कोळ्ळुकयिल्ल पक्षे कळ्ळनायीटुन्नतु ञानल्ल राजावत्रे । इङ्ङने तम्मिलप्पऱञ्ञन्योन्यं कलहं पूण्टङ्ङु चेन्नवनीशन् तन्नोटु चोदिक्क नां । एन्नवरिरुवरुमोन्निच्चु पुऱप्पेट्टु चेन्नु गोपुरद्वारे निन्नु चोन्नतु नेरं, काण्मतिन्नवसरमिल्लेन्नु केट्टु तत्र ब्राह्मणरिरुवरुं चिलनाळ् पार्त्तशेषं, पिन्नेयुमवसरमिल्लाञ्ञु कोपिच्चवर् मन्नवन् तन्नेशपिच्चीटिनारतु

एक ब्राह्मण की गाय आकर अचानक उनकी गौओं में मिल गयी। विधिवश यह जाने बिना, उन्होंने उसे एक अन्य ब्राह्मण को दान में दिया। अपनी गाय को न देख पाने से दुःखी ब्राह्मण ने सब कहीं उसकी खोज की, किन्तु गाय नहीं मिली। इस प्रकार कुछ दिन बीत जाने पर उसे एक ब्राह्मण के घर में वह गाय मिली। 'शबले ! आ आ आ' ऐसा पुकारते ही अपने मालिक को पहचानकर वह गाय उसके पीछे-पीछे चल पड़ी। तब दूसरे ब्राह्मण ने कहा कि यह मेरे लिए महाराज से दी गयी गाय है। (तब पहले ब्राह्मण ने कहा—) राजा तो मेरी गाय (तुम्हें) नहीं दे सकेंगे, हे विप्रोत्तम ! तुम असत्य वचन मत बोलो। (तब दूसरे का कथन है कि) "राजा को कहना पड़ेगा कि यह मेरी दी हुई गाय नहीं है। तब मैं इसे तुम्हारे साथ भेजूँगा, इसमें संशय नहीं है। १० अन्यथा मैं गाय नहीं दूँगा। तुम जो भी दुर्वचन कहोगे मैं क्षमापूर्वक सुन लूँगा।" पहले ने कहा कि गाय चोर का साथ नहीं देगी (तो दूसरे का कथन है) चोर मैं नहीं, राजा हैं। इस प्रकार परस्पर कहते-कहते उनमें झगड़ा बढ़ा (तो उन्होंने निश्चय किया) हम राजा से ही पूछ लेंगे। दोनों सहमत हो एक साथ निकले और गोपुरद्वार पर पहुँचकर (राजा को) सूचना दी। 'मिलने के लिए अब समय नहीं है' ऐसा (राजा का

त्तेरं। कोपिच्चु विप्रेन्द्रन्मार् भूपति प्रवरनु शापत्तेक्कोट्टुत्तनु भीतियायीटुं वण्णं कूपत्तिलीरु कृकलास वेषवुं पूण्टु तापत्तोटि-निक्किटन्तीटुकचिरं भवान्। द्वापर युगावसानत्तिङ्कल् नारायणन् पापनाशनन् वन्नु कृष्णनाय्प्पिरन्तीटुं। शापवुं तीरुमवन् तीट्टुन्ताळ् त्तिनक्केन्नु भूपतिप्रवरनु शापमोक्षवुं नल्कि। २० ब्राह्मणर् पशुविने मट्टोरु भूदेवनु धार्म्मिकन्मारामवर् दानवुं चेय्ती-टिनार्। पिन्नेप्पोय् निज निज मन्दिरं पुक्कारवर् मन्नवन् तानु-मरिञ्ञानप्पोळवस्थकळ्। पिन्नेत्तन् तनयनु राज्याभिषेकं चेय्तु खिन्ननाय् सुतनोटु चोल्लिनान् नृपेन्द्रनुं— मळयुं मञ्ञुमेटं वेयिलु-मुळ्ळ कालमळल् कूटाते वसिच्चीटुवान् तक्कवण्णं तीर्क्क नी मून्नु किणरुवट्टिन् तीरं तोरुं वाय्क्कुन्न वल्लिकळ् वृक्षङ्ङळु मुण्टाक्कणं। वसुवां तनयनुमिङ्ङने तीर्त्तीटिनान् वसुधाधिपनिन्नुमुण्टतिल् क्कि-टक्कुन्नु। मन्नवनोटु सुमित्रात्मजनतु केट्टु पिन्नेयुं चोदिच्चितु वन्दिच्चु रघुपते! अल्पापराधमरियाते वन्नतिन्नवरुल्पन्न रोषं कैक्कोण्टिङ्ङने शपिच्चतुं योग्यमो निरूपिच्चालार्क्करियावू पिन्ने

वचन) सुनकर दोनों ब्राह्मण वहीं कुछ दिन प्रतीक्षा करने के उपरान्त भी 'मिलने के लिए अवकाश नहीं है' ऐसा उत्तर पाकर, क्रुद्ध हो उठे और वहीं उन्होंने राजा को शाप दिया। गुस्से में आकर ब्राह्मणों ने राजा को अत्यन्त भयावह शाप दिया "आप कृकलास (गिरगिट) बन चिरकाल तक दुखार्त हो एक कुएँ में पड़े रहें। द्वापर युग के अन्त में पापनाशन महाविष्णु श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लेंगे और तब उनके स्पर्श से आपका उद्धार होगा; ऐसा राजा को शाप-मुक्ति का उपाय भी बता दिया। २० धार्मिक स्वभाव के उन ब्राह्मणों ने वह गाय एक अन्य ब्राह्मण को दान में दी। फिर वे अपने-अपने भवनों में चले गये। तब राजा को सारा हाल मालूम हुआ। फिर अपने पुत्र को राजा बनाकर नृपेन्द्र (नृग) ने अपने पुत्र को बताया— "वर्षा, शीत और ग्रीष्म कालों में सुखपूर्वक रहने के लिए तुम तीन कुएँ बनवा दो, जिनके किनारों पर छायेदार वृक्ष-लताएँ भी लगवा दो। पुत्र वसु ने ऐसे ही (तीन कुएँ) बनवा दिये जिनमें पृथ्वीपति आज भी (गिरगिट के रूप में) पड़े हुए हैं।" यह कथा सुनने के बाद सुमित्रात्मज ने सादर नमस्कार करते हुए महाराज (श्रीराम) से पूछा—"हे रघुपति! अनजाने ही थोड़ा-सा अपराध होने पर इस प्रकार रोष में आकर उनका ऐसा शाप देना क्या उचित है? सोचें तो कौन बता सकता है (कि उन्होंने शाप देकर उचित ही किया)? फिर राजश्रेष्ठ तो ठहरे दानशील

भाग्यवान् दानशीलनल्लो भूपति श्रेष्ठन् । इत्थं सौमित्रि
पर्ञ्ञोरु नेरत्तु रामभद्रनुमरुळ्चेय्तानाक्कर्ड्रियावू सखे ! ३०
प्रारब्ध कर्म्मबल भोगत्तिनेन्ते वरु नेरत्ते विधाताविन् कल्पितमोर्त्तु
कण्टाल् । ३१

निमि चरितं

इन्नु नीयोरु कथकेळ्क्क सौमित्रे ! चोल्लां मुन्नमुण्टायान् निमिया-
किय नृपश्रेष्ठन् । गौतमाश्रमत्तिङ्कलट्टुत्तु भवनवुं कौतुकत्तोटु
तीर्त्तु वसिच्चान् पलकालं । चित्तत्तिलोर्त्तोनोरु यागं चेय्येणमेन्नु
सत्वरमाचार्यनोटतु चेन्नर्ड्रियिच्चान् । अन्नेरं वसिष्ठनुं नृपनोटरुळ्
चेय्तु इन्द्रनुण्टेन्नेयोरुयागं चेय्यिप्पानाये । वन्नपेक्षिक्कुन्नु ञान्
पोवानायतु चेय्यु वन्नाल् निन्नुटे यागं कऴिक्कामेन्ने वरू ।
अमरालयं पुक्कु वसिष्ठ मुनीन्द्रनुं निमियुं गौतमनेक्कोण्टु चेय्यिच्चु
यागं । आयिरं संवत्सरं कोण्टु यागवुं कूटि नायकनवभृथस्नानवुं
चेय्तीटिनान् । वन्नितु वसिष्ठनुं भूपति निमितानुमन्नेरं निद्रावश-
नायिक्किटक्कुन्नुवल्लो । सल्क्कारं चेय्याञ्ञतुं यागं चेय्ततु
कोण्टुमुळ्क्काम्पिल् क्रोधं पूण्टु शपिच्चु वसिष्ठनुं । देह देहिकळ्

भी, जिस कारण वे भाग्यवान हैं ।'' सौमित्र का यह वचन सुनकर, तब रामभद्र ने कहा—"हे भाई ! कौन जान सकता है ! —। ३० प्रारब्ध कर्मों का फल मनुष्य यहीं भोगता है । इसलिए विधाता का विधान, सोचें तो, ठीक ही होगा ।''

निमि-चरित्त

हे सौमित्र ! आज तुम एक और कथा सुनो । "पहले निमि नामक एक राजश्रेष्ठ हो गये थे । वे गौतमाश्रम के समीप अपना भवन बनाकर सुखपूर्वक कई वर्ष रहे । मन में आया कि एक यज्ञ किया जाए । तुरन्त जाकर उन्होंने आचार्य से अपना मनोरथ कहा । तब वसिष्ठ ने बताया कि इन्द्र अपने लिए एक यज्ञ कराने के लिए मुझे बुला गये हैं । मैं उस यज्ञ के लिए जा रहा हूँ, वहाँ से लौटने पर आपका यज्ञ किया जा सकेगा । (यह कहकर) वसिष्ठ जी अमरालय को चले गये और निमि ने गौतम मुनि से अपना यज्ञ कराया । सहस्र वर्षों में यज्ञ पूरा हुआ और निमि ने अवभृथ स्नान भी किया । (इन्द्र का यज्ञ पूरा करके) वसिष्ठ जी (निमि के यहाँ) आये और तब भूपति निद्राविवश हो पड़े हुए थे । स्वागत न

तम्मिल् वेर्पेट्टु पोकयेन्नु साहसाल् शपिच्चप्पोळुणर्न्नु नृपेन्द्रनुं । १०
पिरिञ्ञु पोक देह देहिकळ् तम्मिलेन्नु विरिञ्चतनयनेशपिच्चु
निमि तानुं । अन्योन्यं शापमेट्टु वायुभूतन्मारायार् मन्नवन् तानुं
तदा वसिष्ठ मुनीन्द्रनुं । तापसन् वायुभूतनाय्च्चेन्नु धाताविने
तापेन कण्टु निज सङ्कटमरियिच्चान् । उर्वशितन्निल् मित्रावरुण-
बीजं कोण्टु दिव्यमायोरु देहमुण्टाक्किक्कोळ्कयेन्नान् । मित्रा
बीजवुं पिन्ने वरुणबीजत्तोटुं युक्तमायतु नेरमेट्टुत्तु कूटाञ्ञवळ्
कुंभत्तिलाक्कीटिनाळिन्द्रिय द्वयमप्पोळ् कुंभत्तिल् निन्नु जनिच्ची-
टिनानगस्त्यनुं । पिन्पुटनुण्टाय् वन्नु वसिष्ठ शरीरवुं संभविच्चितु
मुनि श्रेष्ठन्मारिरुवरुं । मित्रनुमुर्वशिये शपिच्चानतु कालं मर्त्यनु
कळत्रमाय् पोक नी चिरकालं । अङ्ङने पुरूरवा तन्नुटे पत्निया-
याळ् अंगनाशिरोमणियाकुमुर्वशि तानुं । निमितन् देह मुण्टाक्का-
मेन्नु मुनिकळुममरन्मारुं चोन्नारन्नेरं निमि चोन्नान् । २० देह-
मुण्टायाल् दुःखमोळिञ्ञिल्लतुमूलं देहमुण्टाकवेण्टा केवलमेनिक्केन्नु;
सर्वप्राणिकळुटे नेत्रङ्ङळ्तोरुं समीरात्मकनाय् वाणीटामेन्नु केट्टक-
मलर् आश्वासत्तिन्नु नेत्रमिमच्चु मिळिक्केन्नुमाश्रयाशाद्यन्मारुं

किये जाने से तथा यज्ञ (गौतम से) कराये जाने से मन में क्रुद्ध वसिष्ठ जी ने (राजा को) शाप दिया कि देह और देही पृथक हो जाएं। साहस-पूर्वक यह शाप देते ही राजा जाग उठे। १० तुरन्त निमि ने भी ब्रह्मा पुत्र (वसिष्ठ) को भी उनके देह-देही के पृथक् होने का शाप दिया। परस्पर के शाप से महाराज तथा मुनीन्द्र वसिष्ठ दोनों वायुभूत हुए। तपस्वी (वसिष्ठ) वायुभूत हो अत्यन्त दुःख से ब्रह्मा के समीप आ अपना दुखड़ा रोने लगे तो ब्रह्मा ने उपदेश दिया कि उर्वशी में मित्रावरुण के बीजाधान से एक दिव्य शरीर प्राप्त कर लो। मित्र-बीज के वरुण-बीज से संयुक्त होने के कारण वह उसे ग्रहण नहीं कर सकी। इसलिए उसने दोनों वीर्य कुंभ में डाल रखे और उस कुंभ से (पहले) अगस्त्य का जन्म हुआ। फिर बाद में वसिष्ठ-शरीर बना और ये दोनों बड़े मुनिश्रेष्ठ हो गये। मित्र ने तब उर्वशी को शाप दिया कि तुम चिरकाल तक मर्त्य की भार्या बनी रहो। इस प्रकार नारीरत्न उर्वशी पुरुरवा की पत्नी बनी। निमि को भी शरीर दान करने की मुनियों और देवों ने स्वीकृति दी तो निमि बोले—। २० —"देह मिलने पर उससे दुःख-निवृत्ति कभी नहीं होती, इसलिए मैं देह नहीं चाहता।" उन्होंने समस्त प्राणियों के नेत्रों में वायुभूत बन रहने की इच्छा प्रकट की तो देवों ने उसे स्वीकार किया

त्तल्किनारनुग्रहं। निमि तन् देहं मुनिवरन्मार् कटञ्ञप्पोळ् अमलन् मिथियेन्न नृपनुमुण्टाय् वन्नु। मिथिजातन्मारेल्लां मैथिलन्माराय् वन्नार् तदनु विदेह जातन्मारायतुमूलं। पृथुवीरन्मारवर् वैदेहन्मारेन्नायार् मति कौतुकत्तोटे धरिक्क सौमित्रे! नी। जनिप्पिच्चितु मथनं चेय्तेन्नतु केट्टु जनकन्मारेन्नवे चोल्लुन्नु बुधजनं। इत्तरमापत्तुण्टां काण्मान् वन्नोर्क्कु काण्मानेत्ताञ्ञाल् वळिगोले लक्ष्मण! धरिक्क नी। शपिच्चतेन्तु निमि वसिष्ठन्तन्नेक्कूटे तपश्शक्तियुं तम्मिलोक्कुमो निरूपिच्चाल्? ऎल्लार्क्कुं क्षमयुण्टाय्वरिकयिल्ल केळ् नी चोल्लुवनिन्नुमोरु कथ ञान् संक्षेपमाय्। ३०

ययाति चरितं

सोमवंशत्तिल् बुधपुत्रनां पुरूरवा भूमिपालकनवन् नन्दननायुस्सल्लो। नहुषनवन् मकन् तल् सुतन् ययातियुमवन्टे पत्नि शुक्र पुत्रियां देवयानि। वृषपर्वाविनु मकळायि शर्म्मिष्ठयुं देवयानिक्कु मक्कळ् यदुवुं तुर्वशुवुं। द्रुह्युवुमनु द्रुह्युपुरुवुं शर्म्मिष्ठय्क्कुमाहन्त सुतरेन्नु

और देवों ने अनुग्रह दिया कि आपके आश्वासन के लिए समस्त प्राणी बीच-बीच में पलकें मूँदते-खोलते रहेंगे। बाद में मुनिवरों ने निमिशरीर का मंथन किया तो पवित्रात्मा मिथि नामक राजा हुए। मिथि से उत्पन्न लोग मिथिल बने, फिर विदेह से जात होने के कारण उस परम्परा के राजा लोग विदेह कहे जाने लगे। हे सौमित्र! तुम सानन्द यह समझ लो। मथन के कारण उत्पन्न होने के कारण विद्वान लोग उन्हें 'जनक' कहा करते हैं। हे सौमित्र! तुम यह याद रखो कि जो मिलने आते हैं उन्हें दर्शन न देने पर ऐसी विपत्तियाँ आ सकती हैं।" तब लक्ष्मण ने पूछा—"राजा निमि ने कैसे मुनि-वसिष्ठ को शाप दिया? क्या शाप देने योग्य तपःशक्ति राजा को भी प्राप्त थी?" (तब राम ने कहा—) तुम सुनो, सब लोग क्षमाशील नहीं होंगे; आज मैं एक और कथा तुम्हें सुनाऊँगा। ३०

ययाति चरित

"सोमवंश में बुध के पुत्र पुरुरवा नामक राजा हुए, जिनका पुत्र आयु था। उसका पुत्र नहुष था, और नहुष के ययाति नामक पुत्र था। शुक्र-पुत्री देवयानी और वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा उनकी दो पत्नियाँ थीं। देवयानी के यदु और तुर्वशु नाम के दो पुत्र हुए। हे सौमित्र! यह

धरिक्क सौमित्रे ! ऩी। भूपतिक्किष्ट पत्नि शर्म्मिष्ठ तन्नॆयॆऱ्ं तापवुं देवयानिक्कतिनालुण्टायल्लो। तातनोटऱियिच्चाळ् देवयानियुमति क्रोधेन शपिच्चितु शुक्रनुं ययातियॆ। वृद्धनाय् जरा नरयुण्टाक ऩिनक्कॆऩ्ऩु पृथ्वीशनुळ्त्तापवुमुण्टायिततु मूलं। पुत्रनां यदुविनॆ विळिच्चु चॊऩ्ऩान् नृपन् वृद्धत वाङ्ङित्तवयौवनं तऩ्ऩीटणं। अॆऩ्ऩतु केट्टु यदु सूक्ष्म धर्म्मत्तॆप्पार्त्तु तन्नुटॆ पितावुतन् कांक्षितं कण्टु चॊऩ्ऩान्— धर्म्मवुमल्ल मम दण्डमॆन्नयुमोर्त्ताल् सम्मतिक्कयुमिल्ल ञानतु पऱयेन्टा। १० पिन्नॆप्पुरुविनोटु पऱञ्ञु ययातियुं तऩ्ऩालुं यौवनत्तॆ वार्द्धक्यं ऩल्कीटुवन्। वऩ्ऩीटुं पितृ नियोगं केट्टालनुग्रहमॆऩ्ऩु केट्टवनतु सम्मतिच्चितु भक्त्या। तारुण्यमवनोटु वाङ्ङिनान् ययातियुं कारुण्यमवनिल् वर्द्धिच्चितु नरेन्द्रनुं। राज्यपालनं चॆय्तु भोगत्तॆभुजिच्चेऱ्ं पूज्यनाय्च्चिरकालं वसिच्चु ययातियुं। पिन्नॆप्पुरुविनोटु वार्द्धक्यं वाङ्ङिकॊण्टु तन्नुटॆ तनयनु यौवनं ऩल्कीटिनान्। भूपरित्राणार्त्थमाय् अभिषेकवुं चॆय्तु भूपति पुरुविनॆभूपतियाक्कि वाणान्। राजचिह्नङ्ङळ् निङ्ङळ्क्किकल्लातॆ पोकयॆऩ्ऩु राजेन्द्रन्

स्मरण रहे कि शर्मिष्ठा के द्रुह्यु, अनुद्रुह्यु और पुरु नाम के तीन पुत्र हुए थे। शर्मिष्ठा राजा की सबसे प्रियपत्नी थी, जिससे देवयानी बहुत दुःखी रहती थी। देवयानी ने यह बात अपने पिता को बतायी तो शुक्र ने ययाति को क्रोध में आकर शाप दिया कि तुम वृद्ध हो जरा-नरा से पीड़ित हो जाओ। इससे राजा बहुत क्लेश का अनुभव करने लगा। राजा ने अपने पुत्र यदु को बुलाकर कहा कि मेरा वार्द्धक्य लेकर तुम अपना यौवन मुझे दो। यह सुनते ही यदु ने धर्म का हवाला देते हुए अपने पिता की इच्छा की भर्त्सना करते हुए समझाया—'यह तो कोई धर्म नहीं है और इससे मुझे दुःख भोगना पड़ेगा। मैं इसके लिए तैयार नहीं हूँ। आप (यह बात) मत कहिए।' १० फिर ययाति ने पुरु से कहा—'तुम (मुझे) अपना यौवन दो, मैं तुम्हें वार्द्धक्य देता हूँ।' पिता की आज्ञा मानने से उनका आशीर्वाद प्राप्त होगा, यह समझकर उसने भक्ति के साथ राजा की आज्ञा मान ली। ययाति ने उससे तारुण्य लिया और फलतः उसके प्रति राजा की कृपा बढ़ती गयी। ययाति राज्य-शासन तथा भोग-भुक्ति करते चिरकाल तक प्रजा का आराध्य बना रहा। फिर पुरु से वार्द्धक्य वापस लेकर उसे यौवन दे दिया। भूमि का परिपालन करने के लिए उसने पुरु का राज्याभिषेक करवा दिया। राजा ने यदु आदि अन्य चारों पुत्रों को शाप दिया कि तुम लोग राजचिह्नों से वंचित रहो। इस प्रकार

यदुमुतल् ताल्वक्कुं शापं तल्कि। अङ्ङने शुक्रशापं कैक्कोण्टु ययातियुमङ्ङोट्टु कूटेशपिच्चिल्ल सद्गुणवशाल्। मुन्नमन्नृगनु- वन्नापत्तु पोले नमुक्किकन्निनि वरायवतिनावोळं वेलचेय्क। नम्मेक्काणमतिनुण्टु वन्नीट्टारानुमेङ्किल् सम्मानिच्चुदिक्कुम्पोळ् कूट्टिक्कोण्टन्नीटु नी। २० इत्थमोरोन्ने राम लक्ष्मणन्मारुं तम्मिल् चित्तमोदेन पऱञ्ञिरुन्नीटिन नेरं सत्वरं कळिञ्ञितु रात्रियुं दिनेशनुं प्रत्यक्षनायानल्लो तल्क्षणं नृपश्रेष्ठन्। आस्थया संध्या- नुष्ठानङ्ङळुं कळिच्चु वन्नास्थाने सुवर्ण्ण सिंहासने मरुविनान्। २३

काञ्चनादि मुनिकळ् वन्नु लवणासुरोपद्रवत्ते श्रीरामनोटऱियिक्कुन्नतु

द्वारपालकन् वन्नु वन्दिच्चु चोन्नान् पुरद्वार देशान्ते वन्नु निल्क्कुन्नु मुनिजनं। काञ्चनादिकळायभार्ग्गव कुलजन्मार् वाञ्छया कण्टु कोळ्वान् निन्तिरुवटि पदं। कालसोदरी तीरवासिकळेन्निवण्णं काले वन्नवन् चोन्न वाक्कु केट्टतु नेरं वैकाते वरुत्तुकेन्नरुळियव- नोटु वैकुण्ठन् तिरुवटि तापसन्मारुमप्पोळ् पूज्यमां तीर्त्थजलं फलमूलादिकळुं काळ्चयुं वच्चु कण्टारन्नेरं जगन्नाथन्। अर्घ्यं

शुक्र-शाप को ग्रहण करके भी सद्गुणी राजा ययाति ने बदले में (शुक्र को) शाप नहीं दिया था। हे सौमित्र ! जैसे पहले नृग विपत्ति में फँसा, वैसी विपत्ति हमें न आए, इसके लिए हमें ध्यान रखना चाहिए। इसलिए यदि कोई मुझसे मिलने आए तो प्रभातकाल में उसका स्वागत करते हुए उसे मेरे पास लिवा लाने का तुम ध्यान रखो।" २० इस प्रकार जब सानन्द राम-लक्ष्मण एक-एक बात करते बैठे थे, तब रात व्यतीत हुई और दिनेश (सूर्य) पूर्व में प्रकट हुआ। तत्काल महाराज ने आस्थापूर्वक संध्यानुष्ठान किये और उनसे निवृत्त हो सुवर्ण-सिंहासन पर विराजमान हुए। २३

काञ्चन आदि मुनियों की लवणासुर के उपद्रव के सम्बन्ध में श्रीराम जी से शिकायत

द्वारपाल ने आकर प्रणाम करते हुए सूचना दी कि (यमुना- तटवासी) भृगु-वंशज काञ्चनादि मुनिजन आप से मिलने के लिए पुरद्वार पर (प्रतीक्षा में) खड़े हैं। उसके द्वारा इस प्रकार सूचना देते ही भगवान वैकुण्ठवासी (विष्णु) ने उसे आज्ञा दी कि उन्हें तुरन्त आने दो। तीर्थजल, फल-मूल आदि भेंट करते हुए तापस लोग आकर राम से मिले तो जगन्नाथ ने अर्घ्य-पाद्य आदि से अर्चना करते हुए मुनिकुल-प्रमुखों

पाद्यादिकळालर्च्चिच्चु मुनिकुलमुख्यन्मारेयुमुटनिरुत्ति रघुनाथन् । वन्दिच्चु भक्तियोटे विनयं पूण्टु मुदा मंदहासवुं पूण्टु चोदिच्चु कुशलवुं । मानसे नित्यं तपस्विसन्नेतुमुपद्रवं काननत्तिङ्कल् ऩिङ्ङळ्क्किल्लल्ली चोल्लीटणं । जीव धन धान्य राज्यादिकळेयेल्लां केवलमुपेक्षिच्चुं विप्ररे रक्षिप्पन् ञान् । वाञ्छितं ऩिङ्ङळ्क्केन्तु चोल्लुविनेन्नालतु साधिप्पिच्चीटुवन् ञानिल्ल संशयमेतुं । १० सत्यमेन्नरिञ्ञालुं राम भाषितमिति श्रुत्वा तापस प्रवरन्मारुमरुळ् चेय्तार् । साध्यमो ? दुस्साध्यमो कार्यमेन्नरियाते पार्त्थिवन्मारुमिङ्ङने चोल्लीटुमो ? नल्लतु वन्नीटुक मेल्क्कुमेलेन्नतोऴिञ्ञिल्लमट्टोन्नुं परञ्ञीटुवान् ञङ्ङळ्क्किप्पोळ् । राघवनरुळ् चेय्तान् काननं तन्निल् निन्नङ्ङागमिच्चतिन् मूलमरुळ् चेय्कयुं वेणं । काञ्चन तपोधननरुळि चेय्तानप्पोळ् वाञ्छितमायतेल्लां चोल्लुवन् मटियाते । पण्टोरु निशाचरनेत्रयुं गुणवानायुण्टायि मधुवेन्नु नाममायि महीपते ! धर्म्मं तत्परत्ववुं तपस्सुं बलवुं कण्टंबिकापतियोरु शूलवुं नल्कीटिनान् । निन्नुटे शत्रुक्कळे वधिच्चाल् शूलमितु निन्नुटे कय्यिल्त्तन्ने वरुमेन्नरिञ्ञालुं । गो देव

को तुरन्त (आसनों पर) बिठाया। भक्ति से प्रणाम किया और नम्रतापूर्वक तथा मन्द मुस्कान के साथ उनसे कुशल-प्रश्न किये। फिर राम ने पूछा कि "कानन में नित्य तपस्या करते हुए आप लोगों को कुछ कठिनाई या उपद्रव तो नहीं हो रहा है ? प्राण, धन-धान्य, राज्य सब कुछ त्यागकर भी मैं ब्राह्मणों की रक्षा करूंगा। आपका जो मनोरथ है उसे आप स्पष्ट प्रकट करें; मैं पूरा कर दूंगा। इसमें संशय नहीं है। १० राम का यह कथन सत्य जानिए।" इस प्रकार सुनते ही तापस-प्रवरों ने कहा—"कार्य साध्य है या असाध्य, यह जाने बिना क्या कोई राजा इस प्रकार कभी कह सकेंगे ? आपकी उत्तरोत्तर उन्नति हो, इसके अतिरिक्त हमें अब और कुछ कहने को नहीं है।" तब श्रीराम जी ने कहा—"कानन से यहाँ तक आगमन का प्रमुख कारण बता दें।" तब तपस्वी काँचन ने कहा—"हम अपना मनोवांछित आपको निस्संदेह सुनाएँगे। हे महीपति ! पहले मधु नाम का एक गुणी निशाचर हुआ था। उसकी धर्म-तत्परता, तपस्या एवं बल से प्रभावित हो अम्बिकापति (शिव जी) ने उसे एक शूल दिया। फिर शिव ने कहा—'तुम्हारे शत्रु का वध करने के उपरान्त यह शूल तुम्हारे ही हाथ में स्वयं आ जाएगा। किन्तु गौएँ, देव, द्विज (ब्राह्मण) आदि जातियों पर उपद्रव करने पर यह शूल लौटकर मेरे हाथ

द्विज कुलोपद्रवं चेय्युन्न ताळेतुं वैकाते पुनरेन्नरिकत्तुं पोरुं। अेन्नरुळ् चेय्तु शूलं कोटुत्तु महादेवन् अन्नेरं मधु तानुमोन्नपेक्षिच्ची-टिनान्— २० अेन्नुटे सन्तत्यन्मार्क्केल्ला ताळेय्क्कुमितु तन्ने निन् वरायुधमायिरिक्कयुं वेणं। अेन्नतु वरिकयिल्लेङ्किलुमतु केळ् नी निन्नुटे मनोरथं पळुताकरुतल्लो। निन्नुटे सुतनोरुत्तनितुवरायुधं तन्नेयाय् वरुं पुनरङ्ङोट्टु कोतिक्केण्टा। निन्नुटे सुतन् कय्यिल् शूलमितिरिक्कुन्नाळ् वन्नीटा मरणमेन्नरिक गुणांबुधे! पिन्ने निन् मकन् मृतनायालिश्शूलमुटनेन्नरिकत्तु पोरुं निर्णयमरिञ्ञालुं। अेन्नरुळ् चेय्तु शूलं कोटुत्तु पुरान्तकन् नन्नायित्तोळुततु वाङ्ङिनान् मधुवीरन्। पुत्रनुमुण्टाय् वन्नु लवणनेन्नु नाममेवयुं दुष्टनायान् बाल्यकालत्तेयवन्। साधुवृन्दत्तेयुपद्रविच्चु तुटङ्ङिनान् तातनुमतु कण्टुशिक्षिच्चु पलतरं। नल्लतु चोन्नालवनेल्क्कयिल्लेन्नुमेन्नाल् नल्लतल्लेन्नु कल्पिच्चु जनकनुं। शूलवुं तनयनु कोटुत्तु वनं पुक्कु कालारि तन्नेयोर्त्तु तपस्सुं तुटङ्ङिनान्। ३० शूलत्तिन् बलं कोण्टु मदिच्चु लवणनुं भूलोकवासिकळेप्पीडिच्चु तुटङ्ङिनान्। तापवु-

में आ जाएगा।" यह कहते हुए शिव जी ने उसके हाथ में शूल रख दिया तो तुरन्त मधु ने प्रार्थना की— । २० मेरी सन्तान-परम्परा के पास भी यही शूल आपके वर-प्रसाद का आयुध बना रहे।" तब शिव जी बोले—"ऐसा नहीं हो सकता; तो भी तुम सुनो। तुम्हारी इच्छा भी व्यर्थ नहीं जानी चाहिए। तुम्हारे एक पुत्र का यह परायुध बना रहेगा। इसके आगे की इच्छा छोड़ दो। हे गुणनिधि ! जब तक यह शूल तुम्हारे पुत्र के हाथ में रहेगा तब तक उसकी मृत्यु नहीं होगी यह तुम समझ लो। किन्तु ज्यों ही तुम्हारे पुत्र की मृत्यु होगी त्योंही यह शूल मेरे पास आएगा; यह तुम निश्चित जानो।" इतना कहकर पुरान्तक (त्रिपुरारि शिव जी) ने शूल दिया और मधुवीर ने खूब हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए उसे ग्रहण किया। फिर उसके लवण नाम से एक पुत्र हुआ, जो बाल्य-काल से ही महादुष्टात्मा था। वह साधु-सज्जनों को सताता रहा और यह देख पिता कई प्रकार से उसे दंडित किया करता था। पिता ने समझ लिया कि अच्छी बातें समझाने पर भी वह समझ नहीं पाएगा और उसकी यह नीयत भविष्य के लिए अच्छी नहीं रहेगी। शूल, पुत्रको देकर (मधु) वनवास को गया और वहाँ रहकर शिव जी का ध्यान करता हुआ तपस्या में तल्लीन हुआ। ३० शूल के बल पर मदोन्मत्त लवण पृथ्वीवासियों को सताता आ रहा है। हे पृथ्वीपति ! हम तपस्वी लोग उसके उपद्रव से

मवनाले मुळुत्तु चमञ्ञतु तापसन्माराय ञङ्ङळ्क्कु मेदिनीपते ! पृथ्वीशन्माक्कुमाक्कुं कोल्लावल्लवन् तन्ने पृथ्वीश तिलकमे ! रावणादिकळ् तम्मे निग्रहिच्चोरु भवानिल्लोरु दण्डमेतुं उग्रनां लवणने निग्रहिप्पतिनोर्त्ताल् । अन्नेरं चोद्यं चेय्तु राघवन् तिरुवटि इन्नताचारमवनाहारमेन्तोन्नवन् । तन्नुटे निलयनमेविटे-येन्नुमेल्लां अन्नोटु केळ्प्पिक्कणं तिन्तिरुवटियिप्पोळ् । आहारं मृगमनुष्यादि मांसमति साहसं रौद्राचारमालयं मधुवनं । इङ्ङने मुनि वाक्यं केट्टु राघवन् चोन्नान् निङ्ङळे रक्षिप्पन् ञान् दुष्टने वधिच्चिन्नु । पिन्नेत्तन्नुजन्मारोटरुळ् चेय्तीटिनान् इन्निप्पोळि-वरुटे कूटेयार् पोकुन्नतु ? । ३९

लवणासुर वधत्तिनायि शत्रुघ्नन् पोकामेन्नु पऱयुन्नतु

ञानतु चेय्वनेन्नु मुतिर्न्नु भरतनुं मानियां शत्रुघ्ननुमन्नेरमुर चेय्तान् । तिन्तिरुवटि वनवासं चेय्तकालमन्तरमेन्नि राज्यं पालिच्चतार्यनल्लो । अग्रजन् वनत्तिनु कूटेप्पोन्ननुदिनं दुःखङ्ङळनुभविच्चीटिनानिवयोन्नुं चेय्ततिल्लटियनेन्नालितु वळिपोले साधिप्पतिनिवरोटु कूटेप्पोय् ञानेन्नेटं मोदेन पऱञ्ञतु केट्टु राघवनप्पोळ् सादरमरुळ् चेय्तु

अत्यधिक दुःखी हैं । हे राजाओं के मकुट ! कोई राजा उसका वध नहीं कर सकेगा । किन्तु विचार करने पर, रावण आदि का संहार करनेवाले आपको लवण का वध करना कोई कठिन कार्य नहीं होगा ।" तब भगवान श्रीराम ने पूछा—"हे महामुनि ! आप कृपापूर्वक मुझे यह बता दें कि उसका आचार-व्यवहार और भोजन-क्रम कैसा है तथा उसका वासस्थल कहाँ है ।" मुनिवर ने कहा—"भोजन है पशु-नरों का मांस; आचार से अति साहसी एवं क्रूरकर्मा है तथा रहता है मधुवन में ।" ऐसा मुनि-वचन सुनकर श्रीराम जी बोले—"आपकी रक्षा के लिए मैं उस पापी का बध करूँगा ।" फिर राम ने अपने भ्राताओं को बुलाकर पूछा कि आप में से कौन आज इनके साथ जाएँगे ? । ३९

लवणासुर-वध के लिए शत्रुघ्न का जाने को तैयार होना

भरत ने आगे बढ़कर कहा कि यह कार्य मैं करूँगा । तब स्वाभिमानी शत्रुघ्न ने कहा—"जब आप वनवास के लिए गये थे तब शासन-भार आर्य (भरत जी) ने संभाला था । मेरे अग्रज (लक्ष्मण) वनवास के समय आप का साथ देकर खूब दुःख भोगते रहे । किन्तु मुझ दास से

सोदरन्मारोटेवं। अङ्ङने तन्ने शत्रुघ्नन् परञ्ञतु पोले मंगलं वरुवानाय्च्चेन्नु साधिक्कयेन्तान्। मधु पुत्रनेत्तापसाज्ञया वधिच्चु ञी मधुकाननमोरु राज्यमाक्किक्कोण्टधि— पतियाय् वसिक्केण-मविटेय्क्कतिन्नु ञानधुना चेय्वनभिषेकमेन्नऱिञ्ञालुं। इत्तरं रघुपति चोन्नोरु वाक्यं केट्टु शत्रुघ्ननुर चेय्तानाज्जंव समन्वितं। ज्येष्ठन्मारिरिक्कवे सोदरनभिषेकं वाट्टमेन्निये चेय्क्क धर्म्ममो-चिन्तिक्कणं। १० न्निन्तिरुवटि नियोगत्ते लंघिच्चीटाते सन्ततं वाणीटुवानायनुग्रहिक्केणं। धर्म्मविच्छेदं वरा ञान् चोल्लुन्नतु केट्टाल् सम्मतमतु महालोकक्कॆन्नऱिञ्ञालुं। श्रीरामनेवं चोल्लि शत्रुघ्ननोटुं तदा पारातेयभिषेकत्तिनु वट्टंवुं कूट्टि। वसिष्ठादिकळु-मायभिषेकवुं चेय्तु वसिच्चु मुनिकळुमायोरुदिनं तत्र। पिट्टेन्नाळ् चेन्नु रामभद्रने वन्दिच्चप्पोळ् उट्वनाय निज सोदरन् तन्ने शीघ्रं वत्से चेर्त्ताश्लेषिच्चु मूर्द्धनि चुंबिच्चु तन्टेयुत्संगे चेर्त्तु सन्तोषिच्चरुळ् चेय्तीटिनान्। १६

ऐसा कोई कार्य सम्पन्न नहीं हुआ; इसलिए यह कार्य (लवणासुर का वध) सिद्ध करने के लिए मैं आज इनके साथ चलूँगा।" इस प्रकार उत्साह भरी वाणी में शत्रुघ्न को कहते सुनकर सप्रसन्न राम जी ने अपने भाइयों से कहा—"हाँ ठीक है। शत्रुघ्न ने जो कहा वही होगा।" और आज्ञा दी कि "तुम जाकर यह कल्याणप्रद एवं मंगलकारी कार्य पूरा करो। तापसों की आज्ञा मानकर तुम मधु-पुत्र का वध करके, मधुवन को एक राज्य बनाकर तुम उसके अधिपति बन वहीं रहो। उसके लिए अभी मैं तुम्हारा राज्याभिषेक कर देता हूँ; यह जान लो।" रघुपति के ये वचन सुनकर ज़रा सन्देह एवं शंका-समन्वित शब्दों में शत्रुघ्न ने कहा—"आप यह सोच लें कि ज्येष्ठ भ्राताओं के रहते कनिष्ठ भ्राता का राज्याभिषेक क्या उचित है ? । १० इसलिए आपकी आज्ञा का पालन करते हुए वहीं रहने की आप कृपापूर्वक अनुमति दीजिए।" (राम ने उत्तर दिया—) "मेरा कथन सुनने से धर्म की हानि नहीं होती। मेरी आज्ञा समस्त जनों को स्वीकार्य है।" यह कहकर राम जी ने शत्रुघ्न के राजतिलक के लिए आवश्यक प्रबन्ध किया तथा वसिष्ठ आदि मुनियों से उनका राज्याभिषेक कराया। मुनियों आदि के साथ वहाँ केवल एक दिन ठहरकर, जब शत्रुघ्न ने अगले दिन श्रीराम जी को प्रणाम किया तब (श्रीराम जी ने) अपने प्रिय भ्राता को छाती से लगाया, ललाट को चुंबित किया और फिर अपने पार्श्वभाग में बिठाकर सानन्द उपदेश दिया— । १६

श्रीरामन् युद्धकौशलङ्ङ्ळुपदेशिच्चु शत्रुघ्नने अयय्क्कुन्नतु

केळ्क्क ऩी पण्टु मधुकैटभन्मारेक्कोल्वानाय्क्कोण्टु निर्म्मिच्चुळ्ळोर-स्त्रमिततिने ऩी कैक्कोण्टीटितु कोण्टाल् मरियातवरिल्ल मुख्य-मेन्नयुं प्रयोगिच्चतिल्लारोटुं ञान् । विश्वप्रक्षोभं वरुमेन्नुळ्ळ भयं कोण्टु विश्वसंहारक्षममेन्नयुं तेजोमयं । मृत्युशासन शूलं धिक्क-रिक्करुतेतुं हस्तसंस्थितमल्ल शूलमेङ्किले चेन्नु युद्धत्तिन्नटुक्कावू लवणन् तन्नोटतिनेन्नयुमेळुप्पमुळ्ळोरुपायत्तेक्केळ्क्क ऩी । आहा-रत्तिन्नु मांसमन्वेषिच्चुदये पोय् गेहत्तिलकं पूवानस्तमिक्कुम्पोळ् वरुं । अतिनु मुम्पे चेन्नु गोपुर द्वारत्तिङ्कलतिरोषेण ऩिन्नु तटुत्तु कोळ्क वेणं । अकत्तु पुक्कु शूलमेटुप्पानयय्करुतटुत्तु वन्नु युद्धं तुटङ्ङुमतुन्नेरं । वरिषं वरुं मुम्पे गंगयुं कटन्नु पोय् पुरुषाधमन् तन्ने वधिक्क कुमारा ! ऩी । अतिनु ऩालायिरमश्वङ्ङळत्र तेरुमधुना ऩूऱायिरं कालाळुं वेण्टुवोळं १० कोण्टु पोय्कोळ्क वेणमत्थंवुमेन्नु नृपन् कोण्टाटिप्परञ्ञयच्चीटिनानवनेयुं । अग्र-

---

युद्ध के उपाय समझाकर राम का शत्रुघ्न को भेजना

हे कुमार ! तुम सुनो । मधु और कैटभ का वध करने के लिए बनाया गया यह अस्त्र है, जिसे तुम स्वीकार करो । इसके लगने पर मृत्यु निश्चित है । यह ऐसा महत्त्वपूर्ण अस्त्र है कि इसका प्रयोग मैंने कभी किसी पर नहीं किया । विश्व-संहार में समर्थ इसका प्रयोग इसलिए नहीं किया कि विश्व में खलबली मचने का भय था । यह तेजोमय अस्त्र है । फिर भी (उसके हाथ में जो शूल है उस) मृत्यु-शासन (शिव) के शूल का तिरस्कार नहीं होना चाहिए । लवण के हाथ में वह शूल न रहने पर ही उससे युद्ध के लिए तैयार होना चाहिए । उसके लिए जो सरल उपाय है, वह तुम सुन लो । वह आहार के लिए मांस की खोज में उदय-काल में जाता है और सायंकाल गृह को वापस आता है । (गृह में वापस आने के) पहले ही गोपुरद्वार पर पहुँचकर अत्यन्त रोष के साथ उसे (द्वार पर) रोक लेना चाहिए । घर के भीतर पहुँचकर शूल उठा लाने नहीं देना चाहिए, तब वह समीप आ युद्ध करेगा । इसलिए हे कुमार ! पानी के पड़ने के पहले ही गंगा पार करके वहाँ (मधुवन में) पहुँचकर तुम उस अधम का वध करो । उसके लिए अभी आवश्यक चार सहस्र अश्व, उतने ही रथ, चार सहस्र पैदल सैनिक और आवश्यकता के अनुसार । १० धन ले जाओ ।" ऐसा कहकर महाराज ने उन्हें खूब

जन्मारेयल्लां नमस्कारवुंचेय्तु मुख्यानुभावत्तोटे जननी जनत्तेयुं वन्दिच्चु वसिष्ठादिगुरुभूतन्मारेयुं वन्दिच्चु मुहूर्त्तं लग्नं कोण्टु पुऱप्पेट्टान्। काञ्चनादिकळाय तापसन्मारुमति वाञ्छया रामाज्ञया तेळिञ्ञु पुऱप्पेट्टार्। ईश्वरानुग्रहवुं प्रार्त्थिच्चु वाल्मीकि तन्नाश्रमत्तिङ्कल् चेन्नारस्तमिच्चीटुं नेरं। सल्क्कारं चेय्तु मृष्ट भोजनं कळिञ्ञप्पोळुळ्क्काम्पु तेळिञ्ञिरिक्कुन्नेरं शत्रुघ्ननुं चोदिच्चानिविटेप्पण्टारोरुयागं चेय्ततादरिच्चरुळ् चेय्तान् वाल्मीकि मुनीन्द्रनुं। १७

सौदास चरित्रं

मित्रवंशोल्भूतनायुण्टाय सुदासनु पुत्रनां मित्रसहनुण्टायान् सौदासनुं। मृगया कुतुकं पूण्टटवि तन्निल्प्पुक्कु मृग सञ्चयं कोन्नु पेरुमाऱिन कालं, रण्टु राक्षसर् वनत्तिङ्कल् शार्द्दूलङ्ङळायुण्टवरण्टिलोन्नु कोन्नितु सौदासनुं। निनक्कुमापत्तु ञान् वरुत्तीटुवनेन्नु कनक्के रोषं पूण्टु पऱञ्ञु मट्टेवनुं। सौदासन् पिन्नेस्सुदासन् मृतनाय शेषं मेदिनीश्वरनाय् वाणीटिन कालत्तिङ्कल्। यागवुं चेय्तीटिनान्

प्रशंसापूर्वक भेज दिया। ज्येष्ठ भ्राताओं को प्रणाम कर, बड़े प्रेम से माताओं की वंदना कर तथा वसिष्ठ आदि गुरुओं को नमस्कार कर तथा शुभ लग्न देखकर शत्रुघ्न (युद्ध के लिए) निकल पड़े। रामाज्ञा से अत्यन्त प्रसन्न कांचनादि मुनिवर भी प्रणाम करके सन्तुष्टचित्त हो चल पड़े। ईश्वर की कृपा के लिए प्रार्थना करते हुए, सूर्यास्त के समय वे वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचे। स्वागतपूर्वक मिष्ठान्न भोजन कराके जब वाल्मीकि सानन्द बैठे थे तब शत्रुघ्न ने पूछा—"पहले यहाँ किसने यज्ञ किया था?" प्रश्न का आदर करते हुए वाल्मीकि मुनि बोले—। १७

सौदास-चरित

सूर्यवंश में जन्मे सुदास के पुत्र रूप में मित्रसह का जन्म हुआ, जो सौदास (के नाम से अभिहित किया जाता) है। एक दिन मृगया में उत्सुक राजा जब घोर कानन में पहुँच जानवरों का शिकार खेलता आ रहा था तब शार्दूल-रूपधारी दो राक्षस वन में घूम रहे थे, जिनमें से एक को सौदास ने मारा। तब दूसरे ने बड़े ही रोष में आकर कहा—"तुम्हें भी भयंकर विपत्ति मैं पहुँचाऊँगा।" फिर सुदास की मृत्यु के उपरान्त जब सौदास पृथ्वीश्वर बन बैठे तब वसिष्ठ जी का उपदेश

वसिष्ठ नियोगत्तालागमिच्चितु रक्षस्सविटे वसिष्ठनाय्। उपदंशत्तिनिन्नु मांसमुण्टाक्कीटेन्नु नृपनोटुरचेय्तु मरञ्ञु राक्षसनुं। तिरञ्ञ मोदत्तोटु मांसमुण्टाक्कीट्टुवान् परञ्ञु नृपेन्द्रनु पाचकन् तन्नोटप्पोळ्। आमिष कर्त्तावुतन् वेषमाय् निशाचरन् आमिषं कोटुत्तितु मानुषमतु नेरं। सूदनुं वसिष्ठनु सादरं विळंपिनान् क्रोधमुळ्क्कोण्टु शपिच्चीटिनान् वसिष्ठनुं। १० मानुषमांसं भक्षिच्चीटुमो ब्राह्मणन् ञान्? मानवश्रेष्ठ! भवानतिनालिनि मेलिल् मर्त्यमांसवुं भक्षिच्चटवीतलं तोरुं नित्यवुं निशाचरनायिस्सञ्चरिक्कणं। शापत्तेक्केट्टु नृपन् कारणं तिरञ्ञप्पोळापत्तिन्मूलमेल्लामरिञ्ञारनन्तरं। राक्षसन् चतिच्चतेन्नरिञ्ञु वसिष्ठनुं दाक्षिण्यं पूण्टु नृपनोटरुळ् चेय्तीटिनान्। वेदज्ञन्मार् वाक्कुकळसत्यमाय् वन्नीटा द्वादश संवत्सरं कोण्टु तीरुक शापं। मन्नव! राक्षसनाय् वाळुन्नाळ् चेय्युं कर्म्मं पिन्नेयोन्नुमे तव तोन्नुकयिल्लतानुं। शापवुं पन्तीराण्टु कोण्टु तीर्न्नोरुशेषं भूपतिप्रवरनाय् वन्नितु सौदासनुं। अन्नवन् चेय्त यागभूमियितरिञ्ञालुमेन्नु शत्रुघ्नन् तन्नोटरुळिच्चेय्तु मुनि। नामिनियुरङ्ङुक

लेकर सौदास ने यज्ञ किया। तब यह राक्षस वसिष्ठ के रूप में वहाँ पहुँचा तथा राजा से भोजन में मांस का भी प्रबन्ध करने का आग्रह करके वह अदृश्य हो गया। तब अत्यन्त सन्तुष्ट राजा ने रसोइया को बुलाकर भोजन में मांस भी तैयार करने को कहा। निशाचर ने आमिषकर्ता के वेष में आकर (पकाने के लिए) मनुष्य-मांस दे दिया। रसोइया ने वसिष्ठ को सानन्द मांस परोसा तो क्रोधाकुल वसिष्ठ ने शाप दिया—। १० —"क्या मैं ब्राह्मण मनुष्य-मांस खानेवाला हूँ? हे मानवश्रेष्ठ! इस (अपराध) से नित्य मांसभोजी राक्षस बन कानन में आपको भ्रमण करते रहना होगा।" शाप-वचन सुनकर जब राजा ने उसका कारण खोजा तब उसे उसका कारण विदित हुआ। राक्षस के छल का रहस्य जानकर वसिष्ठ सहानुभूतिवश राजा से बोले—"वेदज्ञों के वचन कभी असत्य नहीं हो सकते; द्वादश वर्ष में शापनिवृत्ति होगी। हे महाराज! राक्षस-रूप में किये जानेवाले किसी कर्म का बाद में आपको स्मरण भी नहीं रहेगा।" बारह वर्ष के उपरान्त जब सौदास शाप से मुक्त हुआ तब वह फिर राजा बना। तब उसके यज्ञ की यही भूमि रही, ऐसा आप जान लीजिए।" ऐसा मुनि ने शत्रुघ्न को बताया (और फिर बोले) "अब हम सो जाएँ, रात बहुत हो चुकी है।" तब सारे लोग सो

ताळिकयोट्टु चेन्नु यामिनियतु नेरमेल्लावरुमुरङ्ङिनार् । अर्द्धरात्रिक्कु वन्नु वाल्मीकि तन्नोटप्पोळेन्नयुं सन्तोषिच्चु चौल्लिनानोरु शिष्यन्— २० मैथिलि पेट्राळिप्पोळेन्नयुं तेजस्सोटुं, पैतङ्ङळिरुपेरुण्टरिक तपोनिधे ! शत्रुघ्ननतु केट्ट सन्तोषं पूण्टानेट्मुत्थाय वाल्मीकि तान् जातकर्म्मवुं चेय्तान् । प्रत्युषस्युत्थाय शत्रुघ्ननुं वाल्मीकियें नत्वा यात्रयुमयप्पिच्चुटन् नटकोण्टान् । काळिन्दीतीरं पुक्कु तापसाश्रमङ्ङळिलानन्दं पूण्टु वसिच्चीटिनान् पटयोटुं । तापसेन्द्रन्मार् परयुं पुराणङ्ङळ् केट्टु तापवुमकन्निरुन्ननेरं चोध चेय्तान्— शिवनाल् दत्तमाय शूलं कोण्टारानेयुं लवणन् वधिच्चु वारुण्टो चौल्लुक वेणं । अन्नतु केट्टु मुनिश्रेष्ठनुमरुळ् चेय्तु मुन्नं मान्धातावाय भूपति कुलश्रेष्ठन् विक्रमं कोण्टु भूमिमण्डलमटक्किनान् स्वर्ग्गवुमटक्कि वाळेणमेन्नोरुम्पेट्टान् । शक्रनुमतुकण्टु भूपतियोटु चौन्नान् शक्यमेन्नयुं भवान भाविच्चतुपपन्नं । अवनि तन्निल् मधुवनमां देशे वाळुं लवणन् तन्नेभवान् समरे जयिच्चितो ?। ३० मान्धातावतु केट्टु लवणन् तन्ने वेल्वान् कान्तारे वन्नु युद्धत्तिनायि विळिच्चितु । शूलाग्निज्ज्वालयाले

गये । आधी रात के समय एक शिष्य ने बड़ी प्रसन्नता से आकर कहा— । २० 'हे तपोनिधि ! मैथिली ने दो अत्यन्त तेजस्वी बालकों को जन्म दिया, यह आप समझ लीजिए ।" यह सुनकर शत्रुघ्न बहुत प्रसन्न हुए । निद्रा से उठकर वाल्मीकि ने (बालकों का) जन्म-संस्कार किया । प्रभात काल में उठकर शत्रुघ्न ने वाल्मीकि को प्रणाम किया और विदा लेकर चल पड़े । कालिन्दी के तट पर पहुँचकर वहाँ अपनी सेना सहित सहर्ष तापसाश्रमों में पड़ाव डालकर बस गये । तापसों से पुराण की कथाएँ सुनकर जब उल्लसित बैठे थे तब शत्रुघ्न ने प्रश्न किया—"ज़रा कृपापूर्वक बता दें कि लवण ने शिव से प्रदत्त शूल से कभी किसी का वध किया है ?" यह सुनकर मुनिश्रेष्ठ ने कहा—"पहले भूपतिश्रेष्ठ मान्धाता ने अपने पराक्रम से भूमण्डल को अपने अधिकार में कर लिया और फिर स्वर्ग को भी वश में करने का प्रयत्न किया तो यह देखकर शक्र (इन्द्र) ने राजा से कहा—"आपने यह जो कार्य आरम्भ किया वह तो प्रशंसनीय है । (किन्तु सोचें कि) पृथ्वी पर मधुवन नामक देश में निवास करनेवाले लवण को क्या आपने युद्ध में जीत लिया ?" । ३० यह सुनकर मान्धाता ने युद्ध में जीतने के लिए वन (मधुवन) में आकर लवण को युद्ध के लिए बुलाया । तो वह शूल से निकली अग्निज्वाला में दग्ध हो गया ।

दग्धनायितु नृपन् कालारियुटे शूलमेंत्रयुं पेटिक्कणं । इत्थं तापस वाक्यं केट्टुटन् शत्रुघ्ननुं प्रत्युषस्सिङ्कल् कृतकृत्यनायिप्पुऱप्पेट्टान् । ३३

लवणासुर वधं

आहारं तेटिप्पोयि लवणनेन्ऱतरिञ्ञाहवत्तिन्नु चेन्ऱु गोपुरद्वारि पुक्कान् । मद्ध्याह्ने वन्नु मधुपुत्रनुमतुनेरं शत्रुघ्नन् तन्नेक्कण्टु निन्नितु लवणनुं । चापबाणङ्ङळोटुं शत्रुघ्नन् तन्नेक्कण्टु सापहासं चोल्लिनान् मधुपुत्रनुमेवं— मुन्नवुमेन्नेक्कोल्लान् वन्नितु पल नृपर् तन्नुटल् तन्नु मम नाकलोकवुं पुक्कार् । इन्नु किट्टिय मांसं पोराञ्ञुण्टुळ्ळिल् खेदं निन्नेयुं तिन्नाल् विशप्पेल्लामेयटङ्ङिडुं । इत्तरं केट्टु कोपं वर्द्धिच्चु निल्क्कुन्नोरु शत्रुघ्नन् तन्ने नोक्किकक्कूटात तेजस्सोटुं । मद्ध्याह्न मार्त्तण्डन् तन् मण्डलमेन्न पोले सिद्ध गन्धर्वादिकळ् विस्मयप्पेट्टु निन्नार् । शत्रुघ्ननोटु मधुपुत्रनुमुरचेय्तान् युद्धत्तिनाय्क्कोण्टु नी वन्नुवेन्नाकिलिनि निन्नालुमत्र भवानरनाळिक नेरं चेन्नु ञानायुधवुं धरिच्चु वन्नीटुवन् । अन्नाल् निन्मदमेल्लामटक्कीटुवनेन्नु चोन्नवन् तन्नोटाशु शत्रुघ्ननरुळ् चेय्तान्— १० दुष्टरेक्कण्णिल्क्कण्टालयय्क्केन्नुळ्ळतिल्ल नष्ट-

---

कालारि (शिव जी) के शूल से सतर्क रहना चाहिए ।" इस प्रकार तापस-श्रेष्ठ का वचन सुनने के बाद प्रातःकाल में नित्य कर्मों से युक्त हो (शत्रुघ्न) निकल पड़े । ३३

लवणासुर-वध

भोजन की खोज में लवण गया हुआ है, ऐसा जानकर (शत्रुघ्न) गोपुरद्वार पर आये । मध्याह्न के समय मधुपुत्र आया, तब शत्रुघ्न को देख लवण (वहीं) खड़ा हो गया । चाप-बाणों को लिए शत्रुघ्न को देखकर मधुपुत्र ने उपहास के साथ ऐसा कहा—"पहले भी मेरा वध करने कई राजा लोग आये, किन्तु अपना शरीर देकर वे नाकलोक चले गये । आज जो मांस मिला, उसकी कमी पर मन में खेद है, तुम्हें भी खा लूँ तो भूख शान्त होगी ।" यह सुनकर बड़े कोप के साथ चकाचौंध उत्पन्न करनेवाले तेज को लिये खड़े शत्रुघ्न मध्याह्नकालीन मार्तण्ड-मण्डल के समान जान पड़े । (उन्हें देख) सिद्ध-गन्धर्व लोग विस्मित खड़े रह गये । शत्रुघ्न से मधुपुत्र बोला—"अगर तुम युद्ध के लिए आये हुए हो तो तुम आधी घड़ी भर ठहर जाओ, मैं जाकर आयुध ले आऊँगा । तब तुम्हारा पूरा घमण्ड

माक्कातेयतु नृपधर्म्मवुमल्ल । निल्लोरु विनाळिक नेरं नीयेन्नाल् निन्ने स्वर्ल्लोकत्तिनु तन्ने यात्रयाक्कीटामल्लो । श्रुत्वा शत्रुघ्न वाक्यं क्रुद्धनां नक्तञ्चरनद्रि पाषाण वृक्ष वृन्दत्ताल् प्रहरिच्चान् । अस्त्रङ्ङळ् कोण्टु खण्डिच्चीटिनानवयेल्लां शत्रुघ्नन् पिन्ने रघुनायक दत्तमस्त्रं भक्तिकैक्कोण्टु जपिच्चयच्चानतु नेरमुत्तमांगवुं मुरिच्ची-टिनान् जितश्रमं । पृथ्वियुं पिळर्न्नु पोयब्धियिल् मुळ्कि वन्नुत्तम तूणि तन्निल्प्पुक्कितु विशिखवुं । यमुना तीरस्थन्माराकिय मुनिकळममितानन्दं पूण्टु वसिच्चारेल्लावरुं । नालु वत्सरं कोण्टु शत्रुघ्नन् मधुवनमालयङ्ङळाल्प्परि पूर्ण्णमाय्त्तीर्त्तानल्लो। कोट्टयुं गोपुरङ्ङळ् मतिलुं किटङ्ङुकळ् गोष्ठङ्ङळ् देवालयं चतुर्वर्ण्णा-लयङ्ङळ् । यमुना तीरस्थले मधुरापुरि नूनममरापुरियिलुमेट़माय् शोभिक्कुन्नु । २० तत्रैव चिरकालं वसिच्चु शत्रुघ्ननुं मित्र वर्गत्तेक्काणमानाय्क्कोण्टु पुऱप्पेट्टान् । स्वल्प सैन्यवुं निज तापस जनत्तोटुं उल्पन्नानन्दं वाल्मीक्याश्रमं पुक्कीटिनान् । सल्क्कारं चेय्तु मुनि मुख्यनां वाल्मीकियुं मुख्य भोगेन निशि वसिच्चु मुनि-युमाय् । प्रत्युषस्युत्थाय मद्ध्याह्ने चेन्नयोद्ध्ययिल् बद्धमोदेन

उतार दूँगा।" ऐसा कहनेवाले से शत्रुघ्न ने कहा—। १० —दुष्टों को आँखों के सम्मुख देखने पर, उसे नष्ट किये बिना, जाने नहीं दिया जाता। ऐसा करना राजधर्म के प्रतिकूल है। तुम पलभर के लिए ठहर जाओ, तुम्हें अभी स्वर्गलोक में भेज दूँगा।" शत्रुघ्न का वचन सुनकर नक्तंचर पर्वत-शिखर, पाषाण, वृक्ष-समूह आदि (उठा-उठाकर) प्रहार करने लगा। अस्त्रों से उन सबको खण्डित करके शत्रुघ्न ने फिर रघुनाथ जी से प्रदत्त अस्त्र भक्तिपूर्वक जपकर (उसकी तरफ) भेजा, जिसने अनायास ही उसका उत्तमांग (मस्तक) काट डाला। वह बाण भूमि भेद सागर में डूब (खून धोकर) शत्रुघ्न के उत्तम तूणीर में प्रविष्ट हुआ। तब यमुना के तीर-प्रदेश में रहनेवाले समस्त मुनिजन अमितानन्द से युक्त रह गये। (फिर) चार वर्ष में शत्रुघ्न ने मधुवन को भवनों से परिपूर्ण बना दिया। दुर्ग, गोपुर, दीवारें, खाइयाँ, गोशालाएँ, देवालय तथा अन्य नाना प्रकार के आलयों से परिपूर्ण हो यमुना-तट पर मधुरापुरी निश्चय ही अमरालय से भी अधिक शोभायमान बनी। २० यहाँ चिरकाल तक वास करने के बाद शत्रुघ्न मित्रवर्ग से मिलने के लिए (अयोध्या को) निकले। थोड़ी-सी सेना तथा अपने तापस जनों के साथ अत्यन्त प्रसन्न हो चलते-चलते वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचे। मुनिवर वाल्मीकि ने खूब स्वागत

पुक्कान् रामपादाब्जङ्ङळिल्। नत्वा पूर्वजन्मारे वन्दिच्चान् भक्ति-
योटे चित्तानन्देन पुणर्न्नीटिनारवर्कळुं। माताक्कन्मारे वन्दिच्चादर-
पूर्वमवन् खेदवुं कळञ्ञवराशिर्वादवुं चेय्तार्। मधुनन्दनन् तन्ने
वधिच्च प्रकारवुं मधुरापुरं तत्र सत्वरं तीर्त्त वारुं, रामचन्द्रनेयुं
मट्टुळ्ळवरेयुं केळ्प्पिच्चामोदं पूण्टु वसिच्चीटिनान् चिलदिनं।
राघवन् तिरुवटियरुळ् चेय्तान् पिन्ने वैकाते पोक वेणं मधुरापुरिक्कु
न्नी। अन्नतु केट्ट नेरं शत्रुघ्ननुर चेय्तानेन्नोटित्तरमरुळ् चेय्यरु-
तिनियेतुं। ३० निन्तिरुवटि तन्नेप्पिरिञ्ञाल्प्पौरुक्कयिल्लन्धना-
मटियनु कारुण्य वारानिधे! इत्तरं वाक्कु केट्टु राघवनरुळ्
चेय्तानेत्रयुं बालन् तन्ने नीयेन्नु धरिच्चेन् आन्। अत्रयुं प्रयासं
चेय्तुण्टाक्कित्तीर्त्त राज्यं व्यर्थमाक्करुतेन्नु निन्नुळ्ळिलुण्टाकणं।
अन्नेयुं मद्ध्ये मद्धये वन्नु कण्टीटामल्लो पिन्नेयुं चेन्नुं पोन्नुमिरिक्का-
मरिक नी। अर्थवुं पुरुष कारत्तोट्टु कूटि निनक्केत्रयुण्टपेक्षयेन्ना-
लायतु कोण्टु पोक। अन्नरुळ् चेय्तु पुणर्न्नयच्चाननुजने चेन्नुटन्
मधुरयिल् वाणितु शत्रुघ्ननुं। ३६

किया, तथा स्वादिष्ट भोजन कर मुनि के पास रात बितायी। प्रातःकाल
में उठकर मध्याह्न में अयोध्या पहुँचे और सहर्ष राम जी के चरणों में
प्रणाम किया। मस्तक नवाकर भक्ति से अपने ज्येष्ठ भ्राताओं की वंदना
की और उन्होंने आनन्दचित्त हो (शत्रुघ्न को) आश्लेष किया। श्रद्धा
से माताओं को प्रणाम किया तो दुःख त्याग करके उन्होंने आशीर्वचन
दिये। मधुपुत्र का वध, मधुरापुरी के निर्माण आदि बातें श्रीरामचन्द्र
तथा अन्य (आत्मीयों) को सुनाते हुए आनन्द के साथ वहाँ कुछ दिन
बिताये। फिर भगवान् राम ने कहा---"अब तुम्हें तुरन्त मधुरापुरी को
जाना चाहिए। यह सुनकर शत्रुघ्न बोले---"अब मुझसे ऐसी बात न
कहिएगा। ३० हे करुणासागर! यह अन्धा दास आपसे विछुड़कर रह
नहीं सकता।" यह वचन सुनकर श्रीराम जी बोले—"तुम्हें मैं निरा
बालक समझता हूँ। अत्यन्त कठिन प्रयत्न से बनाये गये राज्य को व्यर्थ
जाने नहीं देना चाहिए, ऐसा विचार तुम्हारे मन में होना चाहिए। बीच-
बीच में आकर तुम मुझसे मिल सकोगे। इस प्रकार आते-जाते रह सकते
हो, यह जान लो। धन और सेना जितनी तुम्हारे लिए आवश्यक होगी,
उतनी मात्रा में तुम ले जाओ।" ऐसा कहकर आश्लेष करके अनुज को
भेज दिया और शत्रुघ्न मधुरा में आ बस गये। ३६

शंबूक निग्रहं

अक्कालमयोद्ध्ययिलिल्लमायोरु विप्रन् रक्षिच्चु नित्यं गृहस्थाश्रमं वळिपोलें। उत्तमयाय तन्टॆ गृहिणियोटुं कूटि वर्त्तिक्कुं कालमवनॆत्रयुमास्थयोटॆ, पुत्रनुमुण्टायवनय्याण्टु कालं चॆन्नु मृत्यु लोकवुं पुक्कानॆत्रयुं कष्टं ! कष्टं ! पुत्रन्टॆ शवशरीरत्तॆयुमॆटुत्तु कॊण्टत्तल् पूण्टलऱि वन्नानयोद्ध्ययिलवन्। गोपुरद्वारत्तिङ्कलिरुन्नु राजाविनॆ तापेन पऱञ्ञेऱ् दुःखिच्चु करयुम्पोळ् नारद वसिष्ठादि मुनिकळोटु रामन् नेरे चॊल्लुविनितिन् कारणमॆन्नु चॊन्नान्। शंबूकनाय शूद्रन् तन्नुटॆ तपस्सु कॊण्टम्महो देवात्मजन्मरिच्चानॆन्नु नूनं। चॆन्नवन् तन्नॆ वधिच्चालुटन् जीविच्चीटुं निर्ण्णयं द्विजात्मजनॆन्नवरुळ् चॆय्तार्। बालकनुटॆ शवं तैलद्रोणियिलिट्टु पालिच्चु कॊळ्कयॆन्नु राघवनरुळ् चॆय्तु। पुष्पक विमानत्तॆ स्मरिच्चानतु नेरं अप्पोळ् वन्नु निन्नु वन्दिच्चु विमानवुं। १० चापबाणादिकळुं धरिच्चु रघुवीरन् शोभयेऱीटुं विमानोपरि करेऱिप्पोय् दिक्कुकळ् मून्निङ्कलुमधर्म्मं काणाञ्ञुटन् तॆक्कु दिक्किनु चॆन्न नेरत्तु काणाय्-

---

शंबूक-वध

उन दिनों अयोध्या में एक ब्राह्मण नित्य, उचित ढंग से गृहस्थाश्रम का पालन करता आया। अपनी उत्तम स्वभाव की गृहिणी के साथ जब वह बड़ी आस्था से रहता आ रहा था, तब उसका पुत्र अपनी पाँच वर्ष की अवस्था में मृत्युगत हुआ। हाय खेद है ! खेद है ! अपने पुत्र का मृत शरीर लिये दुखार्त हो वह अयोध्या (राजधानी) में आया। गोपुर-द्वार पर बैठकर, राजा का नाम लिये, अत्यन्त दुखार्त हो उसके विलाप करते समय, राम ने नारद, वसिष्ठ आदि मुनियों से कहा—"इस (अनिष्ट कार्य) का सीधा कारण आप लोग बताइये।" (उन्होंने उत्तर दिया) शंबूक नामक शूद्र की तपस्या के कारण ही यह ब्राह्मणकुमार मर गया, इसमें संशय नहीं है। तुरन्त उसका वध करने पर निश्चय ही यह द्विजात्मा (ब्राह्मण-पुत्र) जीवित होगा, ऐसा उन लोगों ने कहा। तब बालक का शव-शरीर तैल-द्रोणि (तेल से परिपूर्ण कटाह) में रख उसकी रक्षा करने को राघव ने कहा। तुरन्त उन्होंने पुष्पक विमान का स्मरण किया, तुरन्त आकर विमान ने प्रणाम किया। १० चाप-बाण धारण किये श्रीराम जी सुन्दर विमान पर आरूढ़ हो निकले और (अन्य) तीनों दिशाओं में कोई अधर्म न देखकर तुरन्त दक्षिण दिशा को बढ़े तो दिखाई

वन्नु। चलनं कूटातॆ कण्टरण्यं तन्निल् निजतलयुं कीऴाय्त्तूङ्ङि-
त्तपस्सु चॆय्तीटुन्नोन्, ऒरुत्तनवनोटु चोदिच्चु रघुवरनुरत्ततपोबल-
मुळ्ळवनारु नीयुं। ऎन्तु कल्पिच्चङ्ङनॆ तपस्सु चॆय्तीटुन्नु
चिन्तित मॆन्तॆन्नतुमुर चॆय्यणं भवान्। ऎन्नतु केट्ट नेरमवनुं तॆरुतॆरॆ
वन्दिच्चु चॊल्लीटिनान् तन्नुटॆ परमात्थँ। शंबूकनॆन्नु नाममायॊरु
शूद्रनहं संविद्रूपत्तॆ ध्यानिच्चाकुन्नु तपस्सुमे। मोक्षंवन्नीटुन्नति-
नाग्रहिच्चरिञ्ञालुं साक्षाल् तिन्तिरुवटि नल्कणमाशुमार्गं।
अन्नेरं वाळाल् तलवॆट्टि निग्रहिच्चितु वन्नितु शंबूकनु तन्नुटॆ
मनोरथं। भूदेवकुमारनुं जीविच्चानतु नेरमादितेयन्मार् पुष्पवृष्टियुं
चॆय्तीटिनार्। २० देवेन्द्रननुज्ञयुं कॊटुत्तु चॊल्लीटिनान् पोवतिनु-
ळ्ळुन्नु ञङ्ङळॆन्तरिक नी। कुंभसंभवनाकुमगस्त्य तपोधनन्
संप्रति महानियमं तुटङ्ङिनानतुं पण्टीराण्टॊण्टु कालं कूटुन्नतिनु
तन्नॆ सन्तुष्टन्मारायितु ञङ्ङळुमतिनाले। अविटॆप्पोकेणमॆन्न-
तिनालुळ्ळुन्नु नृवर शिखामणे! नी कूटॆप्पोन्नीटुक। कल्याणा-
लयनाकुमगस्त्यन् तन्नॆक्कण्टाल् नल्लतु वन्नु कूटुं निनक्कु नरपते!
शक्रनुमॊक्कॆप्पोकॆन्नु चॊन्ननेरं पुष्करनयननुं पुष्पकमेरीटिनान्।

पड़ा, वह (शूद्र) जो अरण्य में निश्चल हो अपना सिर नीचा किये लटक रहा था। श्रीरामजी ने उससे पूछा—'उत्तम तपोवल से युक्त तुम कौन हो? तुम किस उद्देश्य से प्रेरित हो ऐसी तपस्या कर रहे हो? तुम अपना उद्देश्य मुझे बता दो।" यह सुनकर बार-बार प्रणाम करते हुए उसने अपना उद्देश्य बता दिया—"शंबूक नाम का मैं एक शूद्र हूँ; ब्रह्म-स्वरूप के ध्यान में तपस्या कर रहा हूँ; मोक्ष पाना ही मेरा लक्ष्य है। साक्षात् भगवान् आप मुझे उपाय सुझा दें।" तब (राम ने) तलवार से उसका गला काट डाला और शंबूक की अभिलाषा पूर्ण हुई। ब्राह्मणकुमार तुरन्त जीवित हुआ और आदितेय लोगों ने पुष्प-वर्षा की। २० (देवों के साथ आकाश में खड़े) इन्द्र ने भगवान राम की ओर लक्ष्य करके कहा—"हम शीघ्र ही जाने की चिन्ता में (हैं) ऐसा जानिए। कुंभोद्भव अगस्त्य ने तपोवन में एक यज्ञ आरम्भ कर रखा है, जो बारह वर्षों से होता आ रहा है और हम उससे संतुष्ट हुए हैं। आज उसकी समाप्ति है; वहाँ तुरन्त पहुचने की चिन्ता में हम खड़े हैं; हे महाराजाधिराज! आप भी साथ चलें। हे नरपति! कल्याण के आलयस्वरूप अगस्त्य का दर्शन करने से आपका मंगल होगा।" शक्र आदि से साथ चलने का आग्रह सुनकर पुष्करनेत्र (राम) भी पुष्पक पर चढ़े और देवताओं के साथ अगस्त्याश्रम

देवकळोटुमगस्त्याश्रमं पुक्कीटिनान् देवेन्द्रादिकळ् तम्मॆप्पूजिच्चु मुनीन्द्रनुं। नाकलोकवुं पुक्कार् देवकळतु कालं राघवनगस्त्यनॆ नमस्कारवुं चॆय्तान्। ऎत्रयुं ऩऩ्ऩायितु वऩ्ऩतॆन्ऩरुळ् चॆय्तु भक्ति कैक्कॊण्टु पूजिच्चीटिनान् मुनीन्द्रनुं। विप्रसन्तापं तीर्प्पान् शंबूकन् तन्नॆक्कॊऩ्ऩु पुष्पकमेऱिभवान् वन्निट्टुण्टवयॆल्लां ३० वृत्रारि पऱञ्ञु ञान् मुन्नमे धरिच्चितु चित्तत्तिल् सदाकालं काणुन्नेन् भवानॆ ञान्। ऎत्रयुं सुखं वऩ्ऩु कण्टतिनाले पुनरत्रैव वसिक्कणं ञानुमायिऩ्ऩु भवान्। सत्पुरुषन्मारॆक्कण्टॆत्तुवान् पणियल्लो पुष्पकमेऱि ऩाळॆप्पॊयिक्कोळां पुलर्काले। इत्तरमरुळ् चॆय्तु पिल्पाटु चॆन्ऩु मुनि चित्रमायिरिप्पोराभरणं कण्टालुं नी। विश्वविस्मयकरमॆत्रयुं मनोहरं, विश्वकर्म्मावु तन्नॆ निर्म्मिच्चतॆन्ऩु नूनं। निनक्कु तऩ्ऩीटणमॆन्ऩुतान् मनक्काम्पिल् निनच्चु वसिक्कुम्पोळ् वन्नितु भवानिप्पोळ्। ऎन्ऩरुळ् चॆय्तु कॊटुत्तीटिनान् मुनीन्द्रनुं वन्दिच्चु वाङ्ङीटिनान् मानवश्रेष्ठन् तानुं। निन्तिरुवटिक्किंतु तऩ्ऩतारॆन्ऩुमॆनिक्कन्तरात्मनि धरिच्चीटुवानुण्टाग्रहं। ३८

में पहुँचे। मुनीन्द्र ने इन्द्र आदि का सम्मान किया। और देव लोग तब नाकलोक को चले गये। श्रीरामजी ने अगस्त्य को प्रणाम किया। 'आज आपकी उपस्थिति से धन्य बना हूँ' ऐसा कहते हुए मुनीन्द्र ने भक्ति सहित (राम को) नमस्कार किया। "विप्र-संताप (ब्राह्मण का शोक) दूर करने के लिए शंबूक का वध करने, पुष्पक पर आरूढ़ हो आप का आगमन आदि—। ३० वृत्रारि (शिव जी) के मुंह से मैंने पहले ही सुन रखा था; वैसे मैं सदाकाल आपको अपने अन्तःकरण में देखता ही रहता हूँ। आज आपका दर्शन करके अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ है; फिर आज मेरे साथ (यहीं) रहने का कष्ट करें। सत्पुरुषों को देख पाना कठिन कार्य है। फिर कल प्रातःकाल में ही पुष्पक पर चढ़ आप जा सकेंगे।" अगस्त्य मुनि ऐसा कहने के बाद (आश्रम के) भीतर जाकर (एक आभूषण ले आये और बोले कि) "अत्यन्त सुन्दर यह आभूषण आप देख लें। यह अत्यन्त मनोहर (आभूषण) विश्व-विस्मयकारी है और इसे निश्चय ही विश्वकर्मा ने स्वयं बनाया है। आपको देने का संकल्प लिये बैठा था कि आप अब स्वयं आ गये।" यह कहकर मुनीन्द्र ने (आभूषण) दे दिया और मानवश्रेष्ठ ने सादर प्रणाम कर (उसे) ग्रहण किया। (फिर भगवान राम बोले)—"आपको यह किसने दिया?, यह जान लेने की मेरे मन में बड़ी इच्छा है।" ३८

सुदेव चरितं

अेङ्किलो केट्टालुं ञी ञानिह त्रेतायुगे शङ्क कूटाते चेन्नेन् दण्डक वनत्तिङ्कल् । काणायि वन मद्धये निर्म्मल तटाकवुमूनं कूटातेयोरु शववुं कण्टेनतिल् । ञानोरु मुहूर्त्तमात्रं तत्र निल्क्कुन्नेरं काणायि-ताकाशान्ते शोभिच्च विमानवुं । तत्रैव विभूषण भूषित शरीरनाय् सिद्ध गन्धर्व दिव्यन्माराल् सेवितनायि आलवट्टवुं वेण्चामरवुं देवस्त्रीकळालस्यं तीरुमारुमन्दमाय् वीशुन्नतुं । वेणकोट्क्कुटतन् कीळेत्रयुं सुन्दरनाय् पङ्कजशरसमनायोरु पुरुषने कण्टु तान् निल्क्कुन्नेरं पोय्कयिलिळिञ्ञतुं कण्टोरु शवं तिन्नू देह शुद्धियुं चेय्तान् । ञानतु कण्टु चोदिच्चेनवनोटु मानुषशवमितु भक्षिक्कयिल्लारुमे । अेन्तोरु कष्टं ! भवान् देव सन्निभनेन्नालेन्तु कारणं शवं भक्षिप्पान् चोल्लीटणं ? अेन्नतु केट्टु परञ्ञीटिना-नेन्नोटवन् मन्नवन् सुदेवनेन्नुण्टायान् वैदर्भकन् । १० नंदनन्मा-रायवनिरुवरुण्टाय्वन्नु मुन्नेवन् श्वेतनहमनुजन् सुरथनुं । जनकन्-मरिच्च शेषं नृपनाय् वन्नेन् ञान् मनसिनिरूपिच्चेन् चिलनाळ् कळिञ्ञप्पोळ्— नृपत्वं कोण्टु कार्यमिल्लेनिक्किनियेतुं तपस्सु

सुदेव चरित

(अगस्त्य जी कह रहे हैं) "तो सुनिये, त्रेतायुग में मैं निर्भय दण्डक वन में पहुँचा। (वहाँ) वन-मध्य में एक निर्मल सरोवर और उसमें एक शव शरीर देखा। मैं क्षणभर के लिए वहीं खड़ा ही था कि आकाश में एक दीप्तिमय विमान दिखाई पड़ा। वहाँ आभूषणों से अलंकृत शरीरवाले सिद्ध-गन्धर्व आदि दिव्यात्माओं से परिसेवित हो, तथा आलस्य को दूर करने के लिए देव-कामिनियों से शुभ्र चामर डुलाते हुए, श्वेत छत्र के नीचे सुन्दर पंकज-शर (कामदेव) के समान आभायुक्त एक पुरुष को देखते हुए खड़े रहते समय, सहसा, देखा कि वह सरोवर में उतर कर उस शव का भक्षणकर (फिर तालाब के जल में स्नान करके) अपनी देह-शुद्धि कर रहा है। यह देखकर मैंने उससे कहा कि कोई मनुष्य का मृत शरीर नहीं खाता। लज्जा की बात है! आप तो देवतुल्य शरीरी हैं, फिर किस कारण शव खा रहे हैं? यह बता दें। यह सुनकर उसने कहा---"विदर्भ देश में सुदेव नाम का राजा हो गया था। १० उसके दो पुत्र हुए—जिनमें प्रथम श्वेत मैं हूँ और दूसरा सुरथ है। जनक (पिता) की मृत्यु पर मैं राजा बना। कुछ दिनों के बाद मन में विचार आया कि अब इस

चेय्तु गतिवरुत्तिक्कोळ्क नल्लू । ॲन्नु कल्पिच्चु राज्यं वाळिच्चु सुरथनें वन्नु ञानिप्पॊय्कतन् तीरत्तु पुक्कीटिनेन् । सत्गति वरुवानाय्तपस्सु चेय्तेन् चिर स्वर्गवुं पुक्कीटिनेनक्कालं विधिवशाल् । स्वर्गभोगङ्ङळनुभविच्चु वाळुंकालं दुःखवुं मुळुत्तिताहारमिल्लाय्क मूलं । क्षुत्पिपासादिकळ् कॊण्टॆत्रयुं दुःखिच्चु ञानब्जसंभवनोटु चॆन्नु चोदिच्चु कॊण्टेन् । स्वर्गलोकत्तिङ्कलाहारमिल्लाय्वान् मुन्नं दुष्कर्म्मं चॆय्तॆतॆन्तॆन्नतऱिञ्ञतिल्लयल्लो । आहारमॆनिक्कॆन्तॆन्नरुळिच्चॆय्तीटणं देहिभोजनं मम कारुण्य वारान्निधे ! ॲन्नतु केट्टु विधातावरुळिच्चॆय्तीटिनान् अन्नदानं नीयाक्कुं चॆय्यातॆ निन्टॆ देहं २० तन्नॆ नी भरिच्चतु कॊण्टिङ्ङल्लाहारवुमिन्नु पैदाहमुण्टावानतु तन्नॆ मूलं । निन्नुटॆ शवमुण्टु पॊय्कयिल्क्किटक्कुन्नु तिन्नालुमतु तन्नॆ नित्यवुमिनिभवान् । ॲत्रयुं स्वादुकरमायिरिक्कयुं चॆय्युं नित्यवुं तिन्नुं तोरुं नाशवुं वरायल्लो । अगस्त्यमुनीन्द्रनॆक्काण्मोळं तिन्क शवं अकृत्यमितु मतियॆन्नवन् विलक्कीटुं । ॲन्नरुळ् चॆय्तु धातावतिनालनेकं नाळ् तिन्नेन् ञान् मम शवमिन्नयोळवुं विभो ! निन्तिरुवटि तन्नॆ

राजत्व से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है, इसलिए तपस्या करके सद्गति पाना उचित होगा । ऐसा निश्चय करके सुरथ को राज्य देकर मैं इस सरोवर के तट पर आया था । सद्गति पाने के लिए फिर तपस्या की और विधिवश तब स्वर्ग में भी गया । स्वर्ग-सुख भोगते रहते समय आहार के अभाव में बड़ा दुःख हुआ । क्षुधा-पिपासा से आर्त मैंने अब्जसंभव (ब्रह्मा) के पास जाकर पूछा—"हे करुणानिधि ! स्वर्गलोक में आहार-विहीन रहने के लिए मैंने पहले ऐसा क्या दुष्कर्म किया, इसका मुझे पता नहीं है । इसलिए मुझ देही के लिए आहार का उपाय बता दीजिए ।" यह सुनकर विधाता बोले—"किसी को अन्नदान दिये बिना तुम अपना शरीर— । २० —मात्र भरते रहे, इसलिए यहाँ तुम्हें आहार-रहित होना पड़ा । भूख-प्यास का यही कारण है । तुम्हारा शव-शरीर उस सरोवर में पड़ा हुआ है, तुम जाकर उसे ही खाते रहो । वह अत्यन्त स्वादिष्ट लगेगा और नित्य खाने पर भी उसका अन्त नहीं होगा । अगस्त्य मुनीन्द्र से मिलने तक तुम शव खाते रहो । फिर वे इस दुष्कृत्य से तुम्हें निवृत्त कर देंगे ।" हे प्रभु ! ऐसा विधाता के कहने से आज तक कितने ही दिनों से मैं यह अपना शरीर खाता आ रहा हूं । मैं समझता हूँ कि आप ही कुंभ-संभव होंगे । अब मेरा कोई दूसरा नहीं है । ऐसा कहकर उसने मुझे

कुंभसंभवनेंन्नु चिन्तिच्चीटिनेनिनि मट्टोराश्रयमिल्ल। अँन्नुर चैय्तु मम तन्नानाभरणमितन्नु तोट्टुटनत्रमरन्नु शवमतुं। निर्म्मलन् विमानवुमेरिप्पोय् स्वर्ग्गं पुक्कान् धर्म्माधर्म्मङ्ङळरिन्नीटुवान् पणियल्लो। मानुष मृग पक्षि जातिकळारुमिल्ल काननमतु नूरु योजन विस्तारवुं कण्टु ञान् निल्क्कुन्नेरं तन्नभूषणमितु कौण्टलङ्करिक्कैन्नु कोटुत्तु मुनीन्द्रनुं। ३० मानव वीरनतु केट्टु चोदिच्चीटिनान् काननमतिलोरु जन्तुक्कळिल्लान्नतिन् कारण-मेन्नोटरुळ् चैय्यणमेन्न नेरं श्रीरामन् तन्नोटतुमगस्त्यनरियिच्चान्। अर्क्कवंशत्तिल् मुन्नमिक्ष्वाकु महीपति मुख्यनायुण्टाय् वन्नानवनु तनयन्मार् उण्टायार् नूरुजनमवरिलिळयवन् दण्डनेन्नरिन्नालु-मवनु मेलिलोरु दण्डमुण्टाय् वन्नीटुमेन्नतु मुन्ने तन्ने पण्डितनाय तातनरिन्नु वळिपोले। विन्ध्य सानु निशत योजन विस्तारत्तिल् बन्धुरमायिट्टोरु राज्यवुं तीर्त्तानल्लो। तत्रैव वाळिच्चितु दण्ड-नेज्जनकनुं नित्य सौख्येन वाणान् शुक्रनेंग्गुरुवाक्कि। पलनाळ् चैन्न कालमोरुनाळ् चैत्रमासि बलवान् शुक्रन् तन्नेक्कण्टु वन्दिप्पान् पोयान्। पर्ण्णशालान्ते विळयाटि निन्नीटुन्नोरु कन्यक तन्नेक्कण्टु काम पीडितनायान्। कन्यकयोटुं निज कांक्षितं परन्नप्पोळ्

यह आभूषण दिया और तब से वह शव-शरीर अदृश्य हो गया। निर्मल श्वेत विमान पर चढ़कर स्वर्गलोक चला गया। (अगस्त्य का कथन है कि) धर्म-अधर्म को पहचान लेना कठिन है। मनुष्य, पशु-पक्षी आदि से रहित वह सौ योजन विस्तार से युक्त कानन में देखता खड़ा रहा। फिर मुनीन्द्र ने 'इस आभूषण को धारण कीजिए' ऐसा (राम से) कहा। ३० यह सुनकर मानववीर ने पूछा—"इस वन के जन्तु-विरहित होने का कारण क्या है? आप मुझे बता दें।" तब श्रीराम जी को अगस्त्य ने समझाया—"अर्कवंश (सूर्यवंश) में पहले इक्ष्वाकु नामक महान राजा हो गये थे। उनके सौ पुत्र थे, जिनमें सबसे छोटा दण्ड था, ऐसा जान लीजिए। उसे भविष्य में भारी दुःख भोगना पड़ेगा, ऐसा ज्ञानी पिता ने पहले ही समझ लिया था। उन्होंने विंध्य के सानुप्रदेश में सौ योजन विस्तार का एक सुन्दर राज्य बनाया, जहाँ पिता ने दण्ड को बसा दिया। वह शुक्र को अपना गुरु मानकर नित्य सुख से रहने लगा। कई दिनों के बाद एक बार चैत्र महीने में वह महा पराक्रमी (दण्ड) शुक्र का दर्शन कर प्रणाम करने गया। तब पर्णशाला के द्वार पर सुशोभित एक कमनीय कन्या को देख वह कामज्वर से पीड़ित हुआ। कन्यका से अपनी

कन्यक तानुं चॊन्नाळधर्म्मं चॊल्लाय्क नी। ४० ऎन्नुटॆ जनकनॆ प्रार्त्थिच्चाल् निनक्कवर् तन्नीटुमॆन्नेयॆन्नालिल्ल वैषम्यमेतुं। अन्याय कर्म्मतु कूटातॆ काट्टीटुकिल् निन्नॆयुं मुटिच्चीटुमॆन्नुटॆ तातन् नूनं। ऎन्नु कन्यक चॊन्नतादरियातॆ बलाल् कन्यकतन्नॆप्पिटिच्च-पराधवुं चॆय्तान्। पिन्नॆत्तन् पुरत्तिनु वेगेन नटकॊण्टान् कन्यक-विषण्णयायाश्रमोपान्ते निन्नाळ्। व्याकुलंपूण्टुनिल्क्कुं पुत्रियॆक्कण्टु शुक्रन् शोकरोषेण पऱञ्ञीटिनानतु नेरं। दण्डनु पटयुं भण्डारवुं नाटुं वीटुं वॆण्णीऱाय्प्पोक पोँटि वरिषिच्चेळ्ळु दिनं। वापिका तीरस्थले वाळुक मकळे! नी तापवुमुण्टाय्वरा पोँटि वर्षत्तालेतुं। नाट्टिल् वाणीटुं द्विज तापसन्मारॆयॆल्लां नाट्टिनु पुऱत्तॊरु देशत्तु वसिप्पिच्चान्। तानुं नाट्टिनु पुऱत्ताम्मारु वाङ्ङिक्कॊण्टान् वानवर्कोनुं पोँटि वर्षिच्चानल्लो। नष्टमाय्च्चमञ्ञतु दण्डनुं नाटुमॆल्लां पॆट्टॆन्नु वनमायिच्चमञ्ञु दण्डराज्यं। ५० दण्डकवन-मॆन्नु चॊल्लुन्नतिन्मूलं; दण्डराज्यत्तिलुळ्ळ जनङ्ङळ् वसिच्चेटं चॊल्लुन्नु जनस्थानमॆन्नतु धरिच्चालुं चॊल्लिनान् दण्डनुटॆ वृत्तान्तमखिलवुं। संध्यावन्दनत्तिनु कालवुमटुत्तितु सन्तोषं कॊण्टु कालं पोयतुमोर्त्तिल्लल्लो। फलमूलादिकळुं भुजिच्चु रात्रौ मुनि

इच्छा प्रकट करने पर कन्यका ने कहा कि तुम ऐसा दुर्वचन मत कहो। ४० अगर तुम मेरे पिता से अपनी इच्छा कह दोगे तो वे मुझे तुम्हें दे देंगे और फिर तो कोई कठिनाई नहीं रही। उसके बिना अनधिकार चेष्टा करोगे तो मेरे पिता जी निश्चय ही तुम्हारा सत्यानाश करेंगे।" उस कन्यका के इस कथन को माने बिना उसने उस पर बलात्कार किया और फिर अपने राज्य को शीघ्र चला गया। उदास एवं खिन्न हो वह कन्यका आश्रम के द्वार पर खड़ी रही। व्याकुल खड़ी अपनी पुत्री को देख तब शुक्र ने दुःख एवं रोष से युक्त हो कहा—"सात दिन की निरन्तर धूलि-वर्षा से दण्ड के सेना, भण्डार, राज्य, भवन सब नष्ट हो जाएं।" फिर उन्होंने उस राज्य में निवास करनेवाले समस्त द्विजों, तापसों को राज्य के बाहर एक अन्य प्रदेश में ठहरा दिया। वे भी स्वयं राज्य के बाहर हट गये। तब इन्द्र ने धूलि-वर्षा आरम्भ की तथा दण्ड और उसका राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो गया। दण्ड का राज्य वन में परिवर्तित हुआ। ५० इसलिए उसे दण्डकवन कहा जाता है। उन दिनों दण्ड राज्य के (तपस्वी) लोग फिर वहीं आकर बस गये, इसलिए उसे जनस्थान भी कहलाता है, ऐसा जान लीजिए। मैंने दण्ड का पूरा चरित सुना दिया। संध्या-वंदना का

पलवृत्तान्तङ्ङळुं पऱञ्ञु केळ्प्पिच्चप्पोळ् मार्त्ताण्डोदयं कण्टु संध्यानुष्ठानं चेय्तु पार्त्थिवनगस्त्य पादांबुजं वणङ्ङिनान्। यात्रयुमयप्पिच्चु पुष्पकं करयेऱि पेर्त्तु वन्नयोद्ध्य पुक्कीटिनान् नृपेन्द्रनुं। ५६

अश्वमेध यागं

कैकेयीपुत्रनेयुं सुमित्रातनयनेयुं वैकाते तान् पोय वृत्तान्तङ्ङळ केळ्प्पिच्चुटन्। धन्यन्माराकुमनुजन्मारोटवनीशन् पिन्नेयुं गाढं गाढं पुणर्न्नु चौल्लीटिनान्। निङ्ङळेन्नात्मावायतिल्ल संशयमेतुं निङ्ङळ्क्कु वेण्टित्तन्ने राज्यवुं पालिक्कुन्नेन्। उण्टोरु यागं चेय्वानाग्रहमतु निङ्ङळ् खण्डिच्चु चौल्लीटुविन् साध्यासाध्यवुमेल्लां। मित्रनुं वरुणनुं चन्द्रनुं वित्तेशनुमेत्रयुं लोकोत्तरन्मारायार् कर्म्मं चेय्तु। निन्तिरुवटि चिन्तिच्चालोरु यागं चेय्वानेन्तोरु दण्डमेन्नु भरतनुर चेय्तान्। यागं चेय्कीटुन्नाकिलश्वमेधं चेय्यणं यागङ्ङळिलेल्लाट्टिलुमुत्तममश्वमेधं। एन्नु सौमित्रि रघुवरनोटुर

समय निकट आ गया; अत्यधिक आनन्द के कारण समय के बीतने का ध्यान नहीं रहा।" फल-मूल खाकर रात में मुनि ने कई कथाएँ कह सुनायीं। फिर सूर्योदय देख संध्यानुष्ठान से निवृत्त हो महाराज (राम) ने अगस्त्य के चरणकमलों में प्रणाम किया। (अगस्त्य ने) विदा किया और पुष्पक पर चढ़कर महाराज सानन्द अयोध्या वापस आये।

अश्वमेध यज्ञ

(श्रीराम जी ने) कैकेई-पुत्र (भरत) तथा सुमित्रा-तनय (लक्ष्मण) को तुरन्त अपनी यात्रा के समाचार सुना दिये। धन्य अपने भ्राताकुमारों को अवनीश (राम) ने फिर बार-बार गाढ़ भाव से छाती से लगाकर कहा—"तुम लोग मेरे प्राण हो, इसमें संशय नहीं है। तुम्हारे लिए मैं राज्य-शासन करता आ रहा हूँ। मेरे मन में एक यज्ञ करने की अभिलाषा है। उसके पक्ष-विपक्ष में तुम सोच-विचार करके तर्कयुक्त उत्तर दो। मित्र, वरुण, चन्द्र, वित्तेश (कुबेर), सब (यज्ञ) कर्म करके लोकोत्तर स्वरूप प्राप्त कर चुके हैं।" भरत ने कहा---"आप चाहें तो एक यज्ञ करने में कौन सी कठिनाई है।" "यज्ञ करना ही है तो अश्वमेध यज्ञ ही किया जाना चाहिए क्योंकि समस्त यज्ञों में वही सर्वोत्तम है" ऐसा सौमित्र ने राम से कहा और फिर उसके समर्थन में एक कथा भी सुनायी—

चेय्तान् पिन्नै मट्तिनौरु कथयुमुर चेय्तान्। मुन्नमुण्टायितोरु दैत्येन्द्रन् वृत्राधिपन् मुन्नूरुयोजनयुण्टुन्नतमुटलतिन्। वण्णवुं मून्नौन्नुण्टु कण्टोळं भयङ्करन् दण्डमेन्नियॆ शत्रुविजयं लभिप्पानाय् १० उग्रमां वण्णमवन् तपस्सु तुटङ्ङिनान् व्यग्रिच्चु मरञ्ञितु वासवनतिनाले। त्रैलोक्यमटक्कुवान् तपस्सॆन्नोर्त्तु शक्रन् पालाऴि पुक्कु पत्मनाभनॆ स्तुति चेय्तान्। योगनिद्रयुमुणर्न्तरुळिच्चेय्तु नाथन् लोकनायकनॆन्तु सङ्कटमॆन्तिवण्णं। वृत्रनामसुरनॆ निग्रहिच्चमरन्मार्क्कत्तल् तीर्त्तरुळेन्नु देवेन्द्रनुणर्त्तिच्चान्। भक्तनामवनॆ ञान् कॊल्लुकयिल्लॆन्ट्रे शक्त्या युद्धं चेय्तसुरनॆ निग्रहिच्चालुं भवान्। तापसनाय दधीचि तन्नोटस्थि वाङ्ङि शोभिच्च वज्रं विश्वकर्म्मणा तीर्प्पिक्क ती। वज्रं कॊण्टसुरनॆ निग्रहिक्कयुं चेय्यां विज्वरनायि स्वर्ग्गं पुक्कु वाऴ्क भवान्। इन्द्रनोटेवमरुळ् चेय्तयच्चोरु शेषं इन्दिरापति योगनिद्रयुं तुटङ्ङिनान्। वृत्रनॆ नारायणनरुळ् चेय्ततु पोलॆ सुत्रामा युद्धं चेय्तु निग्रहिक्कयुं चेय्तान्। नित्यवुं ब्रह्महत्या पापत्ताल् महेन्द्रनुं निद्राहारादिकळुं वशमल्लातॆयायि। २० वृन्दारकन्मार् मुनिमारुमायोर्त्तु कल्पिच्चिन्द्रनॆक्कॊण्टु वाजिमेधवुं चेय्यिप्पिच्चार्। नारिकळ् रजस्वलयायिरिक्कुन्तिटत्तु

"पहले वृत्र नाम का एक असुर था, जिसका तीन सौ योजन उन्नत शरीर और सौ योजन मोटा शरीर था। वह देखने में बड़ा भयंकर रूपवाला था। सहज ही शत्रुओं पर विजय पाने के लिए—। १० —उसने उग्र तपस्या आरम्भ की और उससे भयाकुल इन्द्र तुरन्त अदृश्य हुए। उसे त्रैलोक्य को अधीन करने के उद्देश्य से तपस्या-रत जानकर शक्र (इन्द्र) ने क्षीरसागर में आकर पद्मनाभ (विष्णु) की स्तुति की तो योगनिद्रा से जगकर स्वामी ने पूछा—"आप लोकनायक पर ऐसी क्या विपत्ति आ पड़ी है?" "वृत्र नामक असुर का संहार कर अमरों का दुःख आप दूर करें" ऐसी देवेन्द्र ने प्रार्थना की। "मैं अपने उस भक्त का अपने ही हाथों से वध नहीं करूँगा; आप युद्ध करके असुर का वध कर लीजिए। तपस्वी दधीचि की हड्डी लेकर आप विश्वकर्मा से सुन्दर वज्रायुध बनवा लीजिए। वज्रायुध से असुर को मार सकेंगे। इस प्रकार विजेता बन आप सुरलोक में वास कीजिए।" इस प्रकार समझा-बुझाकर इन्द्र को भेजने के बाद इन्दिरापति योगनिन्द्रा में तल्लीन हुए। नारायण के कहे अनुसार सुत्रामा (इन्द्र) ने युद्ध करके वृत्र का वध किया। ब्रह्महत्या के पाप से महेन्द्र नित्य निद्रा एवं आहार से रहित हो परेशान हुए। मुनियों से विचार

तीरिलें नुरयिलुं ब्रह्मघातकङ्कलुं चूतु सन्ततं पोरुतीटुन्न नरङ्कलुं पातकं तालिटत्तु पकुत्तु तल्कीटिनान् । इन्द्रनुं विशुद्धमाय् वन्नितु सुरलोकं तन्नेट्मश्वमेधं मट्टुळ्ळ यागङ्ङळिल् । सुमित्रात्मज वाक्यं केट्टु राघवन् चोन्नान् अमित्रान्तकनाय कर्दमपुत्रीसुतन् सूर्य सोमान्वयङ्ङळ् रण्टिनुमाद्यनायोरार्यनामिळन् भूमिपालिच्चु वाळुंकालं, मृगया विवशनाय्च्चेन्निळावृत्तं पुक्कार् मृगशाबाक्षि-कळाय्च्चमञ्ञु पुरुषन्मार् । नृपति तानुमोरु वनितयायानल्लो विपिनान्तरङ्ङळिल् सञ्चरिच्चीटुं नेरं; बुधनुं कण्टु निज भवने वच्चुकोण्टु शितिकण्ठनें स्तुतिच्चळवु जगन्नाथन्, प्रत्यक्षनाय् चोन्नानेन्नाले साध्यमल्ल भक्त्या पार्वतितन्नेस्सेविच्चे फलं वरू । ३० अन्नरुळ् चेय्तशेषमीश्वरि तन्नेच्चेन्नु वन्दिचु सेविच्चप्पोळरुळिच्चेय्तु देवि । ञानिह पातिवरं तरुवन् महादेवन् ताननुग्रहिक्कणं पातियुमेन्नेवरू । नारियायोरु मासं कळिञ्ञाल् पिन्ने मासं पुरुषनाये वाळ्क पिन्ने मानिनियायुं । इङ्ङने मासं प्रति कलर्न्नु

कर देवों ने इन्द्र से अश्वमेध यज्ञ कराया और इन्द्र के ब्रह्महत्या पाप को रजस्वला नारियों के बैठने का स्थान, पानी का फेन, ब्रह्मघातक तथा निरन्तर जुआसक्त—इन चारों स्थानों में विभक्त कर दिया। इन्द्र पवित्रात्मा बन सुरलोक में आये। इसलिए अन्य यज्ञों से अश्वमेध यज्ञ श्रेष्ठ है।" सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) का वचन सुनकर (उन्हीं का समर्थन करते हुए) राम ने कहा—"पहले प्रजापति कर्दम की पुत्री का पुत्र तथा सूर्य-सोम दोनों वंशों का आदिपुरुष महान इल नामक राजा हो गया, जो अपने शासन-काल में एक दिन अपने साथियों सहित मृगया-विवश हो, घूमते-घूमते इालवृत्त में पहुँच गया, जहाँ पहुँचते ही सारे पुरुष स्त्री रूप में परिणत हो गये। उस कानन में घूमते समय राजा भी एक वनिता के रूप में परिणत हो गया। उसे बुध ने देखा तो अपने भवन में ले गया और पाप-शान्ति के लिए जगन्नाथ शिव की स्तुति करवायी। तब प्रत्यक्ष हो शिव ने कहा कि यह कार्य मेरे लिए असंभव है, भक्ति से पार्वती की सेवा करने से ही लाभ होगा। ३० (शिव के) ऐसा कहने के उपरान्त ईश्वरी (पार्वती) के पास पहुँच कर पूजा-तपस्या की तो देवी ने कहा—मैं आधा वर दूँगी और आधा वर पाने के लिए महादेव की कृपा आवश्यक है। नारी के रूप में एक मास बिताने पर फिर अगले मास पुरुष बनोगे और फिर मानिनी (स्त्री), इस प्रकार एक-एक मास रहते हुए जब तुम पुरुष रूप में रहोगे उस समय तुम्हें अपने स्त्री-जीवन की याद नहीं

वाळ्ुं कालमंगनयाय् वाळ्ुंकालमुळ्ळवस्थकळोन्नु पुरुषनाय् वाळ्ुं-कालं तोन्नुकयिल्ल तानुं वरवुमेवं कोट्टुत्तीटिनाळ् भगवति। गर्भवुमुण्टाय् वन्नु बुध बीजत्तालप्पोळर्भकन् पुरूरवावुण्टायान् प्रसिद्धनाय्। सोमवंशत्तिङ्कलेय्क्कादि राजावुमवन् भूमियुं वानोर् नाटुमटक्कि वाणानल्लो। सोमनन्दनन् पिन्नेप्पर्वतादिक ळायमामुनिमारेयोक्के वरुत्ति चोल्लीटिनान्— शङ्कर शाप-त्तिनालिळनां नृपेन्द्रनुं सङ्कटमुण्टायतु तीर्क्कणं तिङ्ङ्ळेन्नु मेदिनीश्वरनेक्कोण्टश्वमेधं चेय्यिच्चु भूतेश प्रसादवुं वरुत्ति मुनीन्द्रन्मार्। ४० आशु भूपतिक्कुमोक्षं कोट्टुत्तरुळिनारीशनुं प्रसादिच्चु वरवुं नल्कीटिनान्। भूपतियवभृथस्नानवुं कळिच्चितु तापसन्मारुं प्रीति पूण्टेळुन्नळ्ळीटिनान्। अेत्रयुं महत्वमुण्टश्वमेध-त्तितेन्नु पृथ्वीशन् तन्नोटीशन्तानुमनुजन्मारोटरुळ् चेय्तु। तदनु सौमित्रियोटरुळ् चेय्तु रामन् विधिनन्दननाय वसिष्ठ मुनियेयुं, वामदेवादिकळां तापसेन्द्रन्मारेयुं भूमिदेवन्मारेयुं झटिति वरुत्तुक। भूमिपालकन्मारेयुमोक्कवे वरुत्तेणं सामोदं सुग्रीवादि वानरेन्द्रन्मारयुं; रक्षोवीरन्मारोटुं कूटि मल् भक्तनाकुं रक्षसांपति विभीषणनुं वन्नीटणं। दिक्कुकळ् तोरुमश्वं नटत्ति वन्नीटु नी लक्ष्मण!

रहेगी। इस प्रकार भगवती ने वर दिया। तब उसका बुध-बीज से गर्भ हुआ, जिससे सन्तान रूप में प्रसिद्ध पुरूरवा हुआ। वही सोमवंश का प्रथम राजा था, जिसने भूमि और स्वर्ग पर अधिकार कर शासन किया था। सोमनन्दन (पुरूरवा) ने पर्वतादि महामुनियों को निमंत्रित कर कहा—"शंकर के शाप से महाराज इल जिस संकट में पड़ा है, उसको दूर करने की आप कृपा करें। मुनीन्द्रों ने पृथ्वीपति से अश्वमेध यज्ञ कराकर भूतेश (शिवजी) का प्रसाद प्राप्त कराया। ४० तुरन्त भूपति को मुक्ति देकर शिव ने कृपापूर्वक वर भी प्रदान किया। भूपति ने अवभृथ स्नान किया और प्रसन्न हो मुनि लोग चले भी गये। तब पृथ्वीश से ईश (शिव) ने कहा था कि अश्वमेध यज्ञ अत्यन्त महत्वपूर्ण है।" उसके बाद राम ने सौमित्र को आदेश दिया कि विधिनन्दन वसिष्ठ मुनि, वामदेव आदि तापसों तथा भूमिदेवों (ब्राह्मणों) को तुरन्त बुला लाओ। समस्त भूमिपालों को भी निमंत्रित करना चाहिए। सानन्द सुग्रीवादि वानरश्रेष्ठों तथा राक्षस श्रेष्ठों सहित मेरे भक्त राक्षसराज विभीषण को भी बुला लाना चाहिए। हे लक्ष्मण! समस्त दिशाओं में मख (हेतु परिक्रमा) करके आओ। अब विलम्ब न हो, इसका ध्यान रखो। तुरन्त ही भरत जाकर नैमिष-

कालमेतुं वैकरुतङ्कि न्नी। सुरमन्दिरं पोलेंनैमिशक्षेत्रत्तिङ्कल् भरतन् तीर्प्पिक्कणं यागशालयु द्रुतं। भूपतिमाक्कुं वसिप्पानुळ्ळ गृहङ्ङ्ळुं तापसेन्द्रन्मार्क्किरिक्कानुळ्ळ गृहङ्ङ्ळुं। ५० चतुरंगत्तिनु वाणीटुवान् शालकळु सदनङ्ङ्ळुं नाना वर्णिणकळ्क्किरिप्पानाय्। अङ्ङाटितेरुवुकळ् वैद्यमन्दिरङ्ङ्ळुं मंगलगृहङ्ङ्ळ् विद्वान्माक्कुं रसिप्पानाय्; भण्डारं वैप्पानपवरकं विचित्रमाय् मण्डपङ्ङ्ळुं महासौध गोपुरङ्ङ्ळुं; धन धान्यादिकळुं न्नटत्ति वच्चीटुक मुनि विप्रादिकळ्क्कु दानं चेय्वतिनाय्; सुमन्त्राद्यमात्यन्माररुळ् चेय्तवयेल्लां सामोदं प्रवर्त्तिच्चारमितानन्दत्तोटे। राघवन् चतुरंग वाहिनियोटुं पुनराकुलं कूटाते कण्टखिल वाद्यत्तोटुं, शोभन मुहूर्त्तेन प्रस्थानं चेय्तु परमाभोगोत्सवं चेन्नु नैमिशक्षेत्रं पुक्कान्। तल्क्काले मुनीन्द्रन्मार् भूदेव प्रवररुं सल्क्कवि मुख्यन्मारुं नर्त्तकिमारुं वन्नार्। तङ्ङ्ळ् तङ्ङ्ळ्क्कुळ्ळोरु बिरुदु वाद्यङ्ङ्ळुं मङ्ङाते चतुरंगमाकिय सैन्यत्तोटुं तङ्ङ्ळालाय सल्क्कारङ्ङ्ळुमेंटुप्पिच्च् तुंगन्माराय महीपालरुं वन्नीटिनार्। ६० आकुलमैन्येयवरेक नायकनाय राघवन् तन्नेक्कण्टु काळ्चयुं वच्च शेषं, कैकेयीसुत सुमन्त्रादिकळ् बहुमानिच्चेकैक गृहं तोरुं सल्क्करिच्चिरुत्तिनार्।

क्षेत्र में सुर-मन्दिर के समान (उज्ज्वल) यज्ञशाला, भूपतियों के आवास स्थान तथा तापसेन्द्रों के निवासगृह बनवा दें। ५० चतुरंगिणी सेनाओं के ठहरने की शालाएँ, और नाना वर्ण के लोगों के रहने के भवन, हाट-बाजार, औषधालय, मंगलगृह, विद्वद्सभा, भण्डार की सुरक्षा के लिए भण्डार-घर, सुन्दर मण्डप, गोपुर, महासौध, सब तुरन्त बनवा दें। मुनियों-ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देने के लिए धन-धान्य भरकर रखें। सुमन्त्र आदि अमात्यों ने भी भगवान की आज्ञा मानकर सानन्द समस्त कार्यों का समुचित प्रबन्ध किया। सहर्ष राम चतुरंगिणी सेनाओं, सब प्रकार के सुन्दर वाद्यों तथा अन्य समस्त आडम्बरों, अलंकारों के साथ शुभ घड़ी में प्रस्थान कर नैमिषक्षेत्र में पहुँचे। तुरन्त ही मुनिवर लोग, भूदेव प्रवर लोग, श्रेष्ठ कविगण, नर्तकियाँ सब उपस्थित हुए। अपनी-अपनी उपाधियों, वाद्यों सहित चतुरंगिणी सेनाओं को लिये तथा अपनी-अपनी शक्ति के अनुरूप उपहार एवं भेंट की वस्तुएँ लेकर श्रेष्ठ महीपति लोग पधारे। ६० अनाकुल भाव से आगे बढ़ उन्होंने रामचन्द्र जी से मिलकर अपने साथ लाये पदार्थ भेंट में चढ़ाये तो कैकेई-सुत (भरत), सुमन्त आदि ने सादर उनका स्वागत-सत्कार कर (उनके लिए निर्मित) भवनों में

भोजन सुगन्धानुलेपनादिकळाले राजभोगङ्ङळ् कौण्टु सुखिच्चु यथोचितं। लक्ष्मणन् कुतिरयुं नटत्तिक्कौण्टु वन्नान् राक्षस प्रवरनुं वन्पटयोटुं वन्नान्। भास्करपुत्रन् कपिसेनयुमायि वन्नान् भास्करशिष्यनाय श्रीहनुमानुं वन्नान्। मानुष निशाचर वानर वीररेल्लां मानसमौरुमिच्चु तङ्ङळिलभेदमाय्, तन्नुटे गुरुवाय वसिष्ठ नियोगत्ताल् पौन्नु कौण्टौरु सीततन्नेयुं निर्म्मिच्चुटन्; राघवन् तिरुवटि यागवुं दीक्षिच्चितु नाकवासिकळेल्लां हविर् भागवुं कौण्टार्। काम्यङ्ङळाय धन धान्यादि वस्तुक्कळुं ब्राह्मणर्क्कनवधि नल्किनारेल्लावरुं। वस्त्र काञ्चन रत्न गोभूमि ग्रामङ्ङळुं वस्त्रङ्ङळ् सुवर्णरूप्यङ्ङळायुळ्ळवयुं, ७० भोजन धान्यङ्ङळुमेन्तु चौल्लावतोर्त्ताल् भाजनमेल्लावक्कुं सुवर्णमयमत्रे। उर्वीपालेन्द्रन्मारुमुर्वीदेवेन्द्रन्मारुं सर्वाभीष्टवुं लभिच्चेट्वुमानन्दिच्चार्। मर्त्यामर्त्यादि जन्तु सञ्चयं तृप्ति पूण्टार् इत्थ मारानुं यागं चेय्तवारुण्टो केळ्प्पान्। सुत्रामा कृतान्तनुं पाशियुं शशाङ्कनुं प्रद्युम्नादिकळुं पण्टिङ्ङने चेय्तीलारुं। मर्त्यमर्क्कट रात्रिञ्चरन्मारौरुमिच्चु वित्तमत्यर्थं वारिक्कोरि दानङ्ङळ्

ठहराया। वे भोजन-पदार्थों, सुगन्धियुक्त अनुलेपनों आदि से यथोचित राजभोग भोगते हुए सुखपूर्वक रहने लगे। लक्ष्मण (दिग्विजय के लिए भेजे गये) घोड़े को ले आये। राक्षस-प्रवर (विभीषण) अपनी विशाल सेना सहित उपस्थित हुए। भास्करपुत्र (सुग्रीव) कपिसेना सहित आये और भास्कर (सूर्य के) शिष्य हनुमान भी आ उपस्थित हुए। मनुष्य, निशाचर, वानर सबने अपने भेदभाव को छोड़ एकात्मना बैठकर, अपने गुरु वसिष्ठ जी के आदेशानुसार सोने की एक सीता बनायी। भगवान श्रीराम जी ने यज्ञ की दीक्षा ली और नाकवासी लोगों ने अपना हविर्भाग स्वीकार किया। ब्राह्मणों को सभी ने उनके इच्छानुसार धन-धान्य दान में दिये। वस्त्र, स्वर्ण, रत्न, गौएँ, भूमि, ग्राम, सुनहले वस्त्र—। ७० —भोजन, धान्य सबका क्या वर्णन किया जाए! सबके दानपात्र सुवर्ण के थे। उर्वीपालक (राजा लोग) और भूमिदेव (ब्राह्मण) लोग अपने सर्वाभीष्ट की सिद्धि पर अत्यन्त प्रसन्न हुए। मर्त्य-अमर्त्य सब प्राणि-वर्ग संतुष्ट हुए। ऐसा किसी ने कभी यज्ञ किया, ऐसा कभी सुनने में आया है! सुत्रामा (इन्द्र), कृतान्त (यमराज), पाशी (वरुण), शशांक (चन्द्र), प्रद्युम्न आदि किसी ने पहले ऐसा यज्ञ नहीं किया। मर्त्य-मर्कट, रात्रिचर सबने मिलकर हाथ भर-भरकर दान दिये। "सूर्यवंश के लिए अलंकार

चेय्तार्। सूर्यवंशालङ्कारभूत राघव ! जय शौर्य वारिधे ! जय रावणान्तक ! जय। राम ! राजेन्द्र ! दशरथनन्दन ! जय राम ! कौसल्यात्मज ! भाग्यवारिधे ! जय। इत्थ-मोरोरोजनं पत्तु दिक्किलुं निन्नु भक्त वत्सलनेक्कण्टत्यन्तं स्तुतिक्कयाय्। अश्रान्तमश्वमेधमीदृशं वर्त्तिक्कुन्नाळ् विश्रुतनाय मुनि मुख्यनां वाल्मीकियुं, ऋष्यगारान्ते कुशलवन्माराय निज शिष्यन्मारुमाय् वन्नु पुक्कानेन्नरिञ्ञालुं। ८० बालकन्मारोटरुळ् चेय्तितु वाल्मीकियुं कालेपोय् रामायणं नेरोटु गानं चेय्विन्। भूदेव मुनिवर भूपाल सभामद्ध्ये माधुर्यत्तोटु गानं चेय्तालु रामायणं। राजावु विळिप्पिक्किल् नाणं कूटाते चेन्नु राज-सन्निधियिङ्कलिरुन्नु गानं चेय्विन्। भूपति वीरन् निङ्ङळारेन्नु चोदिक्किलो तापसकुमारन्मार् ञङ्ङळेन्नुर चेय्विन्। निङ्ङळ्क्कु सम्मानमायेतानुं नल्कीटुकिल् ञङ्ङळ्क्कु फलमूलमोळिञ्ञु वेण्टाधनं, अेन्नुरचेय्तु वाङ्ङीटाय्केतुं धनं निङ्ङळेन्नु बोधिप्पिच्चयच्चीटिनान् वाल्मीकियुं। वासरमुख कृत्यङ्ङळ-नुष्ठिच्चु भासमानन्माराय बालन्मारिरुवरुं तापस भूपालक

स्वरूप हे राघव ! हे शौर्यवारिधि ! आपकी जय हो। हे रावणान्तक ! आपकी जय हो। हे राम ! हे राजेन्द्र ! हे दशरथनन्दन ! आपकी जय ! हे राम ! कौशल्यात्मज ! भाग्यविधाता ! आपकी जय हो।" —इस प्रकार एक-एक व्यक्ति भक्तवत्सल (राम) को देख दसों दिशाओं से स्तुति करने लगा। इस प्रकार अनवरत अश्वमेध का अनुष्ठान चल रहा था; तब विश्रुत मुनिनायक वाल्मीकि आश्रम-स्थल से कुश-लव नाम के अपने शिष्यों सहित उपस्थित हुए; ऐसा जान लें। ८० वाल्मीकि ने बालकों से कहा—"तुम लोग यथासमय जाकर विधिवत् रामायण का गान करो। भूदेवों, मुनिवरों, भूपालों से परिपूर्ण सभा-मध्य में रामायण का मधुर स्वर गान करो। अगर राजा बुलाएँ तो संकोच छोड़ राजा के सम्मुख उपस्थित होकर गान करो। अगर राजाधिराज यह प्रश्न करें कि तुम लोग कौन हो, तो तुम लोग अपने को तपस्वीकुमार बता देना। तुम्हें पुरस्कार में कुछ दें तो 'हमें फल-मूल को छोड़ धन की आवश्यकता नहीं,' ऐसा कहकर तुम लोग कुछ भी धन ग्रहण न करना", ऐसा समझा-बुझाकर वाल्मीकि ने उन्हें (रामायण का गान करने के लिए) भेजा। वासरमुख (प्रातःकाल) संध्या-कर्मों का अनुष्ठान कर दीप्तिमय दोनों तपस्वी बालकों ने तापसों, राजाओं तथा ब्राह्मणों की सभा में (रामायण का) गान किया। सुनते

भूदेव सभामद्ध्ये तापस कुमारन्मार् गानवुं चेय्तारल्लो। काव्य-मेंत्रयुं मनोमोहनं नानाजन श्राव्यमेन्नाशु रामभद्रनुं केट्टन्नेरं बालकन्मार वरुत्तीटुकेन्नरुळ् चेय्तु नीलनीरजनेत्रनन्नेरम मात्यन्मार् ९० तापस बालन्मारे वरुत्तियतु न्नेरं, भूपतितिलकने वन्दिच्चारवर्कळुं। गानं चेय्केन्नु नियोगिच्चतु केट्टन्नेरं आनन्दं पूण्टु गानं चेय्तितु बालन्मारुं। चोल्लिनारिरुपतु सर्गवुमन्नुतन्ने कल्याणप्रदं रामचरितं मनोहरं। अत्रयुं चित्रं चित्रं बालन्मारि-रुवर्क्कुं चित्त सन्तोषं वरुमारुटन् कोटुक्कणं, स्वर्णवुं पतिरेण्णा-यिरमेन्नतु केट्टु सुवर्णमाय पोन्नु कोटुत्तारतु न्नेरं। फल मूल-ङ्ङळोळिन्ञेन्तिनु ञङ्ङळ्क्कितु फलमिल्लितुकोण्टु ञङ्ङळ्क्केन्न-ट्रिन्ञालुं। अतुकेट्टवरवर् बहुमानिच्चारेटं अतुल गुणवान्मारिव-रेन्नट्रिन्ञालुं। सारस विलोचनन् बालकन्मारोटु चोन्नानारितु चमच्चतु निङ्ङळारिरुवरुं। चमच्च कवि श्रेष्ठनेविटे वसिक्कुन्नु? समस्त वृत्तान्तवुं चेल्लिवनेन्नतु न्नेरं। इक्काव्यं चमच्चतु वाल्मीकि महामुनि सर्गवुमञ्ञूरुण्टु मुनिशिष्यन्मार् ञङ्ङळ्। १०० गोमती तीरे मुनीन्द्राश्रमे वसिक्कुन्नु, कोमळमाय काव्यं केळ्क्केण-

---

ही रामचन्द्र ने कहा—"यह अत्यन्त मनोहर काव्य है और नाना प्रकार के लोगों के सुनने योग्य है।" नील नीरज-नेत्र (नील कमल-लोचन राम) ने बालकों को बुलाने का आग्रह किया। तब अमात्यों ने—। ९० तापसकुमारों को (राम के समीप) पहुँचा दिया और उन्होंने राजश्रेष्ठ को प्रणाम किया। गान सुनाने का आदेश होते ही कुमारों ने सहर्ष गान किया। उन्होंने उस दिन कल्याणप्रद एवं मनोहर रामचरित के बीस सर्ग गाये। "अत्यन्त आश्चर्य है! अत्यन्त आश्चर्य है! दोनों बालकों को सन्तुष्ट करने के लिए अठारह सहस्र स्वर्णमुद्राएँ दी जानी चाहिए" ऐसा (राम का) आदेश होते ही उन्हें स्वर्णमुद्राएँ दी गयीं। "फल-मूल के अतिरिक्त ये हमें किस काम की हैं। इनसे हमारा कोई प्रयोजन नहीं", (ऐसा कुमारों ने कहा) यह सुनकर समस्त लोगों ने भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि ये अतुलनीय गुणी हैं। श्रीराम जी ने बालकों से पूछा—"यह किसकी रचना है? और तुम दोनों कौन हो! इसके रचयिता कवि-श्रेष्ठ कहाँ हैं? समस्त वृत्तान्त बता दो।" (तब बालकों ने कहा—) "यह काव्य महामुनि वाल्मीकि ने रचा है और इसके पाँच सौ सर्ग हैं। हम मुनि के शिष्य हैं। १०० हम गोमती नदी के तट पर मुनीन्द्र के आश्रम में रहते हैं। अगर यह मधुरकाव्य सुनने की इच्छा है तो यज्ञ-कृत्य के

मेन्नाकिलो यज्ञकृत्यानन्तरं मद्ध्याह्नं कळिञ्ञालिङ्ङज्ञान विनाशनं केळ्प्पिक्कामखिलवुं। मन्नवनतु केट्टु पिट्टेन्नाळतु केळ्प्पान् तन्नुटे बन्धुक्कळुमायोरुम्पेट्टानल्लो। कैकेईतनयादि सोदर वीरन्मारुं साकेत वासिकळुं मन्त्रिकळ् सामन्तन्मार्, नाना देश्यन्माराय भूपाल वीरन्मारुं वानर कदंबवुं राक्षस प्रवररुं, तापसवरन्मारुं ब्राह्मण निकरवुं व्यापार निरतन्माराकिय वैश्यन्मारुं, पादजादिकळाय नाना वर्णिकळ् चुळ्न्नादरालास्थान सिंहासने मरुविनार्। सरसमाय काव्यं केट्टोरु महाजनं परमानन्दं पूण्टु चमञ्ञितेल्लावरुं। अङ्ङने चिलदिनं केट्टितु रामायणं मंगलप्रदं मोक्षसाधनं मनोहरं। तल्क्काले सीतादेवि तन्नुटे पुत्रन्मारेन्नुळ्ळक्काम्पिलरिञ्ञितु राघवन् तिरुवटि। ११० गोमती तीरे वाळुं वाल्मीकि तन्नेक्काण्मान् रामभद्रनुमोरु दूतने नियोगिच्चान् जानकी देवि शुद्धयेङ्किल् कैक्कोळ्ळामल्लो नानालोकरुं काण्के प्रत्ययं चेय्तीटणं। एन्नतु दूतन् चोन्न नेरत्तु वाल्मीकियुं तन्नितु नाळेत्तन्ने सत्यं चेय्यिक्कामल्लो। एन्नु वाल्मीकियरुळ् चेय्ततु केट्टु दूतन् वन्नु रघुवरन् तन्नोटुणर्त्तिक्कयुं चेय्तान्। उण्टल्लो

बाद मध्याह्न वेला समाप्त होने पर समस्त अज्ञानविनाशक (राम चरित) को सुनाएँगे।" यह सुनकर महाराज ने अपने आत्मीयजनों सहित अगले दिन उसे सुनने का प्रबन्ध किया। भरत जैसे भ्राता लोग, साकेतवासी लोग, मन्त्रि-सामन्तगण, नाना देशों से आगत भूपति लोग, वानर-समूह, राक्षस प्रवर, तापसगण, ब्राह्मणवृन्द, व्यापार-निरत वैश्य लोग, पादज (शूद्र) आदि नाना वर्ग के लोग, सब आस्थान मंडप में आ उपस्थित हो गये। रसमय रामकाव्य सुनकर, समस्त जनता परमानन्द में तल्लीन हुई। इस प्रकार मोक्षदायक, मंगलप्रद एवं मनोहर रामायण की कथा कुछ दिन तक सुनी। तब तक भगवान राम ने मन में यह समझ लिया कि ये कुमार सीतादेवी के पुत्र हैं। तुरन्त रामचन्द्र जी ने गौतमी तट-वासी वाल्मीकि के दर्शनार्थ एक दूत को भेजा। ११० 'जानकी देवी पवित्र है तो उसे स्वीकार किया जा सकता है, किन्तु समस्त जनता के सामने प्रमाण दिया जाना चाहिए' ऐसा (राम-सन्देश) दूत के कहने पर "ठीक है, ठीक है, कल ही सत्य प्रतिज्ञा करायी जाएगी", ऐसा वाल्मीकि का कथन सुन दूत ने आकर श्रीराम जी को सन्देश दिया। "कल सीता का शपथ होगा, कल तापस आदि समस्त महाजन देख लें।" यह सुनकर समस्त लोकवासी जन प्रशंसा करने लगे। वन्द्य वाल्मीकि सहर्ष निकल

ऩाळॆ सीत शपथं महाजनं कण्टु कॊळ्ळणमतु तापसादिकळॆल्लां। ऎऩ्ऩतु केट्टु महालोकरुं प्रशंसिच्चार् वन्द्यनां वाल्मीकियुमादराल्-प्पुऱप्पॆट्टान्। श्रीभगवतियोटुं विरिञ्चन् वरुंपोलॆ तापसोत्तमन् सीतादेवियुमायि वऩ्ऩान्। पारिल् कुलनारीवरमारिवळोटु ऩेरायिक्काण्मानिल्ल केळ्प्पानुमिल्ल नूनं। ऎऩ्ऩॆल्लां प्रशंसिच्चार् कण्टुनिऩ्ऩवरॆल्लां अऩ्नेरं वाल्मीकियुं राघवनोटु चॊऩ्ऩान्। सत्यमॆन्नियॆ पऱञ्ञऱिविल्लॊरु ञाळुं पृथ्वीनन्दनयाय जानकि देविक्केतुं १२० दूषणमिल्लॆऩ्ऩॊरु सत्यं ञान् चॆय्तीटुवन्, योषमार् मणियाय लक्ष्मियायतुमिवळ्; निनक्कु शङ्क तीर्ऩ्निल्लङ्किलो नी चॊल्लियालनत्थं कूटातॆकण्टवळऱियिक्कुं। निन्तिरुवटि पऱञ्ञालतु तन्नॆ मति चिन्तिच्चु कण्टालितिनु मीतॆयिल्लॊरु सत्यं। वह्निदेवनुं महादेवनुं विरिञ्चनुं अन्य देवन्मारुमितन्नोटु चॊऩ्ऩारल्लो। अन्धनाय् विचारमिल्लाय्कयालुपेक्षिच्चेन् निन्ति-रुवटियतु पॊरुत्तु कॊळ्ळॆणमे। मट्टु ञानपवादं पेटिच्चु तन्नॆ चॆय्तेन् कुट्टमिल्लिवळ्क्कॆऩ्नऱियातिल्लयल्लो। इन्निनि महाजन-मऱियुमाऱु सत्यं धन्ययामिवळ् चॆय्तीटट्टपवादं तीर्प्पान्। अऩ्नेरं ब्रह्मावादियायुळ्ळ देवगणं वऩ्ऩॊक्कॆ निऱञ्ञिताकाशान्ते विमानाग्रे।

पड़े। भगवती के साथ जैसे ब्रह्मा, वैसे सीता जी को साथ ले उत्तम तपस्वी वाल्मीकि (यज्ञशाला में) आ गये। संसार में इनके समान श्रेष्ठ कुल-नारी न देखी गयी है, न सुनी गयी है, दर्शकों ने इस प्रकार प्रशंसा की। तब वाल्मीकि ने श्रीराम से कहा—"हे श्रीराम जी ! मैं सत्य छोड़ कुछ नहीं बोला करता। पृथ्वीसुता सीतादेवी किसी भी प्रकार के दोष से मुक्त हैं, यह मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। यह नारीरत्न लक्ष्मी हैं। १२० अगर आपका सन्देह दूर नहीं हुआ, तो आपके कहने पर वह स्वयं निस्संकोच सत्य का प्रमाण देगी।" "आपका कथन ही पर्याप्त है। सोचें तो इसके परे कोई सत्य नहीं है। अग्निदेव, महादेव, ब्रह्मा जी तथा अन्य देवों ने भी यह बात मुझे बतायी थी। मैंने अन्धा बनकर, अविवेकी बनकर इसका परित्याग किया, आप क्षमा करें। फिर मैंने अपयश से भयभीत हो ऐसा किया था, —यह निर्दोष है, यह बात मुझसे छिपी हुई नहीं है। आज उस अपयश का निराकरण करने के लिए जनता के सामने यह धन्य-स्वरूपिणी स्वयं शपथ लें।" (ऐसा राम ने कहा।) तब ब्रह्मा आदि देवगण आकाश मार्ग में विमान पर आ विराजमान हुए। जब मनुष्य, राक्षस-प्रवर, वानर, मुनिगण, द्विज लोग सब (सभामंडप

मानुज जनङ्ङळुं राक्षस प्रवररुं वानरन्मारुं मुनि वृन्दवुं द्विजन्मारुं वन्नीक्कॆ तिरञ्ञप्पोळुण्टायितॊरु चित्रं, मन्दनाय् शैत्य सौरभ्यादियां गुणत्तोटुं १३० वन्नॊरु समीरणन् वीशिनानॆल्लाटवुं, वन्नोरानन्दं पूण्टु मरुविनारॆल्लावरुं। परमगुणवतियाकिय सीतयप्पोळ् वरनॆत्तन्नॆ नोक्कि कण्णुनीर वार्त्तु वार्त्तु खेदमॆन्नयुं तिरञ्ञुळ्ळ मानसत्तोटुं मेदिनीपुत्रि पऱञ्ञीटिनाळतु नेरं। सत्यं ञान् चॊल्लीटुन्न-तॆल्लावरुं केट्टुकॊळ्विन् वृत्तमॆन् पतिन्नालु पेरुमुण्टऱिञ्ञिट्टु; भर्त्तावुतन्नॆयॊऴिञ्ञन्य पुरुषन्मारॆ चित्तत्तिल् कांक्षिच्चेनिल्लेकदा मातावे ! ञान्। सत्यमितॆङ्किल् मे नल्कीटॊरनुग्रहं सत्यमातावे ! सकलाधारभूते ! नाथे ! तल्क्षणे सिंहासनगतयाय् भूमि पिळर्न्नक्षीणादरं सीततन्नॆयुमॆटुत्तुटन् सस्नेहं दिव्यरूपं कैक्कॊण्टु धरादेवि रत्नसिंहासने वच्चाशु कीऴ्प्पोट्टु पोयाळ्। विश्व-मातावु पाताळान्ते पोय् मऱञ्ञप्पोळ् विश्वं निश्चलमायितन्नेरं तन्नॆ। विस्मयप्पॆट्टु निन्नार् कण्टु निन्नवरॆल्लां, सस्मितं पुष्प-वृष्टि चॆय्तु देवकळॆल्लां। १४० कण्णुनीर वार्त्तु वार्त्तु कुम्पिट्टु निन्नीटिनान् मन्नवन् तानुमर नाऴिक नेरं पिन्नॆ। वन्न कोपत्तोटु

में) आ उपस्थित हुए तब एक विचित्र घटना घटी। सुगन्धमय पवन मन्द-मन्द आ सबका आश्लेष करने लगा। तब सब लोग परमानन्द से रहने लगे। १३० तब परमगुणवती सीतादेवी अपने पति को देख निरंतर अश्रुधारा बहाती हुई तथा मन में अत्यन्त दुःख अनुभव करती हुई कहने लगी—"मेरा सत्यवचन सब लोग सुन लें। (वायु, सूर्य, अग्नि आदि) चौदहों देवता लोग मेरे चरित्र से अवगत हैं। हे माता ! मैंने अपने स्वामी के अतिरिक्त किसी पर-पुरुष की कांक्षा नहीं की। हे सत्य-स्वरूपिणी माता, हे सकलाधार भूते ! हे स्वामिनी ! अगर यह (मेरा) कथन सत्य है तो मुझे आशीष दीजिए।" तुरन्त ही भूमि फट गई। भूमिदेवी सिंहासनस्था एक दिव्यसुन्दरी का रूप धारण कर आयी और सस्नेह सीता को सिंहासन पर बिठाकर भूमि के अन्दर चली गयी। इस प्रकार विश्वात्मा के पाताललोक को जाते ही तुरन्त विश्व निश्चल हो गया। दर्शक लोग आश्चर्यान्वित खड़े रह गये; सस्मित देवगण ने पुष्प-वर्षा की। अश्रु बहाते-बहाते महाराज (राम) आधी घड़ी तक आनत मुख खड़े रहे। १४० फिर अत्यन्त रोषाकुल हो राम ने भूमि से कहा—"मेरा अभिमत समझे बिना मेरे सामने से सीता को ले चलना अन्याय है, यह मैं अभी दिखा दूंगा। मैं भूतल को जलमग्न कर यह दिखाऊँगा कि भविष्य

चौल्लीटिनान् रामन् भूमि तन्नोटु मम मतमेन्तेन्नु धरिक्कातें ऎन्नुटॆ मुम्पिल् निन्नु सीतयॆक्कोण्टुपोयतन्यायमॆन्नु वरुत्तीटुवनधुना ञान्। भूतलं जलमयमाक्कुवनिन्ने मुतल् भूतङ्ङळ् नालेयुळ्ळू नूनमॆन्नाक्कीटुवन्। क्रुद्धनाय् रामचन्द्रनित्थं चौन्नतु नेरं सत्वरं परित्रस्तयायितु भुवनवुं। अन्नेरं प्रजापति तानुं देवकळुमाय् वन्नितु चतुर्म्मुखन् रामचन्द्रोपान्ततत्तिल्। पत्मलोचनन् वीणु नमस्कारवुं चॆय्तु पत्मसंभवन् तानुमरुळि चॆय्तानप्पोळ्—ऎन्तीरु बन्धमित्र कोपमुण्टावानिप्पोळ् चिन्तिच्चु काण्क नीयारॆन्नतु परमात्थं। वैदेहियोटुं कूटि मेलिलुं वाळामल्लो खेदवुं कूटातॆ कण्टानन्द समन्वितं। मुख्यमां मनुष्य जन्मत्तिङ्कलेल्लावर्क्कुं दुःख सौख्यङ्ङळिट कलर्न्नुण्टरिक नी। १५० वाल्मीकि चौन्न काव्यमायतु रामायणमामोदं वश्माद्रु शेषवुं केट्टीटुन्नी। ऎन्नाल् निन्नुटॆ मायामोहमॆल्लामे नीङ्ङुमॆन्नरुळ् चॆय्तु मरञ्ञीटिनान् विधातावुं। माधुर्यमोटु कुशलवन्मार् गानं चॆय्तार् सामोदं रामायणं केट्टितु समस्तरुं। अत्भुतमवभृथस्नान घोषङ्ङळ् चौल्वान् सर्प्पराजनुं पणि वाग्भंगि पोरायल्लो। नाना देश्यन्माराय राजाक्कन्मारॆयॆल्लां आनन्दिप्पिच्चु परञ्ञयच्चु रघुवरन्। सुग्रीवादिकळाय वानररॆयुं तदा राक्षसप्रवरनाकुं विभीषणनॆयुं,

---

में केवल चार ही भूत रहेंगे।" रोषाकुल राम के यह कहते ही भूमि तुरन्त संत्रस्त हो उठी। तब ब्रह्मा देवों-सहित रामचन्द्र जी के पास आ पहुँचे। पद्मलोचन (राम) ने चरणों में पड़कर प्रणाम किया। तब पद्मसम्भव (ब्रह्मा) ने कहा—"अब ऐसा क्रोध दिखाने की क्या बात हुई! सोचकर देखें कि आप वास्तव में कौन हैं? बिना किसी दुःख के (भविष्य में भी) वैदेही के साथ आनन्द समन्वित जीवन बिता सकेंगे ही। इस मनुष्य-जन्म में सुख-दुःख बारी-बारी से सबको भोगना पड़ता है, यह आप जान लें। वाल्मीकि-रचित रामायणकाव्य का शेष अंश भी आप सानन्द सुन लें। १५० तब आपका सारा माया-मोह दूर होगा," यह कह विधाता अदृश्य हो गये। कुश-लव ने मधुर स्वरों में रामायण का गान किया और उसे सुनकर समस्त लोग प्रसन्न हुए। विस्मयजनक अवभृत स्नान की महिमा गाने का वाग्विलास (हज़ार जिह्वावाले) सर्पराज को भी प्राप्त नहीं है, अतः वे भी इसका वर्णन करने में असमर्थ हैं। नाना देशों से आये राजाओं को श्रीराम जी ने सानन्द विदा किया। सुग्रीव आदि वानरों, राक्षसराज विभीषण और विशेष कर जगत्प्राण-पुत्र (हनुमान) को अत्यन्त प्रसन्न कर भेजने के

भक्तनां जगल् प्राणपुत्रनें विशेषिच्चुं चित्तानन्देन यात्र विधिच्चोर-नन्तरं तापस द्विजवरन्मारेयुमयच्चति शोभयोटयोद्धयये प्रापिच्चु पटयोटुं। धर्म्मेण जगत्त्रयं पालिच्चु वाळुं कालमम्ममार् परलोकं प्रापिच्चारेल्लावरुं। पैतृक कर्म्मं मुदा चेय्तितु पुत्रन्मारुं भूदेवन्माक्कुं धनरत्नङ्ङळ् दानं चेय्तु। १६० अमर्त्यालये दशरथनोटीरुमिच्चु वाणीटिनारवरुं चिरकालं। अङ्ङने रामादिकळ् वाळुन्नाळीरुदिनं मङ्ङात गजाश्वरत्नाभरणादिकळुं कोटुत्तु पुरोहितन् तन्नेयुमयच्चितु पट्टत्वमेरुं युधाजित्तु केकयनृपन्। अवनु मयोद्धयपुक्कवयेल्लामे पुनरवनीपतीन्द्रनु कोटुत्तु कण्टीटिनान्। अवयेल्लामे परिग्रहिच्चु नराधिपन् अवनें वळिपोलें पूजिच्चु सम्मानिच्चान्। सादरमवनोटु चोदिच्चु रघुपति मातुलन् सुखेन वाळुन्नितो राज्यत्तिङ्कल्। ॲन्तोन्तु विशेषिच्चु चोल्लिविट्टतुमेल्लां सन्तोषत्तोटु भवानेन्नोटु चोल्लीटणं। ॲन्नतु केट्टु पुरोहितनुमुरचेय्तु तन्नायि सुखेन वाळुन्नितु नृपाधिपन्। चोल्लिविट्टवस्थकळ् केट्टालुमेङ्किल् भवान् वल्लभमेरेयुळ्ळ गन्धर्वप्रवरन्मार्, पूर्वसागर तीरे शैलूष तनयन्मार् मेविनार् मून्नु कोटिप्पटयुमाये नित्यं। १७० अवरे युद्धं चेय्तु जयिच्चीटुकिलिप्पोळ् अविटमोरु

उपरांत तापसों-ब्राह्मणों को भी विदा करके (श्रीराम जी) अपनी सेना तथा बंधुवर्ग के साथ अयोध्या में आ गये। विधिवत् त्रिभुवनों का परिपालन करते समय माताएं परलोक को प्राप्त हुईं। पुत्रों ने खूब मृत्यु कर्म किये तथा भूदेवों (ब्राह्मणों) को धन-रत्न दान में दिये। वे (माताएँ) अमरालय में पहुँच दशरथ के साथ चिरकाल तक रहीं। १६० इस प्रकार राम आदि के (सुखपूर्वक) रहते समय, एक दिन हाथी, घोड़े, रत्नाभूषण आदि के साथ पुरोहित को केकयराज युधाजित ने भेज दिया। वह अयोध्या में पहुँच उन सब चीजों को उपहार में देकर अवनीपतीन्द्र (राज-श्रेष्ठ राम) से मिला। वे सब (भेंट की वस्तुएं) ग्रहण कर नराधिप (राम) ने उसका यथानुकूल स्वागत-सत्कार किया और उससे रघुपति ने पूछा—"क्या मामा सुखपूर्वक रहते आ रहे हैं? उन्होंने जो संदेश भेजा है, उसे आप सानन्द मुझे सुना दें।" यह सुनकर पुरोहित ने कहा—"महाराज सकुशल हैं। आप उनका संदेश सुनिए—पूर्वसागर के तट-प्रदेश में अत्यन्त वैभवशाली गन्धर्व शैलूषपुत्र तीन करोड़ अपनी सेना सहित रहते आ रहे हैं। अगर उन्हें युद्ध में जीत लें तो वहाँ अब एक राज्य की स्थापना कर सकेंगे।" १७० राजाओं के राजा (राम) ने यह

राज्यमाक्कि वाणीटामल्लो । मन्नवर् मन्ननतु केट्टु सन्तोषत्तोटे तन्नुटे सहजनां भरतनोटु चॊन्नान्— पोकणं भवानर्त्थं पुरुषाकारत्तोटुं केकयराज्यत्तिन्नित्तापसवररोटुं धीरन्माराय सेनापति वीरन्मारोटुं वारण वाजि रथ कालाळां पटयोटुं अर्त्थवुं वेण्टुवोळं कॊण्टु पोय्कोळ्क वेणं युद्धं चेय्ताशु गन्धर्वन्मारे निग्रहिच्चाल् तक्षकनेयुं तथा पुष्कलनेयुं तत्र शिक्षिच्चु रण्टु राज्यत्तिङ्कलुं वाळिच्चु नी वैकाते वन्नीटुक पुत्रन्मारिरुवर्क्कुं केकयन्मारेत्तुणयाक्किप्पोरिक भवान् । १७७

गन्धर्व-निग्रहं

भूपति तन्नेत्तोळुतन्नेरं भरतनुं शोभनमाय मुहूर्त्तं कॊण्टु पुऱप्पेट्टान् । पक्षिकळ् मृगङ्ङळुं भूत पैशाचङ्ङळुं भक्षणार्त्थिकळ् कूटे मुन्पिले नटकॊण्टार् । केकयराज्यं चॆन्नु पुक्कितु भरतनुं भगिनी तनयनेप्पुणर्न्नान् युधाजित्तुं । तन्नुटे पटयोटुं कूटवे पुऱप्पेट्टान् चॆन्नु गन्धर्वन्मारोटेट्टितु महाबलं । एळुहोरात्रमोरुपोले युद्धवुं चेय्तु कोळ्पूण्टितु पटय्क्कन्नेरं भरतनुं; कालास्त्रं प्रयोगिच्चु गन्धर्वन्मारेयेल्लां कालमन्दिरं प्रापिप्पिच्चितु लघुतरं । ऒट्टुङ्ङ् मून्नु

(संदेश) सुनकर सन्तुष्ट हो अपने भ्राता भरत से कहा—"तुम अब इस तापसवर के साथ पर्याप्त धन और सैनिक लेकर केकयराज्य को जाओ। धीर सेनापतियों, हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सेनाओं सहित आवश्यक धन ले जाओ। युद्ध करके, गन्धर्वों का वध कर (अपने पुत्र) तक्षक तथा पुष्कल को आवश्यक परामर्श दे दोनों राज्यों के अधिपति बनाकर तथा उनके संरक्षण का भार केकयराज को सौंपकर तुम अविलम्ब वापस आ जाओ। १७६

गंधर्व-निग्रह

महाराज (राम) को प्रणाम कर भरत शुभ घड़ी में निकल पड़े। (भरत के शुभ शकुन के रूप में) शव खानेवाले पशु-पक्षी, भूत-पिशाच आदि आगे-आगे चले। भरत केकयराज्य में पहुँचे तो युधाजित ने अपनी भगिनी के पुत्र (भानजे) को गले से लगाया। (भरत के सहायतार्थ) वे अपनी सेना लेकर साथ चले और (सागर-तट) पहुँचकर विशाल सेना ने गन्धर्वों पर आक्रमण किया। सात दिन-रात युद्ध चलता रहा, तब (भरत की) सेना मन्द होती गयी। तब भरत ने कालास्त्र का प्रयोग कर समस्त गन्धर्वों को अनायास कालपुरी भेज दिया। इस प्रकार तीन करोड़ सेना

कोटिप्पटयुं गन्धर्वन्मारटङ्ङि राज्यं रण्टु कोट्टयुमतु कालं। अञ्चु वत्सरं कोण्टु राज्यशिक्षयुं चेय्तु किञ्चनभयं विना पुत्रन्मारेयुं तत्र वाळिच्चु केकयनेभारमेल्पिच्चु तानुं घोषिच्चु पुरप्पेट्टु वन्नयोद्धययु पुक्कान्। रामचन्द्रनेक्कण्टु वन्दिच्च वृत्तान्तङ्ङळामोदं वरुमारु केल्पिच्चानखिलवुं। १० अंगदनेयुं चन्द्रकेतुवामवनेयुमेङ्ङिने वाळिक्काव्र चोल्लुविनेन्नन्नेरं; मतिमानंगदने वाळिक्कामिनित्तारापथमामवनियिलेन्नितु भरतनुं; चन्द्रकेतुविनेयुं वाळिक्कामल्लो पिन्ने चन्द्रकान्तत्तिङ्कल् निर्म्मिच्चोरु पुरंवरे। अङ्किलो तारापथे वाळिक्केन्नभिषेकं अंगदन् तनिक्कु चेय्तरुळिच्चेय्तु नाथन्। मंगलं वरुमारु पश्चिम दिशि भवान् अंगदनेयुं कोण्टु पोक सौमित्रे! शीघ्रं। चन्द्रकान्ताख्य देशे वाळुकेन्नभिषेकं चन्द्रकेतुविनु चेय्तीटिनान् जगन्नाथन्। उत्तरदिशिपोक भरतनिवनुमाय् सत्वरं कार्यं साधिच्चवन्नेव वन्नीटु नी। इत्थमाज्ञापिच्चयच्चोरळविरुवरुं बद्धमोदेन पुरप्पेट्टितु पटयुमाय्। एक वत्सरं कोण्टु साधिच्चु कार्यङ्ङळुं साकेतपुरि पुक्कु भरतननुजनुं। काकुल्स्थनवरजन्मारुमाययोद्धययिल् भोगत्तोटि-

---

और गन्धर्व लोग समाप्त हुए और वहाँ का राज्य और दो दुर्ग (भरत के) अधीन हुए। पाँच वर्ष तक राज्य शासन का प्रशिक्षण देने के बाद निर्भय भरत ने दोनों पुत्रों को वहाँ का शासक बनाया, केकयराज पर उनकी देखभाल का भार सौंप दिया और फिर विजयघोष के साथ चलते हुए अयोध्या आ गये। रामचन्द्र जी को प्रणाम कर सारे समाचार सानन्द उन्हें सुनाये। १० तब राम ने पूछा कि अंगद और चन्द्रकेतु का किस प्रकार राज्याभिषेक करेंगे ? यह बता दो। तब भरत ने कहा कि बुद्धिमान अंगद को तारापथ का राज्य प्रदान करेंगे। चन्द्रकेतु को चन्द्रकान्त में बसाये गये राज्य का अधिकारी घोषित किया जा सकता है। तब स्वामी (राम) ने तारापथ में अंगद का राजतिलक करा दिया। (फिर लक्ष्मण को आज्ञा दी) हे सौमित्र ! जल्दी ही सहर्ष तुम अंगद को पश्चिम दिशा को ले चलो। फिर जगन्नाथ ने चन्द्रकान्त नाम से प्रसिद्ध राज्य के शासक के रूप में चन्द्रकेतु का अभिषेक करा दिया। (भरत को आज्ञा दी—) "भरत इसको लेकर उत्तर दिशा को जाएँ और पूरा प्रबन्ध करके तुरन्त आ जाएं।" इस प्रकार का आदेश देकर भेजने पर दोनों सहर्ष सेना लेकर चल पड़े। एक वर्ष के भीतर सारा प्रबन्ध करके भरत और अनुज (लक्ष्मण) साकेत वापस आये। श्रीराम जी अपने भ्राताओं सहित सब

वन्नितु पिन्नेयुमनेकं ताळ् । २० अक्कालं यमन् मुनिवेषमाय् वन्नीटिनान् चौल्लुळ्ळुमयोद्धययिल् रामचन्द्रनेक्काण्मान् । गोपुर-द्वारत्तिङ्कल्च्चेन्नु निन्नतु कालं तापसन् सौमित्रियेक्कण्टुटनरि-यिच्चान्— ञानौरु महामुनि श्रेष्ठन् तन्नुटे दूतन् मानवेन्द्र-नेक्काण्मानाय् वन्नेनरिञ्ञालुं । भूपति तन्नोटतु चेन्नरियिक्क-येन्नु तापसन् परञ्ञतु केट्टु लक्ष्मणन् चेन्नु संभ्रमत्तौटेयुणर्त्तिच्चतु केट्ट नेरं संप्रीति पूण्टु चेन्नु वन्दिच्चु मुनीन्द्रने । अन्तभिमतमेन्नु चौल्केन्नु केट्ट नेरं सन्तोषत्तोटु परञ्ञीटिनान् मुनीन्द्रनुं— आरुं कूटाते तम्मिल्त्तन्ने मन्त्रिक्क वेण्टुं कार्यमुण्टतिन्नु नीयोन्नु चेय्कयुं वेणं । ओरोन्नु तम्मिलूप्परञ्ञिरिक्कुन्नतिन्मद्धये आरानुं वरिकिल् नीयवरे वधिक्कणं । अन्नतेन्नोटु सत्यं चेय्किल् ञान-खिलवुं वन्न कार्यङ्ङळ् परञ्ञीटुवन् धरापते ! अन्ततिनौरु दण्डमतु ञान् चेय्तीटुवन् चिन्तितमेन्नोटरियिच्चालुं वैकीटाते । ३० लक्ष्मणा ! नीतान् तन्ने गोपुर द्वारत्तिङ्कल् निल्क्कणमित्तापसन्

प्रकार के सुखभोग भोगते हुए फिर अनेक वर्षों तक अयोध्या में (शासन करते) रहे । २० उन दिनों धर्मराज मुनिवेष में प्रसिद्ध अयोध्यापुरी में श्रीराम जी के दर्शनार्थ आये । गोपुर-द्वार पर आ खड़े हुए और तापस (धर्मराज) ने सौमित्र को देखकर उन्हें समझाया—"मैं एक प्रसिद्ध महामुनि का दूत हूँ और मुझे मानवेन्द्र से मिलने आये हुए समझिए । (आप) महाराज से जाकर बता दें ।" तापस का कथन सुनकर जल्दी ही लक्ष्मण ने (राम) को सूचना पहुँचायी —तुरन्त आकर लक्ष्मण के सूचना देते ही राम ने बाहर आकर मुनीन्द्र को सहर्ष प्रणाम किया और (मुनीन्द्र के) आगमन का अभिमत पूछा तो मुनीन्द्र ने सानन्द (राम से) कहा । तब मुनीन्द्र ने अत्यन्त प्रसन्न हो बताया—"हमें अन्य किसी की अनुपस्थिति में परस्पर बातें करनी हैं । कुछ ऐसी (गुप्त) बातें हैं । उसके लिए आप एक काम करें । परस्पर वार्तालाप करते बैठते समय बीच में अगर कोई उपस्थित हो तो उसे आप निश्चय ही मार डालिए । हे धरापति ! ऐसा आप सत्य करें तो मैं अपने आगमन का पूरा उद्देश्य आपको बता सकूँगा ।" राम ने कहा—"इसमें मुझे क्या कठिनाई हो सकती है ! मैं यह दण्ड दूँगा । आप अब अविलम्ब अपना विचार मेरे सामने प्रकट कीजिए । हे लक्ष्मण ! तुम्हीं गोपुरद्वार पर खड़े रहो और तापस के जाने तक कोई— । ३० —इधर अन्दर आने न पाए ।" लक्ष्मण बोले—"ऐसा ही होगा ।" गोपुर-द्वार पर लक्ष्मण आ खड़े हो गये । (तब)

पोवोळमोरुत्तरं इङ्ङोट्टु कटन्न वन्नीटातें न्निर्त्तीटणमङ्ङनें तन्नेयेन्नु लक्ष्मणनुर चेय्तान्। गोपुर द्वारे चेन्नु निन्निनु सौमित्रियुं तापसनोटु रघुनाथनुमुर चेय्तान्— मन्त्रशालयिल्प्पोक विजनत्तिङ्कल् तव चिन्तितमेल्लामेन्नोटरियिक्कयु वेणं। तापसन् तानुं रघुनाथनोटरियिच्चान् भूपते! केट्टुकोळ्क ञान् वन्न कार्यमेल्लां। धर्म्मतल्परनाय धर्म्मराजन् ञानिह ब्रह्माविन् नियोगत्ताल् वन्नितेन्नरिञ्ञालुं। ब्रह्माविन्नरुळ्प्पाटेल्लामे चोल्लामल्लो चिन्मयनाय भवानादि कालत्तु मुदा सर्वलोकङ्ङळेयुं तङ्कलेयटक्किक्कोण्टव्ययनाय भवान् नाभिपङ्कजत्तिङ्कल् ऎन्नेयुं निर्म्मिच्चुटननन्ताकृति पूण्टु पन्नगमाय तल्पे पळ्ळिकोळ्ळुन्न नेरं, तन्नुटे कर्ण्णमलङ्कोण्टु निर्म्मिच्चीटिनानुन्नतन्मारां मधु कैटभासुरन्मारे। ४० युद्धं चेय्तय्यायिरं दिव्य वत्सरत्तिनाल् उद्धतन्मारे वधिच्चवर्कळ् मेदस्सिनाल् मेदिनि तन्ने निर्म्मिच्चोरनन्तरं भवान् धातावामेन्नेक्कोण्टु निर्म्मिप्पिच्चितु पिन्ने नाना जन्तुक्कळेयुमीरेळु लोकङ्ङळुं मानमोटवट्टेत्ताङ्ङुन्नतुं नीतानल्लो। ओरोरोतरमवतारं चेय्तिन्द्रादिकल्क्कोरोरोतरमापत्तु तीर्त्तु कोण्टु धर्म्मत्तेस्थापिच्चधर्म्मङ्ङळे क्षयिप्पिच्चु कर्म्मङ्ङळ् चेय्यिप्पिच्चु

तापस से श्रीराम जी बोले—"हम एकांत मंत्रणागृह में जाएं। वहाँ आप अपना मन्तव्य मुझे बता दें।" तापस ने रघुनाथ जी को बताया—"मेरे आने का उद्देश्य सुनें। धर्मनिरत मैं धर्मराज यहाँ ब्रह्मा के आदेश पर आया हूँ, यह आप जान लें। ब्रह्मा जी का संदेश पूरा सुना दूँगा। आदिकाल में आप चिन्मय भगवान् समस्त लोकों को अपने में समाविष्ट कर तथा अव्यय-स्वरूप आप अपने नाभिपंकज में मेरी सृष्टि कर अनन्त-स्वरूप को धारण किये पन्नग-तल्प (अनन्त शय्या) पर योगनिद्रा करते रहे। तब अपने कर्णमल से उन्नत मधु-कैटभ नामक असुरों की सृष्टि की। फिर पाँच सहस्र दिव्य संवत्सर तक युद्ध करके उनका संहार कर, उनकी मेदा से—। ४० —मेदिनी (पृथ्वी) की सृष्टि करने के अनन्तर आपने मुझ धाता से नाना जन्तुओं तथा चौदहों भुवनों की सृष्टि करवायी। उन सबके लिए आप ही आधार हैं। नाना अवतार धारणकर इन्द्र आदि (देवताओं) की नाना विपत्तियों को दूर कर धर्म की स्थापना, अधर्म का नाश, कर्म कराकर सबका पालन, ये सब आप ही करते हैं। इस समय दशरथ के पुत्र के रूप में अवतार लेकर प्रतिदिन इक्ष्वाकु वंश की प्रगति के कार्य में संलग्न होते हुए ग्यारह सहस्र वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। हे

रक्षिक्कुन्नतुं भवान् । इक्कालं दशरथपुत्रनाय्प्पिरन्नुटनिक्ष्वाकु-वंशत्तेयुं वर्द्धिप्पिच्चनुदिनं वत्सरं पतिनोरायिरवुं चेन्नु भक्त वत्सल ! कालं त्रेतायुगमेन्नरिञ्ञालुं । मानुष वेषं पूण्टु भूमियिल् वसिच्चतुं मानववीर ! मतियेन्नु धाताविन् मतं । बालन्मार् तातनोटु परयुंवण्णं ञानीकाल देशावस्थकळ् चोन्नतु धरिच्चालुं । धातावुमुन्नमपेक्षिच्च कार्यङ्ङळेल्लां साधिच्चि-तिप्पोळवतार कार्यङ्ङळ् नाथा ! ५० वैकुण्ठ लोकत्तिङ्कले-क्कुन्नळ्ळुवान् कालं वैकरुतेन्नु धाता चोल्कयाल् वन्नु ञानुं । एन्नुटे मनसिलुमुण्टितु पितृपते ! वन्नीटुन्नुण्टु कालं वैकाते ञानुं नूनं । एन्निव तम्मिल्प्परञ्ञिरिक्कुन्नतिन् मद्ध्ये वन्नितु दुर्वासावुं गोपुरद्वारत्तिङ्कल् । लक्ष्मणनोटु मुनिमुख्यनुमरुळ् चेय्तु लक्ष्मीवल्लभन् तन्नेक्काण्मानायि ञानुमत्र निल्कुन्नतेन्नु चेन्नु वैकाते परक नी सल्ककरिप्पतिनेन्नेप्पार्प्पिच्चीटरुतेतुं । एन्नतु केट्टु भीतिपूण्टु लक्ष्मणन् चोन्नान् इन्नभिमतमेन्तेन्नरुळिच्चेय्के वेण्टु । अल्लाय्किल् मुहूर्त्तं निन्नरुळीटुक वेणं अल्ललुण्टग्रजनु काल्क्षणं कालं पोट्टि । एन्नतु केट्टुमुनि कोपं पूण्टरुळ् चेय्तु

भक्तवत्सल ! इसे त्रेतायुग समझ लीजिए । हे मानववीर ! मनुष्य-रूप में पृथ्वी पर आप का निवास पर्याप्त हो गया, ऐसा ब्रह्मा का अभिमत है । जैसे कोई बालक अपने पिता से कहता है वैसे मैंने आपको काल-देश के बारे में समझा दिया; इतना मात्र मान लीजिए । हे स्वामी ! ब्रह्मा ने पहले जो प्रार्थना की थी, जिससे अवतार हुआ, उसका कार्य अब पूर्ण हो चुका है । अब वैकुण्ठलोक में पधारने में विलम्ब न करें, ऐसा ब्रह्मा जी के कहने पर मैं यहाँ आया । ५० (राम ने उत्तर दिया) "हे पितृपति ! मेरे मन में इसका ध्यान है । मैं निश्चय ही अविलम्ब आनेवाला हूँ ।" इस प्रकार जब परस्पर बैठे कह रहे थे, तब गोपुर द्वार पर दुर्वासा मुनि आये । मुनिनायक ने लक्ष्मण से आग्रह किया—"लक्ष्मीपति से मिलने के लिए मैं यहाँ उपस्थित हूँ, ऐसा जाकर तुरन्त बोल दो । अब स्वागत करने के विचार से मुझे यहाँ देर तक ठहरना न पड़े ।" यह सुनकर भयाकुल लक्ष्मण ने कहा—"आप अपना अभिमत सुना दें । अन्यथा आपको थोड़ी देर प्रतीक्षा करनी होगी । हे प्रभु ! भ्राता को (कुछ अन्य कार्य में लगे रहने के कारण) थोड़ी देर तक (आने में) कठिनाई होगी ।" यह सुनकर रोष के साथ मुनि ने कहा—"अब प्रतीक्षा करने के लिए मेरे पास समय नहीं है । राजा को अगर मुझसे मिलने का अब समय नहीं है तो मैं शाप

इन्निनिप्पार्प्पनेनिक्किल्लवसरमेतुं। भूपति तन्नेक्काण्मानिल्ल-वसरमेङ्किल् शापत्ताल् मुटिप्पन् ञान् भानुवंशत्तेयेल्लां। अेन्नतु केट्टनेरं सौमित्रि विचारिच्चान् इन्नु ञान्मूलं मुटिञ्ञीटल्लो वंशं। ६० वंशनाशत्तिल् नल्लू ञानेकन् मरिप्पतुं संशयमिल्लेन्नोर्त्तु सौमित्रिपुरप्पेट्टान्। रामचन्द्रनेक्कण्टु तोळुतु चोल्लीटिनान् वामदेवांशोल् भूतन् तापसनत्र पुत्रन् गोपुरद्वारत्तिङ्कलुण्टु निल्क्कुन्नु काण्मान् तापसोत्तमनेच्चेन्नु वन्दिच्चीटणं। इत्थ माकर्ण्य कालनाकिय मुनि तन्ने सत्वरं पोकेन्नुटनयच्चु पुरप्पेट्टान्। अत्रिपुत्रनेत्तोळुतन्तभिमतमेन्नु चित्तमोदेन चोदिच्चळवु चोन्नान् मुनि— आयिरं संवत्सरमुण्टु ञाननशनायिरिक्कुन्नु पुनरिन्न-तिन्नवसानं; पारण चेय्तीटेणमिन्नतिन्नेनिक्किप्पोळ् पारातें तरिक नी भोजनमेन्न नेरं मृष्टमायन्नं कोटुत्तीटिनान् नरेन्द्रनुं तुष्टि पूण्टितु मुनि तृप्तनायतु नेरं। ६८

लक्ष्मण परित्यागं

आशीर्वादवुं चोल्लिप्पोयि मुनीन्द्रनुं आशुमानसे चिन्तिच्चीटिनान् नरपति। नम्मिले संवादङ्ङळ् कळिञ्ञु कूटुं मुम्पे नम्मुटे

से समूचे सूर्यवंश को भस्म कर दूँगा।" यह सुनकर सौमित्र ने सोचा—"आज मेरे कारण सूर्यवंश का अन्त न होने पाए। वंशनाश की अपेक्षा मुझ अकेले की मृत्यु प्रकाम्य है। इसमें कुछ भी संदेह नहीं।" ऐसा सोचकर सौमित्र चल पड़े। ६० रामचन्द्र जी से मिलकर, हाथ जोड़कर कहा—"साक्षात् शिवांश से उद्भूत तापस दुर्वासा आप से मिलने के लिए आकर वहाँ गोपुरद्वार पर प्रतीक्षा में खड़े हैं। आप तापस श्रेष्ठ से मिलकर प्रणाम करें।" यह सुनकर यमराज रूपी मुनि को तुरन्त विदा करके राम वहाँ से बाहर आये। अत्रिपुत्र को प्रणाम करके सानन्द उनका अभिमत माँगा तो मुनि ने कहा—"मैं एक सहस्र वर्षों से उपवास में लगा हुआ था, आज उसका पर्यवसान है। आज उसका पारण करने के लिए आप मुझे भोजन दें।" तब नरेन्द्र ने तुष्टि भर भोजन दिया और मुनीन्द्र तब संतुष्ट हो उठे। ६७

लक्ष्मण का परित्याग

आशीर्वाद देकर मुनीन्द्र चले गये और यहाँ नरपति (राम) तुरन्त मन में चिन्तित हो उठे—"हमारे बीच का संवाद समाप्त होने के पहले

मुम्पिल् वरुन्नवरॆ वधिप्पन् ञान् ऎन्नु तापसनोटु सत्यवुं चॆय्तेनल्लो वन्निह परञ्ञतु लक्ष्मणनल्लो तानुं । ऎङ्ङनॆयिवनॆ ञान् कॊल्लुन्नु निरूपिच्चाल् मंगलमल्ल सत्यलंघनं चॆय्युन्नतुं । ऎन्नुटे परितापं कण्टालुमय्यो ! पापं ऎन्नु खेदिच्चीटिनान् मानव प्रवरनुं । आननाब्जवुं कुम्पिट्टाधियुं मुळ्ळुत्तति दीननाय् मरुवीटु-मग्रजन् तन्नॆक्कण्टु सन्तुष्ट भावत्तोटुं सुमित्रापुत्रन् चॊन्नान् सन्तापमॆन्नॆक्कुरिच्चुण्टायिटॊल्लनाथ ! सत्यत्तॆ रक्षिच्चु कॊळ्कॆन्नॆ निग्रहिच्चु नी चित्तत्तिलॆन्निलॊरु कारुण्यमुण्टाकॊला । इत्थमोरोन्नॆ सुमित्रात्मजन् चॊल्लुन्तोरुं ऎत्रयुं वळर्न्नितु सन्तापं मेल्क्कु मेले । मन्त्रिकळेयुं कुलाचार्यादि जनत्तॆयुं तन्तिरुमुम्पिल् वरुत्तिप्परञ्ञितु नृपन्— १० सन्ताप मूलमॆल्लां केट्टॊरु वसिष्ठनुं चिन्तिच्चु नरेन्द्रनोटरुळ् चॆय्तान्— सत्वरं सौमित्रियॆ वधिच्चु पालिक्क नी सत्यत्तॆयल्लॆन्नाकिल् मरयुं धर्म्ममॆल्लां । धर्म्मनाशत्ताल् जगत्त्रयवुं मुटिञ्ञुपों निर्म्मलन् दशरथन् निन्नुटॆ तातन् मुन्नं; पुत्रस्नेहत्तॆयुपेक्षिच्चु पालिच्चानलो सत्यत्तॆयतुमूलं तनिक्कु दुःख-त्तिनाय् मृत्युवन्नॆतुं पुनरॆन्नतु धरिक्क नी, पृथ्वीपालन्मारायाल्

हमारे सम्मुख आनेवाले का मैं वध करूँगा, ऐसा मैंने तापस से सत्य प्रतिज्ञा की थी। आकर (दुर्वासा के आगमन की) सूचना दी लक्ष्मण ने। सोचें तो मैं उसका कैसे वध करूँ! विचार करने पर सत्य का उल्लंघन करना कल्याणप्रद भी नहीं है। हाय! मेरी दुविधा देखें! पाप है," मानव-प्रवर इस प्रकार अपना दुःख प्रकट करने लगे। अपने मुखारविन्द को आनत किये अत्यधिक व्याकुल हो दीन भाव से बैठे अपने अग्रज को देखकर प्रसन्न-वदन सुमित्रा-तनय बोले—"हे नाथ! मेरे बारे में सोचकर आप खिन्न न हो उठें। आप मेरा वध कर सत्य की रक्षा करें; मेरे प्रति सहानुभूति आपके मन में उत्पन्न न होने पाए।" इस प्रकार सुमित्रात्मज के एक-एक बात बोलते ही उत्तरोत्तर उनका संताप बढ़ता ही गया। मन्त्रियों तथा कुलाचार्य आदि लोगों को अपने सामने बुला लाकर महाराज ने (सन्ताप का रहस्य) कहा। १० सन्ताप का रहस्य सुनकर वसिष्ठ जी ने खूब विचार करके नरेन्द्र से कहा—"जल्दी ही सौमित्र का वध करके आप सत्य का पालन कीजिए; अन्यथा धर्म नष्ट होने की स्थिति में होगा। धर्म-नाश त्रिभुवन का नाश होगा। पहले आपके पिता निर्मलचेता दशरथ ने पुत्र-वात्सल्य को छोड़कर भी सत्य का पालन किया, जिस कारण दुःख से उनकी मृत्यु हुई; यह आप सोच लें। राजाओं को सत्य की रक्षा करनी

सत्यत्तै रक्षिक्कणं, पुत्रदारात्थादिकळोटु वेर्पॆट्टीटातॆ इत्रिलोकत्तिलारुमिल्लॆन्नु धरिच्चालुं। सोदर स्नेहं तव पारमुण्टङ्ङिन्नु ञान् सादरमॆन्नाकिलुं सत्यत्तै रक्षिक्कणं। ऎन्न वरवर् पऱयुन्नतु केट्टन्नेरं तन्नुळ्ळिल् वळर्न्नोरु दुःखत्ताल् नरेन्द्रनुं पोक सौमित्रे भवान् निन्नॆ ञानुपेक्षिच्चेन् त्यागवुं वधवुमॊक्कुं निरूपिच्चु कण्टाल्। जीवनमाय निन्नॆयिन्नुपेक्षिच्चु ञानुं जीविच्चु वाणीटुमो भूमियिलॆत्र कष्टं! २० अट्टमिल्लात विषादत्तॆप्पूण्टतु कण्टु मट्टुळ्ळजनङ्ङळुमॆत्रयुं दुःखं पूण्टार्। अग्रजन्मारॆत्तीळ्ळताचार्य पादाब्जवं अग्रे वीणुटन् नमस्करिच्चु पुऱप्पॆट्टान्। चॆन्निरुन्नितु महासरयू नदी तीरे तन्नुळ्ळिल् ब्रह्मध्यानमुऱच्चु योगत्तोटॆ। देवकळ् पुष्पवृष्टि चॆय्तेटं पुकळ्त्तनार् देवेन्द्रन् विमानवुमाय् वन्नुटनतु नेरं सुमित्रात्मजनेयुं व्योमयानत्तिलेट्टि अमर्त्यालयत्तिङ्कल् सुखिच्चु वसिप्पिच्चान्। आदितेयन्मारॆल्लां प्रीतन्मारायारप्पोळादि नाथनुमॆळुन्नळ्ळुमॆन्नोर्त्तु भक्त्या। २६

स्वर्गारोहणं

अक्कथ केट्टु रघुनाथनुममात्यन्मारॊक्कवे वरिकॆन्नु विळिच्चु वरुत्तिनान्। ञानिनि राज्यं वाळ्कॆन्नुळ्ळतिल्ल नूनं आनंदपूण्टु

चाहिए।" इस प्रकार उनको कहते सुनकर अपने मन में उद्भूत दुःख से पीडित हो नरेन्द्र ने कहा—"हे सौमित्र! तुम (यहाँ से) चले जाओ। मैं तुम्हारा परित्याग करता हूँ। सोचें तो परित्याग और वध (का फल) समान है। हाय! पाप है! प्राणतुल्य तुम्हें छोड़कर क्या मैं पृथ्वी पर जीवित रहूँ!"। २० उनके असीम दुःख को देखकर दूसरे-दूसरे लोग भी बहुत दुःखी हुए। अपने ज्येष्ठ भ्राताओं को प्रणाम कर तथा आचार्य के चरण-कमलों में प्रणत होकर (लक्ष्मण) वहाँ से निकले और सरयू नदी के किनारे आ बैठे। वहाँ बैठकर वे योगनिष्ठ हो ब्रह्मध्यान में तल्लीन हुए। देवों ने पुष्पवर्षा करते हुए (उनकी) खूब प्रशंसा की। उसी समय देवेन्द्र विमान लेकर आये तथा सुमित्रात्मज को व्योमयान पर चढ़ाकर अमर्त्यालय (स्वर्गलोक) में ले आकर सुख से रहने दिया। आदिनाथ (श्रीराम जी) को भी तुरन्त पधारनेवाले जानकर समस्त देवता लोग प्रसन्न हुए। २६

स्वर्गारोहण

यह समाचार पाकर रघुनाथ जी ने अपने समस्त अमात्यों को निकट बुलाया (और कहा—) "अब निश्चय ही मेरे राज्य करने का विचार नहीं

सुमित्रात्मजन् स्वर्गं पुक्कान् । वैंकातें ञानुमविटॅप्पुक्कु वसिक्कुन्नेन् कैकेयीसुतन् तन्नें वाळुक धरातलं । अन्नेरं पौरन्मारुमनुजन् भरतनुं श्रीरामनुटॆ काल्ककल् वीणुटन् वणङ्ङिनार् । कण्णुनीर वार्त्तु वार्त्तु चॊल्लिनान् भरतनुं ऎन्नें निन्तिरुवटि वॆटियातिरिक्कणं । निन्तिरुवटि नरकं तन्निल् वसिक्किलुं सन्ततं वानोरपुरि तन्निले वसिक्किलुं पिरिञ्ञु वाणीटुवान् विधिक्करुतेन्नें पिरिञ्ञाल्प्पोरुतियिल्लटियनोरिक्कलुं । शत्रुघ्नन् तन्नोटिव चॆन्नरियिक्कयॆन्नु सत्वरं दूतन्मारॆययच्चु भरतनुं । मानव प्रवरनुण्टाय दुःखत्तॆक्केट्टु भानु पुत्रादि कपिवीरन्मारॊक्कॆ वन्नु । राक्षस सैन्यत्तोटु वन्नितु विभीषणन् साक्षाल् श्रीरामचन्द्र पादङ्ङळ् वणङ्ङिनान् । १० अन्नेरं पौरन्मारायुळ्ळवर् तॊरुतॆरॆ वन्नु वन्नवनीशन् तन्नॆ वन्दिच्चीटिनार् । अन्नेरं वसिष्ठनुं नृपनोटरुळ् चॆय्तु इन्निनियिवर् दुःखं तीक्कं नी कृपयाले । संतुष्टनाय नृपनवरोटरुळ् चॆय्तान् ऎन्तभिमतं निङ्ङळक्कॆन्नु चॊल्लीटुविन् । निन्तिरुवटियोटु कूटॅप्पोरुन्नु ञङ्ङळ् चिन्तिच्चाल्प्पिरिञ्ञु वाणीटुवानिल्ल धैर्यं । पुत्रदारादिकळोटॊन्निच्चु

है । सुमित्रात्मज सानन्द स्वर्गलोक में पहुंच गये हैं । मैं भी अब अविलम्ब वहाँ पहुंचकर वास करनेवाला हूँ । इसलिए कैकेई-तनय धरातल का पालन करें ।" उस समय पौरजनों तथा भरत ने श्रीराम जी के चरणों में नत-मस्तक हो प्रणाम किया । आँसू भरते हुए भरत ने कहा कि आप मुझे न छोड़ें । आप चाहे नरक में रहें, चाहे स्वर्गलोक में वास करें, मुझे अपने पास से दूर रहने न दीजिएगा; आपसे दूर होकर मैं रह नहीं पाऊँगा ।" शत्रुघ्न को यह सारा समाचार सुना आओ, ऐसा कहकर भरत ने दूतों को भेजा । मानव-प्रवर पर आ-पड़ी विपत्ति का समाचार पाकर भानुपुत्र (सुग्रीव) आदि वानरश्रेष्ठ (अयोध्या में) आ पहुँचे । राक्षस-सेना लिये विभीषण ने आकर साक्षात् श्रीरामचन्द्र जी के चरणों में प्रणाम किया । १० तब एक-एक करके समस्त पौरजनों ने आकर अवनीश को नमस्कार किया । तब वसिष्ठ जी ने महाराज से कहा—"आज आप कृपापूर्वक इनका भी दुःख दूर कीजिए ।" सन्तुष्ट हो महाराज ने उनसे कहा—"आप लोगों की क्या अभिलाषा है, यह मुझे बता दें ।" (वे सब के सब बोले) "हम सब आपके साथ आएँगे । सोचने पर आप से दूर होकर रहने की हमें शक्ति नहीं है । हे भक्तवत्सल ! हे दयानिधि ! पुत्र-पत्नी आदि के साथ आपके साथ चलने के लिए उद्यत

पोरुन्नतु भक्तवत्सल ! मुटक्कीटॊला दयानिधे ! ऎङ्किलो निङ्ङळ् कूटॆप्पोन्नु कॊण्टालुमॊरु सङ्कटमतिन् मूलं निङ्ङळ्क्कुमुण्टाकॆण्ट । भूदेवन्मारुं मुनीश्वरन्मारुमायिप्पिन्ने मोदेन कुशलवन्मार्क्कभिषेकं चॆय्तु । तालंगप्पटयोटुं धन रत्नादिकळुं बालन्मार्क्कनवधि कॊटुत्तु, रामचन्द्रन् । गाढमायाश्लेषिच्चु चुंबिच्चु नॆरुकयिल् गूढमाय् सीतादेवि तन्नॆयोर्त्तितु रामन् । शत्रुघ्ननतु कालं दूतवाक्यङ्ङळ् कॆट्टु पुत्रन्मारॆयुमोरो राज्यं वाळिच्चु बहु— २० वित्तवुं चतुरंग सेनयुं नल्कि पुनरत्तलॆन्निये वाळविनॆन्न नुग्रहिच्चितु । पिन्ने वेगेन चॆन्नु राघवन् तन्नॆत्तॊळुतॆन्नॆयुं कूटॆ कॊण्टु पोकणमॆन्नु चॊन्नान् । नी कूटॆप्पोन्नालुमॆन्नरुळिच्चॆय्तु नाथन् आकुलमकन्नितु सुमित्रातनयनुं । वानरवरन्मारुं राक्षस वीरन्मारुं मानवेन्द्रनॆ वन्नु वन्दिच्चारतु कालं । ऎङ्ङॊळुन्नळळत्त-विटेक्कु निन्तिरुवटि ञङ्ङळॆक्कूटॆक्कॊण्टु पोकणं मटियातॆ । अन्नेरं विभीषणन् तन्नोटु रघुपति नन्दिच्चु विळिच्चरुळ् चॆय्तितु मधुरमाय् । आदित्यचन्द्रन्मारुमाकाशभूमिकळुं यातॊरु कालमुळ्ळु केवलमत्र नाळुं लङ्कयिल् निशाचर राजावायि वाळ्क भवान्

हमें आप न रोकियेगा ।" तब राम जी बोले—"अगर यही इच्छा है, तो आप लोग भी साथ चलें; यह सोचकर बाद में दुःखी न होने पाएँ ।" फिर भूदेवों और मुनीश्वरों की उपस्थिति में बड़े उल्लास के साथ कुश-लव का राज्याभिषेक किया गया । श्रीरामचन्द्र जी ने चतुरंगिनी सेनाओं सहित खूब धन-रत्न आदि सामोद बालकों को दिये और गाढ़ भाव से उनका आश्लेष किया, उनके ललाट पर चुम्बन अंकित किया और तब राम ने सीता जी का अनुस्मरण किया । शत्रुघ्न ने उस समय दूत का सन्देश सुनकर अपने पुत्रों को एक-एक राज्य का शासक बनाया और बहुत— । २० —धन, चतुरंगिणी सेनाएँ देकर उनसे सानन्द शासन-भार सम्भालने का आग्रह किया । फिर शीघ्र (अयोध्या में) पहुँचकर राघव को प्रणाम करके उन्होंने कहा कि मुझे भी साथ ले चलें । श्रीराम जी ने कहा कि तुम भी साथ चलो और यह सुनकर सुमित्रा-तनय (शत्रुघ्न) का दुःख दूर हुआ । तब वानरश्रेष्ठों और राक्षस-वीरों ने आगे बढ़कर मानवश्रेष्ठ को नमस्कार किया और प्रार्थना की कि आप जिस ओर पधार रहे हैं, उस ओर हमें भी साथ ले चलें । तब सन्तुष्टचित्त रघुपति ने विभीषण को अपने समीप बुलाकर अत्यन्त मधुर वाणी में बताया—"जब तक आदित्य (सूर्य) -चन्द्र और आकाश-भूमि का अस्तित्व है, तब तक निशाचरों के

सङ्कटं विश्वत्तिनुमुण्टाकयिल्लयेन्नान् । पिन्ने मारुति तन्नोट-रुळिच्चेय्तु नाथन् मुन्नमेयेन्नोटपेक्षिच्चतिल्लयो भवान् एन्न-न्नाळेक्कु रामचरितमुळ्ळू भुवि अन्नन्नाळेय्क्कु जीविक्केणं ञानेन्निङ्ङने । ३० न्नीयेन्नोटर्त्थिच्चतिन्नन्तरं वन्नीटाते वाळ्क पिन्ने ब्रह्मपदवुं प्रापिच्चालुं । धन्यात्मावाय विभीषणनुं हनुमानुं इन्नु ञान् चोन्नवण्णं वाळुविनेल्ला न्नाळुं । एन्नोटु कूटेप्पोन्नु कोळ्ळुक मट्टेल्लारुं एन्नतु केट्टु सुखमायितेल्लावर्क्कुमप्पोळ् । इत्थ मोरोन्नु परञ्ञिरुन्नु पुलर्न्नितु नित्याचारवुं चेय्तु रामचन्द्र-नप्पोळ् । गुरुवां वसिष्ठनोटग्नि कैक्कोळ्कयेन्नु पुरुषोत्तमन् तानुं परञ्ञु यथाविधि । कर्म्मङ्ङळ् चेय्तु महाप्रस्थानमारं-भिच्चान् धर्म्मेण वह्नियुमाय् नटन्नु मुम्पिल् चिलर् । वेदङ्ङळोटु महामन्त्रङ्ङळ् शक्तिकळुं सोदरामात्यपुरांगनमार् पौरन्मारुं, मानुष निशाचर वानरवरन्मारुं आदरिच्चयोद्ध्ययिल् वाळुन्न जनङ्ङळुं, पक्षिकळ् पशुक्कळुं मृगजातिकळ् मट्टुं रक्षितावाय रघुनाथनोटोक्कॅप्पोयार् । भाग्यमेन्तयुं न्नमुक्किल्लितिन् मीतेयोरु सौख्यमेन्नोर्त्तु सकल प्राणिकळुमेल्लां । ४० रामभद्रस्वामि

राजा बन आप लंका में रहें और उससे संसार में कोई विपत्ति नहीं आने पाएगी ।" फिर मारुती से स्वामी बोले—"पहले तुमने मुझसे प्रार्थना की थी कि संसार में जब तक राम-चरित का प्रचार है तब तक मुझे संसार में जीवित रहना है । ३० तुम्हारी इस प्रार्थना में कुछ अन्तर न आने पाए, उसके लिए (पृथ्वी पर) रहो और बाद में ब्रह्म पद को प्राप्त करो । धन्यात्मा विभीषण और हनुमान, आज मैंने जैसा कहा वैसा जीवन यहाँ सदा बिताएँ । और शेष लोग सबके सब मेरे साथ चलें ।" राम का यह कथन सुनकर सब प्रसन्न हुए । इस प्रकार विवध प्रकार की बातों में प्रातःकाल हुआ और तब श्रीराम जी ने नित्यकर्म किये । श्रीराम जी ने अपने गुरु वसिष्ठ जी से हाथ में अग्नि लेने की प्रार्थना की और यथा विधि सब प्रकार के कर्मों का अनुष्ठान कर महाप्रस्थान का आरम्भ किया । धार्मिक अनुशासन के अनुसार कुछ लोग अग्नि लिये आगे-आगे चले । वेद, मन्त्र और शक्तियाँ (देवता रूप), भ्राता लोग, अमात्यवर्ग, पुरांगनाएँ, पौरजन, मनुष्य, निशाचर, वानरश्रेष्ठ तथा अयोध्या में रहने वाले अन्य सम्मान्य लोग, पशु-पक्षीगण तथा अन्य जीव, सबके सब अपने पालक रघुनाथ जी के साथ चले और सबके सब मन में यही सोचते रहे कि इससे बढ़कर कोई भाग्य हमें मिलने का नहीं है । ४० श्रीरामचन्द्र

तन्नोटु कूटोक्कॅत्तन्नॅ श्रीमयमाय सरयूतीरं पुक्कारल्लो। अन्तेर-मविटॆ ताल्र ताळिक तेरं तिन्नितु परनेकात्मावाय नारायणन्। सकल जगन्मयनाकिय सनातनन् जगदितिङ्ङ्ओरु वैष्णवतेजस्सोटु। तिन्तरुळुन्न नेरमंबुजासननव वन्नितु विमानङ्ङळ्तोरुं देवकळु-माय्। ४४

देवस्तुति

भक्ति कैक्कोण्टु पिन्नॆस्तुतिच्चु तुटङ्ङिनार् भक्तन्माक्कॅल्लां मुक्ति-कोटुक्कुं नाथा! जय। अंबुधिमध्ये पळ्ळिकोळ्ळुन्न नाथ! जय, अंबुजत्तिङ्कलॆन्नॆ निर्म्मिच्च नाथा! जय। युद्धत्तिनटुत्तोरु मधु कैटभन्मारॆ बद्धरोषेण कोन्नुमुटिच्च नाथा! जय। दैत्यन्माण्टे महामेदसु कोण्टु तन्नॆ धात्रीमण्डलत्तॆयुं निर्म्मिच्च नाथ! जय। धात्रियि-लॆन्नॆक्कोण्टु सकल जन्तुक्कळॆप्पेर्त्तु निर्म्मिप्पिचोरु परमात्मावे जय। कालत्तिल् प्रपञ्च संहारं चेय्वतिनाये नील लोहितनायुं वाणीटुं नाथा! जय। भूपति सत्यव्रतानुग्रहत्तिनु मत्स्य रूपत्तॆप्परि-ग्रहिच्चोरु राघव! जय। मन्दरमुयर्त्तुवान् कूर्म्ममायवतरिच्चिन्द्रादि

जी के साथ (चलते हुए) सब श्रीमय सरयू के तट पर पहुँचे। तब वहाँ सर्वात्मभूत साक्षात् नारायण साढ़े चार घड़ी ठहरे। जब सकल जगन्मय सनातन राम समस्त ब्रह्माण्ड में परिव्याप्त अपने वैष्णव तेज से खड़े थे तब अंबुजासन (ब्रह्मा) कई विमान भर देवताओं को लिये वहाँ आ गये। ४४

देव स्तुति

(ब्रह्मा ने) भक्ति में तल्लीन हो स्तुतियाँ कीं—"भक्तों को मुक्ति दिलानेवाले नाथ! (आपकी) जय हो। क्षीरसागर में योगनिद्रा करनेवाले नाथ! जय हो। अम्बुज (कमल) में मेरी सृष्टि करनेवाले हे नाथ! जय हो। राक्षसों की मेदा से पृथ्वीमंडल की सृष्टि करनेवाले नाथ! आपकी जय हो। पृथ्वी पर मेरे द्वारा समस्त जीवों की सृष्टि करनेवाले हे परमात्मा! आपकी जय हो। यथाकाल विश्वप्रपंच का संहार करने के लिए नीलकण्ठ बनकर रहनेवाले नाथ! जय हो। महाराज सत्यव्रत को अनुगृहीत करने के लिए मत्स्य रूप को ग्रहण करने वाले हे राघव! (आपकी) जय हो। मन्दर पर्वत का उद्धार करने के लिए कूर्मावतार ले इन्द्रादि देवताओं का परिपालन करनेवाले हे नाथ! जय हो। हिरण्याक्ष का वध करने के लिए आदि सूकर बन पृथ्वीदेवी की

देवकळेप्पालिच्च नाथा ! जय । हिरण्याक्षनेक्कोल्लुवानादि सूकरमायिद्धरणी देवि तन्ने रक्षिच्च नाथा! जय । हिरण्यकशिपु वामसुरेन्द्रनेक्कोल्वान् नरसिंहाकारमाय्च्चमञ्ञ नाथा! जय । १० मून्नु लोकवुं महाबलियोटर्थिच्चुटन् मून्नटियायळन्न वामनमूर्त्ते! जय। धरणीन्द्रन्माराय दुष्टरे वधिप्पानाय् परशुरामनायिप्पिरन्न नाथा ! जय । रावणन् तन्नेक्कोल्वान् रामनाय्प्पिरन्निप्पोळ् देवकळ्-तम्मेप्परिपालिच्च नाथा ! जय । वसुदेवात्मजनायिनिमेल् बलनायी वसुधाभारं तीक्कुं रेवतीपते ! जय । देवकी तनयनाय् कृष्णनाय्प्पिरन्निनि सेवकन्माक्कुं मुक्ति कॊटुक्कुं नाथा ! जय । खड्गवुं धरिच्चिनि कालान्तत्तिङ्कल् कल्किकयाय् दुष्टवधं चेय्तीटुं नाथा ! जय । निष्कळनाय तव तत्वत्ते निरूपिच्चाल् उळ्क्क-मलत्तिलरियावतल्लोरुवक्कुं । सल्गतियटुत्तवनाचार्य रूपं कैक्कोण्टुळ्क्काम्पिल् नानाभेद भ्रमवुं तीरुं वण्णं । सत्यमायुळ्ळ वस्तु काणुन्नोरुपदेशं भक्तनां शिष्यनरियिच्चाल् कण्टीटामत्रे । सकल शरीरिकळुळ्ळिलुं जीवात्मावाय् सुखबोधकरमाय परमात्मा परं । २० अरिञ्ञु पुकळ्त्तुवानिल्ल वल्लभं विश्वं तिरञ्ञु मरुवीटुं

रक्षा करनेवाले हे नाथ ! (आपकी) जय हो। हिरण्यकशिपु नामक दुष्ट राक्षस का संहार करने के लिए नृसिंह रूप में अवतरित हे नाथ ! (आपकी) जय हो । १० तीन कदम भूमि महाबलि से माँगकर तीन कदमों में तीनों लोकों को नापनेवाले वामन मूर्ति ! जय हो । दुष्ट क्षत्रियों का वध करने के निमित्त परशुराम के रूप में जन्मे हे नाथ ! (आपकी) जय हो । अब रावण का वध करने के लिए राम के रूप में जन्म लेकर देवताओं की रक्षा करनेवाले नाथ ! जय हो । भविष्य में वसुदेवात्मज बलराम बन वसुधा के भार को दूर करने हेतु जानेवाले रेवतीपति ! आपकी जय हो । अब देवकीनन्दन कृष्ण के रूप में जन्म लेकर सेवकों को मुक्ति दिलाने जाने वाले नाथ ! जय हो । अब कल्पान्त के समय खड्गधारी कल्कि बन दुष्टों का संहार करने को (तैयार बैठे) नाथ ! जय हो । आप निष्कल स्वरूप का तत्व बहुत विचार करने के उपरांत भी कोई समझ नहीं सकता । मोक्ष के लिए अधिकारी पुण्यात्मा लोगों को स्वयं आप ही आचार्य बन उनके मन के भ्रम को दूर कर सत्य वस्तु को दिखाने योग्य उपदेश दें तो संभवतः वे आप को पहचान सकेंगे । समस्त जीवधारियों के भीतर जीवात्मा के रूप में प्रतिभासित होनेवाले विशुद्ध परमात्मस्वरूप । २० आपके तत्व को पहचान कर उनकी

पुरुषोत्तम ! जय । इक्कालं दशरथपुत्रनाययोद्भयियिल् विख्यात कीर्त्या रामनाय माधव ! जय । विश्वरक्षात्थं पित्नॆ लक्ष्मणनोट्टुं कूटि विश्वामित्रन्टॆ पिम्पे पोय राघव ! जय । काटकं पुक्क शेषं विश्वामित्रन्टॆ चॊल्लाल् ताटक तन्नॆक्कॊल चॆय्त राघव ! जय । वेगेन सिद्धाश्रमं पुक्कु कौशिकनुटॆ यागवुं परिपालिच्चिरुन्न नाथ ! जय । विश्वामित्रोक्त्या पुनरहल्याशापं तीर्त्तु विश्वनायक चापं खण्डिच्च नाथ ! जय । सीतावल्लभनायिप्पोरुम्पोळ् मध्ये मार्ग्गं प्रीतनाय् भार्ग्गवनॆज्जयिच्च राम ! जय । बन्धुवर्ग्गवुमाय्च्चॆन्न-योद्ध्ययिल्प्पुक्कु पन्तीराण्टानन्दिच्चु वसिच्च नाथ ! जय । जनकनभिषेकत्तिनु भाविच्च नेरं जननि कैकेयियुं मुटक्किक्कळकयाळ् सीतयुमनुजनुं तानुमाय् वनं पुक्कु मोदेन चित्रकूटत्तिङ्कल् मेविन कालं ३० खेदिच्चु तातन् स्वर्ग्गं पुक्कानॆन्नतु केट्टु खेदिच्चु शेष क्रियचॆय्त राघव ! जय । भरतन् तन्टॆदु:खमटक्कि राज्यमॆल्लां भरमेल्पिच्चु यात्रययच्चोरनन्तरं, दण्डकारण्यं पुक्कु दुष्टनां

प्रशंसा करने की क्षमता मुझमें नहीं है। समस्त विश्व में परिपूर्ण हो रहनेवाले हे पुरुषोत्तम ! आपकी जय हो। इन दिनों अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र के रूप में अवतीर्ण हो विख्यात कीर्ति से शोभित राम-रूप हे माधव ! (आपकी) जय हो। विश्व की रक्षा के लिए लक्ष्मण सहित विश्वामित्र के पीछे जानेवाले राघव ! (आपकी) जय हो। वन में प्रवेश करने पर विश्वामित्र के आग्रह पर ताड़का का संहार करनेवाले राघव आपकी जय हो। फिर तुरन्त ही सिद्धाश्रम में पहुँच कर विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा कर बैठे हे नाथ ! (आपकी) जय हो। विश्वामित्र के आग्रह पर अहल्या का शाप-विमोचन कर, फिर विश्वनायक के धनुष को खंडित करनेवाले नाथ ! आपकी जय हो। सीतापति बन चलते समय बीच मार्ग में सायास भार्गव राम पर विजय प्राप्त करनेवाले हे राम ! आपकी जय हो। बन्धुवर्ग के साथ अयोध्या में पहुँच कर बारह वर्ष तक सुखपूर्वक आनन्दोल्लासमय जीवन व्यतीत करनेवाले नाथ ! जय हो। जनक (पिता) के द्वारा अभिषेक के लिए प्रबन्ध करते समय जननी (माता) कैकेई के द्वारा विघ्न डाले जाने पर सीता और अनुज के साथ स्वयं वन में पहुँच चित्रकूट में निवास करते समय—। ३० —पिता जी के स्वर्गवास का समाचार पाकर शोक से संतप्त हो शेष क्रियाएँ सम्पन्न करनेवाले राघव ! (आपकी) जय हो। भरत के दु:ख को दूर कर

विराधनॆ खण्डिच्चु मुनिकळॆ वन्दिच्च नाथ ! जय। तापसनाय सुतीष्णनेयुं वन्दिच्चुटन् शोभतेटीटुमगस्त्याश्रमं पुक्क शेषं तापसोत्तमनाकुमगस्त्यन् कॊटुत्तॊरु चापवुं शरवुं कैक्कॊण्टुटन् पुऱप्पॆट्टु; गौतमियाकुं नदितन्नुटॆ तीरत्तिङ्कल् कौतुकत्तोटु सुमित्रात्मजन् चमच्चॊरु पर्णशालयिल् भार्या सोदर समेतनाय् दण्डमॆन्नियॆ सुखिच्चिरुन्न नाथ ! जय। वन्नु कामिच्च रात्रिञ्चरियां शूर्पणख तन्नुटॆ मूक्कुमुलच्छेदनं चॆय्तमूलं क्रुद्धनाय् पतिन्नालु सहस्रं पटयोटुं युद्धत्तिनटुत्तॊरु खरनॆक्कॊल चॆय्तु, पॊन्मानाय् वन्न मारीचासुरनुटॆ पिम्पे सम्मोहं पूण्टु पोय नेरत्तु दशाननन् ४० वैदेहितन्नॆक्कट्टु कॊण्टु पोयवस्थकळ् खेदेन जटायु चॊन्नतिनॆक्केट्टशेषं मरिच्च पक्षिक्कु शेषक्रियकळुं चॆय्तु करुत्तनाय कबन्धनु सल्गति नल्कि। शबरि तन्नॆक्कण्टु वरवुं कॊटुत्तुटन् सपदि पम्पातीरं पुक्कति शोकत्तोटुं नटक्कुन्नेरं वायुपुत्रनॆक्कण्टुकिट्टि पटुत्वमोटुमवन् सुग्रीवन् तन्नॆक्काट्टि; सख्यवुं चॆय्यिप्पिच्चु बालियॆ वधं चॆय्तु दुःखेन चातुम्मास्यमिरुन्न नाथ ! जय। नालु दिक्किलुं नाना वानर प्रवरन्मार् काले पोयन्वेषिच्चु जानकी देवितन्नॆ;

राज्य-भार सौंपकर उन्हें विदा करने के उपरान्त, दण्डकारण्य में पहुँच दुष्ट विराध का वध कर मुनियों के सम्मुख प्रणत हे नाथ ! (आपकी) जय हो। तपस्वी सुतीष्ण को नमस्कार करके शोभायमान अगस्त्याश्रम में पहुँच तापसोत्तम अगस्त्य से प्रदत्त चाप-शर ग्रहण करके तुरन्त वहाँ से निकलकर गौतमी नदी के कूल-प्रदेश में प्रसन्न सुमित्रात्मज (लक्ष्मण) से निर्मित पर्णशाला में भार्या और सहोदर सहित क्लेशरहित एवं सानन्द निवास करनेवाले हे नाथ ! जय हो। कामार्त एवं मोहित हो आयी निशाचरी शूर्पणखा के नासा-कुच के छेदन के कारण कुपित हो चौदह सहस्र सैनिकों के साथ युद्ध के लिए आ पहुँचे खर का वध करने के बाद स्वर्णमृग बन आये मारीच नामक असुर के पीछे सम्मोहित हो चलते समय दशानन—। ४० —के द्वारा वैदेही के अपहरण का समाचार दुःखार्त जटायु के मुख से सुनकर उस मृत पक्षी के (आपने) अन्तिम संस्कार किये तथा महाशक्तिशाली कबन्ध को सद्गति प्रदान की। शबरी से मिलकर उसे वरदान देने के बाद तुरन्त पम्पा-तट पर अत्यन्त शोकाकुल घूमते समय (आपकी) वायुपुत्र से भेंट हुई और कार्यकुशल उन्होंने सुग्रीव से मिलाया और सख्य कराया। फिर बालि का वध करके शोकार्त हो चातुर्मास बितानेवाले हे नाथ ! (आपकी) जय हो। यथाकाल नाना वानर लोगों

अंगुली यवुं हनुमानुटे कयियल् ऩल्कि अंगदादिकळोटुं तेक्कोट्टु ऩट कोण्टार्। पाताळं तन्निल् स्वयंप्रभयेक्कण्टुकिट्टि प्रीतन्मारा-यिच्चेन्नु वारिधि तीरं पुक्कार्। सम्पाति वाचा समुद्रं कटप्पानाय् वायुसंभवन् महेन्द्रत्तिन्मुकळिल्क्करेऱिनान्। वारिधि चाटिक्क-टन्नाशु लङ्कयिल्च्चेन्नु तारिल् मातिनु तिरुवाळियुं कोटुत्तुटन् ५० चूडारत्नवुं वाङ्ङीट्टुद्यान भंगं चेय्तु प्रौढतयोटुमुटन् पोरिन्नु नेरिट्टोरु रक्षोवीरन्मारेयुं रावण तनयनामक्षकुमारनेयुं कोन्नु रावणनाकुं दुष्टनेक्कण्टु वृत्तान्तं पऱञ्ञिट्टु लङ्कचुट्टु पोटिच्चु वारान्निधियुं कटन्नुटन्; तुष्टि पूण्टंगदादि वानरन्मारुमाय् वन्निष्टमोटाशु कण्टेन् देवियेयेन्नु चोन्न मारुतितन्नेप्पिटिच्चा-श्लेषं चेय्तु गाढं वारिजाक्षियेच्चिन्तिच्चिरुन्न नाथा! जय। सुमुहूर्त्तेन महावानरप्पटयोटुं समरत्तिनु पुऱप्पेट्ट राघव! जय। दक्षिण समुद्रत्तिन्नुत्तर तीरे पुक्कु रक्षोनाथनुं विचारं तुटङ्ङ-नानप्पोळ्। वन्निङ्ङु कण्ट विभीषणने लङ्कानाथनेन्नभिषेकं चेय्तु वाळिच्च नाथा! जय। वरुणन् वऴि नल्काञ्ञळवु विल्लुं

ने चारों दिशाओं में जाकर जानकीदेवी की खोज की; (आपने अपना) अंगुलीय हनुमान के हाथ में दिया; वे अंगद आदि के साथ दक्षिण की ओर चल पड़े। (वे वानर) पाताल में पहुँचकर स्वयंप्रभा से मिले और सानन्द चलते हुए सागर के तट पर आये। सम्पाति का कथन मानकर वायुनन्दन (हनुमान) समुद्र पार करने के लिए महेन्द्राचल पर चढ़े और तुरन्त वहाँ से कूद सागर लाँघकर (उन्होंने) लंका में पहुँच माता सीता को अंगुलीय अर्पित किया—। ५० और (उनसे) चूडारत्न ले लिया। फिर उद्यान को नष्ट करने पर अत्यन्त घमण्डी हो युद्ध के लिए आये राक्षस वीरों तथा रावण-पुत्र अक्षयकुमार का (उन्होंने) वध किया, दुष्ट रावण से मिलकर, वृत्तान्त सुनाकर, लंका को भस्मीभूत करने के बाद तुरन्त सागर को पार किया। फिर अंगद आदि वानरों के साथ आकर जानकी से मिलने का समाचार सहर्ष सुनानेवाले हनुमान को गाढाश्लेष करके वारिजाक्षी (कमललोचना सीता) के अनुस्मरण में बैठे हे नाथ! (आपकी) जय हो। शुभ मुहूर्त में विशाल वानर-सेना के साथ समर को निकले हे राघव! (आपकी) जय हो। दक्षिणी सागर के उत्तर तट पर (आपके) पहुँचते ही राक्षसराज चिन्तित हो उठा। शरण के लिए आकर मिले विभीषण को लंकेश रूप में अभिषिक्त करनेवाले नाथ! जय हो। वरण के मार्ग न छोड़ देने पर धनुष ले उस पर शर का संधान लगाते ही

वाङ्ङिङ शरवुं तोटुत्तप्पोळवनुं भयप्पेट्टान् । नळनेक्कोण्टु चिर केट्टिच्चु कोळ्क ञान् तान् वळियुं तरामेन्नु वरुणन् चोन्न नेरं ६० रामनाथने प्रतिष्ठिच्चनुग्रहं वाङ्ङि तामसियाते नळनिट्टोरु चिर तन्मेल् मक्कटप्पटयोटुमक्करेक्कटन्नुटन् रक्षोनायकन् तन्नेक्कोन्न राघव ! जय । तल्क्षणे विभीषणन् तन्ने लङ्केशनेन्नु रक्षो- वीरन्मारोटुं वाळिच्च नाथा ! जय । अग्नियिल् मुळुकि वन्नोरु जानकियाय पत्नियेप्परिग्रहिच्चोरु राघव ! जय । सोदर निशाचर वानरप्पटयुमाय् वैदेहियोटु कूटे पुष्पकं करयेरि नन्दि- ग्रामत्तिङ्कल् वन्निरङ्ङिङ्ङ्भरतने नन्दिप्पिच्चाश्लेषं चेय्तोरु राघव! जय । तापस निशाचर वानर वररोटुं तापङ्ङळकन्नोरु सोदर वीररोटुं भूदेवादिकळाय राज्यवासिकळोटुं वैदेहियोटुमयोद्ध्या- पुरमकं पुक्कु, अभिषेकवुं चेय्तु बन्धु वर्गत्तोटुं चेर्न्नभिमोदेन राज्यं पालिच्च नाथा ! जय । कुंभ संभवन् पऱञ्ञन्पोटु निशाचर संभवमेल्लामऱिञ्ञोरु राघव ! जय । ७० मैथिलि तन्नेयपवाद शङ्कयाकळञ्ञातङ्कमुळ्ळिल् मऱच्चिरुन्न नाथा ! जय । स्वर्ण्णं कोण्टवळुटल् निर्म्मिच्चु यागङ्ङळुमोन्नोन्नाय्च्चेय्तु

वे भयभीत हो उठे । 'नल से सेतु बनवाइए, मैं स्वयं रास्ता छोड़ दूँगा' ऐसा वरुण के कहते समय— । ६० —रामनाथ की प्रतिष्ठा करके उनका अनुग्रह पाने के बाद नल से बनाये गये सेतु के सहारे वानर सेना के साथ सागर के पार पहुँचकर तुरन्त ही राक्षसनायक का वध करनेवाले हे नाथ ! (आपकी) जय हो । तत्काल ही राक्षसवीरों के साथ लंकेश-रूप में विभीषण का राज्याभिषेक करने वाले हे नाथ ! जय हो । अग्नि में प्रवेश करके आयी अपनी पत्नी जानकी को स्वीकार करनेवाले हे नाथ ! (आपकी) जय हो । भ्राता, निशाचर, वानर-सेना तथा वैदेही सहित पुष्पक पर चढ़कर नन्दिग्राम में उतरकर भरत को प्रसन्नता के साथ आश्लेष करनेवाले स्वामी ! जय हो । तापस, निशाचर, वानरश्रेष्ठ, दुःखविमुक्त श्रेष्ठ भाई वर्ग, भूदेव (ब्राह्मण) आदि अपने राज्यवासियों तथा सीता के साथ अयोध्या में पहुँच राज्याभिषिक्त हो अपने बन्धु-बांधवों के साथ सानन्द राज्य-शासन में लगे हे नाथ ! (आपकी) जय हो । कुंभसंभव (अगस्त्य) के मुख से निशाचरों के उद्भव आदि का ज्ञान प्राप्त करने वाले राघव ! (आपकी) जय हो । ७० मैथिली को अपयश के भय से छोड़ उससे उत्पन्न विरहताप को मन में छिपाये बैठे हे नाथ ! आपकी जय हो ।

कीर्त्ति पौङ्ङिच्च नाथा ! जय। अम्ममारुटे शेषक्रियकळेल्लां चेय्तु धर्म्मंदानङ्ङळ् चेय्तु वसिच्च नाथा ! जय। वाल्मीकियुटे शिष्यराकुन्न कुमारन्मार् सौम्यन्माराय कुशलवन्मार् गानं चेय्तु चित्रमां रामायणमाकिय काव्यं केट्टु चित्त सन्तोष पूण्टु वसिच्च नाथा ! जय। सत्यत्ते रक्षिप्पानाय् सौमित्रि तन्ने त्यजिच्चेत्रयुं दुःखत्तोटे वसिच्च नाथा ! जय। मैथिलि तनयन्माराय कुश-लवन्मारेयुमोरोदिशि वाळिच्च नाथा ! जय। सोदरामात्य निशाचर वानररोटुं सादरमयोद्धयावासिकळावरोटुं वन्निह सरयू तीरत्तिङ्कलितु कालं निन्नरुळुन्न राम ! राघव ! जय जय। नमस्ते राम ! राम ! नमस्ते सीतापते ! नमस्ते रघुपते ! रावणान्तक ! हरे ! ८० नमस्ते धरानन्द ! नमस्ते लक्ष्मीपते! नमस्ते भुवनैक नायक ! कृपानिधे ! परमानन्दमूर्ते ! नमस्ते परमात्मने ! परब्रह्मणे ! परम्पुरुष ! नमोस्तुते। चतुराननिति स्तुति चेय्तोरुन्नेरं मधुर स्फुटाक्षरमरुळिच्चेय्तु देवन् अन्नोटु कूटिप्पोरुं जनङ्ङळ्क्केल्लावक्कुं विण्णवरुटेलोकं कोट्टुत्ती-

---

स्वर्ण से उनकी मूर्ति बनाकर एक-एक करके अनेक यज्ञों का अनुष्ठान कर अपना यश फैलानेवाले स्वामी ! आपकी जय हो। अपनी माताओं की अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न कर धर्मानुसार दान-दक्षिणाएँ प्रदान कर बैठनेवाले हे नाथ ! (आपकी) जय हो। वाल्मीकि के शिष्य सौम्य मूर्ति कुमार लव-कुश के गाये अद्‌भुत रामायण काव्य का श्रवणकर सानन्द बैठे हे नाथ ! (आपकी) जय हो। सत्य की रक्षा के लिए सौमित्र तक का परित्याग करके दुःख भोगनेवाले हे स्वामी ! (आपकी) जय हो। मैथिली के पुत्र लव तथा कुश को एक-एक दिशा का अधिप बनानेवाले स्वामी ! जय हो। भ्राता लोग, अमात्य वर्ग, राक्षस-वानर-समूह तथा अयोध्यावासियों के साथ यहाँ सरयू के तट पर आकर विराजमान हे राम ! हे राघव ! (आपकी) जय हो, जय हो। हे राम ! हे राम ! (आपको) नमस्कार है। हे सीतापति ! (आपको) नमस्कार है। हे रघुपते ! हे रावणान्तक ! हे हरे ! (आपको) नमस्कार है। ८० हे धरानन्द ! (आपको) नमस्कार है। हे लक्ष्मीपते ! (आपको) नमस्कार है। हे भुवन के एक मात्र नायक ! हे कृपानिधे ! (आपको) नमस्कार है। हे परमानन्द मूर्ति ! हे परमात्मा ! (आपको) नमस्कार है। हे परब्रह्म! हे परमपुरुष! आपको नमस्कार है।" इस प्रकार चतुरानन के स्तुति करने पर देव ने अत्यन्त स्फुट एवं मधुर वाणी में कहा—"मेरे साथ

टुकवेणं। अँन्नतु केट्टु विधातावरुळ् चेंय्तीटिनान् वन्निह सरयुविल् मुळ्कीटुविनेंङ्किल्। वानर प्रवरन्मार् तङ्ङळ्क्कु कारणमां वानवरोटु चेन्नु चेंन्नितु समस्तरुं। मट्टुळ्ळ जनङ्ङळ्-मन्नेरं सरयुविल् तेंट्टेन्नु मुळ्किप्पोय् दिव्यवेषत्तेंप्पूण्टार्। पूर्व-देहङ्ङळेंल्लामुदकं तन्निलाक्कि देवलोकवुं पुक्कार् समस्तजनङ्ङळुं। विष्णुमूर्त्तियुमनुजन्मारोटोंरुमिच्चु विष्णुलोकवुं पुक्कानमरन्मारुमाये। मानुषर् निशाचरर् पक्षिकळ् मृगङ्ङळुं वानरर् पिपीलिका जातिकळिवयेंल्लां ९० राघव स्वामियुटें कारुण्यमुण्टाकयाल् नाकलोकवुं पुक्कु सुखिच्चारेंल्लावरुं। देवकळ् सनकादि मुनिकळ् विरिञ्चनुं सेविच्चु लक्ष्मीदेवितन्नोटुं भूमियोटुं योगेशननन्तनां पळ्ळितल्पत्तिन्मेले योगनिद्रयुं पूण्टु भगवान् नारायणन्। राम-नामत्तेंज्जपिच्चीटुन्न जनङ्ङळुं रामसायुज्यं प्रापिच्चीटुवोरेंन्नु नूनं।

पारिलुळ्ळज्ञानिकळ्क्करिवान् तक्कवण्णं श्रीरामचरितं ञानिङ्ङनें चोंल्लीटिनेन्। सज्जनमानन्दिच्चु नल्कीटुमनुग्रहं दुर्ज्जन दुर्भाषणं बहुमानिच्चीटेण्टा। रामचन्द्र स्वामियेंन् मानसे वसिक्कणं श्री

आनेवाले समस्त लोगों को देवलोक (में प्रवेश) दिया जाना चाहिए।" यह सुनकर ब्रह्मा ने (उन लोगों से) कहा कि (आप लोग) सब यहाँ सरयू में अवगाहन करें।" समस्त वानरश्रेष्ठ अपने लिए कारणस्वरूप देवताओं में मिल गये। शेष लोग भी सरयू में अवगाहन कर दिव्य-वेषधारी बन गये। साक्षात् विष्णु मूर्ति और भ्राता लोग अमरों (देवों) के साथ विष्णुलोक में चले गये। मनुष्य, निशाचर, पशु-पक्षी, वानर, पिपीलिका जाति के जीव—ये सब—। ९० स्वामी श्रीरामचन्द्र जी की कृपा से स्वर्गलोक में पहुँचकर सुख लूटने लगे। देवताओं, सनकादि मुनियों, ब्रह्मा से सेवित योगेश भगवान नारायण लक्ष्मीदेवी तथा भूमिदेवी के साथ अनन्त नाग के तल्प पर योगनिद्रा में तल्लीन हुए। अतः राम-नाम का जप करनेवाले जन भी राम का सायुज्य प्राप्त करते हैं, यह निश्चित बात है।

(शुकी कहती है) संसार के अज्ञानी लोग समझ सकें, उस ढंग से मैंने इस श्रीरामचरित का गान किया। सज्जन लोग (यह सुनकर) मुझे अनुग्रह देंगे; दुर्जन लोग अगर निन्दा करें तो उस पर ध्यान देना नहीं चाहिए। स्वामी श्रीरामचन्द्र अपनी महालक्ष्मी (सीता) के साथ (सदा)

महालक्ष्मियोट्टुमतिनु वन्दिक्कुन्नेन्। इङ्ङने परञ्ञटङ्ङीटिनाळ्
किळिमकळ् तिङ्ङिन भक्ति पूण्टु वसिच्चारेल्लारुमे । ९८

॥ इत्युत्तर रामायणम् समाप्तं ॥

मेरे मन में निवास करें, उसके लिए मैं प्रणाम करती हूँ। शुक बालिका ने ऐसा कहकर विराम लिया और समस्त लोग (श्रोता) भक्ति-रसामृत में तल्लीन हुए। ९८

उत्तर रामायण समाप्त





अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियां रोड, लखनऊ-३

यह ग्रन्थ सम्पूर्ण हो चुके हैं (सानुवाद देवनागरी लिप्यन्तरण):—

१—(बंगला) कृत्तिवासरामायण-पांचकांड नागरी लिप्य०, अवधी पद्यानुवाद मूल्य	२५·००
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लंका काण्ड ,, गद्यानुवाद ,,	१५·००
३—(मलयाळम) ओळुत्तच्छन्‌कृत महाभारत हिन्दी अनु० नागरी लिपि० ,,	६०·००
४—(,,) ,, अध्यात्मरामायण, उत्तररामायण ,, ,,	४०·००
५—(कश्मीरी) रामावतारचरित—प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत ,, ,,	२०·००
६—(,,) ललुद्यद—हिन्दी, संस्कृत अनुवाद सहित ,,	१०·००
७—बाइबिल सार (सालोमन के नीतिवचन) संस्कृत उद्धरणयुक्त ,,	१·००
८—(उर्दू) श्री 'रुस्वा' कृत शरीफजादः (आर्यपुत्र) नागरी लिपि में ,,	८·००
९—(गुरमुखी) श्रीगुरुग्रन्थ साहिब सानुवाद नागरी लिपि में प्रथम सैंची ,,	४०·००
१०—(,,) ,, ,, ,, ,, ,, द्वितीय ,, ,,	५०·००
११—(,,) जपुजी तथा सुखमनी साहब—ख्वाजः दिलमुहम्मद पद्यानु० मूल्य	८·००
१२—(,,) सुखमनी साहिब मूल गुटका ,,	४·००
१३—(फ़ारसी) सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय, श्वेताश्वतर) की फ़ारसीव्याख्या हिन्दी में— ,,	२०·००
१४—(अरबी) रियाज़ुस्सालिहीन जादे सफ़र (इस्लामी हदीस) प्र० खण्ड ,,	१२·००
१५—(तमिळ) तिरुक्कुरळ् नागरी में मूल, हिन्दी गद्य-पद्यानुवाद— ,,	२०·००
१६— ,, कम्ब रामायण बालकाण्ड ४०·०० अयोध्या-अरण्य ,,	७०·००
१७—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर कृत, हिन्दी अनुवाद सहित ,,	६०·००
१८—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत सानुवाद ,,	२०·००
१९—(तेलुगु) मोल्ल रामायण सानुवाद लिप्यन्तरण ,,	२०·००
२०—(,,) रंगनाथ रामायण ,, ,, ,,	६०·००
२१—(कन्नड) रामचन्द्र चरितपुराणं—जैनसाहित्य (अभिनव पम्प नागचन्द्रकृत) ,,	४०·००
२२—(राजस्थानी) रुक्मिणीमंगल—पदम भगत कृत ,,	१५·००
२३—(गुजराती) गिरधर रामायण हिन्दी अनुवाद सहित (नागरी लिपि.) ,,	६०·००
२४—(रामचरितमानस) ओड़िआ लिपि में लिप्यन्तरण एवं ओड़िआ गद्य-पद्यानुवाद ,,	६०·००
२५—(सिंधी) स्वामी, शाह, सचल की त्रिवेणी ,,	२०·००
२६—(असमिया) माधवकंदली रामायण ,,	६०·००
२७—(ओड़िआ) बैदेहीशबिळास—उपेन्द्रभञ्ज कृत ,,	६०·००
२८—(वाणी सरोवर)—बहुभाषाई त्रैमासिक पत्र—वार्षिक ,,	१०·००

ट्रस्ट के अतिरिक्त, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य, जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

२९—(अरबी) क़ुरआन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद, टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित— मूल्य	४०·००
३०—(,,) क़ौरानिक कोश क़ुर्आन के पठनक्रम से शब्दार्थ ,,	१०·००

प्रकाशित हो रहे अन्य सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण ग्रन्थ (यन्त्रस्थ):—

१—(तमिळ) कम्ब रामायण
२—(तेलुगु) पोतन्न भागवतमु
३—(गुरमुखी) श्रीगुरुग्रंथ साहब सैंची ३,४
४—(बंगला) कृत्तिवास उत्तरकाण्ड
५—(हिब्रू) बाइबिल ओल्ड टैस्टामेण्ट हिन्दी अनु० सहित हिब्रू तथा अंग्रेजी मूल नागरी
६—(ग्रीक) ,, निउ ,, ,, ,, ,, ग्रीक ,, ,, लिपि में
७—(मराठी) श्रीहरि-विजय—श्रीधर कृत
८—(उर्दू) गुज़श्तः लखनऊ—मौ० शरर
९— ,, संत एकनाथ भावार्थ रामायण
१०—(गुजराती) प्रेमानन्द रसामृत (ओखा)
११—(कोकणी) ख्रीस्त पुराण
१२—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत ५० उपनिषद (द्वि० खण्ड)
१३—(कश्मीरी) रेआमकेर (रामायण)
१४—(फ़ारसी) मुल्ला मसीही रामायण
१५—(अरबी हदीस)—(जादे सफ़र) द्वि० खण्ड
१६—(अरबी) बुखारी शरीफ़
१७—रामचरितमानस (तुलसी)—संस्कृत पद्यानुवाद सहित
१८— ,, तफ़सीर माजिदी

वाणी प्रेस, लखनऊ-३ में मुद्रित एवं भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३ द्वारा प्रकाशित।
—द्वारा नन्दकुमार